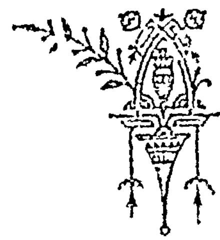




भविष्यपुराण भाषा

जिसमें

अनेक इतिहास, चारोंवर्णों के धर्म, विद्या व धनकी आवश्यकता, स्त्रियोंकी शिक्षा व परीक्षा, राजा व साधारणपुरुष व स्त्रियोंकेलक्षण, प्रतिपदादि तिथियों के व्रतों का उद्यापन व कथा, सर्पोंका वर्णन व चिकित्सा, जातिभेदका खण्डन, चारोंवर्णों के भिन्नहोनेकाकारण, सूर्यपूजन, शुभस्वप्नोंकावर्णन, प्रासाद व प्रतिमाओंकेलक्षण, शाकद्वीपीयब्राह्मणोंकी उत्पत्ति, योग और भूगोलका वर्णन, होनेवाले राजाओं का राज्यसमय, नरकवर्णन, गर्भिणी स्त्री के धर्म, दशधेनुदानविधान, जलाशय देवालय बनाने व वृक्ष लगाने का फल, विद्या व धेन्वादिदान और पुराणश्रवणमहिमादि विषय वर्णितहैं ।

जिसको

श्रीयुत मुंशी नवलकिशोर (सी, आई, ई) के निदेश से अलवरप्रान्तवर्त्ति दमजापुरग्राम निवासि चौरासियाख्य ब्राह्मणकन्नोजपत्र श्रीपण्डितमजलाल जी के पुत्र श्रीपण्डित दुर्गाप्रसादने संस्कृत भविष्यपुराणसे आर्यभाषा में अनुवाद किया ।

चौथी बार

लखनऊ




मुंशी नवलकिशोर (सी, आई, ई) के छापेख़ाने में छापागया ।
मार्च सन् १९०६ ई० ॥

भविष्यपुराणकी भूमिका ॥

विदितहो कि धर्म्म अर्थ काम और मोक्ष ये चारपदार्थ इस संसारमें सारहैं इसीलिये सब मनुष्य अपनी २ रुचिके अनुसार इनकी प्राप्तिके लिये यत्न करते हैं परन्तु इन चारोंमें धर्म मुख्य है धर्म के सेवनसे ये सब प्राप्तहोसक्ते हैं श्रीवेदव्यास जीने भी कहा है कि (ऊर्ध्वबाहुर्विरौम्येषनचकश्चिच्छृणोति मे । धर्मादर्थश्चकामश्चसकिमर्थंनसेव्यते) धर्म्मकी प्राप्ति अपने २ वर्ण और आश्रम के लिये कहे वैदिक कर्मोंके यथोक्त आचरण से होती है इसीकारण पूर्वकाल में सब त्रैवर्णिक अर्थात् ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य वेद पढ़ने में अतिपरिश्रम करते थे और वेदपढ़ तदुक्तकर्म कर अपने अभीष्ट फल पाते थे परन्तु कलियुग के मनुष्य ऐसे अल्पायुष और मन्दबुद्धिहुये कि जो संपूर्ण वेदको अपने जन्म भरमें अतिपरिश्रम से भी नपढ़सके यह देख परमकारुणिक श्रीकृष्ण द्वैपायनमुनि ने वेद के चार भागकिये इसी से उनका नाम वेदव्यास भया और द्वापरयुग के अन्त में अठारहपुराण और महाभारत रचे कि जिनसे थोड़े परिश्रम करके भी कलियुग के मन्दबुद्धि आर्यमनुष्यों को धर्म का ज्ञान होजाताथा और उसके आचरण से अभीष्ट फलपाते थे परन्तु पुराण आदिका तात्पर्य जानने के लिये भी
वाणीका भलीभांति ज्ञान होनाचाहिये
आर्यजनों से प्रायःसंस्कृत विद्या
से पुराण आदिका न परिशील न
र्णाश्रमधर्मको नहींजानते ज
रण क्योंकर होसक्ताहै
आयुष बुद्धि बल विद्या से

से हीन होतेजाते हैं यह दशा अपने बन्धु आर्यजनों की देख और सब पुरुषार्थ प्राप्तिकामूल ज्ञानपूर्वकधर्माचरण और धर्मज्ञान का मूल पुराणइतिहास आदिका परिशीलन जान और आर्यजनों को प्राय:संस्कृतवाणी के अनभिज्ञ देख विज्ञातिविज्ञ भरतखण्डके परमहितैषी दूसरवंशावतंस अतिदक्ष आर्यजनों की उन्नतिकेलिये बद्धकक्ष अवधसमाचार पत्र संपादक श्रीयुतमुंशीनवलकिशोरसाहब (सी, आई, ई.) ने यह इच्छाकी कि ये सब पुराण यदि आर्यभाषा में अनुवाद किये जायँ तो सब आर्यजन इनका तात्पर्य सुगमतासे जानसकैं और यथार्थ स्वरूप अपने धर्मको पहिंचानदुराचरणसे निवृत्तहोसत्कर्म में प्रवृत्तहोवैं और ईश्वरके अनुग्रहसे सब प्रकारके क्लेशोंसे छुट अपरिमित आनंदपावें यह मन में निश्चयकर मुंशीसाहबने इस कार्यमें सत्कार पूर्वक हमको नियुक्त किया हमनेभी उनके इच्छानुसार अठार पुराणों में बारहवेंपुराण और साढ़े चौदहसहस्र श्लोक प्रमा श्रीभविष्यपुराणका आर्यभाषा में अनुवाद किया इस पुराण अनेक उत्तम २ विषय भरेहैं जिनके देखनेसे धर्मकास्वरूपसंसा का व्यवहार परमेश्वरका प्रभाव जानाजाताहै और अनन्त पुण्य प्राप्त होताहै और चित्तको अतिहर्ष होताहै यह भविष्यपुराणक ... हमने अति सावधानता से कियाहै और हमारे परम ... श्रीसरयूप्रसादजीने इसको भली भांति ... किसी प्रकार अशुद्धहोय तो सरल ... न पुराण के पाठकगण दोषकी ... ग्रहण करैंगे और ईश्वर के ... गे ॥

... शर्मा)

भविष्यपुराण भाषा पूर्व्वार्द्ध का
सूचीपत्र ॥

श्रीभविष्यपुराण भाषा पूर्व्वार्द्ध का सूचीपत्र समाप्तभया ॥

भविष्यपुराण भाषा उत्तरार्द्ध का सूचीपत्र ॥

इति ॥



भविष्यपुराण भाषा

पूर्व्वार्द्ध

पहिला अध्याय

युगोंकीसंख्या व धर्म और चारोंवर्णोंकी उत्पत्ति व संस्कार ॥

दो० विबुध मुकुटमणि दीपिका नीराजितदिनरैन ॥
विघन हरैं हेरंबके चरण कमल सुखदैन १
भजौंनित्य गौरी गिरिश सकल सिद्धिकेहेतु ॥
भक्त मनोरथ कल्पतरु भवसागर के सेतु २

अथ कथाप्रारम्भः ॥

एकसमय व्यासजीके शिष्य सुमन्तुमुनि पाण्डववंश के राजा शतानीककी सभामें जातेभये राजानेभी मुनिको देख बहुत आदर सत्कारकर उत्तम आसनपर बैठाया और भली भांति उनका पूजनकर करजोर विनय से प्रार्थना करी कि महाराज आपके आगमन से हम सपरिवार कृतार्थ भये और आप ऐसे महात्माओं का आगमन केवल परोपकार केही अर्त्थ है क्योंकि आपतो परमेश्वर के परमभक्त हैं इसीसे सदा कृतकृत्य हैं अब आप के मुखारविंदसे अमृतभरीवाणी

श्रवण किया चाहते हैं कि जिसके श्रवण से अनेक पातक निवृत्त हों और शुभ फलकी निरन्तर प्राप्ति होय यह राजा का वचन सुन प्रसन्नहो सुमन्तुमुनि बोले कि हे राजा! हम आप को भविष्यपुराण का श्रवण कराते हैं जिसके श्रवण करने से ब्रह्महत्या आदि बड़े २ पातक बिलायजाते हैं इस पुराण में पांचपर्व ब्रह्माजीने कहेहैं पहिला ब्रह्मपर्व दूसरा विष्णुपर्व तीसरा शिवपर्व चौथा त्वाष्ट्रपर्व और पांचवां प्रतिसर्ग नाम पर्वहै ये पांच तो पर्व हैं और पुराण में पांच लक्षण होतेहैं उनको हम कथन करते हैं सर्ग प्रतिसर्ग वंश मन्वन्तर और वंशानुचरित इन पांच लक्षणों से युक्त और चौदह विद्याओं करके युक्त पुराण होता है चारवेद उनके छः अङ्ग पुराण धर्मशास्त्र मीमांसा और न्याय ये चौदह विद्या हैं आयुर्वेद धनुर्वेद गांधर्व और नीतिशास्त्र के मिलने से अठारह विद्या होजातीहैं हे राजा! अब हम भूतोंकेसर्गका अर्थात् जीवों की उत्पत्तिका वर्णन करते हैं जिसके सुनने से सबपाप निर्मुक्त होय मनुष्य को शांति प्राप्त होती है पूर्व कालमें यह सम्पूर्ण जगत् अंधकार से व्याप्त था और किसी पदार्थ का लक्षण नहीं विदित होता था उस समय सूक्ष्म अतीन्द्रिय और सर्व भूतमय परमात्मा की सृष्टि करनेकी इच्छा भई और प्रथमही परमेश्वरने जलको सिरजा और उसमें अपना वीर्य्य डाला जिससे देवता असुर मनुष्य आदि सब जगत् उत्पन्न भया बीज शुक्र रेत उग्रवीर्य्य आदि नाम ब्रह्माजी ने वीर्य्यके कहेहैं वह वीर्य्य जलमें गिरने से अत्यन्त प्रकाशवान् सुवर्ण का अण्ड हो गया उस अण्ड के मध्य से सब लोगों के रचनेहारे ब्रह्माजी उत्पन्न भये क्षेत्रज्ञ पुरुष वेधा शम्भु नारायण वि-

रंचि कमलासन आदि सब नाम ब्रह्मकेही हैं और ये शब्द आपसमें पर्याय शब्द हैं अर्थात् इन सब शब्दों का एकही अर्थ है जलका नाम नार है और जल नरसूनु है वह नार अर्थात् जल उसका अयन अर्थात् निवास स्थान है इस लिये उसको नारायण कहते हैं उस सत् असत्रूप अव्यक्त नित्य कारण से उत्पन्न भये इससे उनका नाम ब्रह्मा भया ब्रह्माजीने बहुतकाल ध्यान किया और उस अण्ड के दोखण्ड किये एक खण्ड से भूमि और दूसरे से आकाश को रचा और आठौ दिशा तथा वरुण का स्थान अर्थात् समुद्र बनाया महत्तत्व अहंकार तीनगुण येही सब भूतोंकी उत्पत्तिके हेतु हैं प्रथम परमात्माने आकाशको उत्पन्न किया और पीछे क्रम से वायुआदि तत्त्वरचे और देवताओं के तुषित आदिगण ग्रह नदी समुद्र पर्वत आदि उत्पन्न कर काल के विभाग और ऋतु कल्पना किये काम क्रोध आदि को रच कर्मों के विवेक के लिये धर्म और अधर्म को सिरजा और भांति २ की प्रजा सिरज कर उनको सुख दुःखआदि द्वंद्वों से युक्त किया जो कर्म जिस ने पहिले किया था वह कर्म उस को आपही प्राप्त होगया हिंस्र अर्थात् हिंसा करनेहारा अहिंस्र मृदु क्रूर धर्म अधर्म सत्य असत्य आदि जीवों को आपही प्राप्त भये जैसे ऋतु में वृक्ष के पुष्प फल आदि आपही प्राप्त होते हैं लोक की वृद्धि के अर्थ ब्रह्माजी ने अपने मुख से ब्राह्मण भुजा से क्षत्रिय ऊरु अर्थात् जांघ से वैश्य और चरणों से शूद्रों को उत्पन्न किया ब्रह्माजी के पूर्व मुख से ऋग्वेद उत्पन्न हुआ उस को वशिष्ठ मुनि ने ग्रहण किया दक्षिण मुखसे यजुर्वेद प्रकट भया वह याज्ञवल्क्य मुनि ने पाया पश्चिम मुख से सामवेद नि-

कला वह गौतम ऋषिने धारण किया और उत्तर मुख से अ-
थर्वण वेद की उत्पत्ति भई वह शौनक ऋषि ने ग्रहण किया और
ब्रह्माजी के लोक प्रसिद्ध पंचम मुख से अठारह पुराण इति-
हास और स्मृति उत्पन्न भई इस भांति चार वेदों को उत्पन्न
कर ब्रह्माजी ने अपने देहके दो भाग किये दहिने भाग को
पुरुष और बायें भाग को स्त्री बनाया और उन से विराट् उत्पन्न
भया और भाँति भाँति की प्रजा उत्पन्न करने के अर्थ बहुत
काल तप किया और प्रथम दश ऋषियों को उत्पन्न किया जो
प्रजापति कहलाये उन के नाम ये हैं नारद भृगु प्रचेता पुलह
क्रतु पुलस्त्य अत्रि अंगिरा और मरीचि जो पहिला प्रजा-
पति है इस भांति और भी बड़े २ तेजस्वी उत्पन्न किये पीछे
देवता ऋषि दैत्य यक्ष राक्षस पिशाच गंधर्व अप्सरा पितर
मनुष्य नाग सर्प आदिकों के अनेक गण उत्पन्न किये बि-
जली बादल वज्र इंद्रधनुष् धूमकेतु अर्थात् पूंछलतारे उल्का
निर्घात और नक्षत्र आदि रचे किन्नर वानर मत्स्य शूकर पक्षी
हाथी घोड़े मृग कीट पतंग मक्खी मच्छर आदि छोटे २
जीव सिरजे इस भांति ब्रह्माजी ने सब सृष्टि को रचा जिन
जीवों का जैसा कर्म है और जन्ममें जो क्रम है अब हम वह
वर्णन करते हैं हाथी मृग भांति २ के पशु पिशाच मनुष्य
आदि जरायुज हैं मत्स्य कछुवे मगर अनेक प्रकार के पक्षी
अण्डज हैं अर्थात् अण्डे से उत्पन्न होते हैं मक्खी मच्छर जूं
खटमल आदि जीव स्वेदजहैं अर्थात् पसीने की ऊष्मा से उ-
पजतेहैं वृक्ष ओषधी आदि उद्भिजहैं अर्थात् भूमिको उद्भेदन
करके उत्पन्नहोते हैं जो फल के पकनेतक रहैं और पीछे नष्ट
होजायँ वे ओषधी कहाती हैं बिना पुष्प जिनके फललगैं वे

वनस्पति हैं पुष्प और फलकरके जो युक्तहोयँ उनको वृक्षकहते हैं इसी भांति गुल्म वल्ली प्रतान आदि और भी भेद जानो ये सब बीजसे और काण्डसे अर्थात् उसवृक्षकी छोटीसी शाखा काटकर भूमिमें गाड़देनेसे उत्पन्न होते हैं वृक्षआदिभी अं-तःसंज्ञहैं अर्थात् हृदयमें सुख दुःख आदि सब समझते हैं परन्तु कर्मरूप घोर तमसे घिररहेहैं इसहेतु मनुष्योंकी भांति बातचीत आदि नहीं करसके इसप्रकार यह अतिविचित्र संसार ईश्वर से उत्पन्न हुआ है जब वह परमात्मा निद्रावश होकर शयनकरता है तब यह सब संसार उसमें लीन हो जाता है और जब निद्रा का त्याग करता है तब सबसृष्टि उत्पन्नहोती है और जीव पहिली भाँति अपने २ धंधेमें लगते हैं कल्पके प्रारम्भमें सृष्टि और कल्पके अन्तमें प्रलय परमेश्वर करता है कल्प परमेश्वरका दिनहै इसकारण परमेश्वर के दिनमें सृष्टि और रात्रिमें प्रलयहोताहै हे राजा शतानीक! अब हम कल्प की संख्या कहते हैं अठारह निमेष अर्थात् आंख के झप-कनेसे एक काष्ठा होती है अर्थात् जितने काल में अठारह बार नेत्र का निमेष होय उतने काल को काष्ठा कहते हैं तीस काष्ठा की एक कला तीसकला का एकक्षण बारह क्षणका एक मुहूर्त्त तीस मुहूर्त्त का एकदिनरात तीस दिन रात्रि का एकम-हीना दो महीनोंका एक ऋतु तीनऋतुका एकअयन दोअ-यनका एक वर्ष होता है इसप्रकार सूर्य्य भगवान् दिन रात्रि करके कालके विभाग करते हैं सम्पूर्णजीव रात्रि को विश्राम करते हैं और दिनमें अपने २ कर्ममें प्रवृत्त होते हैं इसीभाँति पितरोंका दिन रात्रि एक महीने का होता है अर्थात् शुक्लपक्ष रात्रि और कृष्णपक्ष दिन होता है देवताओंका अहोरात्र एक

वर्षका है अर्थात् उत्तरायण दिन और दक्षिणायन देवताओं की रात्रि गिनीजाती है अब हम ब्रह्माजी के दिन रात्रि और युगोंका प्रमाण कहते हैं सत्ययुग चारहजार वर्ष का है और आठसौवर्ष उसकी सन्ध्या और सन्ध्यांश हैं अर्थात् चारसौ वर्ष सन्ध्या और चारसौ वर्ष सन्ध्यांश गिनाजाताहै इसीभाँति तीनहजार वर्ष का त्रेतायुग होता है और तीन२ सौवर्षके उस के सन्ध्या सन्ध्यांश हैं द्वापर युग दोहजारवर्ष का है और चार सौवर्ष द्वापरके सन्ध्या सन्ध्यांशहैं कलियुगका प्रमाण एक हजारवर्षहै और दोसौवर्ष कलिके सन्ध्या और सन्ध्यांश गिने जाते हैं ये सब वर्ष मिलके बारहहजारवर्ष होते हैं यही देवताओंका एक युग कहलाता है देवताओंके हजारयुग होने से ब्रह्माजीका एक दिन होता है और यही प्रमाण उनकी रात्रि काहै अर्थात् एकहजार युगकीही ब्रह्माजीकी रात्रि होती है जब ब्रह्माजी अपनी रात्रि के अन्तमें सोकर उठते हैं तब सत् असत्रूप मनको उत्पन्न करते हैं वह मन सृष्टिकरनेकी इच्छा से विकार को प्राप्त होता है तब उससे आकाश उत्पन्न होता है जिसका गुण शब्द है आकाश विकृत होता है तब अति बलवान् वायु को उत्पन्न करता है जिस वायुका गुण स्पर्शहै इसी प्रकार वायुसे रूपगुण करके युक्तेज तेजसे रसगुण करके युक्त जल और जलसे गंधगुणयुक्त भूमिकी उत्पत्ति होती है जो हमने बारह हजारवर्ष का एकदिव्ययुगकहा वैसे इकहत्तर युग होनेसे एक मन्वन्तर होता है और ब्रह्माजीके एक दिन में चौदह मन्वन्तर व्यतीतहोते हैं अब युगोंकी व्यवस्था कहते हैं सत्ययुग में धर्मके चारोंपाद वर्त्तमानरहते हैं फिर त्रेताआदि युगोंमें क्रमसे एक २ चरण घटताजाता है सत्ययुगके मनुष्य

आरोग्य धर्मनिष्ठ सत्यवादी होते हैं और चारसौ वर्ष तक जीते हैं फिर त्रेताआदि युगों में इन सब बातोंका एक २ चतुर्थांश न्यून होताजाता है त्रेता के मनुष्यों का आयुष् तीन सौ वर्ष द्वापर के मनुष्यों का दोसौ और कलियुग के मनुष्यों का आयुष् एकसौ वर्ष होताहै और इन चारों युगों में धर्म भी भिन्न २ भाँति के हैं सत्ययुग में तप त्रेता में ज्ञान द्वापर में यज्ञ और कलियुग में दान करनाही मुख्यहै ब्रह्माजीने सम्पूर्ण सृष्टि की रक्षा के हेतु अपने मुख भुजा ऊरु अर्थात् जांघ और चरणों से ब्राह्मण आदि चारवर्ण उत्पन्न किये पढ़ना पढ़ाना, यज्ञ करना यज्ञकराना दान देना और दानलेना ये छः कर्म ब्राह्मण के अर्थ नियत किये गये पढ़ना यज्ञकरना दानदेना प्रजाका पालन करना और विषयों का भोग करना ये सब बातें क्षत्रियों के लिये कल्पित कीगईं पढ़ना यज्ञ करना दान देना पशुओं की रक्षा करना खेती करना व्यापार से धन सम्पादन करना ये काम वैश्योंके लिये ठहराये गये और शूद्र के लिये इन तीनवर्णोंकी सेवाकरना यही मुख्यकर्म नियत किया गया पुरुषके देहमें नाभि से ऊपर का भाग उत्तम है उस में भी मुख प्रधान है और ब्राह्मण ब्रह्म के मुख से उत्पन्न हुआ इसलिये ब्राह्मण सब से उत्तम है यह वेदकी श्रुति है ब्रह्माजी ने बहुत काल तप करके ब्राह्मण को उत्पन्न किया इस से ब्राह्मण सृष्टि भर का स्वामी है देवता और पितर हव्य और कव्य को मुख से भक्षण करते हैं और ब्राह्मण मुख स्वरूप है इसलिये सब में प्रधान है सबभूतों में प्राणी श्रेष्ठ हैं प्राणियों में बुद्धिमान्, बुद्धिमानों में मनुष्य मनुष्यों में ब्राह्मण ब्राह्मणों में विद्वान्, विद्वानों में कृतबुद्धि कृतबुद्धियों में, कर्मकरनेहारे और कर्मकरनेहारों में भी ब्रह्मवेत्ता

श्रेष्ठ होते हैं ब्राह्मणका जन्म धर्म्म सम्पादन करने के लिये है और धर्म के आचरण से ब्राह्मण ब्रह्मलोक को जाता है धर्म की रक्षा और सृष्टि की उत्पत्ति के लिये ब्राह्मणका जन्म है सृष्टिमें जितने पदार्थ हैं सबका स्वामी ब्राह्मण है ब्राह्मण अपने धनका उपभोग करता है और वर्ण ब्राह्मण की कृपा से ब्राह्मण केही धन से अपना कालक्षेप करते हैं तीनवर्णों के भाव और अभाव करने में ब्राह्मण समर्थ है जो प्रसन्न होय तो तीनों वर्णोंका कल्याण और क्रोध करै तो तीनों वर्णोंका अभाव करसक्ता है इस लिये ब्राह्मण सदा पूजनीय है ब्राह्मणके आगे किसी का प्रभुत्व नहीं चलसक्ता ब्राह्मण अपनीइच्छा से स्वर्ग में जाताहै स्वर्गसे महर्लोक महर्लोक से जनलोक को चलाजाताहै और ब्रह्मत्वको भी प्राप्त होता है इतनी कथा सुन राजा शतानीक बोले कि हे सुमन्तुमुनि ! ब्रह्मलोक और ब्रह्मत्व अतिदुर्लभ है किन गुणों करके युक्त ब्राह्मण ब्रह्मलोक को जाता है और ब्रह्मत्व को प्राप्त होताहै यह आप कृपाकरके वर्णनकरें यह राजा का वचनसुनि मुनिने कहा कि हे राजा ! जिस ब्राह्मण के गर्भाधान आदि अड़तालीस संस्कार विधिपूर्वक हुये हों वही ब्राह्मण ब्रह्मलोक और ब्रह्मत्व को प्राप्त होताहै संस्कार ही ब्रह्मलोक की प्राप्तिका कारण है यह सुन राजा ने कहा कि हे मुनीश्वरजी! वे संस्कार कौन से हैं आप सुनाइये तब मुनि बोले कि हे राजा! आपने बहुत अच्छा प्रश्न किया वेद में और शास्त्रमें जो संस्कार कहे हैं वे हम वर्णन करते हैं गर्भाधान पुंसवन सीमन्त जातकर्म नामकरण अन्नप्राशन चौड़मेखला चार प्रकारका वेदव्रतस्नान विवाह पंचमहायज्ञों का करना जिन से देवता पितर मनुष्य भूत और ब्रह्म की तृप्ति होती है अ-

द्धकाश्राद्ध पार्वणश्राद्ध श्रावणी आग्रहायणी चैत्री आश्वयुजी अग्निहोत्र दर्श पौर्णमास चातुर्मास्य निरूढ़ पशुबन्ध सौत्रामणी अग्निष्टोम अत्यग्निष्टोम षोड़शी वाजपेय अतिरात्र और सप्तसोम ये सब ब्राह्मण के संस्कार हैं और आठ गुणभी ब्राह्मण में होने चाहिये जिनसे ब्रह्मकी प्राप्तिहोती है वे ये हैं अनसूया दया शांति अनायास मङ्गल अकार्पण्य शौच और स्पृहा अब इन आठगुणों के लक्षण सुनिये गुणी के गुणों को न छिपाना निर्गुणी की भी स्तुतिकरना दूसरे के दोष से भी अप्रसन्न न होना अनसूया कहाता है अपने में पराये में मित्र में और शत्रुमें अपने समान बर्तना और दूसरे का दुःख दूरकरने की इच्छा रखना इसका नाम दया है मन वचन कर्म करके कोई पुरुष दुःख देवै तौभी उसपर क्रोध न करना इसको क्षमा कहते हैं अभक्ष्य वस्तु न खाना निंदित पुरुषों का सङ्ग नहीं करना और आचार में रहना इसका नाम शौच है जिस शुभ कर्म करके भी शरीर को कष्ट होय उस कर्म को अत्यन्त न करना यही अनायास है नित्य भले काम करना और बुरे कर्मोंको त्यागना इसको मङ्गल कहते हैं कष्टसे उपार्जित किये हुये धन से भी थोड़ा बहुत नित्य देना इसका नाम अकार्पण्य है ईश्वरकी इच्छा से जो थोड़ा बहुत मिलजाय उतनेही में सन्तुष्ट होजाना और पराये धनकी इच्छा न रखना इसका नाम स्पृहा है इन आठगुणों और संस्कारों करके जो ब्राह्मण युक्तहोय वही ब्रह्मत्वको प्राप्तहोय ब्रह्मलोक को जाताहै निषेक आदि वैदिक पवित्र संस्कारों से शरीर को शुद्ध करना चाहिये जिसकी गर्भ शुद्धिहो और सब संस्कारहुयेहों और वर्णाश्रम धर्म्म का आचरण करता रहै वह अवश्य मुक्ति पाता है

यह निश्चय इस पुराण का है इन संस्कारों को जो सुने अथवा पढ़े वह ऋद्धि लक्ष्मी कीर्त्ति धन धान्य यश पुत्र बन्धु और उत्तमरूप को पाताहै और कुछ काल सूर्य्यलोकमें रहकर ब्रह्मलोक में प्राप्त होता है ॥

दूसरा अध्याय ॥

यज्ञोपवीतादि संस्कारोंकी विधि और भोजन विधि व निषेध ॥

इतना सुन राजा शतानीक ने कहा कि महाराज इन संस्कारों के लक्षण और वर्णाश्रम धर्म आप मुझे श्रवण कराइये यह राजा का वचन सुन सुमन्तु मुनि कहने लगे कि हे राजा! गर्भाधान पुंसवन सीमन्त जातकर्म्म नामकरण अन्नप्राशन चौड और यज्ञोपवीत इन संस्कारों करके बीज के और गर्भ के सब दोष निवृत्त होजाते हैं और स्वाध्याय व्रत होम महायज्ञ यज्ञ और इज्याआदि से यह शरीर ब्रह्मरूप होजाता है नालच्छेदन से पहिले जातकर्म होता है जिससे वेद के मन्त्रों करके सुवर्ण शहद और घृतका बालक को प्राशन कराया जाता है दशवें दिन बारहवें दिन अठारहवें दिन अथवा एक महीना पूराहोनेपर नामकरण अच्छे मुहूर्त्त में किया जाताहै उस समय ब्राह्मण का नाम मङ्गलदायक रखना चाहिये जैसा शिवशर्म्मा क्षत्रिय का बल युक्त नाम जैसा इन्द्रवर्मा वैश्य का धन युक्त जैसा धनवर्द्धन और शूद्रका नाम जुगुप्सित अर्थात् बुरा रखना चाहिये जैसा सर्व्वदास और मनुजी ने कहा है कि ब्राह्मण के नाम में शर्म्मा लगादेना क्षत्रिय का नाम रक्षायुक्त वैश्य का पुष्टि संयुक्त और शूद्र का दासान्त नाम रखना अर्थात् जिसके अन्त में दास आदि शब्दहों और स्त्रियों का नाम ऐसा रखना चाहिये कि जिसके

बोलने में कष्ट न पड़े क्रूर न हो अर्थ स्पष्ट और अच्छा हो जिसके सुनने से मन प्रसन्न हो मङ्गलदायक आशीर्व्वाद युक्त और जिसके अन्त में आकार ईकार आदि दीर्घस्वर हों बारहवें दिन अथवा चौथे महीने बालक को घरसे बाहर ले जाना छठे मास अन्नप्राशन कराना पहिले वर्ष अथवा तीसरे वर्ष चूड़ाकर्म अर्थात् मुण्डन करना गर्भ से आठवें वर्ष में ब्राह्मण का यज्ञोपवीत गर्भ से ग्यारहवें में क्षत्रिय का और गर्भ से बारहवें वर्ष में वैश्य का करना चाहिये परन्तु ब्रह्मवर्चस की इच्छा वाला ब्राह्मण पांचवें वर्ष में बल की इच्छा वाला क्षत्रिय छठें वर्ष में और धनकी कामना वाला वैश्य आठवें वर्ष में अपने २ बालकों का यज्ञोपवीत करैं सोलह वर्ष तक ब्राह्मण बाईस वर्ष तक क्षत्रिय और चौबीस वर्ष तक वैश्य गायत्री के अधिकारी रहते हैं इसके अनन्तर गायत्री के अधिकारी नहीं रहते और व्रात्य कहाते हैं जबतक व्रात्यस्तोम नामक संस्कार उनका न कियाजाय तबतक शुद्ध नहीं होते इन व्रात्यों के साथ आपत्ति में भी कभी पठन पाठनका अथवा विवाह आदि का सम्बन्ध न करै यज्ञोपवीत के समय तीन वर्णों के लिये क्रम में तीन चर्म होते हैं सिंहका रुरुनाम मृगका और बकरे का इसीप्रकार तीन प्रकार के वस्त्र शण के अलसी के और भेड़की ऊनके तीनवर्णों के लिये कहे हैं तीन लड़ीकी सुन्दर चिकनी मूँजकी मेखला ब्राह्मण के लिये मुरानामतृण की क्षत्रियके लिये और शण तन्तुओं की वैश्यके लिये कही है मूँज आदि न मिले तो कुशाअश्मतक और बल्वज नाम तृण की मेखला बनावै मेखलाको तिलड़ा करके एक तीन अथवा पांच ग्रन्थि उसमें लगावै ब्राह्मण कपास के सूत्रका यज्ञोपवी

पहिले क्षत्रिय शण के सूत्रका और वैश्य भेड़के ऊनका जनेऊ धारण करै ब्राह्मण बिल्व और पलाश के काष्ठका दण्ड शिर तक ऊंचाधारे क्षत्रिय वड़ और खैरके काष्ठका दण्ड मस्तक पर्यंत ऊंचा ग्रहणकरै और वैश्य पीपल और गूलर के काष्ठका दण्ड नासिकापर्यंत ऊंचा धारणकरै ये दण्ड सूधे चिकने और व्रण रहित होने चाहिये यज्ञोपवीत के समय माता बहिन अथवा मौसी से पहिले भिक्षामांगे जो इसका अपमान न करै वह भी सुवर्ण चांदी और अन्न इसके पात्र में डाले इस भांति भिक्षा ग्रहण कर गुरुके आगे निवेदन करै और गुरु की आज्ञा पाय आचमन कर पूर्वाभिमुख बैठ उसी अन्न को भक्षण करै पूर्व को मुख करके भोजन करने से आयुष्की वृद्धि होती है दक्षिण को यशकी पश्चिमको लक्ष्मीकी और उत्तर को सत्य की आचमन करके एकाग्र चित्तहो उत्तम अन्न को भोजन करै और भोजन करके फिर आचमन कर सब इन्द्रियों को जल से स्पर्श करै अन्नकी नित्य स्तुतिकरै और अन्नको देख प्रस होजाय और हर्ष से भोजन करै कभी अन्नकी निन्दा न क यह मनुजी की आज्ञा है पूजित अन्न के भोजन से बल औ तेजकी वृद्धि होती है और निन्दित अन्न के भोजन से दो की हानि इस कारण सदा सुन्दर अन्न को भोजन करै उच्छि किसी को न देवै और भोजन करके जिस अन्न को छोड़दे उसको फिर न भक्षण करै अर्थात् बार बार से छोड़ कर भोजन न करै एकबार बैठकर तृप्ति पूर्वक भोजन करलेवै जो पुरुष बीच २ में विच्छेद करके भोजन करता है उसके दोनों लोक नष्ट होते हैं जिसभांति पूर्वकाल में धनवर्द्धन नाम वैश्यके भये यह सुन राजा ने पूछा कि महाराज वैश्य ने क्यों

कर भोजनकिया और उसको क्या फल प्राप्त हुआ यह आप वर्णनकरैं तब सुमन्तुमुनि बोले कि हे राजा! सत्ययुग में एक धनवर्द्धन नाम वैश्य पुष्कर में रहता था एक दिन ग्रीष्मऋतु में मध्याह्नके समय बलिवैश्वदेव कर अपने पुत्र मित्र बन्धु आदि के संग बैठा भोजन करता था इतने में अकस्मात् एक बड़ा दीन शब्द बाहर हुआ वह उस शब्दको सुनतेही दयासे भोजन छोड़ उठधाया बाहर गया तबतक वह शब्द निवृत्त होगया और वैश्यने भी अपने घरमें आय उसी भोजनको खाया जो पात्रमें छोड़गया था भोजन करतेही वह मृत्युवश हुआ और इसी अपराध से परलोक में भी उसकी दुर्गति भई इस लिये अन्तर करके भोजन न करे अधिक भोजन भी न करै और उच्छिष्ट होकर अर्थात् जूठे मुख से कहीं बाहर न जाय बहुत खाने से रसकी उत्पत्ति होती है और रस होनेसे अनेक भांति के रोग शरीर में खड़े होते हैं जब अजीर्ण होय तब स्नान, दान, जप, होम, तर्पण, पूजा पाठ आदि कोई कर्म नहीं बन पड़ता अति भोजन करने से अनेकरोग उत्पन्न होते हैं आयुष घटता है लोकमें निन्दा होती है और अन्त में सद्गति भी नहीं होती इस कारण कभी बहुत भोजन न करै जो पुरुष उच्छिष्ट हो उसको यक्ष भूत पिशाच राक्षस आदि दबा लेते हैं और पवित्र पुरुषके समीप नहीं आते इससे सदा शुचि रहना चाहिये पवित्र मनुष्य यहां सुख से रहता है और अन्त में स्वर्ग में जाता है इतना सुन राजाने पूछा कि हे मुनीश्वर! ब्राह्मण कौन कर्मसे पवित्र होता है यह आप वर्णन करैं यह राजा का वचन सुनि मुनि कहनेलगे कि हे राजा! विधिसे जो ब्राह्मण आचमन करे

वह पवित्र होजाता है और आचमन की विधि यहहै कि हाथ पांव धोय पवित्र स्थानमें आसनके ऊपर पूर्वकी ओर अथवा उत्तरकी ओर मुखकरके बैठे और दहिने हाथको जानुके भीतर कर दोनों चरण बरोबररख शिखामें ग्रंथिलगाय निर्मल और शीतल जलसे आचमनकरै खड़े २ बात करते इधर उधर देखते शीघ्रता से और क्रोधयुक्त होकर आचमन न करै और गरम जलसे अथवा मलिन जलसे भी आचमन न करै ब्राह्मण के हाथमें पांच तीर्थहैं देवतीर्थ पितृतीर्थ ब्रह्मतीर्थ प्राजापत्य और सौम्य अब इनके लक्षण कहते हैं अँगुलियों के आगे देवतीर्थ तर्जनी और अंगुष्ठ के बीच पितृतीर्थ अंगुष्ठ के मूलमें ब्रह्मतीर्थ कनिष्ठा के मूलमें प्राजापत्य तीर्थ और हाथ के मध्यभाग में सौम्यतीर्थ है देवपूजा और बलिदेव तीर्थ से करै और ब्राह्मण को दक्षिणा भी देवतीर्थ सेही देवै तर्पण पिण्डदान आदि कर्म्म पितृतीर्थकरके करै ब्रह्मतीर्थकरके आचमन करै विवाह के समय लाजा होम और सोमपान प्राजापत्य तीर्थकरके करै कमण्डलु ग्रहण और दधिप्राशन नाम कर्म्म सौम्यतीर्थ से करै हाथकी अँगुलियों को इकट्ठा कर एकाग्रचित्त हो तीन आचमन पवित्र जल से करै और मुखसे शब्द न करै उसको बहुत फल होता है पहिले आचमन से ऋग्वेदकी तृप्ति होती है दूसरे आचमन से यजुर्वेद की और तीसरे से सामवेद की तृप्ति होती है आचमन करके दहिने अंगुष्ठ से जलकरके मुखको स्पर्शकरै तो अथर्वण वेदकी तृप्ति होतीहै ओष्ठके मार्ज्जन से इतिहास और पुराणों की तृप्ति होती है मस्तक में अभिषेक करने से रुद्र भगवान् प्रसन्न होते हैं शिखा के स्पर्श से ऋषि दक्षिण वामनेत्र के

स्पर्श से सूर्य्य और चन्द्र नासिका स्पर्श से वायु कर्णों के स्पर्श से दिशा भुजाके स्पर्श से यम कुबेर वरुण इन्द्र अग्नि तृप्तहोते हैं पैर धोने से विष्णु भगवान् प्रसन्न होते हैं भूमिमें जल छोड़ने से वासुकि आदि नाग सन्तुष्ट होतेहैं और बीच में जो जलबिन्दु गिरें उनसे चारप्रकार के भूतग्रामकी तृप्ति होती है अंगुष्ठ और तर्जनी से नेत्र स्पर्शकरै अंगुष्ठ अनामिका से नासिका अंगुष्ठ मध्यमा से मुख अंगुष्ठ कनिष्ठा से कर्ण और सब अँगुलियों से भुजाओं को स्पर्श करै अंगुष्ठ करके नाभि और सब अँगुलियों से शिरको स्पर्श करै अंगुष्ठ अग्नि रूप है तर्जनी वायु रूप मध्यमा प्रजापति रूप अनामिका सूर्य्यरूप और कनिष्ठा इन्द्ररूप है इस विधि से ब्राह्मण आचमनकरै तो सम्पूर्ण जगत् देवता और लोक तृप्त होते हैं ब्राह्मण सदा पूजनीय है क्योंकि वह सर्व देवमय है ब्राह्मतीर्थ करके आचमन करै अथवा प्राजापत्य और देव तीर्थ करके करै परन्तु पितृतीर्थ करके कभी आचमन न करै ब्राह्मण इतने जल से आचमन करै कि जल हृदय तक जाय तब पवित्र होता है क्षत्रिय कण्ठतक जाने से और वैश्य जल के प्राशनमात्र से शुद्ध होजाता है और शूद्र भी जल के स्पर्श से शुद्ध होता है दहिना हाथ उठा रहै और वाम के ऊपर यज्ञोपवीतरहै उसको उपवीत कहतेहैं वाम हाथ उठे रहने से प्राचीनावीती और जिसका जनेऊ कण्ठ में लटकै वह निवीती कहाता है मेखला मृगचर्म दण्ड यज्ञोपवीत और कमण्डलु इनमें से कोई वस्तु नष्ट होजाय तो आचमन कर दूसरी वस्तुका ग्रहण करै उपवीती होकर और दहिने हाथको जानु अर्थात् घुटने के भीतर रखकर जो ब्राह्मण आचमन करै

वह पवित्र होजाताहै ब्राह्मण के हाथकी सब रेखा गंगाआदि नदी हैं और अंगुलियों के पर्व हिमालयआदि पर्वत हैं इस-लिये ब्राह्मणका दहिना हाथ सर्व देवमय है हे राजा! हमने जो यह आचमनका विधान कहा इस विधि से जो आचमन करै वह अवश्य स्वर्गको जाय॥

तीसरा अध्याय॥

वेद व विद्याध्ययनविधि और गायत्री माहात्म्य व फल आचारादिका अभिवादन॥

सुमन्तु मुनि कहते हैं कि हे राजा! केशांत नाम संस्कार ब्राह्मण का सोलहवें वर्षमें क्षत्रिय का बाईसवें में और वैश्य का पचीसवें वर्ष में होता है केशांत संस्कार होने के अनन्तर चाहै तो गुरुके घर में रहै अथवा अपने घरमें आय विवाह कर अग्निहोत्रका ग्रहण करै स्त्रियों के लिये मुख्य संस्कार विवाह है हे राजा! यह उपनयन का विधान हमने कहा अब इसके आगे का कर्म्म कहते हैं शिष्यका यज्ञोपवीत कर गुरु पहिले उसको शौच आचार सन्ध्योपासन और अग्नि कार्य्य सिखावे और वेद पढ़ावै शिष्यभी आचमनकर उत्तराभिमुख बैठ दोनों हाथों करके ब्रह्माञ्जलि बांध एकाग्र चित्त हो वेद पढ़ै पढ़ने के आरम्भ और समाप्ति में गुरु के चरणों का वन्दन करै पढ़ने के समय दोनों हाथोंकी जो अञ्जली बांधी जाती है उसको ब्रह्माञ्जली कहते हैं शिष्य दहिने हाथ से गुरु का दहिना चरण और बायें से बायां ग्रहण करै पढ़ने के आरम्भ में (अधीष्वभोः) यह वाक्य शिष्यसे गुरु कहै और समाप्ति के समय (विरामोस्तु) यह वाक्य कहै वेद पढ़ने के समय आदि में और अन्त में ॐकार का उच्चारण करै बिना ॐकार

के उच्चारण करने से फल नहीं होता पहिले पवित्रहो तीन प्राणायाम करै पीछे ओंकार का उच्चारण करै प्रजापति ने अकार उकार और मकार ये तीन वर्ण तीन वेदों का सार निकाले हैं जिन से ओंकार बनता है और भूःभुवःस्वः ये तीनों व्याहृति और गायत्री के तीनपाद तीन वेदों से निकले हैं इसलिये जो ब्राह्मण दोनों सन्ध्याओं में इस को जपै वह वेदपाठ के फल को प्राप्त होता है जो घर के बाहर नदी के तटपर बैठ एक सहस्र गायत्री नित्य जपै वह बड़े भारी पाप से भी एक महीने में छूटजाता है जो ब्राह्मण क्षत्रिय और वैश्य अपनी क्रिया से हीन होते हैं उनकी साधुपुरुषों में निन्दा होती है और परलोक में भी कल्याण के भागी नहीं होते इस कारण कर्म्म का त्याग न करना चाहिये प्रणव तीन व्याहृति और त्रिपदा गायत्री ये सब मिल के जो मंत्र होता है वही ब्रह्मा का मुख है इस को जो तीनवर्ष नित्य जपै वह परब्रह्म में लीन होता है होम दान यज्ञ आदि क्रियाओं का क्षरण अर्थात् नाश होजाता है और प्रणव स्वरूप एकाक्षर ब्रह्म अक्षर है विधियज्ञों से जपयज्ञ उत्तम है जपों में भी उपांशु जप करने से सौगुणा फल होता है और मानस जप से सहस्र गुण सम्पूर्ण विधि यज्ञ जप यज्ञ की सोलहवीं कलाकी भी तुल्यता नहीं करसक्ते ब्राह्मण को सब सिद्धि जप सेही प्राप्त होती हैं और कुछ करै अथवा न करै परन्तु ब्राह्मण को गायत्री जप अवश्य करना चाहिये क्योंकि ब्राह्मण मैत्र कहलाता है तारा दीखतेहोयँ तब प्रातः सन्ध्याका आरम्भ करै और सूर्य्योदयपर्य्यंत गायत्री जप करता रहै इसीभांति सूर्य्यास्त से पहिलेही सायंसन्ध्या का आरम्भ करै और तारा दर्शनतक गायत्री जपै प्रातःकाल की

सन्ध्या से रात्रि के किये पाप दूर होते हैं और सायंसन्ध्या से दिन के किये इसलिये दोनों काल की सन्ध्या अवश्य करनी चाहिये जो दोनों सन्ध्या न करै वह शूद्र के समान होता है घर के बाहर जाय जल के तटपर गायत्री जप और सन्ध्याकरने से बहुत फल है सन्ध्या के मंत्र होममंत्र और जो ब्रह्मयज्ञ आदि नित्य कर्म्म हैं इन के मंत्रों के उच्चारण में अनध्याय का विचार न करै यज्ञोपवीत के अनन्तर समावर्त्तन संस्कार तक गुरु के घर में रहै भूमिशयन करै और सर्व प्रकार से गुरुकी शुश्रूषा करता रहै और वेद पढ़ै विनापूछे किसी से न बोलै और जो अन्याय से पूछै उस से भी कुछ न कहै जानता हुआ भी जड़ की भांति होजाय जो अधर्म से पूछै और अधर्म्म से कहै वह दोनों नरक में जाते हैं और जगत् में भी सबके अप्रिय होते हैं जिसको पढ़ाने से धर्म अथवा अर्थ की प्राप्ति न हो और वह कुछ शुश्रूषा भी न करै उस को कभी न पढ़ावै क्योंकि ऐसे विद्यार्थी को विद्या देना ऊषर में बीज बोना है विद्या ब्राह्मण से यह कहती है कि मेरी भली भांति रक्षाकर तौ मैं तेरे लिये शेवधिहूं और असूयावाले पुरुष को मुझे मतदे जिससे बलवती रहूं शेवनाम सुख और ज्ञान का है इन दोनों को जो धारण करै वह शेवधि कहलाती है अर्थात् सुख और ज्ञान के देनेहारी और विद्या यहभी कहती है कि जो ब्राह्मण शुचि ब्रह्मचारी और प्रमाद से रहितहो उस को मुझेदे जो गुरु के विना वेदशास्त्र आदि को आपही ग्रहण करै वह अतिभयंकर रौरव नरक में वास करता है जिस से वेद पढ़ै सदा प्रथम उसको प्रणाम करै केवल गायत्री जानताहो परन्तु शास्त्र की मर्यादा में चलै वह सब से उत्तम है और जो सब वेद और शास्त्र जानकर भी

मर्यादा में न रहै सब वस्तु भोजन करै और सब पदार्थ बेचैं वह अधम है गुरु के आगे शय्या अथवा आसन आदि पर न बैठै जो बैठाहोय तो गुरु को आते देख नीचे उतर कर अभिवादन अर्थात् प्रणाम करै वृद्धको आते देख तरुण पुरुष के प्राण ऊपर को उठते हैं जब वह वृद्धको अभ्युत्थान देकर प्रणाम करलेवै तब फिर ठिकाने आजाते हैं जो पुरुष वृद्धों की सेवा करै और उनको प्रणाम आदि करै उसके आयुष् बुद्धि यश और बलकी वृद्धि होती है बड़ेको जब अभिवादन करै तब अपना नाम लेवै कि मैं अमुकशर्मा आपको अभिवादन करता हूं अथवा केवल इतनाही कहै कि मैं प्रणाम करता हूँ गुरुभी अभिवादन सुनकर आशीर्व्वाद देवै कि (आयुष्मान्भव) अर्थात् बड़े आयुष्वालाहो जो अभिवादन के अनन्तर प्रत्यभिवादन अर्थात् लौटकर अभिवादन करना न जाने उसको कभी अभिवादन न करै वह शूद्र के तुल्य है और जो अभिवादन करने पर अभिमान से प्रत्यभिवादन न करै अथवा आशीर्व्वाद न देवै वह नरक को जाता है ब्राह्मणको कुशल पूछै क्षत्रियको अनामय वैश्य को क्षेम और शूद्रको आरोग्य पूछै जो यज्ञकी दीक्षालिये हो वह चाहै अपने से छोटाभी हो परन्तु उसको नामलेकर नहीं पुकारना पराई स्त्री को जिससे कुछ सम्बन्ध न हो उसको भवती सुभगे भगिनि इन सम्बोधनों से बोलै पितृव्य अर्थात् चाचा और ताऊ मामा श्वसुर ऋत्विक् गुरु इनको सदा उत्थान देवै मौसी मामी सासु बूआ अर्थात् पिताकी बहिन और गुरुकी स्त्री ये सब मान्यहैं बड़े भाई की जो सवर्णा स्त्री उसका नित्य जो आदर करै और माताके

समान जानै वह विष्णुलोक पावै माताकी बहिन पिताकी बहिन और अपनी बड़ी बहिन ये तीनोंभी माताके समान होतीहैं परन्तु माताका आदर सबसे अधिक रखना चाहिये बड़ापुत्र मित्र और भानजा इनको अपने समान समझै दश वर्षका ब्राह्मण हो और सौवर्षका क्षत्रिय परन्तु उनमें पिता पुत्र का सम्बन्ध होता है अर्थात् ब्राह्मण पिता और क्षत्रिय पुत्र इस भांति ब्राह्मण क्षत्रिय का पिता वैश्य का पितामह और शूद्रका प्रपितामह होता है धन बन्धु अवस्था आचरण और विद्या ये पांचो बड़ाई के हेतु हैं इनमें पहिले से दूसरा और दूसरेसे तीसरा तीसरे से चौथा और चौथेसे पांचवां अधिक हैं अतिवृद्ध शूद्रभी मानके योग्य होता है अतिवृद्ध रोगी भारयुक्त स्त्री ऋषी और राजा इनको रस्तादेना चाहिये अर्थात् ये आगे से आते होयँ तो मार्ग छोड़ अलग खड़ा होजाय और विवाह करने के अर्थ जो बर जाताहोय उसकोभी मार्गदेवै इनमें जो दो तीन आगे से आजावैं तो ऋषी और राजा मुख्यहैं और इन दोनों में भी ऋषि प्रधान है जो यज्ञोपवीत करके शिष्यको रहस्य और कल्प के सहित वेदपढ़ावै उसको आचार्य्य कहते हैं जो वेद का एकभाग अथवा वेदके अङ्ग जीविका के अर्थ पढ़ावै उसकी उपाध्याय संज्ञाहै जो निषेक अर्थात् गर्भाधान आदि सब संस्कार करै और खानेको अन्नदेवै उसको गुरु कहते हैं जो अग्निष्टोम आदि यज्ञ वरणी लेकर जिसके अर्थ करै वह उसका ऋत्विक् कहलाता है जो पुरुषके दोनों कान वेदसे भरता है और पवित्र करता है वही माता पिता है उसके साथ कभी द्रोह न करना चाहिये उपाध्याय से दशगुणा गौरव आचार्यका और आचार्य

से सौगुणा पिता का और पिता से हजारगुणा गौरव माता का करना चाहिये जन्मदेनेहारा और वेद पढ़ानेहारा ये दोनों पिता हैं परन्तु वेद पढ़ानेहारा मुख्य है क्योंकि ब्राह्मण का मुख्य जन्म तो वेद पढ़नेसेही होता है और माता पिता तो काम से उत्पन्न करते हैं ये उपाध्याय आदि जितने पूज्य हमने कहे इन सब से अधिक गौरव के योग्य महागुरु होता है और चारों वर्णों में पूजनीय है यह सुन राजा ने पूछा कि महाराज उपाध्याय आदि के लक्षण तो मैंने सुने अब कृपाकर महागुरु का लक्षण भी वर्णन कीजिये यह राजा वचन सुन सुमन्तु मुनि ने कहा कि हे राजा! जो ब्राह्मण जपोपजीवी हो अर्थात् जप से अपना उपजीवन करै और अठारहपुराण रामायण भारत विष्णुधर्म आदित्य धर्म्म शिव धर्म्म और वेद इन सब को भलीभांति जाने वह महागुरु कहाता है वह सब का पूज्य है हे राजा शतानीक! जो जिस को थोड़ा बहुत पढ़ावै वह उस का गुरु होता है चाहे अवस्था में छोटाही हो पढ़ाने से बालक वृद्धका भी पिता होसक्ता है पूर्वकाल में अंगिरा मुनि का बालक पुत्र बृहस्पति बड़े वृद्ध पितरों को पढ़ाता था और पढ़ाने के समय यह कहता कि हे पुत्रो! भली भांति पढ़ो पितर बालक के इस वचन को सुन क्षोभ कर देवताओं के समीप गये और सब वृत्तान्त कहा तब देवताओं ने कहा कि हे पितरो! जो अज्ञ हो अर्थात् कुछ न जानताहो वह बालक कहाता है और जो पढ़ावै वह पिता गिनाजाता है न तो अवस्था अधिक होने से न श्वेत केश होने से और न बहुत से मित्र बन्धुहोने से बड़ा होता है ऋषियों ने यह धर्म नियत किया है कि जो विद्या में अधिकहो वही

सब से वृद्ध गिनाजाय ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य और शूद्रों में जो ज्ञान बल जन्म शील विद्या आदि से बड़ाहो वही बड़ा होता है शिर के बाल श्वेत होजाने से वृद्ध नहीं होता जो तरुण भी हो परन्तु भली भांति विद्या सम्पादन करलेवै उसी को वृद्ध जानो जैसे काठ का हाथी अथवा केवल चर्म्म का मृग किसी काम का नहीं होता इसी भांति बिना पढ़ा ब्राह्मण नाममात्र को ब्राह्मण है जिस भांति स्त्रियों का परस्पर समागम निष्फल होता है जैसे मूर्ख को दान देना विफल है इसी भांति वेदसेहीन ब्राह्मण का जन्म वृथा है जो वेदपढ़ के भी वैश्वदेवआदि कर्म्म न करै वह शूद्र के समान है जो वेद न पढ़ै वैश्यकी वृत्तिकरै शूद्र की सेवा करै नट वृत्ति चोरी और चिकित्सा से अपना निर्वाह करै वह भी शूद्रही कहाता है जिस ग्राम में वेद बिना पढ़े और व्रत से हीन ब्राह्मणों को भोजन मिलै वह ग्राम राजा को दण्डनीय है वेदपढ़कर अग्निहोत्र का ग्रहण करै तब वेदपढ़ना सफल है यह वेदमेंही लिखा है जो वेदपढ़कर अग्निहोत्र नहीं करते उन का वेद पढ़ने का परिश्रम वृथा होता है वेद कहते हैं कि जो हम को पढ़कर हमारा अनुष्ठान न करै वह हमारे पढ़ने का व्यर्थ क्लेश उठाता है इसलिये वेदपढ़कर वेद में कहेहुये कर्मों को अनुष्ठान करै तब वेदपढ़ना सफल है वेदको जानकर जो धर्म का उपदेश करै वही उपदेश ठीक है जो मूर्ख वेद बिना जाने धर्म का उपदेश करते हैं वे बड़े पाप के भागी होते हैं शौच से हीन वेद से रहित नष्ट व्रत ब्राह्मण को जो अन्न दिया जाता है वह अन्न रोदन करता है कि मैंने क्या पाप किया था जो ऐसे मूर्ख ब्राह्मण के हाथ में पड़ा और वही अन्न जो जपोपजीवी को दियाजाय तो प्रसन्नता से नाचता है कि मेरे बड़े भाग्य

हैं जो ऐसे पात्र में आया विद्या और तप करके युक्त ब्राह्मण जब घरमें आवै तब सब ओषधी जो घरमें विद्यमान हैं अतिप्रसन्न होतीहैं और कहती हैं कि अब हमारी भी सद्गतिहो जायगी व्रत वेद और जपसेहीन ब्राह्मणको कभी दान न देवै क्योंकि पत्थरकी नाव नदी के पार नहीं उतार सक्ती वेदपाठी कोही हव्य कव्य देनेसे देवता और पितरोंकी तृप्ति होती है घरके समीप मूर्ख ब्राह्मण रहताहो और विद्वान् घरसे दूरहो तौ भी विद्वान् कोही बुलाकर दान देना मूर्ख ब्राह्मण का त्याग करनेमें कुछ दोष नहीं क्योंकि प्रज्वलित अग्निको छोड़कर कोई बुद्धिमान् भस्ममें हवन नहीं करता है परन्तु घरके समीप रहनेहारा ब्राह्मण जो गायत्रीमात्र भी जानता होय तो उसका त्याग न करै जो उसका त्याग करै तो रौरव नरक को जाय क्योंकि ब्राह्मण चाहे निर्गुणहो वा गुणवान् परन्तु गायत्री जानता होय तो परमदेव स्वरूप है परन्तु पतित न होय धान्यसे हीन ग्राम और जलबिन कूप जैसे किसी अर्थ नहीं आते ऐसेही विनापढ़ा ब्राह्मण है जो पतित ब्राह्मण के साथ स्नेहसे अथवा भयसे भोजन आदि का व्यवहार रक्खै वह ब्रह्महत्या समान पातक को प्राप्त होता है सब जीवों को अहिंसासे शासन करै और सदा मीठा सच्चा वचन बोलै जिस के मन और वचन शुद्धहैं वह वेद और यज्ञका पूराफल पाता है ऐसा वचन कभी न कहै कि जिससे किसी का आत्मा दुःख पावै और सुननेवालों को अच्छा न लगै पुरुषको वैसा आनन्द न चन्द्र के किरणों से न चन्दन से न शीतल छाया से और न ठंढे जल से मिलै जैसा मीठे वचन सुनकर मिलता आदर से ब्राह्मण सदा डरत रहै जैसा विषसे और

को सदा अमृत के समान मानै क्योंकि जिसका अवमान करैं उसकी कुछ हानि नहीं होती अवमान करनेहाराही नाश को प्राप्त होजाताहै वेद पढ़कर तप करै वही वेदके फलको पाता है जो सुखके अर्थ वेद पढ़े और उससे और जीविका करै वह शूद्रके समान होताहै ब्राह्मणके तीन जन्म होतेहैं एक तो माताके गर्भ से दूसरा यज्ञोपवीतसे और तीसरा यज्ञकी दीक्षा लेनेसे यज्ञोपवीतके समय गायत्री माता और आचार्य्य पिता होताहै यज्ञोपवीत के पहिले किसी कर्म्मका अधिकारी नहीं होता इस कारण वह कभी वेदका उच्चारण न करै जब यज्ञोपवीत होजाय तब वेद पढ़ने का अधिकारी होताहै यज्ञोपवीत के समय से मेखला चर्मदण्ड और यज्ञोपवीत का धारण करै और तभी से देवता पितर मनुष्यों का तर्पण कियाकरै पुष्प फल जल समिधा मृत्तिका कुशा और अनेक प्रकार के काष्ठों का संग्रह रक्खै मद्य मांस गन्ध पुष्पमाला अनेक प्रकार के रस और स्त्रियोंका त्याग रक्खै अनेक प्रकारके शुक्त अर्थात् सिर्के और अर्कोंका खाना पीना आंखोंमें सुर्मा डालना शरीर में तेल लगाना जूता और छत्रका धारण गीत सुनना नाच देखना जूआ खेलना झूठ बोलना निन्दा करना स्त्रियोंके समीप बैठना काम क्रोध लोभ आदिके वश होना व्यभिचारिणी स्त्रियों से बात चीत करना वीर्यपात करना ये सब बातैं ब्रह्मचारी के लिये निषिद्ध हैं अर्थात् ब्रह्मचारी ये बातैं न करै जो स्वप्न में ब्रह्मचारी का वीर्य स्खलन होजाय तो उठकर स्नान करै और सूर्य्यनारायण की पूजाकर गायत्री जपै तब शुद्ध होताहै जल पुष्प गोबर मृत्तिका कुशा और भिक्षा इनको नित्य लायाकरै परन्तु जो पुरुष अपने कर्ममें तत्पररहैं और

वेदपढ़े हैं अतिथिका आदर करते हैं उनके घरोंसेही भिक्षा ग्रहणकरै गुरुके कुलमें और अपने जातिके घरोंमें भिक्षा न मांगै जो अन्यत्र भिक्षा न मिलै तौ इनकी भी ग्रहण करै परन्तु जो किसी भाँति कलंकित होय उसकी भिक्षा न लेवे नित्य समिधा लाकर सायङ्काल और प्रातःकाल हवन करै भिक्षा मांगनेके समय मौनसे रहै जो ब्रह्मचारी भिक्षा के अन्नबिना सातदिन पर्य्यन्त और अन्नखाय और रोग आदि निमित्तके बिना सातदिन अग्निहोत्र भी न करै वह नष्टव्रत होजाताहै ब्रह्मचारी के लिये भिक्षाका अन्न मुख्य है इस कारण एकका अन्न नित्य न लेवै भिक्षान्नके भोजनसे नित्य उपवास का फलहोताहै यह धर्म्म केवल ब्राह्मणका कहा है क्षत्रिय और वैश्यके धर्म्म में कुछ भेद है गुरुके सम्मुख हाथजोड़ खड़ारहै जब गुरुकी आज्ञाहोय तब बैठे परन्तु आसनपर न बैठे गुरुके सोते उठनेसे पहिले उठै और सोने से पीछे शयनकरै गुरुके सम्मुख अति नम्रतासे बैठे किसी बातमें गुरुका अनुकरण अर्थात् नकल न करै गुरुकी निन्दा न करै और जहां निन्दा होतीहोय वहांसे उठकर चलाजाय अथवा कान मूंदलेवै गुरुकी निन्दा सुननेसे गर्दभकी योनि में जाता है और निन्दा करनेसे श्वानहोता है वाहनपर चढ़ा हुआ गुरुको अभिवादन न करै अर्थात् सवारी से उतरकर प्रणामकरै गुरुके साथ एक वाहन शय्याआसन शिला चटाई पट्टा आदिपर न बैठे जो गुरुसमीप न होयँ तो यही आचरण गुरुपुत्रके साथरक्खै परन्तु उच्छिष्ट भोजन गुरु काहीकरै गुरुकी सवर्णा स्त्रीको गुरुके समानमानै परन्तु गुरुपत्नीके देहमें तैल लगाना स्नानकराना इत्यादि कर्म्म न

करै और तरुण शिष्य अनेक प्रकारके गुण दोष समझकर गुरुपत्नीके पैरभी न दबावै क्योंकि स्त्रियोंके संगसे पुरुषों को अनेक दूषण लगते हैं इसलिये बुद्धिमान् पुरुष उनसे बचता रहै माता बहिन अथवा अपनी कन्याहो परन्तु इनके साथ भी एकान्त में बातचीत न करै क्योंकि ये इन्द्रिय बड़ी बलवान् हैं विद्वान्की बुद्धिभी चलादेती हैं राजाकीस्त्री और गुरुकी स्त्री को अपना नाम लेकर प्रणाम करै जिसप्रकार भूमिको खोदते २ जल मिलजाता है इसीभांति शुश्रूषा करते २ गुरुसे विद्या प्राप्तहोती है शिर मुड़ायेरहै अथवा जटाधारणकरै सूर्य्योदय और सूर्य्यास्तके समय ग्राम में न रहै अर्थात् जलके तटपर जाय सन्ध्यावन्दन करै जिसके सोते सोते सूर्य्योदय अथवा सूर्यास्तहोय वह बड़ेपापका भागी होताहै विना प्रायश्चित्त शुद्ध नहीं होता माता पिता और आचार्यका विपत्ति में भी अनादर न करै माता पृथिवी की मूर्ति है पिता प्रजापतिकी और आचार्य ब्रह्माकी इसलिये इनका सदा आदररक्खै पुत्रके उत्पन्न करने और पालन करने में माता पिता जितना क्लेश उठाते हैं उसका बदला सौ वर्षतक सेवा करने सेभी पुत्र नहीं देसक्ता इसलिये सदा माता पिता और गुरुकी शुश्रूषा करै जिससे सब प्रकारके तपकाफलहो और इनकी शुश्रूषाही बड़ातपहै ये तीनों तीनलोक हैं तीन आश्रम हैं तीन वेद हैं और येही तीन २ अग्नि हैं माता गार्हपत्यनामक अग्निहै पिता दक्षिणाग्नि है और गुरु आहवनीय नाम अग्निका रूप है जिसपर ये तीन प्रसन्नहोयँ वह तीनोंलोक जीतलेताहै और देवताओं की भांति स्वर्गमें विहार करताहै जो इनका आदर न रक्खै

उसकी सब क्रिया निष्फल हैं जब तक ये तीनों जीते रहैं तब तक इनकी शुश्रूषाके विना और कोई धन्धा न करै यही बड़ा तप व्रत और धर्म्म है और जो कुछ कर्म्म करै तौभी इनकी आज्ञा से करै उत्तमविद्या अधमपुरुष में होय तौभी ग्रहण करलेवै क्योंकि विष से अमृत बालक से सुभाषित अर्थात् अच्छीबात शत्रु से भी उत्तम आचरण कर्दम अर्थात् कीच से भी काञ्चन और दुष्कुल से भी स्त्री रत्न अर्थात् उत्तमस्त्री ग्रहण करते हैं उत्तम स्त्री रत्न विद्या धर्म शौच सुभाषित और अनेक प्रकार के शिल्प जहां से मिलैं वहांसेही ग्रहणकरलेवै और विपत्तिकाल में क्षत्रिय और वैश्य से भी वेदपढ़े परन्तु उतने कालतकही उनके समीप रहै और ब्राह्मण गुरुके समीप तो शरीर रहै तब तक रहने में कुछ दोष नहीं जो जन्मभर गुरुकी शुश्रूषा करै वह ब्रह्मलोक में निवास करता है पढ़ने के समय गुरुको कुछ देनेकी इच्छा न करै पढ़ने के अनन्तर गुरु की आज्ञापाय भूमि सुवर्ण गौ घोड़ा छत्र धान्य वस्त्र आदि अपनी शक्तिके अनुसार समर्पण करै गुरुका जब देहान्त होजाय तब गुरुपुत्र और गुरुस्त्री को गुरु के स्थान में मानै और ये भी न होयँ तो जो गुरुके भाईबन्धु होयँ उनको मानै और अग्निहोत्र नित्य करता रहै इस भांति जो ब्रह्मचारी धर्मका आचरण करै वह ब्रह्मलोक में जाय ब्रह्माजी के समीप निवास करै इतनाकह सुमन्तुमुनि बोले कि हे राजा ! यह हमने ब्रह्मचारीका धर्म वर्णन किया अब गृहस्थ के धर्मका वर्णन करते हैं आपसुनो ब्राह्मणआदि अपने २ समय में व्रतकी समाप्ति करैं और ब्राह्मण का यज्ञोपवीत वसन्त ऋतु में क्षत्रिय का ग्रीष्म में और वैश्यका शरद्ऋतु में करना चाहिये ॥

चौथा अध्याय॥

स्त्री के सर्वाङ्गोंका लक्षण॥

सुमन्तुमुनि कहते हैं कि हे राजा! यह ब्रह्मचारिव्रत जो कहा इतनाकरै इससे आधा अथवा चतुर्थांशही करै व्रतके अन्त में गुरुको सिंहासनपर बैठाय माला पहिनाय पूजाकरै और उत्तम गो निवेदन करै फिर समावर्त्तन नाम संस्कारकर गुरुकी आज्ञापाय घर आय सुन्दर लक्षणों से युक्त अपने वर्णकी स्त्री से विवाहकरै यह सुन राजाने कहा कि हे मुनीश्वर! प्रथम आप स्त्रियों के लक्षण वर्णन कीजिये कि किनलक्षणों करके युक्त कन्या शुभदायक होती है यह राजाका वचन सुनि मुनि कहनेलगे कि हे राजा! पूर्वकाल में ऋषियों के प्रति जो ब्रह्माजीने स्त्रीलक्षण कहा है वह हम वर्णन करते हैं आप एकाग्रचित्त होकर सुनो जिसके श्रवण करने से सब शुभाशुभ ज्ञात होय एक समय ब्रह्माजी अपने लोकमें सुखपूर्वक बैठे थे उस समय सम्पूर्ण ऋषिगये और ब्रह्माजी को प्रणाम कर विनय से प्रार्थना करतेभये कि महाराज सम्पूर्ण लोकों के कल्याण के अर्थ हम स्त्री के लक्षण सुनना चाहते हैं आप कृपाकर कथन कीजिये यह सुन ब्रह्माजी कहनेलगे कि हे मुनीश्वरो! हम स्त्रीलक्षण कहते हैं आप सब एकाग्रचित्त हो श्रवण कीजिये रक्त कमलके समान और भूमिपर सम्पूर्ण टिकजायँ बीचसे ऊंचे न रहैं, और अति कोमल हों ऐसे स्त्री के चरण उत्तम होते हैं भोगके देनेहारे हैं और जिनके चरण रूखे फटेहुये मांससे हीन नाड़ियों करके व्याप्त होयँ वे स्त्री दरिद्रा और दुर्भगा होती हैं पैरकी अंगुली आपुस में मिली हुई सीधी गोल और सूक्ष्म नखोंकरके युक्त और लम्बी अति

ऐश्वर्य्य देनेहारी हैं और स्त्रीको रानी बनाती हैं छोटी छोटी अं-
गुली होने से आयुष् न्यूनहोता है और बिरली अंगुलियों से
धनकी हानि होती है मूलमें जो टेढ़ी होयँ तौ दारिद्र करैं और
मोटी अंगुलियों वाली स्त्री दासी होयँ जिस स्त्री की अंगुली
एकके ऊपर एक चढ़ जाय इस भांति सब अंगुली हों वह
अनेक पतियों को मार अन्त में दासी होय पैर की अंगुलियों
के नख स्निग्ध अर्थात् चिक्कने लाल ऊँचे और छोटे होयँ
तो सौभाग्य धन पुत्र और राज्य मिलै श्वेत रङ्गके फूटे हुये
रूखे नीले धुन्धले नखों से दरिद्र होय और पीले नखहोयँ
तो अभक्ष्य वस्तुखाय गुल्फ अर्थात् टंकने गोल स्निग्ध
और नसैं जिनमें न दीखती होयँ वे गुल्फ उत्तम होते हैं रोमों
से रहित गोल गौर वर्ण की जंघा सौभाग्य और चढ़नेके लिये
हाथी पालकी देनेहारी होती हैं रोमयुक्त जंघाहोयँ तो वह
स्त्री भ्रमण करै जिसकी पिंडली ऊपर को खिंची हों वह स्त्री
क्लेशभोगै काकके समान जिसकी जंघा हों वह पति को हनन
करै जिसके जानु अर्थात् घुटने मार्जार अर्थात् बिल्ली और
सिंहके जानुके समानहोयँ वह पुत्र धन और सौभाग्य को पाती
है और जिसके जानु घटके समानहोयँ वह निर्द्धनहोय निर्मांस
जानुओं से कलह करनेहारीहोय नाड़ी दीखतीहोयँ तो हिंसा
करै जिस स्त्रीके रोम अथवा केशकुंचित अर्थात् घूंघरवाले
होयँ रूखे आगेसे फटे और एक २ रोमकूपमें तीन २ चार २ हों
और उस स्त्रीका पिंगल वर्णहो वह विषके समान प्राण हरने-
हारी होती है वह सातदिन के भीतर अपने पतिके प्राणहरै
स्त्रियों के ऊरु हाथी की सूंड़के समान गोल और केलाकेस्तंभ
से गौर और कोमल होयँ तो कामदेवका सुखदेनेहार होतेहैं और

सूखे रोमों से व्याप्त ऊरु दौर्भाग्य देते हैं जिसकी भग रोमों से हीनहो और उसकी सन्धि आपसमें श्लिष्टहो वह स्त्री चाहे नीच कुलमें भी उत्पन्न भईहो परन्तु राजाकी रानीहोय पीपल के पत्रके समान कछुवा की पीठके सदृश ऊँची और चन्द्रबिम्ब के समान योनि अनेक प्रकारके सुखदेती है जो योनि तिल पुष्प के सम हो और आगे से खुरके सदृशहो वह दरिद्र करने-हारी होती है नितम्ब पुष्टहोय तो उत्तम होता है ऊखलके स-मान होय तो शोक देनेहारा होता है स्तनों के भारसे नम्ररो-मावली से भूषित अति कृश और त्रिवली करके शोभित म-ध्यभाग शुभ होता है इससे विपरीत लक्षण होयँ तो अशुभ जानिये पीठऊँची न होय और रोमों से रहित होय तो उत्तम होती है और जो कुबड़ी और रोमों करके युक्त होय तो उसको कभी पतिका सुख नहीं प्राप्तहोता वह पतिके प्राण हरती है जिनके पेट सुकुमार और चौड़े होयँ उनके सन्तान बहुत होती है जिसकी कुक्षि मण्डूक के समानहो वह राजाकी माताहोय ऊँचे पेटवाली बन्ध्या गोलपेट से व्यभिचारिणी और दासी होती है और ऊँचे नीचे पेटवाली स्त्री क्षुद्रा होती है गोल ऊँचेभारी और बिस्तार युक्त स्तन उत्तम होते हैं गर्भके समय जिस स्त्री का दहिना कुच ऊँचाहोजाय उसके पुत्र उत्पन्न होय और बायां कुच ऊँचाहोने से कन्या जिसका चिबुक अर्थात् ठोढ़ी लम्बी होय वह स्त्री धूर्त्तहोय और जिसकी ठोढ़ी दबीहुई होय वह पतिके साथ द्वेष रक्खै जिनके कुच सर्पके फणकेसमान अथवा कुत्ताकी जीभ के तुल्यहों वे दरिद्रा होती हैं जिसका वक्षस्स्थल अर्थात् छाती मांस से पुष्टरोम और नाड़ियों से रहित हो वह अनेक प्रकारके भोग भोगै गोलछातीवाली हिंसा करै रोमयुक्त

छाती होय तो कुशीला होय निर्मांस होय तो विधवा और बहुत चौड़ी छाती होनेसे कलह करनेहारी होय जिस स्त्री के हाथ की रेखा गहरी स्निग्ध और रक्तवर्ण होयँ वह सुख भोगै और टूटी रेखाओं से दरिद्रा होतीहै जिसके हाथमें कनिष्ठा के मूल से तर्जनीतक एक पूरी रेखा चलीजाय वह सौ वर्षका आयुष् पावै जो रेखा न्यून होय तो आयुष् भी न्यून होय हाथकी अँगुली गोल लम्बी पतली छिद्ररहित और कोमल तथा रक्तवर्ण होयँ तो अनेक प्रकारके भोगमिलैं अत्यन्त लाल ऊँचे और स्निग्ध नख होयँ तो ऐश्वर्य्य मिलै जो रूखे श्वेत नीले पीले नख होयँ तो दौर्भाग्य और दरिद्र होय स्त्रीके हाथ फटे हुये रूखे और विषम अर्थात् ऊँचे नीचे व छोटे बड़े होयँ वह क्लेशभोगै और कोमल रक्तवर्ण स्निग्ध और छोटे २ हाथोंवाली स्त्री सुखमें रहती है जिसके अँगुलियों के पर्वोंमें यवके चिह्न होयँ उसको बहुत सुख और धन धान्य मिलता है जिस स्त्री का मणिबंध अर्थात् हाथकी कलाई तीन रेखाओं से भूषितहो वह उत्तम भोग और दीर्घ आयुष् पातीहै जिसके हाथमें श्रीवत्सध्वजा कमल हाथी घोड़ा चक्र स्वस्तिक वज्र खड्ग पूर्ण कलश अंकुश प्रासाद अर्थात् महल छत्र मुकुट हार केयूर कुंडल शंख तोरण आदिके चिह्न होयँ वह राजाकी स्त्री होती है तुला अर्थात् तखड़ी का चिह्न होने से धनवान् वैश्यकी स्त्री होय दराती जूआ हल फाल ऊखल आदिका चिह्न होनेसे धनाढ्य कृषीबल अर्थात् जमींदारकी पत्नी होय स्त्रीकी भुजा ऊपर से नम्र रोमरहित और गोपुच्छके आकार होयँ तो उत्तम होते हैं कूर्पर अर्थात् कुहनीभी रोमरहित और गूढ़ होय तो श्रेष्ठहै स्कन्ध नत अर्थात् नयाहुआ उत्तम है स्थूल स्कन्ध

होनेसे वन्ध्या होतीहै जिसका कन्धा ऊँचा नीचा होय वह व्यभिचारिणी होय जिसकी ग्रीवामें तीन रेखा होयँ वह सदा रत्नोंके भूषण पहिनै दुर्बल ग्रीववाली स्त्री निर्द्धन स्थूल ग्रीवा वाली दुःख भोगनेहारी छोटी ग्रीवावाली मृतवत्सा अर्थात् जिसके संतान होकर मरजायँ और लम्बी ग्रीवावाली स्त्री व्यभिचारिणी होय जिसके दोनों कन्धे और कृकाटिका अर्थात् घेंटू ऊंचे न होयँ वह स्त्री दीर्घ आयुष् पाती है और उसका पति भी चिरकाल तक जीता है जिसका मुख चौखूंटा होय वह स्त्री धूर्त्ता होती है गोल मुखवाली शठ छोटे मुखवाली सन्तानहीन बड़े मुखवाली दुर्भगा होती है श्वान शूकर भेड़िया उल्लू बन्दर और काक के समान जिस का क्रूर मुख होय वह पापिनी और संतान तथा बंधुओं से हीन होती है जिनका मुख कमल दर्पण अथवा चन्द्रके समान होय वे सब उत्तम भोग पाती हैं रक्तवर्ण स्निग्ध और पतला ओष्ठ अच्छा होताहै जिसका ऊपर का ओष्ठ मोटा होय वह कलहकरै नीले आदि रंगका ओष्ठ होय तो दुःख भोगै और जिसका ऊपरका ओष्ठ तीक्ष्ण होय वह अति क्रोधयुक्त होय जीभ लालवर्ण थोड़े जल से युक्त पतली और लम्बी अच्छी होती है मोटी छोटी टेढ़ी फटी हुई और बुरे रंगकी अच्छी नहीं अतिश्वेत स्निग्ध और ऊंचे दांत उत्तम होतेहैं छोटे फूटे बिरल रूक्ष विकट और ऊंचे नीचे दांत दुःखदायकहैं न बहुत मोटी न पतली न बहुत लम्बी और ऊंची नासिका श्रेष्ठ है नील कमल के समान और सुन्दर पक्ष्म अर्थात् बांफन करके युक्त नेत्र उत्तम होतेहैं खंजनाक्षी मृगाक्षी और बराहके समान नेत्रोंवाली स्त्री उत्तम भोग

भोगती हैं और सहत के समान पिंगलवर्ण रेखायुक्त और मल आदि से रहित नेत्र ऐश्वर्य देते हैं जिसके नेत्र गड़े हुये होयँ और अति पिंगल वर्ण होयँ वह दुःखभागिनी होती है लाल नेत्र छोटे बड़े धूम्रवर्ण प्रेतके नेत्रों के समान और श्वान के नेत्रों के तुल्य जिसके नेत्र होयँ वह स्त्री सदा त्यागने योग्य है जिसके नेत्र उद्भ्रान्त और केकर अर्थात् ऐंचेताने होयँ वह स्त्री व्यभिचारिणी होय और मद्य मांस खानेवाली होय जिसके कान कोमल और लम्बे होयँ वह अनेक प्रकार के भूषण पहिने और गर्दभ ऊंट नकुल उल्लू अथवा वानर के समान जिसके कान होयँ वह दुःख भोगै गोल कोमल और रोमों से रहित कपोल उत्तम होते हैं अर्द्धचन्द्र के समान और चमकता हुआ ललाट अच्छा होताहै मस्तक न बहुत बड़ा न छोटा अच्छा होताहै हाथी के समान मस्तक उत्तम नहीं पतले काले स्निग्ध और लम्बे केश उत्तम होते हैं हंस कोयल भ्रमर मयूर वीणा अथवा बांसुरी के तुल्य जिनका स्वर होय वे भाग्य करके युक्त होती हैं जिनका स्वर फूटी थाली के समान अथवा काक के तुल्यहो वे अनेक भाँति के दुःख भोगती हैं हंस वृष अथवा मस्त हाथी के समान जिसकी गति होय वह अपना कुल विख्यात करै और राजाकी रानी होय जिसकी गति श्वान जम्बुक काक और मृगके समान होय और बहुत जल्दी चलै वह दासी होय गोरोचन सुवर्ण चम्पा के पुष्प अथवा केसरिके समान स्त्रीका रंग उत्तम होताहै सम्पूर्ण स्त्री के अंग कोमल रोमों से और पसीने से रहित अच्छे होते हैं कपिल वर्ण की स्त्री हीनांगी अधिकांगी रोमों से रहित अथवा बहुत रोमों से व्याप्त जिसका देह होय

नदी और पर्वत के नामवाली अथवा यक्ष प्रेत आदि के नाम वाली स्त्री को न ब्याहे जिसके अङ्ग सब ठीक हों और केश रोम दन्त सूक्ष्महों ऐसी स्त्रीसे विवाह करै क्रिया से हीन पुरुषों से रहित वेद शास्त्र से वर्जित क्षय कुष्ठ अपस्मार आदि रोगों से पीड़ित और बहुत रोमों करके युक्त जो कुल होय उसकी कन्या से विवाह न करै इतना कह ब्रह्माजी ने ऋषियों से कहा कि ये सब उत्तमलक्षण जिस स्त्री में होयँ और आचरण भी अच्छा होय ऐसी से विवाह करै तो धन धान्य सन्तान कीर्त्ति और ऐश्वर्य पावै हे मुनीश्वरो! सब लक्षणों से अधिक सद्वृत्त अर्थात् भला चालचलन है यह स्त्री में अवश्य देखना चाहिये॥

पांचवां अध्याय॥

धन संपादन करने की आवश्यकता का कथन, तुल्यकुलमें संबन्ध करने की प्रशंसा॥

इतना सुन राजाशतानीकने कहा कि महाराज स्त्रियोंके लक्षण तो मैंने आपके मुखारबिन्द से सुने अब स्त्रियों का सद्वृत्त सुनना चाहताहूँ यह राजाकी बिनती सुन मुनि बोले कि हे राजा! ब्रह्माजीनेही ऋषियों के प्रति सद्वृत्त भी कहा है वही हम आप से कहते हैं ऋषियों के प्रश्न के अनन्तर ब्रह्माजी कहने लगे कि हे मुनीश्वरो! पहिले गुरु कुल में विद्या पढ़कर धन सम्पादन करै पीछे सुन्दर लक्षणों से युक्त और सुशील स्त्री से शास्त्र की रीति करके विवाह करै धनके बिना गृहस्थाश्रम बड़ी विडम्बना है इसलिये धन सम्पादन करके पीछे गृहस्थी बनै नरकका दुःख भोगना अच्छा परन्तु स्त्री पुत्रोंको भूखके मारे रोतेहुये देखना

अच्छा नहीं फटे और मैले वस्त्र पहिने अतिदीन और भूखेही पुत्रों को देख जिनका हृदय नहीं फटता वे अतिकठोर हैं परन्तु उनके जीवन को धिक्कारहै उनके लिये मृत्यु परम उत्सवहै इस-लिये जो धन विना विवाहकरै उसको स्त्रीका सुख प्राप्त नहीं होता केवल अपने गले में स्त्रीरूप फांसी डालताहै और स्त्री विना गृहस्थाश्रम नहीं होसक्ता इस लिये धन मुख्यहै कोई क-हते हैं कि संतानसे त्रिवर्ग अर्थात् धर्म अर्थ और काम की प्राप्ति होती है परन्तु नीति वेत्ताओं का यह मतहै कि धन और उत्तम स्त्री ये दोनों त्रिवर्ग के हेतुहैं दो प्रकारका धर्म्म है एक तो इष्ट अर्थात् यज्ञ आदि करना दूसरा पूर्त्त अर्थात् वापी कूप तलाव धर्म्मशाला आदि बनाना ये दोनों धन से हो सक्ते हैं दरिद्री के बन्धुभी उससे लज्जा करते हैं और धनाढ्य के अनेक बन्धु बनजाते हैं धनही त्रिवर्गका मूलहै धनवान् में अनेक उत्तम गुण होजाते हैं और निर्द्धन के विद्यमान गुणभी नष्ट होजाते हैं सब वस्तुओं का साधन धन है धन के विना अजागलस्तन अर्थात् बकरी के गलथने की भाँति पुरुषका जन्म व्यर्थ है पूर्व्व जन्मके पुण्य से धन मिलताहै और धनसे पुण्य होती है इस लिये धन और पुण्य अन्योन्याश्रय अर्थात् एक दूसरे के सहारे हैं इस कारण पहिले उत्तम रीति से धन सम्पादन करके विवाह करै जब तक विवाह न करै तब तक पुरुष अर्द्ध शरीर होता है जिस भांति एक पहिये का रथ अथवा एक परका पक्षी किसी काम का नहीं होता इसी भांति स्त्री हीन पुरुष भी किसी कर्म्म के योग्य नहीं विवाह तीनप्रकार का होता है नीच कुल में समान कुल में और उत्तम कुल में नीच कुल में विवाह करने से निन्दा होतीहै उत्तम

कुलवाले अपना अनादर करते हैं इस कारण समान कुल में विवाह करना चाहिये और विजातीय सम्बन्ध भी ठीक नहीं जैसा कोयल और हंसका जिस सम्बन्ध में प्रति दिन स्नेहकी वृद्धिहोय और विपत्ति सम्पत्तिके समय प्राण तक भी देने में विचार न करैं वह उत्तम सम्बन्ध कहाताहै परन्तु यह बात उनमेंही होती है जो कुल शील और धनमें समान होते हैं मनुष्यों के स्नेह और कृतज्ञताकी परीक्षा विपत्ति मेंही होती है विवाह और मंत्र अर्थात् सलाह समानों के साथही करै उत्तम और अधमों के साथ कभी न करै जिससे सुख होय॥

छठवां अध्याय॥

चारों वर्णों के विवाह व उनसे उत्पन्नहुये पुत्रों के लक्षण॥

ब्रह्माजी कहते हैं किहे मुनीश्वरो! जो कन्या माता की सपिण्डा न होय और पिताकी सगोत्रा न होय वह तीन वर्णों को विवाह के योग्य होती है धर्म्म साधन के लिये ब्राह्मण ब्राह्मणकी कन्यासे विवाह करै और कामवश होकर क्षत्रिय आदि तीनवर्णों की कन्या विवाहै इसी भांति क्षत्रिय अपने वर्ण की कन्या को धर्म से और वैश्य तथा शूद्रकी कन्या को कामसे विवाहै वैश्य धर्म्म के लिये अपने वर्ण की कन्या से और काम वश हो शूद्र की कन्या से भी विवाह करै परन्तु शूद्र के लिये शूद्र की कन्याही भार्य्या कही है ब्राह्मण के लिये चारों वर्ण की कन्या ब्याहनी लिखी हैं परन्तु शूद्रा से विवाह करना योग्य नहीं शूद्रा से विवाह कर और पुत्र उत्पन्न कर उतथ्य शौनक भृगु आदि ऋषि पतित भये शूद्रा के साथ संग करने से ब्राह्मण अधोगति को जाता है और उसमें पुत्र उत्पन्न करके ब्राह्मणपने से हीन हो-

जाता है अर्थात् वह भी शूद्र होजाता है देवता पित्तर उसका हव्य कव्य ग्रहण नहीं करते हे मुनीश्वरो ! अब हम आठ प्रकार के विवाह कहते हैं ब्राह्म दैव आर्ष प्राजापत्य आसुर गान्धर्व राक्षस और आठवां पैशाचनामक विवाह होता है इन में पहिले चार विवाह ब्राह्मणको करनेयोग्य हैं पिछले चारका अधिकारी क्षत्रिय है आसुर और राक्षसका अधिकारी वैश्य है और शूद्रभी इनदोकाही अधिकारी है पहिले चारविवाह ब्राह्मण के लिये उत्तमहैं राक्षसविवाह क्षत्रिय के लिये और आसुर वैश्य और शूद्र के लिये मुख्य है पैशाच और आसुर ये दो विवाह निन्द्य हैं वेदशास्त्र पढ़े हुये उत्तम कुलके वरको बुलाय विधिपूर्वक विवाह करदेना इसको ब्राह्म विवाह कहते हैं यज्ञहोरहाहै और ऋत्विक् अपना कर्म कर रहे हैं उस समय कन्याको अलंकृतकर उत्तमवर से विवाह देना इसकानाम दैवविवाह है एक बैल और एक गौ वरसे लेकर विधिपूर्वक उसको कन्या देना यह आर्षविवाह कह-लाता है वधूवरका विवाह करदेना और यह कहदेना कि ये दोनों साथ धर्मका आचरण करैं इसका नाम प्राजापत्य विवाह है कन्या के माता पिता और बन्धुओं को धनदेकर विवाह करना आसुर विवाह कहलाता है कन्या और वर परस्पर अनुरक्तहो बातचीतकर आपही विवाह करलेवें इसका नाम गान्धर्वविवाह है मारपीट करके रोती चिल्लाती कन्या को ले आना राक्षसविवाह होता है सोई हुई अथवा मत्तकन्या को गुप्तउठालाना यह पैशाच नामक विवाह है ब्राह्म विवाह से उत्पन्नहुआ पुत्र दश अगले और दश पिछले कुलोंका उद्धार करता है दैवविवाह से उपजापुत्र सात २ अगले

पिछले कुलों को तारता है आर्षविवाह से उत्पन्न हुआ सुत तीन अगले और तीन पिछले पुरुषोंका उद्धारकरता है बाकी चारप्रकार के विवाहों से उत्पन्नहुये पुत्र क्रूरस्वभाव धर्म के द्वेषी झूठबोलनेहारे और दुष्टहोते हैं अनिन्दित विवाहों से सन्तान उत्तमहोती है और निन्दितविवाहों से निन्दित इस कारण आसुर आदि निन्दितविवाह न करै विवाहरूप संस्कार सवर्णा स्त्री से विवाह करकेही होता है कन्याका पिता यत्किञ्चित् धनभी वरसे न लेवे वरकाधन लेने से वह अपत्यबिक्री अर्थात् सन्तान बेचनेहारा गिनाजाता है जो पुरुष कन्या के धन से अपना जीवन करते हैं कन्या के दिये वस्त्र पहिनते हैं अथवा कन्या देकर मिलेहुये बाहनोंपर चढ़ते हैं वे नरक में जाते हैं आर्ष विवाह में गो मिथुन अर्थात् एक बैल और एक गौ लेनी कही है परन्तु वहभी ठीकनहीं क्योंकि चाहे थोड़ालो चाहे बहुत परन्तु वह कन्याका मूल्यही गिना जाताहै इसलिये बरसे कुछ भी न लेना चाहिये इस भांति विवाह करके ब्राह्मण उत्तम देश में निवास करै जिससे बहुत यशहोय यह ब्रह्माजी का वचन सुन ऋषियों ने पूछा कि महाराज कौनसा देश निवास करने के योग्य है कि जहां बसने से धर्म और यशकी वृद्धिहोय यह मुनि वचन सुन ब्रह्माजी कहनेलगे कि हे मुनीश्वरो! जिस देशमें धर्म अपने चारोंचरणों करके सहितहो और विद्वान्लोग बसतेहों सब व्यवहार शास्त्रकी रीति से होतेहों वह देश उत्तम है और निवास के योग्य है इतना सुन ऋषियों ने पूछा कि महाराज विद्वान् जिस आचरण को ग्रहणकरें और धर्म्मशास्त्र में जो कहाहै इसको आप कथनकरैं तब ब्रह्माजी बोले कि उत्तम

विद्वान् रागद्वेष से रहित होकर जिस धर्मका आचरण करैं वह मुख्य है न तो अत्यन्त निष्कामहो और न सब कर्म कामना सेही करै सङ्कल्प से कामहोता है वेद पढ़ना यज्ञ करना व्रत नियम धर्म्म आदिक करना सब काम सेही होते हैं ऐसी कोई क्रियानहीं जिसमें काम नहींहो श्रुतिस्मृतिसदाचार और अपने मनकी प्रसन्नता इन चारबातों से धर्मका निर्णयकरै श्रुति स्मृति में कहेहुये धर्म के आचरण से इस लोक में बहुत यश मिलता है और परलोक में इन्द्रलोककी प्राप्ति होती है श्रुति वेद को कहते हैं स्मृति धर्मशास्त्र का नामहै इन दोनों से सब बातों का विचार करै क्योंकि धर्मकी जड़ यही हैं जो इन दोनों का तर्कशास्त्र आदि से अपमानकरै उस नास्तिक और वेद निन्दक को सत्पुरुष अपने समीप न रहने देवैं निषेकसे लेकर मरण पर्यन्त जिसके सब संस्कार वैदिक मन्त्रों से हुयेहोयँ उसीको वेदका अधिकार है सरस्वती दृषद्वती और गङ्गा इन तीन नदियों के बीच में जो देश है वह देवताओं का बनाया हुआ है उसको ब्रह्मावर्त्त कहतेहैं जिस देशमें चारोंवर्ण और उपवर्णों में जो आचार परम्परा से चला आयाहोय उसका नाम सदाचार है कुरुक्षेत्र मत्स्य देश पाञ्चाल देश शूरसेन देश ये देशभी ब्रह्मर्षियों करके सेवित हैं परन्तु ब्रह्मावर्त्त से कुछ न्यूनहैं इन देशों में उत्पन्न हुये ब्राह्मणों से सब देश के मनुष्य अपना अपना आचार सीखतेहैं हिमालय और विन्ध्य पर्वतके बीच कुरुक्षेत्र से पूर्व और प्रयागसे पश्चिम जो देश है इसका नाम मध्य देश है और इन्हीं दोनों पर्वतों के बीच पूर्व समुद्रसे पश्चिम समुद्रतक जो देश है उसको आर्य्यावर्त्त कहते हैं जिस देश में कृष्णसार मृग अपनी इच्छा से विचरैं वह देश

यज्ञ करने के योग्य होता है इनके विना और सब म्लेच्छ देश हैं इन देशों में ब्राह्मण उत्तम देखके कहीं निवास करै हे मुनीश्वरो ! यह हमने संक्षेप से देश व्यवस्था आपको सुनाई है विस्तार से नहीं ॥

सातवां अध्याय ॥

उत्तमदेश में रहने व गृह बनानेका विचार व स्त्रियों के आचरण कथन ॥

ब्रह्माजी कहते हैं कि हे मुनीश्वरो! इसके अनन्तर जो ब्राह्मण को करना चाहिये वह हम वर्णन करते हैं पहिली रीतिसे उत्तम देश में जाय ऐसा स्थान ढूंढै कि जिसमें अपने धन और स्त्री की रक्षा भलीभांति रहै क्योंकि ये दोनोंही त्रिवर्ग का हेतु हैं इस लिये इनकी रक्षा अवश्य करनी चाहिये पुरुष स्थान और आश्रय इन तीनों से धनआदि का रक्षण होता है कुलीन नीति जाननेवाला विनय करके युक्त धर्मात्मा त्यागी और दृढ़व्रत ऐसा पुरुष आश्रय के योग्य होता है नगर ग्राम खर्वट अथवा खेटमें निवास करै जहां बहुत से धर्मात्मा मनुष्य बसते हों वहां गुरुकी आज्ञा से अथवा जो ग्राम में मुख्य होय उसकी सम्मति से रहने के लिये घर बनावै परन्तु किसी पड़ोसी को क्लेश न देवै नगरका द्वार चौक शाला शिल्पी अर्थात् कारीगरों के घर जुआ खेलने का स्थान मांस और मद्य बेचने का स्थान नटों के पाखण्डियों के और राजा के नौकरों के घर देवता का स्थान राजमार्ग और राजा के महल इन सब से दूर अपना घर बनावै ऐसे स्थान में घर बनावै जहां पड़ोसी उत्तम मनुष्य हों और उस भूमिका झुकाव पूर्वको अथवा उत्तर कोहो बहुत दृढ़ ऊँचा एकद्वार करके युक्त जिसमें दृढ़ कपाट लगे होयँ सब ऋतुओं में सुख

देनेहारा घर बनावे स्नानका स्थान रसोई का मकान भण्डार गोशाला अश्वशाला दासी दास के रहनेका स्थान शौचका स्थान शयन का घर बैठने का और पढ़नेकास्थान अग्निहोत्र शाला देवगृह और अन्तःपुर अर्थात् स्त्रियोंकेरहने का स्थान ये सब वस्तु शास्त्रकी विधि से घर के बीच अलग २ बनावै और गृहस्थ के सब उपकरण उस में संचय करै इस प्रकारके घर में निवास करके भी स्त्रियोंकी सदा रक्षा करनी चाहिये क्योंकि स्त्रियोंकी रक्षा न करने से वर्णसंकर उत्पन्न होते हैं और अनेक प्रकार के और भी दोष होते हैं स्त्रियों को कभी स्वतंत्र न होनेदेवै और रसोई आदि घर के काम विना और किसी काम का अधिकार भी न देवै किसी समय भी स्त्री को खाली न बैठना चाहिये घर का कुछ धन्धा करतीरहै घर में दरिद्र अतिरूप खोटा संग स्वतन्त्रता खाली बैठना पान करना मेला आदि में जाना भिक्षुकी कुट्टनी दाई नटी आदि दुष्टस्त्रियों के संग निमंत्रण में जाना बहुत तीर्थयात्रा अथवा देवता के दर्शनों के लिये घूमना पति के साथ बहुत वियोग होना पति का अतिक्रूर अति सौम्य ईर्षालु और कृपणहोना और स्त्री के वशहोजाना ये सब स्त्री के नाशहोने के हेतु हैं इन से बुद्धिमान् पुरुष स्त्री को सदा बचावै स्वामी अच्छा न होय तो भृत्य और स्त्री बिगड़जाते हैं ताड़नसे और लालन से जिस भांति होसकै स्त्रियोंकी रक्षाकरै जो बहुत पत्नीहोयँ तो सब का तुल्य आदर रक्खै विना कारण उन का मान अथवा अपमान कभी न करै भृत्य अर्थात् नौकर और स्त्रियों के साथ इसभांति बरतै जिस से सुख और यश मिलै स्त्री पुरुष का आधा शरीर है उस के विना धर्म क्रियाओं का

धना नहीं होसक्ता इस कारण सदा स्त्री का आदर रक्खै उन में जो अधिक प्रिया होय उससे अपनी प्रीति एकांत में प्रकट करै प्रकट में सबके साथ तुल्य व्यवहार रक्खै अर्थात् रतिवस्त्र भूषण आदि उपचार सब को समानदेवै और ऋतु काल में सब के समीप गमन करै और नित्य भी क्रम से सबके पास रहै एकके साथ जो बातचीत एकांत में करै वह दूसरी से न कहै और जो एक दूसरी के दोष ईर्षा से कहै तौ उसका अनादर न करै सुनलेवे परन्तु अपने मन में सब बिचार कर उन के जितने सन्तानहोयँ उन को वस्त्र भूषण और भोजन तुल्य देवै माता के दोष से सन्तान पर पिता को स्नेह न्यून न करना चाहिये उन सबकी प्रीति द्वेष अभिप्राय शौच अशौच आदि गुप्तरीति से सब जानतारहै पुराने सेवक बूढ़ीदासी दाई आदि अनेक प्रकार की कथा सुनाय उन के अभिप्राय को जानै और कथा कहने के समय उन के नेत्र मुखआदि की चेष्टादेखै जिससे अभिप्राय विदित होजाय सीता अरुंधती शकुन्तला आदि के चरित सुनाय उन के भाव को भली भांति जानै इनबातों से दुष्टस्त्री को जान उससे अपने प्राणों को बचातारहै अपने केशों में शस्त्र छिपाय रानी ने राजा विदूरथ को मारदिया मेखला मणि देने से सौबीर राजा के प्राणहरे भाई से मिलकर रानी ने राजा भद्रसेन को यमलोक दिखाया काशिराज और रैवतनाम राजा दोनों उनकी रानियों ने विषदेकर मारे इस भांति अनेक राजा और ब्राह्मण स्त्रियों ने मारे हैं औरोंकी तो क्या कथा है इस कारण सावधानहो स्त्रियों की रक्षा करै और दुष्ट स्त्रियों से आपभीबचै स्त्रीका अपराधदेख उसके साथ संभोग

न करै यही उनकेलिये दण्डहै भर्त्ताके साथ द्वेष होजाने से स्त्री नष्टहोती है और वह सत्कुल आचारधर्म गुण आदि कुछ भी नहीं देखती इसलिये इन दोषोंसे बचावै स्त्री के पति-व्रताहोनेके तीनकारण हैं पुरुष न मिलै एकान्तस्थान न होय और घरके धन्धेसे अवसर न मिलै उत्तम स्त्रीको साम और दानसे अपने आधीन रक्खै मध्यमको दान और भेद से और अधम स्त्रीको भेद औ दण्डसे स्वाधीन करै परन्तु दण्डदेने के अनन्तर भी साम दान आदिसे उसको प्रसन्न करलेवै भर्त्ताका बुराकरनेहारी और व्यभिचारिणीस्त्री कालकूट नाम विषकेसमान होती है इसलिये उसका त्यागकरै उत्तमकुलमें उत्पन्न पतिव्रता विनीता और भर्त्ता का हित चाहने वाली स्त्रीका सदा आदररक्खै हे मुनीश्वरो! यह जो हमने स्त्रियों का व्यवहार वर्णन किया इसरीति पर जो पुरुष चलै वह त्रिवर्ग और संसार में सुखपावै ॥

आठवां अध्याय ॥

शास्त्र व परम्परा के धर्म व आचरणकी आवश्यकता ॥

ब्रह्माजी कहतेहैं कि हे मुनीश्वरो! यह मनुष्योंको स्त्रियों के साथ जैसे वरतनाचाहिये वह हमने कहा अब हम पुरुषों के साथ स्त्रियों को जिस विधिबरतना योग्य है वह वर्णन करते हैं संपूर्णकार्य विधिसे किये हुये उत्तमफल देते हैं और विधिनिषेध शास्त्रसे जानाजाता है परन्तु स्त्रियोंको शास्त्रका अधिकार नहीं इसलिये उनको दूसरे से विधिनिषेध जा-ननेकी अपेक्षा रहती है पहिले तो भर्त्ता सब धर्मों का उप-देश करता रहै और भर्त्ता मरने के अनन्तर पुत्र सब विधवा और पतिव्रताके धर्म बतावै कोई स्त्री शास्त्रको भी समझती

हैं उनको उपदेशकरना कुछ आवश्यकनहीं सबबात शास्त्र सेही ज्ञात होती है परन्तु परम्परासेभी जानते हैं जैसे व्याध कहार अहीर आदि ग्रामीण निकृष्ट मनुष्यभी भद्रा भौम-वार व्यतिपात आदि को बुरा जानते हैं इस वास्ते चारों वर्ण और आश्रमों में मुख्य और गौण भेदकरके सब शास्त्र के अधिकारी हैं अर्थात् कोई मुख्य अधिकारी है और कोई गौण है लोकका और शास्त्र का पौर्वापर्य जानना कठिन है अर्थात् लोक व्यवहार शास्त्रसे निकला है अथवा लोक व्यवहार के अनुकूल शास्त्र रचे गये यह निश्चय होना क-ठिन है नास्तिकपना और बुद्धिके विकल्पों को छोड़ शास्त्रके अनुसार अपने बड़े पुरुष जिसमार्ग में चलेहों उसपर च-लाजाय इसी में सब प्रकार का कल्याण है गृहस्थके धर्मों का मूल पतिव्रता स्त्री है वह पतिव्रता पतिका आराधन किसविधिसे करै अब हम इसका वर्णन करते हैं॥

नवां अध्याय॥

पतिव्रता का आचरण॥

ब्रह्माजी कहते हैं कि हे मुनीश्वरो! सब आराध्य अर्थात् आराधन करनेके योग्य पुरुषों के आराधन की यह विधि है कि उनकी चित्तवृत्ति को भलीभांति जानकर उसके अनुकूल चलना और सदा उनका हित चाहना भर्त्ताके चित्तके अनुकूल चलना यह पतिव्रता का मुख्यकार्य है पतिके माता पिता ज्येष्ठभ्राता पितृव्य गुरु मामा बहनोई आदिका बड़ाआदर रक्खै और जो अपने से सम्बन्ध में छोटेहोयँ उनको आज्ञा दियाकरै पति के मित्र और देवर आदिसे भी हास्य न करै किसी पुरुषकेसमीप एकांतमें बैठना और हास्यकी बातकरना

ये पतिव्रता धर्मके नाशके हेतुहैं इस कारण उत्तम स्त्री इनको कभी न करै दुष्टोंकासंग स्वतन्त्रता बहुत हँसी करना अपने हाथसे किसी पुरुषको वस्तुदेना अथवा लेना घरके द्वारपर ठहरना राजमार्ग्ग का देखना बहुत पुरुषोंके आगे निकलना ऊँचे स्वरसे बोलना और हँसना दृष्टि से वचन से और शरीर से चंचलता करना दुष्ट स्त्रियोंका सङ्ग करना इत्यादि और भी बुरीबातैं पतिव्रता स्त्री न करै जो कोई पुरुष अपने को कुदृष्टि से देखै उसको आप पिता अथवा भाई के समान मानै इस रीतिसे स्त्री का शील नहीं बिगड़ता है और कुलकी निन्दाभी नहीं होती है ॥

दशवाँ अध्याय ॥

गृहस्थका व्यवहार ॥

ब्रह्माजी कहते हैं कि हे मुनीश्वरो! उत्तम स्त्री पतिको मन वचन कर्मकरके देवता के समान जानै और सदा उसके हित करने में तत्परहै पतिके मित्रों को मित्रजानै और शत्रुओं को शत्रु अधर्म और अनर्थसे पतिको बचावै देवता और पितरोंके कृत्य अभ्यागतों का सत्कार और पतिके स्नान भोजनादिकर्म समय पर सावधान होकरकरै रहनेकाघर और शरीर इनदोनों को तुल्य समझै और शरीरसेभी अधिक घरको स्वच्छ और भूषितरक्खे प्रातःकाल मध्याह्न और सायङ्कालके समय घरको मार्जन करके स्वच्छ करै गोशालासे दासियों के हाथ गोबर उठवाय वहां झाड़ू दिलावै दास दासियों को भोजन आदि से सन्तुष्टकर अपने अपने काममें लगादेवै गृहस्थीको उचित है कि शाक मूल फल बेल कन्द ओषधी आदि का अपने २ समय पर संग्रह करावै और समयपर इनको खेतआदिमें बुआ

दे तांबा कांसी पीतल लोह काष्ठ बांस और मृत्तिका के बर्त्तनों का संग्रह रक्खै जलके लिये कुंड कूंड़ी कलश झारी उदंचन अर्थात् बड़पात्र से जल निकालनेके छोटेपात्र घी तेल रखने के बर्त्तन दूध दही छाछ आदि धरनेकेपात्र भांति २ के रसोई के पात्र मूसल ऊखल छाज चलनी सिल लोढ़ी चक्की दही मथनेकी रई सनसी चिमटे पली कड़छी कड़ाही तवे तखड़ी तोलनेके बांट पिटार पिटारियां सन्दूक पलंग चौकी आदि अनेक प्रकार के उपकरण हींग जीरा धनियां पीपल राई मिरच सोंठि आदि अनेक प्रकार के मसाले लवण भांति भांति के खार सिर्के अचार कांजी सब भांति की दाल सब प्रकार के तेल स्नेह अनेक दूध दहीके पदार्थ सूखाकाष्ठ आदि जो जो वस्तु नित्य और नैमित्तिक कार्यों में अपेक्षितहो सब पहिले से संग्रह कररक्खै कि समय के ऊपर ढूँढ़नी न पड़ै जिस वस्तु का आगे काम लगताहो वह पहिलेही संग्रह करलेवै सूखे गीले पीसे बिनपीसे कच्चे पक्के आदि भांति भांति के अन्नोंका संग्रह विचारकर करलेवै॥

ग्यारहवां अध्याय॥

गृहस्थका व्यवहार॥

ब्रह्मा जी कहते हैं कि हे मुनीश्वरो! धान कोदों कँगुनी गेहूँ आदि अन्न अपने २ समय पर संग्रह करै और पतिव्रतानारी शय्या आसन पीढ़े कंचुकी ओढ़नी लहँगे कुरते आदि अनेक वस्त्रों का संग्रह रक्खै गुरु बालक वृद्ध अभ्यागत और पति की शुश्रूषा में आलस्य न करै देवर आदि के पहिने हुये माला वस्त्र भूषण आदि कभी न पहिनै और उन के शयन करने की शय्या को कभी आक्रमण न करै अर्थात् उसपर पैर

भी न रक्खै घर में पाकक्रिया हुआ जो बासी अन्न बचै वह गौओंके खाने में डालदेवे गौकादूध इतना निकालै कि जिस में उनके बछड़े भूखे न रहैं और दहीको बिलोय उससे घी निकाललेवे वर्षा शरद् और वसन्त ऋतु में दोनोंवक्त गौदुहै और बाक़ी ऋतुओं में एकबारही दूध निकालै छाछकर के घर की रक्षाके अर्थ पालेहुये कुत्तोंका पोषणकरै गोप आदिकों को गौकी चराई में अन्नदेवे अथवा रुपया देवै परन्तु यह भी दृष्टि रक्खै कि गाय भैंसोंका दूध न पीजावे समय के ऊपर आय कर दोहन करनेवाला गोप आदि दूध निकाल जायाकरै जब गौ ब्यावे तब एक महीनेतक उसका दूध न निकालै बछड़े को चूंखने देवे पीछे एक महीने तक एक थन का फिर एकमहीनेतक दोथन का और इसके अनन्तर तीन थनका दूध निकालै एकथन सदा बछड़ेके लिये छोड़ता रहै तिलकी खल कोमल तृण लवण आटा आदि से बछड़ोंका पालन करै और समयपर उनको जल पिलावे बूढ़ीगौ गर्भिणी दूध देती हुई और बछड़े बछियाओं का बराबर पोषण करै न्यून अधिक न समझै तीन गौओंके अर्थ एकग्वाल होना चाहिये और पांच बछड़ोंकेलिये भी एकही होय गौकेगले में घण्टा अवश्य बांधना चाहिये एकतो घण्टा बांधने से शोभा होती है दूसरे उस के शब्द से कोई दुष्टजीव गौके समीप नहीं आता और गौ कहीं दौड़कर चलीजाय तो घण्टाके शब्द के अनुसार उसको ढूँढ़सक्ते हैं जहां सिंह व्याघ्र आदि दुष्टजीव न होयँ तृण और जल बहुत होय छाया के लिये घने वृक्ष होयँ और पशुओं के कोई रोग न होय ऐसे स्थानमें गोष्ठ अर्थात् गौओं के रहने का स्थान बनावै और भेड़ बकरियों के लिये गुप्त स्थान

बनावै और वर्ष में दोबार चैत्र और आश्विन में उनका ऊन उतारै गौओं के यूथमें चार अथवा पांच सांड़ चाहियें और बकड़ियों के यूथमें दशसांड़ होने आवश्यकहैं घोड़े ऊंट और महिषों के यूथ में जितने होयँ उतनेहीं ठीकहैं कुछ नियम नहीं खेती कराने के अर्थ जिन सेवकों को रक्खै उन को भोजन और कुछ बेतन अर्थात् तनख़्वाह देवै और जहां खेत खलिहान अथवा बाटिका आदि में वे काम करते होयँ वहां बार २ जायकर देखै और उन में जो अच्छा काम करता होय उसका सत्कार अधिक करै और उसको भोजन भी औरों से कुछ उत्तम देवै समय २ पर सब प्रकार के अन्न का संग्रह करे और समय पर सबको खेतों में बुआवै घरका मूल स्त्री है और गृहस्थ का मूलअन्न इसकारण अन्न में मुक्त हस्त न होय अर्थात् अन्न को वृथा न ख़र्चै सदा संचय करता रहै संचय करने में और ख़र्चकरने में अन्नको थोड़ासा समझ अवज्ञा नकरै देखो थोड़ा२ शहद इकट्ठा करते २ मक्खी कितना इकट्ठा करलेती हैं चींटी जरा २ सी मिट्टी लाकर कितना ऊंचा बल्मीक बनालेती हैं और बहुतसा अंजन भी नित्य २ आंख में डालते २ निबड़ जाता है इसी भांति सब वस्तुओं का संग्रह और ख़र्च भी होता है इससे थोड़ी वस्तु की अवज्ञा न करनी चाहिये सब घरके काम स्त्री पुरुष एक मतहोने से अच्छे होते हैं और जगत्में ऐसेभी हज़ारों पुरुषहैं कि जिनके सब कामों में स्त्री प्रधान रहती हैं परन्तु जो स्त्री बुद्धिमान् और सुशीला होय तो कुछ हानि नहीं होती नहीं तो अनेक प्रकारके दुःखभी होतेहैं इस कारण स्त्री की योग्यता अयोग्यताको समझ बुद्धिमान् पुरुष उसको कार्य्य में नियुक्त करै

कांगनी का पांचवां भाग धानका तीसरा भाग यव गेहूँ मूँग उड़द आदिका चौथा भाग भूनने से कमती होजाता है और येही अन्न रांधने से द्विगुण होजाते हैं कंगुनी कोदौं चीना और चावल इनका भात चौगुना होताहै और पुराने चावलों का चौगुने से भी अधिक होताहै परन्तु पाक करनेहारा चतुर चाहिये लाई परमल खील और भुनेहुये चने पांचवां भाग अधिक होजाते हैं इसी भांति मूँग उड़द मसूरआदि भी जानो अलसी में छठा भाग तेल निकलता है सरसों कैथके बीज और नींबके बीजोंमें पांचवां भाग तिल महुआ कुसुम्भ के बीज और इंगुदी अर्त्थात् एक प्रकारका पहाड़ी फल उसके बीज इनमें चौथाई तेल निकलता है बाकी सब खल होतीहै ये सब बातें अनुमान से कही हैं समयभेद और देश भेदसे इनमें अन्तर भी पड़जाता है गौके सोलह सेर दूधमें एक सेर घी और भैंसके सोलह सेर में सवा सेर घी निकलताहै परन्तु भूमि और तृण अर्त्थात् चारेके भेदसे न्यून अधिक भी होताहै इस लिये इन सब बातोंको अपने अनुभव से निश्चय करलेवै रेशम कपास शण आदिका सुधारना लोढ़ना आदि कंघी लंगड़ी बहरी आदि स्त्रियों से करावै जो थोड़ी मजूरी पर करदेवैं बालक वृद्ध अन्धे भूखे आदि मनुष्यों से भोजन आदि देकर काम करालेवै भर्त्ता विदेश में गया होय तो ये सब काम सावधान होकर स्त्री करायाकरै सूत्रों का व्यवहार भी भली भांति जाने अलसी और कपास में पांचवां भाग सूत बैठता है रुई के धुनने से तेईसवां भाग घटजाता है परन्तु धुनियां जानकर न उड़ादेवै और छिपा भी न लेवै अच्छे सूत्र का वस्त्र बनाने से पचासवां भाग घटता है परन्तु साड़ी देक-

तंतुवाय उसमें दशवां अथवा ग्यारहवां भाग बँधादेते हैं और सूत्रके मोटे महीन होनेपर भी घटती बढ़ती देखी जाती है और बुनवाई भी सूत्रके ऊपरही है इन सब बातोंको जो गृहस्थ पुरुष भलीभांति जानै और देशकालके अनुसार सब व्यवहार समझै वह सुखसे रहता है॥

बारहवां अध्याय॥

गृहस्थकी स्त्रीके आचरण॥

ब्रह्माजी कहते हैं कि हे मुनीश्वरो! घरमें स्त्री प्रभात सबसे पहिले उठै और रात्रिको सबके पीछे भोजनकरै और पीछेही सोवै और आवश्यककार्यके विना घरकी देहली के बाहर पैर न धरै जो बहुत प्रभात उठ बैठै तो भर्त्ताके समीप बैठकरही सब सेवकों को अपने २ कामकी आज्ञा देवै बाहर न जाय जब पति भी जग उठै तब वहांका आवश्यक कार्यकर घरके धंधे में लगै रात्रिके पहिले उत्तम वस्त्र भूषण उतार घरके कार्य के योग्य वस्त्र पहिन सावधानहो सब कामकरै पहिले रसोई के मकान और चूल्हेको लीप पोतकर स्वच्छकरै और रसोई के पात्रोंको मांजि धोय और पोंछकर वहां रक्खै और भी सब रसोई की सामग्री वहां इकट्ठीकरै रसोईका स्थान भी न तो अति गुप्त न बहुत प्रकट स्वच्छ विस्तीर्ण और जिसमें धुआं न होय ऐसा होना चाहिये दूध दहीके बर्तनोंको सीपी रस्सी अथवा वृक्षकी त्वचासे खूब रगड़कर धोडालै पीछे धूपमें सुखालेवै जिससे दही दूधमें कुछ विकृति न होय बुरे पात्रोंमें दही दूध बिगड़ जाते हैं घी दही दूध छाछ आदिको सावधानी से रक्खै फिर स्नानादि आवश्यक कृत्यकरके पतिके लिये अपने हाथसे रसोई बनावै और यह विचार करै कि कौनसा

पदार्थ उनको प्रिय है अग्नि की वृद्धि किस भोजन से होती है क्या पथ्य है क्या अपथ्य है और आरोग्य देनेहारा देश कालके अनुकूल कौन भोजन है यह सब विचार कर प्रीति पूर्वक रसोई बनावै और रसोई के स्थान में ऐसे वैसे स्त्री पुरुषों को न आनेदेवे इस विधि रसोई बनाय सब पदार्थों को स्वच्छ पात्रों से ढक बाहर आकर शरीर का प्रस्वेद पोंछ गन्ध ताम्बूल माला वस्त्र आदि से अपने को थोड़ासा भूषित करे फिर भोजन के लिये पति को बुलाय सब प्रकार के व्यंजन भात रोटी मिठाई आदि परसै जो देशकाल के विपरीत न हो और जिनका परस्पर विरोध भी न हो जैसा दूध और लवणका है पतिके भोजन समय आप पंखा लेकर धीरे धीरे पवन करै और जिस पदार्थ पर पतिकी अति रुचि देखै वह और परसै इस भांति पतिको भोजन करावै सब सपत्नियों को अपनी सगीबहिन के समान जानै और उनके सन्तानों को अपने सन्तान से भी अधिक प्रिय समझे उनके भाई बन्धुओं को अपने भाइयों के बराबर मानै भोजन वस्त्र अभ्यङ्ग भूषण ताम्बूल आदि जबतक सपत्नियों को न दे लेवे तब तक आप भी न ग्रहण करै जो सपत्नी के अथवा अपने घर में और किसी मनुष्य के कुछ रोग होजाय तो उसकी भली विधि चिकित्सा करावै नौकर बन्धु सपत्नी आदि को दुःखी देख आपभी दुःख पावै और उनको प्रसन्न जान आपभी सुख मानै घरका सब वृत्तान्त पतिसे एकान्त में सुना देवै परन्तु सपत्नियों के दोष न कहै जो कोई व्यभिचार आदि बड़ा दोष देखै कि जिसके गुप्त रखने से कुछ अनर्थ हो ऐसे दोषको अवश्य पतिसे कह देवै दुर्भगा जिसका पति सदा तिरस्कार

करै और सन्तान हीन हो ऐसी सपत्नी को भी सदा आस्वासन करै और भोजन वस्त्र भूषण आदिसे दुःखी न होने देवै और भी जो किसी नौकरके ऊपर पति कोपकरै उसका भी आस्वासन करदेवै परन्तु पहिले यह विचारलेवै कि इसका आस्वासन करने से कुछ हानि न होय जो देखै कि बहुतकाल व्यतीत होगया और मेरे कोई सन्तान न भया तो पतिको दूसरा विवाह करने के लिये समझाय प्रीति से अपने हाथ पतिका विवाहकरै और नई सपत्नी को छोटी बहिन के समान जानै और उसके भाईबन्धुओं का आदर प्रसन्न चित्तहोकरकरै और माता की भांति घरके सब काम उसको सिखावै और सायंकाल के समय भली भांति शृङ्गारकराय रात्रिको पतिके समीप पहुँचाय देवै इस प्रकार सब रीतिसे पतिको प्रसन्नरक्खै क्योंकि स्त्रियों का देवता पति है वर्णोंका देवता ब्राह्मण ब्राह्मणों का देवता अग्नि और प्रजाओं का देवता मेघहै स्त्रियोंका त्रिवर्ग प्राप्तिके दो उपाय हैं एक तो सब प्रकारसे पतिको प्रसन्नरखना दूसरे आचरण शुद्धचित्त के अनुकूल चलने से जैसी पतिकी प्रीति स्त्रीपर होती है वैसी न रूपसे न यौवनसे और न उत्तम शृङ्गार करने से होय क्योंकि प्रायः देखते हैं कि उत्तम रूप और तरुण अवस्था करके युक्तस्त्री भी पति के विपरीत आचरण कर दौर्भाग्य को प्राप्तहोती है और अति कुरूपा और अवस्था से हीन भी पतिके चित्तके अनुकूल चलनेहारी सुख भोगती हैं इस लिये पति के चित्त का अभिप्राय भलीभांति समझना और उसके अनुकूल चलना यही स्त्रीके लिये सब सुखोंका हेतु है जब जाने कि बाहर से अब पति को आनेका समय है तब घरको स्वच्छकर उत्तम आसन बिछाय सावधान होकर

बैठे और पतिके आतेही अपने हाथ उनके चरणधोय आसन पर बैठाय पंखाले धीरे २ पवनकरै ये सब काम दासी आदि से न करावै अपने बन्धु और पतिके बन्धुओंका सत्कार आदि पतिकी इच्छानुसार करै अर्थात् जिसपर पतिकी रुचि न देखै उससे अधिक शिष्टाचार न करै कोई कुलीन पुरुष अपनी कन्या से उपकारकी आशा नहीं रखता और जो रक्खे वह अधम पुरुष होताहै कन्या विवाहि कर फिर उस से अपनी वृत्तिकी इच्छा करना यह महात्मा और कुलीन पुरुषों की रीति नहीं यह मार्ग नट भांड़ दास आदि नीच मनुष्यों का है इसलिये स्त्री के बन्धु केवल प्रीति के लिये व्यवहार रक्खें और यथाशक्ति कुछ देते भी रहैं उनसे आप कोई वस्तु लेने की इच्छा न रक्खें इस प्रकार जो स्त्री सद्वृत्तको जान सब बातकरै वह पति और उसके सब बन्धुओंको सम्मत होतीहै परन्तु पतिकी प्रिया और सुशीला होकर भी स्त्री को लोकापवाद से डरना चाहिये क्योंकि सीता आदि उत्तम स्त्रियोंको भी लोकापवाद होजाने से अनेक भांति के दुःख भोगने पड़े उत्तम आचरणवाली स्त्री भी जो बुरा सङ्गकरै अपनी इच्छा से चाहे जहां चलीजाय उसके अवश्य कलङ्क लगताहै और झूठा दोष लगने से भी कुल कलङ्कित होजाता है उत्तम कुल की स्त्रियोंको ये बातें आवश्यक हैं कि किसी भांति अपने कुलको दूषित न होने देना पतिके धर्म अर्थ और काम का साधन करना और सन्तति स्थापन करना बुरे आचरणवाली स्त्री अपने कुलोंको नरकमें डालती हैं और भले आचरण वाली नरकमें गिरे हुओंको भी निकालती हैं पतिके चित्तकी अनुकूलता और शुद्ध आचरण ये दोनों स्त्रियों के भूषण

सुवर्ण रत्नआदि भूषण तो केवल शरीरपर बोझ लादना है जो स्त्री पतिको और लोकको भलीभांति आराधन करै अर्थ पतिके चित्तके अनुकूल चलै और लोक व्यवहार भली भां समझ उसके ऊपर आचरणकर कीर्त्ति सम्पादन करै कि भांतिका कलङ्क अपनेको न लगने देवै वह नारी धर्म अ और कामको निर्विघ्न पातीहै ॥

तेरहवां अध्याय ॥

प्रोषितपतिका आचरण छोटी बड़ी सपत्नियोंका परस्पर बर्त्तन ॥

ब्रह्माजी कहते हैं कि हे मुनीश्वरो ! अब हम प्रोषितपतिका अर्थात् जिसका भर्त्ता परदेश में गयाहो उसका आच-रण कहते हैं पति जब विदेश में गया होय तब बहुत भूषण न पहिने मङ्गल के लिये एक आध कण्ठसूत्र नथ आदि प रहै पतिने जिस कामका आरम्भ कियाहो उसको अ शक्तिके अनुसार करतीरहै देहका अधिक संस्कार न केशोंकी एक बेणी रक्खै रात्रिको सास आदि पूज्य स्त्री समीप सोवै बहुतखर्च न करै व्रत उपवास आदि कर रहै पति का वृत्तांत सदा पूछती रहै नित्य उसके आ की बाट देखै और विदेश में उसके कल्याण के लिये नित्यदे पूजा आदि शुभकर्म करती रहै जाति बिरादरी में किसी के घ न जाय जो आवश्यक कार्य होय तो अपने बड़ोंकी आज्ञाले रमें से किसी शिष्ट दासी आदिको सङ्गकर जाय परन्तु व हुत काल न ठहरै और स्नान भोजन आदि भी न करै ज ति विदेश से आजाय तब सुन्दर वस्त्र भूषण पहिन दे ताओं के जो उपयाचितक अर्थात् मन्नत मान रक्खी हो न पूरी करदेवै अपने से बड़ी सपत्नीको माताके समान जा

और उसके सन्तान को अपनी सन्तान सेभी अधिकमानै पिताके घरसे जो कुछ वस्तु आवै पहिले उसको देवै वहभी थोड़ीसी ग्रहणकरले और बाक़ी को भलीभांति रखदे जब २ छोटी को उस वस्तु की अपेक्षाहो तब २ देतीरहै छोटी सपत्नी के दिये हुये पदार्थ का अनादर न करै सपत्नियों में परस्परद्वेष होजाताहै परन्तु बुद्धिमती स्त्री अपने उदार आचरणसे कभी द्वेषनहीं होनेदेती हैं ऋतुस्नानके अनन्तर बड़ीसपत्नी की प्रेरणासे और उसी से अपनाशृङ्गार करवाय लज्जासे संकुचितहोतीहुई पतिके निकटजाय और वहांजाय एकान्तमें उस समयके योग्य हावभाव और बातचीतसे पतिकामन हरलेवे और प्रभातउठकर लज्जितहुई २ बड़ीसपत्नीके समीपजाय और सदा उसकेसाथ प्रीतिरक्खे परन्तु अपनी बुद्धिमानी से पतिको अधीन करलेवै सबकाल में लज्जा स्त्रीका भूषणहै परन्तु एकान्त में पतिके समीप प्रगलभताही परम भूषण है पतिको सब प्रकारसे अनुकूल करके भी बड़ी सपत्नी आदि का गौरव और आदर न्यून न करै और घरके कामसें जो पति आज्ञा देवै उसमें ऐसी बुद्धिमत्ता करै कि सपत्नीकी आज्ञा लेलेवै और वह यहीजानै कि मेरीही आज्ञासे काम करतीहै बड़ी सपत्नी भी जब देखै कि पतिका चित्त इसमें आसक्त होगयाहै तब कुछ क्षोभ न करै और अपनी बेटी के समान उस से प्रीति रक्खै इसी से उसकी बड़ाई और पतिकी अनुकूलता होती है मन वचन कर्म करके पतिकी अनुकूलता करै किसी भांति पतिके आगे उद्धतपना और द्वेष प्रकट न करै इस प्रकार सौभाग्यकी वृद्धि होतीहै और पतिकी अतिप्यारी नारी से विरोध करने से पतिसे द्वेष होजाताहै इसलिये बड़ी स्त्री पतिसे

सपत्नी से प्रीति रक्खै घरका सब काम मन लगाय करै नौकरों का भरण पोषण और पूज्योंकी पूजा भलीभांति करती रहै और सब प्रकार से अपने शीलकी रक्षा रक्खै वह इस लोकमें और परलोक में सुखपाती है और यश कमातीहै॥

चौदहवां अध्याय॥

दुर्भगाको योग्य आचरणका उपदेश जिससे पतिअनुकूल होजाय॥

ब्रह्माजीकहते हैं कि हे मुनीश्वरो! अब हम दुर्भगा अर्थात् जिसपर पति अतिक्रोधयुक्त हो और कभी उसका आदर न करै उसके लिये जो आचरण योग्य है उसका वर्णन करते हैं दुर्भगास्त्री व्रत उपवास आदि कियाकरै और जिसदिनकुछ विशेष कृत्य घरमें हो उस दिन सब काम प्रीति से करै अपनी निन्दा सपत्नियों की प्रशंसा करे और भर्त्ता के आगे कभी ईर्षा प्रकट न करै और सदा यह कहतीरहै कि मेरी सरीखी स्त्री को यही बहुत कुछहै कि ऐसे उत्तम पतिकी भार्या कहातीहूँ भूषण उत्तम वस्त्र आदि सदा पहिने रहै परन्तु बहुत उद्धतभी न बनै शरीर को हाथ पैरों को दांतों को अतिस्वच्छ रक्खै वैतसीवृत्ति धारणकर सब सपत्नियों में रहै अर्थात् जैसे वेतका वृक्ष बड़े वेगसे आतेहुये जल में झुकजाता है और जलका वेग निकलजानेपर फिर खड़ाहोजाता है और आनन्दसे उसी स्थानपर बनारहता है और जो वृक्ष नहीं झुकते वे जड़से उखड़कर जलके साथही बहेचलेजाते हैं इसका नाम वैतसीवृत्ति है जो पतिकी बहुत प्रियाहो उससे बहुत स्नेह रक्खै जिस कार्य में पतिकी इच्छा देखै उसको करै भण्डारवस्त्र अन्न ताम्बूल गन्ध औषध पान के द्रव्य आदि को आज्ञा विना हाथ न लगावै और घर में झाड़ू देना चौका लगाना आदि

काम आज्ञा बिना भी करै सपत्नी के सन्तानों की स्नान वस्त्र भूषण भोजन आदिसे सदा शुश्रूषा करती रहै जाति से कोई स्त्री दुर्भगा अथवा सुभगा नहीं है उत्तम स्त्री भी भार्त्ता के चित्तका अभिप्राय न जानने से उसके प्रतिकूल चलने से और लोक विरुद्ध आचरण से दुर्भगा होजा-तीहै और पतिके अनुकूल चलने से सुभगा होतीहै इसलिये सब अवस्था में मन वचन कर्म करके पतिके चित्तके अनु-कूल चलै जिस सपत्नको पति इच्छा करै उसको पतिसे मिलाय देवै पतिकी प्रिया जो मानवती होगई होय तो उसको समझाय क्रोध शान्तकर पतिके अनुकूल करदेवै पैर दबाना अंगोंको मर्दन करना शिर मलना आदि भलीभांति सीखै और पतिकी सेवाकरै अंगोंका संवाहन अर्थात् दबाना तीन प्रकार काहै मृदु मध्य और गाढ़ भुजा ऊरु कटि पृष्ठ कंधे शिर और पैरोंमें गाढ़ मर्दन करना चाहिये अर्थात् इनको जोरसे दबावै इनके बिना और अंगोंमें मध्यम और नीचे अंग नाभि मर्म-स्थान हृदय गल कपोल आदिमें मृदु संवाहन करै अर्थात् इन अंगोंको धीरे २ दबावै जो पति जागता होय तो गाढ़ मर्दन करै आधा सोया होय तो मध्य और भली भांति सोगया होय तो मृदु मर्दन करै अथवा न करै ऐसी युक्ति से अंग संवाहन करै कि, पतिको आनन्द होय रोमाञ्च होजाय और दबाते २ निद्रा आजाय सोता होय चाहे बैठाहोय जब पतिको एकांत में देखै तब उसके अंगोंको मर्दन करै और जिस अंगके मर्दन करने से आंख मूंदै रोमाञ्च होय कामका उद्दीपन होय उस अंग को विशेष करके दबावै और अनुकूल को तथा जि अंगपर पति बार २ हाथ रक्खै उस अंगको भली भांति

संवाहन करै इस भांति जो दुर्भगा स्त्री भी पतिका सेवन करै वह पतिको अनुकूल करलेती है और संसारके सुख भोगती है और त्रिवर्ग पाती है॥

पन्द्रहवां अध्याय॥

तिथियों के व्रतकी विधि, प्रतिपदा व्रतका माहात्म्य॥

सुमन्तु मुनि कहते हैं कि हे राजा शतानीक! इस प्रकार स्त्रियों के सम्पूर्ण लक्षण और सदाचार ऋषियों के प्रति कह कर ब्रह्माजी हिमालयको गये और सब ऋषिभी प्रसन्न होते हुये अपने २ आश्रमको जाते भये हे राजा! यह स्त्री लक्षण और स्त्री का आचरण जान आगेजो कुछ गृहस्थी को करना चाहिये वह हम वर्णन करते हैं वैवाहिक अग्नि में गृह्य कर्म करना चाहिये गृहस्थी के घर पंच सूना अर्थात् जीवहिंसा के स्थानहैं वहां जीव मरने से गृहस्थ स्वर्गको नहीं जाता उखली चक्की चूल्हा मार्जनी अर्थात् झाड़ू और उदकुंभी अर्थात् जलका घड़ा इन पांचो स्थानोंमें जीवहिंसा होतीहै उस हिंसा दोषकी निवृत्ति के लिये पांच महायज्ञ गृहस्थी को अवश्य करने चाहिये ब्रह्मयज्ञ पितृयज्ञ देवयज्ञ भूतयज्ञ और अतिथियज्ञ वेदपाठ को ब्रह्मयज्ञ कहते हैं तर्पणका नाम पितृयज्ञ है होम देवयज्ञ कहाताहै भूतयज्ञ बलिवैश्वदेव की संज्ञा है और अतिथि यज्ञ अभ्यागत के सत्कारको कहते हैं इन पांच यज्ञों को जो नियम से करै वह घरमें बसकर भी पंचसूना दोषों से लिप्त नहीं होता और जो समर्थ होकरभी न करै वह वृथा जीता है श्वास लेताहुआ भी मरेके समान है इतना सुन राजा शतानीक ने पूछा कि महाराज जिस ब्राह्मणके घरमें अग्निहोत्र नहीं वह मृतकके समान होताहै यह आपने कहा परन्तु वह

देवपूजा आदि क्योंकर करै देवता पितर उस से संतुष्ट कैसे होवैं और उस का उद्धार किस विधि होय यह आप मेरा सन्देह निवृत्त करैं यह राजा का प्रश्न सुन सुमन्तु मुनि बोले कि हे राजा ! जिन ब्राह्मणों के घर में अग्निहोत्र न हो उनका उद्धार व्रत उपवास दान देवता की स्तुति और देवभक्ति आदि से होता है और जिस देवता की जो तिथि हो उस में उपवास करने से वह देवता विशेष करके प्रसन्न होता है यह सुन राजा ने फिर पूछा कि महाराज तिथियों की विधि तिथियों के दिन जो अलग २ भोजन होवैं और उपवास विधि यह सब आप वर्णन करैं जिस के करने से संसार के जीव पाप से मुक्तहोजावैं यह राजा का वचन सुन सुमंतु मुनि ने कहा कि हे राजा ! तिथियों की विधि हम वर्णन करते हैं जिस के सुनने से भी पाप कटजायँ प्रतिपदा के दिन दूध का भोजन करै पुष्पों का भोजन द्वितीया को लवण रहित भोजन तृतीया को तिल चतुर्थी को क्षीर पंचमी को फल षष्ठी को शाक सप्तमी को बिल्व अष्टमी को पिष्ट नवमी को अग्निबिना सिद्ध किया भोजन दशमी को घृत एकादशी को खीर द्वादशी को गोमूत्र त्रयोदशी को यव चतुर्दशी को कुशाका जल पौर्णमासी को और मूंग चावल आदि हविष्य भोजन अमावास्या को करै यह सब तिथियों के भोजन की विधि है इस विधि सेजो एक पक्ष भोजन करै वह दश अश्वमेध यज्ञों के फल को प्राप्त होय एक मन्वन्तर स्वर्ग में रहता है और गंधर्वों सहित अप्सरा उस के आगे नाचती गाती हैं जो इस विधि से चार महीने भोजन करै वह सौ अश्वमेध और सौ राजसूय यज्ञ का फलपाय स्वर्ग में जाय गंधर्व और अप्सराओं

सेवित दो मन्वन्तर आनंद से निवास करता है आठ महीने पर्यंत जो इस विधिसे भोजन करै वह हज़ार यज्ञों का फल पावै और चौदह मन्वन्तर स्वर्ग में निवास करै जो एक वर्ष इस भोजन के नियम से व्यतीत करै वह सूर्यलोक में कई मन्वन्तर सुख से निवास करै ब्रह्मचारी गृहस्थ वानप्रस्थ स्त्री पुरुष शूद्रआदि सब इन तिथिव्रतों के अधिकारी हैं इन व्रतों का आरम्भ आश्विन की नवमी माघ की सप्तमी वैशाख की तृतीया कार्तिक की पूर्णिमा से करै इन का करनेहारा सूर्य लोक को जाता है जिन पुरुषों ने पूर्वजन्म में व्रत उपवास आदि किये दान दिये अनेक प्रकार से ब्राह्मणों को संतुष्ट किया माता पिता और गुरु की शुश्रूषा करी तीर्थ यात्रा विधिसे करी वे पुरुष स्वर्ग में बहुत काल रहकर जब भूमिपर जन्मलेते हैं तब उन के चिह्न प्रत्यक्षही देख पड़ते हैं हाथी घोड़े पालकी रथ सुवर्ण रत्न कंकण केयूर हार कुण्डल मुकुट उत्तम वस्त्र सुन्दर सुन्दर स्त्री अच्छे सेवक आदि उनको मिलते हैं आधि व्याधि से रहित होकर बहुत आयुष् भोगते हैं और पुत्र पौत्रादिका सुखदेखते हैं और वन्दीजनों के स्तुति शब्द से सोतेहुये उठते हैं और जिनने व्रत दान आदि सत्कर्म नहीं किये वे काणे अंधे लँगड़े कुबड़े गूंगे रोग और दरिद्र से पीड़ित होते हैं यहही पुण्य और पाप की प्रत्यक्ष परीक्षा है इतनी विधि सुमंतमुनि से सुन राजा ने कहा कि महाराज आपने संक्षेप से तिथियों का वर्णन किया अब यह वर्णन कीजिये कि कौन देवता की किस तिथि में पूजा करनी चाहिये और व्रत आदि किसविधिसे करने चाहिये कि जिन के किये से यज्ञों का फल प्राप्तहोय यह राजा का प्रश्न सुनि मुनि कहने लगे कि हे राजा! तिथियों का

रहस्य पूजा का विधान फल नियम देवता अधिकारी हम कहते हैं आप श्रवण करैं यह सब आज तक हम ने किसी से नहीं कहा है पहिले संक्षेप से हम सृष्टि का वर्णन करते हैं प्रथम परमात्मा ने जल उत्पन्न कर उस में अपना वीर्यडाला जिस से एक अण्ड बनगया उस अण्ड से ब्रह्मा उत्पन्न भये और सृष्टिकरने की इच्छाकर अण्ड के एक कपालसे भूमि और दूसरे से आकाश रचा और दिशा उपदिशा देवता दानव आदि रचे और जिस दिन यह सब काम किया उस का नाम प्रतिपदा रक्खा सब तिथियों में ब्रह्माजी ने इस को प्रवर अर्थात् उत्तम बनाया सब तिथियों के प्रारम्भ में प्रतिपादन किया और सब तिथियों का पद इससे आगे भया इसलिये इसका नाम प्रतिपदा रक्खा हे राजा ! अब इस तिथि के उपवास और नियमों का हम वर्णन करते हैं प्रतिपदा के दिन यथाशक्ति दुग्ध ब्राह्मण को देवै और पीछे यहकहै कि ब्रह्माजी मेरे ऊपर प्रसन्नहोयँ और आप भी क्षीरही भोजन करै इस विधि एक वर्ष व्रतकर अन्त में गायत्री सहित ब्रह्माजी का पूजन कर व्रतसमाप्त करै इस विधि व्रतकरने से सब पाप दूर होते हैं और सुन्दर अप्सराओं करके युक्त दिव्यरत्नों से जड़ा हुआ सुवर्णका विमान ब्रह्माजी उसको देते हैं जिसमें बैठकर सब लोकों में जासक्ता है इस भांति बहुतकाल स्वर्गआदि लोकों में निवासकर पृथिवी में जन्मलेता है तब भी दशजन्म तक वेद विद्याका पारगामी धनवान् दीर्घायुष आरोग्य भोगी और यज्ञ करनेहारा ब्राह्मणहोता है विश्वामित्र मुनि ने ब्राह्मण होनेके लिये बहुतकाल तक घोरतप किया परन्तु ब्राह्मण न बने तब नियम से प्रतिपदा का व्रत करनेलगे इस से थोड़ेकाल में

ही प्रसन्नहो ब्रह्माजी ने उन को ब्राह्मण बनादिया क्षत्रिय वैश्य शूद्र आदि कोई इस तिथि का व्रत करै वह सब पापों से मुक्तहो दूसरे जन्म में ब्राह्मण होता है यह प्रतिपदा का रहस्य हमने वर्णन कियाहै हैहय तालजंघ तुरुष्क यवन शक आदि म्लेच्छजाति के मनुष्य भी इस व्रतसे ब्राह्मण होसक्ते हैं यह तिथि परमपुण्य और कल्याण के देनेहारी है जो इस माहात्म्य को भी पढ़ै अथवा सुनै वह ऋद्धि वृद्धि और कीर्ति पाकर अन्त में सद्गति पाता है॥

सोलहवां अध्याय॥

ब्रह्माजीकेपूजन व मंदिरबनाने व दुग्धादिद्रव्योंसेस्नानकरानेकाफल॥

राजाशतानीक पूछते हैं कि हे सुमंतुमुनि! प्रतिपदाकाकल्प ब्रह्माजी के पूजन का विधान और पूजनका फल आप विस्तार से वर्णन करैं यह सुन सुमंतुमुनि कहने लगे कि हे राजा! पूर्व काल में जब सब स्थावर जंगम जगत् नष्टहुआ और सर्वत्र जलही जलहोगया उस समय ब्रह्माजी उत्पन्न भये और अनेक प्रकारके देवता भूत मनुष्य नदी पर्वत समुद्र आदि उनको सिरजे इससे ये सब देवताओं के पिता और औरजीवोंकेपिताम‍ह ठहरे इसकारण इनकी सदा पूजाकरनी चाहिये येहीजगत् को उत्पन्न करते हैं और संहार करनेहारेभी येही हैं रुद्र इनके मनसे उत्पन्न भये विष्णु वक्षस्स्थल से और अपने २ अङ्गों सहित चारोवेद इनके चारो मुखों से निकलेहैं सब देवता दैत्य गन्धर्व यक्ष राक्षस नाग आदि इनकी पूजा करते हैं सम्पूर्ण जगत् ब्रह्ममय और ब्रह्मामें स्थितहै इसलिये ब्रह्माजी सबके पूज्य हैं जो ब्रह्माजीको भक्तिसे नहीं पूजता वह राज्य स्वर्ग और मोक्ष कभी नहीं पाता ये तीनों पदार्थ इनके सेवन से

मिलते हैं इसकारण सदा प्रसन्न चित्तहो ब्रह्माजीकी पूजा करनी चाहिये ब्रह्माजीका पूजन बिनकिये भोजन करने से प्राण त्यागदेना अथवा नरकमें गिरना अच्छाहै जो भक्ति से सदा ब्रह्माजीका पूजन करै वह मनुष्य रूपमें साक्षात् ब्रह्माही है ब्रह्माजीके पूजन से अधिक कोई पुण्य नहीं यह समझ सदा ब्रह्माजीका अर्चन करता रहै ऐसे पुरुषके दर्शन और स्पर्श से इक्कीस कुलोंका उद्धार होजाताहै ब्रह्माजीको पूजनेहारा मनुष्य बहुतकाल ब्रह्मलोक में निवासकर मर्त्यलोकमें जन्म लेवै तब चक्रवर्ती राजा अथवा वेद वेदांगका पारगामी कुलीन ब्राह्मण होय न तो बड़े कठिन तपोंसे और न यज्ञोंसे कुछ प्रयोजनहै केवल ब्रह्माजीकी पूजासेही सब पदार्थ मिल सक्के मट्टी ईंट काष्ठ अथवा पत्थरों से जो ब्रह्माजी का मन्दिर बनावे वह अपने इक्कीस कुलों सहित ब्रह्मलोकमें निवास करै मृत्तिका करके मन्दिर बनाने से कोटि गुण पुण्य काष्ठ और ईंट का मन्दिर बनाने करके होताहै और इससे दूना पुण्य पाषाणों के मन्दिर बनाने करके प्राप्त होताहै जो क्रीड़ा करके भी ब्रह्माजी के नामसे एक शाला बनवा देवै वह ब्रह्मलोकमें निवास करै और उत्तम अप्सराओं करके युक्त पुष्पमाला मोतियों के हार घंटा चामर दोला आदि से भूषित मधुर शब्द करनेहारी किंकिणियों की मालाओं से अलंकृत और सब ऋतुओं में सुख देनेहारा विमान पाताहै और उसमें बैठ सब उत्तम लोकों में देवताओं के साथ विहार करताहै ब्रह्माजी के मन्दिर में जो छोटे जीवोंको बचाकर धीरे २ झाड़ देवै वह चान्द्रायण व्रत का फल पाता है वस्त्रसे जल छान जो मन्दिर में लेपन करै और जीवोंको बचावे वह भी चान्द्रायण के फलका भागी

होताहै जो एक पक्ष तक ब्रह्माजी के मन्दिर में जीव रक्षापूर्वक झाड़ू लगाय उपलेपन करै वह सौ कोटि युगसे भी अधिक ब्रह्मलोक में निवास करताहै और उसके अन्त में भूमिपर आय सब गुणों करके युक्त धर्मात्मा राजा होताहै जो कपट सेभी ब्रह्माजी के मन्दिर में मार्जन आदि करै वह भी ब्रह्मलोक पावै जब तक भक्तिसे ब्रह्माजी का पूजन न करै तब तकही संसारमें भटकताहै जैसा मनुष्य का चित्त विषयों मग्न होता है ऐसा जो ब्रह्माजी में लगे तो कौन पुरुष मुक्ति न पावै जो ब्रह्माजी के मन्दिर का जीर्णोद्धार करै अर्थात् फूटेटूटे मन्दिर को सुधरावै वहभी ब्रह्मलोक में निवास करै ब्रह्माजीके समान देवता गुरु ज्ञान और तप कोई भी नहीं प्रतिपदा आदि सब तिथियों में भक्तिसे ब्रह्माजी का पूजन करै और पूर्णमासी को विशेष करके पूजाकर शंख भेरी आदि के शब्दों सहित आरती करै और गीत नृत्यभी करावै इस भांति जितने पर्व्वों में आरती करे उतने हज़ार युग ब्रह्मलोकमें निवास करै और आनन्द भोगै कपिला गौके पञ्चगव्य और कुशाके जलसे वेद मन्त्रों करके ब्रह्माजी को स्नान करावै इसका नाम ब्रह्मस्नान है और और स्नानों से सौगुणा पुण्य इसमें अधिक है देवकार्य और अग्नि कार्य के लिये ब्राह्मण क्षत्रिय और वैश्य कपिला गौको रक्खें शूद्र कभी कपिला को अपने घरमें न लावै जो शूद्र कपिला का दुग्ध पान करै वह महाघोर रौरव नरक में गिरै ब्रह्माजीकी मूर्त्तिको सुगन्ध तैलसे अभ्यंग करै तो करोड़ों वर्षों के किये पापोंसे मुक्त होय ब्रह्माजी को घृतसे स्नान करावै तो अनेक जन्मों के पाप दग्ध होजायँ प्रतिपदा के दिन जो घृतसे स्नान करावै वह

इक्कीस कुलका उद्धारकरै सुवर्ण वस्त्र आदि से भूषित दशहजार सवत्सा गो वेदवेत्ता ब्राह्मणों को देने से जो पुण्यहोता है वही पुण्य ब्रह्माजी को दुग्धकरके स्नान कराने से प्राप्तहोता है एक बारभी जो पुरुष धारोष्ण दूध से ब्रह्माजीको स्नान करादेवै वह सुवर्ण के विमान में विराजमान हो ब्रह्मलोक को सिधारै दही से स्नान कराय विष्णुलोक पावै शहद से न्हवाय वीर-लोकको जावै ईख के रससे स्नान कराय सूर्य्यलोककी प्राप्ति होय फलोंके रससे जो स्नान करावै वह सब पापों से मुक्तहो ब्रह्मलोक में निवास करै जो पुरुष वस्त्र से छनेहुये जल करके ब्रह्माजी को स्नान करावै वह सदा तृप्तरहै और अन्त में ब्रह्म लोकपावै सर्वौषधियों के जलसे स्नान कराय ब्रह्मलोक चन्दन के जल से स्नान कराय रुद्रलोक और गङ्गाजल से स्नान कराय विष्णुलोक पावै कमल के पुष्प नीलकमल पाटला करवीर मालती बाण आदि पुष्पों से स्नान कराने से चन्द्र लोककी प्राप्तिहोती है कपूर और अगर के जलसे स्नान करावै अथवा गायत्री मन्त्र से सौबार जलको अभिमंत्रित कर उस से स्नान करावै तो ब्रह्मलोक पावै शीतल जल से अथवा धारोष्णदुग्ध अर्थात् थनसे निकलते २ गरम २ कपिला के दूध से स्नान कराय पीछे घृतसे स्नान करावै तो सब पापों से मुक्तहोजाय ये तीनों स्नान कराय भक्तिसे पूजाकरै तो ह-जार अश्वमेधका फलपावै मृत्तिका के घटसे स्नान करावै तो एक गुण फल ताम्बके घट से सौगुणा चांदी केसे लाखगुणा और सुवर्ण के कलश से ब्रह्माजी को स्नान करावै तो कोटि गुण फल पावै ब्रह्माजी के दर्शन से उनका स्पर्शकरना उत्तम है स्पर्शन से अर्चन और अर्चन से भी घृत स्नान अधिक

फलदायक है कायिक वाचिक मानसिकपाप घृतस्नान करने से कटजाते हैं इस विधि स्नानकराय भक्ति से पूजन करै पवित्र वस्त्रपहिन आसन पर बैठ सम्पूर्ण न्यासकरै पहिले चार हस्त के विस्तार में एक अष्टदल लिखकर उस के मध्य में द्वादशदल यन्त्रलिखै और पांच रङ्गों से उसको भरै इस विधि यन्त्रलिखकर गायत्री के वर्णोंका न्यासकरै मस्तक से चरणोंतक प्रणव का न्यासकर तत् को मस्तक में स-को मुख में वि-को कण्ठ में तुः-अंगसंधियों में व-हृदय में रे-दोनोंपार्श्वों में ण्-दक्षिणकुक्षि में यं-वामकुक्षि में भः-कटि और नाभि में गो-जानुओं में दे-जंघाओं में व-चरणों में स्य-अंगुष्ठों में धी ऊरुओं में म-जानुओं में हि-गुह्य में धि-हृदयमें यो यो दोनोंओष्ठों में नः-नासिका में प्र-नेत्रों में चो-भ्रूमध्य में द-प्राण में या मस्तक में और अन्त के त्-कोकेशों में न्यासकरै अपने देह में ये न्यासकर देवता के शरीर में भी करै केसर अगर चन्दन कूपर आदिक करके युक्त जल से गायत्री मन्त्रपढ़ सबपूजा द्रव्यों को मार्ज्जन करै प्रणवकरके पीठस्थापन करै और प्रणव करकेही तेजोरूप ब्रह्माजी का आवाहन करै पद्ममें विराजमान चार मुखोंकरके युक्त सब जगत् के सिरजनेहारे श्रीब्रह्माजी का ध्यान कर पूजा करै गायत्री मन्त्र करके पाद्य अर्घ आचमन स्नान गन्ध पुष्प धूप दीप भांति भांति के नैवेद्य पकेहुये फल ताम्बूल आचमन आदि उपचारों से भक्ति करके ब्रह्माजी का पूजन करै पहिले मूल मन्त्र करके ब्रह्माजी की मूर्त्ति कल्पना करै प्रथम देहशुद्धि के लिये तीन प्राणायाम कर पीठ में अनन्त कालाग्नि रुद्र और कूर्मरूप विष्णु का ध्यानकर उसके ऊपर कमल में विराजमान ब्रह्माजी को ध्यावै

और ऋग्वेद यजुर्वेद सामवेद अथर्ववेद ज्ञान वैराग्य ऐश्वर्य्य और धर्म इनकी पूजा दिशा विदिशाओं में कर शिक्षाकल्प व्याकरण निरुक्तछंद ज्योतिष उपवेद इतिहास पुराण आदि का पूजनकरै शिक्षा और व्याकरण का ब्रह्माजी के सम्मुख पूजन करै और बाकी चारों ओर पूजै प्रणव सहित महाव्याहृतियों का पूर्वादि दिशाओं में पूजनकरै ये व्याहृति ब्रह्माजी की शक्ति हैं इसलिये अवश्य पूजनीय हैं सात समुद्र नक्षत्र ग्रह ऋषि नाग गरुड़ देवता नदी कुल पर्वत आदि सब की यथायोग्य पूजा करै पीछे शुद्ध जल से आचमन देवै फिर शिखा नेत्र कवच और अस्त्र इन चारों का न्यासकर पूर्व आदि चारों दिशाओं में पूजनकरै इस विधि भक्तिसे पूजनकर विसर्जन मुद्रासे ब्रह्माजीका विसर्जनकरै और आपोहिष्ठा इस ऋक् से हृदय ऋतंचसत्यं इससे शिखा उदुत्यं इस करके नेत्र चित्रन्देवानां इससे अस्त्र मर्माणितेवर्मणा इस करके कवच और गायत्री मन्त्र करके शिरका न्यास करै यह षडंगन्यास है गायत्रीमन्त्र मुख्य है और सब कर्म साधनेहारा है इससे ब्रह्माजी का पूजन प्रणवयुक्त गायत्री मन्त्र करके करै केवल प्रणव करके ऋग्वेद आदि का पूजनकरै आवाहन विसर्जन आदि गायत्री मन्त्रसेही करै इस प्रकार जो पुरुष प्रतिपदा के दिन भक्तिपूर्वक गायत्री मन्त्र करके ब्रह्माजी का पूजनकरै वह चिरकालपर्य्यन्त ब्रह्मलोक में निवासकरै ॥

सत्रहवां अध्याय ॥

ब्रह्माजीकीरथयात्रा का विधान, कार्त्तिकशुक्ल प्रतिपदाकी प्रशंसा ॥

सुमन्तुमुनि कहते हैं कि हे राजाशतानीक ! कार्तिक में जो ब्रह्माजी की रथयात्रा करै वह ब्रह्मलोक को जा

कार्त्तिक की पूर्णमासी को मृगचर्म के ऊपर सावित्री सहित ब्रह्माजी को विराज सब उपचारों से उनका पूजन करे और उनके अग्रभाग में शांडिली पुत्रकी पूजाकरे जो ब्रह्माजी का परमभक्त ब्राह्मण था ब्राह्मण भोजन कराय बड़े उत्सव से ब्रह्माजी को रथपर बैठावै और रथ के आगे शांडिली पुत्र को स्थापन करै उस रात को जागरण करै नृत्य गीत आदि उत्सव भांति २ के तमाशे ब्रह्माजी के सम्मुख रात भर होते रहैं इस विधि जागरण कर प्रतिपदा के दिन ब्रह्माजी का पूजनकरै और ब्राह्मणको भोजन कराय रथयात्रा करे चारों वेदों के जाननेहारे उत्तम ब्राह्मण उस रथ को खैंचै और रथके आगे ब्राह्मण वेद पढ़ते चलैं शूद्र इस रथ को स्पर्श न करै आगे शङ्ख भेरी मृदंग आदि भांति भांति के बाजे बाजते चलैं इसप्रकार सारे नगर में रथको घुमाय और नगरकी प्रदक्षिणा कराय अपने स्थानपर लेआवैं और आरतीकर ब्रह्माजी को उनके मन्दिर में स्थापन करैं इसप्रकार जो रथयात्रा करैं जो रथको खैंचैं जो दर्शन करैं वे सब ब्रह्मलोक को जायँ दीप मालाको जो ब्रह्माजी के मन्दिर में दीप प्रज्वलित करै वह ब्रह्मलोकपावै दूसरे दिन प्रतिपदाको ब्रह्माजीका सब उपचारों से पूजनकरै और अपने को भी वस्त्र भूषण आदि से अलंकृत करै यह तिथि ब्रह्माजी को बहुत प्रिय है और इसी तिथि से बलि के राज्य की प्रवृत्ति भई है जो इस दिन ब्रह्माजी का पूजन कर ब्राह्मण भोजन करावै वह विष्णुलोक पावै चैत्र में कृष्णप्रतिपदा के दिन चांडालको स्पर्शकर स्नान करै तो आधिव्याधियों से छूटजाय उस दिन गौ भैंस आदि को भूषितकर तोरण के नीचे से निकालै और ब्राह्मणों को भोजन

करावै चैत्र आश्विन और कार्त्तिक इन तीनों महीनों की प्रतिपदा उत्तम हैं परन्तु कार्त्तिक की विशेष करके प्रधान है उस में किया हुआ स्नान दान आदि सौगुण फल को देता है और राजा बलिको राज्य उसी दिन मिला है इसलिये कार्त्तिक की प्रतिपदा बहुत उत्तम मानीजाती है॥

अठारहवां अध्याय॥

द्वितीयाकल्पारम्भ, च्यवनमुनिकी कथा, पुष्पद्वितीया व्रतविधि॥

सुमन्तु मुनि कहते हैं कि हे राजा शतानीक! द्वितीयाके दिन च्यवन ऋषि ने इन्द्रके देखते २ अश्विनीकुमारों को यज्ञ में सोमपान करा दिया यह सुन राजाने पूँछा कि महाराज इन्द्र के देखते २ च्यवन मुनि ने किस विधि अश्विनीकुमारों को सोम पिलाया क्या च्यवनजी के तपका प्रभाव ऐसा प्रबल है कि इन्द्रभी कुछ न करसका तब सुमन्तु मुनि कहनेलगे, हे राजा! सत्ययुगकी पिछली सन्ध्या में च्यवनमुनि गङ्गातीर समाधि लगाय बहुत कालसे तप करते थे एक समय अपनी सेना और अन्तःपुरको साथ लेकर राजाशर्याति गङ्गा स्नान करने आया और च्यवन के आश्रममें उतर गङ्गा स्नानकर देवता और पितरों का तर्पण किया इतने में सब सेना व्याकुल भई और मूत्र विष्ठा सबके बन्दहोगये यह सेनाकी दशादेख राजाभी घबराया और प्रति मनुष्यसे पूछने लगा कि किसी ने कुछ अपराध तो नहीं कियाहै यह बड़े तपस्वी च्यवनमुनि का आश्रम है इस विधि सब मनुष्यों से पूछा परन्तु किसी ने कुछ न बताया तब राजाकी पुत्री सुकन्या नाम अपने पितासे बोली कि महाराज एक आश्चर्य मैंने देखा वह आपसे वर्णन करतीहूँ मैं अपनी सहेलियों को सङ्ग लिये वनविहार कररही थी कि एक

यह शब्दहुआ कि हे सुकन्ये ! इधरआव इधरआव यह सुन-
तेही मैं अपनी सखियों सहित उस शब्द की ओर गई वहां
जाकर बहुत ऊँचा एक मट्टी का बल्मीक देखा और उसके
भीतर छिद्रों में दीपक की भांति जलतेहुये दोपदार्थ देखे वे
देख मुझे बड़ा आश्चर्य हुआ कि यह पद्मराग मणि से क्या
चमक रहे हैं और मैंने मूर्खता और चंचलता से कुशाके अग्र-
भाग करके दोनों फोड़दिये तब वह तेज शान्त होगया यह सुन
राजा अतिव्याकुल भया और अपनी कन्याको साथले वहां
गया जहां च्यवनऋषि तप करते थे और उनको इतनाकाल
वहां बैठे २ बीत गयाथा कि उनके ऊपर बल्मीक बनगया
और उनके सुकन्याने जो कुशासे फोड़डाले वे उनके अति
प्रकाशमान नेत्र थे राजा वहां जाय अतिदीनता से बिनती
करनेलगा कि महाराज मेरी कन्या से बड़ा अपराध बनपड़ा
आप क्षमाकरें यह राजाकी प्रार्थना सुन मुनि बोले कि हे
राजा ! अपराध तो हमने क्षमाकिया परन्तु अपनी कन्या
हमसे विवाहदे इसी में तेरा कल्याण है यह मुनिका वचन सुन
राजाने झटपट सुकन्याको च्यवन ऋषि से ब्याहदिया और
सब सेना भी सुखी होगई इसविधि मुनिको प्रसन्नकर सुख
पूर्वक अपने नगरमें आय राज्य करनेलगा सुकन्याभी विवाह
के अनन्तर भक्ति से मुनिकी सेवा करनेलगी वृक्षकीछाल
और मृगचर्म्म पहिनलिया राजके वस्त्र भूषण उतारडाले इस
भांति मुनिकी सेवा करते २ कुछकाल व्यतीतहुआ और व-
सन्तऋतु आया सब वन फूलगया कोकिल बोलनेलगे भ्रमरों
ने कोलाहल मचाया मन्द मन्द सुगन्ध पवन बहनेलगा ऐसे
समय में एक दिन मुनि ने अतिरूपवती अपनी पत्नी सु-

कन्यासे कहा कि हे प्रिये ! हमारे समीपआओ इस उत्तमऋतु में हम तुमभी विहार करैं और दोनों कुलों को आनन्द देनेहारा पुत्र तुम्हारे गर्भसे उत्पन्न होय यह सुन सुकन्या ने कर जोर विनय से विनती करी कि महाराज आपकी आज्ञा मैं किसी प्रकार नहीं भंग करसकती परन्तु जैसी उत्तम शय्यापर मैं अपने पिता के घरमें सोती थी वैसी शय्या होय और आप सुन्दर रूप और यौवन करके युक्त हो उत्तम वस्त्र भूषण और सुगन्ध से अपने को अलंकृत करैं और मैं भी सब शृङ्गारकरूं तब इस उत्तम ऋतु में विहार करने का आनन्द है यह सुन च्यवनमुनि उदास हो बोले कि हे प्रिये ! न तो मेरा उत्तम रूप होय न तेरे पिताकासा धन मेरे पास कि जिस से सब भोग की सामग्री इकट्ठी करूं यह सुन सुकन्या बोली कि महाराज आप तपके प्रभाव से सब कुछ करने को समर्थ हैं यह तो कितनी बड़ी बात है तब मुनि ने कहा कि हे राजपुत्रि ! इस कामके लिये मैं अपना तप व्यर्थ नहीं करूंगा इतना कह पहिली भांति तप करने लगे और सुकन्या भी उनकी सेवा में तत्पर भई इस प्रकार बहुत काल व्यतीत होने के अनन्तर अश्विनीकुमार वहां आये और दोनों सुकन्या का अतिरूप देख बोले कि हे भद्रे ! तू कौनहै और इस घोर वनमें इकली क्योंकर रहती है यह सुन सुकन्या ने कहा कि शर्याति राजाकी सुकन्या नाम मैं पुत्रीहूं मेरे पति च्यवनमुनि यहां तप करते हैं उनकी सेवाके लिये मैं उनके समीप रहतीहूँ यह मेरा वृत्तान्त है अब तुमभी कहो कि दोनों कौनहो तब अश्विनीकुमारों ने कहा कि हम देवताओं के वैद्य अश्विनीकुमार हैं और इस वृद्ध पतिसे तुझे क्या सुख मिलेगा हमदोनोंमें से एकको वरले तब सुकन्या

बोली कि हे देवताओ! आप ऐसा मतकहो मैं पतिव्रताहूँ और सब प्रकार से अनुरक्त होकर दिन रात अपने पति की सेवा करतीहूं यह सुन अश्विनीकुमारों ने कहा कि जो ऐसी बात है तो तू अपने पतिको बुलाला हम उसको उत्तम रूप बनादेंगे और तीनों गङ्गामें स्नानकर बाहर निकलैं तब जिस पर तेरी इच्छाहोय उसको बरलेना यह सुन सुकन्या ने कहा कि मैं अपने पति से पूछआती हूँ अश्विनीकुमारों ने कहा कि अच्छा पूछआ जबतक तू आवैगी तबतक हम यहां हीं ठहरते हैं यह सुन सुकन्या अपने पतिके समीप गई और सब वृत्तान्त कहा उनने भी स्वीकार किया और सुकन्या अपने पति च्यवनमुनि को सङ्गले अश्विनीकुमारों के समीप आई च्यवनमुनि ने कहा कि हे अश्विनीकुमारो! आप का वचन हमको स्वीकार है आप हमारा रूप उत्तम बनादेवें पीछे सुकन्या चाहै जिसको बरलेवे यह कहने के अनन्तर अश्विनीकुमार च्यवनमुनि को लेकर जलमें प्रविष्ट भये और थोड़े कालके अनन्तर निकले तब सुकन्याने देखा कि ये तीनों समानरूप समान अवस्थावाले समान वस्त्र भूषणों से अलंकृत हैं इन में मेरे पति का निश्चय क्योंकर होय इस चिन्ता में विचारकर अश्विनीकुमारों की प्रार्थना करनेलगी कि हे देवो! अतिकुरूप पति कामी मैंने त्याग नहीं किया अब तो उस कारूप आपके समान होगया फिर मैं क्योंकर त्यागकरूं इस से आपके शरणहूं यह सुकन्याकी प्रार्थना सुन प्रसन्नहो अश्विनीकुमारों ने अपने देवचिह्न धारण किये तब सुकन्याने देखा कि दोपुरुषों के नेत्र निमेष नहीं करते और उनके चरण भी भूमिको नहीं स्पर्श करते केवल तीसरापुरुष भूमिपर खड़ा

है और नेत्रों से निमेष कररहा है यह चिह्न देख सुकन्या ने च्यवन मुनिको वरलिया तब उसके ऊपर आकाश से पुष्प वृष्टिभई और देवताओं ने दुन्दुभि बजाये इस प्रकार उत्तम रूप पाय च्यवनमुनि ने अश्विनीकुमारों से कहा कि तुमने मेरे ऊपर बड़ा उपकार किया कि यह उत्तमरूप दिया और पत्नीदी अब मैं तुम्हारे साथ इसके बदले क्या प्रत्युपकार करूं जो उपकार करनेहारे के संग प्रत्युपकार न करै वह इक्कीस नरकों में क्रम से जाता है इस कारण मैं तुम्हारे ऊपर बड़ा भारी प्रत्युपकार किया चाहताहूँ जो तुम्हारी इच्छा होय सो कहो उनने च्यवनमुनि को प्रसन्न देख कहा कि हमको यज्ञ में भाग दिलाइये यह बात च्यवनमुनि ने अंगीकार करी और उनको बिदाकर अपने आश्रम में आये यह सब वृत्तांत सुन राजा शर्याति भी अपनी रानीसहित च्यवन ऋषि के आश्रम में आये और प्रणामकरी च्यवनमुनि ने भी उनका आदर सत्कार किया सुकन्या अपनी माताके गले लगकर मिली राजा भी अपने जामाताको उत्तम रूपकरके युक्त देख बहुत प्रसन्न भया च्यवनमुनिने राजा से कहा कि यज्ञ की सामग्री इकट्ठी करो हम तुमको यज्ञ करावेंगे यह च्यवनमुनि की आज्ञापाय अपनी राजधानी में आय सब यज्ञ की सामग्री इकट्ठी करी और मंत्री पुरोहित आचार्य्य आदि को बुलाय यज्ञकी आज्ञादी च्यवन भी अपनी पत्नीसहित यज्ञ में आये और भी सब ऋषि यज्ञमें निमंत्रण देकर बुलाये गये यज्ञ होनेलगा ऋत्विक् हवनमें प्रवृत्तभये सब देवता अपना२ भाग लेने आये और च्यवनमुनि के कहने से अश्विनीकुमार भी आय पहुंचे उनके आने का प्रयोजन जान इन्द्र ने च्य-

वनमुनि से कहा कि ये दोनों देवताओं के वैद्य हैं इसलिये यज्ञभाग के अधिकारी नहीं आप इनका पक्ष न कीजिये तब च्यवनमुनिने कहा कि ये देवताहैं और मेरे ऊपर इनका बड़ा उपकार है मेरेही बुलाये से यहां आये हैं इसलिये मैं इनको अवश्य यज्ञ में भाग दूंगा यह सुन क्रोध से इन्द्र ने कहा कि हे मुनि! जो मेरा वचन न मानैगा तो वज्रसे तेरा मस्तक उड़ादूंगा यह इन्द्र का कठोर वचन सुनकर भी मुनि ने क्रोध न किया और अश्विनीकुमारों को भाग देदिया तब तो इन्द्र ने अतिकोप कर च्यवनमुनि के ऊपर वज्र उठाया च्यवन ने अपने तपके प्रभाव से इन्द्र को स्तम्भन करदिया कि हाथ में वज्र उठाये खड़े के खड़े रहगये च्यवन मुनि ने भी अश्विनीकुमारों को भाग दे अपनी प्रतिज्ञा पूरीकर यज्ञ समाप्त किया इस अवसर में ब्रह्माजी ने आयकर च्यवन से कहा कि इन्द्र का स्तम्भन खोलदो और यही वचन इन्द्र ने भी कहा और यह भी कहा कि आप के तपकी ख्याति होने के लिये मैंने इनको भाग देने में निषेध किया आज से सब यज्ञों में इनको भाग मिलाकरैगा और इस आप के प्रभाव को जो सुनैगा अथवा पढ़ैगा वहभी उत्तम रूप और यौवन पावैगा यह सुन च्यवन मुनि ने इन्द्र को विसर्जन किया आप अपनी स्त्री सहित आश्रम को आये वहां देखा कि बहुत उत्तम महल बन गये हैं जिन में सुन्दर उपवन और वापी विहार के लिये बने हैं भांति भांति की शय्या बिछी हैं रत्नों के जड़ाऊ भूषणों और नानाप्रकार के उत्तम २ वस्त्रों के ढेर लगे हैं सब भक्ष्य भोज्य रक्खे हैं यह सब देख च्यवनमुनि बहुत प्रसन्न भये और इन्द्र की प्रशंसा करी इतनी कथा सुनाय सुमन्तु मुनि बोले कि हे

राजा! इस प्रकार द्वितीया के दिन अश्विनीकुमारों को यज्ञ भाग मिला था अब हम इसके व्रत की विधि कहते हैं जो पुरुष उत्तम रूपकी इच्छाकरै वह कार्त्तिक शुक्ल द्वितीया से व्रतका आरम्भकरै और पुष्पभोजन करै इस विधि प्रतिद्वितीया को व्रतकरै और जो उत्तम हविष्य पुष्प उस ऋतु में होयँ उनका फलाहार करै इसभांति एक वर्ष व्रतकर चांदी सोने के पुष्पबनाय ब्राह्मणों को देवै और व्रतसमाप्तकरै उसको अश्विनीकुमार उत्तम रूप देते हैं और वह उत्तम विमान में बैठ स्वर्ग में जाय अप्सराओं से विहार करता है फिर मर्त्यलोक में जन्मलेकर वेद वेदांग जाननेहारा दानी निरोग पुत्र पौत्रोंकरके युक्त और उत्तम पत्नी करके सेवित ब्राह्मण होता है अथवा मध्यदेश के उत्तम नगर में राजाहोता है हे राजा! यह पुष्प द्वितीया का विधान हमने कहा ऐसीही फल द्वितीया भी होती है जिसको अशून्य शयना भी कहते हैं फल द्वितीया को जो श्रद्धा से व्रतकरै वह ऋद्धि वृद्धिपाय अपनी भार्यासहित आनन्द भोगता है ॥

उन्नीसवां अध्याय ॥

फल द्वितीयाका व्रत विधान और कल्पकी समाप्ति ॥

राजा शतानीक कहते हैं कि हे सुमन्तुमुनि! अब आप कृपाकर फल द्वितीया का विधान कहैं जिसके करने से उत्तम फलहोय यह सुन सुमन्तुमुनि कहनेलगे कि हे राजा! हम फल द्वितीया के व्रतका विधान कहते हैं जिस व्रतके करने से स्त्री विधवा नहीं होती और स्त्री पुरुषका कभी वियोग भी नहीं होता जब भगवान् लक्ष्मीजी के संग क्षीरसागर में शयन करैं तब यह व्रत होताहै श्रावणकृष्ण द्वितीया के दिन लक्ष्मीसहित भ-

गवान् का पूजनकर हाथजोर ये श्लोकपढ़े (श्रीवत्सधारिन् श्रीकान्त श्रीवत्सश्रीपतेप्रभो । गार्हस्थ्यंमाप्रणश्येत ममधर्मार्थकामद १ गावश्चमाप्रणश्यन्तु माप्रणश्यन्तुमेजनाः । जामयोमाप्रणश्यन्तु मत्तोदाम्पत्यभेदृतः २ लक्ष्म्याबियुज्यतेदेव नकदाचिद्यथाभवान् । तथाकलत्रसम्बन्धो देवमामेवियुज्यतु ३ लक्ष्म्यानशून्यंवरद यथातेशयनंसदा । शय्याममाप्यशून्यांस्तु तथातुमधुसूदन ४) इसप्रकार प्रार्थनाकर व्रतकरै और जो फल भगवान् को प्रिय हैं वे भगवान् के शयन में चढ़ावै और रात्रिके समय वेही फल आप भी भोजनकरै दूसरे दिन ब्राह्मणों को भोजन कराय दक्षिणा देवै इतना सुन राजा शतानीक ने पूँछा कि महाराज कौन फल भगवान् को प्रिय हैं सो आप कहैं और दूसरेदिन ब्राह्मण को क्या दानदेवै यह आप वर्णनकरैं यह राजाका वचन सुन सुमन्तु मुनिने कहा कि हे राजा! जो फल उस ऋतु में मीठे और पकेहोयँ वही भगवान् के अर्पणकरै कडुये कच्चे और खट्टे फल न चढ़ावै ऐसे फलों से भगवान् प्रसन्न नहीं होते हैं और दूसरे दिन ऐसेही फल वस्त्र और अन्न सुवर्ण ब्राह्मणको भी देवै इसप्रकार जो पुरुष चार महीने व्रतकरै तीन जन्मपर्यन्त उसका घर न बिगड़ै और ऐश्वर्य भंग न होय और जो स्त्री इस व्रतकोकरै वह तीनजन्म विधवा दुर्भगा और पतिसे वियुक्त न होय परन्तु भगवान् को खजूर नारिकेल मातुलुंग अर्थात् बिजौराआदि फल चढ़ाये बिना यह व्रत सफल नहीं होताहै इसकारण फल अवश्य चढ़ाने चाहिये और ब्राह्मण को भी अपनी शक्तिके अनुसार दानदेना चाहिये और इस व्रतके दिन अश्विनीकुमारों का भी पूजनकरै हे राजा! यह द्वितीया

का कल्प हमने वर्णन किया इसके सुननेसे लक्ष्मी मिलती है॥

बीसवां अध्याय॥

तृतीयाकल्पारम्भ, गौरी तृतीया व्रत विधान और फल॥

सुमन्तुमुनि कहते हैं कि हे राजा! जो स्त्री सब प्रकारका सुख चाहै वह तृतीयाका व्रतकरै और लवण न खाय तो उसको गौरी भगवती रूप सौभाग्य और लावण्य देती हैं इस व्रत का विधान गौरी ने अपने मुखसे धर्मराज प्रति कहा है वही हम वर्णन करते हैं गौरी देवी ने कहा है कि जो स्त्री इस व्रत को करै वह सदा अपने पतिके साथ आनन्द भोगै जैसा शिवजी के साथ मैं भोगतीहूँ विवाहके प्रथम कन्या यह व्रत करै सुवर्णकी गौरीकी मूर्ति स्थापन करै और भक्तिसे चित्तल-गाय पूजाकर भाँति २ की नैवेद्य लगावै और रात्रिको लवण रहित भोजनकर स्थापन कीहुई मूर्ति के आगे शयन करै और दूसरे दिन ब्राह्मणों को भोजन कराय दक्षिणा देवै इस प्रकार जो व्रत करै वह उत्तम पति पावै और चिरकालतक भूमि पर उत्तम भोग भोगकर संतान को स्थापनकर पतिसहित सूर्य्य लोक को जाय वहां बहुत काल सुख भोगकर ब्रह्मलोक को वहां से सप्तऋषियों के लोकको और वहांसे शिवलोक में प्राप्त होय विधवा स्त्री इस व्रतको करै तो वहभी अपने पति से जाय मिलै और बहुत काल स्वर्ग के सुख अपने पतिके सहित भोग करै और पहिले कहा हुआ सब फल पावै इन्द्राणी ने यह व्रत पुत्र के अर्थ किया तब जयन्त नाम पुत्र पाया अरुन्धती ने उत्तम स्थान के लिये किया जिसके प्रभाव से पतिसहित सब के ऊपर स्थान पाया और आजतक आकाश में देखपड़ती है रोहिणीने सब पत्नियों के जीतने के लिये यह व्रत किया और

लवण न खाया तब सब सपत्नियों में प्रधान और अपने पति चन्द्रमा की अतिप्रिया भई इसप्रकार यह व्रत उत्तम फल देनेहारा है वैशाख भाद्रपद और माघकी तृतीया सब तृतीयाओं में उत्तम है जिसमें भाद्र और माघकी तृतीया स्त्रियों के लिये विशेषफल देनेहारी हैं और वैशाखकी तृतीया सबके लिये साधारण है माघकी तृतीया को गुड़ और लवण का दानकरै गुड़के दानसे इन्द्र और लवण के दान से शची प्रसन्न होती हैं गुड़के अपूप भाद्रकी तृतीयाको दानकरै और पायस दानकरै तो शिव पार्वती प्रसन्न होयँ और वैशाख की तृतीयाको मोदक और शीतलजलका दानकरै तो सब देवता प्रसन्न होयँ वैशाख की तृतीया अक्षयतृतीया कहाती है इस दिन अन्न वस्त्र भोजन सुवर्ण जल आदि जो दान करै वह अक्षय होजाता है इसी से इस तृतीयाका नाम अक्षयतृतीया है इस तृतीया को शीतल जलसे भरेहुये पात्र का जो दान करै वह सूर्य्यलोक को जाय हे राजा शतानीक! इस तिथि को उपवास करै तो ऋधि वृद्धि और लक्ष्मी यह तृतीयाका कल्प जो सुनै वहभी उत्तम फलका भागी होताहै॥

इक्कीसवां अध्याय॥

चतुर्थी व्रत विधि गणेशजी का वृत्तान्त, शिव ब्रह्मा विवाद वर्णन॥

सुमन्तुमुनि कहते हैं कि हे राजा! चतुर्थी के दिन व्रतकरै और गणेशका पूजनकर ब्राह्मणको तिलदेकर आपभी तिलही भोजन करै इस प्रकार दो वर्ष व्रत करै तब विघ्ननायक श्री गणेशजी प्रसन्न होयँ मनोवाञ्छित फल देते हैं असाध्यकार्य्य भी इस व्रत के करने से सिद्ध होजाते हैं हाथी घोड़े धन पुत्र पौत्र उत्तम स्त्री विद्या यश और बुद्धि गणेशजी प्रसन्न हो

कर देते हैं और सात जन्मतक वह पुरुष राजा होता है और पीछे विघ्नराज के लोकको जाता है यह सुन राजा ने मुनि से पूछा कि महाराज गणेशजी ने किसको विघ्न किया जिस से उनका नाम विघ्नराज भया यह आप वर्णन करैं यह राजा का वचन सुन सुमन्तु मुनि कहनेलगे कि हे राजा ! स्वामिकार्त्तिकेय स्त्री और पुरुषोंका लक्षण बनाते थे उसमें गणेशजी ने विघ्न किया तब कार्त्तिकेय ने इनका किया विघ्न समझ क्रोध कर गणेशजीका एक दांत उखाड़ लिया और गणेशजी कोही मारने चले तब महादेवजी ने कार्त्तिकेय को निवारण किया और पूछा कि तुम ने इतना क्रोध क्यों किया तब कार्त्तिकेय बोले कि महाराज मैं स्त्री पुरुष लक्षण बनाता था उस में इसने विघ्न किया इस से मुझे बहुत क्रोध आया यह सुन महादेवजी ने कार्त्तिकेय का कोप शान्त किया और हँसकर पूछा कि हे पुत्र ! तुम पुरुष लक्षण जानते हो तो कहो कि हम में क्या लक्षण हैं तब कार्त्तिकेय ने कहा कि महाराज आप में ऐसा लक्षण है कि थोड़ेही दिनों में आप हाथ में कपाल धारोगे और जगत् में आप का नाम कपाली होजायगा यह पुत्र का वचन सुन महादेवजी ने क्रोधकर उनकी पुरुष लक्षण की पुस्तक उठाकर समुद्र में फेंकदिया और आप अन्तर्द्धान भये कुछ काल के अनन्तर ब्रह्माजी और महादेवजी का विवाद भया ब्रह्माजी ने कहा कि हम बड़े और महादेवजी ने कहा कि हम बड़े हैं हमारी उत्पत्ति कोई नहीं जानता और तुम्हारा जन्म हम जानते हैं तब ब्रह्माजी का पांचवां मुख हँसकर बोला कि हे शिव ! तुम्हारी उत्पत्ति हम जानते यह सुन शिवजी ने कोप किया और अपने नख से

ब्रह्मा के शिरको काट अपने हाथ में लेकर सुमेरु पर्व्वत में जहां विष्णु भगवान् तप करते थे वहां चले आये इस अवसर में ब्रह्माजी ने क्रोधकिया और उन के कटेहुये शिर स्थान से श्वेत कुण्डल धारे कवच पहिने धनुष बाण हाथ में लिये अतिक्रूर एक पुरुष निकला और करजोर ब्रह्माजी से कहने लगा क्या आज्ञा है तब ब्रह्माजी ने कहा कि जिस दुर्बुद्धि ने मेरा मस्तक काट लिया उसको जाकर मारदे यह सुनतेही वह पुरुष उठधाया और जहां विष्णु भगवान् तप करते थे वहां पहुँचा उसको देख भगवान् ने शिवजी से कहा कि आप त्रिशूल से हमारी भुजाको भेदनकरो तब शिवजी ने विष्णु जी की भुजा भेदन करी उसमें से एक रुधिर की धार निकल कर आकाश को उछली पीछे शिवजी के हाथ में जो ब्रह्मा के शिरका कपाल था उसमें गिरी और कपाल रुधिर से भरगया उस रुधिर को शिवजी ने अपनी तर्जनी अँगुली से मथा तब उससे कवच पहिने रक्त स्वर्ण के कुण्डल धारे धनुष बाण लिये एक पुरुष अति भयंकर निकला और हाथजोड़ शिव जी से बोला कि हे प्रभु! क्या आज्ञा है तब महादेवजी ने आज्ञादी कि इस ब्रह्मा के भेजेहुये श्वेत कुण्डली को मार दे यह सुनतेही वह रक्त कुण्डली पुरुष श्वेत कुण्डली से लिपट गया और दोनों का युद्ध होनेलगा जैसा प्रलय के समय मंगल और केतुका होय बहुत काल उन दोनोंका घोरयुद्ध हुआ परन्तु जय किसी का न भया और सम्पूर्ण लोक व्याकुल भये तब आकाशवाणी भई कि युद्ध मत करो और विष्णु भगवानने दोनों को समझाय युद्ध से निवृत्त किया और कहा कि भूमि का भार उतारने के लिये तुम दोनों सहित मेरा

अवतार होगा इतना कह भगवान् ने श्वेत कुण्डली सूर्य्यनारायण को दिया और रक्त कुण्डली इन्द्र के हवाले किया वे दोनों भी इन क्रोधसे उत्पन्न हुये पुरुषों को लेकर अपने अपने धामको गये और शिवजी से भगवान् ने कहा कि इस कपाल को आप धारण करैं और इस आपके कपालव्रतको जो धारण करेंगे उनको कोई पदार्थ दुर्लभ न होगा और समुद्रको बुलाकर शिवजीने कहा कि स्त्री पुरुष लक्षण तू बनाये यह सुन कार्त्तिकेयसे क्रोधकर कहा कि विनायक का दांत जो तैंने उखाड़ लिया है वह देदे तेरे पुरुष लक्षणमें विघ्न होनाथा सो होगया और जो तुझे लक्षण की अपेक्षा होय तो समुद्र से लेले परन्तु नाम समुद्र काही रहेगा अर्थात् यह लक्षण सामुद्रिक कहावैगा यह शिवजीका वचन सुन कार्त्तिकेयने कहा कि आपकी आज्ञासे मैं गणपति को दांत देता हूं परन्तु गणपति भी इस को सदा धारण करैं जो इस दांतको कहीं फेंकदेंगे तो उसी क्षण भस्म होजायँगे इतना कह कार्त्तिकेय ने वह दांत गणेशजी को देदिया और गणेशजीने भी वह धारणकिया और आजतक धारेही हैं इतनी कथा सुनाय सुमन्तुमुनि बोले कि हे राजा ! यह देवताओंकी गुप्तबात आपसे कहीहै इसको जो वेदवेत्ता ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य और उत्तम गुणोंकरकेयुक्त शूद्रको सुनावै और जो भक्ति से सुने उसको कोई पदार्थ दुर्लभ नहीं और किसी कार्य्यमें विघ्न न होय ऋद्धि सिद्धि और लक्ष्मी मिलै ॥

बाईसवां अध्याय ॥

गणपतिके विघ्नराज होनेका कारण व उपद्रुत पुरुषके लक्षण ॥

राजाशतानीक पूछतेहैं हे सुमन्तुमुनि ! गणेशजीको विघ्नोंके

राजा किसने बनाया और गणोंकेस्वामी क्योंकर कहाये यह आप वर्णनकरैं यह राजाका प्रश्नसुन सुमन्तुमुनिने कहा कि हे राजा! बहुत उत्तमबात तुमने पूछी हम वर्णनकरतेहैं प्रीति से श्रवणकरो पूर्वकालमें प्रजाओंके सबकाम निर्विघ्न सिद्ध होजाते थे इसलिये प्रजाको बहुत अहंकार बढ़ा तब ब्रह्मा जीके कहने से प्रजाके कार्यों में विघ्न करनेके लिये शिवजी ने गणेशजी को उत्पन्नकिया तबसे गणेशजीके अनुग्रह विना किसी का कार्य निर्विघ्न सिद्ध नहीं होता इसीसे विघ्नराज कहाये जिस पुरुष पर गणपति का कोप होय उसके लक्षण सुनो वह स्वप्नमें तेलमें स्नान करता है नंगे मुंडे मूड़ के पुरुषों को देखता है क्रव्याद अर्थात् मांस खानेहारे सिंह व्याघ्र आदि जीवों पर चढ़ता है चाण्डाल गधे ऊंट आदि के बीच बैठता है ऊंट पर चढ़ कषाय वस्त्र धारेहुये पुरुषों करके वेष्टित यमके समीप जाता है और करवीरके फूलों की माला गलेमें पहिनता है ये सब लक्षण स्वप्न में देखता है और जागता हुआ विना कारण उदास रहता है चलता फिरता यह देखता है कि कोई मेरे पीछे चला आता है और जिस कार्यका आरम्भ करै उसीमें विघ्न होजाता है गणपति करके उसस्पृष्ट राजा राज्यको नहीं प्राप्तहोता कन्या को पति नहींमिलता गर्भिणी स्त्रीके सन्तान नहींहोती आचार्य पढ़ानहीं सक्ता विद्यार्थी पढ़ानहींसक्ता वैश्यको व्यापार में लाभ नहीं होता खेती करनेहारा खेतीमें कुछ फल नहीं पाता इन सब विघ्नों के निवृत्त करने के लिये शुक्लचतुर्थी बृहस्पतिवार अथवा पुष्य नक्षत्र के दिन गणेशजी का स्नान करावै उसकी हम विधि कहते हैं सिंहासन पर गणेशजी की मूर्ति को स्थापन

कर सरसोंका उबटना लगाय सर्वौषधि और सुगन्ध वस्तुओं का तैल मर्दनकर स्नान करावै और ब्राह्मणों से स्वस्तिवाचन कराय पूजाकरै पहिले शिव पार्वती की पूजाकर गणेशजी का पूजनकरै और कार्त्तिकेय बृहस्पति बुध राहुकी भी पूजा करै और चारकलश जलके मँगाय उनमें घोड़ों के स्थानकी हाथियों के स्थानकी बल्मीककी नदियों के सङ्गम की और सरोवरकी मृत्तिका डालै तथा गूगल और गोरोचन आदि द्रव्य और सुगन्ध पदार्थ उस जलमें मिलाय गणेशजी के सिंहासन को लाल वृषभ के चर्मके ऊपर विराज इन मन्त्रोंसे पर्वोक्त जल करके गणेशजी को स्नान करावै । स्नान के मन्त्र येहैं । सहस्राक्षंशतधारं ऋषिभिःपावनैःकृतम् । तेनत्वामभि षिंचामि पावमान्यःपुनन्त्विह १ भगन्तेवरुणोराजा भगंसूर्यो बृहस्पतिः । भगम्सिन्द्रश्चवायुश्च भगंसप्तर्षयोददुः २ यत्तके शेषुदौर्भाग्यं सीमन्तेयच्चमूर्द्धनि । ललाटेकर्णयोरक्ष्णोरापस्त द्घ्नन्तुतेजसा ३ इन मन्त्रों से स्नान कराय सरसों के तेलका हवन करै हवनके लिये गूलरके काष्ठका स्रुवा बनावै मित संमित शाल कटंकट कूष्माण्ड और राजपुत्र इन नामों के अन्त में स्वाहा लगाय हवन करै और शूर्प अर्थात् छाज में कुशा बिछाय उस में कच्चे पक्के चावल मांस भात कच्चा मांस कच्चे पक्के मत्स्य तीनप्रकार की सुरा भांति भांति के पुष्प अतर आदि सुगन्ध द्रव्य लड्डू पूरी अपूप दही बड़े खीर गुड़ के पकान्न और अनेक प्रकारके फल मूल रखकर नमस्कारान्त नाम और बलिमन्त्र करके चतुष्पथ अर्थात् चौराहे में बलि देवै इस प्रकार बलिदेकर अंजलि में पुष्प दूर्वा और सर्षप लेकर गणेशजी की माता पार्वतीजी की प्रार्थना करै कि । रूपंदेहि

यशोदेहि भगंभवतिदेहिमे । पुत्रान्देहि धनन्देहिसर्वान्कामांश्चदेहिमे ॥ इस मन्त्र से भगवतीकी प्रार्थनाकर ब्राह्मणों को भोजन कराय दोवस्त्र और कुछ दक्षिणा गुरुके समर्पणकरै इस विधि गणेशजी और ग्रहोंकी पूजाकरै तो सब काम निर्विघ्न होयँ और लक्ष्मी मिलै सूर्य गणेश और कार्त्तिकेय की पूजा करने से सदा विघ्न निवृत्त होते हैं ॥

तेईसवां अध्याय ॥

पुरुषों के लक्षण ॥

राजा शतानीक पूछते हैं कि हे सुमन्तुमुनि ! जो स्त्री पुरुषों के लक्षण स्वामिकार्त्तिक ने बनाये और शिवजीने क्रोध कर समुद्र में फेंकदिये वे लक्षण फिर कार्त्तिकेय को प्राप्तभये कि नहीं यह आप वर्णन करें यह सुन सुमन्तुमुनि बोले कि हे राजा ! वे लक्षण जिस विधि कार्त्तिकेय को प्राप्त भये वह हम वर्णन करते हैं कार्त्तिकेय ने जब अपनी शक्तिसे क्रौंच पर्वत को विदारण किया तब ब्रह्माजी ने प्रसन्नहो कार्त्तिकेय से कहा कि हम तुमसे बहुत प्रसन्न हैं वरमांगो उस समय कार्त्तिकेय ने कहा कि महाराज जो स्त्री पुरुष लक्षण मैंने बनाये थे वे मेरे पिताने क्रोधकर समुद्र में फेंकदिये और मुझे भी स्मरण न रहे अब उनके श्रवण करने की इच्छा है आप अनुग्रह करके कथन कीजिये यह कार्त्तिकेय का वचन सुन ब्रह्माजी बोले कि हे कार्त्तिकेय ! वे सब लक्षण समुद्र ने जिस प्रकार कहे हैं वैसेही हम तुमको सुनाते हैं उत्तम मध्यम और अधम ये तीन प्रकार के लक्षण समुद्र ने कहेहैं अच्छे मुहूर्त्त में मध्याह्न के पूर्व पुरुष के लक्षण देखै प्रमाण संहति छाया गति सम्पूर्ण अङ्ग दांत केश नख और श्मश्रु अर्थात् दाढ़ी

मोक्षके लक्षण देखै पहिले आयुष् का परीक्षा करके लक्षण देखै आयुष् थोड़ा होय तो सब लक्षण वृथा हैं अपने अंगुलों से जो पुरुष एकसौआठ अंगुल होय वह उत्तम होता है सौ अंगुल होय वह मध्यम और नब्बे अंगुल ऊँचा पुरुष अधम गिनाजाता है यह प्रमाण का लक्षण समुद्रने कहा है अब पुरुष के अंगों का लक्षण कहते हैं जिसके चरण कोमल रक्तवर्ण स्निग्ध ऊँचे पसीने से रहितहों और नाड़ियों करके व्याप्त नहीं अर्थात् नाड़ी न देख पड़तीहों वह पुरुष राजा होता है जिसके पादतल में अंकुश का चिह्न होय वह सदा सुखी रहै कूर्म के समान ऊँचे कमलसे कोमल और रक्त अंगुली जिनकी परस्पर मिलीहुई सुन्दर पार्ष्णि अर्थात् एड़ी करके युक्त और निगूढ़ गुल्फ अर्थात् जिनके टकने गुप्त हों उष्ण अर्थात् सदा गर्मरहैं परन्तु प्रस्वेद न आवै और लाल वर्ण के नखों से भूषित ऐसे चरण राजाही के होतेहैं शूर्प के समान रूक्ष श्वेत नखों करके युक्त टेढ़े रूखे नाड़ियों करके व्याप्त विरल अंगुलियोंवाले और जिनमें पसीना आवै ऐसे चरण दरिद्री और दुःखी पुरुषों के होते हैं जिसके चरणतल अर्थात् तलुवे पकी मृत्तिका के समान वर्ण होयँ वह पुरुष ब्रह्महत्या करै पीत तलवाला अगम्या स्त्री से संग करै कृष्ण वर्ण चरणतल होने से सदा पानमें आसक्तरहै और जिसके चरणतल श्वेतवर्ण होयँ वह अभक्ष्य पदार्थ भोजन करै जिसके पैरोंके अंगुष्ठ बहुत मोटे होयँ वे भाग्यहीन होते हैं विषम अंगुष्ठवाला मार्ग में चलतारहै चिपटे टूटे हुये अंगुष्ठ होयँ तो वह अति निन्दित होयँ टेढ़े छोटे और फटे हुये अंगुष्ठ जिसके होयँ वह क्लेश भोगै गोल न बड़े न छोटे रक्तवर्ण

नखों से भूषित और कोमल अंगुष्ठ होयँ तो राज्य मिलै जिस पुरुषके पांवकी तर्जनी अंगुली अंगुष्ठ से बड़ी हो उस को सदा स्त्रीभोग मिलै और कनिष्ठा अंगुली दीर्घ होने से सुवर्ण की प्राप्ति होय चपटी बिरल सूखी और टेढ़ी जिसकी अंगुली होयँ वह धनहीन होय और सदा दुःख भोगै रूखे फटे हुये और श्वेत नख होयँ तो दुःख मिलै बुरे नख होयँ तो पुरुष शील से रहित और कामभोग से हीन होय हरे नख होयँ तो वह पुरुष ब्रह्महत्या करै बन्धुओं से बियोग होय और अपने कुलका संहार करै इन्द्रगोप अर्थात् बीरबहूटी नाम कीट के समान वर्ण जिसके अति अरुण नख होयँ वह अवश्य राजा होय रोम करके युक्त जिनकी जंघा होयँ वे भाग्यहीन होते हैं अश्व के समान जिनकी जंघाहोयँ वे ऐश्वर्य पावैं और बन्धन भोगें मृगके समान जंघा होयँ तो राजा होय शृगाल और काककी जंघाके समान जिनकी जंघा होयँ वे भाग्यहीन और दुःख भोगनेहारे होते हैं दीर्घ अर्थात् लम्बी और मोटी जंघावाले भी भाग्यहीन होते हैं और सिंह तथा व्याघ्रके समान जिनकी जंघाहोयँ वे धनवान् होते हैं एक २ रोमकूप में एक २ रोम होय तो राजा होय दो २ रोम होयँ तो पण्डित तथा श्रोत्रिय होय और तीन २ रोम होनेसे धनहीन और दुःखी होय इस प्रकार रोम और केश भले और बुरे होते हैं जिसके जानु अर्थात् घुटने मांसरहित होयँ वह विदेशमें मरै विकट जानुहोयँ तो दरिद्री होय निम्न होयँ तो स्त्रीजितहोय और मांस करके सहित जानु होयँ तो राजाहोय हंस भास शुक वृष सिंह हाथी और और जो उत्तम पक्षी हैं उनके समान गति होय तो राजा अथवा भाग्यवान् होय जलके तरंगोंके समान और काक उलूक

आदि दुष्टजीवों के समान अथवा श्वान उष्ट्र महिष गधा शूकर आदि के तुल्य जिनकी गति होय वे दुःख और शोक करके युक्त होते हैं तथा भाग्य से भी हीन होते हैं यह समुद्र का वचन है इस में संदेह नहीं ॥

चौबीसवां अध्याय ॥

पुरुषों के लक्षण ॥

ब्रह्माजी कहते हैं कि हे कार्त्तिकेय ! जिसका लिंग दहिनी ओर झुकाहो उस के पुत्र होयँ और बाईं तरफ़ झुके रहने से कन्या होती हैं स्थूल नाड़ियों से व्याप्त और विषमलिंग होय तो दरिद्री होय वर्त्तुल और सीधाहोय तो पुत्र होयँ निम्न पादोंपर बैठे हुये जिसका लिंग भूमि को स्पर्श करै वह राजा होय और स्त्रियों के अतिप्रियहोय सिंह अथवा व्याघ्र के समान छोटालिंग होय तो भोगी होय और अश्व के लिंग समान लिङ्ग होय तो भी भोगी होय जिसका मणि अर्थात् लिङ्ग के अग्रभाग की ग्रन्थि रक्तवर्ण स्निग्ध और अतिकांतियुक्त हो वह राजा होय पांडुर मलिन रूक्ष और लम्बा मणि होय तो देशाटन करै सम ऊंचा और स्निग्धमणि जिनके होय वे धन का भोग करनेहारे और स्त्रियों के वल्लभ होते हैं मध्य में नीचा मणिहोय तो कन्या बहुत होयँ और धनहीन भी होय दहिनी ओर एकधारा होकर मूत्रगिरै तो राजा होय और स्निग्ध दो धारा मूत्र की गिरैं तो धनवान् और भोगवान् होय जिस के बहुत सी रूक्षधारा गिरैं और शब्द भी होय वह अधम पुरुष होय जिसके वीर्य्य में मछी का गन्ध होय वह धनवान् और पुत्रवान् होय घृत का गन्ध होय तो धनी और वेदवेत्ता होय मद का गन्ध होय अथवा कमल का तो राजा होय और लाख

मद्य तथा क्षारके समान जिसके वीर्य्य में गन्ध हो वह धन-हीन कन्या सन्तानवाला और युद्ध करनेहारा हो जो पुरुष शीघ्र मैथुन करै वह दीर्घायु होता है और जो बहुत देर तक मैथुन करै उसका आयुष् थोड़ा होता है जिसके वीर्य्य थोड़ा होय उसके कन्याही होयँ जिस का रक्त कमल के पुष्प के समान वर्णहोय वह धनवान् होता है कुछ लाल और कुछ काला रुधिर होय वह मनुष्य अधम और पापकर्म्म करनेहारा होय कुछ लाल और कुछ पीला रुधिरहोय वह मध्यम पुरुष होता है और कभी सुख भोगै कभी दुःख में पड़े जिसका रुधिर प्रवाल अर्थात् मूँगे के समान अतिरक्तवर्ण और स्निग्धहोय वह सप्तद्वीपों का राजा होय चौड़ीमांस से पुष्ट और स्निग्ध वस्ति अर्थात् नाभि का अधोभाग होय तो अच्छा होता है और निर्म्मांस विकट तथा रूक्ष वस्ति अच्छी नहीं होती जिसकी वस्ति जम्बुक श्वान ऊंट और महिष के समान हो वह पुरुष सदा दुःख भोगै जिसके एक वृषण अर्थात् अंड होय वह जल में प्राण त्यागै छोटे बड़े वृषण होयँ तो स्त्री लम्पट होय दोनों समान होयँ तो धनवान् होय ऊपर को खिंचेहोयँ तो थोड़ा आयुष् भोगै और नीचे को लटकते हुये लम्बे वृषण होयँ तो वह पुरुष सौ वर्ष जीवै जिसके स्फिक अर्थात् कटिके ऊपर के मांस पिण्ड स्थूल और विषम होयँ वह धनहीन होय दोनों समान होयँ तो धनी होय व्याघ्र मेंडक और सिंहतुल्य स्फिक् होयँ तो राजा होता है और ऊंट अथवा वानर के समान जिसके स्फिक् होयँ वह पुरुष धन-हीन और दुःख भोगनेहारा होय मृग अथवा मोर के समान जिसका उदर अर्थात् पेट होय वह पुरुष उत्तम होता है

व्याघ्र मेंडक और सिंह के समान उदर होने से राजा होय मांस से पुष्ट सीधे और गोल जिन के पार्श्व अर्थात् पसवाड़े होयँ वे राजा होते हैं जिसकी पीठ व्याघ्र के समान होय वह सेना का पति होता है सिंह के समान लम्बी पीठवाला मनुष्य बन्धन से गिरता है अर्थात् क़ैद होता है और जिन की पीठ कछुवे के समानहो वे राजा होते हैं जिन का हृदय चौड़ा मांस से पुष्ट और रोमों करके युक्तहोय वे पुरुष उत्तम होते हैं सौ वर्ष का आयुष भोगते हैं और धनवान् तथा भोगी होते हैं जिस के हाथ की अंगुली सूखी रूखी और विरल होयँ वह धनहीन और नित्य दुःखी होता है जिस के हाथ में मत्स्यरेखा होय उस के सब कार्य्य सिद्ध होयँ और धनवान् तथा पुत्रवान् होय जिस के हाथ में तखड़ी अथवा वेदी का चिह्न होय उस को व्यापार में लाभ होय जिस के हाथ में सोम की बेल होय वह धनी होय और यज्ञ करै पर्व्वत और वृक्ष होयँ तो लक्ष्मी स्थिर रहै और वह पुरुष बहुत सेवकों का स्वामी होय वर्छी बाण तोमर खड्ग और धनुष का चिह्न हाथ में होय तो युद्ध में जयपावै ध्वजा और शंख का चिह्न होय तो जहाज़ से व्यापार करै और धनवान् होय श्रीवत्स कमल वज्र चक्र रथ और कलश का चिह्न जिस के हाथ में हो वह राजा होय दहिने हाथ के अंगूठे में जिस के यव का चिह्न होय वह सब विद्याओं का जाननेहारा होय जिस के हाथ में कनिष्ठा के नीचे से तर्जनी के मध्यतक रेखा चलीजाय बीच में टूटैनहीं वह पुरुष सौ वर्ष जीवै यह समुद्र ने कहा है ॥

पच्चीसवां अध्याय ॥

पुरुषों के लक्षण ॥

ब्रह्माजी कहते हैं कि हे कार्त्तिकेय! अब हम जो लक्षण शेषरहे हैं उन को कहते हैं जिस की कुक्षि अर्थात् पेट समान होय वह भोगी होता है विषम कुक्षिहोय तो अनेक माया और छल करनेहारा होय निम्न कुक्षि होय तो राजा होय और जिस का पेट सर्प्प के समान लम्बा होय वह दरिद्री और बहुत भोजन करनेहारा होय विस्तीर्ण गम्भीर और गोल नाभि होय तो सुख भोगनेहारे और धन धान्य युक्त पुरुष होते हैं नीची और छोटी नाभि होय तो भांति २ के क्लेश भोगे जो बलि के बीच नाभिहोय और विषम होय तो धन की हानि करै दक्षिणावर्त्त नाभि अच्छी होती है और वामावर्त्त नाभि उत्तम नहीं होती कमल की कर्णिका के समान जिस की नाभि होय वह राजा होय पेट में एकबलि होय तो शस्त्र से मारा जाय दो बलि होयँ तो स्त्रीभोगी होय तीन होयँ तो राजा अथवा आचार्य्यहोय और चार बलि होने से बहुत पुत्रहोयँ विषम बलि होयँ तो अगम्या स्त्री से संगकरै और सीधी बलि होयँ तो भोगी होय परन्तु परस्त्री स्पर्श न करै समान ऊंचा कम्प से रहित और पुष्ट हृदय राजा का होता है और कठोर रोम तथा नाड़ियों करके व्याप्त हृदय दरिद्री का होता है दोनों कन्धे समान होयँ तो धनवान् होय पुष्ट होयँ तो शूरवीर होय छोटेहोयँ तो धनहीन और बड़े छोटे होयँ तो धनहीनहोय और शस्त्र से माराजाय जिस के जत्रु अर्थात् कन्धोंकी संधि विषम होय वह दरिद्री होय समहोयँ तो सुख भोगै और ऊंचे जत्रुहोयँ तो अनेक प्रकार के सुखभोगै जिस की ग्रीवा चपटी

होय वह धनहीन होय जिसकी ग्रीवा महिष के समान हो वह शूरवीर होय मेषके तुल्य होय तो डरनेवाला होय शुष्क हाथी और वक पक्षी के तुल्य ग्रीवाहोय और बहुत लम्बी तथा सूखीहोय वह धनहीनहोय छोटी ग्रीवा होय वह पुरुष धनवान् होय और धूर्त्त भी होय गोल तीन रेखाओं करके युक्त न बहुत लम्बी न बहुत छोटी ग्रीवाहोय तो राजा होताहै पुष्ट पसीना और दुर्गन्ध से रहित सम थोड़े रोमोंकरके युक्त कक्ष अर्थात् कांख होय तो धनी होय जिसके भुजा ऊपर को खिंचेहों वह बंधन में पड़े छोटीभुजाहोयँ तो दास होय छोटीबड़ी भुजा होयँ तो चोर होय लम्बी भुजा होयँ तो सबगुणों करके युक्त होय जानुओं तक लम्बी समान हाथी की सूंड़के तुल्य और रोमों से रहित भुजा होयँ तो राजा होय जिस के हाथका तल निम्न अर्थात् गहरा हो उसको पिताका धन न मिले आपही धनका उपार्जनकरै और भीरु अर्थात् डरनेवाला होय और ऊंचे करतल होयँ तो दानी होय विषम करतल होयँ तो अच्छे नहीं लाख के समान रक्तवर्ण करतल होयँ तो राजा होय पीले होयँ तो अगम्यागमनकरै काले और नीलेहोयँ तो नहीं पान करने की वस्तुपीवै और रूखे होयँ तो निर्द्धन होय हाथकी रेखा गहरी और स्निग्ध धनवानों की होती हैं दरिद्रियों की नहीं जिनकी अंगुली विरल होयँ उनके पास धननहीं ठहरता और गहरी अंगुली होयँ जिनमें छिद्र न होय तो धनका संचय करते हैं जिनका मुख चन्द्रमण्डल के समान होय वे धर्मात्मा होते हैं टेढ़ा टूटाहुआ विकृत और सिंह के समान मुख होय तो चोर होताहै जिनका मुख सम्पूर्ण सुन्दर और कान्ति युक्त हो राजा होते हैं बकरे अथवा बन्दर के मुखसमान मुख होय

धनवान् होय बड़ामुख होय तो दुर्भगहोय छोटा होय तो कृपण लम्बाहोय तो धनहीन और पापी और चौखूंटा होय तो धूर्त्त और स्त्रीके मुखके तुल्य और निम्नमुख होय तो वह पुरुष पुत्र हीन होय उत्पन्न होकर पुत्र नष्ट होजाय जिसके कपोल कमल दलके समान कोमल और कान्तियुक्त हों वह राजाहोय सिंह व्याघ्र अथवा हाथी के समान कपोल होयँ तो महाभोगी और सेनाका स्वामी होय जिसका नीचे का ओष्ठ रक्तवर्ण हो वह राजा होता है और मोटे फटे हुये नीले और रूखे ओष्ठ होयँ तो दरिद्री पापी और चोर होय दाढ़ी स्निग्ध आगे से जिसके बाल फटे न हों और सम्पूर्ण मुखपर होयँ तो अच्छी होतीहै रक्तवर्ण रूखी थोड़ीसी होय तो अच्छी नहीं जिसके कान मांस से हीन होयँ वह अपने पापसे नाशको प्राप्त होता है चपटे कान होयँ तो रोगी छोटे होयँ तो कृपण शंकुके तुल्य कान होयँ तो सेनापति नाड़ियों करके व्याप्त होयँ तो क्रूर केशों करके युक्त होयँ तो बहुत दिन जीनेहारा और बड़े पुष्ट तथा लम्बे कान होयँ तो भोगी देव ब्राह्मण की पूजाकरनेहारा और राजा होय जिसकी नासिका शुककी चोंचके समान हो वह सुखभोगी और सूखी नासिका होय तो बहुत दिन जीवै ऊंची नासिका होय तो राजा होय लम्बी होय तो भोगी छोटी होय तो धर्म्म से हीन विकृत आगे से मोटी और ऊपरको खिंचीहुई नासिका होय तो पापी मनुष्य होय हाथी घोड़ा सिंह अथवा सूची अर्थात् सुईके भाँति तीखी जिसकी नासिका होय वह व्यापार में लाभ पावै कुन्द पुष्पकी कलीके समान जिनके दांत होयँ वे राजा होतेहैं रीछ और बन्दर के समान दन्त होयँ तो सदा क्षुधा से व्याकुल रहै कराल रूखे बिरल

और फूटेहुये दांत होयँ तो दरिद्री होय बत्तीस दांत होयँ तो राजा होय काली अथवा चित्र वर्णकी जीभहोय तो वह पुरुष और की सेवा करै अर्थात् दास होय मोटी और रूखी जीभ होय तो पाप करनेहारा होय श्वेतवर्ण जिह्वा होय तो शौच आचार युक्त होय निम्न स्निग्ध रक्तवर्ण और छोटी जिह्वा होय तो विद्वान् होय कमल के पत्र के समान पतली लम्बी न बहुत मोटी और न बहुत चौड़ी जिह्वा होय तो राजा होता है काले रङ्ग का जिस पुरुष का तालु हो वह अपने कुलका नाशकरै पीला तालु होय तो सुख भोगै और लाल होय तो राजा होय सिंह हस्ती के तालु के समान और कमल के तुल्य जिसका तालुहोय वहभी राजा होय श्वेत तालुहोय तो धनवान् और रूखा फटा तथा विकृत तालुहोय तो दरिद्री मनुष्य होय हंस मेघ दुन्दुभि और हाथी के समान जिसका गम्भीर स्वरहोय वह राजा होता है रूखा घर्घर फटा हुआ क्षीण काक के स्वर के तुल्य पशु के स्वर समान और फूटी कांसे की थाली के ध्वनि के सदृश जिनका स्वर हो वे अधम होतेहैं और सदा क्लेशभोगतेहैं दाड़िमके पुष्पके समान [illegible]ग होयँ वह राजा होय व्याघ्र के सदृश नेत्र क्रोधी पुरुष के [illegible]तेहैं बिल्ली और हंस के समान नेत्र होयँ तो अधम पुरुष [illegible]य मयूर और नकुलके तुल्य नेत्रहोयँ तो मध्यम होय अर्थात् [illegible]रा न भला शहद के तुल्य पिङ्गल वर्ण जिसके नेत्र होयँ [illegible]सको कभी लक्ष्मी नहीं त्यागती गोरोचन और हरिताल [illegible] तुल्य पिङ्गल नेत्र होय तो बलवान् और राजा होय दो [illegible]त्रा कालमें जो नेत्रों का निमेष करें वे अधम होते हैं तीन [illegible]त्रा तुल्य कालमें करें वे सुखी चार मात्रा समान कालमें

निमेष करैं वे राजा और जो पुरुष पांच मात्रा इतने काल में निमेष करते हैं वे चक्रवर्ती राजा दीर्घायुष् और धर्मात्मा होते हैं अर्द्धचन्द्र के तुल्य ललाट होय तो राजा होता है बड़ाललाट होय तो धनवान् होताहै छोटे ललाट से धर्म्मात्मा होय ललाट के बीच जिस स्त्री अथवा पुरुष के पांच आड़ी रेखा हों वह सौवर्ष जीवै और ऐश्वर्य्यभी पावै चार रेखा होयँ तो अस्सी वर्ष तीन होयँ तो सत्तरवर्ष दो होयँ तो साठवर्ष एक रेखा होय तो चालीस वर्ष और एकभी रेखा न होय तो पच्चीस वर्ष आयुष् पाताहै इन रेखाओं से हीन मध्यम और पूर्ण आयुकी परीक्षा करै छोटी रेखा होयँ तो अल्पायुष् और लम्बी २ रेखा होयँ तो दीर्घायुष् पावै जिसके ललाट में त्रिशूल अथवा पट्टिश का चिह्न होय वह बड़ा प्रतापी और कीर्त्ति करके युक्त राजा होय छत्रके समान शिर होय तो राजा होय लम्बा शिर होय तो दरिद्री विषम होय तो दुःखी समान तथा गोल शिर होय तो सुखी और हाथी के शिरके सदृश शिरहोय तो राजा होता है जिनके केश अथवा रोम मोटे रूखे कपिल और आगे से फटेहुये होयँ वे पुरुष अनेक प्रकार के दुःख भोगते हैं और बहुत गहरे और कठोरकेशभी दुःखदेनेहारहोते हैं बिरल स्निग्ध कोमल भ्रमर अथवा अञ्जन के समान अतिकृष्ण जिनके केशहोयँ वे अनेक प्रकार के सुख भोगते हैं और राजाहोते हैं ॥

छब्बीसवां अध्याय ॥

राजा के लक्षण ॥

कार्त्तिकेयजी पूछते हैं कि हे ब्रह्माजी ! आप संक्षेपसे राजा के अङ्गों के शुभ लक्षण कथन कीजिये यह कार्त्तिकेयका वचन सुन ब्रह्माजी ने कहा कि अब हम राजाके शुभ लक्षणों का

वर्णन करते हैं कि जो लक्षण साधारण पुरुषके भी पड़जायँ तो अवश्य राजाहोय जिसपुरुषके तीनगम्भीर तीन विस्तीर्ण छः उन्नत अर्थात् ऊँचे चार ह्रस्व अर्थात् छोटे सात रक्त वर्ण पांच दीर्घ और पांच सूक्ष्म होयँ वह चक्रवर्त्ती राजा होय और दीर्घआयुषपावै नाभि स्वर और सत्त्व ये तीनगम्भीर होयँ वदन ललाट और छाती ये तीन विस्तीर्णहोयँ वक्षस्स्थल कक्ष नख नासिका मुख और कृकाटिका अर्थात् घेंटू ये छः ऊँचे होयँ लिंग पीठ ग्रीवा और जंघा ये ह्रस्वहोयँ नेत्रों के प्रान्त हस्त पाद तालु ओष्ठ जिह्वा और नख ये सात रक्त वर्णहोयँ हनु नेत्र भुजा नासिका और दोनों स्तनों का अन्तर ये दीर्घ होयँ दन्त केश अँगुलियों के पर्व त्वचा और नख ये पांच जिसपुरुष के सूक्ष्महोयँ वह सप्तद्वीपवती पृथिवी का राजा होय राजाओं की छींक इकहरी होती है और सुन्दरशब्द करके युक्त होती है और दोहरी तेहरीछींक धनवानोंकी होतीहै जिसके नेत्र कमलदलके तुल्यहोयँ और अन्त में रक्तवर्ण होयँ वह भूमिका स्वामी होय शहद के तुल्य पिंगल नेत्र होयँ तो महात्मा पुरुष होय हरिणके तुल्य नेत्रहोयँ तो भीरु अर्थात् डरनेवाला होय गोल और चक्रयुत नेत्र होयँ तो चोर और दुष्ट होय केकर अर्थात् भैंगे नेत्र होयँ तो क्रूरहोय नीलकमल के तुल्य नेत्र होयँ तो विद्वान् होय श्याम नेत्र होयँ तो सुभग होय विशाल नेत्र होयँ तो भोगी और स्थूल नेत्र होनेसे राजमंत्री होय और दीन नेत्र होयँ तो दरिद्री पुरुष होय नेत्रों के ऊपर भ्रू ऊँची होयँ तो अल्पायुष् होय विषम अथवा बहुत लम्बी भ्रू होयँ तो दरिद्री होय और दूनोंभ्रू मिलजायँ तो धनहीन और पापी होय मध्य भागमें नीचे भ्रूहोयँ तो परस्त्री-

निमेष करैं वे राजा और जो पुरुष पांच मात्रा इतने काल में
निमेष करते हैं वे चक्रवर्त्ती राजा दीर्घायुष् और धर्मात्मा होते
हैं अर्द्धचन्द्र के तुल्य ललाट होय तो राजा होता है बड़ाललाट
होय तो धनवान् होताहै छोटे ललाट से धर्म्मात्मा होय ललाट
के बीच जिस स्त्री अथवा पुरुष के पांच आड़ी रेखा हों वह
सौवर्ष जीवै और ऐश्वर्य्यभी पावै चार रेखा होयँ तो अस्सी
वर्ष तीन होयँ तो सत्तरवर्ष दो होयँ तो साठवर्ष एक रेखा
होय तो चालीस वर्ष और एकभी रेखा न होय तो पच्चीस वर्ष
आयुष् पाताहै इन रेखाओं से हीन मध्यम और पूर्ण आयुकी
परीक्षा करै छोटी रेखा होयँ तो अल्पायुष् और लम्बी २ रेखा
होयँ तो दीर्घायुष् पावै जिसके ललाट में त्रिशूल अथवा
पट्टिश का चिह्न होय वह बड़ा प्रतापी और कीर्त्ति करके युक्त
राजा होय छत्रके समान शिर होय तो राजा होय लम्बा शिर
होय तो दरिद्री विषम होय तो दुःखी समान तथा गोल शिर
होय तो सुखी और हाथी के शिरके सदृश शिरहोय तो राजा
होता है जिनके केश अथवा रोम मोटे रूखे कपिल और आगे
से फटेहुये होयँ वे पुरुष अनेक प्रकार के दुःख भोगते हैं और
बहुत गहरे और कठोरकेशभी दुःखदेनेहारेहोतेहैं बिरल स्निग्ध
कोमल भ्रमर अथवा अञ्जन के समान अतिकृष्ण, जिनके
केशहोयँ वे अनेक प्रकार के सुख भोगतेहैं और राजाहोतेहैं ॥

छब्बीसवां अध्याय ॥

राजा के लक्षण ॥

कार्त्तिकेयजी पूछते हैं कि हे ब्रह्माजी ! आप संक्षेपसे राजा
के अङ्गों के शुभ लक्षण कथन कीजिये यह कार्त्तिकेयका वचन
सुन ब्रह्माजी ने कहा कि अब हम राजा के शुभ लक्षणों का

वर्णन करते हैं कि जो लक्षण साधारण पुरुषके भी पड़जायँ तो अवश्य राजाहोय जिसपुरुषके तीनगम्भीर तीन विस्तीर्ण छः उन्नत अर्थात् ऊँचे चार ह्रस्व अर्थात् छोटे सात रक्त वर्ण पांच दीर्घ और पांच सूक्ष्म होयँ वह चक्रवर्ती राजा होय और दीर्घआयुषपावै नाभि स्वर और सत्त्व ये तीनगम्भीर होयँ वदन ललाट और छाती ये तीन विस्तीर्णहोयँ वक्षस्स्थल कक्ष नख नासिका मुख और कृकाटिका अर्थात् घेंटू ये छः ऊँचे होयँ लिंग पीठ ग्रीवा और जंघा ये ह्रस्वहोयँ नेत्रों के प्रान्त हस्त पाद तालु ओष्ठ जिह्वा और नख ये सात रक्त वर्णहोयँ हनु नेत्र भुजा नासिका और दोनों स्तनों का अन्तर ये दीर्घ होयँ दन्त केश अँगुलियों के पर्व त्वचा और नख ये पांच जिसपुरुष के सूक्ष्महोयँ वह सप्तद्वीपवती पृथिवी का राजा होय राजाओं की छींक इकहरी होती है और सुन्दरशब्द करके युक्त होती है और दोहरी तेहरीछींक धनवानोंकी होतीहै जिसके नेत्र कमलदलके तुल्यहोयँ और अन्त में रक्तवर्ण होयँ वह भूमिका स्वामी होय शहद के तुल्य पिंगल नेत्र होयँ तो महात्मा पुरुष होय हरिणके तुल्य नेत्रहोयँ तो भीरु अर्थात् डरनेवाला होय गोल और चक्रयुत नेत्र होयँ तो चोर और दुष्ट होय केकर अर्थात् भैंगे नेत्र होयँ तो क्रूरहोय नीलकमल के तुल्य नेत्र होयँ तो विद्वान् होय श्याम नेत्र होयँ तो सुभग होय विशाल नेत्र होयँ तो भोगी और स्थूल नेत्र होनेसे राजमंत्री होय और दीन नेत्र होयँ तो दरिद्री पुरुष होय नेत्रों के ऊपर भ्रू ऊँची होयँ तो अल्पायुष होय विषम अथवा बहुत लम्बी भ्रू होयँ तो दरिद्री होय और दूनोंभ्रू मिलजायँ तो धनहीन और पापी होय मध्य भागमें नीचे भ्रूहोयँ तो परस्त्री-

गामीहोय चन्द्रकला के तुल्य वक्र और विशाल जिनके भ्रू होयँ वे राजाहोयँ ऊँचा और निर्मल ललाट होय तो उत्तम पुरुष होय नीचा होय तो पुत्र और धनसे हीनहोय कहीं ऊँचा कहीं नीचा ललाट होय तो दरिद्री और शुक्ति अर्थात् सीप के तुल्य ललाट होय तो आचार्य होय स्निग्ध हास्य करके युक्त दीनता और अश्रुपात से रहित मुख होय तो राजा होता है और दीनमुख अश्रुपात करके युक्त रूक्षहोय तो अच्छानहीं उत्तम पुरुष का हास्य धीरे होता है और बड़े शब्द से अधम हँसते हैं जो हँसते समय आंखमूँदे वह पापी होता है जिसका गोल शिर होय वह बहुत गौओं का स्वामी होता है चपटा शिर होय तो माता पिता को मारै घट के समान शिर होय तो सदा मार्ग में चलै निम्न शिर होय तो अनेक प्रकार के अनर्थ करनेवाला होय हे कार्त्तिकेय! यह पुरुषों के शुभ और अशुभ लक्षण हमने कहे हैं अब स्त्रियों के लक्षण कहते हैं॥

सत्ताईसवां अध्याय॥

स्त्रियों के लक्षण॥

ब्रह्माजी कहते हैं कि हे कार्त्तिकेय! अब हम आपको स्त्री लक्षण सुनाते हैं जिससे स्त्रियों का शुभ अशुभ जाना जाय अच्छेमुहूर्त्त में कन्या के हस्त पाद अंगुली नख हाथकी रेखा जंघा कटि नाभि ऊरु जघन उदर पीठ कुच भुजा कान जिह्वा ओष्ठ दंत कपोल गल नेत्र नासिका ललाट शिर केश रोम रोमावली स्वर वर्ण और आवर्त्त अर्थात् भौंरी इन सब के लक्षण देखै जिसकी ग्रीवा में रेखाहोयँ और नेत्रों के अन्त कुछ लाल होय वह स्त्री जिस घरमें जाय उसकी प्रतिदिन वृद्धिहोती है जिसके ललाट में त्रिशूल का चिह्न हो वह कई

हज़ारनारियों की स्वामिनीहोय राजहंस के समान गति मृगके से नेत्र सुवर्ण के तुल्य शरीर का वर्ण और सम सूक्ष्म और श्वेत दन्त जिस कन्या के हों वह उत्तम होती है मेंडकके तुल्य जिसकी कुक्षि हो वह एक पुत्र उत्पन्न करती है परन्तु वह पुत्र राजा होता है हंस के तुल्य स्वर मेघ के समान वर्ण और शहद से पिंगल नेत्र जिस कन्या के हों वह आठ पुत्र उत्पन्न करै और धन धान्य करके युक्त होय लम्बे कान सुन्दर नाक और धनुष के तुल्य टेढ़ी भ्रू जिसकी होयँ वह कन्या अत्यन्त सुख भोगै लम्बी अर्थात् पतली श्याम वर्ण मीठे वचन बोलनेहारी शंख के तुल्य अतिश्वेत दांतोंवाली और स्निग्ध अंगों करके युक्त जो कन्या होय वह अति ऐश्वर्य पावै जिसका जघन विस्तीर्ण होय मध्यभाग वेदी के तुल्य अतिकृश होय और विशाल नेत्र हों वह राजाकी रानीहोय जिस के बायें स्तनपर हाथ में कान के ऊपर अथवा गलेपर तिल अथवा मसाहोयँ उस स्त्री के प्रथम पुत्र उत्पन्न होय जिस के चरण रक्तवर्ण गूढ़गुल्फ अर्थात् जिन में टकने बहुत ऊँचे न होयँ छोटी एड़ी करके युक्त और परस्पर मिली हुई सुन्दर अँगुलियों से शोभित हों वह कन्या सुख भोगै जिस के चरण रूखे ऊँचेनख और टेढ़ी अँगुलियों करके युक्त हों उस कन्या को न विवाहै जिस का कोई अङ्ग तो बहुत बड़ा और कोई अति छोटाहो वह गर्दभी होती है और कभी सुख नहीं पाती जिस के पैर की तर्जनी अंगुली अंगूठे से लम्बी हो वह व्यभिचारिणी होय जिस के पैरकी मध्यमा अंगुली भूमि को स्पर्श न करै वह पति के समीप न रहै और व्यभिचार करै इसी भांति जिसकी अनामि

भी न स्पर्श करै वह भी व्यभिचारिणी होय नदी वृक्ष पर्व्वत अन्न और पुरुष के तुल्य जिस का नाम हो वह भी अच्छी नहीं होती जिस के पीठपर और नाभि के ऊपर आवर्त्त हो वह संतान उत्पन्न करै परन्तु अल्पायुष् होय पीठ परही आवर्त्त होय तो पति को हनन करै कटि में आवर्त्त होय तो व्यभिचारिणी होय और नाभि में आवर्त्त होनेसे पतिव्रता होती है जिस स्त्री के हँसने के समय कपोलों में गढ़े पड़जायँ वह व्यभिचारिणी होय जिस के बड़े बड़े चरण हों सब अङ्गों में रोमहोयँ और छोटे और मोटे हाथहों वह दासी होय जिस के पैरकांपैं मुख विकृत होय और ऊपर के ओष्ठ पर रोम होयँ वह बहुत शीघ्र अपने पतिको भक्षण करै जो स्त्री पवित्ररहै पतिव्रता हो और देवता गुरु और ब्राह्मणों की भक्त हो वह मानुषी होती है नित्य स्नान करै सुगन्ध लगावै मधुर वचन बोलै थोड़ा खाय और थोड़ा सोवै सदा पवित्र रहै वह स्त्री देवता है गुप्त पापकरै निन्दा से डरै और चित्त का अभिप्राय किसी से प्रकट न करै वह स्त्री मार्जारी कहाती है कभी हँसै कभी क्रीड़ाकरै किसी समय क्रोध करै और कभी प्रसन्न होय और पुरुषों में रमै वह गर्दभी होती है पतिके तथा बन्धुओंके हित वचन न मानै और अपनी इच्छानुसार विहार करै वह स्त्री आसुरी है जो नारी बहुत खाय बहुत सोवै अति क्रोधकरै नित्य खोटे वचन बोलै और पतिको मारै उस को राक्षसी जानो शौच आचार और रूप से हीनहो नित्य मैली कुचैली रहै और अतिभयंकर हो वह पिशाची होती है नित्य स्नानकरै सुगन्ध लगावै बगीचे आदि में प्रसन्न रहै और मांस मद्य पर बहुत प्रीति रक्खै वह यक्षिणी कहाती है जिस का

स्वभाव अतिचंचलहो नेत्र चपलहों इधर उधर बहुत देखै और लोभयुक्त हो वह नारी वानरी होती है चन्द्र के समान मुख मस्तहाथी के तुल्य गति रक्तवर्ण के नख और हस्त और सम्पूर्ण अंग शुभलक्षणों करके युक्त हों वह विद्याधरी है जिसकी वीणा मृदङ्ग वंशी आदिके शब्द सुनने में प्रीतिहो और पुष्पों में तथा भांति २ के सुगन्ध द्रव्य में अधिक रुचिहो उसको गन्धर्वी जानो इतनी कथा सुनाय सुमन्तुमुनि बोले कि हे राजा! ब्रह्माजी इसप्रकार स्त्री पुरुषोंका लक्षण कार्त्ति-केय को सुनाय अपने लोकको गये॥

अट्ठाईसवां अध्याय॥

गणपति के आराधन का विधान, मंत्रके अनेक प्रयोग॥

राजा शतानीक कहते हैं कि हे सुमन्तुमुनि! आप गणेशजी के आराधनका विधान वर्णनकरें जिसके करने से गणपति प्रसन्नहों यह राजाका वचन सुन सुमन्तुमुनि कहनेलगे कि हे राजा! गणेश के आराधन में तिथि वार नक्षत्र आदिकी कुछ अपेक्षा नहीं और उपवास आदि करनेका भी कुछ प्रयो-जन नहीं है चाहे जिस अवस्था में रहकर आराधन करे गण-पति अनुग्रह करतेही हैं श्वेतअर्कका मूललेकर अंगुष्ठमात्र गणेशकी मूर्त्ति बनावै मूर्त्तिका यह लक्षणहोवै कि चारभुजाओं में दन्त अक्ष माल परशु और मोदक पचहों पद्मासन पर बैठी सब भूषण पहिने सर्पका यज्ञोपवीत धारे मस्तक पर चन्द्रकला चढ़ाये और अतिसुन्दर होय इस प्रकार की मूर्त्तिबनाय केसर चन्दन वस्त्र भूषण रक्तवर्ण के पुष्प सुगन्ध धूप दीप लड्डू आदि उत्तम नैवेद्य ताम्बूल आदि से उस मूर्त्तिकी पूजा करके उसके सम्मुख वामन अथवा कुब्ज रू-

र्थात् कुबड़े ब्राह्मणको भोजन कराय उससे आशीर्वाद लेवै जिससे सब सिद्धि होती है अब हम मन्त्र कहते हैं ॐ गं स्वाहा यह मूल मन्त्रहै ॐ गां हृदयाय नमः ॐशिरसेस्वाहा ॐगूं शिखायैवषट् ॐगैंकवचायहुं ॐगौंनेत्रत्रयायवौषट् ॐगः अस्त्रायफट् ये छःषडङ्गन्यास के मन्त्रहैं ॐ आगच्छोल्कामुखाय स्वाहा इस मन्त्र से आवाहनकरै ॐगंगन्धोल्काय नमः इस से चन्दन चढ़ावै पुष्पोल्काय नमः इस करके पुष्प ॐ धूपोल्कायनमः इस से धूप ॐदीपोल्काय नमः इस करके दीप ॐगंमहोल्कायनमः इससे नैवेद्य और बलि निवेदन करै फिर पूर्व्व में दुर्जयाय स्वाहा दक्षिण में महागणपतये वीराय स्वाहा पश्चिम में सदामहोल्काय स्वाहा उत्तरमें कूष्माण्डाय स्वाहा अग्निकोण में एकदन्त त्रिपुरान्तकाय स्वाहा नैर्ऋत्य में श्यामदन्तविकटघ्राणाय स्वाहा वायव्य में चलदन्तलम्बनासाय स्वाहा ईशान में पद्मदन्तगजाननाय स्वाहा इन मन्त्रों से पूजन करै और हवन करै गणेशजी के आगे हुंफट् २ इस मन्त्र करके हाथोंकी ताली बजावै और नाचै गावै ॐगच्छोल्काय स्वाहा यह विसर्जन का मन्त्र है यह तो पूजनका विधान है अब प्रयोग कहते हैं तीन दिन काले तिलों करके मूलमन्त्र से आठहजार आहुति देवै तो राजा वशहोय तिल और यवके हवन से सब मनुष्य वशहोयँ और रूपवती कन्या के वश करनेको यह हवन करै तो वह पीछे उठलगै लवण और चावलके हवन से अजित होजाय अर्थात् कोई उसको न जीतसके निम्बपत्र मिलाकर हवन करने से विद्वेषण होय चन्द्रग्रहण के समय जलमें खड़ाहोकर आठहजार जपकरै तो युद्ध में जयपावै सूर्य्यकी ओर मुख करके आठहजार जपै

तो सूर्य्यनारायण प्रसन्नहोयँ शुक्लचतुर्थीको उपवास करके सब उपचारोंसे गणेशजीका पूजनकरै और तिल चावलका हवनकर मूलमंत्रको अष्टगंधसे भूर्जपत्र पर लिख शिरमें धारणकरै तो सर्वत्र जयपावै अपामार्गके काष्ठसे अग्नि प्रज्वलितकर तीन दिन इक्कीस आहुति देवै तो शत्रुको मारै वृक्षके नीचे बैठ कज्जल बनाय सातबार अभिमंत्रण कर नेत्रमें लगाय जिसको देखै वह वश होजाय पुष्प फल अथवा मूल आठहजारबार अभिमंत्रणकर जिसको देवै वहवश होय मूलमंत्रसे जो कामकरै वह सिद्ध होताहै इसके जपसे सब ग्रह प्रसन्न रहते हैं नगरके द्वारपर जाय आठहजार जपै और द्वारको देखताजाय तो वह नगर ज्वरकरके पीड़ित होजाय दक्षिणमुख होकरजपै तो शत्रुका उच्चाटनकरै जल में खड़ाहो सातरात्रि जपै तो अकालमें भी वृष्टिहोय इस मंत्रके जपसे आकर्षण स्तम्भन उच्चाटन आदि करसक्ता है हजारबार अभिमंत्रणकर गोरोचनको हाथमें बांधै तो सौ योजन जाकर लौटआवै खदिर वृक्षका कील मंत्रित कर जिस स्त्री पुरुषके नामसे गाड़ देवै वह उसी क्षण मृत्युवश होय इसमंत्रका जपकरने हारा अतितेजस्वी और अपराजित होताहै अंगुष्ठप्रमाण निम्बकाष्ठकी मूर्तिबनाय धूप गंध आदिदे उसका पूजनकर शिरके ऊपरधारै तो सब मनुष्योंका प्रिय होय इसीभांति श्वेत आककी जड़की मूर्तिबनाय धारणकरै तो सब वर्ण वशहोजायँ श्वेत चन्दनकी अंगुष्ठप्रमाण मूर्तिबनाय शुक्लचतुर्थी अथवा अष्टमीके दिन पूजनकर बलिदेवै और आठहजार हवन कर उस मूर्तिको शिरपरधारै तो राजा वशहोय इसी भांति रक्तचंदनकी मूर्ति

बनाय घृतका हवनकर धारणकरै तो प्रजा वशहोय रक्तक-
रवीरके मूलकी मूर्तिबनाय रक्तचन्दन रक्तपुष्प आदिसे पू-
जनकर बलिदेवै और तिल घृत और लवणका हवनकर मूर्ति
को धारणकरै तो दशग्रामों को वशकरै इसीप्रकार मूर्ति
बनाय पूजनकर तिल दही दूध घृत और हल्दी मिलाकर
हवनकरै तो वेश्या वशहोय तेंदूके काष्ठकरके हवनकरै तो शत्रु
वश होय बिल्वमूलकी मूर्तिबनाय पहिली भांति पूजनादि
कर घी शहद और शर्कराका हवनकरै तो राजाके मंत्रीवश
होयँ शिरमें मूर्तिकोधार राजद्वारमें जाय तो प्रतिष्ठा पावै हाथी
के दांतसे उखाड़ीहुई मृत्तिकाकी अंगुष्ठप्रमाण मूर्तिबनाय
कृष्ण चतुर्थी के दिन एकान्त में नग्नहो पूजाकरै तो स्त्रियों
का अतिप्रिय होवै बैलके सींगसे खुदीहुई मृत्तिका से मूर्ति
बनाय पूजन करै और गुगुलका धूप देवै तो घोष अर्थात् जहां
बहुत से गोप और गौ रहते हों उन के स्वामीको वशकरै ब-
ल्मीक की मृत्तिका से मूर्तिबनाय कटुतैल से उसको लिप्त
करै और धतूरे के काष्ठ से अग्नि जलाय उस में सातहजार
हवन करै तो जिस कन्या से चाहै उसी से विवाह होय (ॐ
नमोगणपतये वक्रतुण्डाय गुलगुलेतिनिनादकराय चतुर्भुजाय
त्रिनेत्राय मुशलवज्रहस्ताय सर्वलोकवशङ्कराय सर्वदुष्टो-
पघातजननाय सर्वशत्रुविमर्दनाय सर्वराजसंमोहनाय हन
हन पच पच वज्राङ्कुशेनफट् स्वाहा ॐहस्तिपाणिनेगः
स्वाहा) यह भी गणपतिका मन्त्रहै इसके अंगन्यासध्यान
और पूजाविधान पहिले मन्त्र केही तुल्य हैं (ॐमहाकर्णाय
विद्महे वक्रतुण्डायधीमहितन्नोदन्ती प्रचोदयात्) यह गणेश
गायत्री है इस से पूजन करै पद्मदन्तमाला प्रहर्षिणी परशु

पाश अंकुश और पटह ये आठमुद्रा पहले दिखाय सर्व कर्म करै जो शिवजी के पूजनका मण्डल पीठ और विधानहै वही गणपति पूजनका भी है केवल मन्त्रों में भेदहै इस विधि से जो पुरुष पार्वतीकेपुत्र श्रीगणेशजी का पूजनकरै उसके सब विघ्न और अरिष्ट निवृत्तहोजाते हैं चतुर्थीको उपवासकर जो गणेशजीका पूजनकरै उसके सब कार्य सिद्धहोते हैं गणेशजी अनुकूलहोयँ तो सब जगत् अनुकूल होजाय जिस पुरुषपर गणपति सन्तुष्टहोयँ उससे देवता पितर मनुष्य आदि सब तुष्टहोते हैं इसकारण श्रद्धा से गणेशजी का आराधनकरै केसर चन्दन चमेली धतूरे कमल आदि के पुष्प अनेक भांति के मोदक आदि नैवेद्य तांबूल आदि अनेक उपचारों से सम्पूर्ण विघ्न निवृत्तहोने के लिये श्रीगणेशजी का भक्ति से पूजनकरै और मनोवाञ्छितफलपावै ॥

उन्तीसवां अध्याय ॥

तीनप्रकारकी चतुर्थीकाफल और व्रतका विधान चतुर्थीकल्पसमाप्ति ॥

सुमंतुमुनि कहते हैं कि हे राजा! तीनप्रकार की चतुर्थी हैं शिवा शान्ता और सुखा इनके हम लक्षण कहते हैं भाद्रपद महीने की शुक्लचतुर्थी का नाम शिवाहै उसदिन जो स्नान दान उपवास जप आदि सत्कर्मकरै वह गणपति के प्रसाद से सौगुणाहोजाता है उसचतुर्थी को गुड़ लवण और घृत का दानकरै और गुड़के अपूपों से ब्राह्मणों को भोजन करावै उसदिन जो स्त्री अपने सास और श्वशुरको गुड़केपुये खिलावै वह गणपति के अनुग्रह से सौभाग्यपावै पतिकी कामनावाली कन्या विशेषकरके इसचतुर्थी का व्रतकरै और गणेशजी की पूजाकरै हे राजा! यह शिवचतुर्थी का विधान है ॥

की शुक्लचतुर्थी को शान्ता कहते हैं इसदिन कियेहुये स्न
दान आदि कर्म हज़ारगुणे होजाते हैं इसचतुर्थी को उ
पासकर गणेशजी का पूजनकरै और लवण गुड़ शाक औ
गुड़के अपूप ब्राह्मणको देवै और स्त्री भी अपने श्वशुर आ
पूज्यों को भोजनकरावे इसव्रतके करने से सब विघ्नदूरहो
हैं और गणेशजी का अनुग्रह होता है सुमन्तु मुनि कहते
कि हे राजा ! अब हम सौभाग्य देनेहारी सुखाचतुर्थी का वि
धान कहते हैं यह व्रत स्त्रियों का रूप उत्तम हाव भाव औ
सौभाग्य देनेहारा है जो भौमवार करके युक्त शुक्लचतुर्थी है
वही सुखा चतुर्थी कहाती है पूर्वकाल में शिव पार्वती के मैथुन
के समय रुधिरका बिन्दु गिरा उसको भूमि ने अपने मुख मे
धारण किया उसी से भौम ग्रह उत्पन्न भया भूमिपुत्र होने से
भौम कहाया और अंगोंका देनेहाराहै अंगोंका करनेहाराहै और
सौभाग्य देताहै इस से इसको अंगारक कहते हैं भौमवारयुक्त
शुक्लचतुर्थी को उपवासकरै और भक्तिसे गणेशजी का पूजन
कर रक्तचन्दन रक्तपुष्प आदि करके भौमका पूजन करै उस
पुरुष अथवा स्त्रीको सब सम्पत्ति रूप और सौभाग्य मिलता
है पहिले संकल्प करके स्नान करै फिर हाथमें शुद्ध मृत्तिका
लेकर यह मन्त्रपढ़ै (इहत्वंवन्दितापूर्वं कृष्णेनोद्धारिताकिल ।
तस्मान्मेदहपाप्मानं यन्मयापूर्वसंचितम्) फिर मृत्तिका को
सूर्य्य के सम्मुखकर अपने शिर आदि सब अङ्गों में लगाय
स्नान करै और जलके बीच खड़ाहोय मन्त्रपढ़ै (त्वमापोयोनिः
सर्वेषां देवदानवरक्षसाम् । स्वेदाण्डजोद्भिदानांच रसानां
पतयेनमः) और यह ध्यान करै कि सब तीर्थों से नदियों में
सरोवरों में झरनों में और तड़ागों में मैंने स्नान किया यह

ध्यान करता हुआ गोते लगाकर स्नान करै फिर घर में आ-कर मंत्र पढ़ दूर्वा पीपल का वृक्ष शमीवृक्ष और गऊका स्पर्श करै इनके स्पर्श के मंत्र ये हैं (त्वन्दूर्वेऽमृतनामासि सर्वदेवैस्तुवन्दिता । वन्दिताहरतत्सर्वं यन्मयादुरितंकृतम्) यह दूर्वा का मंत्र है (पवित्राणांपवित्रा त्वं काश्यपि प्रथिता श्रुतौ । श-मीशमय मे पापं यन्मयाचिरसंचितम्) यह शमी का मंत्र है (नेत्रस्पन्दं भुजस्पन्दं दुःस्वप्नन्दुर्विचिन्तनम् । शत्रूणांचसमु-द्योगमश्वत्थशमयस्वमे) यह पीपल के वृक्ष को स्पर्श करने का मंत्र है (सर्वदेवमयी देवी मुनिभिस्तु सुपूजिता । तस्मा त्स्पृशामिवन्देत्वां वन्दितापापहाभव) पहिले गौकी प्रद-क्षिणा करै इस मंत्र को पढ़ स्पर्श करै जो गौकी प्रदक्षिणाकरै उसको सम्पूर्ण पृथ्वी की प्रदक्षिणा का फल होता है इस प्रकार इनको स्पर्शकर हाथ पैर धोय आसन पर बैठ आचमन कर खदिर के समिधाओं से अग्नि प्रज्वलित कर घृत दुग्ध यव तिल और भांति भांतिके भक्ष्यपदार्थोंसे इन मंत्रोंकरके हवनकरै (ॐ शर्वाय स्वाहा ॐ शर्वपुत्राय स्वाहा ॐ द्रोणपुत्रसम्भवाय स्वाहा ॐ कुजायस्वाहा ॐ लोहिताङ्गायस्वाहा ॐ ग्रहेशाय स्वाहा ॐ अङ्गारकायस्वाहा) इन प्रत्येक मंत्रों से एक सौ आठ २ आहुति देवै अथवा अपनी शक्तिके अनुसार देवै फिर सुवर्ण चांदी चन्दन अथवा देवदारु के काष्ठकी मूर्त्ति बनाय सुवर्ण अथवा चांदी के पात्र में स्थापन कर रक्तचन्दन पुष्प नैवेद्य आदि से पूजा करै अथवा ताम्र मृत्तिका अथवा कांसके पात्र में मूर्त्ति लिखकर पूजन करै अग्निमूर्द्धा इत्यादि वैदिक मन्त्र से सब उपचार समर्पण करै पीछे वह मूर्त्ति ब्रा-ह्मण को देवै और घी दूध चावल गेहूं गुड़ आदि वस्तु भी

ब्राह्मण को देवै इसमें वित्तशाठ्य अर्थात् खर्च का संकोच न करै वित्तशाठ्य करने से फल नहीं होता इसप्रकार चार भौम शुक्ल चतुर्थी व्रत करै फिर दशतोले सुवर्णकी अथवा पांच तोले की मंगल और गणपति की मूर्त्तिबनाय बीसपल अथवा दशपल केसोने चांदी ताम्र आदि के पात्र से स्थापन करै और इसीप्रकार शिव पार्व्वती की मूर्त्ति बनाय पात्र में स्थापन करै और उत्तम वस्त्र उढ़ावै और सब उपचारों से पूजन करके दक्षिणा सहित सत्पात्र ब्राह्मण को देवै तब व्रत का सम्पूर्ण फल होय हे राजा ! यह उत्तम तिथि हमने कही इस दिन जो व्रतकरै वह चन्द्र के तुल्य कांति रविकासा तेज और वायुके समान बल पावै और अन्त में गणपति के अनुग्रह से शिवलोक में निवास करै इस तिथि के माहात्म्य को भी जो पुरुष भक्ति से पढ़ैं अथवा सुनैं वे भी ब्रह्महत्या आदि पापों से छुट उत्तम लोक पावैं और व्रत करनेहारे स्त्री पुरुषों को जो फल होता है उसका तो कहांतक वर्णन करैं ॥

तीसवां अध्याय ॥

पंचमी कल्पका प्रारम्भ, नागोंको मातासे शापहोने की कथा नागपंचमीका विधान और व्रतका फल ॥

सुमन्तु मुनि कहते हैं कि हे राजा शतानीक ! अब हम पंचमी का कल्प कहते हैं पंचमी तिथि नागों को आनंद देनेहारी है इसदिन नागों के लोकमें बड़ा उत्सव होताहै पंचमी को जो पुरुष दुग्ध करके नागों को स्नान करावै उसके कुलमें वासुकि तक्षक कालिय मणिभद्र ऐरावत धृतराष्ट्र कर्कोटक और धनंजय बड़े २ नाग अभय देते हैं अर्थात् उनके कुलमें सर्पका भय नहीं होता माता के शाप से नाग दग्ध होने लगतेथे इस-

लिये अब भी वह दाह कीव्यथा दूर होने के अर्थ गौ के दूधसे नागों को स्नान कराते हैं यह सुन राजा ने पूछा कि महाराज माता ने नागों को क्यों शाप दिया और फिर क्योंकर बचे यह आप वर्णन करैं यह राजा का प्रश्न सुन सुमन्तु कहने लगे कि हे राजा! देवताओं ने समुद्र मथन किया उस से अति श्वेतवर्ण उच्चैःश्रवा नाम घोड़ा निकला उस को देख नागों की माता कद्रू ने अपनी सपत्नी विनता से कहा कि यह घोड़ा श्वेतवर्ण है परन्तु इस के बाल काले देख पड़ते हैं तब विनता बोली कि यह अश्व सर्व श्वेत है न तो काला है न लाल यह सुन कद्रू ने कहा कि मेरे साथ प्रणकर कि जो मैं कृष्णवर्ण के बाल इस अश्व के दिखादूँ तो मेरी तू दासी होजा यदि न दिखासकूँ तो मैं तेरी दासी हूँ विनता ने भी यह प्रण अंगीकार किया और दोनों अपने २ स्थान को गईं कद्रू ने अपने पुत्र नागों से बुलाकर सब वृत्तान्त सुनाया और कहा कि हे पुत्रो! तुम बाल के तुल्य सूक्ष्म बनकर उच्चैःश्रवा के शरीर में चिपट जाओ जिससे वह कृष्णवर्ण देख पड़े तब मैं अपनी सपत्नी विनता को जीत दासी बनाऊँ यह माता का वचन सुन नागों ने कहा कि हे माता! यह छल तो हम नहीं करते चाहे तू जीत चाहे हार यह अति अधर्म्म है कि छल से जीतना यह पुत्रों का वचन सुन कद्रू कोपकर बोली कि तुम मेरी आज्ञा नहीं मानते इसलिये मैं तुम को शाप देती हूँ कि पाण्डवों के वंश में उत्पन्न राजा जनमेजय सर्प-सत्र करेगा उस यज्ञमें तुम अग्नि में दग्ध होजाओगे इतना कह कद्रू चुपहोरही नाग भी माता का शापपाय बहुत घब-राये और वासुकि को साथले सब ब्रह्माजी के समीप आये

और अपना वृत्तान्त ब्रह्माजी से कहा तब ब्रह्माजी बोले कि हे-वासुकि! चिन्ता मतकरो या यावर वंशमें बड़ातपस्वी जरत्कारु नामक ब्राह्मण उत्पन्न होगा उसको तुम यह जरत्कारु नाम अपनी बहिन विवाह देना और उसका वचन मानना उसके आस्तीक नामक पुत्र उत्पन्न होगा वह जनमेजय के सर्पयज्ञ को रोकेगा और तुम्हारी रक्षा करेगा यह ब्रह्माजी का वचन सुन सब वासुकि आदि नाग अति प्रसन्न हो ब्रह्माजी को प्रणाम कर अपने धाम को आये इतनी कथा सुनाय सुमन्तुमुनि बोले कि हे राजा! वह यज्ञ तेरे पिता राजा जनमेजय ने किया यह बात श्रीकृष्ण भगवान् ने भी युधिष्ठिर से कहदी थी किहे राजा! आज से सौवर्ष के अनन्तर सर्पयज्ञ होगा जिस में बड़े विषधर और दुष्ट नाग क्षय को प्राप्तहोंगे जब करोड़ों नाग अग्नि में दग्ध होने लगेंगे तब आस्तीक नाम ब्राह्मण नागोंकी रक्षा करेगा ब्रह्माजी ने पंचमी के दिन नागोंको वरदिया और आस्तीक ने पंचमी कोही नागों की रक्षा करी इसलिये पंचमी नागों को अतिप्रिय भई पंचमी के दिन नागों की पूजाकर यह प्रार्थना करै कि जो नाग पृथ्वी में आकाश में स्वर्ग में सूर्य्य की किरणों में नदियों में सरोवरों में और वापी कूप तालाब आदि में रहते हैं वे सब हमारे ऊपर प्रसन्नहों उनको हम वारंवार नमस्कार करते हैं इस प्रकार नागों को विसर्जन कर ब्राह्मणों को भोजन कराय आप अपने कुटुम्ब के साथ भोजन करै पहिले मीठा भोजन करै पीछे जिसपर रुचिहोय सो खाय इस प्रकार जो नियम से नागों का पूजन करै वह नाग लोक में जाय उत्तम विमान में बैठ अप्सराओं के साथ विहार करै और बहुत काल

के अनन्तर भूमि पर आय पांच जन्म तक बड़ा पराक्रमी आरोग्य और प्रतापी राजा होय इतनी कथा सुन राजा ने पूछा कि महाराज जो पुरुष सर्प्प के काटने से मृत्युवश होय वह किस गति को प्राप्त होता है और जिस के माता पिता भाई पुत्र आदि सर्प्प के काटने से मरे हों वह उन के उद्धार के लिये कौन व्रत दान अथवा उपवास करै यह आप कृपाकर वर्णन करें यह राजा का वचन सुन सुमन्तु मुनि कहनेलगे कि हे राजा! सर्प्प के काटे से जो मरै वह निर्विष सर्प्प होताहै और जिस के माता पिता आदि सर्प्प के काटे से मृतक हुयेहों वह उनकी सद्गति होने के अर्थ भाद्रशुक्ल पञ्चमी का उपवास कर नागों का पूजन करै इस प्रकार बारह महीने शुक्लपञ्चमीको व्रतकर के सुवर्ण अथवा चांदी का पांच फणकरके युक्त नाग बनाय पंचमी के दिन करवीर कमल चमेली आदि पुष्प धूप दीप और अनेकप्रकार के नैवेद्यों से उस का पूजनकर घृत खीर और लड्डू ब्राह्मणों को भोजन करावै अनन्त वासुकि शंख पद्म कम्बल कर्कोटक अश्वतर धृतराष्ट्र शंखपाल कालिय तक्षक और पिंगल इन बारह नागों का बारह महीनों में क्रम से पूजन करै चतुर्थी के दिन एकबार भोजन करै और पंचमी को व्रत कर नागपूजा करै और रात्रि को भोजन करै अन्त में सुवर्ण का नाग और एक उत्तम गौ ब्राह्मण को देकर ब्राह्मणभोजन करावै यह उद्यापन की विधि है हे राजा! तेरे पिता ने भी अपने पिता परीक्षित के उद्धार के लिये यह व्रत किया और सुवर्ण का बड़ा भारी नाग और बहुतसी गौ ब्राह्मणोंको दी तब पिता से अनृणभया और परीक्षित भी उत्तम लोकों में प्राप्त भया हे राजा! जो पुरुष इस कथा को भक्तिसे श्रवण करै उसके

कुल में कभी सर्प का भय नहीं होताहै और इस पंचमी व्रत के करने से उत्तम लोककी प्राप्ति होती है॥

इकतीसवां अध्याय॥

सर्पों की उत्पत्ति व शरीर दाढ़ और अवस्था तथा काटने के कारण व काटेहुये दंश के लक्षण॥

राजा शतानीक पूछते हैं कि हे सुमन्तुमुनि! सर्पों के कितने रूप हैं क्या लक्षण हैं कै रंग हैं और क्या जाति है यह आप वर्णन करें यह सुन सुमन्तु मुनि बोले कि हे राजा! हिमालय पर्वत में कश्यप और गौतम का संवाद जो भया था वह हम वर्णन करते हैं एक समय कश्यपमुनि अग्निहोत्र कर स्वस्थ चित्तहो हिमालय पर्वत में अपने आश्रम के बीच बैठे थे उस समय गौतम ने प्रणामकर विनय से पूछा कि महाराज सर्पों के लक्षण जाति वर्ण और स्वभाव आप वर्णनकरें और सर्प किस प्रकार उत्पन्नहोता है विष कैसे छोड़ता है विष के वेग कितने हैं विषनाड़ी कितनी हैं सर्प की दंष्ट्रा के प्रकार की हैं सर्पिणी को गर्भ कब होता है और प्रसव कितने दिनके अनन्तर होता है स्त्री पुरुष नपुंसक सर्प का क्या लक्षण है और ये क्यों कर काटते हैं यह सब भेद आप कृपाकर मुझे बतावें यह गौतम का वचन सुन कश्यप ने कहा कि चित्तलगाय श्रवण करो हम सर्पों का सब भेद कहते हैं ज्येष्ठ और आषाढ़ में नागों को मद होता है तबही मैथुन करते हैं और वर्षाऋतु के चार महीने सर्पिणी गर्भ धारती है और कार्त्तिक में दोसौ चालीस अण्डे देती है और उनको नित्य आपही खाने लगती है अन्त में दया से थोड़े से छोड़ती है उन में जो अण्डे सुवर्ण की भांति चमकतेहों उन में पुरुष ककोड़ा के फल के तुल्य हरे और

लम्बी रेखाओं करके युक्त अण्डों में स्त्री और शिरीष पुष्प के समान रंगवाले अण्डों के बीच नपुंसकसर्प होते हैं उन अण्डों को सर्पिणी छः महीने तक सेतीहै पीछे अण्डे फूटकर उनसे सर्प निकलते हैं और वे बच्चे अपनी माता से स्नेह करते हैं अण्डे के बाहर निकलने से सात दिन में उन बच्चों का कृष्ण वर्ण होजाता है सर्पका आयुष् एकसौबीस वर्षकाहै और मृत्यु आठ प्रकार का है मयूर से मनुष्य से चकोर पक्षी से बिल्ली से नकुल से शूकर से वृश्चिक से और गौ आदि पशुके खुरसे इनसे बचे तो एकसौ बीस वर्ष जीवै सात दिन के अनन्तर दंष्ट्रा ऊगती हैं और इक्कीस दिन में विषहोजाताहै परन्तु सर्प्पदंशकरनेके समय विषत्याग देता है फिर और विष इकट्ठा होजाता है सर्प्पिणी के साथ जो फिरै वह बालसर्प कहाता है पच्चीसदिनमें वह बच्चा प्राणहरने में समर्थ होजाता है छःमहीनेमें कञ्चुकत्यागता है दोसौबीस पैर सर्प्प के होते हैं परन्तु गौके रोमके तुल्य अतिसूक्ष्म होते हैं इसीसे देखनहींपड़ते चलनेके समय निकल आते हैं नहीं तो भीतर प्रविष्टरहते हैं इनके शरीर में दोसौ बीस पसली और दोसौ बीसही सन्धि होती हैं अकाल में अर्थात् अपने समय विना जो सर्प उत्पन्न होते हैं उन में विषन्यून होता है और सत्तर वर्ष से अधिक जीतेभी नहीं जिन के दांत लाल पीले नीलेहों और विषका वेग भी मन्दहो वे अल्पायुष् होतेहैं और बहुत भीरु अर्थात् डरपोकने होते हैं सर्प्पों के एकमुख दो जीभ बत्तीस दांत और विषसे भरी हुई चारदाढ़ होती हैं उन के नाम मकरी कराली कालरात्रि और यमदूती येहैं और क्रमसे ब्रह्मा विष्णु रुद्र और यम इन चारोंके देवता हैं यमदूती नाम दाढ़ सब से छोटी होती है इस से जिस

को सर्प्प काटे वह तत्क्षण मरजाय मंत्र यंत्र औषधी आदि इस पर कुछ भी नहीं चलता मकरीदाढ़ का चिह्न शस्त्र कासा होता है कराली काकपद के तुल्य कालरात्रि टकार अक्षर के सदृश और यमदूती कूप के समान होती है ये चारों क्रम से एक दो तीन और चार महीने में उत्पन्न होती हैं और क्रमसे वात पित्त कफ और सन्निपात इनमें होता है गुड़युक्त भात कषाय रसयुक्त अन्न कटु पदार्थ और सन्निपातमें हितवस्तु क्रमसे इनके भोजनहैं श्वेत रक्त पीत और कृष्ण इनचारदाढ़ोंके रङ्गहैं और क्रमसे ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य और शूद्र ये चार इनके वर्णहैं सर्प्पों की दाढ़ों में सदा विषनहीं रहता विषके रहने का स्थान सर्प्प के दहिने नेत्र के समीपहै सर्प्प जब क्रोधकरताहै तब विष नाड़ियों के द्वारा दाढ़ में पहुँच जाता है आठ कारणों से सर्प्प काटता है दबने से पूर्व्व वैरसे भयसे मदसे क्षुधा से विषका वेग होने से सन्तानकी रक्षाके लिये और कालकी प्रेरणा से जो सर्प्प काटतेही पेट की ओर उलटा होजाय और उसकी दाढ़ टेढ़ी होजाय उसको दबाहुआ जानो जिसके काटे से बहुत गहराघाव होजाय उसको वैरसे काटा जानो एक दाढ़ का चिह्नहोय वह भी भलीभांति न देखपड़े तो भयसे रेखाकी भांति दाढ़लगे तो मदसे दो दाढ़लगें और बड़ाघाव होय तो क्षुधासे दो दाढ़ लगें और घावमें रुधिर भरजाय तो विषके वेगसे दो दाढ़ लगें और गहरा घाव न होय तो सन्तान की रक्षाके लिये और काकपदकी भांति तीन दाढ़ गहरी लगें अथवा चारदाढ़ लगें वह कालकी प्रेरणा से काटता है उसका कुछ उपाय नहीं असाध्य होता है दष्ट दष्टानुपीत और दंष्ट्रोद्धृत ये तीन काटने के भेद हैं सर्प्प काटै और ग्रीवाभुकै उसको

दष्ट कहते हैं काटकर पानकरै उस को दष्टानुपीत कहतेहैं इस में तिहाई विष चढ़ता है और काटकर सब विष उगिल देवै और आप निर्विषहो उलट जाय अर्थात् पीठके बल उलटा होय होय और उसका पेट देखपड़े उस दंशको दष्टोद्धृत कहतेहैं ॥

बत्तीसवां अध्याय ॥

कालसर्पसे डसेहुये पुरुष व दूत के लक्षण नागोंका उदय सर्पकाटने की तिथि व नक्षत्रका विचार ॥

कश्यपमुनि कहतेहैं कि हे गौतम! अब हम कालसर्प करके काटे हुये पुरुषका लक्षण कहते हैं जिस को काल सर्प काटै उसकी जिह्वा भंगहोजाय हृदयमें शूलहोय नेत्रों से देख न पड़े दांत और शरीर कृष्ण वर्ण होजायँ विष्ठा और मूत्र निकलजाय कन्धे कमर और ग्रीवा टूटपड़ें नीचेको मुखहोजाय आंखें ऊपर को चढ़जायँ शरीर में दाह और कम्पहोय शस्त्रसे काटनेकरके भी शरीर में रुधिर न निकलै बेतमारनेसेभी देहमें रेखा न पड़ै और काटने का स्थान पके जम्बूफलकी भांति नीलवर्ण सूजा हुआ रुधिरसे भरा और काकपद के तुल्यहो हिचकीचले कण्ठ रुकजाय श्वासबढ़े शरीरकी त्वचा पाण्डुवर्ण होजाय उसको कालसर्प का काटा जानो घाव सूजजाय नीलवर्ण होय पसीना बहुत आवै अनुनासिक अर्थात नाक से बोलै ओष्ठ लटक पड़े हड़फूटन होय हृदय कांपै तो कालसर्प का डसाजानो दांत पीसै नेत्र फिरजायँ लम्बेश्वास लेवै ग्रीवा लटकपड़ै नाभि फ-रकै तो कालका काटा जानो दर्पण अथवा जल में अपनी छाया न देखै सूर्य तेज से हीन देखपड़ैं नेत्र लालहोयँ पीड़ा से सब शरीर कांपै उस को कालग्रस्त जानो वह शीघ्रही मर-

वशहोय अष्टमी नवमी कृष्ण चतुर्दशी और नाग पञ्चमी के दिन जिनको सर्प काटै उन के जीने में सन्देह है आर्द्रा श्लेषा मघा भरणी कृत्तिका विशाखा तीनों पूर्वा मूल स्वाती और शतभिष नक्षत्र में सर्पका काटा नहीं जीता और इन नक्षत्रों में जो विष खाय वहभी तत्काल मरै पूर्वोक्त तिथि और नक्षत्र दोनोंमिलजायँ और अग्निहोत्र शालामें श्मशान में और सूखेवृक्ष के नीचे जिस को सर्पकाटै वह न जीवै मनुष्यों के शरीर में एकसौ आठ मर्म हैं उन में भी शंख अर्थात् ललाटकी अस्थि नेत्र भ्रू मध्य वस्ति अण्डकोशों का मध्य कुक्ष कन्धे हृदय तालु ठोढ़ी और गुदा ये मर्म स्थान मुख्य हैं इनमें सर्प काटै अथवा चोटलगै तो मनुष्य कभी न जीवे सर्प काटने के अनन्तर वैद्यको जो बुलाने जाय उस दूत के लक्षण कहते हैं उत्तम वर्ण का हीनवर्ण दूत और हीनवर्ण का उत्तम वर्णदूत अच्छा नहीं वह दूत दण्ड हाथ में लिये हो दो दूत हों कृष्ण अथवा रक्तवस्त्र पहिने हों शिरपरही एक वस्त्र लपेटेहो शरीर में तेललगाये हो केशखोलेहो घोर शब्द करता हुआ आवै और हाथ पैरपीटै ऐसा दूत बहुत बुराहोता है जिसरोगी का दूत इन लक्षणों करके युक्त वैद्य के समीप आवै वह रोगी अवश्य मरै अब नागों का उदय कहते हैं जो शिवजी ने कहा है अनन्त नाग सूर्य्य हैं वासुकि चन्द्रमा तक्षक भौम कर्कोटक बुध पद्म बृहस्पति महापद्म शुक्र कुलिक और शंखपाल ये दोनों शनैश्चरकारूपहैं रविवारके दिन दशवां और चौदहवां यामार्द्ध सोमबारको आठवां बारहवां भौमवार को छठवां दशवां बुध को चौथा आठवां बृहस्पति को दूसरा छठवां शुक्रको चौथा आठवां और दशवां और शनिवार

ो पहिला सोलहवां दूसरा और बारहवां प्रहरार्द्ध निंद्य है
स में सर्पकाटै तो जीवैनहीं ॥

तेंतीसवां अध्याय ॥

विषके फैलने व सातवेग व सातधातुओं में प्राप्तभये विषके अलग २ लक्षण व चिकित्सा ॥

कश्यपजी कहते हैं कि हे गौतम ! जो जानै कि यमदूती नाम दाढ़लगी है तो उसकी चिकित्सा न करै दिनमें और रात्रि में दूसरा और सोलहवां प्रहरार्द्ध सर्पकाहै उस में काटै तो चिकित्सा न करै बाल के अग्र से जितनाजल उठसक्ता है उतना विष सर्प डालता है वहसब देह में फैलजाता है जितनी देर में भुजाको पसारै अथवा समेटै इतने कालमें काटने के अनन्तर विष मस्तक में पहुँचजाता है रुधिर में पहुँचने से विषकी बहुत वृद्धि होती है जैसे जल में तेलकी बूँद फैलजाय त्वचामें पहुँच विष दूनाहोता है रक्तमें चौगुणा पित्तमें आठगुणा कफमें सोलह गुणा वातमें तीसगुणा मज्जा में साठगुणा और प्राणों में पहुँच वहीविष अनन्तगुणाहोय सब शरीर के स्रोत रोकलेता है तब वह जीव श्वास नहीं लेता और मृत्युवश होजाता है शरीर पृथ्वी आदि पांच भूतों से बना है मृत्यु के अनन्तर ये भूत अलग अलग होजातेहैं और अपनेअपने में लीन होजाते हैं विष की चिकित्सा बहुत शीघ्र करनी चाहिये विलम्ब होने से रोगी असाध्यहोजाता है जैसाजंगम विष अर्थात् सर्पादि जीवों का विष प्राण हरनेहारा है ऐसाही स्थावर विष संखिया आदिमें है विषके पहिलेवेगमें रोमाञ्चहोताहै दूसरेवेगमें पसीनाआता है तीसरे में शरीरकांपताहै चौथेमें भीतरसे शरीर के स्रोतरुकने लगते हैं पांचवेंमें हिचकीचलती हैं छठेमें ग्रीवालटकजाती

है और सातवें वेगमें प्राणचले जातेहैं इन सात वेगोंमें शरीरकी सातों धातुओं में विष व्याप्तहोजाता है अब इन धातुओं में पहुँचे हुये विषके अलग अलग लक्षण कहते हैं आंखों के आगे अँधेराहोय और खड़ा न रहसके तो जाने कि विषत्वचा में है तब आककी जड़ अपामार्ग तगर और प्रियंगु इन को जल में घोटकर पिलादेवे तो विषकी बाधा शान्तहोजाय त्वचा से रुधिरमें विष पहुँचता है तब शरीर में दाह और मूर्च्छा होती है शीतल पदार्थ अच्छे लगते हैं उशीर अर्थात् खस चन्दन कूट तगर नीलोफर सिंदुवारकी जड़ धतूरे की जड़ हींग और मिरच इनको पीसकरदेवै इससे शान्त न होय तो कटेली इन्द्रायणकी जड़ सर्पगन्धा और वृश्चिकाली इन को घृत में पीसदेवै इस से भी शान्ति न होय तो सिंदुवार और हींगकी नासदेवै और यही पिलावै इसीका अंजन और लेपनकरै तो रक्त में प्राप्त विषकी बाधा निवृत्तहोय रक्त से पित्त में विष पहुँचता है तब पुरुष उठ २ कर गिरता है शरीर पीला होजाता है सब दिशा पीत वर्ण देखपड़तीहैं मूर्च्छा और दाह होता है तब पीपल सहत महुआ घी तूंबे की जड़ इन्द्रायणकीजड़ इन सबको पीस नस्य लेपन और अंजन करै तो विषका वेग निवृत्तहोय पित्त से विष कफ में प्रवेश करता है तब शरीर जकड़जाता है श्वास भली भांति नहीं आता कण्ठ में घर्घर शब्द होता है मुख से लारगिरती है यह लक्षण देख पीपल मिरच शुंठी लोधको सहत की अर्थात् तुरई और मधुसार इनको गोमूत्र में पीस नस्य लेपन अंजन करै और यही पिलावे तो विषकावेग शान्तहोय कफ से वात में विष प्रवेशकरता है तब पेट अफर जाता है कोई पदार्थ देख

नहीं पड़ता है और दृष्टिभङ्ग होजाती है यह लक्षण होय तो अरलूकी जड़ खिरनी गजपीपल भारंगी पीपल देवदारु मधुसार सिन्दुबार और हींग इन सबको पीस गोली बनावै यह गोली खिलावै और नस्य लेपन अञ्जन आदि भी इसी से करै यह गोली सब विषों को हरती है और ब्रह्माजी ने कही है वात से मज्जा में विष पहुँचता है तब दृष्टि नष्टहोजाती है और सब अङ्ग बेसुधहो गिरजाते हैं यह लक्षण होय तो घी सहत खांड़ नख चन्दन और खस इन सबको घोटकर पिलावै और नस्य आदिभी देवै तो विषका वेग निवृत्तहोय मज्जा से विष मर्मस्थानों में पहुँचता है तब सब इन्द्रिय नष्ट होजायँ काटने से रुधिर न निकले केश उखाड़ने से भी पीड़ा न होय उस को मृत्यु के वशहुआ जानै ऐसे लक्षणोंकरके युक्त मनुष्य की साधारण वैद्य चिकित्सा नहीं करसक्ते हैं जिनके पास सिद्ध मन्त्र और ओषधी होयँ वे वैद्य ऐसे रोगीका उपाय करने में समर्थहोते हैं इसकेलिये साक्षात् रुद्रने एक औषध कहाहै मयूर नकुल और मार्जार इनतीनों का पित्त धनालीकीजड़ केसर भार्गवी कूट काश मर्दकी छाल उत्पल कुमुद और कमल इन तीनोंके केसर इन सबके समान भाग लेकर गोमूत्र में पीस नस्य आदि देवै और खानेको भी देवै तो कालसर्पकरके डसा हुआभी अतिशीघ्र निर्विष होय यह औषध मृतसंजीवनी है अर्थात् मरे कोभी जिलादेती इसलिये अवश्य देनी चाहिये ॥

चौंतीसवां अध्याय ॥

सर्पोंकी भिन्न २ जातियां व उनके काटेहुये के लक्षण व नाग पंचमी पूजनफल व विधान ॥

गौतम पूछते हैं कि हे कश्यपजी! सर्प सर्पिणी बालसर्प

है और सातवें वेगसे प्राणचले जाते हैं इन सात वेगोंसे शरीरकी सातों धातुओं में विष व्याप्तहोजाता है अब इन धातुओं में पहुँचे हुये विषके अलग अलग लक्षण कहते हैं आंखोंके आगे अँधेराहोय और खड़ा न रहसके तो जानै कि विषत्वचा में है तब आककी जड़ अपामार्ग तगर और प्रियंगु इन को जल में घोटकर पिलादेवै तो विषकी बाधा शान्तहोजाय त्वचा से रुधिरमें विष पहुँचता है तब शरीर में दाह और मूर्च्छा होती है शीतल पदार्थ अच्छे लगते हैं उशीर अर्थात् खस चन्दन कूट तगर नीलोफर सिंदुवारकी जड़ धतूरे की जड़ हींग और मिरच इनको पीसकरदेवै इससे शान्त न होय तो कटेली इन्द्रायणकी जड़ सर्पगन्धा और वृश्चिकाली इनको घृत में पीसदेवै इस से भी शान्ति न होय तो सिंदुवार और हींगकी नासदेवै और यही पिलावै इसीका अंजन और लेपनकरै तो रक्त में प्राप्त विषकी बाधा निवृत्तहोय रक्त से पित्त में विष पहुँचता है तब पुरुष उठ २ कर गिरता है शरीर पीला होजाता है सब दिशा पीत वर्ण देखपड़तीहैं मूर्च्छा और दाह होता है तब पीपल सहत महुआ घी तूंबे की जड़ इन्द्रायणकीजड़ इन सबको पीस नस्य लेपन और अंजन करै तो विषका वेग निवृत्तहोय पित्त से विष कफ में प्रवेश करता है तब शरीर जकड़जाता है श्वास भली भांति नहीं आता कण्ठ में घर्घर शब्द होता है मुख से लारगिरती है यह लक्षण देख पीपल मिरच शुंठी लोधको सहत की अर्थात् तुरई और मधुसार इनको गोमूत्र में पीस नस्य लेपन अंजन करै और यही पिलावै तो विषकावेग शान्तहोय कफ से वात में विष प्रवेशकरता है तब पेट अफर जाता है कोई पदार्थ देख

नहीं पड़ता है और दृष्टिभङ्ग होजाती है यह लक्षण होय तो अरलूकी जड़ खिरनी गजपीपल भारंगी पीपल देवदारु मधुसार सिन्दुवार और हींग इन सबको पीस गोली बनावै यह गोली खिलावै और नस्य लेपन अञ्जन आदि भी इसी से करै यह गोली सब विषों को हरती है और ब्रह्माजी ने कही है वात से मज्जा में विष पहुँचता है तब दृष्टि नष्टहोजाती है और सब अङ्ग बेसुधहो गिरजाते हैं यह लक्षण होय तो घी सहत खांड़ नख चन्दन और खस इन सबको घोटकर पिलावै और नस्य आदिभी देवै तो विषका वेग निवृत्तहोय मज्जा से विष मर्मस्थानों में पहुँचता है तब सब इन्द्रिय नष्ट होजायँ काटने से रुधिर न निकले केश उखाड़ने से भी पीड़ा न होय उस को मृत्यु के वशहुआ जानै ऐसे लक्षणोंकरके युक्त मनुष्य की साधारण वैद्य चिकित्सा नहीं करसक्ते हैं जिनके पास सिद्ध मन्त्र और औषधी होयँ वे वैद्य ऐसे रोगीका उपाय करने में समर्थहोते हैं इसकेलिये साक्षात् रुद्रने एक औषध कहाहै मयूर नकुल और मार्जार इनतीनों का पित्त धनालीकीजड़ केसर भार्गवी कूट काश मर्दकी छाल उत्पल कुमुद और कमल इन तीनोंके केसर इन सबके समान भाग लेकर गोमूत्र में पीस नस्य आदि देवै और खानेको भी देवै तो कालसर्पकरके डसा हुआभी अतिशीघ्र निर्विष होय यह औषध मृतसंजीवनी है अर्थात् मरे कोभी जिलादेती इसलिये अवश्य देनी चाहिये ॥

चौंतीसवां अध्याय ॥

सर्पोंकी भिन्न २ जातियों व उनके काटेहुये के लक्षण व नाग पंचमी पूजनफल व विधान ॥

गौतम पूछते हैं कि हे कश्यपजी! सर्प सर्पिणी बालसर्प

सूतिका नपुंसक और व्यन्तरनाम सर्प के काटे में क्या भेद होता है इनके अलग २ लक्षण कहो यहसुन कश्यपमुनि कहने लगे कि हे गौतम! यह सब हमसंक्षेपसे कहते हैं और नागोंके रूपका लक्षण भी वर्णन करते हैं सर्पकाटै तो ऊपर को दृष्टिहो-जाय सर्पिणीके काटनेसे नीचेको बालक सर्प के काटेसेदाहिनी ओरको और बाल सर्पिणी के डसनेसे बाईं ओर दृष्टि झुक जाती है गर्भिणी के काटेसे पसीना आता है प्रसूती काटै तो रोमाञ्च और कम्प होताहै नपुंसक काटने से शरीर टूटता है सर्प दिनमें सर्पिणी रात्रिमें और नपुंसक संध्यासमय अ-धिकविष करिकेयुक्त होता है अंधकारमें जलमें वनमें सर्प काटै तथा सोतेहुये मत्तहुये को काटै तो सर्प नहीं देखपड़ै और देख भी पड़े तो उसकी जाति न पहिंचानी जाय और पूर्वोक्त लक्षणभी न जानता होय तो वैद्य क्योंकर चिकित्सा करसक्ता है चारप्रकार के सर्प होतेहैं दर्वीकर मंडली राजिल और व्यंतर इनमें दर्वीकर वात स्वभाव है मंडली पित्तस्वभाव राजिल कफ स्वभाव और व्यंतर सन्निपात स्वभाव है अर्थात् उसमें वात पित्त और कफ तीनों अधिक हैं दर्वीकर में रुधिर कृष्णवर्ण और स्वल्प होता है मंडली में गाढ़ा बहुत और रक्त-वर्ण रुधिर निकलता है और राजिल तथा व्यंतर में बहुत गाढ़ा थोड़ासा रुधिर होता है इन चारजातियों बिना पांचवीं कोई जाति सर्पोंकी नहीं मिलती है ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य और शूद्र इन चार वर्णों के सर्पहोते हैं ब्राह्मण सर्पकाटै तो शरीरमें दाह होय मूर्च्छा होय मुखकाला पड़जाय ग्रीवा स्तंभ होजाय और संज्ञा जातीरहे ये लक्षणहोयँ तो अश्वगंधा अपामार्ग सिं-दुवार और हींगको घृतमें पीस नस्यदेवै और पिलावै तो विष

निवृत्त होय क्षत्रिय सर्पकाटै तो शरीर कांपै मूर्च्छा होय ऊपरको दृष्टि होजाय पीड़ाहोय यह लक्षण देख आककी जड़ अपामार्ग इन्द्रायण और प्रियंगुको घी में पीस पिलावै और इसीकानस्य देवै तो विषकी बाधामिटै वैश्य सर्प्पडसै तो कफ बहुत आवै मुखसे लारबहै मूर्च्छा होय संज्ञा जातीरहै ये लक्षण होयँ तो अश्वगन्धा गृहधूम गुगुल शिरीष अर्क पलाश और श्वेत फूलवाली गिरिकर्णिका इन सबको गोमूत्र में पीस नस्य देवै और यही पिलावै तो वैश्य सर्प्प के विषकी बाधा तत्क्षण दूर होय शूद्र सर्प्प जिसको काटै उसको शीत लगै कांपै ज्वरहोय सब अङ्ग चुलचुलावैं यह लक्षण जान कमल कमलके केसर लोध सहत मधुसार और श्वेत गिरिकर्णी इनको समान भाग लेकर शीतल जलसे पीस नस्य आदि देवै और पानकरावै तो विषका वेग शान्त होय ब्राह्मण सर्प्प मध्याह्न के पहिले क्षत्रिय मध्याह्नमें वैश्य मध्याह्न के पीछे और शूद्र जातिका सर्प्प संध्या में विचरताहै ब्राह्मण सर्प्प पुष्प भोजन कर्त्ताहै क्षत्रिय मूषक वैश्य मेंडक और शूद्र सर्प्प सब पदार्थ भक्षण कर्त्ताहै ब्राह्मण सर्प्प आगे डसताहै क्षत्रिय दहिने वैश्य बायें और शूद्र पीछे काटता है मदके समय मैथुनकी इच्छा करके पीड़ित सर्प्प विषके बढ़ने से व्याकुलहो विना समय भी काटता है ब्राह्मण सर्प्प में पुष्प के समान गन्ध होताहै क्षत्रिय में चन्दन का वैश्यमें घृतका और शूद्रमें मत्स्यका गन्ध आता है नदी कूप तालाब झरने बाग और पवित्र स्थानों में ब्राह्मण सर्प्प रहते हैं ग्राम नगर आदिके द्वार चतुष्पथ तोरण आदि स्थानों में क्षत्रिय गोशाला ऊषर भस्म घास आदि के ढेर और वृक्षों में वैश्य और अपवित्र स्थान वन शून्यघर श्म

आदि बुरे स्थानोंमें शूद्र सर्प्प निवास करते हैं श्वेत कपिल अग्नि के समान तेजस्वी और सात्त्विक ब्राह्मण सर्प्प होते हैं मूँगे के समान रक्तवर्ण अथवा सुवर्ण के तुल्य वर्ण सूर्य्य के समान तेजवाले क्षत्रिय सर्प्प जानो अलसी अथवा बाण पुष्पके समान वर्ण अनेक रेखाओं करके युक्त वैश्य होते हैं और अंजन अथवा काकके समान कृष्ण वर्ण और धूम्र वर्ण शूद्र सर्प्प होते हैं एक अंगुल अन्तर में दंशहोय तो बालक सर्प्प का काटा जानो दो अंगुल अन्तर होय तो तरुण का और ढाई अंगुल अन्तर होय तो वृद्ध सर्प्प का दंश पहिचानो अनन्त सम्मुख देखता है बासुकि बाईं ओर तक्षक दाहिनी ओर और कर्कोटक की दृष्टि पिछली तरफ होती है अनन्त बासुकि तक्षक कर्कोटक पद्म महा पद्म शङ्ख पाल और कुलिक ये आठो नाग पूर्व आदि आठ दिशाओं के स्वामी हैं पद्म उत्पल स्वस्तिक त्रिशूल पद्म शूल छत्र और अर्द्धचन्द्र ये आठों इनके आयुध हैं अनन्त और कुलिक ये दो ब्राह्मण हैं शङ्ख और बासुकि क्षत्रिय हैं महा पद्म और तक्षक वैश्य हैं पद्म और कर्कोटक शूद्र हैं अनन्त और कुलिक शुक्ल वर्ण और ब्रह्मा से उत्पन्न हैं बासुकि और शङ्खपाल रक्तवर्ण और अग्निसे उत्पन्न हैं तक्षक और महा पद्म पीत वर्ण और इन्द्रसे उत्पन्न हैं पद्म और कर्कोटक कृष्ण वर्ण और यम से उत्पन्न भये हैं दर्वीकरों के सोलह भेद हैं सात भेद मण्डली सर्प्पों के हैं दश भेद राजिल सर्पों के हैं और व्यन्तर चौसठ भेद के हैं बराहकर्णी गज पीपल गान्धारिका पीपल देवदारु मधूकसार सिन्दुवार और हींग इनको सम भागले गोमूत्र में पीस गोली बनाय सदा समीप रक्खे इतनी कथा सुनाय सुमन्तु मुनि बोले कि

हे राजा! यह सब सर्पों के लक्षण और चिकित्सा कश्यप मुनि ने गौतम को उपदेश करे हैं सदा भक्ति से नागों की पूजाकरै और पंचमी को विशेषकर दुग्ध खीर आदि से पूजै श्रावण शुक्ल पंचमी को द्वार के दोनों ओर गोबर से नाग बनाय दही दूध दूर्वा पुष्प कुशा गन्ध अक्षत और अनेक प्रकार के नैवेद्यों से पूजन कर ब्राह्मण भोजन करावै उस पुरुष के कुलमें कभी सर्पभय नहीं होता इसी प्रकार भाद्रपदकी पंचमी को अनेक रंग के नाग लिखकर घी पायस दूध पुष्प आदिसे पूजनकर गूगुलका धूपदेवै तो तक्षकआदि नाग प्रसन्न होते हैं और उसके सात पीढ़ीतक सर्प भय नहीं होता आश्विनकी पंचमी को कुशाके नाग बनाय इन्द्राणी सहित उनका पूजनकरै दुग्ध घृत और जलसे स्नान कराय दूधमें रंधेहुये गेहूँ और भांति २ के भक्ष्य भोज्य चढ़ावै इस पंचमी को जो नागपूजा करै उसपर वासुकि आदि नाग सन्तुष्ट होते हैं और वह पुरुष नागलोक में बहुतकाल सुख भोगता है हे राजा! यह पंचमी तिथिका कल्प हमने वर्णन किया है जहां यह पढ़ाजाय वहां सर्प भय नहीं होता है (ॐ कुरुकुल्लेहुंफट्स्वाहा) यह मंत्र भी सर्पभय निवृत्तकरता है॥

पैंतीसवां अध्याय॥

षष्ठीकल्पका प्रारम्भ, पुष्पषष्ठी का विधान और फल, स्कंद प्रशंसा॥

सुमंतु मुनि कहते हैं कि हे राजा! अब हम षष्ठीतिथिका कल्प वर्णन करते हैं जिसका राज्य छुटगयाहो वह षष्ठीका व्रतकरै और रात्रिको फल खाय वह अवश्य अपना राज्य पावै यह तिथि स्वामिकार्त्तिकेय को बहुत प्रिय है इसी ति[illegible] को स्वामिकार्त्तिक देवसेना के स्वामी भये हैं इस ति[illegible]

व्रतकर घृत दही जल और पुष्पों करके स्वामिकार्त्तिक को दक्षिणकी ओर मुखकरके अर्घ्य देवे और ब्राह्मणको अन्न देकर रात्रिको फल भोजन करै और व्रतके दिन शुक्ल वस्त्र पहिरै पवित्र और ब्रह्मचर्यसे रहै और शुक्ल पक्ष तथा कृष्ण पक्ष की दोनों षष्ठियों को यह व्रतकरै वह स्कंदके अनुग्रह से सिद्धि धृति तुष्टि राज्य आयुष् और मुक्ति पाता है जो पुरुष उपवास न करसके वह नक्तव्रतही करै तौ भी दोनों लोकों में उत्तम फल पाता है इस व्रतके करनेहारे पुरुष को देवता भी नमस्कार करते हैं और वह इस लोकमें आय चक्रवर्ती राजा होता है हे राजा! जो पुरुष षष्ठी व्रतके फल को भक्ति से श्रवणही करै वह भी स्वामिकार्त्तिकेय की कृपा से भांति भांति के उत्तम भोग सिद्धि तुष्टि धृति और लक्ष्मी पाता है और परलोक में उत्तम गतिका अधिकारी होता है॥

छत्तीसवां अध्याय॥

जातिभेदका खण्डन॥

राजा शतानीक पूछते हैं कि हे सुमन्तुमुनि! स्वामिकार्त्तिक के जन्म को सुन हमको अतिसन्देह होताहै कि अनेकों से स्वामिकार्त्तिक की उत्पत्ति भई और उनका माहात्म्य तथा प्रभाव अत्यन्त वर्णन किया है इसमें जाति उत्तम है कि कर्म यह मेरा सन्देह आप निवृत्त करैं और इन दोनों में जो श्रेष्ठ हो वह कहैं यह राजा का वचन सुन सुमन्तुमुनि कहने लगे कि हे राजा! यही बात मुनियों ने ब्रह्माजी से पूछीथी जो ब्रह्माजीने मुनियों से कहा वही हम आपको श्रवण कराते हैं एक समय ब्रह्माजी अपने लोक में सुखसे बैठे थे उस अवसर में सब ऋषि ब्रह्माजी के समीप गये और प्रणामकर कुशल प्रश्न

के अनन्तर पूछते भये कि महाराज विश्वामित्र को क्षत्रिय से ब्राह्मण भये देख हमारे हृदय में परम सन्देह उत्पन्न हो रहा है ब्राह्मणत्व क्या पदार्थ है जाति वेदाध्ययन देह और आत्माके संस्कार आचार वैदिक कर्मों का करना इन सब में ब्राह्मणत्व का हेतु कौनसा है कदाचित् कहो कि जीवही ब्राह्मण है तो वह संसारकी क्षत्रिय वैश्य शूद्र चंडाल श्वान शूकर आदि योनियों में घूमता है फिर क्योंकर ब्राह्मण रह सक्ता है जैसा गौओंके समूह में अश्व पृथक् पहिचाना जाता है ऐसे मनुष्यों में ब्राह्मण को नहीं जानसक्ते इस कारण ब्राह्मणत्व क्या वस्तु है यह आप कृपाकर वर्णन करैं यह मुनियों का प्रश्न ब्रह्माजी सुन कहने लगे कि हे मुनीश्वरो! मनुजीकी कही सप्तव्याध कथा सुननेसे जीव में तो ब्राह्मणत्व सन्देह निवृत्त होजाता है दशार्ण देश में सातव्याध थे वे सातों कालञ्जर पर्वत में मृगभये शरद्वीप में वही चक्रवाक मानसरोवर में हंस और वेही सातों कुरुक्षेत्र में वेदके पारगामी ब्राह्मण भये इस हेतु जीवको तो किसी प्रकार ब्राह्मण नहीं कहसक्ते और जैसे गवय अर्थात् नीलगाय से गौका भेद गल कम्बलकरके होता है ऐसाभी कोई चिह्न नहीं कि जो ब्राह्मण को और मनुष्यों से भेदकरै इससे जाति भी ब्राह्मणनहीं गौ महिषी बकरी भेड़ ऊँट गधे खच्चर घोड़े हाथी आदिकी नौकरी करै दूसरेके सेवकहो बनिया लुहार आदि कारीगर नट आदिका कामकरैं मांस लशुन पलाण्डु अर्थात् प्याज भक्षणकरैं मद्य और ऊँटनी का दूध पीवैं मांस लवण आदि रस और दूध बेचैं पुनर्भू अर्थात् जिस स्त्रीका दो वार विवाह हुआहो शूद्री चण्डाली दासी आदि

से संगकरैं शूद्र का अन्न प्रेतका अन्न जन्म और मरण के अशौचका अन्न जो भोजनकरैं देवता माता पिता गुरु आदि से जो मात्सर्य द्वेष और अहङ्कार करैं इत्यादि और भी अनेक कारणों करके वेद वेदांगका पठन पाठन करनेहारे उत्तमकुल में उत्पन्न ब्राह्मण भी अपने ब्राह्मणत्व से हीनहोते हैं इस लिये ब्राह्मणत्व एक शरीर में स्थिर भी नहीं होसक्ता मनु जी ने भी यह कहा है कि मांस लवण लाक्षा दूध आदि पदार्थ बेचने से ब्राह्मण शूद्र होजाता है गौओं से अपना निर्वाह करै खेती करै नौकरी करै नट वैश्य आदिका कर्म्मकरै वह ब्राह्मण शूद्रके तुल्य होता है इसप्रकार ब्राह्मणसे शूद्र और शूद्रसे ब्राह्मणभी बनजाता है ॥

सैंतीसवां अध्याय ॥

जातिभेदका खण्डन ॥

ब्रह्माजी कहते हैं कि हे मुनीश्वरो! वेदपढ़नेसे भी ब्राह्मण नहीं होता क्योंकि रावण आदि राक्षसोंने भी वेद पढ़रक्खा था और भी शूद्र चण्डाल धीवर आदि कोई कोई छलसे वेद पढ़लेते हैं परन्तु ब्राह्मण नहीं होसक्ते कई शूद्र दूसरे देशमें जाय ब्राह्मण बन वेदपढ़लेते हैं और उत्तम ब्राह्मण की कन्या से विवाह करलेते हैं अथवा वेद विनापढ़े भी पञ्चगौड़ पञ्चद्रविड़ आदिकों में किसी प्रकार के ब्राह्मण बन सत्कुल में विवाह करलेते हैं इसकारण वेदपढ़नेसेभी ब्राह्मण की पहिचान नहीं होसक्ती शास्त्रकार यह कहते हैं कि आचारहीन को वेद पवित्र नहीं करसक्ते चाहैं सब अङ्गों सहित भलीभाँति पढ़ेहों वेद पढ़ना तो ब्राह्मणोंका शिल्पहै आचरणही मुख्य है कई शूद्र भी संध्योपासन आदि करते हैं दण्ड मृगचर्म मेखला यज्ञोप-

वीत आदि धारलेते हैं उनको कोई निषेध नहीं करसक्ता अभिचार आदि कर्म शूद्र भी करसक्के हैं तप सत्य आदि के प्रभाव से देवता का अनुग्रह और मन्त्र सिद्धि शूद्रों को भी होती है शाप अनुग्रह का सामर्थ्य भी तप करने से शूद्रों में होजाता है ये सब बातें ब्राह्मण और शूद्रों में तुल्य होसक्ती हैं संस्कार भी ब्राह्मणत्व के हेतु नहीं क्योंकि व्यास आदिकों के गर्भाधान सीमन्त आदि संस्कार किसने किये थे शरीर भी सब मनुष्यों के तुल्यही है प्रत्युत म्लेच्छ चोर नास्तिक आदि शरीर से पुष्ट और बलवान् होतेहैं देह आत्मा वचन सुख ऐश्वर्य रोग आज्ञा वीर्य्य आकृति इन्द्रिय व्यापार आयुष् दुर्बलता पुष्टता चंचलता स्थिरता बुद्धि वैराग्य धर्म पराक्रम रूप औषध गर्भ देहकी मलिनता उज्ज्वलता अस्थि रोम मांस त्वचा त्रिवर्ग में रुचि इत्यादि पदार्थ ब्राह्मण और शूद्र में तुल्यही होते हैं इन बातों से शूद्र और ब्राह्मण का भेद देवता भी नहीं करसक्ते और ब्राह्मण चन्द्रकिरणों के समान श्वेत वर्ण नहीं हैं क्षत्रिय टेसू के फूल की भांति रक्तवर्ण नहीं वैश्य हरिताल से पीले नहीं और शूद्र कोयला से काले नहीं होते कि सब को अलग अलग पहिचान लेवें चलना फिरना बैठना बोलना सोना सुख दुःख सबको समान है फिर मनुष्य चार प्रकार के क्योंकर भये एक पिता के चार पुत्र होवें एक जाति केही होते हैं इसी प्रकार इस जगत् का पिता एक परमेश्वर है फिर उसकी सन्तान में क्योंकर जातिभेद होसक्ता है जैसे एक वृक्ष के फलरूप स्वाद आदि करके तुल्य होते हैं इसी विधि परमेश्वररूप वृक्ष से उत्पन्न भये मनुष्य रूप फल सब समान हैं कौशिक काश्यप गौतम कौडिन्य

मांडव्य वशिष्ठ आत्रेय कौत्स अंगिरा गर्ग मौद्गल्य कात्यायन भार्गव भारद्वाज आदि गोत्र भी ब्राह्मणत्व का हेतु नहीं क्योंकि ये गोत्र और भी वर्णोंमें होते हैं जो शरीरको ब्राह्मण कहो तो पहिले यह कहो कि कोई एक अंग ब्राह्मण है अथवा सम्पूर्ण शरीर यदि एक अंगको ब्राह्मण मानो तो वह अंग कटजाने से ब्राह्मणत्व जाता रहैगा और यदि सम्पूर्ण शरीर को ब्राह्मण ठहराओ तो मरने के अनन्तर उस शरीर का जो दाहकरैगा वह ब्रह्महत्या का भागी होगा जो कहो कि ब्राह्मण की कन्या के साथ जो विवाह करै वह ब्राह्मण होताहै तो वही ब्राह्मण जब क्षत्रिय की कन्या से विवाह करैगा तब क्षत्रिय होजायगा क्योंकि ब्राह्मण को चारों वर्णोंकी कन्या से विवाह करना लिखाहै इसलिये जाति देह कर्म्म वेदाध्ययन आदि कोई भी ब्राह्मणत्व के हेतु नहीं होसक्ते॥

अरतीसवां अध्याय॥

जातिभेद का खण्डन॥

ब्रह्माजी कहते हैं कि हे मुनीश्वरो! रूप ऐश्वर्य विद्या और जाति का अभिमान वृथा है क्योंकि यह जीव वनस्पति शंख चींटी भ्रमर हाथी आदि अनेक योनियों में जाय नट की भांति नाना प्रकार के देह धारता है फिर जाति का अभिमान कहां रहा इसलिये बुद्धिमान् मनुष्य कभी जाति का गर्व न करै क्योंकि जाति स्थिर नहीं रहती जो कहै कि संस्कारों से ब्राह्मण होता है तो गर्भाधान पुंसवन सीमन्त जातकर्म अन्नप्राशन यज्ञोपवीत वेदाध्ययन समावर्त्तन विवाह आदि संस्कार जिनके होते हैं उन का कुछ तेज अथवा आयुष् नहीं बढ़जाता और संस्कारहीन अल्पायुष् नहीं

होते सुख दुःख भी दोनों तुल्यही भोगते हैं उत्तम संस्कार जिन के हुये हों वे दुराचरण करके पतित होजाते हैं और नरक में पड़ते हैं और संस्कार हीन उत्तम चाल चलन से भले कहाते हैं और स्वर्ग पाते हैं संस्कार युक्त पुरुष भी द्यूत वेश्यासंग आदि कुकर्म्मों में आसक्त होजाते हैं और संस्कारहीन जप तप दान आदि सत्कर्म करते भी देखे हैं व्यास आदि मुनीश्वर संस्कारहीन भी होकर उत्तम आचरणसे सब ब्राह्मणों में श्रेष्ठ और जगत्पूज्य ठहरे हैं इससे संस्कार भी ब्राह्मणत्व का निमित्त नहीं बनसक्ते जो कहो कि जन्म से ब्राह्मण होता है तो देखो कि व्यासजी कैवर्त्ती के गर्भ से पराशरमुनि चण्डाली के पेट से शुकदेव शुकी के उदर से कणाद उलूकी से ऋष्यश्रृंग मृगी से वशिष्ठ वेश्या से मन्दपाल मुनि लाविका अर्थात् लवानाम पक्षी की स्त्री से मांडव्य मंडूकीके गर्भ से उत्पन्न भये इसप्रकार औरभी हजारों अधम योनि से जन्मे और उत्तम ब्राह्मण गिने गये ये सब संस्कारहीनहैं और जन्मभी उत्तम नहीं परन्तु प्रबल तप करके सब ब्राह्मण भये संस्कार होय और विद्या तप आदि भी होय तो वह उत्तमोत्तम ब्राह्मण होजाता है और सब संस्कारों से संस्कृत होकर भी महापातक करने से ब्राह्मणपना खो बैठता है इसलिये ब्राह्मणत्व नियत नहीं सांकेतिक है अर्थात् ब्राह्मणत्व एक संकेत है॥

उन्तालीसवां अध्याय॥

जातिभेद का खण्डन॥

ब्रह्माजी कहते हैं कि हे मुनीश्वरो! वेदवेत्ता पुरुषों से यह भी पूछना चाहिये कि शुक्रशोणित से उत्पन्न विष्ठा से उत्पन्न

हुये कीट के तुल्य यह अतिमलिन देह क्योंकर शुद्ध होती है मनमें तो दुष्टता भरीरहै और बाहिरसे सब संस्कार होयँ कई पुरुष वैदिक संस्कारोंसे संस्कृत आचरण में शूद्रों सेभी अधिक मलिन होजाते हैं क्रूरकर्म करनेहारा ब्रह्मघ्न गुरुदारगामी चोर गोघ्नमद्यप परस्त्रीगामी मिथ्यावादी मदोन्मत्त नास्तिक वेदनिन्दक मायाजाल कलिआदि में आसक्त अतिदोषोंकरके युक्त निषिद्ध आचरण का सेवन करनेहारा धूर्त शठ पापी सर्व्वभक्षी सर्व्व विक्रयी ऐसे जो ब्राह्मण होयँ उन के चाहे सब संस्कार भयेहों और वे सब वेद वेदांग पढ़े हों परन्तु कभी उनकी निष्कृति नहीं होती जो इष्ट अनिष्ट ब्राह्मणको होते हैं वेही शूद्र को भी होते हैं इसलिये वेदपठन अग्निहोत्र यज्ञ में पशुवध करना इत्यादि कोई कर्म भी ब्राह्मणत्वके हेतु नहीं वैधव्य वियोग मरण आदि सबको तुल्य होते हैं वात पित्त कफ लोभ धन की तृष्णा सब को होती है दयाहीन हिंसक परम दांभिक कपटी लोभी पिशुन अति दुष्ट ऐसे पुरुष वेद पढ़के संसार को ठगते हैं और वेदविक्रय कर अपना पोषण करते हैं अनेक प्रकारके छल छिद्रकर प्रजा की हिंसा करते हैं केवल अपना सांसारिक सुख साधते हैं ऐसे ब्राह्मण शूद्र से भी अधम होते हैं इसलिये जाति वृथा है सकामा शूद्र से ब्राह्मणि संग करके गर्भ स्थापन कर देता है और ब्राह्मणी को शूद्रके संग से गर्भ होजाता है फिर जातिभेद कहां ठहरा जातिभेद तो गौ ऊष्ट्र घोड़ा हाथी आदि पशुओं में है जो अपनी जातिकी स्त्री विना दूसरी जातिकी स्त्री से संग नहीं करते और न दूसरी जाति में गर्भ रख सकते हैं पशु जातिकी स्त्री से मनुष्य संग करे तो सुख

नहीं होता और न गर्भ रहताहै इसी प्रकार मनुष्य स्त्री पशु से मैथुन करै तो न गर्भधारै और न उसके आनंद होय परन्तु मनुष्य जाति में किसी वर्णके साथ संग करै तबहीं आनंदमिले और गर्भधारै इस से जातिभेद नहीं बनसक्ता यह जो मनुष्यों में जाति कल्पना है सो केवल व्यवहार के लिये संकेत है वास्तव में सत्य नहीं है ॥

चालीसवां अध्याय ॥

चारवर्णों के लक्षण और उनमें भेद होनेका कारण ॥

ब्रह्माजी कहते हैं कि हे मुनीश्वरो ! जो ग्राह्य अग्राह्य के तत्त्व को जानैं अन्याय और कुमार्ग का त्याग करैं जितेन्द्रिय सत्यवादी और सदाचार हों नियम आचार और सद्वृत्त में स्थिर रहैं सबके हित में तत्पर हों भली भांति वेदवेदांग और शास्त्र जानते हों समाधि में स्थितहों क्रोधहीनहों मत्सर मद शोक आदि करके वर्जितहों वेद के पठन पाठन में आसक्त हों विशेष करके किसी का संग न करैं एकान्त और पवित्र स्थान में रहैं सुख दुःख में समानहों धर्मनिष्ठहों पाप से डरैं निर्मम निरहंकार दानशूर ब्रह्मवेत्ता शान्त स्वभाव और तपस्वी हों वे ब्राह्मण कहाते हैं इस प्रकार के ब्राह्मण जगत् के हित के लिये उत्पन्न कियेगये हैं ब्रह्मके भक्त होनेसे ब्राह्मण क्षत से रक्षा करने करके क्षत्रिय वार्त्ताका सेवन करने से वैश्य और श्रुति से द्रुत होने करके शूद्र कहाये क्षमा दम शम दान सत्य शौच धृति दया मृदुता ऋजुता सन्तोष तप निरहंकारता अक्रोधता अनसूयता अशठता अस्तेय अमात्सर्य्य अपैशुन्य धर्म्मज्ञान ब्रह्मचार्य्य ध्यान आस्तिक्य वैराग्य पापभीरुत्व अद्वेष गुरु शुश्रूषा इत्यादि गुण जि

देखा उनको सृष्टि के समय ब्राह्मण ठहराया जो बलवान् और दूसरे की रक्षा करने में समर्थ देखे वे मनुष्य क्षत्रिय कहाये जो वृत्ति और धन के उपार्जन करने में तत्पर भये उन की संज्ञा वैश्य भई और जो निस्तेज और अल्पवल पुरुष शोचते और डरते हुये इन तीनोंकी सेवा में तत्पर भये वे शूद्र भये इस भांति अपने २ स्वभाव के अनुसार वर्णों की कल्पना भई शम तप दम शौच क्षान्ति आर्जव ज्ञान विज्ञान और आस्तिक्य ये ब्राह्मणों के स्वाभाविककर्म हैं शौर्य तेज धृति दाक्ष्य युद्ध में अपलायन अर्थात् पीछे न फिरना दान और ईश्वरभाव ये क्षत्रियों का स्वाभाविक कर्म है जिस के ज्ञानरूप शिखा और तपोरूप सूत्र अर्थात् यज्ञोपवीतहो उसको स्वायम्भुव मनुने ब्राह्मण कहा है चाहे जिस वर्ण में उत्पन्न हो और पाप कर्मों से निवृत्त होकर उत्तम आचरण रक्खै वह ब्राह्मण के समानही है शील करके युक्त शूद्र ब्राह्मणसे अधिक होजाता और आचार से रहित ब्राह्मण शूद्र से भी निकृष्ट माना जाता है जो अपने घरमें मद्य न बनावै और बाजार आदि में बेचैभी नहीं वह शूद्र उत्तम होता है पहिले तो जीवमात्र एक जाति हैं फिर मनुष्य आदि जाति अलग २ हैं उनमें स्त्री पुरुष आदि भेदहैं उनमें भी बालक तरुण वृद्ध ये जाति हैं इस के विना और जातिकी कल्पना संकेतमात्र है हे मुनीश्वरो ! यह हमने तर्कसे पूर्ण वचन जाति के विषय में कहे परन्तु जिस प्रकार दैव और पुरुष मिलकर कार्य्य सिद्ध होते हैं इस प्रकार उत्तम जाति और सत्कर्म का योग होने से पूर्ण सिद्धि होती है इतनी कथा सुनाय सुमन्तु मुनि बोले कि हे राजा ! इस प्रकार ब्रह्माजी ने ऋषियों को

जाति के विषय में सतर्क वाक्य कहे हैं इसलिये कार्त्तिकेय के जन्मपर आपभी कुछ विस्मय मत करो क्योंकि देवताओं की लीला दुर्ज्ञेय है यह प्रसङ्ग से हमने जातिका निर्णयकहाहै॥

इकतालीसवां अध्याय ॥

भाद्रषष्ठीका माहात्म्य स्कंदके दर्शन पूजन आदिका फल ॥

सुमन्तु मुनि कहते हैं कि हे राजा शतानीक ! भाद्रपद मास की षष्ठी बहुत उत्तम तिथि है और कार्त्तिकेय को अतिप्रिय है उसदिन कियाहुआ स्नान दान आदि कर्म अक्षय होता है दक्षिण दिशा में प्रसिद्ध स्वामिकार्त्तिक का उस तिथि को जो दर्शन करै वह ब्रह्महत्यादि पापों से छुटै जो भक्ति से कार्त्तिकेय का पूजन करै वह मनोवाञ्छित फलपावै और अन्त में रुद्रलोक में निवास करै जो पत्थर ईंट काष्ठ आदि करके श्रद्धा से कार्त्तिकेय का मन्दिर बनावै वह सुवर्णके विमान में बैठ उनकेही लोकको जावै जो मन्दिर पर ध्वजा चढ़ावै मन्दिर में मार्जनआदि करै वह रुद्रलोक पावै चन्दन अगर कपूर आदि से जो कार्त्तिकेय का पूजन करै वह हाथी घोड़े पालकी आदि वाहनों का स्वामी होय राजाओं को तो अवश्य कार्त्तिकेय का आराधन करना चाहिये जो राजा कार्त्तिकेय का पूजन कर युद्ध में जाय वह अवश्य शत्रुओं को जीतै इसलिये हे राजा ! सदा भक्तिसे कार्त्तिकेय का आराधन करना चाहिये जो कार्त्तिकेय का पूजन कर भक्तिसे अनेक प्रकार की स्तुति पढ़ै वह सब पापों से मुक्त हो शिवलोक को जाय षष्ठी के दिन तेल न खावै जो षष्ठी के दिन व्रतकर कार्त्तिकेय का पूजन कर रात्रि को भोजन करै वह कार्त्तिकेय के लोक में निवास करै जो पुरुष दक्षिण देश में तीनबार जाय कार्त्तिकेय का दर्शन

और भक्तिसे उनका पूजन करै वह शिवलोक में निवास करै॥

बयालीसवां अध्याय॥

सप्तमीकल्पारम्भ, सूर्यभगवान् की उत्पत्ति, उनकी स्त्री संज्ञा और छायाकी कथा, सप्तमी व्रतका विधान॥

सुमन्तुमुनि कहते हैं कि हे राजा! हम अब सप्तमी कल्प का वर्णन करते हैं सप्तमी के दिन सूर्य्यभगवान् ने जन्म लिया है अण्डे सहित उत्पन्न भये और अण्डेमेंही रहे दक्षने अपनी अतिरूपवती कन्या इनको विवाही जिसमें यमुना और यम उत्पन्न भये बहुत काल अण्डे में रहने से मार्त्तण्ड कहाये द-क्ष की आज्ञा से विश्वकर्मा ने इनके शरीर का संस्कार किया सूर्य्यभगवान् की भार्य्या दक्षकी पुत्री अतिव्याकुल हो चि-न्तना करने लगी कि इनके अति प्रचण्ड तेज से मेरी दृष्टि नहीं ठहरती कि इनके अंग देख पड़ैं और सुवर्ण वर्ण अति सुन्दर मेरा शरीर इनके तेजसे दग्ध हो श्यामवर्ण होगया इससे मेरा निर्वाह होना यहां कठिन है यह विचार कर अ-पनी छाया से एक स्त्री उत्पन्न करी और उससे कहा कि तू सूर्य्यभगवान् के समीप मेरे बदले रहना परन्तु यह भेद न खोलना इतना समझाय उस छाया को वहां रख अपने स-न्तान यम और यमुना को वहांही छोड़ कर उत्तर कुरुमें जाय घोड़ी का रूपधार मृगोंके साथ विचरने लगी और बहुत वर्ष तक वहांही रही और सूर्य्यभगवान् ने भी छाया कोही अपनी भार्य्या समझ रक्खा था कुछकाल के अनन्तर शनैश्चर और तपती नाम कन्या छाया से उत्पन्न भई तब छाया अपने स-न्तान पर अधिक स्नेह रखने लगी और यमुना तथा यम से स्नेह न करती यमुना और तपती का एकदिन विवाद भया

और परस्पर शाप से दोनों नदी होगईं तब छाया ने यमुना के भाई यमको ताड़न किया यमने क्रोधकर छाया को मारने के लिये लातउठाई तब क्रोधकर छाया ने शाप दिया कि रे दुष्ट यह जो चरण तैंने मेरे ऊपर उठाया यह गलजावै जबतक सूर्य्य चन्द्र रहैं तबतक मलिन रहै और जो इस चरणको भूमि पर रक्खै तो कृमि खाजावें यह दोनों का विवाद होरहा था इसी अवसर में सूर्य्य भगवान् भी वहां आये तब यमने कहा कि हे पिता! यह नित्य हमको क्लेश देती है और समान दृष्टि नहीं रखती यह सुन सूर्य्य भगवान् ने क्रोधकर कहा कि तुम को यह उचित नहीं कि अपनी सन्तान में एक से प्रेमकरो और दूसरे से द्वेषरक्खो जितने सन्तानहों सब को तुल्य समझना चाहिये यह सुन छाया तो न बोली और यम ने कहा कि हे पिता! यह दुष्टा मेरीमाता नहीं है उसकी छायाहै इसी से उसने मुझे शापदिया है यहकहकर सब वृत्तान्त सुना दिया तब सूर्य्यभगवान्‌ने कहा कि मांस और रुधिर लेकर कृमि भूलोकको जाय और हे पुत्र! तेरा चरण अच्छा होजाय और ब्रह्माजीकी आज्ञा से तू लोकपालहोजा और यमुना का जल गंगाजल के समानहोय और तपतीका जल नर्मदाजलकेतुल्य माना जायेगा विंध्यपर्वत के दक्षिण भाग में पुष्पजा नदी के साथ तपतीका सङ्गमहोगा और गंगा के साथ यमुना का संगमहोगा तब यमुना भी गङ्गारूप होजायगी दोनों नदी सब पाप हरनेहारी होंगी और यह छाया सब के देहों में स्थित होगी यह व्यवस्थाकर दक्षप्रजापति के समीप आये और अपना सब समाचार कहा तब दक्ष ने कहा कि आप के अतिप्रचण्ड तेज से व्याकुल हो तुम्हारी भार्य्या छोड़कर चलीगई अब विश्वकर्म्मा से १

अपना रूप सुधरवालो यह कह विश्वकर्म्मा को बुलाय कहा कि इन का रूप प्रकाशितकरो विश्वकर्म्मा बोले कि महाराज जो शस्त्रकी पीड़ा ये सहसकें तो हम इन को खरादपर चढ़ाय ठीक करदेवें यह सुन सूर्य्य भगवान् ने कहा कि हम पीड़ा सहैंगे परन्तु हमारा रूप उत्तम होजाय यह उनकी सम्मति पाय विश्वकर्म्मा अपने शस्त्रों से सूर्य्य भगवान् के अंग छीलने लगे तब अतिपीड़ा से सूर्य्य भगवान् को बार २ मूर्च्छा होती थी इस से सब अंग तो छांटकर ठीक कर दिये परन्तु पैरों की अंगुली रहगई सूर्य्य भगवान् ने कहा कि हे विश्वकर्म्मा! तुम अपना कामकरचुके परन्तु हम पीड़ा से बहुत व्याकुल हैं तब विश्वकर्म्मा ने कहा कि रक्तचन्दन और करवीर के पुष्पों का आप सम्पूर्ण शरीर में लेपकरैं जिससे अभी यह व्यथा शांतहोजाय सूर्य्य भगवान् ने विश्वकर्म्मा के कहने के अनुसार किया और वेदना मिटगई उस दिन से रक्तचन्दन और कनेर के पुष्प सूर्य्य भगवान् को अतिप्रिय भये और कहा कि हमारे पूजन में और कोई पदार्थ देवे चाहे न देवे परन्तु जो पुरुष रक्तचन्दन और करवीर के पुष्प हमारे अर्पण करै वह मानों प्राण देता है इसलिये ये दोनों पदार्थ अवश्य हमारे अर्पण करै सूर्य्यभगवान् के देह में जो तेज उतरा उस करके दैत्यों के नाश करनेहारा वज्र रचा सूर्य्य भगवान् ने भी उत्तम रूप पाय उत्तर कुरु में जाय बड़ी उत्कंठा से अपनी भार्या को ढूंढ़ा और देखा कि मृगों के साथ अश्वाका रूपधारे चररही है तब सूर्य्य भगवान् ने भी अश्व का रूपधार उस से संगकिया तब उस घोड़ी की नासिका से दो बालक उत्पन्न भये वे अश्विनी कुमार कहाये और देवताओं के वैद्य भये त-

पती शनि और सावर्णि ये तीन सन्तान छाया के और यमुना तथा यम संज्ञा के भये सप्तमी केही दिन दिव्यरूप और भार्या सूर्य भगवान् ने पाये इससे सप्तमी तिथि उनकी अतिप्रिया भई सप्तमी के दिन जो पुरुष उपवास करै अथवा रात्रि के समय भोजन करै और अनेक प्रकार के भक्ष्य भोज्य और उत्तम २ सिद्ध किये हुये शाक ब्राह्मणों को देवै और जन्म भर इस व्रत को करै वह अनेक प्रकार के सुख भोग करै और सर्वत्र जयपावै और अन्तमें उत्तम विमान पर चढ़ सूर्य्यलोक में जाय कई मन्वन्तर पर्यंत वहां निवास कर पृथ्वी पर चक्रवर्ती राजा होय और बहुत काल निष्कंटक राज्य करै राजा कुरुने यह सप्तमी का व्रत बहुत कालपर्यन्त करा और केवल शाकही भोजन किया तब कुरुक्षेत्र नाम पुण्यक्षेत्र पाया सप्तमी नवमी षष्ठी तृतीया और पंचमी ये तिथि बहुत उत्तम हैं और स्त्री पुरुषोंको मनवाञ्छित फलदेनेहारी हैं माघ में सप्तमी आश्विन में नवमी भाद्रपद में षष्ठी वैशाख में तृतीया और भाद्रपदमेंही पंचमी ये तिथि इन महीनों में विशेष हैं कार्त्तिक शुक्ल सप्तमी से इस व्रत को ग्रहण करै उत्तम शाकको सिद्ध कर ब्राह्मण को देवै और आपभी रात्रिके समय शाकही भोजन करै इस प्रकार चारमास व्रत करके प्रथम पारण करै पंचगव्य से सूर्य्य भगवान् को स्नानकरावै और आपभी पंचगव्य का प्राशन करै पीछे केसर का चन्दन अगस्त्य के पुष्प अपराजित नाम धूप और पायस का नैवेद्य सूर्य्यनारायण के समर्पण करै और ब्राह्मणों को भी पायस भोजन करावै दूसरे पारण में कुशा के जलसे स्नान करावै आप गोबर प्राशन करै और श्वेत चन्दन सुगन्ध पुष्प अगुरु का धूप और

गुड़ के अपूप नैवेद्य अर्पण करै और वर्ष समाप्त होने पर तीसरा पारण वर्ष के अन्त में करै सर्षप का उबटन लगाय स्नान करावै और आप भी उसको प्राशन करै फिर रक्तचन्दन करवीर के पुष्प गूगुल का धूप और अनेक प्रकरके भक्ष्य भोज्य सहित दही भात नैवेद्य चढ़ावै और यही ब्राह्मणों को भोजन करावै और सूर्य्य नारायण के आगे ब्राह्मण से पुराण श्रवण करै अथवा आपही पुराण बांचै और अन्त में ब्राह्मण भोजन कराय पौराणिक को वस्त्र भूषण दक्षिणा आदि देकर प्रसन्न करै पौराणिक के प्रसन्न होने से सूर्य्यनारायण प्रसन्न होते हैं रक्तचन्दन करवीर के पुष्प गूगुल का धूप मोदक पायस का नैवेद्य घृत ताम्रपात्र पुराण कथा और पौराणिक ये सब सूर्य्य भगवान् को अतिप्रिय हैं हे राजा शतानीक! यह सप्तमीव्रत सूर्य्य भगवान् को अतिप्रिय है इस व्रत के करनेहारा पुरुष कभी लक्ष्मी से वियुक्त नहीं होता ॥

तैंतालिसवां अध्याय ॥

श्रीकृष्ण व सांबका संवाद व सूर्य्यनारायण का आराधन ॥

राजा शतानीक कहते हैं कि महाराज सूर्य्य भगवान् का माहात्म्य सुनते २ मुझे तृप्ति नहीं होती इसलिये आप विस्तार से सप्तमी कल्प का वर्णन करें जिससे सूर्य्यनारायण के गुणानुवाद सुनने में आवें यह सुन सुमन्तु मुनि बोले कि हे राजा! इस विषय में श्रीकृष्ण और उनकेपुत्र साम्ब से जो परस्पर संवाद हुआ था वह हम वर्णन करते हैं एक समय साम्ब ने अपने पिता श्रीकृष्ण भगवान् से पूछा कि महाराज संसार में जन्म लेकर मनुष्य सुखी क्योंकर रह सक्ता है अपने मनोवाञ्छित फल किस कर्म से पाता है और अन्त में

बहुत काल स्वर्ग के सुख भोग मुक्तिका भागी किस विधिसे होताहै यह आप वर्णन करैं इस संसार में अनेक प्रकार की व्याधि देख मेरा चित्त अतिउदास हो रहा है क्षणमात्र जीने की भी इच्छा नहीं होती इसलिये आप ऐसा उपाय उपदेश करैं कि जितने दिन संसार में रहैं उतनें दिन आधि व्याधि से पीड़ित न होयँ और फिर इस संसार में जन्म न होय यह पुत्र की प्रार्थना सुन श्रीकृष्ण भगवान् बोले कि हे पुत्र! देवता के आराधन से यह बात प्राप्त होसक्ती है देवता अनुमान और आगम से सिद्धहैं विशिष्टदेवताका विशिष्ट पुरुष आराधन करे तो विशिष्टही फलपावै यहसुन साम्बने कहा कि महाराज पहिले देवताओं के होने में ही सन्देह है कई पुरुष कहते हैं कि देवता हैं और कई कहते हैं कि नहीं फिरविशिष्ट देवता क्यों कर जानें यह पुत्रका सन्देह सुन श्रीकृष्णभगवान्ने कहा कि हे पुत्र ! शास्त्रसे अनुमानसे और प्रत्यक्षसे देवताओं का होना सिद्ध होता है यह सुन साम्बने कहा कि जो प्रत्यक्षभी देवता सिद्ध होसक्तेहों तो उनके साधन के लिये अनुमान और शास्त्रकी कुछ अपेक्षा नहीं तब श्रीकृष्ण ने कहा कि हे पुत्र ! सब देवता प्रत्यक्ष नहीं होते शास्त्र और अनुमानसेही हजारों देवताओं का होना सिद्ध होता है साम्बने कहा कि महाराज जो देवता प्रत्यक्ष हो प्रथम आप उसीका वर्णन करैं शास्त्र और अनुमान से सिद्ध देवताओं का वर्णन पीछे करना तब श्रीकृष्ण कहने लगे कि हे पुत्र ! प्रत्यक्ष देवता तो सूर्य्यनारायण हैं जिनसे बढ़कर कोई दूसरा देवता नहीं सब जगत् इनसे उत्पन्न भया और इनहीं में लीनहोगा त्रुटिआदि कालकी संख्या इनसे है ग्रह नक्षत्र

योग करण राशि आदित्य वसु रुद्र वायु अग्नि अश्विनी कुमार इन्द्र ब्रह्मा दिशा भू भुवः स्वः आदि सब लोकपर्यंत नदी समुद्र नाग और सम्पूर्ण भूत ग्रामकी उत्पत्ति के हेतु सूर्यनारायण हैं सब जगत् इनकी इच्छा से उत्पन्न भया है इनकीही इच्छा से स्थित है और अपने २ व्यवहार में सब प्रवृत्तहैं सूर्यभगवान् के उदय के साथ जगत् का उदय और अस्तके साथ अस्त होताहै इनसे अधिक न कोई देवता हुआ न कोई होगा सब वेदों में और इतिहास पुराण आदि में इन को परमात्मा अन्तरात्मा आदि शब्दों से प्रतिपादन किया है इनके सम्पूर्ण गुण और प्रभाव सौ वर्ष में भी वर्णन नहीं करसके सब के स्वामी सब के सिरजनेहारे और संहारकर्त्ता येही हैं मण्डल रथ सायंकाल और प्रातःकाल जो पुरुष इनका पूजनकर उपस्थान करै वह सब सिद्धिपाता है फिर जो प्रत्यक्ष सूर्यनारायण का पूजन करै उसको कौन पदार्थ दुर्लभ है जो इनका मन्त्र जपै हवन करै पूजनकरै वह सब कामना पाता है और अन्त में इनके लोक में निवास करता है हे पुत्र! जो तुम संसार में सुख चाहते हो और भुक्ति मुक्ति की इच्छा रखते हो तो विधि पूर्वक सूर्यनारायणका आराधन करो आध्यात्मिक आधिभौतिक और आधिदैविक दुःख तुमको कभी न होंगे जो सूर्यभगवान् के शरण में प्राप्त हैं उनको किसी प्रकार का भय नहीं होता हमने सूर्यभगवान्का बहुत काल आराधन किया तब यह दिव्य ज्ञानपाया है इससे बढ़कर मनुष्यों के लिये कोई हित उपाय नहीं है हे साम्ब! हमने यह बहुत संक्षेप से कहा है॥

चवालीसवां अध्याय ॥

सूर्य्यनारायणके नित्यार्चनका विधान ॥

श्रीकृष्ण कहते हैं कि हे साम्ब! अब हम सूर्यनारायण के पूजनका विधान कहते हैं जिसके करने से सम्पूर्ण पाप और विघ्न निवृत्त होतेहैं प्रभात उठ शौचआदि से निवृत्त हो नदी आदि के तटपर जाय आचमन कर शुद्ध मृत्तिका से शरीर को लीप करके सूर्य्योदय समय स्नान करै फिर आचमन कर शुद्ध वस्त्र पहिनै सूर्य्यभगवान् को अर्घ्य देकर सप्ताक्षरमंत्र करके पूरक कुम्भक और रेचक नाम प्राणायाम कर वायवी आग्नेयी माहेयी और वारुणी धारणा करके भूत शुद्धिकी रीति से शरीर का शोषण दहन स्तम्भन और प्लावन करके नवीन शरीर उत्पन्न करे और स्थूल सूक्ष्म शरीर तथा इन्द्रियों को अपने २ स्थान में स्थापनकरै खःस्वाहा हृदयायनमः खो स्वाहा शिरसे स्वाहा उल्काय स्वाहा शिखायै वषट् स्वाहा कवचायहुं स्वाहा स्वाहा नेत्रत्रयाय वौषट् खः खोल्काय स्वाहा अस्त्रायफट् इन मंत्रों से न्यासकर पूजाकी सामग्री को मूलमंत्र से प्रोक्षण करै फिर सब उपचारों से सूर्य्यभगवान् का पूजन करै दिन के समय मूर्त्तिमें और रात्रि को अग्नि में सूर्य्यनारायण का पूजन करै प्रभात के समय पूर्वाभिमुख सायङ्काल को पश्चिमाभिमुख और रात्रि के समय उत्तराभिमुख होकर पूजन करै ॐखखोल्काय स्वाहा इस सप्ताक्षर मूल मन्त्र करके सूर्य्यमण्डल के बीच षट्दल कमल का ध्यान कर उसके मध्य में सूर्य्यनारायण की मूर्त्ति ध्यावै फिर रक्तचन्दन करवीर आदि रक्तपुष्प धूप दीप अनेक प्रकार के नैवेद्य बलि वस्त्र भूषण आदि उपचारों करके

पूजन करै अथवा रक्तचन्दन से ताम्रपात्र में षट्दल कमल लिखकर मध्य में सब उपचारों करके सूर्य्यनारायण का पूजन कर छहोदलों में षडङ्ग पूजन उत्तर आदि आठ दिशाओं में चन्द्र आदि आठ ग्रहों का अर्चन और दिक्पाल तथा उनके अस्त्रों का अपनी २ दिशा में पूजन करै आदिमें प्रणव लगाय चतुर्थी नमोन्त नाम मन्त्रों से सब का पूजन करै फिर व्योममुद्रा नमस्कारमुद्रा पद्ममुद्रा महाश्वेतामुद्रा और अस्त्र मुद्रा दिखावै ये सब मुद्रा पूजा जप ध्यान अर्घ्य आदि के अनन्तर दिखानी चाहिये इस प्रकार एक वर्ष पर्य्यन्त भक्तिसे सूर्य्यनारायण का आराधन करै तो भोग और मोक्ष पावै इस विधि पूजन करके रोगी रोग से छूटै धनहीन धन पुत्रहीन पुत्र और राज्यहीन राज्य पावै और चिरकालजीवै बुद्धि निर्मल होजाय उत्तम कुलमें उत्पन्न अतिरूपवती कन्या से विवाह होय और इस विधि के करनेसे कन्याको वरमिलै और कुरूपा नारीभी सौभाग्य पावै और विद्याकी इच्छा होय तो विद्या मिलै यह सूर्य्यनारायण ने अपने मुखसे कहा है इसपूजनके करने से धन धान्य सन्तान पशु आदि की नित्य वर्द्धता होती है और अन्त में सद्गति मिलती है ॥

पैंतालीसवां अध्याय ॥

नैमित्तिकार्चन और व्रतके उद्यापनका विधान, व्रतका फल ॥

श्रीकृष्ण कहते हैं कि हे साम्ब! नित्यार्चन का विधान और फल तो हमने वर्णन किया अब नैमित्तिक यज्ञोंकी विधि कहते हैं सप्तमी शुक्ल पंचमी ग्रहण अथवा संक्रांति के पहिले दिन एकबार हविष्य अन्न भोजन कर सायङ्काल के समय आचमन कर अरुण को प्रणाम करै और सब इन्द्रियोंको वश

मेंकर कुशकी शय्यापर सोवे दूसरे दिन प्रातःकाल उठ विधि से स्नान कर सूर्य्यभगवान् का पूजन करै और सूर्य्याग्नि में हवन कर तर्पण करै वेदी बनाय अस्त्र मन्त्र से उल्लेखन और गायत्री मन्त्र करके प्रोक्षण कर पूर्वाग्र और उत्तराग्र कुशा बिछाकर सब पात्रों का शोधन करै दो कुशा का प्रादेशमात्र एक पवित्र बनाय उस करके सब वस्तु प्रोक्षण करै घृत को अग्निपर रख कर गलाय उत्तर की ओर पात्र में रक्खै फिर जलता हुआ उल्मुक लेकर पर्य्यग्निकरण और घृतका उत्पवन करै फिर अग्निमें सूर्य्यनारायण का अर्चन कर मूलमन्त्र से हवन करै दहिनेहाथ में स्रुवा लेवै और वामहस्तकरके भूमिमें लिखेहुये यन्त्र को स्पर्श करे रहै हृदय मन्त्रसे सब क्रिया करै फिर पूर्णाहुति देकर तर्पण करै और ब्राह्मणों को उत्तम भोजन करावै और यथाशक्ति दक्षिणा देवै तो मनोवाञ्छित फलपावै माघमें वरुणनामक सूर्य्य का पूजन करै फाल्गुनमें सूर्य्य चैत्र में श्वेतांशु वैशाखमें धाता ज्येष्ठमें इन्द्र आषाढ़ में रवि श्रावण में भग भाद्रपद में यम आश्विन में पर्जन्य कार्त्तिक में त्वष्टा मार्ग्गशीर्ष में मित्र और पौष में विष्णुनाम सूर्य्य का अर्चन करै इस प्रकार एक दिन पूजन करने से वर्ष भर करी पूजा का फल प्राप्त होता है प्रथम रीति से एकवर्ष व्रत करके रत्नों से जटित सुवर्ण का रथ बनाय उसमें सात घोड़े लगावै रथ के मध्य में सुवर्ण कमल के ऊपर रत्नोंके भूषणों से भूषित सुवर्ण की सूर्य्यनारायण की मूर्त्ति स्थापन करै रथ के आगे सारथि बैठावै फिर बारह ब्राह्मण बारह महीनों के सूर्य्यों की भावना से और तेरहवें मुख्य आचार्य्य को साक्षात् सूर्य्यनारायण समझ पूजन करै फिर वह रथ छत्र गो भूमि आदि आचा-

र्घ्य को देवै और रत्नों के भूषण वस्त्र दक्षिणा और एक एक घोड़ा उन बारह ब्राह्मणों को देवै और हाथ जोड़ यह प्रार्थना करै कि इसके अनन्तर व्रत न करने से मुझे दोष न होय ब्राह्मणों सहित आचार्य्य भी यह आशीर्वाद देवै कि सूर्य्य भगवान् तुम पर प्रसन्न होयँ और जिस मनोरथ के पूर्णहोनेके लिये तुमने यह व्रत किया वह तुम्हारा सिद्धि होय और अब व्रत न करने से भी दोष न होगा। इस प्रकार आशीर्वाद पाय दीन अन्धे अनाथों को भोजन कराय और यथाशक्ति ब्राह्मण भोजन कराय दक्षिणा देकर व्रत समाप्त करे जो पुरुष इस व्रतको एक वर्ष करै वह सौयोजन लम्बे चौड़े देश का राजा होय और सौवर्ष सेभी अधिक निष्कण्टक राज्य करै और स्त्री इस व्रत के करने से रानीहोय जो धनहीन व्रतकेअन्तमें पूर्वोक्त विधि से तांबे का रथ ब्राह्मण को देवै वह अस्सीयोजन लम्बा चौड़ा राज्य पावै पिष्ट अर्थात् आटे का रथ बनाकर देवै तो साठ योजन विस्तार का राज्य मिलै इस व्रत का करनेहारा एक कल्प सूर्य्यलोक में निवास कर राजा होताहै जो मन करके भी सूर्य्य भगवान् का पूजन करै उसको आधि व्याधि दरिद्र नहीं स्पर्श करते फिर जो भक्ति से यह व्रत करै और मन्त्रों से सूर्य्यनारायण का पूजन करै तो वह क्यों न आधि व्याधियों से मुक्त होय हे पुत्र! यह विधान सूर्य्यनारायण ने हमको अपने मुखसे उपदेश किया था हमने आज तक इसको गुप्त रक्खा आज तुमसे कहा है हमने इसी व्रत के प्रभावसे हजारों पुत्र पौत्र पाये दैत्य जीते देवता वश किये इस हमारे चक्र में सदा सूर्य्यभगवान् निवास करते हैं नहीं तो इसमें इतना तेज कैसे होता और इस करके दैत्य किस विधि से जीते जाते

सूर्य्यनारायण का नित्य जप ध्यान पूजन आदि करने से हम जगत्पूज्य भये हे पुत्र! तुम भी इस विधि से सूर्य्यनारायण का आराधन करो जिस से भांति २ के सुख प्राप्त होयँ और इस विधान को गुप्त रक्खो जो पुरुष भक्ति से इस विधान को श्रवण करै वह भी पुत्र पौत्र आरोग्य और लक्ष्मी पावै॥

छियालीसवां अध्याय॥

माघ आदि ज्येष्ठआदि और आश्विनआदि चार २ महीनों में सूर्यपूजन विधान, रथसप्तमी का फल॥

श्री कृष्ण कहते हैं कि हे पुत्र! माघ शुक्ल पंचमी को एक बार भोजनकर षष्ठी को नक्तव्रत करै कोई पंचमी को और कोई षष्ठी को उपवास करना कहते हैं षष्ठी के दिन उपवास कर सूर्य्यनारायण का अर्चनकरै रक्त चन्दन करवीर के पुष्प गुग्गुलु धूप और पायस नैवेद्य आदि से माघ आदि चारमहीने सूर्य्यनारायण का पूजन करै और आत्मशुद्धि के लिये गोबर के जल से स्नानकरै और गोबर का प्राशनकरै और यथाशक्ति ब्राह्मण भोजन करावै ज्येष्ठ आदि चार महीने श्वेतचन्दन श्वेतपुष्प अगर का धूप और उत्तम नैवेद्य सूर्य्य नारायण के अर्पण करै पंचगव्य प्राशन करै और ब्राह्मण भोजन करावै आश्विन आदि चारमास अगस्त्य पुष्प अपराजित धूप और गुड़ के अपूप नैवेद्य और इक्षुरस सूर्य्य भगवान् को समर्पण करै और यथाशक्ति ब्राह्मण भोजन करावै कुशा के जल से स्नानकरै और कुशोदकही प्राशन करै व्रत की समाप्ति में रथ का दान करै और सूर्य्यभगवान् की प्रसन्नता के लिये रथ यात्रा करै इस रथसप्तमी को जो उपवास करै वह धन पुत्र कीर्त्ति विद्या आरोग्य आयुर्दाय

उत्तम कान्ति पाता है हे पुत्र! तुम भी इस व्रत को करो जिससे तुम्हारा सब अभीष्ट सिद्ध होय इतना कह शंख चक्र गदा और पद्म के धारनेहारे श्रीकृष्ण भगवान् अन्तर्द्धान भये और उनकी आज्ञा पाय साम्बभी भक्ति से रथसप्तमी का व्रत और सूर्यनारायण का आराधन करने में प्रवृत्त भये और थोड़ेही काल में अपना मनोवाञ्छित फल पाया॥

सैंतालीसवां अध्याय॥

सूर्यभगवान् के रथका वर्णन॥

राजा शतानीक पूछते हैं कि हे सुमन्तुमुनि! सूर्यनारायण की रथयात्रा किस विधि से करनी चाहिये रथ कैसा बनावै और यह रथयात्रा किसने प्रवृत्तकरी है यह आप कृपाकर वर्णन करैं यह सुन सुमन्तुमुनि कहते भये कि हे राजा! एक समय सुमेरु पर्वत में रुद्र ने ब्रह्माजी से पूछा कि हे ब्रह्माजी! यह लोक को प्रकाश करनेहारे सूर्य भगवान् रथ में बैठ किस प्रकार भ्रमण करते हैं यह आप वर्णन करैं तब ब्रह्माजी ने कहा कि महाराज जिस प्रकार सूर्यनारायण रथ में बैठ भ्रमण करते हैं उसका हम वर्णन करते हैं आप प्रीति से श्रवण करो एक चक्र तीनि नाभि पांच अर एक नेमि और आठ बन्धे करके युक्त दशहजार योजन लम्बे चौड़े अतिप्रकाशवान् सुवर्ण के रथ में विराजमान हो सूर्य भ्रमण करते हैं रथके उपस्थ से ईषादण्ड तीनगुणा है अरुण वहां बैठते हैं पवन के समान वेगवान् छंदोरूप सात घोड़े रथ में लगे हैं संवत्सर के जितने अवयवहैं वही रथ के अंग हैं तीनकाल चक्र की तीनि नाभि हैं पांच ऋतु अर और छठा ऋतु नेमि है दक्षिण और उत्तर ये दोनों अयन रथके दो भाग हैं मुहूर्त्त रथका अभिषत्र क्षण अक्षदंड

निमेष अनुकर्ष लव ईषादण्ड रात्रिवरूथ और धर्म्म उस रथका ध्वज है अर्थ और काम धुरी का अग्रभाग गायत्री त्रिष्टुप् जगती अनुष्टुप् पंक्तिबृहती और उष्णिक् ये सात छन्द सात अश्वहैं धुरीपर चक्र घूमताहै और वह धुरी ध्रुव में लगी है ऐसे रथमेंबैठ सूर्य्य नारायण आकाशमें भ्रमण करते हैं एक चक्रका रथहै और बाईं ओर अश्व लगेहैं दाहिने युग और धुरी के ऋग्वेद तथा यजुर्वेद धारण कियेहैं दो रश्मि अर्थात् घोड़ोंकी बाग युग में बँधीहैं उत्तरायण में वे रश्मि कम होजाते हैं और दक्षिणायन में बढ़जाते हैं ध्रुवके चारों ओर यहरथ भ्रमता है एकसौ अस्सी मण्डल उत्तरायण में और इतनेही दक्षिणायन में रथके होते हैं देवऋषि गन्धर्व अप्सरा सर्प ग्रामणी और राक्षस ये सूर्य्यके रथके साथचलते हैं और दो २ मास के अनन्तर इनकी बदली होती है धाता अर्यमा पुलस्त्य पुलह तुम्बुरु नारद शङ्ख वासुकि ऋतुस्थला पुंजिकस्थला रथकृत्स्न रथौजा रक्षोहेतु और प्रहेतु ये सब चैत्र और वैशाखमें रथके साथरहतेहैं मित्र वरुण अत्रि वशिष्ठ तक्षक अनन्त मेनका सहजन्या हाहा हूहू रथस्वन रथचित्र पौरुषेय और वध ये ज्येष्ठ और आषाढ़ में साथ रहतेहैं इन्द्र विवस्वान् अङ्गिरा भृगु एलापर्ण शङ्खपाल प्रम्लोचा दुन्दुका भानु दर्दुर और सर्प तथा व्याघ्र ये श्रावण भाद्रपद में साथ रहतेहैं पर्जन्य पूषा भरद्वाज गौतम चित्रसेन व सुरुचि विश्वाची घृताची ऐरावत धनंजय सेनजित् सुसेन आप और वात ये आश्विन कार्त्तिक में साथ रहते हैं अंशुभग कश्यप क्रतु महापद्म कर्कोटक चित्रांगद ऊर्णायु उर्व्वशी सहजन्या प्रसेन सुषेण नकुल और गज ये साथ

पौष में रहते हैं पूषा विष्णु यमद्युति विश्वामित्र कम्बल अश्वतर धृतराष्ट्र सूर्य्यवर्चा तिलोत्तमा रंभा ऋतजित् सत्यजित् ब्रह्म और उपेत ये माघ फाल्गुन में रथके साथ भ्रमण करते हैं ब्रह्माजी कहते हैं कि और भी सन्देहनाम राक्षसों के वधके लिये और सूर्य्य नारायण की रक्षाके लिये जो जो रथके साथ भ्रमते हैं उनका हम वर्णन करते हैं॥

अड़तालीसवां अध्याय॥

रथके साथवाले देवताओंका कथन, गमनका वर्णन,उदयास्तकाभेद॥

ब्रह्माजी कहते हैं कि हे रुद्र! इसने अपनाअवतार अरुण रथका सारथी बनाया इन्द्र ने माठर वायुने नाग वाहन गरुड़ ने तार्क्ष्य नाम अपना अवतार रथके साथ दिया है जिसके नख और चोंचही शस्त्रहैं और रथके आगे उड़ता चलता है काल ने दण्डायुध वसुओं ने आयुध और आगारिक ये दो अग्नि ने पिङ्गल यमने दण्ड वरुण ने पाशहस्त कुबेरने विष्णु अश्विनी कुमारों ने काल उपकाल नरनारायण ने वार्ज और प्रधान विश्वेदेवोंने आठों दिशाओं की रक्षाके लिये क्षारद्वार धिषण कृष्ण वैराज शङ्खपाल पर्जन्य और जये आठ दिये हैं सात मातृकाओं ने सात मरुत् वेदों ने ॐकार और वषट्कार शिवजी ने विनायक सब नागों ने मिलकर शेष और वासुकि और हे रुद्र! आपने मोषक नाम अपना गण रथके साथ रक्षाके लिये दिया है ऐसा कोई देवता नहीं जो रथके पीछे न चलै सब इनका सेवन करते हैं इन सूर्य्य नारायण के मण्डल को ब्रह्मवेत्ता ब्रह्मस्वरूप यज्ञ करनेहारे यज्ञविष्णु भक्तविष्णु शैव शिवस्वरूप और गणेशके भक्त गणपति रूप मानतेहैं ये सब स्थान के अभिमानी देवता अपने तेज करके

सूर्य्य नारायणके तेजकी वृद्धि करते हैं देवता और ऋषि स्तुति पढ़ते हैं गन्धर्व गातेहैं अप्सरा रथ के आगे नाचतीहैं ग्रामणी रक्षाकरते हैं सर्प रथको धारते हैं और राक्षस रथ के पीछे २ चलते हैं बालखिल्य नाम साठहजार ऋषि रथको चारों ओर घेरलेते हैं दिवस्पति और स्वभ्र रथ के आगे भर्ग द-हिनी ओर पद्मज बाईं ओर कुबेर दक्षिण दिशा में वरुण उत्तर दिशा में यमराज आगे वीतिहोत्र और हरि रथ के पीछे रहते हैं रथके पीठ में पृथिवी मध्य में आकाश रथकी कान्ति में स्वर्ग ध्वजा में दण्ड ध्वजाग्र में धर्म्म पताका में ऋद्धि वृद्धि श्री और पार्व्वती निवास करती हैं मैनाक पर्व्वत छत्रका दण्ड हिमाचल छत्ररूप होकर सूर्य्य भगवान् के साथ रहते हैं इन देवताओं का बल तप तेज योग और तत्त्व जैसा है वैसेही सूर्य्य भगवान् तपते हैं यही सब देवता तपते हैं वर्षते हैं जीवोंके अशुभ कर्म निवृत्त करते हैं और प्रजाको आनन्द देतेहुये सब भूतों की रक्षाके लिये सूर्य्य नारायण के साथ भ्रमण करते हैं अपने किरणों से चन्द्रमा की वृद्धिकर सूर्य्यभगवान् देवताओं का पोषण करते हैं शुक्लपक्ष में सूर्य्य किरणों करके चन्द्रमा की वृद्धि होती है और कृष्णपक्ष में दे-वता उसको पानकरते हैं अपने किरणों से पृथिवी का रस पीकर सूर्य्यनारायण वृष्टि करते हैं उससे सब ओषधी और अनेक प्रकार के अन्न उत्पन्नहोते हैं जिन से पितर और म-नुष्यों की तृप्ति होती है एक चक्र रथ में बैठ एक दिन में सातद्वीप और समुद्रों करके युक्त पृथिवी के चारों ओर सूर्य्य नारायण भ्रमण करते हैं उस रथ में अति वेगवान् ने रङ्ग के वेदस्वरूप और क्षुधा तथा श्रम से रहित सात

कल्प के प्रारम्भ में लगाये हुये ही प्रलय तक रथ की लि भ्रमण करेंगे एक वर्ष में तीन सौ साठ भ्रमण होते हैं वाल खिल्य ऋषि स्तुति करते हैं अमरावती नाम इन्द्र की पुरी जब मध्याह्न होय उस समय यम की संयमिनी पुरी में सूर्योदय वरुण की सुखानाम नगरी में अर्द्धरात्रि और सोम के विभानाम पुरीमें सूर्य्यास्त होताहै संयमिनी में जब मध्याह्न होय तब सुखा में उदय विभा में अर्द्धरात्रि और अमरावती में सूर्य्यास्त होताहै सुखा में जब मध्याह्न होय उस समय विभा में उदय अमरावती में आधीरात्रि और संयमिनी में सूर्य्यास्त होता है जिस समय विभानगरी में मध्याह्न होय उस समय अमरावती में सूर्य्योदय संयमिनी में अर्द्धरात्रि और सुखानाम वरुण की नगरी में सूर्य्यास्त होता है इस प्रकार मेरुपर्वत की प्रदक्षिणा करते हुये सूर्य नारायण उदय और अस्त करते हैं प्रभात से मध्याह्न पर्यन्त सूर्य्य किरणों की वृद्धि और मध्याह्न से अस्त पर्यंत ह्रास होताजाताहै जहां सूर्य्य उदय होयँ वह पूर्व दिशा और जहां अस्त होयँ वह पश्चिम दिक् होती है एक मुहूर्त्त में भूमि के प्रमाण का तीसवां भाग सूर्य्य चलते हैं दोहज़ार दोसौदो योजन सूर्य्य भगवान् का रथ एक निमेष में चलता है सूर्य्य भगवान् के उदय होतेही इन्द्र पूजा करते हैं मध्याह्न में यमराज अस्त के समय वरुण और अर्द्धरात्रि को सोम पूजनकरते हैं विष्णु शिव रुद्र ब्रह्मा अग्नि वायु निर्ऋति ईशान आदि सब देवता कल्याण के अर्थ सूर्य्यभगवान् का आराधन सदा करते हैं॥

उनचासवां अध्याय॥

सूर्य्य भगवान् के गुण, ऋतुओं में इन के अलग २ वर्ण, वर्णोंका फल॥

रुद्र भगवान् कहते हैं कि हे ब्रह्माजी! आपने सूर्य्यनारायण का बहुत माहात्म्य वर्णन किया जिसके सुनने से हमको बहुत आनन्द मिला अब फिर भी आप उनकाही प्रभाव कथन करें यह रुद्रका वचन सुन ब्रह्माजी कहने लगे कि हे रुद्र! त्रैलोक्य का मूल सूर्य्य हैं देवता असुर मनुष्य इन्द्र चन्द्र ब्रह्मा विष्णु शिव आदि जितने देवता हैं सब में इनकाही तेज है अग्नि में आहुति दीहुई सूर्य्य भगवान् को पहुँचती है वे वृष्टि करते हैं वृष्टि से अन्न होताहै और अन्न से प्रजा का जीवन है सूर्य्य से जगत्की उत्पत्ति और सूर्य्य में ही लयहोता है ध्यान करनेहारे इनकाही ध्यान करते हैं मोक्षार्थी पुरुषोंके लिये ये मोक्ष स्वरूप हैं जो सूर्य्य भगवान् न होयँ तो क्षण मुहूर्त्त दिन रात्रि पक्ष मास ऋतु अयुग वर्ष युग आदि काल विभाग न होय कालविभाग न होने से जगत् का कोई व्यवहार न चलै ऋतुओं का विभाग न होय फिर फल मूल खेती औषधी आदि क्योंकर उत्पन्न होयँ और इनकी उत्पत्ति विना जीवों का जीवन किस विधिहोय इस से इस संसार का मूल सूर्य्य भगवानही हैं सूर्य्य भगवान् बहुत तपैं परिवेष हों और भी किसी प्रकार की विकृति होय तो वृष्टिहोती है वसन्त ऋतु में सूर्य्य भगवान् कपिलवर्ण ग्रीष्म में तप्त सुवर्ण के समान वर्षा में श्वेत शरद् में पाण्डु हेमन्त में ताम्रवर्ण और शिशिरऋतु में रक्तवर्णहोते हैं सूर्य्य भगवान् कृष्णवर्ण होयँ तो जगत् में रोग होय ताम्रवर्ण होयँ तो सेनापति का नाश पीतवर्ण होने से राजकुमार का मृत्यु श्वेतवर्ण

से राजपुरोहित का ध्वंस चित्र और धूम्रवर्ण होने से जगत् में चोर और शस्त्रका भयहोय परन्तु ऐसा वर्ण होने के अनन्तर जो वृष्टिहोजाय तो ये अनिष्ट फल नहीं होते॥

पचासवां अध्याय॥

सूर्य्यनारायण के अभिषेकका वर्णन, रथयात्रा के प्रथम दिनका कृत्य॥

रुद्र पूछते हैं कि सूर्य्यनारायण की रथयात्रा किस काल में और किस विधि से करनी चाहिये और रथयात्रा करनेहारे पुरुष को और जो रथ को खैंचैं रथके साथ जायँ रथ के आगे नृत्य करैं गावैं उनको क्या फल होताहै यह आप लोकहित के लिये वर्णन करैं यह सुन ब्रह्माजी कहने लगे कि हे रुद्र! आपने बहुत उत्तम प्रश्न किया अब हम इसका वर्णन करते हैं आप प्रीति से श्रवण करैं सूर्य्य रथयात्रा और इन्द्रोत्सव ये दोनों जगत् के कल्याण के अर्थ हमने प्रवृत्त किये हैं ये दोनों उत्सव जिस देश में हों वहां कभी राजचोर दुर्भिक्ष आदि उपद्रव नहीं होते इसलिये उपद्रव शान्ति के लिये ये दोनों उत्सव करने चाहिये मार्गशिरकी शुक्ल सप्तमी को घृत करके सूर्य्यनारायण को श्रद्धा से स्नान करावै वह पुरुष सुवर्ण के विमान में बैठ अग्नि लोक को जाय वहां दिव्य भोग भोगै जो पुरुष शर्करा सहित भात मिठाई और चित्र वर्णका भात सूर्य्यनारायण के अर्पण करै वह ब्रह्मलोक पावै जो सूर्य्यनारायण के उबटनालगावै वह सूर्य्यलोक में निवासकरै। पौषशुक्ल सप्तमी को तीर्थों के जल अथवा और पवित्र जल से वेद मन्त्रों करके सूर्य्यनारायण को स्नानकरावै और प्रयाग पुष्कर कुरुक्षेत्र नैमिष पृथूदक रुद्रजट शोण गोकर्ण ब्रह्मावर्त्त कुशावर्त्त बिल्वक नील पर्वत गङ्गाद्वार गङ्गासागर कालप्रिया

मित्रवन माण्डीरवन नक्रतीर्थ रामतीर्थ गङ्गा यमुना सरस्वती सिन्धु चन्द्रभागा नर्मदा विपाशा तापी वेत्रवती गोदावरी पयोष्णी कृष्णा वेणा शतद्रू पुष्करिणी कौशिकी सरयू आदि सब तीर्थ नदी और समुद्रों का उस समय स्मरण करै और दिव्य आश्रम और देवस्थानों को भी ध्यावै इस प्रकार स्नान कराय तीनदिन सात दिन एक पक्ष अथवा महीने भर उस स्नान के स्थानमेंही सूर्य्य नारायण को रक्खै और नित्य भक्तिसे पूजनकरै। माघ कृष्ण सप्तमी को पक्की ईंटों से बनीहुई वेदीपर सूर्य्य नारायण को स्थापन कर हवन ब्राह्मण भोजन वेदपाठ और भांति २ के नृत्य गीत वाद्य आदि उत्सव करावै फिर माघशुक्ल पञ्चमी को एकबार भोजन करै षष्ठी को रात्रिके समय भोजन और सप्तमी को उपवास करै हवन ब्राह्मणभोजन आदि कराय सब को दक्षिणा देकर पौराणिक का भली भांति पूजनकर सुवर्ण के रत्नजटित रथ में सूर्य्य नारायण को विराजमान करै और वह रथ उस दिन मन्दिर के आगेही खड़ा रहै रात्रिको सब जागरण करैं और नृत्य होतारहै दूसरे दिन अर्थात् माघशुक्ल अष्टमी को रथयात्रा करै रथके आगे भांति २ के बाजेबाजैं नृत्य गीत और वेदध्वनि होतीचलै पहिले रथ नगर के उत्तरद्वार पर जाय फिर क्रमसे पूर्व दक्षिण और पश्चिम द्वारों पर भी जाय इस प्रकार रथयात्रा करने से राज्य के सब उपद्रव निवृत्त होते हैं युद्ध में जयमिलताहै सब प्रजा और पशु निरोग रहते हैं रथयात्रा करनेहारे की सन्तान बढ़ती हैं और रथको खैंचने वाले तथा रथके साथ जानेवाले सूर्य्यलोक को जाते हैं॥

इक्यावनवां अध्याय ॥

रथके अङ्गोंका वर्णन व नगर के चारद्वारों पर लेजाने का विधान॥

रुद्र कहते हैं कि हे ब्रह्मा जी ! मन्दिर में स्थापन करीहुई प्रतिमा को किस प्रकार उठावै और रथ में स्थापन करै यह हमको बहुत संशय है क्योंकि उस प्रतिमाकी तो स्थिर प्रतिष्ठा होरही है फिर क्योंकर चलासक्ते हैं यह सन्देह आप निवृत्त कीजिये यह रुद्रका वचन सुन ब्रह्माजी कहने लगे कि संवत्सरके अवयवों करके जो रथ प्रथम हमने वर्णन किया मुख्य तो वहीरथ है उसको देख विश्वकर्म्मा ने सब देवताओं के लिये रथ बनाये विश्वकर्म्मा का बनायारथ पूजन के लिये सूर्य्य भगवान् ने अपने पुत्र मनुको दिया मनुने राजा इक्ष्वाकु को दिया तबसे यह रथयात्रा चलीआती है सूर्य्य भगवान् तो नित्य आकाश में भ्रमण करते हैं इसलिये उनकी प्रतिमा के चलाने में कुछ दोषनहीं ब्रह्मा विष्णु शिव आदि देवताओंकी प्रतिमा स्थापन होने के अनन्तर न उठानी चाहिये सूर्य्य नारायण की रथयात्रा प्रतिवर्ष करै सोने चांदी अथवा उत्तम काष्ठका अति सुन्दर और बहुत दृढ़ रथ बनावै उसके बीच प्रतिमा को स्थापनकर उत्तम लक्षणों करके युक्त अति सुशील घोड़े रथमें जोड़ै और उन घोड़ों को केसर से रँगकर अनेक भूषण पुष्पमाला चामर आदिसे अलंकृत करै इस प्रकार रथको तय्यारकर सब देवताओं का पूजनकर ब्राह्मण भोजन करवाय दक्षिणादे दीन अंध कृपण अनाथों को भोजन आदिसे सन्तुष्ट करै किसीको विमुख न जानेदेवै जो क्षुधाकरके पीड़ित कोई विमुखजाय तो पितरों का अधःपात होता है इसलिये इस सूर्य्य भगवान् के यज्ञमें भोजन

और दक्षिणा से सब को सन्तुष्टकरै और सब देवताओंको इस मन्त्र से बलिदेवै ॥ बलिंगृह्णन्तुमेदेवा आदित्योवसवस्तथा । मरुतोथाश्विनौरुद्रः सुपर्णाः पन्नगा ग्रहाः १ असुरा यातुधानाश्च रथस्था ये तु देवताः। दिक्पाला लोकपालाश्च येचविघ्नविनायकाः २ स्वस्तिकुर्वन्तुजगतो येचदिव्यामहर्षयः । माविघ्नंमाचमेपाप्मामाचमेपरिपन्थिनः॥सौम्याभवन्तुतृप्ताश्च देवा भूतगणास्तथा ३ इन मन्त्रों से बलि देकर वामदेव्य मानस्तोकरथन्तर और आकृष्णेन इत्यादि ऋचा पढ़े । फिर पुण्याहवाचन और अनेक प्रकार के वाद्यों का शब्दकर सुन्दर मार्ग में रथ चलावै जिसमें धक्का न लगै घोड़े न होयँ तो अच्छे बैल रथमें लगावै अथवा पुरुषही उस रथको खैंचैं तीस अथवा सोलह ब्राह्मण प्रतिमाको मन्दिर से उठाकर रथ में बड़ी सावधानी से विराजैं और दोनों ओर सूर्य्य नारायणकी दोनों पत्नियों को स्थापन करै । सदाचार और वेदपाठी दो ब्राह्मण प्रतिमाओं के पिछली ओर बैठैं और प्रतिमाओंको सम्हाले रहैं सारथीभी चतुर होय सुवर्ण दण्ड से भूषित छत्र रथके ऊपर लगावै और अतिसुन्दर रत्नों से जड़े सुवर्ण दण्ड करके युक्त ध्वजा रथपर चढ़ावै जिसमें अनेक रंगों की सात पताका लगी हों रथ के अग्रभाग में सारथि होकर ब्राह्मण बैठै शूद्र कभी रथ को स्पर्श न करै जो शूद्र रथका स्पर्श करै उसकी संतति नष्ट होजाय ब्राह्मण क्षत्रिय और वैश्योंकोही रथके स्पर्श करनेका अधिकार है अपने स्थान से चलकर पहिले नगरके उत्तरद्वारपर रथजाय वहां एक दिन रहै अनेक प्रकार के नाच तमाशे वेदपाठ पुराण की कथा और ब्राह्मण भोजन वहां करावै और ब्राह्मणही सब उत्सव

नवमी के दिन रथ चलकर पूर्व द्वारपर जाय एक दिन रहै वहां क्षत्रिय उत्सव करैं तीसरे दिन दक्षिण द्वार पर रथ रहै वहां वैश्य पूजन और उत्सव करैं चौथे दिन पश्चिम द्वारपर रथ जावै वहां सब शूद्र उत्सव करैं वहांसे नगर के मध्यमें रथ आवै और सम्पूर्ण ब्राह्मण पूजन और उत्सवकरैं उस दिन राजाभी बड़ा उत्सवकरै दीपमाला करावै ब्राह्मणों को दान देवै औ भोजन करावै फिर वहां से अपने मन्दिर में रथ आवै तब सब नगर के लोग मिलकर पूजन और उत्सव करैं और एक दि रात रथ मेंही प्रतिमारहै दूसरे दिन रथ से उतार बड़ी धूम धाम से मन्दिरमें स्थापनकरैं इस प्रकार सप्तमी से त्रयोदशी पर्य्यन्त रथयात्रा होय और चतुर्दशी को अपने स्थान में स्था पनकरैं इस रथयात्रा के करने से सब विघ्न निवृत्त होते हैं।

बावनवां अध्याय ॥

रथके अंगभंग होनेका दुष्ट फल उसकी शांति ग्रहशांति ॥

रुद्र पूछते हैं कि हे ब्रह्माजी ! आप फिर रथयात्राका वर्णन करैं इसके सुनने से हमको परम आनन्द प्राप्त होता है रथ अपने स्थान से किस प्रकार चलै और रथके साथ कौन चलैं यह आप कथन करैं यह सुन ब्रह्माजी कहने लगे कि हे रुद्र ! रथको धीरे २ सम मार्ग में चलावै जिसमें रथ को धक्का आदि न लगे पहिले मार्ग्ग शुद्धिके लिये प्रतीहार और दण्ड-नायक उस मार्ग्ग में जायँ तिसके पीछे सूर्य्यनारायण का रथ और उनकेभी पीछे पिंगलमाठर दण्ड लेखक आदि सूर्य्य-भगवान् के गणों के रथ चलैं ऐसी युक्ति से रथ को लेजाय कि उसका कोई अंगभंग न होय ईषादण्ड टूटै तो ब्राह्मणों को भय होय अक्ष टूटै तो क्षत्रियों को भय तुला भंग होय तो

वैश्यों को और शमीके टूटजाने से क्षत्रियोंको भयहोता है युग के भंग से अनावृष्टि पीठ के भङ्गसे प्रजा भय रथका चक्र टूटने से परचक्र अर्थात् शत्रुकी सेनाका आगमन ध्वजा के गिरने से राजाका भङ्ग और प्रतिमा खण्डित होजाने से राजा का मृत्यु होता है छत्र टूटै तो युवराज को भयहोय जो इन में कोई भी उत्पात होय तो शान्तिकरै और ब्राह्मणों को दानदेवै भोजन करावै और रथके ईशानकोण में वेदी अथवा कुण्ड बनाय घृत और समिधाओं से देवता और ग्रहोंकी प्रसन्नता के लिये हवनकरै और इन मन्त्रों से आहुति देवै॥ स्वस्त्य स्त्विहचविप्रेभ्यः स्वस्तिराज्ञस्तथैवच । गोभ्यः स्वस्तिप्रजा भ्यश्च जगतःशान्तिरस्तुवै १ शन्नोस्तुद्विपदेनित्यं शान्ति रस्तुचतुष्पदे । शंप्रजाभ्यस्तथैवास्तुशंसदात्मनिचास्तुवै २ भूःशान्तिरस्तुदेवेशभुवःशान्तिस्तथैवच । स्वश्चैवास्तुतथा शान्तिः सर्वत्रास्तुगतारवेः ३ त्वंदेवजगतःस्रष्टा त्वष्टाचैव त्वमेवहि । प्रजापालमहेशान शान्तिंकुरुदिवस्पते ४ इन मन्त्रों से हवनकर अपनी जन्मराशिसे दुष्टस्थान में स्थित ग्रहों की प्रीति के लिये समिधा होम करै ये समिधा एक २ प्रादेश लम्बी बनावै सूर्य्य के लिये अर्ककी समिधा चन्द्र के पलाशकी भौमके खदिरकी बुधके अपामार्गकी बृहस्पति के पीपलकी शुक्रके गूलरकी शनैश्चर के शमीकी राहु के दूर्वा की और केतु के हवन के लिये कुशाकी समिधा कल्पना करै उत्तम गौ शङ्ख लालरंग का बैल सुवर्ण वस्त्र श्वेतघोड़ा काली गौ लोहका पात्र और बकरा ये क्रम से नवग्रहों की दक्षिणा है गुड़ और भात घी और खीर हविष्य अन्न खीर दही भात घृत तिल और उड़द के बने पकान्न मांस और चित्रवर्ण क

भात और कांजी ये नवग्रहों के भोजन हैं जिस प्रकार शरीर में कवच पहिन लेने से बाण नहीं लगते इसीप्रकार शान्ति करने से किसी प्रकारका उपघात नहीं होता अहिंसक जितेन्द्रिय नियम में स्थित और न्याय से धन सम्पादन करनेवाले पुरुषके ऊपर ग्रह सदा अनुग्रह करते हैं यश धन सन्तान और सर्वोपद्रव शान्तिके लिये सदा ग्रहोंका पूजन करना चाहिये सन्तानहीन कन्या सन्तानवाली मृतवत्सा और खोटी सन्तान वाली स्त्री सन्तानदोष निवृत्त होने के लिये जिसका राज्य नष्ट होगयाहो वह राज्य के लिये रोगीपुरुष रोगशान्तिके लिये अवश्य ग्रहशान्ति करै सुवर्ण स्फटिक ताम्र चन्दन सुवर्ण चांदी लोहे और सीसे की नवग्रहों की प्रतिमा बनावै अथवा इनके चित्रही लिखलेवै और जिस ग्रहका जो रङ्ग हो उसी रङ्ग के वस्त्र पुष्प चन्दन बलि आदि देवै और गूगलका धूप सबके अर्पण करै आकृष्णेनरजसाइत्यादि मन्त्रों करके एक २ ग्रहके नामसे समिधा घृत शहद और दही करके अट्ठाईस २ आहुति देवै और ब्राह्मणों को भोजन कराय यथाशक्ति दक्षिणा देवै मनुष्यों का उदय और सम्पत्तिका नाश ग्रहों के अधीन है इसलिये ग्रहशान्ति अवश्य करनी चाहिये ग्रहोंका जो पूजन करे उसको ग्रह सब प्रकारका सुख देते हैं और इनका अपमान करे उसको अनेकभांतिका दुःख मिलता है यज्ञ करनेहारे सत्यवादी जप होम उपवास आदि में तत्पर और धर्मात्मा मनुष्यों को ग्रह पीड़ा नहीं दे[illegible] इसप्रकार शान्तिकर फिर रथको चलावै और बाक़ी के [illegible] में घुमाय कर अपने स्थान में पहुँचावै और वहां पहुँच रथमें स्थित देवताओंका पूजन करै उत्पात होने पर ग्रहोंकी भांति रथ में स्थित सब

देवताओं का भी पूजन करै तब सब प्रकार की शांति होय ॥

तिरेपनवां अध्याय ॥

सब देवताओंके बलिद्रव्यका कथन ॥

ब्रह्माजी कहते हैं कि हे रुद्र ! जिन २ देवताओंको जो जो नैवेद्य देना चाहिये वह हम कहते हैं खीर और यवागू ब्रह्मा जीको कार्त्तिकेयको फल यमराज को मद्य और मांस इन्द्र को अनेक प्रकार के भक्ष्य भोज्य अग्निको हविष्य अन्न विष्णु को उत्तम अन्न राक्षसों को मद्यमांस और भात रेवंत को मांस भात प्रेतराज को तिल और भात अश्विनी कुमारों को अपूप वसुओं को मांस और भात पितरों को घी खीर और शहद कात्यायनी को यवागू लक्ष्मी को दही सरस्वती को त्रिमधुर वरुण को इक्षुरस और भात खंड और भात कुबेरको घृत और तक्र मरुतों को मातृकाओं को मांस भात दाल सर्व भूतों को उल्लोपिकानाम पक्वान्न गणपति को बहुत उत्तम मोदक नैर्ऋतिको शष्कुली विश्वेदेवों को सर्व भक्ष्य ऋषियों को दूध भात नागों को दूध सूर्य्य भगवान् को नानाप्रकार की बलि सूर्य्य के वाहनों को घृत और सुरा ब्रह्माको घृत रुद्र को तिल भास्कर को देवदारु इन्द्र को राजवृक्ष विष्णु को सप्त धान्य वायु को मत्स्य और भात यक्षों को अनेक प्रकार के अन्न विकंकत वृक्ष के पुष्पों की माला यम को कर्णिकार पुष्प अश्विनी कुमारों को लक्ष्मी को कमल चण्डिका को चन्दन सरस्वती को मक्खन विनता को विष अप्सराओं को चमेली के पुष्प वरुण को अग्निमंथ वृक्ष के फूल नैर्ऋतिको फल और मूल कुबेर को बेलके फल मरुतों को कैथ के फल गंधर्वों को द्रव्य वसुओं को कपूर गणाधिप को देवदारु भूतों को

पितरों को पिंडमूल गौओं को यव मातृकाओं को अक्षत विघ्नपति को गूगल ऋषियों को पलाश के पुष्प विश्वेदेवों को मोदक नागों को विष और सूर्य्य नारायण को सब प्रकार के पुष्प धूप और नैवेद्य देवै इस प्रकार प्रातःकाल और सायंकाल के समय सब को बलि देकर शान्ति के लिये ब्राह्मणों को तिल देवै अथवा तिलों का हवन करै और सब देवताओं को देवदारु का धूप देवै कश्यप के अंग से तिल उत्पन्न भये हैं इसलिये परम पवित्र और देवता तथा पितरों के प्रिय हैं तिलों करके स्नान करै और तिलों का दान हवन और भोजन करै तो बहुत फल है इस प्रकार ग्रह और देवताओंका पूजन कर सूर्य्य भगवान् की आरती करै फिर दोनों पत्नियों सहित सूर्य्य नारायण को वेदी के ऊपर स्थापन कर दशदिन पूजा करै इस दशाहिका पूजासे बहुत फल होताहै इस प्रकार पूजनकर अपने स्थानपर स्थापन करै ॥

चौवनवां अध्याय ॥

रथयात्राका फल ॥

ब्रह्माजी कहतेहैं कि हे रुद्रजी ! इस प्रकार जो रथयात्रा करै अथवा दूसरे से करावै वह परार्द्ध वर्षपर्यंत सूर्य्यलोक में निवास करता है और उसके कुल में दरिद्री तथा रोगी नहीं होता जो सूर्यभगवान् को अभ्यंगके लिये घृत समर्पणकरै वह उत्तम लोकपावै गंगा आदि तीर्थों से जल लाकर जो स्नान करावै वह वरुण लोक में निवास करै जो लाल रंग का भात और गुड़ नैवेद्य लगावै वह प्रजापति लोक को जाय जो भक्ति से सूर्यनारायण को स्नान कराय पूजन करै वह सूर्यलोक में निवास करै जो पुरुष रथपर सूर्यनारायण को चढ़ावै रथ के

मार्ग्ग को शुद्धकरै अथवा पुष्प तोरण पताका आदि से अलं-
कृतकरै वे वायुलोक में निवासकरैं जो नृत्य गीत आदि करके
बड़ा उत्सवकरैं वे सूर्यलोक पावैं सूर्यनारायण जब रथ में वि-
राजमान होयँ उस दिन जो जागरण करैं वे धन पुत्र आदि
से सुखीहोयँ जब रथकी यात्रा उत्तर अथवा दक्षिण दिशा
की ओर होय उससमय जो दर्शन करैं वे धन्य हैं जिस दिन
रथयात्रा करै उससे वर्षवें दिन फिर करनी चाहिये यदि वर्ष
के अनन्तर यात्रा न बनपड़े तो बारहवें वर्ष बड़े उत्सव से
यात्राकरै बीच में न करै इसीप्रकार इन्द्रध्वज के उत्सव में
भी यदि विघ्नहोजाय तो बारहवें वर्षमेंही करै जो पुरुष रथ-
यात्राकरैं वे इन्द्र आदि देवता होते हैं और यात्रा में विघ्नकर-
नेहारे संदेहनाम राक्षस हैं इतना कह ब्रह्माजी बोले कि हे
रुद्र ! इसीप्रकार वैशाख में भी रथयात्राकरै रथ में स्थापनकर
प्रथम सूर्यनारायण का अर्च्चन करै पीछे परिवार देवता पूजै
सबको बलिदेवै जो सूर्यनारायण का पूजन विनाकिये और
देवता का पूजन करै वह निष्फल होता है रथयात्रा के स-
मय जो सूर्यनारायण का दर्शन करैं वे निष्पाप होजाते हैं
षष्ठी सप्तमी पूर्णिमा अमावास्या और रविवार के दिन दर्शन
करनेका बहुत पुण्य है आषाढ़ कार्त्तिक और माघकी पूर्णिमा
को भी दर्शन का बहुत फल है ये तीन मास भी रथयात्रा
करने के हैं उससमय जो उपवासकर भक्तिसे पूजन करै वह
उत्तम गतिपावै लोकोंपर अनुग्रह करने के अर्थ प्रतिमा में
स्थितहोकर सूर्य्य नारायण पूजन ग्रहण करते हैं जो पुरुष
केश मुँडवाय स्नान जप होम दान आदि करै वह दीक्षित
होता है सूर्य्यभक्त पुरुष अवश्य केश मुँडवाये रहैं जो

प्रकार दीक्षितहोकर सूर्य्यनारायण का आराधन करैं वे परम गति को प्राप्तहोयँ हे रुद्र ! यह रथयात्रा का विधान हमने कहा है इसको जो पढ़ैं अथवा श्रवणकरैं वे सब रोगों से मुक्त होयँ और इसके करनेहारे सूर्य्यलोक में जायँ ॥

पचपनवां अध्याय ॥

रथसप्तमी के व्रतका विधान फल और उद्यापनविधि ॥

ब्रह्माजी कहते हैं कि हे रुद्र ! माघमहीने के शुक्लपक्षकी षष्ठी को उपवासकरै और सब उपचारों से सूर्य्यनारायण का पूजन करै रात्रिको उनके आगे शयनकरै सप्तमी को प्रभातही उठ स्नान कर भक्तिसे पूजन कर ब्राह्मण भोजन करावै वित्तशाठ्य न करै इस प्रकार एक वर्ष व्रत करके रथयात्रा करै तृतीया को एकभक्त चतुर्थीको नक्त पंचमी को अयाचित और षष्ठीको उपवासकर सप्तमी को पारणकरै सुवर्ण का रथबनाय उसके बीच ताम्रपात्र में पद्मराग मोती नीलम पन्ना मूंगा हीरा आदि रत्नों से जड़ाहुआ पद्म स्थापनकर उसके मध्य में सूर्य्य- नारायण की प्रतिमा को विराजै ध्वजा पताका पुष्प माला घण्टा आदि से रथ को अलंकृत कर आचार्य को देवै जो उपाख्यान सहित सप्तमी कल्प को जानै वह आचार्य्य होता है सुवर्ण का रथ बनानेकी सामर्थ्य न होय तो चांदी का बनावै ताम्र का अथवा काष्ठकाही रथ बनाय पंचरत्न सु- वर्ण रेशमी वस्त्र और ताम्र पात्र सहित आचार्य्य के अर्पण कर ब्राह्मण भोजन करावै हे रुद्र ! यह माघ सप्तमी बहुत उत्तम तिथि है इस दिन कियाहुआ स्नान दान आदि कर्म्म सहस्रगुण होजाता है ब्राह्मण इस व्रतको करै तो देवता होय क्षत्रियकरै तो ब्राह्मणहोजाय वैश्य करै तो क्षत्रिय होय और

शूद्र इस व्रत के करने से वैश्य होजाता है कन्या इस व्रत को करै तो विद्या विनय आदि गुणों करके युक्त पतिपावै विधवा इस व्रत को करै तो फिर किसी जन्ममें वैधव्य न होय अपुत्रा स्त्री को पुत्र मिलै यह रथसप्तमी का फल और विधान हमने कहा इस के श्रवण करने से भी ब्रह्महत्या आदि पातक निवृत्त होते हैं ॥

छप्पनवां अध्याय ॥

राजा शतानीक की करी सूर्य्य प्रशंसा ॥

सुमन्तु मुनि कहते हैं कि हे राजा! इतनी कथा कह ब्रह्माजी अपने लोक को गये और रुद्र भी अपने धाम को जाते भये यह रथसप्तमी का विधान हमने वर्णन किया अब आप और क्या श्रवण किया चाहते हैं यह सुमन्तु मुनि का वचन सुन राजा ने कहा कि महाराज सूर्य्यनारायण का प्रभाव मैं कहांतक कहूँ उन के अनुग्रह से युधिष्ठिर आदि मेरे पितामहों को सब प्रकार के भोजन देनेहारा पात्र मिला जिस से वन में भी ब्राह्मण भोजन कराते रहे उनका माहात्म्य सुनते २ मुझे तृप्ति नहीं होती जिन से सब जगत् उत्पन्न भया दोनों हाथों से ब्रह्मा विष्णु और उन के ललाट से रुद्र की उत्पत्ति भई उनका प्रभाव कौन वर्णन करसक्ता है अब मैं यह श्रवण किया चाहताहूँ कि ऐसा मन्त्र स्तोत्र दान स्नान जप पूजन होम व्रत उपवास आदि कौन कर्म है जिस के करने से सूर्य्यभगवान् प्रसन्नहो सब क्लेश निवृत्त करैं और संसार सागर से मुक्तिहोय वही स्तोत्र मन्त्र रहस्य विद्या पाठ उत्तम है जिस में सूर्य्यनारायण का कीर्त्तनहो वह जिह्वा ध[illegible] है जो सूर्य्यभगवान् की स्तुति करै पूजा [illegible]

ध्यान में तत्पर मन और सूर्य्यनारायण के गुण श्रवण में आसक्त कर्ण सफलहैं जो जिह्वा सूर्यनारायण के गुण न गावै वह केवल रोग के तुल्य हैं अथवा प्रति जिह्वा है सूर्याराधन किये विना यह शरीर वृथा है एक बार भी सूर्यनारायण को प्रणाम करै तो संसार सागर का पारपावै रत्नों का आश्रय मेरु पर्वत आश्चर्यों का आश्रय आकाश तीर्थों का आश्रय गङ्गा और सब देवताओं का आश्रय सूर्यनारायण हैं ये सब कथा बहुत बार मैंने श्रवण करी हैं और देवता भी सूर्यनारायण काही आराधन करते हैं यह भी मैंने सुना है अब मेरा भी यह दृढ़ संकल्प है कि सूर्यभगवान् की उपासना भक्तिसे कर संसार से मुक्त हो जाऊँ॥

सत्तावनवां अध्याय॥

ऋषियों के प्रति ब्रह्माजी का उपदेश करना॥

यह राजा का वचन सुन सुमन्तु मुनि कहने लगे कि हे राजा! जिस प्रकार ऋषियों को ब्रह्माजी ने सूर्यनारायण के आराधन का विधान उपदेश किया है वह हम आप को श्रवण कराते हैं एक समय सब ऋषियों ने ब्रह्माजी से प्रार्थना करी कि महाराज सब प्रकार से चित्तवृत्ति निरोधरूप योग आपने कैवल्यपद देनेहारा कहा परन्तु वह अनेक जन्म में सिद्ध होता है इन्द्रियों को आकर्षण करने हारे विषय दुर्जय हैं मन किसी प्रकार से स्थिरही नहीं होता राग द्वेष आदि दोष छूटतेनहीं और पुरुष सदा अल्पायुष होते हैं तिस में कलियुग के मनुष्य तो अतिही अल्पायुष होंगे इसलिये योग सिद्धिका प्राप्तहोना अति कठिन है ऐसा कोई उपाय आप उपदेश करैं कि विना परिश्रम संसार से नि·

स्तार होय यह मुनियों की प्रार्थना सुन ब्रह्माजी कहने लगे कि हे मुनीश्वरो! ऐसा उपाय तो एक सूर्य्यनारायण का आराधन है यज्ञ पूजन नमस्कार जप ब्राह्मण भोजन आदि से उनकी उपासना करो और मन बुद्धि कर्म दृष्टि आदि सब सूर्यनारायण में तत्पर करो, वेही परब्रह्म अक्षर सर्वव्यापी सर्वकर्त्ता अव्यक्त अचिन्त्य और मोक्ष के देनेहारे हैं इसलिये आप उनका आराधन कर अपने मनोवांछित फलपाय संसार से मुक्त होजाओ यह ब्रह्माजी से सुन सब मुनि सूर्य्यनारायण की उपासना में तत्पर भये हे राजा! संसार के दुःखीजीवों को सुख देनेहारा सूर्य्यनारायण के बिना कोई नहीं है इस लिये उठते बैठते चलते सोते भोजन करते सूर्य्यनारायण का ही स्मरण करो और भक्ति से उनके आराधन में प्रवृत्त होजावो जिससे जन्म मरण आधि व्याधि से छुटो जो पुरुष जगत्कर्त्ता निश्य वरद दयालु और ग्रहों के स्वामी श्रीसूर्य्यनारायणके शरण में प्राप्त होते हैं वे अवश्य भुक्ति और मुक्तिपाते हैं॥

अट्ठावनवां अध्याय॥

तंडीनामक गणके प्रति सूर्य्यनारायणका उपदेश करना॥

सुमन्तुमुनि कहते हैं कि हे राजा! अब हम तण्डीनाम शिवजीके गण और सूर्य्यनारायण का संवाद कहते हैं पूर्वकाल में तण्डी को ब्रह्महत्या लग गई थी उसको निवृत्तकरने के लिये तण्डी ने सूर्य्यनारायण का बहुतकाल आराधन और स्तुतिकरी तब प्रसन्न हो सूर्य्यभगवान् उनके समीप आये और कहा कि हे तण्डी! तुम्हारी भक्ति से हम बहुत प्रसन्न हैं अपना अभीष्ट वर मांगो तब तण्डी ने कहा कि महाराज आपका दर्शन ही दुर्लभ है यह होनेसे हमको अति हर्ष

और आप सबके हृदय में स्थित हैं इससे सबका अभिप्राय जानते हैं हम को ब्रह्महत्या लगी है यह निवृत्त होय और संसार से उद्धार करनेहारा उपाय आप उपदेश करें। जिसके आचरण से जगत् के मनुष्य सुखी होयँ यह तण्डी का वचनसुन सूर्य्य भगवान् ने उनको निर्बीज योगका उपदेश किया तब तण्डी ने कहा कि महाराज यह निष्कल योग अति कठिन है क्योंकि इन्द्रियों को जीतना मन को स्थिर करना अहन्ता और ममता को त्यागना और राग द्वेष से बचना बहुत कष्टसाध्य है ये बातें कई जन्म अभ्यास करने से प्राप्त होती हैं इस लिये ऐसा उपाय बतलाइये कि अनायाससेही फल प्राप्त होय यह तण्डी की प्रार्थनासुन सूर्यनारायण कहते भये कि हे गण नाथ! जो अनायास से मुक्ति की इच्छा होय तो हमारे में मनको आसक्त करो हमारा भक्ति से यजन करो हमको नमस्कार करो हमारी भक्ति करो और सर्व जगत् में हमको व्याप्त समझो तो चित्त चंचल होने पर भी मनोवांछित फल पाओगे सुवर्ण चांदी तांबा पाषाण काष्ठ आदिसे हमारी प्रतिमा बनवाय अथवा चित्रही लिखवाकर अनेक प्रकार के उपचारों से उसका भक्ति करके पूजन करो और चलते फिरते भोजन करते आगे पीछे ऊपर नीचे उसी का ध्यान करो और सुन्दर तीर्थों के जलसे स्नान कराय गन्ध पुष्प वस्त्र भूषण नाना प्रकार के नैवेद्य और जो २ पदार्थ तुम को प्रिय हों सो सब अर्पण करो और जो कभी गान करने की इच्छा होय तो हमारी मूर्त्ति के आगे हमारे गुणानुवाद गाओ कथा श्रवण करने की इच्छा होय तो हमारी कथा सुनो इस प्रकार हमारेमें मनको अर्पण करने से

रागद्वेष आदि नष्ट हुये बिना भी परमपद को प्राप्त होगे सब कर्म हमारे अर्पणकरो यह संक्षेप से हम ने क्रियायोग तुम से कथन किया इस के आचरण से सब दोष ताज़ से छूट मुक्ति भोगी होगे यह सूर्य्यनारायण का वचन सुन तण्डी ने कहा कि महाराज यह अमृत रूप क्रिया योग आप विस्तार से कथन करें क्योंकि आप के विना हमको और कौन पुरुष हित उपदेश करेगा और अति पवित्र यह परमरहस्य हम कहां से पावेंगे यह सुनसूर्य्य भगवान् ने कहा कि तुम चिन्ता मत करो यह सम्पूर्ण क्रियायोग विस्तार से ब्रह्माजी तुम को उपदेश करेंगे और हमारे प्रसाद से तुम ग्रहण करोगे इतना कह त्रैलोक्य दीप श्री सूर्य्यनारायण अन्तर्द्धानभये और तंडी भी ब्रह्माजी के स्थान को जातेभये ॥

उनसठवां अध्याय ॥

तण्डी के प्रति ब्रह्माजी का किया उपदेश ॥

सुमन्त मुनि कहते हैं कि हे राजा शतानीक ! तण्डी ब्रह्मलोक में जाय ब्रह्माजी को प्रणामकर कहते भये कि महाराज हम को सूर्य्यनारायण ने भेजा है आप कृपा कर क्रियायोग हम को उपदेश करें कि जिसको करके हम शीघ्रही सूर्य्यभगवान् को प्रसन्न करें यह तण्डीकी प्रार्थना सुन ब्रह्माजी बोले कि हे पुत्र ! ब्रह्महत्या तो सूर्य्य नारायण का दर्शन करतेही तुम्हारी नष्ट होगई अब जो सूर्य्यनारायण का आराधन करने की तुम्हारी इच्छा है तो प्रथम दीक्षाग्रहण करो क्योंकि दीक्षा विना उपासना नहीं होती अनेक जन्म के पुण्यसे सूर्य्य में भक्तिहोती है जो पुरुष सूर्य्य नारायण से द्वेष रक्खें और ब्राह्मण तथा वेदकी निन्दा करैं उनको अवश्य न

जानो माया के प्रभाव से पाखण्ड में अधम पुरुषों की प्रवृत्ति होती है जब थोड़ासा पाप शेषरहै तब दीक्षाग्रहण की इच्छा होती है इस संसारसागर में डूबते हुये मनुष्यों को हाथ पकड़ कर उद्धार करने हारे एक सूर्य्यनारायण हैं इसलिये हे तण्डी! तुम दीक्षा ग्रहण करके सूर्य भगवान् की उपासना करो जिससे शीघ्रही तुम पर अनुग्रह करैं यह सुन तण्डीने पूछा कि महाराज कैसे मनुष्य दीक्षाग्रहण के अधिकारी होते हैं और दीक्षा ग्रहणकरने के अनन्तर क्या करना चाहिये यह आप अनुग्रह कर वर्णन करैं तब ब्रह्माजी कहनेलगे कि हे तण्डी! मन वचन कर्म करके हिंसा न करै सूर्य्यभगवान् में भक्तिरक्खै दीक्षायुक्त ब्राह्मणों को नित्य नमस्कार करै किसी से द्रोहनकरै सब देवता और सब लोकों को सूर्य्यरूप समझै मनुष्य पक्षी पशु देव वृक्ष पाषाण पिपीलिका आदि जगत् के सब जीव पदार्थ और आत्मा को सूर्य्य से भिन्न न समझै और मन वचन कर्म करके जीवों में पापबुद्धि न रक्खै वह दीक्षा का अधिकारी होता है जो गति सूर्य्यनारायण के आराधन से प्राप्तहोती है वह न तो तप से और न यज्ञकरने से मिलै जो सर्व प्रकार से सूर्य्यनारायण का भक्त हो वह धन्य है उस के अनेक कुलोंका उद्धार होजाता है जो सूर्य्यनारायणकी मूर्त्ति स्थानपर करै वह सूर्य लोक में निवास करै मन्दिर बनावै तो जितने वर्ष मन्दिर खड़ा रहै उतने हजार वर्ष सूर्यलोक में आनन्द भोगै जो निष्काम उपासना करै वह मुक्तिपावै जो उत्तमलेपन सुन्दर पुष्प और अति सुगन्ध धूप नित्य सूर्यनारायण के अर्पण करै वह यज्ञ के फल को प्राप्तहोता है यज्ञ में बहुत सामग्री चाहिये इसलिये दरिद्र मनुष्य यज्ञ नहीं करसक्ते परन्तु भक्ति करके

दूर्वासे भी सूर्यनारायण का पूजन करैं तो यज्ञ से भी अधिक फलपावैं हे तण्डी! गन्ध पुष्प धूप वस्त्र भूषण भांति २ के भोजन फल जो तुमको मिलैं और प्रिय हों वही भक्ति से सूर्य-नारायण को निवेदनकरो तीर्थ के जल दही दूध घृत सहत से स्नान कराओ गीतवाद्य नृत्य स्तुति ब्राह्मणभोजन हवन आदि से भगवान् को प्रसन्न करो परन्तु सब काम भक्ति से करो हमने सूर्य्य नारायणकाही आराधन करके सृष्टि रची है विष्णु उनके अनुग्रह से जगत् का पालन करते हैं और रुद्र उनकी इच्छासे संहार करते हैं उनके तेज से ही राशि नक्षत्र और ग्रह प्रकाशित हैं तुमभी पूजन व्रत उपवास आदि से सूर्यनारायण का आराधन करो जिस से दुःख दूर होयँ॥

साठवां अध्याय॥

उपवासकी विधि पूजनका फल, फलसप्तमी व्रतका विधान॥

तंडीपूछते हैं कि महाराज उपवास करके सूर्य्य नारायण क्यों करप्रसन्न होते हैं और उपवास करनेवाले पुरुषों को कौन कौन पदार्थ त्याज्यहैं और आराधन में क्या २ करना चाहिये यह आप वर्णन करैं यह तण्डी का वचन सुन ब्रह्माजी कहने लगे कि हे गणाधीश! पुष्प आदि करके पूजन करने सेही सूर्य्य नारायण उत्तम फल देते हैं उपवास करने करके तो क्यों न मनोवांछित फल देवें पापों से उपावृत्त अर्थात् निवृत्तहोकर गुणोंके साथ जो निवास करना है उस को उपवासकहते हैं जिसमें सब भोगों का त्यागहै एकरात्रि दोरात्रि तीन रात्रि अथवा नक्त उपवास कर निष्काम हो मन वचन कर्म्म करके सूर्य्य नारायण के आराधन में तत्पर हो वह ब्रह्म-लोकपावै सूर्य्य नारायण का आराधन विनाकिये और [

प्रकार से सद्गति नहीं मिलती इस लिये पुष्प धूप चन्दन नैवेद्य आदि से सूर्य्य नारायण का यजन करो और उनकी प्रसन्नता के लिये उपवास करो जो उत्तम पुष्प न मिलैं तो वृक्षों के कोमलपत्र और दूर्वासे पूजन करो पुष्प पत्र फल जल जो मिलै वही सूर्य्य नारायण के अर्पण करो परन्तु भक्ति रक्खो जो सूर्य्य नारायण के मन्दिर में झाड़ू दे वह धूलि में जितनी कणिकाहों उतने वर्ष स्वर्ग में रहै गोचर्म मात्र भूमि भी जो मन्दिर में मार्जन करै वह उसदिनके किये पापोंसे छुटजाताहै जो गोबर से मृत्तिका करके रंगों करके मन्दिर में लेपन करै वह सूर्य्य लोकमें जाय जो जलसे छिड़काव करै वह वरुण लोक में निवासकरै जो लेपन किये हुये मन्दिर में पुष्प छिड़कावै वह कभी दुर्गति न पावै जो मन्दिर में दीपक प्रज्वलित करै वह सब ऋतुओं में सुख देनेहारा विमान पावै मन्दिर पर ध्वजा चढ़ावै और उसकी पताका वायु से हिलै तो सबज्ञात और अज्ञात पापध्वज चढ़ानेवाले के नष्ट होजायँ जो गीत वाद्य और नृत्यकर के मन्दिर में उत्सव करै वह उत्तम विमान में बैठै और गन्धर्व्व तथा अप्सरा उसके आगे गावैं और नाचैं जो मन्दिर में पुराण बांचै वह उत्तम बुद्धि पावै और जातिस्मर होय सूर्य्य नारायण के आराधन से जो चाहो सो मिलसक्ताहै इनके आराधन से कई मनुष्य गन्धर्व कई विद्याधर और कई देवता बन गये हैं इनके आराधन सेही इन्द्रपद मिलता है ब्रह्मचारी गृहस्थ और वानप्रस्थों के येही उपास्य हैं और संन्यासी भी इनके ही अनुग्रह से मुक्तिपाते हैं क्योंकि ये मोक्ष के द्वार हैं इसप्रकार सबवर्ण और आश्रमों के आश्रय सूर्य्य नारायण हैं हे तण्डी! अब हम काम्य उपवास और फल

सप्तमी का वर्णन करते हैं जिस फलसप्तमी के व्रत करने से सब पाप निवृत्त होयँ और सूर्यलोक मिलै भाद्रपद शुक्ल चतुर्थी को एकबार भोजन कर पञ्चमी को अयाचित व्रत करै फिर षष्ठी को जितक्रोध और जितेन्द्रिय होकर उपवास करै और भक्तिसे सब उपचारों करके सूर्य नारायणका पूजन कर रात्रि को स्थण्डिल के ऊपर शयनकरै सप्तमी को प्रभातही उठ स्नानकर पूजन करै और खजूर नारिकेल आंब मातुलुंग आदि फल नैवेद्य लगावै ब्राह्मणों को देवै और आपभी फल ही खाय जो फल न मिलैं तो चावल अथवा गेहूँ का आटा लेकर उसमें गुड़ मिलाय उसीसे फल बनाकर घीमें उतार लेवे और वेही सूर्य नारायण को नैवेद्य लगावै फिर हवन कर ब्राह्मण भोजनकरावै इस प्रकार एक वर्ष सप्तमी व्रत करके अन्त में उद्यापनकरै गोमूत्र गोबर गोदुग्ध दही घृत कुशा का जल श्वेत मृत्तिका तिल और सरसों का उबटन दूर्वा गौके शृंग धोने का जल और चमेली के पुष्प इनसे स्नानकरै और इनकोही प्राशनकरै और सब प्रकार के फल उत्तम घर जो सब वस्तुओं से पूर्णहो सवत्सागौ ताम्रपात्र लाल रंगके वस्त्र और सुवर्ण के बने हुये फल ब्राह्मणों को देवै दरिद्र होय तो चांदी के अथवा आटा के फल बनाकर देवै सुवर्ण रत्न और वस्त्र आचार्य्य को देवै और ब्राह्मण भोजन कराय व्रत समाप्त करै यह फल सप्तमीका विधान है जो इस व्रत को करै वह पाप दरिद्र और सब प्रकार के दुःखों से छुटै और अन्त में उत्तम विमान में बैठ सूर्य्य लोक को जावै इस व्रत के करने से ब्राह्मण मुक्ति पावै क्षत्रिय इन्द्र लोक में और वैश्य कुबेर के लोक में निवासकरै और शूद्र इस व्रत के

से जन्मान्तर में ब्राह्मण होय अपुत्रा स्त्री पुत्र दुर्भगा सौभाग्य और कन्या इस व्रत से उत्तमवर पावै विधवा इस व्रत को करै तो फिर किसी जन्म में विधवा न होय इस व्रत से सब फल प्राप्त होते हैं और इस माहात्म्यके पढ़ने तथा सुनने से भी सब कार्य सिद्ध होते हैं ॥

इकसठवां अध्याय ॥

व्रतके दिन त्याज्य पदार्थ रहस्य सप्तमी का फल ॥

ब्रह्माजी कहते हैं कि हे तण्डी ! अब हम रहस्यसप्तमी व्रतका विधान कहते हैं जिस व्रत के करने से सात अगले और सात पिछले कुलोंका उद्धार होय नियमसे जो यह व्रत करै वह धन पुत्र आरोग्य विद्या विजय और धर्मपावै नियम ये हैं कि व्रतके दिन तैलको स्पर्श न करै नील वस्त्र न धारै आमले से स्नान न करै और किसीसे कलह न करै नीलवस्त्र पहिनकर जो सत्कर्मकरै वह निष्फल होताहै जो ब्राह्मण एक बार नीलवस्त्र पहिने तो एक उपवास करै और पंचगव्य पानकरै तब वह शुद्ध होताहै नीलका रंग जो रोमकूप में चलाजाय तो तीन कृच्छ्रचान्द्रायण करने से शुद्धि होती है जो भूलकर के नील के काष्ठ से दन्तधावन करै वह दो कृच्छ्रचान्द्रायण करके शुद्धहोय जहां नील एक बार बोयाजाय वह भूमि बारह वर्ष तक अपवित्र रहती है यह तो नीलका दोष है और सप्तमी को जो तैलका स्पर्श करै उसकी प्रिय भार्या नष्टहोजाय इस लिये तैलको भी स्पर्श न करै व्रत के दिन मांस न खाय मद्य न पीवे चण्डाल और रजस्वला स्त्री से सम्भाषण न करै किसी से द्रोह और क्रूरता न करै गीत न गावै नृत्य न करै बाजा न बजावै शव को न देखै वृथा

हँसै नहीं स्त्रीके साथ शयन न करै द्यूत न खेलै रोदन न करै दिनसे सोवे नहीं शिर से जूँ न निकालै असत्य न बोलै दूसरे का अनिष्ट चिन्तन न करै किसी जीवको ताड़न न करै अति भोजन गलियों में घूमना दम्भ शोक शठता और क्रोध इन सबका यत्न से त्याग करै चैत्र से इस व्रतका आरम्भ करै सूर्य्य अर्य्यमा मित्र वरुण इन्द्र विवस्वान् पर्ज्जन्य पूषा भग त्वष्टा और विष्णु ये बारह सूर्य्य हैं इनका क्रम से चैत्र आदि महीनों में पूजनकरै सप्तमी के दिन भोजक को भोजन कराय घृत सहित पात्र और एकमाशा सुवर्ण देवै और रक्तवस्त्रभी देवै यदि भोजक न मिलै तो पौराणिक ब्राह्मण कोही भोजन कराय घृतपात्र और सुवर्ण देवै यह सप्तमी का माहात्म्य हमने वर्णन किया जिसके श्रवण करने से भी सूर्य-लोककी प्राप्तिहोती है हे राजाशतानीक ! इतना कह ब्रह्माजी अन्तर्द्धान भये और तण्डी भी सूर्य्यनारायण का आराधन कर अपने मनोवाञ्छित फलको प्राप्तभये ॥

बासठवां अध्याय ॥

शंख और द्विजका संवाद वसिष्ठ और साम्बका संवाद, याज्ञवल्क्य और ब्रह्माजी का संवाद ॥

राजा शतानीक कहते हैं कि हे सुमन्तु मुनि ! आप और भी सूर्य्यनारायण का प्रभाव वर्णन करें आपका अमृतसमान वचन सुनते २ मुझे तृप्ति नहीं होती यह राजाका वचन सुन सुमन्तु मुनि ने कहा कि हे राजा ! इस विषय में शंख और द्विज का संवाद है हम आपको श्रवण कराते हैं एक अतिरमणीय आश्रम था जिसमें वृक्ष फलों के भारसे झुकरहे थे कहीं मृग अपने शृंगों से परस्पर खुजाते थे किसी ओर मयूरोंका नृत्-

और भृङ्गोंके मधुर ध्वनिका कोलाहल होरहा था ऐसे मनो-
हर आश्रम के मध्य में अनेक तपस्वियों करके सेवित शंख
मुनि विराजमान थे उस अवसर में भोजकों के कुमार उनके
समीप गये और विनय से सब ने प्रार्थनाकरी कि महाराज
वेदों में हमको सन्देह है वह आप निवृत्तकरैं यह उनकी
प्रार्थना सुन प्रसन्नहो शंखमुनि उनको वेद पढ़ानेलगे एक
दिन वे सब कुमार वेद पढ़ते थे उस समय परम तपस्वी द्विज
नाम मुनि वहां आये शंखमुनिने भी उनका बहुत आदर
सत्कारकिया और आसनपर बैठाय कुमारों से कहा कि मान्य
शिष्ट पुरुषके आगमन से अनध्याय होताहै इसलिये तुम
अपना पढ़ना बन्दकरो यह सुनतेही कुमारों ने अपनी २
पुस्तकें बांधलीं द्विजमुनिने शंखसे पूछा कि ये बालक किसके
हैं और क्या पढ़ते हैं यह सुन शंखमुनि बोले कि महाराज ये
भोजकोंके कुमारहैं और कल्पसूत्रसहित चारों वेद सूर्यनारा-
यणके पूजन और हवनका विधान प्रतिष्ठा विधि रथयात्रा की
रीति और सप्तमी तिथिका कल्प ये पढ़ते हैं तब द्विजमुनिने
पूछा कि सप्तमी व्रतका क्या विधानहै सूर्य मन्दिर में गन्ध
पुष्प दीप आदि देनेसे क्या फल होताहै किस व्रत और दान
से सूर्य भगवान् प्रसन्न होते हैं और कौन पुष्प धूप और बलि
देने चाहिये यह सब हमको आप कथनकरैं और सूर्यनारायण
का माहात्म्य भी विशेष करके वर्णनकरैं यह द्विजमुनि का
वचनसुन शंखमुनि बोले कि महाराज साम्ब और वशिष्ठका
संवाद हम वर्णन करते हैं एक समय वशिष्ठजीके आश्रम में
साम्बगये और उनके चरणों में प्रणामकिया वशिष्ठजीने भी
उनका बहुत सत्कार किया और अपने समीप बैठाकर पूछा

कि हे साम्ब ! तुम्हारा सब देह कुष्ठसे फटगयाथा वह क्योंकर अच्छा भया और यह अति उत्तम रूप और तथा अधिकतेज किसकर्म के करने से पाया यहकहो यह वशिष्ठजी की आज्ञा पाय विनय से साम्ब ने कहा कि महाराज सूर्य्य भगवान् का मैंने आराधन किया उससे मुझे उन्हों ने साक्षात् दर्शन दिये और उन से वरभीपाया यह सुन फिर वशिष्ठ जीने पूछा किस विधिसे तुम ने आराधन किया और सूर्य्यनारायणका साक्षात् दर्शन क्योंकर भया तब साम्ब ने कहा कि महाराज आप प्रीति से श्रवण करें मैं सब वृत्तान्त विस्तार पूर्वक वर्णन करताहूँ पूर्वकाल में मैंने दुर्वासामुनि से उपहास्य किया इस लिये उन ने क्रोधकर मुझे शाप दिया कि कुष्ठीहोजा तब मेरे शरीर में कुष्ठरोग हुआ और मैंने अति व्याकुलहो अपने पिता श्रीकृष्ण भगवान् से कहा कि महाराज दुर्वासा मुनि के शाप से मैं कुष्ठरोग करके बहुत पीड़ित हूँ शरीर मेरा गलता है स्वर दबाजाता है पीड़ा से प्राण निकलते हैं अब आपकी आज्ञापाय प्राणत्याग किया चाहता हूँ आपभी कृपाकर यह आज्ञा मुझेदेवें कि मैं इस दुःख से छूटूं यह मेरा दीनवचन सुन पिता ने क्षणमात्र विचारकर कहा कि हे पुत्र ! धैर्यकर घबरा मत धैर्य त्यागने से रोग अधिक सताता है भक्ति से देवताका आराधन करो जिस से सब व्याधि निवृत्त हो यह पिताका वचन सुन मैंने कहा कि महाराज ऐसा कौन देव है कि जिस के आराधन से यह दुष्ट रोग निवृत्तहोय बतावैं तब उनने कहा कि हे पुत्र ! एक समय याज्ञ[illegible] ने ब्रह्मलोक में जाकर ब्रह्माजी को प्रणाम कर [illegible] कि महाराज मोक्षकी इच्छा [illegible]

राधनकरै और अक्षयस्वर्गकी प्राप्ति किसकी उपासना करने से होय यह विश्व किस ने उत्पन्न किया और किस में लीन होताहै यह आप वर्णन करैं यह याज्ञवल्क्य मुनिका प्रश्न सुन ब्रह्माजी ने कहा कि आपने बहुत अच्छीबात पूछी यह प्रश्नसुन हम बहुत प्रसन्न भये अब हम तुम्हारे प्रश्न का उत्तर कथन करते हैं जो देवता अपने उदय के साथही सब जगत् का अन्धकार हरलेता है तीनों लोकों को प्रकाशित करता है अनादि निधन अव्यय शाश्वत अक्षय कर्मसाक्षी सर्व देवता और जगत्का स्वामी पितरों काभी पिता देवताओंकाभी देव जगत् का आधार सृष्टिस्थिति और संहारकरने हारा योगी पुरुष वायुरूप होकर जिस में लीन होजाते हैं जिस के हजार किरणों में देवता मुनि और सिद्ध निवास करते हैं जैसे वृक्षकी शाखाओं में पक्षी जनक व्यास शुकदेव आदि योगी जिस के मण्डल में प्रविष्टभये हैं वे प्रत्यक्ष देवता सूर्य्य नारायण हैं ब्रह्मा विष्णु शिव आदि देवताओं का नाम मात्र श्रवण में आता है सब के दृष्टिगोचर नहींहोते और सूर्य नारायण सब को प्रत्यक्ष हैं इस लिये सब देवताओंसे उत्कृष्ट हैं इस लिये हे याज्ञवल्क्य ! तुम भी सूर्य्यनारायण को छोड़ और किसीकी उपासना मतकरो इस प्रत्यक्षदेव के आराधन से सब फल प्राप्तहोसक्ते हैं यह ब्रह्माजी का वचन सुन याज्ञवल्क्यमुनि बोले कि महाराज आपने बहुत उत्तम उपदेश मुझे किया सूर्य्य नारायण का प्रभाव मैंने पहिलेभी बहुत बार श्रवण किया है जिनके दक्षिणअंग से विष्णु वामसे आप और ललाट से रुद्र उत्पन्न भये हैं फिर कौन देवता उनकी तुल्यता करसक्ताहै और उन के गुण किस से वर्णन कियेजायँ

जिनको एक बार प्रणाम करनेसेही मुक्ति मिलती है अब मैं उन के आराधन का प्रकार सुनना चाहता हूँ कि जिस से संसार सागर का पारपाऊँ कौन से व्रत उपवास दान होम जप आदि करने से सूर्य्य नारायण प्रसन्न होकर समस्त क्लेश हरते हैं यह आप कृपाकर मुझे उपदेश करें यह भक्ति से भरा हुआ याज्ञवल्क्य मुनिका वचन सुन प्रसन्नहो ब्रह्माजी कहनेलगे कि हे याज्ञवल्क्य ! जो सूर्य्य नारायण के आराधन का उपाय तुम पूछतेहो वह हम वर्णन करते हैं एकाग्रचित्तहोकर सुनो आदि अन्त से वर्जित सर्व्व व्यापी परब्रह्म लीला से प्रकृति पुरुषरूपधार संसार उत्पन्न करनेहारा अक्षर सृष्टि के रचनेके समय ब्रह्मा पालन के अवसर में विष्णु और संहार काल में रुद्ररूप धारनेहारा और सब देवोंकर के पूजित सूर्य्य हैं अब हम सूर्य्य नारायण को प्रणाम कर उन के आराधन का अति गुप्तक्रम कहते हैं जो हम को सूर्य्य नारायणने प्रसन्नहो अपने मुखसे कहा है ॥

तिरसठवां अध्याय ॥

सूर्य्यभगवान्का परब्रह्मरूप से वर्णन ॥

ब्रह्माजी कहते हैं कि हे याज्ञवल्क्य ! एक समय हम ने स्तुति करके सूर्य्य नारायण से पूछा कि महाराज वेद और वेद के अंगों में आपकाही प्रतिपादन है शाश्वत अज परब्रह्म स्वरूप आपहैं यह जगत् आपमें स्थितहै चारों आश्रम आप की अनेक मूर्तियों का पूजन करते हैं सब के माता पिता और पूज्य आप हैं फिर आप किस देवता का ध्यान और पूजन करते हैं यह आप हमारा सन्देह निवृत्त करें यह सुन सूर्य्य नारायण हम को कहनेलगे कि हे ब्रह्माजी ! यह अति गुप्त

बात है परन्तु आप हमारे परमभक्त हैं इस लिये वर्णनकरते हैं जो परमात्मा सब भूतों में व्याप्त अचल नित्य सूक्ष्म और इन्द्रियोंकर के अगम्य है जिस को क्षेत्रज्ञ पुरुष हिरण्यगर्भ महान् प्रधान बुद्धि आदि अनेक नामों से पुकारते हैं जो निर्गुण होकर भी अपनी इच्छा से सगुण होजाता है सबका साक्षीहै आप कोई कर्म्म नहीं करता और न कर्म्मफल से लिप्त होताहै जिस परमात्माके हज़ारों शिर नेत्र नासिका कान मुख और हज़ारोंही हाथ पैरहैं जो सब जगत् को आवरणकरके स्थित है सब शरीरों में एकाकी विचरता है शरीर और शुभ अशुभ कर्म्म को क्षेत्र कहते हैं उनके जानने से परमात्मा क्षेत्रज्ञ कहाता है अव्यक्त पुरमें शयन करने से पुरुष बहुतरूप धारनेसे विश्वरूप और सर्वोत्तम होनेकरके महापुरुष कहाताहै वह एकही गुणोंके अनुसार अनेकरूप धारता है जिसप्रकार एकही वायु प्राण अपान आदिरूप धारता है और जिस विधि एकही अग्निके स्थान भेदसे अनेक नाम होजाते हैं इसी भांति परमात्माभी अनेकभेदों से बहुत रूप धारता है जिसप्रकार एक दीपसे हज़ारों दीप प्रज्वलित होजाते हैं इसी विधि एक परमात्मा से सब जगत् उत्पन्न होताहै जब वह अपनी इच्छा से जगत् का संहार करता है तब एकाकी रहजाता है जगत् में कोई स्थावर जंगम पदार्थ नहीं है जो परमेश्वर से हीनहो अर्थात् परमात्मा सब में व्याप्त है उस अक्षय अप्रमेय और सर्वगत परमात्मा से त्रिगुण स्वरूप और सर्वकारण अव्यक्त उत्पन्न भयाहै जिससे बढ़कर कोई दूसरा नहींहै सम्पूर्ण देवता और अनेकमतों में स्थित सब वर्णाश्रम के मनुष्य उस परमात्मा का पूजनकर उत्तम

फल को प्राप्तहोते हैं उसी आत्मस्वरूपपर परमेश्वर का हम ध्यान करते हैं और सूर्य रूप अपने आत्माकाही पूजन करते हैं हे याज्ञवल्क्यमुनि ! यह बात सूर्य भगवान् ने अपने मुख से हम को कथन करी है ॥

चौंसठवां अध्याय ॥

अनेक पुष्प चढ़ाने का जुदा २ फल, मंदिर मार्जन और लेपन करने का फल, दीप आदिका फल, सिद्धार्थ सप्तमी का विधान फल ॥

ब्रह्माजी कहते हैं कि हे याज्ञवल्क्य ! पद्मरूप सूर्य भगवान् को कमल पुष्प और गुग्गुल के धूप से हम पूजते हैं व्योमरूप सूर्य को चमेली के पुष्प और विजयनामक धूप से शिवजी का पूजन करते हैं और चक्ररूप सूर्य भगवान् का नीलकमल और अगुरु धूप से विष्णु भगवान् पूजन करते हैं कस्तूरी सिल्हकनाम सुगन्धि द्रव्य चन्दन अगुरु कपूर नागरमोथा और शर्करा इन सब को मिलाने से विजय धूपहोता है हमने सूर्यनारायण से पूछा कि कौन २ पुष्प आप को प्रिय हैं तब उनने जो २ बताये उनका हम वर्णन करते हैं मल्लिका पुष्प सूर्यनारायण को अपर्ण करने से उत्तम भोग मिलते हैं श्वेत कमलों से सौभाग्य कुटज पुष्पों से अक्षयऐश्वर्य्य मन्दार अर्थात् आक के पुष्पों से कुष्ठरोग का नाश और बिल्वपत्रों करके पूजन करने से लक्ष्मी की प्राप्तिहोती है आक के पुष्पों की माला से धन मिलता है बकुल पुष्पों की माला से कन्या का लाभ पलाश के पुष्पों से अरिष्ट निवृत्ति और अगस्त्य पुष्पों से पूजा करै तो सूर्यनारायण का अनुग्रहहोय करवीर के पुष्प जो सूर्य भगवान् के समर्पणकरै वह उनका गणहोय कमल के हजार पुष्प चढ़ावै

तो सूर्य लोक में निवासकरै उत्तम गंध से लेपनकरै तो सक्षति पावै सूर्य भगवान् के मंदिर को जो मार्जनकर गोबर से लीपै वह सब रोगों से मुक्तहोय और बहुतसा धनपावै और भक्ति करके गेरू से लेपन करै तो बहुत लक्ष्मी पावै केवल मृत्तिकासेही मन्दिर में लेपन करै तो अठारह कुष्ठों से मुक्त होय सब पुष्पों में करवीर के पुष्प और सब विलेपनों में रक्तचन्दन उत्तम हैं इन से अधिक कोई वस्तु सूर्यनारायण को प्रिय नहीं करवीर पुष्पों से जो सूर्यभगवान् का पूजन करै वह संसार के सब सुख भोगकर स्वर्ग में वासकरै मन्दिर में लेपनकर मण्डल बनावै तो सूर्य लोक पावै एक मण्डल बनावै तो धर्महोय दो मण्डल रचने से आरोग्य तीन से अविच्छिन्न संतान चार से लक्ष्मी पांच से धन और धान्य छः से आयुर्बल और यश और सातमण्डल रचने से आयुष् धन पुत्र और राज्यपावै और अन्त में सूर्यलोक को प्राप्तहोय मन्दिर में घृतका दीपक प्रज्वलित करै तो नेत्र रोग न होय महुवे के तेल के दीप से सौभाग्य मिलै तिल तैल के दीप से सूर्यलोक की प्राप्तिहोय पहिले गन्ध पुष्प धूप दीप आदि उपचारों से पूजन कर भांति २ के नैवेद्य लगावै पुष्पों में चमेली और कनेर के पुष्प धूपों में विजय धूप गन्धों में केसर लेपों में रक्तचन्दन दीपोंमें घृतदीप और नैवेद्यों में मोदक सूर्यनारायण को परमप्रिय हैं इनसेही पूजन करना चाहिये पूजन के अनन्तर प्रदक्षिणा और नमस्कार करके हाथ में सिद्धार्थ अर्थात् श्वेत सर्षप का एक दाना और जल लेकर सूर्यभगवान् के सम्मुख खड़ाहो अभीष्ट कामना को हृदय में चिन्तन करता हुआ सिद्धार्थ सहित जलपीवै परन्तु जो

दांतों से स्पर्श नहोय दूसरी सप्तमी को दो दाने श्वेत सर्षपके और जलपानकरै इसी प्रकार सातवीं सप्तमी पर्य्यंत एक २ दाना बढ़ाताजाय और इस मंत्र से अभिमन्त्रण करके पान करै। सिद्धार्थकस्त्वंहिलोके सर्वत्र भूर्यसे यथा। तथा मामपि सिद्धार्थमर्थतःकुरुतांरविः॥ पीछे जप और हवन करै और यह भी विधिहै कि प्रथम सप्तमीको जलके साथ सिद्धार्थ पान करै दूसरी को घृतके साथ आगे सहत दही दूध गोबर और पञ्चगव्यके साथ क्रमसे सातवीं सप्तमी तक पानकरै इसप्रकार जो सर्षपसप्तमी का व्रत करै वह बहुत धन पुत्र और ऐश्वर्य पावै उसके सबअर्थ सिद्धहोयँ और सूर्य्यलोकमें निवासकरै॥

पैंसठवां अध्याय॥

शुभ स्वप्नोंका फल॥

ब्रह्माजी कहते हैं कि हे याज्ञवल्क्य! अबहम स्वप्नका फल कहतेहैं सप्तमीको उपवासकर विधि पूर्वक पूजन जप होम आदि करै और रात्रिके समय सूर्य्य नारायणका स्मरण करता हुवा कुशाकी शय्यापर शयनकरै तब रात्रिको स्वप्नहोता जो स्वप्न में सूर्य्यका उदय इन्द्रध्वज और चन्द्रमाको देखै सको सब समृद्धि प्राप्तहोयँ शङ्ख माला वीणा श्वेत कमल म्बर दर्पण पुत्रकी प्राप्ति देखने से और रुधिर के पान करने ौर श्रवणसे ऐश्वर्य्य होय घृत करके प्लुत प्रजापति के र्शन से पुत्रकी प्राप्ति होय वृक्षपर चढ़ै अथवा अपने सुख महिषी गो अथवा सिंहीका दोहन करै तो ऐश्वर्यपावै ज़ि- की नाभिसे मनुष्य और वानरिकों उनकरके सिंह अथवा र्पकोमारै वह लक्ष्मी पावै सुवर्ण चांदी के पात्र में अथवा क- मलके पत्रमें जो खीरखाय उसको बहुकी प्राप्तिहोय द्यून दान

और युद्ध में जयहोय तो उत्तमहोताहै अग्निको ग्रासकरजाय तो जठराग्निकी वृद्धिहोय अपने अङ्ग प्रज्वलित होयँ और नाड़ियों का वेधहोय तो सम्पत्तिमिलै श्वेतवर्णके वस्त्र पुष्प माला अन्न और पक्षियों का दर्शन श्रेष्ठ है शरीर में विष्ठाका लेपकरै शिर और भुजा अनेक देखपड़ैं अगम्या स्त्री से गमनकरै श्लोक पढ़ै तो शुभहै देवता ब्राह्मण आचार्य गुरु वृद्ध तपस्वी स्वप्नमें जो कुछकहदेवें वह सत्यहोताहै शिर कटजाय अथवा फूटजाय पैरोंमें बेड़ी परजायँ तो राज्य मिलै रोदन करैतो हर्षकी प्राप्तिहोय घोड़ा बैल और श्वेत हाथी के ऊपर निर्भय होकर जो चढ़ै वह राज्यपावै राजाको अथवा कमलको देखैतो लाभहोय ग्रह और ताराओं को ग्रास करै पृथिवीको उलट देवै और पर्वतों को उखाड़ै तो राज्य पावै पेटसे आंत निकल पड़ै और उस करके वृक्षको लपेटै नदी अथवा समुद्र को पान करै पर्वत समुद्र और नदी का लंघन करै तो बहुत ऐश्वर्य पावै सुन्दर स्त्री शरीर में प्रवेशकरै बहुत सी स्त्री आशीर्वाद देवैं शरीर को कृमि भक्षण करै स्वप्न में स्वप्नका ज्ञान होय अभीष्टबात सुनने और कहनेमें आवै और मंगलदायक पदार्थों का दर्शन तथा प्राप्तिहोय तो धन और आरोग्य की प्राप्ति होय जिन स्वप्नोंकाफल राज्य और ऐश्वर्य की प्राप्ति है वे स्वप्न रोगी देखै तो रोग से छूटै इस प्रकार स्वप्न देख प्रभातही स्नान कर राजा ब्राह्मण अथवा भोजकको स्वप्न सुनावै ॥

छाछठवां अध्याय ॥

सप्तमी व्रतके उद्यापनका विधान और फल ॥

ब्रह्माजी कहते हैं कि हेयाज्ञवल्क्य! सप्तमीकाव्रतकर दूसरे

देन स्नान पूजन जप हवन आदि करके भोजक पुराणवे-
त्ता और वेद के जाननेहारे ब्राह्मणों को भोजन करावै रक्तव-
स्त्र दूध देनेवाली गो उत्तम भोजन और जो २ पदार्थ अपनेको
प्रियहोवें सब भोजक को देवै भोजक न मिलै तो पौराणिक को
और पौराणिक न प्राप्तहोय तो सामवेद के जाननेहारे ब्राह्मण
को सब वस्तु देवै भोजन भी पहिले भोजक को करावे पीछे
पौराणिक और वेद पाठियों को करावै इस प्रकार भक्ति से
सातसप्तमी करै तो अनन्त सुखपावै और दश अश्वमेधके फल
को प्राप्त होय कोई ऐसा कार्य नहीं जो इस व्रत के करने से
सिद्ध न होय कुष्ठ आदि रोग इस व्रत से ऐसे डरते हैं जैसे
गरुड़ से सर्प व्रत नियम और तपकरके इस प्रकार सात स-
प्तमी व्रत करै वह विद्या धन पुत्र भाग्य आरोग्य और धर्म
पावै और अन्त में सूर्य्यलोक को जाय इस विधि को जो श्र-
वण करै अथवा पढ़ै वह भी सूर्यनारायण में लीनहोजाय यह
पुराण जिन २ देवता और मुनियों ने सुना वे सब सूर्य्यना-
रायण के भक्तहोगये यह आर्ष आख्यान हम ने कहा है इस
को सूर्य्यभक्त के विना दूसरे पुरुष के आगे न कहना जो पु-
रुष इस आख्यान को सुनै और जो सुनावै वे दोनों सूर्य लोक
को जायँ रोगी इस को श्रवण करै तो रोग से मुक्तहोय यह
पढ़ कर यात्राकरै तो मार्ग में कोई क्लेश न होय और यात्रा
सफल होय गर्भिणी स्त्री सुनै तो सुख से पुत्र जनै वन्ध्या
सुनै तो सन्तान पावै हे याज्ञवल्क्य ! यह सब कथा सूर्य्यना-
रायण ने हमको कही और हमने तुमको श्रवणकराई है अब तुम
भी भक्ति से सूर्य्य भगवान् का आराधन करो जिससे सर्वपातक
निवृत्तहोवैं वह द्वादशात्मा सूर्य्यनारायणही जगत् का माता

पिता बन्धु और गुरू हैं वह सदा तुम्हारे ऊपर अनुग्रह करै॥

सरसठवां अध्याय॥

सूर्यनारायण का स्तोत्र और उसका फल॥

ब्रह्माजी कहते हैं कि हे याज्ञवल्क्य! जिन नामों से सूर्य्य भगवान् प्रसन्न होते हैं वे नाम हम आप को उपदेश करते हैं। नमःसूर्य्यायनित्याय रवयेऽर्काय भानवे। भास्करायपतङ्गाय मार्त्तण्डाय विवस्वते १ आदित्यायादिदेवाय नमस्ते रश्मिमालिने। दिवाकरायदीप्ताय अग्नयेमिहिरायच २ प्रभाकराय मित्राय नमस्ते दितिसम्भवे। नमोगोपतयेनित्यं दिशां च पतये नमः ३ नमोधात्रेविधात्रेच अर्य्यम्णे वरुणाय च। पूष्णेभगाय मित्राय पर्जन्यायांशवेनमः ४ नमो हेमद्युते नित्यं धर्मायतपनायच। हरायहरिताश्वाय विश्वस्यपतये नमः ५ विष्णवे ब्रह्मणेनित्यं त्र्यम्बकाय तथा नमः। नमस्ते सर्वलोकेश नमस्ते सप्तसप्तये ६ एकस्मैहिनमस्तुभ्यमेकचक्ररथाय च। ज्योतिषांपतये नित्यं सर्वप्राणभृते नमः ७ हिताय सर्वभूतानां शिवायार्त्तिहराय च। नमः पद्मप्रबोधाय नमोद्वादशमूर्त्तये ८ गाधिजायनमस्तुभ्यं नमस्तारासुताय च। धिषणायनमोनित्यं नमः कृष्णायनित्यदा ९ भौमजाय नमस्तुभ्यं पावकायच वैनमः। नमोस्त्वदिति पुत्राय नमोलक्ष्म्यायनित्यशः १०॥ हे याज्ञवल्क्य! सृष्टि रचने के समय सूर्य्यनारायण के ये नाम हमने कहे हैं जो इन को सायङ्काल और प्रातःकाल पढ़ै वह हमारी भाँति सब मनोवांछित फल पावै इनके पाठ से धर्म अर्थ काम आरोग्य राज्य और विजय पावै बन्धन में होय तो छुटजाय और सब पापों से मुक्तहोजाय यह परम रहस्य हम ने कहा है॥

अरसठवां अध्याय ॥

जम्बूद्वीप में सूर्य के स्थानोंकाकथन, साम्बके प्रति दुर्वासामुनि का शाप ॥

सुमन्तु मुनि कहते हैं कि हे राजा शतानीक! इस प्रकार ब्रह्माजी से उपदेश पाय याज्ञवल्क्य मुनि ने सूर्य्य भगवान् का आराधन किया और सालोक्य मुक्तिपाई इस लिये आप भी सूर्य्यनारायण का आराधनकर परमपद पाओ जो देवताओं को भी दुर्लभ है यह सुन राजाने पूछा कि महाराज जम्बूद्वीप में सूर्य्यनारायण का स्थान कहां है जहां आराधन करने से शीघ्रही मनोवांछित फलपावे राजा का बचन सुनि मुनि कहने लगे कि हे राजा! इस द्वीप में तीन स्थान सूर्य्यनारायण के मुख्य हैं एकइन्द्रवन दूसरा मुंडार और तीसरातीनों लोकों में प्रसिद्ध कालप्रिय नामक स्थान है एक स्थान इस द्वीप में चन्द्रभागा नदी के तटपर और भी है जिस को साम्ब पुर कहते हैं जहां साम्ब की भक्ति से लोकानुग्रह केलिये सूर्य्यनारायण मित्र रूप से निवासकरते हैं और जो भक्तिसे पूजनकरै उसको ग्रहण करते हैं यह सुमन्तुमुनि से सुने राजाशतनीक ने पूँछा कि महाराज वह साम्ब कौन था और किस का पुत्र था सूर्यभगवान् ने उस के ऊपर क्योंकर अनुग्रह किया यह आप कृपाकर वर्णन करैं यह राजा का वचन सुन सुमन्तु मुनि कहने लगे कि द्वादश आदित्य जगत् में प्रसिद्ध हैं उन में से विष्णुनाम आदित्य श्रीकृष्णरूप से जगत् में उत्पन्न भये उनकी जाम्बवती नाम भार्यासे साम्बनाम पुत्र भया वह पिता के शाप से कुष्ठी होगया तब सूर्य्यनारायण का आराधन कर रोग से मुक्तभया उसी ने अपने नाम से नगर बनाय उस में सूर्यनारायण का स्थापन किया है राजा ने पूछा कि महाराज

ऐसा कौन अपराध साम्ब से बन पड़ा कि पिता ने दारुण शापदिया थोड़े से अपराधपर तो पिता पुत्र को शाप नहीं देता तब सुमन्तु मुनि बोले कि हे राजा! वृत्तान्त हम विस्तार से वर्णन करते हैं सावधान होकर सुनो एक समय वसन्तऋतु में रुद्र के अवतार दुर्वासा मुनि तीनों लोक में विचरते हुये द्वारका में गये उस समय साम्ब ने उन को देखा कि जटाधारे हैं शरीर कृश है नेत्र पिंगल हैं मुख अति कुरूप है यह देख अपने रूप को अभिमान से साम्ब ने दुर्वासा मुनि का अनुकरण अर्थात् नकल करी उन के मुख के तुल्य अपना मुखभी विकृत बनाकर उन्हीं की भांति चलनेलगा यह देख और साम्ब को रूप तथा यौवन का अति गर्वजान क्रोधस कांपते हुये दुर्वासा मुनि ने कहा कि हे साम्ब! हम को कुरू देख और अपने को अति रूपवान् जान तैंने हमारा अनुकरण किया इस लिये बहुत शीघ्र तू कुष्ठी होजायगा ॥

उनहत्तरवां अध्याय ॥

अपनी रानियों को और अपने पुत्र साम्ब को श्रीकृष्णचन्द्र का शाप

सुमन्तु मुनि कहते हैं कि हे राजा! इसी प्रकार नारदमुनिभी सब ऋषियों को साथले श्रीकृष्णभगवान् के दर्शन के लिये कभी २ द्वारकामें जाया करते जब नारदजी वहांजाते तब प्रद्युम्नआदि यादवकुमार पाद्य अर्घ्य से उनका पूजन करते परन्तु भावी के बस से और रूप के गर्व से साम्ब कभी उनकासत्कार नहीं करता सदा अवज्ञाही करता और खेलमें लगा रहता उसका यह अविनय देख नारद मुनिने अपने मनमें विचार किया कि यह सदा हमारा अनादर करता है इसलिये इसका गर्व दूरकरना चाहिये यहमनमेंठान श्रीकृष्णभगवान्के समीप

गये और उनसे एकान्त में कहा कि यह आप का पुत्र साम्ब अतिरूपवान्है इसके तुल्य दूसरापुरुष त्रैलोक्यमें नहीं इसलिये आपकी सोलहों हजार रानी इस पर मोहित हैं और दिन रात इसकी इच्छा रखती हैं यह नारदकी वाणी सुन श्रीकृष्णभगवान्ने विचार किया कि स्त्रियों को कुछ विवेक तो होताही नहीं है रूपवान् पुरुषको देख अवश्य उनका चित्त चञ्चल होजाताहै इस लिये इस बातका निश्चयकर व्यभिचारदोष से स्त्रियों की रक्षा करनी चाहिये यह मनमें विचार नारद मुनिसे कहा कि आपके वचनका हमको निश्चय क्यों कर होय तब नारद जीने कहा कि अच्छा हम कभी निश्चय करा देवेंगे इतना कह वहां से चल दिये कुछ कालके अनन्तर फिर द्वारका में आये तब सब ऋतुओं के पुष्पों करके अलंकृत कमलों से परिपूर्ण वापियों करके शोभायमान अनेक उत्तम पक्षियों के मधुर शब्दों से मनोहर रैवतक पर्वत के वनमें अपनी सब रानियों समेत श्रीकृष्णचन्द्र वनविहार करते थे वनविहारके अनन्तर जलक्रीड़ाकरी पीछे मनोहर वृक्षों के नीचे बैठ अतिरूपवती और अनेक उत्तम २ वस्त्र भूषणों से अलंकृत अपनी रानियों समेत मदिरा पान करनेलगे उस उत्तम मदिरा के पान से सब स्त्री मत्त होगईं इस अवसर में नारदजीने साम्बसे कहा कि तुम को श्रीकृष्णचन्द्र बुलाते हैं यहां वृथा क्यों बैठेहो यह नारद जी से सुन साम्ब श्रीकृष्णभगवान् के समीप गया और प्रणामकर सम्मुख खड़ा भया परन्तु नारद का छल न समझा उन सब स्त्रियों ने भी साम्ब को उस अवस्था में देखा और उसका रूप और यौवन देख उनका चित्त चञ्चल हुआ मद्य पानसे लज्जा नहीं रहती और रूपवान् पुरुषको देख रि-

की योनि में क्लेदन होताहै उत्तम वारुणी का पान स्वादिष्ठ मांस का भोजन मनोहर सुगन्धित द्रव्य का शरीर में लगाना और अच्छे २ वस्त्र भूषण पहिनना इनसब से काम का उद्दीपन होता है इस लिये जो पुरुष स्त्री का पातिव्रत्य चाहै तो मदिरापान से उसको बचावै इस अवसर में साम्ब को पहिले भेज पीछे नारद मुनि भी वहां आये नारद को देख मद से विह्वलहुईं वे स्त्री सब उठीं और मुनि को प्रणाम किया श्रीकृष्णभगवान् ने भी देखा कि साम्ब को देख सब का वीर्यस्खलितहुआ है और वस्त्रों को भेदनकर उनके आसनों पर गिराहै यह देख श्रीकृष्ण भगवान् ने शाप दिया कि तुम्हारा चित्त हमको छोड़ दूसरे पुरुष में आसक्त हुआ इस लिये तुमको पतिलोक की और स्वर्ग की प्राप्ति न होगी और अन्त में चोरों के वश पड़ोगी सुमन्तु मुनि कहते हैं कि हे राजा! उसी शाप से श्रीकृष्णभगवान् के वैकुण्ठ जाने के अनन्तर उन सब स्त्रियों को अर्जुन के देखते २ चोर हर लेगये और उनमें जो रुक्मिणी सत्यभामा जाम्बवती आदि दृढ़चित्तथीं वे इस शापसे बचीं इस प्रकार सब स्त्रियों को शाप देकर साम्ब को भी शाप दिया कि तेरा अतिरूप देख इनको क्षोभ हुआ इस लिये तू कुष्ठी होजा यह पिताका वचन सुन हँसकर साम्ब ने कहा कि महाराज मेरा तो कुछ दोष नहीं मेरा चित्त तो स्थिरहै इसी अवसर में दुर्वासा मुनि का भी साम्ब को शापहुआ और साम्बनेही फिर भी दुर्वासा से छेड़करी तब उनके शापसे लोहका मूसल उत्पन्न भया जिससे सब यादववंश का क्षय हुआ इस लिये बुद्धिमान् पुरुष देवता गुरु ब्राह्मण आदिकी अवज्ञा न करैं सदा इनके आगे नम्रही

रहैं हे राजा ! दो श्लोक ब्रह्माजी ने महादेवजी के सम्मुख पढ़े थे क्या वे आपने नहीं सुने हैं ॥ यो धर्मशीलो धृतिमानरोषी विद्याविनीतोनपरोपतापी । स्वदारतुष्टः परदारवर्ज्जी न तस्य लोके भयमस्ति किंचित् १ न तथा शशी न सलिलं न चन्दनं नैव शीतलछाया । प्रह्लादयन्तिपुरुषं यथाहितामधुर भाषिणीवाणी २ अर्थ जो पुरुष धर्मात्मा धैर्यवान् क्रोधरहित विद्याविनीत दूसरे को सन्ताप नहीं देनेहारा अपनी स्त्री से संतुष्ट और परनारी से विमुख हो उसको जगत् में कुछ भी भय नहीं होती है पुरुषों को चन्द्रमा चन्दन शीतलजल और ठंढीछाया से भी ऐसा आह्लाद नहीं होता जैसा हित और मीठे वचन सुनने से होता है हे राजा ! इसप्रकार श्रीकृष्ण-चन्द्र के और दुर्वासामुनि के शापसे साम्ब को कुष्ठ भया और फिर भी सूर्यनारायण का आराधन कर रूप और आरोग्य साम्ब ने पाया तबहीं अपने नामका नगर बसाय सूर्य्य भगवान् का स्थापन किया ॥

सत्तरवां अध्याय ॥

सूर्यनारायण की द्वादश मूर्त्तियों का वर्णन ॥

राजाशतानीक पूछते हैं कि महाराज जो चन्द्रभागा नदीके तटपर साम्ब ने सूर्यनारायण को स्थापन किया तो वह स्थान प्राचीन ठहरा फिर आप उसका इतना माहात्म्य क्योंकर कहते हैं यह राजाका संदेह सुन सुमन्तुमुनिने कहा कि हे राजा ! स्थान तो सूर्यनारायणका वहां सनातन है साम्बने पीछे स्थापन किया है इसका हम विस्तार से वर्णन करते हैं प्रीति से सुनो उस स्थान में परब्रह्मस्वरूप जगत् के स्वामी श्रीसूर्यनारा-

ने मित्ररूप से तप किया है और सब देवता तथा मनुष्यों को सिरजकर आपभी बारह रूपधार अदिति के गर्भ से उत्पन्नभये इसी से आदित्य कहाये इन्द्र धाता पर्जन्य पूषा त्वष्टा अर्यमा भग विवस्वान् अंशु विष्णु वरुण और मित्र ये बारह सूर्य्यभगवान्की मूर्त्तिहैं इन्होंने सब जगत् व्याप्त कररक्खा है इनमें से पहिली इन्द्र नामक मूर्त्ति देवराज में स्थित है और सब दैत्य दानवोंका संहारकरती है दूसरी धाता नामक मूर्त्ति प्रजापति में स्थित होकर सृष्टि रचती है तीसरी पर्जन्यनाम मूर्त्ति किरणों में स्थितहोकर अमृत वर्षती है चौथी पूषानाम मूर्त्ति मन्त्रों में स्थित होकर प्रजाओं का पोषण करती है पांचवीं त्वष्टानाम मूर्त्ति वनस्पति और ओषधियों में स्थितहै छठीमूर्त्ति प्रजाका संवरण करने के लिये पुरों में स्थित है सातवीं भगनाम मूर्त्ति पृथिवी में और पृथिवी के धर्म्मों में स्थित है आठवीं विवस्वान् नाम मूर्त्ति अग्नि में स्थितहै और जगत्का नेत्ररूप है नहीं अंशुनामक मूर्त्ति सूर्य में स्थित है और जगत्का आप्यायन करती है दशवीं विष्णु नामक मूर्त्ति दैत्योंका नाश करनेके लिये सदा अवतारलेती है ग्यारहवीं वरुणनाम मूर्त्ति जगत्का जीवन करती है और समुद्र में उसका निवास है इसी से समुद्रको वरुणालय कहते हैं और बारहवीं मित्र नामक मूर्त्ति लोकोंपर अनुग्रह करने के अर्थ चन्द्रभागा नदी के तटपर विराजमान है यहां सूर्य्य नारायण ने वायु भक्षण करके तप किया है मित्ररूपसे यहां स्थित है इससे इस स्थानको मित्रपदभी कहते हैं यहांही साम्बने सूर्य्यनारायणका आराधन कर मनोवाञ्छित फल पाया है जो पुरुष भक्तिसे सूर्य्यनारायणको प्रणाम करै और

भक्ति से उन के आराधन में प्रवृत्तहों वे सूर्य्य लोकमें निवास करते हैं ॥

इकहत्तरवां अध्याय ॥

नारदजीके प्रति साम्बका प्रश्न ॥

राजा शतानीक पूछते हैं कि हे सुमन्तुमुनि! साम्बको सूर्य्य नारायण का आराधन किस ने बताया और शाप के अनन्तर साम्बने अपने पिता श्रीकृष्णचन्द्र से क्या कहा यह आप कथनकरैं यह सुन सुमन्तुमुनि कहनेलगे कि हे राजा! शाप के अनन्तर साम्ब ने अपने पिता से कहा कि महाराज आपकेबुलाने से मैं यहां आया और कुछ मैंने अपराधभी नहीं किया फिर आपने ऐसा घोर शाप मुझे किसलिये दिया अब आप मेरे ऊपर अनुग्रहकरैं कि इस विपत्तिसे छूटूं यह साम्बका दीन वचन सुन और साम्बको निरपराध जान श्रीकृष्ण भगवान् ने कहा कि हे पुत्र! भयासो भया अब तुम सूर्य्य नारायण का आराधनकरो जिस से यह तुम्हारा क्लेश निवृत्तहोय हम ने यहभी जाना कि नारदजी ने क्रोधकर के तुम को यहां भेजा है अब तुम नारदजी को प्रसन्न कर उनसेही सूर्य्य नारायण के आराधनका विधान सीखो वेभी अनुग्रहकर तुम को सिखावैंगे यह पिता का वचन सुन अति विकल और शोकातुर हुआ साम्ब नारदमुनि के ढूँढ़ने में लगा एक दिन नारदजी द्वारका में श्रीकृष्ण भगवान् के मिलने को आये तब साम्बने जाय नम्रता से उनके चरणोंपर प्रणाम किया और हाथजोड़ प्रार्थना करी कि महाराज आप ऐसा उपाय मुझे उपदेश करें कि जिस से मेराशरीर आरोग्यहोय और यह दुःख यह सुन नारदजी ने कहा कि सब देवता जिसका पूज

स्तुति करते हैं उस का तुम भी पूजन करो तब तुम्हारा रोग निवृत्तहोय तब साम्ब ने पूछा कि महाराज देवता किस का पूजन और स्तुति करते हैं आपही कहैं कि मैं उसी के शरण जाऊँ यह पिताकी शापाग्नि मुझे दग्धकरे डालती है ऐसा कौन देवताहै जो करुणाकरके इस विपत्ति से मुझे छुटावै यह साम्ब का अति दीन वचन सुन नारदजी बोले कि सब देवताओं के पूज्य स्तुत्य और वन्दनीय सूर्यनारायण हैं हे साम्ब ! अब हम सूर्यनारायणका प्रभाव वर्णन करते हैं॥

बहत्तरवां अध्याय॥

नारदका कहाहुआ सूर्यनारायण का प्रभाव, साम्बकाप्रश्न॥

नारदजी कहते हैं कि हे साम्ब ! किसीसमय हम सब लोकों में विचरते हुये सूर्यलोक में पहुँचे वहां देखा कि देवता गन्धर्व नाग यक्ष राक्षस और अप्सरा सूर्य नारायणकी सेवा में तत्पर होरहे हैं गन्धर्व गाते हैं अप्सरा नृत्य कररही हैं राक्षस यक्ष और नाग शस्त्र धारण किये रक्षा के लिये खड़े हैं ऋग्वेद यजुर्वेद और सामवेद शरीरधारे स्तुति कररहे हैं तीनोंसंध्या मूर्तिधारणकर हाथों में वज्र और बाण लिये सूर्य नारायण के और पास खड़ी हैं पहिली सन्ध्या रक्तवर्ण है मध्य सन्ध्याचंद्र के तुल्य श्वेतवर्ण और तीसरी सन्ध्याका वर्ण भौमग्रह के समान है आदित्य वसु रुद्र मरुत् अश्विनीकुमार आदि सब देवता तीनकाल उन का पूजन करते हैं ऋषि स्तुति पढ़ते हैं इन्द्र सदा जय शब्द करते रहते हैं अम्बुजाकार सूर्य भगवान् को प्रभात होतेही ब्रह्माजी पूजते हैं चक्ररूप को मध्याह्न में विष्णु भगवान् और आकाशरूप को सायंकाल के समय रुद्र भगवान् यजन करते हैं गरुड़का बड़ाभाई अरुण

उनका सारथी है कालके अवयवों से उनका रथ बनाहै हरे रंगके छन्दोरूप सातघोड़े उस रथमें लगे हैं राज्ञी और निक्षुभा नामक दो भार्या सूर्यनारायण के दोनों ओर बैठी हैं और भी देवता हाथजोड़े चारोंओर खड़े हैं पिंगल लेखक कल्माषपक्षी माठर दण्डनायक आदि गण आगे पीछे सेवा में स्थितहैं ब्रह्मा आदि सबदेवता और ग्रह स्तुति कररहे हैं ऐसा प्रभाव सूर्यनारायण का हमने देखा इससे जाना कि वेही सब देवताओं के पूज्य हैं इसलिये हे साम्ब! तुमभी उनकी शरण में जाओ यह नारदजी का वचन सुन सांब ने पूछा कि महाराज भलीभांति में श्रवण किया चाहताहूं कि सूर्यनारायण सर्वगत क्योंकर हैं उनके किरण कितने हैं मूर्त्ति कै हैं राज्ञी और निक्षुभा नाम उनकी भार्या कौनहैं पिंगल लेखक और दण्डनायक क्या काम करते हैं कल्माषपक्षी कौन है यह सब शास्त्र के अनुसार ठीक २ वर्णन करें जिससे मैंभी सूर्यनारायणका प्रभाव जान उनके शरणागत होजाऊं॥

तिहत्तरवां अध्याय॥

नारदकृत प्रकृति पुरुष वर्णन॥

नारदजी कहतेहैं कि हे साम्ब! अब हम विस्तार पूर्वक सूर्य नारायणका वर्णन करते हैं तुम प्रीति से श्रवण करो जगत् का कारण सदसदात्मक है जिसको अव्यक्त प्रधान और प्रकृतिभी कहते हैं गन्धवर्ण रससे हीन शब्द स्पर्शादि रहित अनाद्यंत अज सूक्ष्म अनाकार और अविज्ञेय पुरुष है उस ने यह सब जगत् व्याप्त कररक्खा है वह पुरुष जो जो इच्छा करता है सो सो सब अव्यक्त से उत्पन्न होता है वही पुरुष सृष्टि के समय चतुर्मुख ब्रह्मा बनता है प्रलय के समय क

रूप और पालन के समय विष्णुरूप ग्रहण करता है ये तीन अवस्था तीनगुणों के अनुकूल पुरुषकी हैं वही हिरण्यगर्भ है सबके आदि में होने से आदित्य न उत्पन्न होने से अज महान् होने से महादेव लोक का अधीश होने से ईश्वर बृहत् होने से ब्रह्मा उत्पन्न होने से भव प्रजा के पालन से प्रजापति पुर में शयन करने से पुरुष किसी से भी न उत्पन्न होने से स्वयंभू और हिरण्य अर्थात् सुवर्ण के अण्ड में रहने से हिरण्यगर्भ वही परमात्मा कहाता है जल का नाम नार है नारमें निवास करने से नारायण कहाताहै अरु यह शीघ्रता वाचक अव्यय है समुद्र रूप होजाने से जलों में शीघ्रता नहीं रहती इसी से उनको नार कहते हैं प्रलय के समय सब स्थावर जंगम नष्ट होजाते हैं सम्पूर्ण जगत् एकार्णव होजाता है तब वह पुरुष नारायण रूप से उस समुद्रमें शयन करता है सहस्र शिरों करके युक्त सहस्र भुजा सहस्रही नेत्र चरण और मुखों करके युत वह पुरुष है वही देवताओं में प्रथम देवता और जगत्की रक्षा करनेहाराहै॥

चौहत्तरवां अध्याय॥

सूर्यभगवान्कीउत्पत्ति, किरणोंका वर्णन और सर्वव्यापकत्व कथन॥

नारदजी कहते हैं कि हे साम्ब! हजार युगकी अपनी रात्रि बिताय कर प्रभातहोतेही सृष्टि रचनेकी इच्छा उस पुरुषको भई तब उस ने जल में मग्नहुई भूमिको वराह रूप धार उद्धार किया और ब्रह्मावन सृष्टि रचनेलगा पहिले अपने तुल्य और अत्यन्त सौम्य दशपुत्र मन से उत्पन्न किये भृगु अंगिरा अत्रि पुलस्त्य पुलह क्रतु मरीचि दक्ष वशिष्ठ और प्रचेता ये दश ब्रह्माजी के मानस पुत्र भये मरीचि के पुत्र

कश्यप भये दक्षकी कन्या अदिति कश्यपको विवाही उस-
से एक अण्डा उत्पन्न भया जिससे द्वादशात्मा श्री सूर्य्य-
नारायण निकले नवहज़ार योजन सूर्य्य मण्डलका व्यास
अर्थात् विस्तार है और सत्ताईस हज़ार योजन परिधि अ-
र्थात् परिणाह है जिस भांति कदम्बका पुष्प चारों ओर के-
सरों से व्याप्तहोता है इसी प्रकार सूर्य्यमण्डल किरणों करके
व्याप्त है वह सहस्रशीर्षा पुरुष जिसको परमात्मा कहते
हैं इस मण्डल के मध्य में स्थित है वह अपने हज़ार कि-
रणों करके नदी समुद्र ह्रद कूप आदि से जलको आक-
र्षण करता है सूर्य्य की प्रभा रात्रि के समय अग्निमें प्रवेश
करती है इसीसे रात्रि में अग्नि दूरसेही प्रकाशित देख
पड़ता है सूर्योदयके समय वह प्रभा सूर्य्य में चली जाती है
प्रकाश और उष्णता ये दोनों सूर्य्यमें और अग्निमेंभी हैं इस
प्रकार सूर्य्य और अग्नि रात दिनमें परस्पर आप्यायन क-
रते हैं किरण गो रश्मि गभस्ति अभीषु उस्रवसु मरीचि
नाड़ी दीधिति मयूख भानु करपाद इत्यादि किरणों के नाम
हैं एक हज़ार किरण सूर्य्य नारायणके हैं उनमें चारसौ किरण
वृष्टि करते हैं उनका नाम चन्दन है वे किरण अमृत स्व-
रूप और श्वेतवर्ण हैं तीनसौ किरण हिमको वर्षते हैं उनका
नाम चन्द्रहै और पीतवर्णहैं बाकी तीनसौ किरण प्रचण्ड धूप
की वृष्टिकरते हैं वर्षा और शरद् ऋतुमें चन्दन नाम किरण
वृष्टि करते हैं हेमन्त और शिशिरमें चन्द्रनामक तीनसौ कि-
रण हिम अर्थात् वर्फ बरसतेहैं बाकी तीनसौ किरण व-
सन्त और ग्रीष्ममें तपते हैं औषधियों में बल स्वधा में
स्वधा और अमृत में अमृत सूर्य्य नारायण देते हैं यह द्वाद-

शात्मा और काल स्वरूप सूर्य्य नारायण तीनलोक में तपते हैं ब्रह्मा विष्णु और शिव इनहीं के रूपहैं ऋक् यजुः और साम भी येही हैं प्रातःकाल ऋग्वेद स्तुति करता है मध्याह्न में यजुर्वेद और मध्याह्न के अनन्तर सामवेद स्तुति में प्रवृत्त होता है ब्रह्मा विष्णु और शिव इनका नित्य पूजन करते हैं जिस प्रकार वायु सर्वगत है इसी विधि सूर्य्य किरण भी सर्व व्यापक हैं तीनसौ किरण भूर्लोक को प्रकाशित करते हैं और तीनतीनसौही बाकी दोनों लोकों को द्योतित करते हैं चन्द्रमा ग्रह नक्षत्र और तारागण में सूर्य्य नारायण काही प्रकाश है सूर्य्य नारायण के हजार किरणोंमें सात किरण मुख्यहैं सुषुम्ण हरिकेश विश्वकर्म्मा सूर्य्य विष्णु सम और सर्व बन्धु ये उन सातों के नामहैं यह सम्पूर्ण जगत् सूर्य्य नारायण का रूप है इन्द्र आदि देवता इनसे उत्पन्न भये हैं जगत् में सम्पूर्ण तेज इनका है अग्नि में दीहुई आहुति सूर्य्य नारायण में प्राप्तहोती है उससे वृष्टि वृष्टिसे अन्न और अन्नसे प्रजाका पालन होताहै जगत् की सृष्टि और संहार सूर्य्य नारायण से होता है ध्यान करने वालों के लिये ध्यान रूप और मोक्षार्थी पुरुषों के लिये मोक्ष स्वरूप येही हैं क्षण मुहूर्त्त दिन पक्ष मास ऋतु अयन संवत्सर और युगों की कल्पना सूर्य्य नारायण के विना नहीं होसक्ती और कालके नियम विना अग्निहोत्र आदि कर्म्म नहीं होसक्ते ऋतु विभाग विना पुष्प फल और मूलोंकी उत्पत्ति नहीं होती जगत् में सब व्यवहार नष्ट होजाते यज्ञ न होनेसे स्वर्ग में देवताभी नहीं रहसक्ते इससे यही जानो कि भूर्लोक और स्वर्गकी सब व्यवस्था सूर्य्य नारायण के होनेसेही ठीक रहती है जब सूर्य्य बहुत

तपै अथवा मण्डल के चारों ओर परिवेष होय तब वृष्टि होती है सूर्य्य भगवान् के बारह नाम हैं आदित्य सविता सूर्य मिहिर अर्क प्रतापन मार्तण्ड भास्कर भानु चित्रभानु दिवाकर और रवि ये बारह नाम हैं विष्णु धाता भग पूषा मित्र इन्द्र वरुण अर्यमा विवस्वान् अंशुमान् त्वष्टा और पर्जन्य ये बारह आदित्य हैं चैत्र आदि बारह महीनों में ये तपते हैं चैत्र में विष्णु वैशाख में अर्यमा ज्येष्ठ में विवस्वान् आषाढ़ में अंशुमान् श्रावण में पर्जन्य भाद्रपद में वरुण आश्विन में इन्द्र कार्त्तिक में धाता मार्गशीर्ष में मित्र पौष में पूषा माघ में भग और फाल्गुन मास में त्वष्टानामक आदित्य तपता है विष्णु नामक आदित्य बारह सौ किरणों करके तपते हैं अर्यमा और वरुण तेरह सौ किरणों करके विवस्वान् और पर्जन्य चौदहसौ किरणों करके अंशुमान् पांच सौ किरणों करके इन्द्र बारह सौ किरणों करके धाता ग्यारह सौ किरणों करके मित्र और भग साढ़े दशसौ किरणों करके पूषा हजार किरणों करके और त्वष्टा नामक आदित्य ग्यारह सौ किरणों करके तपता है उत्तरायण में सूर्य्य किरण वृद्धि को प्राप्तहोते हैं और दक्षिणायन में घटतेजाते हैं इस प्रकार सूर्य्य किरण लोकोपकार में प्रवृत्त हैं कोई पुरुष ब्रह्मा को कोई विष्णु को और कोई शिव को जगत्कर्त्ता कहते हैं परन्तु वे इनका रूप हैं जिस प्रकार स्फटिक में अनेक रंग प्रविष्ट होने से वह अनेकवर्णका होजाता है जिस भांति एकही मेघ आकाश में अनेक रूपका होजाता है जैसे आकाश से एक प्रकारका जल गिरिके भूमि के संसर्गसे अनेक स्वादु का होजाता है जिस प्रकार एकही अग्नि के स्थानभेद से अ

नाम होजाते हैं इसी प्रकार एक सूर्यनारायणही गुणों के वशहोकर ब्रह्मा विष्णु शिव आदि अनेक रूप धारते हैं इस लिये इनमें ही भक्ति करनी चाहिये आकाश में जलमें अग्नि में पवन में और सब प्रकारके स्थावर जंगम रूप जगत् में सूर्यनारायण व्याप्त होरहे हैं इस प्रकार जो सूर्यनारायण को जानै वह रोग और पापों से बहुत शीघ्र छूटता है पापी पुरुष की सूर्यनारायण में भक्ति नहीं होती है हे साम्ब ! तू भी सूर्य-नारायण का आराधन कर जिससे यह व्याधि निवृत्त होय हे साम्ब ! जैसे ब्रह्मा और शिव सूर्यनारायण का रूप हैं इस प्रकार तेरे पिता श्रीकृष्णचन्द्र भी उनकाही रूप हैं॥

पचहत्तरवां अध्याय॥

सूर्यनारायण की दो भार्या और सन्तानोंका वर्णन॥

सुमन्तु मुनि कहते हैं कि हे राजा ! इतना सुन साम्ब ने नारदजी से कहा कि महाराज आपने सूर्यनारायण का ऐसा माहात्म्य वर्णन किया जिससे मेरे हृदय में दृढ़भक्ति उत्पन्न होगई अब आप राज्ञी निक्षुभा दण्डी और पिंगल आदि का वर्णन करैं यह साम्बका वचन सुन नारदजी कहने लगे कि हे साम्ब ! सूर्य भगवान्की दो भार्य्या हमने कहीं एक राज्ञी दूसरी निक्षुभा उन में राज्ञी द्यौः अर्थात् आकाश को कहते हैं और निक्षुभा पृथिवी का नाम है श्रावण कृष्ण सप्तमी को द्यौःके साथ और माघकृष्ण सप्तमी को निक्षुभा के संग सूर्य-नारायण का संयोग होता है तब इन दोनों के गर्भ होता है द्यौः के गर्भ से जल उत्पन्न होता है और भूमिके गर्भसे जगत् के कल्याण के अर्थ अनेक प्रकार के सस्य अर्थात् खेती उपजते हैं सस्य को देख अति हर्ष से ब्राह्मण हवन करते

हैं स्वाहाकार स्वधाकारसे देवता और पितरों की तृप्ति होती है अब ये दोनों जिसकी कन्या हैं और इनके जो सन्तान हैं उनका हम वर्णन करते हैं ब्रह्माके पुत्र मरीचि मरीचि के कश्यप कश्यप के हिरण्यकशिपु हिरण्यकशिपु के प्रह्लाद और प्रह्लाद के विरोचननाम पुत्र भया विरोचन की भगिनी विश्वकर्मा को विवाहीगई जिसकी कन्या संज्ञा भई मरीचि की कन्या सुरूपा नाम अङ्गिराऋषि को विवाही जिससे बृहस्पति उत्पन्न भये बृहस्पति की ब्रह्मवादिनी भगिनी आठवें वसुप्रभा से विवाही गई जिसका पुत्र सर्वशिल्प जाननेहारा विश्वकर्मा भया उसीका नाम त्वष्टा है विश्वकर्मा की कन्या संज्ञाको राज्ञीकहतेहैं और उसको द्यौः और सुरेणुभी कहतेहैं उसी संज्ञा की छाया का नाम निक्षुभा है सूर्य्यभगवान् की भार्या संज्ञा नामक बड़ी रूपवती और पतिव्रता थी परन्तु सूर्य्यनारायण मनुष्यरूप से उसके समीप नहीं जाते थे और अति तेज से व्याप्त वह सूर्यनारायण का रूप सुन्दर न था इसलिये संज्ञा को नहीं रुचता था संज्ञा सें तीन सन्तान भये परन्तु वह सूर्य्यनारायण के तेजसे व्याकुल हो अपने पिता के घर चली गई और हज़ार वर्ष तक वहां रही परन्तु जब पिताने पति के घर जाने के लिये बहुत कहा तब उत्तर कुरु को चली गई और घोड़ी का रूपधार तृणचरके अपना कालक्षेप करने लगी सूर्य नारायण के समीप संज्ञाके रूपसे छाया रहती थी सूर्य भगवान् उसको संज्ञाही जानते थे उससें भी दो पुत्र और एक कन्या उत्पन्न भई श्रुतिश्रवा और श्रुतकर्म्मा ये दो छाया के पुत्र भये और तपती नाम कन्या भई श्रुतश्रवा तो सावर्णि मनु हुवा और श्रुतिकर्म्मा शनैश्चर नामक ग्रह

भया संज्ञा जिस प्रकार अपने सन्तानों पर स्नेह करती थी वैसा छाया ने न किया इसबात को संज्ञा के ज्येष्ठपुत्र मनुने तो सहा परन्तु छोटा पुत्र यम न सहार सका जब छाया ने बहुतही क्लेश दिया तब क्रोध से बालकपन से और भावी के बलसे यमने अपनी माता को भर्त्सन किया और मारने को चरण उठाया यह देख क्रोध कर छाया ने यमको शाप दिया कि हे दुष्ट! यह तेरा चरण गिरपड़े माता के शापसे यम व्याकुल हो पिता के समीप गये और सब वृत्तान्त कहा कि महाराज यह माता हमसे स्नेह नहीं करती मैंने भूलसे अथवा बालकपन से केवल चरण उठाया था परन्तु माताने मुझे घोर शाप दिया अब मेरे चरण की रक्षा आपही करैं यह पुत्र का वचन सुन सूर्य्यनारायण ने कहा कि हे पुत्र! इसमें कुछ बड़ा कारण होगा कि अति धर्मात्मा तुझको माता के ऊपर क्रोध आया सब शापों का प्रतिघात है परन्तु माता का दिया शाप कभी अन्यथा नहीं होसकता पर तेरेस्नेह से कुछ उपाय करते हैं तेरे चरण के मांस को लेकर कृमिभूमि पर जायँ इससे माता का शाप भी सत्य हो और तेरे चरणकी रक्षा भी होजायगी सुमन्तुमुनि कहते हैं कि हे राजा! इस प्रकार पुत्र का आश्वासन कर सूर्य्यनारायण ने छाया से कहा कि इनमें तुम स्नेह क्यों नहीं करतीं माता को सब सन्तान समान मानने चाहियें यह सुनिके भी छायाने कुछ उत्तर न दिया तब सूर्य्यनारायण क्रोधकर शाप देने को उद्यत भये छाया ने पति को अति क्रुद्ध देख भय से सब वृत्तान्त कह दिया इसी अवसर में विश्वकर्मा वहां आये सूर्य्यनारायण ने अपने श्वशुर को क्रोधयुक्त देख मीठेवचनों से उनका क्रोध शान्तकर

आसन पर बैठाया तब विश्वकर्मा ने कहा कि हमारी पुत्री संज्ञा तुम्हारे प्रचण्ड तेज से व्याकुल हो वन को चली गई और तुम्हारा रूप उत्तम होने के लिये वन में तप करती है हमको ब्रह्माजी की आज्ञा है कि तुम्हारा रूप उत्तम बनादेवें यदि तुम्हारी भी रुचि होय तो हम इस कार्य में प्रवृत्त होयँ यह श्वशुरका वचन सूर्य्य नारायण ने अंगीकार किया तब शाकद्वीप में सूर्य नारायण को भ्रमि अर्थात् खराद पर च-ढ़ाय विश्वकर्मा ने उनका प्रचण्ड तेज छीलडाला और उत्तम रूप बनादिया सूर्य नारायण ने भी योग बल से जाना कि हमारी भर्या घोड़ीके रूप से उत्तर कुरुमें रहती है यह जान आप भी अश्वका रूप धार उस के समीप गये और मैथुन के लिये प्रवृत्त भये परन्तु संज्ञा ने इन को पर पुरुष जान इनका वीर्य नासिका में धारण किया उस से देवताओं के वैद्य अश्वि-नी कुमार उत्पन्न भये नासत्य और दस्र ये उनके नाम हैं इसके अनन्तर सूर्य नारायण ने अपना वास्तवरूप धारण किया जिसको देख संज्ञा बहुत प्रसन्न भई और सूर्य नारायण से संग किया तब रेवन्तनाम पुत्र सूर्य भगवान् के समान रूप-वान् उत्पन्न भया उसने सूर्य नारायण के आठवें घोड़े को चढ़ने के लिये लेलिया और उसपर चढ़ के कुदाता हुवा चढ़ता था इसी से उसका नाम रेवन्तहुआ क्योंकि रेवृधातु प्लवगति अर्थात् कूदके चलना इस अर्थ में है सूर्य नारायण ने दण्ड-नायक और पिंगल को आज्ञादी कि हमारा आठवां अश्व रेवन्त से लेआओ परन्तु बल से मत लाना कोई छिद्र पाके हरलेना यह आज्ञा पाय दोनों रेवन्तके पास गये और बहुत कालतक वहां रहे परन्तु कोई छिद्र न मिला कि अश्व को

हैं सदा रेवन्त को सावधान ही देख मनु यम यमुना सावर्णि शनैश्चर तपती दो अश्विनी कुमार और रेवन्त ये सूर्यनारायण के सन्तान भये संज्ञा का नाम राज्ञी है और छाया को निक्षुभा कहते हैं राजृधातु दीप्ति अर्थ में है जिस से राज्ञी शब्द बनताहै सब भूतों से अधिक दीप्ति होनेसे सूर्यनारायण राजा कहाते हैं राजा की भर्याहोनेसे भी संज्ञा को राज्ञी कहते हैं क्षुभ संचलने धातुहै उस से नि उपसर्ग लगकर निक्षुभ शब्द बनता है सब मनुष्यों को अति पीड़ित देख यमने धर्म से सबका अनुरंजन किया इस से धर्मराज कहाया और अपने शुद्धकर्म के प्रभाव से पितरों का स्वामी और लोकपाल यमराज बना आज कल जो मनु वर्त्तमान हैं इनके वंश में विष्णु भगवान् का अवतार हुआ यमकी बहिन यमुना नदी भई सावर्णि आठवें मनुहोंगे और यमके बड़े भ्राता मनु आज कल राज्य करते हैं और सावर्णि मेरु पर्वतके पृष्ठपर तपकर रहे हैं सावर्णिके भ्राता शनैश्चर ग्रहबने और उनकी बहिन तपती नदीभई जो विन्ध्याचल से निकल पश्चिम समुद्र में जाय मिलीहै और जिसमें स्नान करने से बहुत पुण्य होताहै सोम्यानदीसे तपतीका संगम और गंगासे यमुनाका संगम होताहै अश्विनीकुमार देवताओंके वैद्यबने जिनकी विद्या से भूमिपरभी वैद्य अपना निर्वाह करते हैं रेवन्तनाम अपने पुत्रको सूर्यनारायण ने सब अश्वोंका स्वामीबनाया रेवन्तका पूजनकर जो मार्गमें जाय उसको क्लेश नहींहोता विश्वकर्मा ने सूर्यनारायण की आज्ञासे उनके तेजकरके भोजक को बनाया जो सूर्यनारायणकी पूजा करनेवाला भया जो सूर्य भगवान् के सन्तानों की इस उत्पत्ति को सुनै वह सब पापों

से मुक्तहो सूर्यलोक में बहुत काल पर्यन्त निवासकर चक्रवर्ती राजा होय ॥

छिहत्तरवां अध्याय ॥

सूर्यकोप्रणाम,प्रदक्षिणादिकरनेकाफल, अर्वावसुब्राह्मणकाइतिहास ॥

सुमन्तुमुनि कहते हैं कि हे राजा शतानीक ! इस प्रकार सूर्य्यनारायण का प्रभाव सुन साम्ब ने नारदजी से फिर पूछा कि महाराज सूर्य्यनारायण के पूजन से क्या फल होता है उनके निमित्त दान देनेसे किस उत्तम फलकी प्राप्ति होती है प्रणाम करने से और उनके मन्दिर में गीत वाद्य आदि उत्सवों से क्या पुण्य होता है यह आप कृपाकर वर्णन करैं जिससे मैं भी इस क्लेश करके पीड़ित हुआ २ सूर्यनारायण का दृढ़ भक्तिसे आराधनकरूं यह साम्ब की प्रार्थना सुन नारदजी कहनेलगे कि हे साम्ब ! यह बात दिण्डीने ब्रह्माजीसे भी पूछीथी उनने दिण्डीके प्रति जो कहा वह हम वर्णन करतेहैं दिण्डीके प्रश्नके अनन्तर ब्रह्माजी कहने लगे कि हे दिण्डी ! सूर्यभगवान् के पूजन स्तुति जप उत्सव वलि उपवास आदि करने से मनोवांछित फल पाता है सूर्यभगवान् को प्रणाम करनेके अर्थ भूमिपर शिरका स्पर्श होतेही सब पातक दूर होजाते हैं जो भक्तिसे सूर्यनारायणकी प्रदक्षिणाकरै उसको सप्तद्वीपवती भूमिकी प्रदक्षिणा का फल होताहै और वह पुरुष सब रोगों से मुक्तहो अन्त में सूर्यलोक को प्राप्त होता है परन्तु जूता निकालकर प्रदक्षिणा करनी चाहिये जो पुरुष जूता पहिने सूर्य मन्दिर में प्रवेशकरैं वे असिपत्र वन नामक घोर नरक में पड़ते हैं जो षष्ठी अथवा सप्तमीके दिन एकाहार अथवा उप

कर सूर्यनारायण का भक्तिसे पूजनकरै वह सूर्यलोक में निवासकरै कृष्णपक्षकी सप्तमी को उपवासकर जितेन्द्रियहो कमल करवीर रक्तचन्दन केसर उत्तम जल और मोदकआदि भांति २ के नैवेद्यों से सूर्य्यनारायणका अर्चनकरै वह सूर्यलोकको प्राप्त होय शुक्लपक्ष की सप्तमी को सब श्वेत पदार्थों से सूर्य्यनारायणका यजनकरै चमेलीके फूल श्वेत कमल खीरआदि उनके अर्पणकरै वह सब पापों से मुक्तहोय कान्ति में चन्द्रमाके तुल्य होजाय और अन्तमें हंसयुक्त विमानमें बैठ सूर्य्यलोक को जाय यह ब्रह्माजीके मुखसे श्रवणकर फिर दिण्डीने कहा कि महाराज आप विस्तार से सप्तमी कल्प का वर्णनकरैं कि मैं भी सप्तमीका उपवासकर सूर्य्यनारायण के शरण में प्राप्त होजाऊँ यह दिण्डीका वचन सुन ब्रह्माजी बोले कि हे दिण्डी! बहुत उत्तम वार्त्ता तुमने पूँछी सप्तमी कल्पका हम वर्णन करते हैं एक समय सूर्य्यनारायण ध्यान करते थे उस अवसर में अरुणने कहा कि महाराज आप बैठे क्या ध्यान करते हैं आपके ध्यान करने से दिनही पूरा नहीं होता इसका कारण मुझे कहैं और आपको ध्यान करना होय तो चलते २ करैं यह सुन सूर्य्यभगवान् कहनेलगे कि हे अरुण! अर्वावसु नामक ब्राह्मण पुत्रके अर्थ हमारा आराधन करता है परन्तु वह विधि नहीं जानता कि जिसके करने से हम प्रसन्न होकर पुत्र देते हैं वह सप्तमीकल्प नामक विधि हम तुमको उपदेश करते हैं और तुम जाकर उस ब्राह्मण को बताओ जिसके करने से वह अपना मनोवांछित फल पावै उस विधिके करने से हम बहुत पुत्र देते हैं यह कहकर सूर्य्यनारायण ने अपने सारथि अरुणको सप्तमी कल्पका

उपदेश किया अरुणने सूर्य्य भगवान् की आज्ञानुसार जाय ब्राह्मण को बताया ब्राह्मण ने उस सप्तमी कल्प की विधि को किया जिससे बहुत से पुत्र धन आरोग्य और सम्पत्तिपाई और अन्त समय विमान में बैठ सूर्य्य लोक को गया ॥

सतहत्तरवां अध्याय ॥

विजयासप्तमी का विधान ॥

ब्रह्माजी कहते हैं कि हे दिण्डी! जया विजया जयन्ती अपराजिता महाजया नन्दा और भद्रा ये सात सप्तमी हैं शुक्ल पक्षकी सप्तमी को आदित्यवार होय तो उस सप्तमी को विजया सप्तमी कहते हैं उस दिन किया हुआ स्नान दान होम उपवास पूजन आदि सत्कर्म अनन्त फल देता है पञ्चमी के दिन एक भक्त षष्ठी को नक्त सप्तमी को उपवास और अष्टमी के दिन व्रत पारण करै यह कई आचार्य्यों का मत है परन्तु हमारे मत से चतुर्थी को एक भक्त पञ्चमी को नक्त षष्ठी को उपवास और सप्तमी को पारण करै षष्ठी के दिन उपवासकरै गन्ध पुष्प आदि उपचारों से सूर्य्य नारायण का पूजन करै और गायत्री सूक्त त्र्यक्षर मन्त्र महाश्वेता अथवा षडक्षर मन्त्र जपता हुआ सूर्य्य नारायणके सम्मुख शयन करै सप्तमी के दिन प्रभातही उठ स्नानकर सूर्य्य नारायण का पूजन करै और हवनकर यथा शक्ति ब्राह्मण भोजन कराय दक्षिणा देवै और अपूप आदि भांति२ पकान्न घृत खीर आदि नैवेद्य सूर्य्यनारायण को निवेदन करै करवीर के पुष्प कुंकुम लेपन और विजयधूप के अर्पण से सूर्य्य नारायण प्रसन्न होते हैं यह विजयसप्तमी का विधानहै इस व्रत के करने से सब पातक नष्ट होजाते हैं इस दिन किया हुआ दान हवन

देवता और पितरों का पूजन अक्षय होता है हे दिण्डी! य विजय सप्तमी पुण्य तिथिहै इस के माहात्म्य श्रवण कर से भी धन और यश और आयुष् की वृद्धि होती है॥

अठहत्तरवां अध्याय॥

बारहप्रकार के आदित्यवारोंका कथन व कल्प॥

दिण्डी पूछते हैं कि हे ब्रह्माजी! जो आदित्यवारके दिन सूर्य्य नारायण का भक्तिसे पूजन करते हैं और स्नान दान आदि करते हैं उनको क्या फल होता है जिस वारके संयोग से सप्तमी तिथि विजया कहाई उसका माहात्म्य आप कृपा कर वर्णन करें यह सुन ब्रह्माजी बोले कि हे दिण्डी! जो पुरुष आदित्यवार को श्राद्ध करैं वे सातजन्म पर्य्यंत आरोग्य होते हैं जो नक्त व्रत करैं और आदित्य हृदय का पाठकरैं वे रोगसे मुक्तहोवैं और सूर्य्यलोक में निवास करैं जो उपवास कर महाश्वेता मन्त्रको जपैं वे मनोवांछित फल पावैं दिन रात्रि नक्त अथवा त्रिरात्रि के नियम से जो महाश्वेता को जपैं वे अपना अभीष्ट सिद्ध करैं आदित्यवार के दिन महाश्वेता और षडक्षर मन्त्र के जपने से निःसन्देह सूर्य्यलोककी प्राप्तिहोती है सूर्य्यनारायण के बारह वार हैं नन्द भद्र सौम्य कामद पुत्रद जय जयन्त विजय आदित्याभिमुख हृदयरोगहा और महाश्वेताप्रिय ये उनके नामहैं माघशुक्ल षष्ठीको जो वारहोय उस की नन्द संज्ञा है उस दिन नक्त व्रत करघृत से सूर्य्य नारायण को स्नान कराय श्वेत चन्दन अगस्ति के पुष्प गुगल धूप और अपूप आदि नैवेद्य चढ़ावै और ब्राह्मण को अपूप देकर आप भी मौनसे भोजन कर तारादर्शन पर्य्यंत नक्त व्रत होताहै सेर पक्के गेहूं अथवा जौ के आटे

में घृत और गुड़ मिलाय अपूप बनावै और सूर्य्यनारायण को नैवेद्य लगाय (आदित्यतेजसोत्पन्नं राज्ञीकरविनिर्मितम् । श्रेयसे मम विप्रत्वं प्रतीच्छापूपमुत्तमम् १) यह मन्त्र पढ़ ब्राह्मणको देवै ब्राह्मण भी उस अपूपको ले (कामदं सुखदं धर्म्यं धनदं पुत्रदन्तथा । सदातुभ्यं प्रयच्छामि मण्डकं भास्करप्रियम्) यह मन्त्रपढ़ यजमानको देवै ये दोनों ग्रहण करने और देने के मन्त्र हैं यह नन्द वार का विधान मनुष्यों के कल्याण के अर्थ कहा है जो इस वारको इस विधि से सूर्य्यनारायण का पूजन करै वह सूर्य्यलोक पावे उसकी सन्तान का क्षय न होय और उस के वंश में दारिद्र्य और रोग भी न होयँ सूर्यलोक से आय राजाहोय इस विधान के पढ़ने अथवा श्रवण करने से भी कल्याण होताहै और लक्ष्मी मिलती है ॥

उनासीवां अध्याय ॥

भद्रवारका विधान और फल ॥

ब्रह्माजी कहते हैं कि हे दिण्डी ! भाद्रकृष्ण षष्ठी के दिन जो वार होय उस का नाम भद्र है उस दिन जो नक्त व्रत अथवा उपवास करै वह हंस युक्त विमान में बैठ सूर्य्य लोक को जावे श्वेत चन्दन मालती के पुष्प विजयधूप और खीर का नैवेद्य इन से मध्याह्न के समय सूर्य्य नारायण का पूजन कर ब्राह्मण भोजन कराय यथा शक्ति दक्षिणा देकर आप भी मौन से भोजन करै खीर घृत और गुड़ इनका भोजन करै इस विधि से भद्रवार को अन्धकारहारी श्रीसूर्य्य नारायण का अर्च्चनकरै वह धन पुत्र आदि सब वस्तु पावै और अन्त में सूर्य्यलोक को जावै हे दिण्डी ! यह भद्रवार का विधान है-

मने कहा है जिस के पढ़ने और श्रवण करने से भी सब पाप निवृत्त होते हैं॥

अस्सीवां अध्याय॥

सौम्यवारका विधान॥

ब्रह्माजी कहते हैं कि हे दिण्डी! रोहिणी नक्षत्र युक्त आदित्य वार होय उसको सौम्यवार कहते हैं उस दिन कियाहुआ स्नान दान जप होम पूजन आदि अक्षय होता है जो इस दिन नक्त व्रत कर रक्तचन्दन रक्तकमल सुगन्ध धूप पायस आदि नैवेद्य से सूर्य्यनारायण का पूजनकरै और ब्राह्मणों को पायस भोजन कराय आपभी भोजनकरै इस विधिसे जो सूर्य्य नारायण का पूजन सौम्यवारको करै वह उत्तम कान्ति धन पुत्र और आरोग्य पावै बहुत काल संसार सुख भोग सब पापों से छूट सूर्य्यलोक में निवासकरै॥

इक्यासीवां अध्याय॥

कामदवारका विधान॥

ब्रह्माजी कहते हैं कि हे दिण्डी! मार्गशीर्ष शुक्ल षष्ठीको जो वार होय वह कामद कहाता है उस दिन जो भक्ति और श्रद्धा से सूर्य्य नारायण का पूजन करै वह सब पातकों से मुक्तहो सूर्य्य लोक में निवास करै उस दिन उपवास अथवा नक्त व्रत कर रक्त चन्दन करबीर के पुष्प घृत का धूप और सुगन्धि युक्त कसार का नैवेद्य इन से सूर्य्य नारायण का अर्चन करै इस विधि से पूजन करै तो सब मनोवांछित फल पावै इस व्रत के करने से विद्याकामनावाले को विद्या पुत्र कामनावाले को पुत्र धनकी इच्छावाले को धन और आरोग्यकी चाह होय तो आरोग्य मिलता है इस दिन सूर्य्य

नारायण का अर्चन करने से सब कामना प्राप्त होतीहै इसी से इसका नाम कामद है पूर्वोक्त रीतिसे इस दिनभी जो सूर्य नारायण को अपूप अर्पणकरै वह इन्द्र के समान ऐश्वर्य पावे और सूर्य्यलोक में निवास करै॥

बयासीवां अध्याय॥

पुत्रदवार का विधान॥

ब्रह्माजी कहते हैं कि हे दिण्डी! जिस रविवार को हस्त नक्षत्र होय वह पुत्रद कहाता है उस दिन उपवासकरै और श्राद्ध करके बिचले पिण्ड को प्राशनकरै और भांति २ के उपचारों से सूर्य्यनारायण का पूजनकर महाश्वेता मंत्रको जपता हुआ भूमिमें सूर्य्यनारायणके सम्मुखही शयनकरै प्रभात उठ स्नानकर सूर्य्य भगवान् का अर्चन कर रक्त चन्दन और करवीरके पुष्प जलमें मिलाय अर्घ्यदेवै फिर पांच ब्राह्मणों को बुलाय उनमें दिव्य दो ब्राह्मणों को भग संज्ञक मान विधिसे पार्वण श्राद्धकरै श्राद्धको समाप्त कर मध्यम पिण्ड को (सएवपिण्डोदेवेशयोभीष्टस्तवसर्वदा। अ इनामिपश्यतस्तुभ्यंयेनमेसन्ततिर्भवेत्॥ प्रसादात्तवदेवस्य इति मेभावितंमनः) इस मंत्रसे भक्षण कर जाय इस विधान के करने से सूर्य्यनारायण अवश्य पुत्र देते हैं इस व्रतके करने से धन धान्य सुवर्ण सुख और आरोग्य भी मिलता है और सूर्य्यलोक की प्राप्ति भी होतीहै परन्तु विशेषकरके पुत्र प्राप्ति इस व्रतका फलहै इसीसे इसको पुत्रद कहते हैं॥

तिरासीवां अध्याय॥

जयवार और जयन्तवारका विधान॥

ब्रह्माजी कहते हैं कि हे दिण्डी! दक्षिणायन के दिन

वार होय उसका नाम जयवार है उस दिन किया हुआ उपवास स्नान दान जपआदि सत्कर्म सौगुणा फल देताहै इस लिये सूर्यनारायण की प्रीति के लिये उस दिन नक्त आदि व्रतकर भक्तिसे सूर्यनारायण का पूजनकरै। उत्तरायणके दिन जो वार होय उसको जयन्त कहते हैं इस दिन किया हुआ स्नान दानादि सहस्रगुण होजाता है उस दिन उपवासकर घृत दूध और इक्षुरस से सूर्यनारायण को स्नान कराय केसरका चन्दन चढ़ावै और गूगलका धूपदे मोदक नैवेद्य लगावै पीछे तिलों से हवन कर यथाशक्ति ब्राह्मण भोजन कराय आप भी व्रत पारणकरै इस व्रतके करने से मनोवांछित फल पावै और सूर्यनारायण का प्रिय होय॥

चौरासीवां अध्याय॥

विजयवारका विधान॥

ब्रह्माजी कहते हैं कि हे दिण्डी! शुक्लपक्ष की रोहिणी नक्षत्रयुक्त सप्तमी तिथिको जो वारहोय वह विजय कहाता है उस दिन किया हुवा पुण्यकर्म कोटिगुण होजाता है इस दिन नक्तव्रत अथवा उपवास कर भक्तिसे सूर्यनारायण का पूजनकर जप हवन आदिकरै और यथाशक्ति ब्राह्मण भोजन करावै इस व्रतके करनेसे सप्तद्वीपवती पृथिवीका राजा होय॥

पचासीवां अध्याय॥

आदित्याभिमुखवार का विधान॥

ब्रह्माजी कहते हैं कि हे दिण्डी! माघ कृष्ण सप्तमी को जो वारहोय उसको आदित्याभिमुख कहते हैं उस दिन प्रभातही स्नान कर गन्ध पुष्पादि उपचारों से सूर्यनारायण का पूजनकरै और स्तम्भके सहारे सूर्यके सम्मुख मुख कर

महाश्वेता मन्त्र को जपताहुआ सायङ्काल पर्यंत खड़ारहै वह स्तंभ रक्त चन्दन के काष्ठका चारहाथ लम्बा सीधा और चिकना होना चाहिये इस प्रकार व्रतकर ब्राह्मण भोजन क-राय दक्षिणादे आपभी मौन से भोजन करै इस व्रतको जो पुरुष करैं उनको धन धान्य पुत्र आरोग्य और लक्ष्मी सूर्य्य नारायण के अनुग्रह से प्राप्त होते हैं॥

छियासीवां अध्याय॥

हृदय नाम वार का विधान॥

ब्रह्माजी कहते हैं कि हे दिंडी! संक्रांति के दिनजो रविवार होय उसकी संज्ञाहृदय है उस दिन नक्तव्रतकरै और मन्दिर में जाय सूर्य्य नारायण के सम्मुख खड़ाहोकर आदित्यहृदय के आठ पाठकरै अथवा सायङ्काल पर्यन्त सूर्य्य नारायण का ध्यान करता है फिर सूर्यास्त के अनन्तर घरसें आय ब्राह्मण भोजन कराय मौन से आपभी खीर भोजन करै और सूर्य्य ना-रायण का स्मरण करताहुआ भूमिपर सोवै इस व्रतको करै और भक्ति श्रद्धा से सूर्य्य नारायण का अर्चन करै तो हृदय के सब अभीष्ट सिद्धहोयँ और कान्ति तथा यशकी वृद्धिहोय॥

सत्तासीवां अध्याय॥

रोगहा वार का विधान॥

ब्रह्माजी कहते हैं कि हे दिंडी! जिस आदित्यवार को पू-र्वाफाल्गुनी नक्षत्रहो उसको रोगहा कहते हैं इस दिन गन्ध पुष्पआदि उपचारों से जो सूर्य्यनारायणका पूजन करै वह सब रोगोंसे मुक्तहोय। आकके पत्रों का दोना बनाय उस में आक के फल तोड़कर लावै और रात्रिको सूर्य्य नारायण के सम्मुख उनको रक्खे और प्रभात उठ उनसे पूजन कर एक

वार होय उसका नाम जयवार है उस दिन किया हुआ उपवास स्नान दान जपआदि सत्कर्म सौगुणा फल देताहै इस लिये सूर्य्यनारायण की प्रीति के लिये उस दिन नक्त आदि व्रतकर भक्तिसे सूर्यनारायण का पूजनकरै। उत्तरायणके दिन जो वार होय उसको जयन्त कहते हैं इस दिन किया हुआ स्नान दानादि सहस्रगुण होजाता है उस दिन उपवासकर घृत दूध और इक्षुरस से सूर्यनारायण को स्नान कराय केसरका चन्दन चढ़ावै और गूगलका धूपदे मोदक नैवेद्य लगावै पीछे तिलों से हवन कर यथाशक्ति ब्राह्मण भोजन कराय आप भी व्रत पारणकरै इस व्रतके करने से मनोवांछित फल पावै और सूर्यनारायण का प्रिय होय॥

चौरासीवां अध्याय॥

विजयवारका विधान॥

ब्रह्माजी कहते हैं कि हे दिण्डी! शुक्लपक्ष की रोहिणी नक्षत्रयुक्त सप्तमी तिथिको जो वारहोय वह विजय कहाता है उस दिन किया हुवा पुण्यकर्म कोटिगुण होजाता है इस दिन नक्तव्रत अथवा उपवास कर भक्तिसे सूर्यनारायण का पूजनकर जप हवन आदिकरै और यथाशक्ति ब्राह्मण भोजन करावै इस व्रतके करनेसे सप्तद्वीपवती पृथिवीका राजा होय।

पचासीवां अध्याय॥

आदित्याभिमुखवार का विधान॥

ब्रह्माजी कहते हैं कि हे दिण्डी! माघ कृष्ण सप्तमी को जो वारहोय उसको आदित्याभिमुख कहते हैं उस दिन प्रभातही स्नान कर गन्ध पुष्पादि उपचारों से सूर्यनारायण का पूजनकरै और स्तम्भके सहारे सूर्यके सम्मुख मुख क

महाश्वेता मन्त्र को जपताहुआ सायङ्काल पर्यंत खड़ारहै वह स्तंभ रक्त चन्दन के काष्ठका बारहाथ लम्बा सीधा और चिकना होना चाहिये इस प्रकार व्रतकर ब्राह्मण भोजन क-राय दक्षिणादे आपभी मौन से भोजन करै इस व्रतको जो पुरुष करैं उनको धन धान्य पुत्र आरोग्य और लक्ष्मी सूर्य्य नारायण के अनुग्रह से प्राप्त होते हैं ॥

छियासीवां अध्याय ॥

हृदय नाम वार का विधान ॥

ब्रह्माजी कहते हैं कि हे दिंडी ! संक्रांति के दिनजो रविवार होय उसकी संज्ञाहृदय है उस दिन नक्तव्रतकरै और मन्दिर में जाय सूर्य्य नारायण के सन्मुख खड़ाहोकर आदित्यहृदय के आठ पाठकरै अथवा सायङ्काल पर्यन्त सूर्य्य नारायण का ध्यान करता है फिर सूर्यास्त के अनन्तर घरमें आय ब्राह्मण भोजन कराय मौन से आपभी क्षीर भोजन करै और सूर्य्य ना-रायण का स्मरण करताहुआ भूमिपर सोवै इस व्रतको करै और भक्ति श्रद्धा से सूर्य्य नारायण का अर्चन करै तो हृदय के सब अभीष्ट सिद्धहोवैं और कान्ति तथा यशकी वृद्धिहोय ॥

सत्तासीवां अध्याय ॥

रोगहा वार का विधान ॥

ब्रह्माजी कहते हैं कि हे दिंडी ! जिस आदित्यवार को पू-र्वाफाल्गुनी नक्षत्रहो उसको रोगहा कहते हैं इस दिन गन्ध पुष्पआदि उपचारों से जो सूर्य्यनारायणका पूजन करै वह सब रोगोंसे मुक्तहोय । आकके पत्रों का दोना बनाय उस में आक के फल तोड़कर लावै और रात्रिको सूर्य्य नारायण के सम्मुख उनको रक्खै और प्रभात उठ उनसे पूजन कर एक

पुष्प आपभी प्राशन करै और क्षीर भोजन कर व्रत समाप्तकरै व्रत के दिन भूमिशयन करै और यथाशक्ति ब्राह्मणभोजनकराय दक्षिणा देवै इस विधिसे जो सूर्य्य नारायण का आराधन करै वह सब रोगोंसे मुक्तहोय और अन्त में सूर्य्यलोक में निवासकरै॥

अट्ठासीवां अध्याय॥

महाश्वेत प्रियवार का विधान आदित्यवार कल्प समाप्ति॥

ब्रह्माजी कहते हैं कि हे दिण्डी! सूर्य्य ग्रहण के दिन जो रविवार होय उसको महाश्वेत प्रिय अथवा खखोल्क प्रिय कहते हैं उसदिन उपवास कर पवित्रहो गन्ध पुष्पादि उपचारोंसे भक्ति करके सूर्य्य नारायण का पूजन करै और महाश्वेता मन्त्र अथवा खखोल्क मन्त्र का जपकरै पहिले खखोल्क का पूजनकर महाश्वेता का पूजन करै पीछे सूर्य्य नारायण को पूजे महाश्वेता को स्थापन कर गन्ध पुष्प आदि से पूज उसके सम्मुख सूर्य्य नारायण का पूजन आदि करै और स्नान कर घृत सहित तिलों का हवन करै ग्रहण के समय महाश्वेता मन्त्रका जपकरै और ग्रहण मोक्ष होने के अनन्तर स्नान कर महाश्वेता खखोल्क और सूर्य्य नारायण का पूजन कर ब्राह्मणों से पुराण श्रवण कर उनको भोजन कराय यथा शक्ति दक्षिणा देकर आपभी मौन से भोजन करै इस दिन किये हुये स्नान दान जप होम आदि कर्म अनन्त फल को देते हैं इसलिये सूर्य्य नारायण की प्रीति के अर्थ इस दिन दान आदि सत्कर्म्म करने चाहिये इस व्रतके करने से धर्म्म यश सन्तान और धनकी वृद्धि होतीहै और सूर्य्य नारायण प्रसन्नहोते हैं उस दिन अपूप का दान करने से गोदान तुल्य फल होताहै हे दिण्डी! ये बारह वार सूर्य्य नारायण के

हमने वर्णनकिये इनको जो पुरुष पढ़ै अथवा सुनै वह सूर्य-नारायण का प्रिय होय और जो इन व्रतोंको करै वह धर्म्म अर्थ काम सन्तान आरोग्य तेज कान्ति और स्थिर लक्ष्मी पावै और बहुत काल संसारके सुखभोगकर अन्त में शिव-लोक को जाय ॥

नवासीवां अध्याय ॥

सूर्य्यनारायणको अनेकउपचार औरपदार्थ अर्पणकरनेका अलग २ फल॥

ब्रह्माजी कहते हैं कि हे दिंडी! जो पुरुष सब सत्कर्म सूर्य-नारायण की प्रीतिके लिये करते हैं उनके कुलमें रोगी और दरिद्री नहीं उत्पन्न होते हैं । सूर्य्यभगवान्‌के मन्दिरमें जो गोबरसे लेपन करै वह बहुत शीघ्र सब पापोंसे छुटजाता है श्वेतरक्त अथवा पीली मृत्तिका से जो लेपन करै वह मनोवांछित फल पावै । अनेक प्रकार के पुष्प जो सूर्य्य-नारायणके अर्पण करै बरत से वह अभीष्ट फल पावै । जो घृत अथवा तैलसे मन्दिर में दीपक प्रज्वलित करै वह करोड़ों दीपकों करके आवृतहो सूर्य्यलोकको जाय। जो सूर्य्यनारा-यण की प्रीतिके अर्थ चतुष्पथ तीर्थ देवालय आदि में दीपक रक्खै वह उत्तम रूपपावै। जो चन्दन केसर अगरु कपूर कस्तूरी आदि का उबटना बनाय सूर्य्यनारायण के अंग में लगावै वह करोड़ों वर्ष स्वर्ग में विहारकर भूमि पर चक्रवर्त्ती राजा होय। चन्दन और केसर सहित तीर्थ जलसे जो सूर्य्यनारायण को अर्घ्यदेवै वह अपने पुत्र पौत्र स्त्री आदि सहित स्वर्ग में वास करै । कमल पुष्पों करके पूजनकरै तो उत्तम अप्सराओं के साथ करोड़ों वर्ष स्वर्ग में विहार करै। गूगल और घृत का धूप देवै तो सब पातक

वर्षभर अथवा छहौं महीने सूर्य्यनारायणकी यात्रा करैं वे ध्यानी अथवा योगी जिस गतिको प्राप्त होते हैं उसी उत्तम गतिको प्राप्त होयँ और जन्म मरण से छुटैं। जो सूर्य नारायणके रथको खैंचैं वे जन्म २ में आरोग्य और धनवान् होयँ। जो पुरुष सूर्यनारायणकी रथयात्रा करते हैं वे देवता हैं और सूर्यनारायणके परमप्रिय हैं। और जो पुरुष क्रोधसे अथवा मोहसे रथयात्राका भंगकरैं उन पापियों को मन्देह नामक राक्षसजानो। धनधान्य सुवर्ण और अनेक प्रकार के वस्त्र जो सूर्यनारायणको चढ़ावैं वे परमगतिको प्राप्त होते हैं हाथी घोड़े भैंस और गौ जो पुरुष सूर्यनारायण को अर्पण करैं वे हजारगुणा पावैं। और अश्वमेध यज्ञका फल उनको होय। खेतीकरके युक्त भूमि देवै तो इक्कीसपीढ़ी का उद्धारकरै। ग्राम अथवा फल पुष्प आदिसे परिपूर्ण बाग जो सूर्यनारायणको चढ़ावै वह उत्तम विमान में बैठ सूर्य्यलोक में जाय अप्सराओंके साथ क्रीड़ाकरै। सूर्यभगवान् को प्रणाम करने से मन वचन और कर्मकरके कियेहुये सब पाप नष्टहोजाते हैं। आर्त्त रोगी दरिद्री दुःखी जो पुरुष सूर्यनारायण के शरण में जाय वह सब क्लेशों से छुटै। सूर्यनारायण का एक दिन पूजन करनेसे जो फल प्राप्तहोता है वह उत्तम फल सौ यज्ञ के करनेसे भी नहीं मिलता। सूर्य्यभगवान् के मन्दिर में प्रेक्षणक अर्थात् तमाशा करावै तो राजसूय यज्ञका फल पावै। उत्तम वेश्याओं का समूह जो सूर्य्यनारायण के अर्पण करै वह सूर्य्यलोकको जावै। भारत का पुस्तक चढ़ावै तो सब पापोंसे छुट विष्णुलोक में निवास करै रामायण चढ़ावै तो बाजपेय यज्ञके फलको प्राप्तहोकर शिवलोक को जाय।

भविष्यपुराण अथवा साम्बपुराण सूर्य्यनारायण के अर्पण करै तो राजसूय और अश्वमेधका फल पावै। ग्रीष्म ऋतु में सूर्य्यनारायण के मंदिर में जो प्रपा अर्थात् जलशाला बनावै और शीतकाल में शीत निवारण वस्त्र वहां रक्खै वह अश्वमेधका फल पावै और स्वर्ग में निवास करै सूर्य्यनारायण के सम्मुख इतिहास पुराण आदि बँचवावै वह हजार अश्वमेध के फल को प्राप्त होता है। इतिहास और पुराण की कथा से अधिक कोई पदार्थ सूर्य्यनारायण को प्रिय नहीं है इसलिये इनके मन्दिर में अवश्य पुराण बँचवावै अथवा आप बांचै॥

नब्बेवां अध्याय॥

वैश्य व ब्राह्मणकी कथा, सूर्य मन्दिरमें पुराण बांचने का फल॥

ब्रह्माजी कहते हैं कि हे दिंडी! हम तुमको एक इतिहास सुनाते हैं प्रीति से सुनो। एक समय कुमार हमारे समीप आये हमने भी उनको आदर से आसन पर बैठाय कुशल प्रश्न पूछ यह भी पूछा कि आप कहां से आये हो तब कुमार कहने लगे कि महाराज आज हम सूर्यलोकमें गयेथे वहां हम ने भक्तिसे सूर्यनारायण का पूजन किया और प्रदक्षिणा कर प्रणाम करा और उनकी आज्ञा से आसन पर बैठे इसी अवसर में रत्नों के जड़ाऊ विमान में बैठा हुआ अति तेजस्वी एक पुरुष वहां आया उसको देख सूर्य्यनारायण अपने सिंहासनसे उठे और उसका दहिना हाथ पकड़ बड़ेआदर से आसन पर बैठाय अर्घ्य दे प्रीतिसे स्वागत प्रश्नकरते भये और प्रीतिसे यह भी उस पुरुषसे कहा कि तुम हमारे परम प्रिय हो अब प्रलय पर्य्यन्त हमारे समीपही रहो

ब्रह्मलोक को जाओगे। सूर्य्यनारायण उस पुरुषका आदर करही रहे थे कि विमान में बैठा हुआ एक पुरुष आया उसका भी पहिली भांति सूर्य्य नारायण ने बहुत आदर सत्कार किया यह देख हमको बहुत आश्चर्य्य हुआ तब हमने सूर्य्यनारायण से पूछा कि महाराज ये दोनों कौन हैं इनने ऐसा क्या उत्तम कर्म किया है कि आपने अपनेहाथ इन दोनों का पूजन किया। यह देख हमको बड़ा आश्चर्य हुआ है क्योंकि ब्रह्म विष्णु और शिव सदा आपका अर्चन करते हैं और आपने इनका पूजन किया यह बड़े आश्चर्य की बात है कौन ऐसा उत्तम कर्म इन दोनोंने किया कि जिस का यह फल है आप कृपा कर हमको कहैं॥

यह सुन सूर्य भगवान् कहने लगे कि आपने बहुत अच्छ बात पूछी हम इसका वर्णन करते हैं आप श्रवण करो। हमारे वं के राजाओं की राजधानी अयोध्यानाम नगरी है उसमें धन पा ल नाम एक वैश्य था उसने एक बहुत उत्तम हमारा मन्दि बनाया और ब्राह्मणों के समूह का पूजन कर पौराणिक आ चार्य्य को बुलाय पुस्तक का और आचार्य का भक्तिसे अर्च कर यह प्रार्थना करी कि महाराज आपसूर्यनारायणके सम्मु खपुराण बांचैं जिससे ये चारों वर्णके मनुष्य श्रवणकरैं औ मेरे ऊपर भी सूर्यनारायण का अनुग्रह हो। यह कहकर सौ मोहर आचार्य को समर्पण कर प्रार्थना करी कि महाराज आप प्रीति से कथा बांचैं वर्ष के अनन्तर आपका और भी पूजन करूंगा यह सुन आचार्य्य प्रसन्न हो कथा कहने लगे परन्तु छः महीने के अनन्तर वैश्यका देहांत होगया वही वैश्य यह पुरुष है जो पहिले आया है हमने इसकेलाने को विमान

भेजाथा हे कुमार! गन्ध पुष्प आदि उपचारों से पूजन करने करके हमारी वैसी प्रसन्नता नहीं होती जैसी पुराण कथा बँचवाये से होती है गौ सुवर्ण वस्त्र भूषण हाथी घोड़े ग्राम नगर आदि हमारे अर्पणकरै तौभी पुराण कथा विना हम प्रसन्न नहीं होते हे कुमार! बहुत कहांतक कहैं पुराण कथासे अधिक हमारी प्रीति करनेहारा कोई कर्म नहीं है जो दूसरे विमान में पुरुष आया यह भी उसी नगरमें ब्राह्मण था एक दिन यह कथा श्रवण करने हमारे मन्दिर में गया वहां जाय इसने भक्तिसे पौराणिक का पूजनकर प्रदक्षिणा करी और एक माशा सुवर्ण कथा पर चढ़ाया और कथा श्रवण कर बहुत प्रसन्न भया केवल इसी कर्मके फलसे यहां प्राप्त भया और हमने अपने हाथ इसका पूजन किया हे कुमार! भक्ति से जो पौराणिक का पूजन करै उसने ब्रह्मा विष्णु शिव आदि सब देवताओं का पूजन किया जो पौराणिक को पूजन कर भोजन करावै उसको पंद्रह वर्ष तक करेहुये हमारे पूजन का फल प्राप्त होता है यम यमुना तपती शनैश्चर मनु आदि हमारे संतानभी हमको ऐसे प्रिय नहीं हैं जैसा पुराण बांचने वाला पुरुष प्रियहै एकबार पौराणिक का पूजन करने से दोसौ वर्षपर्य्यन्त हमको तृप्ति रहती है केवल हमारीही तृप्ति नहीं होती इन्द्र आदि देवता भी तृप्त होजाते हैं क्योंकि पौरा-णिक सब देवताओं का प्रीतिपात्र है उसके प्रसन्न होने से सब देवता प्रसन्न होते हैं हे ब्रह्माजी! यह बात सूर्य्यनारायण के मुखसे श्रवणकर बड़े आश्चर्य्य से आपके पास आये हैं अब आप हमारा सन्देह निवृत्त करें कि क्या पुराण श्रवण का ठीक ऐसाही फलहै हे त्रिपडी! यह सुन हमने कुमार से कहा

कि तुम धन्यहो कि ऐसा सत्कर्म्म करनेहारे पुरुषों का दर्शन किया और सूर्य्यनारायण के मुखसे उनकी प्रशंसा श्रवण करी हे कुमार! सूर्य्यनारायण ने जो कथन किया सब यथार्थ है उसमें कभी भ्रांति मत करो हे कुमार! हमने अपने पंचम मुखसे इतिहास और पुराण रचे हैं हमको चारों वेदोंसे भी पुराण और इतिहास अधिक प्रिय हैं क्योंकि वेदों का अर्थ गूढ़ है और ये सब स्फुटार्थ हैं धर्म अर्थ काम और मोक्षका इनमें विस्तारसे वर्णन है जो इनको श्रवण करै वह अवश्य परमपद पाता है और पौराणिक को दक्षिणा देवै तो बहुतही फलहै जैसे देवताओं में इन्द्र और शस्त्रों में वज्र सर्वोत्तम है इसी प्रकार मनुष्यों में पुराण बांचनेवाला श्रेष्ठ है। जो पौराणिक का पूजन भक्ति से करै उसको सम्पूर्ण जगत्के पूजन का फल प्राप्त होताहै मनुजी ने भी कहा है कि पौराणिक के समान और कोई पात्र नहीं है ब्रह्माजी कहते हैं कि हे दिण्डी! इस प्रकार हमारे मुखसे सुन प्रसन्न हो कुमार अपने धाम को गये हे दिण्डी! सूर्य्यनारायण के मन्दिरमें जो पुराण श्रवण करै वह परमगति को प्राप्त होता है॥

इक्यानबेका अध्याय॥

सूर्यनारायण को स्नानआदि करानेका फल॥

ब्रह्माजी कहते हैं कि हे दिण्डी! जो पुरुष प्रदक्षिणाकर भूमि पर मस्तक रख सूर्यनारायण को प्रणामकरै वह उत्तम गति पाताहै जूता पहिने जो पुरुष सूर्यमंदिर में जाय वह अंधतामिस्रनाम घोर नरकमें पड़ताहै मूत्र विष्ठा अथवा थूक जो सूर्यनारायणके मंदिरमें डालते हैं वेभी नरकमें पड़ते हैं घृत दूध शहद इक्षुरस और उत्तम जल जो सूर्यनारायण के स्नान के

लिये देवैं वे उत्तम गति पावैं स्नानके समय जो सूर्यनारायण का दर्शन करैं वे अश्वमेधके फलको प्राप्तहोय शिवलोकको जाते हैं जो भक्तिसे स्नान करावैं वे अश्वमेध और राजसूयके फलको प्राप्त होयँ परन्तु ऐसे स्थानमें स्नान कराना चाहिये जहां स्नानके जलको कोई उल्लंघन न करै इस जलके उल्लंघन करने से अशुभ होता है अर्थात् लंघन करनेहारा पुरुष नरकमें पड़ताहै घृतसे स्नान करावै तो ब्रह्मलोक को, शहद से स्नान करावै तो वरुण लोक को, जलसे स्नान करावै तो देवलोक को, इक्षुरससे स्नान करावै तो वायुलोक को और सब द्रव्यों से स्नान करावै तो सूर्य्यलोक को प्राप्त होताहै ॥

बानबेका अध्याय ॥

जयासप्तमीका विधान और फल ॥

दिण्डी पूछते हैं कि महाराज आपने सात सप्तमी कही उन में एकका तो विस्तारसे वर्णन किया और बाकी छः सप्तमियों का विधान नहीं कहा इसलिये कृपाकर आप उनका भी वर्णन कीजिये जिनके उपवास करने से सूर्य्यलोककी प्राप्ति होय यह दिण्डी का वचन सुन ब्रह्माजी कहने लगे कि हे दिण्डी! शुक्लपक्षकी जिस सप्तमी को हस्त नक्षत्र होय उसको जया सप्तमी कहते हैं उसदिन कियाहुआ स्नान, दान, जप, होम, पूजन आदि कर्म सब सौगुणा होजाताहै यह सप्तमी सूर्य्यनारायण को बहुत प्रियहै इसके उपवास से धन, यश, पुत्र और सब मनोवाञ्छित फल प्राप्त होते हैं जया सप्तमी से व्रतका आरम्भ कर चार २ महीने में पारण करै इस प्रकार एक वर्ष में तीन पारण होते हैं पहिले पारण में करवीरके पुष्प चढ़ाय कसार

का नैवेद्य लगावै और ब्राह्मणों को भी कसारही भोजन करावै पंचमीको एक भक्त षष्ठीको नक्त और सप्तमी को उपवास कर अष्टमी को पारण करै इस व्रतको अर्क के काष्ठसे दन्तधावन कर श्वेत सरसों का उबटना लगाय स्नान करै और गोबरका प्राशन करै यह प्रथम पारण का विधान है दूसरे पारणमें चमेली के पुष्प श्वेत चन्दन विजय धूप पायस नैवेद्य और भांति २ के उपचारों से सूर्य्यनारायण का पूजन करै और ब्राह्मण भोजन कराय आप भी मौन से खीर का भोजन करै और यह कहै कि देवदेव श्रीसूर्य्यनारायण मुझ पर प्रसन्न होयँ इस पारणमें खदिरके काष्ठसे दन्तधावन और पंचगव्य का प्राशन करै तीसरे पारण में श्वेतचन्दन अगस्त्यपुष्प और भांति २ के नैवेद्योंसे पूजन करै इस पारण को कुशाके जलका प्राशन और बदरी काष्ठ का दन्तधावन करै वर्षके अन्तमें सूर्य्यनारायण का बड़ा पूजन करै और नाच तमाशा आदि उत्सव करावै गौ भूमि और सुवर्ण आदि दान देकर ब्राह्मणों को प्रसन्न करै और वस्त्र भूषण आदि से पौराणिक का पूजन कर सूर्य्यनारायण के सम्मुख खड़ाहो यह श्लोकपढ़ै कि (देवदेवजगन्नाथ सर्वरोगार्त्तिनाशन। ग्रहेशलोक तपनविकर्त्तनभयापह ॥ कृतेयंदेवदेवेशजयानामेतिसप्तमी। मयातवप्रसादेन धन्यापापहराशिवा) यह पढ़ वारंवार प्रणाम करै हे दिण्डी ! इस विधिसे जो सप्तमी व्रतकरै उस का स्नान आदि कर्म्म सौगुणा होजाता है इस व्रतके करनेहारा पुरुष धन धान्य पुत्र आयुष् और आरोग्य पाता है और बहुत काल सूर्य्यलोक में निवास कर वहां उत्तम भोग भोग भूमि पर आय चक्रवर्त्ती राजा होय चिरकालपर्य्यन्त

निष्कंटक राज्य करता है हे दिण्डी! इस माहात्म्य के श्रवण से भी बहुत फल होता है॥

तिरानबेका अध्याय॥

जयन्तीसप्तमीका विधान और फल॥

ब्रह्माजी कहते हैं कि हे दिण्डी! माघ शुक्ल सप्तमी का नाम जयंती है उस का यह विधान है कि पंचमी को एक भक्त षष्ठी को नक्त और सप्तमी को उपवास कर अष्टमी को पारण करै इस व्रत में चार पारण होते हैं प्रथम पारण में केसर का चन्दन, बकपुष्प, मोदक, नैवेद्य और घृतका धूप इन से सूर्य-नारायण का पूजन करै ब्राह्मणों को मोदक और बहुत उत्तम भात भोजन करावै और आप पंचगव्य प्राशन करै इस प्रथम पारण के करने से अश्वमेध का फल होता है दूसरे पारण में कमल के पुष्प, रक्तचन्दन, गुग्गुल, धूप और गुड़ के अपूप ये सूर्य्यनारायण के समर्पण करै और ब्राह्मणोंको भी गुड़के अपूप भोजन करावै आप गोबर का प्राशन करै इस पारण के करने से राजसूययज्ञ का फल होताहै तीसरे पारण में रक्त-चन्दन, मालती पुष्प, विजय धूप और गुड़के अपूप नैवेद्य इन से सूर्य्यनारायण का अर्चन कर ब्राह्मणों को भी अपूपही भोजन करावै और कुशोदक प्राशन करै इसके करने से राजसूय और अश्वमेध का फल प्राप्त होता है चौथे पारण में रक्तचंदन, रक्तकरवीरके पुष्प, अमृत धूप और पायस नैवेद्य इन करके पूजन करै और पंचगव्य प्राशन करै चन्दन, अगुरु, मोथा, कस्तूरी और सिह्लक ये समभाग लेकर धूप बनावै उसको अमृत धूप कहते हैं चारों पारणों में चित्रभानु, भानु, आदित्य और भास्कर इन नामों से क्रम करके पूजन करै इस विधि

इस तिथि को जो सूर्य्यनारायण का पूजन करै वह परम पद को प्राप्तहोता है इस व्रत के करने से पुत्र, धन, आरोग्य और यशकी प्राप्ति होती है वर्ष पूरा होने पर बड़ा उत्सव करै ब्राह्मण भोजन करावै वस्त्र भूषण आदि से पौराणिक का पूजन करै और यह श्लोक पढ़ सूर्य्यनारायणकी प्रार्थना करै कि (धर्मकार्येषुदेवेश अर्थकार्येषुनित्यशः । कामकार्येषुसर्वेषु जयोभवतुसर्वदा१) इस विधि से जो इस व्रत को करै वह सब पापों से मुक्तहो उत्तम विमान में बैठ सूर्य्यलोक को जाय और सूर्य्य के समान तेजस्वी होय ॥

चौरानबेका अध्याय ॥

अपराजितासप्तमी का विधान ॥

ब्रह्माजी कहते हैं कि हे दिराडी ! भाद्र शुक्ल सप्तमी को अपराजिता कहते हैं चतुर्थी को एक भक्त पंचमी को नक्त षष्ठी को उपवास और सप्तमी को पारण करै इस व्रत में चार पारण कहे हैं प्रथम पारण में रक्तचन्दन, करवीर पुष्प, गूगल का धूप और गुड़ के अपूपोंका नैवेद्य इन से सूर्य्यनारायण का पूजन करै और गुड़ के अपूपही ब्राह्मणोंको भोजनकरावै दूसरे पारण में केसरका चन्दन, श्वेतपुष्प, सिह्लकका धूप और शाली का भात नैवेद्य सूर्य्यनारायण के अर्पण करै तीसरे पारण में अगुरु का चन्दन, रक्तकमल, अनन्त धूप, गुड़के अपूप नैवेद्य इन से पूजन करै चन्दन, ग्रंथि, पर्ण, अगुरु, सिह्लक, शर्करा, कपूर और मोथा इन को समभाग मिलाकर अनन्त धूप बनता है यही विधि चतुर्थ पारण की है चारों पारणों में भग, अंशुमान, अर्यमा और सविता इनका क्रम से पूजन करै और गोमूत्र पंचगव्य घृत और गरम जल चारों पारणों में प्राशन

करै इस विधि से जो इस सप्तमी व्रत को करै वह शत्रुओं में कभी पराजय न पावै और धर्म अर्थ तथा काम को पाय सूर्य्यलोक में जावै वर्ष पूरा होनेपर ब्राह्मण भोजन कराय पौराणिक का पूजन करै और रक्तवर्ण की ध्वजा सूर्य्यनारायण के मंदिर पर चढ़ावै इस व्रत को जो पुरुष करै वह सदा युद्ध में जय पावै और अन्त समय उत्तम विमान में बैठ सूर्य्यलोक को जावै ॥ पंचानवेका अध्याय ॥

महाजया सप्तमी का विधान ॥

ब्रह्माजी कहते हैं कि हे दिण्डी ! जिस सप्तमी को संक्रांति होय उस को महाजया सप्तमी कहते हैं उस दिन कियाहुआ स्नान, दान, जप, होम, पूजन आदि कर्म्म कोटिगुणित होजाता है इस तिथि को जो घृत करके सूर्य्यनारायण को स्नान करावै वह अश्वमेध का फल पाय स्वर्ग्ग में निवास करता है जो भक्ति से दुग्ध करके स्नान करावै वह सब पापों से छुट सूर्य्यलोक को जाय और अनेक प्रकार के उपचारों से पूजनकर भांति २ के नैवेद्य लगावै वह किंकिणी जाल करके युक्त सुवर्ण के विमान में बैठ सूर्य्यलोक में प्राप्तहोय वहां से आय सूर्य्य के समान तेजस्वी और चन्द्रके सम कांतिमान् होकर बहुत काल धर्म्म से राज्य करै हे दिण्डी ! इस व्रतको भक्तिसे करै तो स्थिर लक्ष्मीपावै और अन्तसमय सूर्य्यनारायणमें लीन होय ॥

छियानवेका अध्याय ॥

नन्दासप्तमी का विधान ॥

ब्रह्माजी कहते हैं कि हे दिण्डी ! मार्गशीर्ष महीने के शुक्ल पक्षकी सप्तमी नन्दा कहाती है पंचमी के दिन एक भक्त षष्ठी को नक्त सप्तमी को उपवास और अष्टमी को पारण करै

व्रत के भी तीन पारण हैं प्रथम पारण में सुगन्ध, चन्दन, मालती पुष्प, कर्पूर और अगुरुका धूप दही भात और शर्करा का नैवेद्य इनसे सूर्य्यनारायण का पूजन कर और ब्राह्मणों को भी दही भात और खाँड़ भोजन कराय आप भोजन करै दूसरे पारण में रक्तचंदन, पलाश पुष्प, यत्तनामक धूप और खाँड़ से वेष्टित पक्वान्न नैवेद्य इन से सूर्य्यनारायण का पूजन करै कपूर, चन्दन, कूट, अगुरु, सिह्लक, ग्रन्थिपर्णी, कस्तूरी, केसर, गृंजन और हरड़ इनके सम भाग मिलाने से यत्त धूप बनता है ब्राह्मणों को भोजन कराय आप भी मौन से भोजन करै तीसरे पारण में चन्दन, नीलकमल, प्रबोधनाम धूप और खीर खाँड़ के नैवेद्य से सूर्य्यनारायण का पूजन कर ब्राह्मण भोजन करावै कालाअगुरु, सिहूलक, बाला, कस्तूरी, चन्दन, तगर, मोथा और खाँड़ इन से प्रबोध धूप बनता है तीनों पारणों में विष्णु भग धाता इन का क्रम से अर्चन करै इस विधि से जो पुरुष नंदासप्तमी का व्रतकर पारण करै वह पुत्र धन विद्या यशआदि अपने मनोवाञ्छित फल पाता है और बहुत काल नंदनवन में अप्सराओं के साथ विहार कर सूर्य्य भगवान् में लीन होता है इस माहात्म्य के श्रवण करने से भी स्वर्गकी प्राप्ति होती है॥

सत्तानबेका अध्याय॥

भद्रासप्तमी का विधान॥

ब्रह्माजी कहते हैं कि हे दिण्डी! जिस शुक्लपक्षकी सप्तमी को हस्त नक्षत्र होय वह भद्रासप्तमी कहाती है उस दिन उपवास कर सूर्य्यनारायण को स्नान करावै और चन्दन से लेपन कर करवीर आदि पुष्प चढ़ावै गुड़ सहित गेहूं के आटे

का भद्र बनावै उस के चारोंशृङ्गों में हीरा मोती पद्मराग और पन्ना लगाय सूर्य्यनारायण के सम्मुख स्थापन करै और उस के ऊपर यथाशक्ति सुवर्ण भी धरै चतुर्थी को एक भक्त पंचमी को नक्त षष्ठीको अयाचित और सप्तमी को उपवासकरै उपवास के दिन पाखण्डी, कुकर्मी, दाम्भिकआदि पुरुषों से संभाषण न करै और दिनमें न सोवे भक्ति से सूर्य्यनारायण का पूजनकर वह भद्र ब्राह्मण को देवै इस विधिसे जो उपवासकर भद्रका दान करै वह सब मनोवाञ्छितफल पावै यह सुन दिण्डी ने पूछा कि महाराज यह भद्र कौन पदार्थ है क्योंकर बनता है और इस के दान से क्याफल होताहै यह आप वर्णन करैं तब ब्रह्माजी बोले कि हे दिण्डी! यह व्योमभद्रनामक सूर्य्यनारायण का चिह्न है इस के दान से सब पाप निवृत्तहोते हैं और सूर्य्यनारायणकी प्रसन्नता होती है गेहूँका आटा घृत श्वेत शर्करा इलायची दालचीनी तजपत्र नागकेसर और दाख खोपरा आदि मेवा इन सब को मिलाय बहुत स्वादिष्ठ और सुगन्ध भद्र बनावै उस के चारों शृङ्गोंमें हीराआदि चार रत्न और मध्य में इन्द्र नील लगाय सूर्य्यभगवान् के प्रीत्यर्थ पौराणिक अथवा भोजक को देवै इसप्रकार जो भद्रका दान करै वह सब प्रकार के भद्र अर्थात् कल्याण पावै और बहुत काल सूर्य्यलोक में निवासकर ब्रह्मलोकको जाय फिर भूमिपर आय चक्रवर्त्ती राजा होय हे दिण्डी! इस भद्र सप्तमी का जो उपवास करैं अथवा जो इस माहात्म्यकोही पढ़ैं और सुनैं वे सब कल्याण के भागी होते हैं और अन्त में उत्तम गति पाते हैं॥

इतनीकथा सुनाय सुमन्तुमुनि बोले कि हे राजाशतानीक! इस प्रकार ब्रह्माजी ने दिण्डी के प्रति जो सप्तमी माहा॰

कहा था वही हम ने आप को श्रवणकराया। सप्तमी व्रत को ग्रहणकर पारणकिये विना जो पुरुष त्यागते वह आरूढ़ पतित अर्थात् ऊँचेस्थानपर चढ़ गिरनेवाला होताहै इसलिये उद्यापन किये बिन इस व्रतको न त्यागै जो भक्तिसे इस व्रत को कर उद्यापन करे वह अश्वमेध का फल पाता है॥

अट्ठानबेका अध्याय॥

तिथिस्वामी और नक्षत्रस्वामियों के पूजन का फल॥

सुमन्तुमुनि कहतेहैं कि हे राजा! सब तिथि सूर्य्यनारायण कीही हैं परन्तु उन में सप्तमी सब से प्रिया है जैसे पुरुष की बहुत सी भार्य्याओं में एक पर अधिक प्रीति होती है यह सुन शतानीक ने पूछा कि महाराज सब तिथियों के सूर्य्यनारायण स्वामी हैं फिर सप्तमी कोही उनका याग क्यों करते हैं यह राजाका प्रश्नसुन सुमन्तुमुनि ने कहा कि हे राजा! यह बात विष्णु भगवान् ने ब्रह्माजी से भी पूछी थी तब ब्रह्माजी हँसकर कहने लगे कि महाराज सूर्य्यनारायण ने सब तिथि देवताओं को बांटदीं केवल सप्तमी अपने लिये रक्खी जो तिथि जिस देवता को दी वही उसका स्वामी कहाया और उस तिथिको पूजन करने से वरप्रदहुआ। भगवान् ने पूछा कि कौन २ तिथि किस २ देवताको दी कि जिसदिन पूजन करने से वह वरदायक होता है तब ब्रह्माजी ने कहा कि महाराज प्रतिपदा अग्नि को, द्वितीया हम को, तृतीया यक्षराज को, चतुर्थी गणेश को, पंचमी नागराज को, षष्ठी कार्तिकेय कोही और सप्तमी अपने लिये रक्खी अष्टमी रुद्रको, नवमी दुर्गाको, दशमी यमराज को, एकादशी विश्वेदेवों को, द्वादशी आपको, त्रयोदशी कामदेव को, चतुर्दशी शिवजी को, पूर्णिमा

चन्द्रमा को और अमावास्या पितरों को दी ये तिथि चन्द्रमा की कला हैं कृष्णपक्ष में देवता इनको पान करजाते हैं और शुक्लपक्ष में फिर उत्पन्न होती हैं सोलहवीं कला अक्षय है चन्द्रमा का क्षय और वृद्धि सूर्यनारायण करते हैं इसलिये चन्द्रमा के भी स्वामी वेही हैं जिस तिथिमें पूजन करने से जो देवता प्रसन्न होकर जो फल देता है उसका हम संक्षेप से वर्णन करते हैं प्रतिपदाके दिन अग्नि में घृत आदि का हवनकरे तो धन धान्य पावै द्वितीया को हमारा पूजन कर ब्रह्मचारियों को भोजन करावै तो सब विद्याओंका पारगामी होय तृतीया को कुबेर का पूजन करै तो व्यापार में बहुत लाभ होय और धनाढ्य होजाय चतुर्थी को गणेशका अर्चन करै तो सब कार्य्य निर्विघ्न सिद्ध होयँ और शत्रुओं को विघ्न होय पंचमी के दिन नागपूजा करै तो विष का भय न होय और स्त्री पुत्र तथा धन भी पावै षष्ठीको कार्त्तिकेयका अर्चन करै तो बुद्धि रूप आयुष् और कीर्तिकी वृद्धि होय सप्तमी को सूर्य्यनारायण का पूजनकरै तो मनोवाञ्छित फल पावै अष्टमीके दिन शिवका पूजनकरै तो स्थिर लक्ष्मी पावै और संसार पाशको काटनेहारा ज्ञान प्राप्त होय जिससे जन्म मरण का भय छूटै नवमीके दिन भगवती का पूजन करै तो सब प्रकारके कष्टोंसे छूटै और युद्ध तथा विवादमें जय पावै दशमी के दिन यमराज का पूजन करै तो मृत्युरोग और नरक का भय न होय एकादशी को विश्वेदेवों का पूजनकरै तो सन्तान धन धान्य पशु और भूमि पावै द्वादशी के दिन आप का पूजन करै तो विजय पावै और जगत्पूज्य होय त्रयोदशी को कामदेव का अर्चन करै तो उत्तमरूप पावै चतुर्दशी के

शिवजी को पूजे तो बहुत से पुत्र धन और ऐश्वर्य्य पावै पूर्णमासी को चन्द्रमाका पूजनकरै तो बहुत मनुष्यों का अधिपति बनै और उसके सब काम पूर्ण होयँ अमावास्याके दिन पितरों को पिण्ड देवै तो सन्तान धन और आयुष की वृद्धि होय य तो केवल पूजन का फल है और जो उपवास जप हव आदि करै और मूलमन्त्र तथा अंगमन्त्रों करके भक्तिसे पूज करै तो बहुतही फल पावै परन्तु पूजन आदि में वित्तशाठ न करै बहुत से घृत दही दूध शहद और समिधाओं से हव करै और शान्तचित्त होकर मन्त्र जपै तब पूरा फल होताहै देवताकी उपासना से मनुष्य इस जन्म में सुखी रहता है और परलोक में उपास्य देवताके समीप बहुत काल निवासकर उत्तम जन्मपाय उसी देवताका भक्त होताहै। यह तो तिथियों का पूजन कहा इसी प्रकार नक्षत्रों के भी देवता हैं जिस नक्षत्र में चन्द्रमा होय वह उस दिनका नक्षत्र होताहै उसमें उसके देवताका पूजनकरै जैसे अश्विनी नक्षत्र में अश्विनी कुमारों को पूजे तो दीर्घ आयुष पावै भरणी में गन्ध कृष्णवर्णके पुष्प और नैवेद्यआदि उपचारों से यमराज का पूजन करै तो अपमृत्युसे बचै कृत्तिकामें रक्तपुष्प और घृतआदि के होम से अग्निका पूजनकरै तो बहुत सम्पत्ति मिलै रोहिणी में प्रजापति की अर्थात् हमारी पूजा करै तो सन्तान और पशुओं की वृद्धि होय मृगशीर्ष में चन्द्रका पूजन करै तो धन और आरोग्य पावै आर्द्रा नक्षत्र में शिवजी का अर्चनकरै और श्वेतकमल आदि पुष्प चढ़ावै तो विजय यश सन्तान और धन पावै और देह त्यागके अनन्तर देवता होय पुनर्वसु में भक्तिसे अदितिका पूजनकरै तो वह माताकी भांति रक्षा

करती है पुष्य में पीत पुष्पों करके बृहस्पति का पूजन करै तो धन सन्तान आदि की वृद्धिहोय श्लेषामें नागों का पूजन कर दुग्धआदि से उनका तर्पणकरै और अनेक प्रकार मीठे पकान्न नागों को नैवेद्य लगावे तो विषआदि का भय कभी न होय मघा में हव्य कव्य आदि करके पितरों का पूजन करै तो धन धान्य उत्तम सेवक पुत्र और पशुपावै पूर्वाफाल्गुनी में भगनाम आदित्य का पूजन करै तो संग्राम में जयहोय उत्तराफाल्गुनी में जो कन्या अर्यमा का अर्चन करै वह उत्तम पति पावै और पुरुष अर्चन करै तो रूप और धन करके युक्त भार्य्या मिलै हस्त में सब प्रकार के पुष्पों से सूर्य्य नारायण का अर्चन करै तो बहुत धन मिलै चित्रा में त्वष्टा का अर्चन करै तो राज्य पावै स्वाति में पवन को पूजै तो सम्पत्ति मिलै विशाखा में इन्द्र और अग्नि का पूजन करै तो धन धान्य और तेजकी प्राप्ति होय अनुराधा में रक्तपुष्पों करके मित्र का अर्चन करै तो सब का प्रियहोय ज्येष्ठा में इन्द्र का अर्चन करै तो धन पुष्टि और उत्तम गुण पावै मूल में देवता पितर और निर्ऋति का पूजन करै तो शरीर और मानस सन्ताप से छूटै पूर्वाषाढ़ा में जलका पूजन करै तो आरोग्य पावै उत्तराषाढ़ा में पुष्प आदि करके विश्वेदेवों का पूजन करै तो मनोवाञ्छित फल पावै श्रवण में श्वेत पीत और नील पुष्पों करके भक्ति से आप का अर्च्चन करै तो लक्ष्मी और युद्ध में विजय पावै धनिष्ठा में गन्ध पुष्प आदि से वसुओं का पूजन करै तो महाभय भी निवृत्त होय शतभिषा में रोगी पुरुष वरुण का पूजन करै तो आरोग्यहोय और आरोग्य पुरुष करै तो बहुत ऐश्वर्य्य पा
पूर्व्वाभाद्रपदा में शुद्ध स्फटिक के समान अजैकपाद ना

रुद्र का पूजन करै तो मुक्तिपावै इस में कुछ सन्देह नहीं उत्तराभाद्रपदा में अहिर्बुध्न्यनाम रुद्रको पूजै तो सब प्रकार की शान्ति होय रेवती में भक्ति से पूषाका पूजनकरै तो पुष्टि शान्ति धृति सम्पत्ति और सन्तति पावै ये हमने संक्षेप से नक्षत्रयज्ञकहे हैं इन को अपने वित्तानुसार भक्तिसे करै तो सब फल पावै जिस नक्षत्र में यात्रा अथवा और कोई कर्म करनाहो पहिले उस नक्षत्र का याग करै पीछे वह कर्म करै तो कभी निष्फल न होय और याग करने का सामर्थ्य न होय तो उस देवता के मन्त्र का जपही करलेवै कालचक्र में सूर्य्यनारायण का पूजन करै तो मुक्तिपावै क्योंकि नक्षत्र चन्द्रमा तिथि अथवा सम्पूर्ण जगत् सूर्य्यनारायण के अधीन है जगत् में ऐसा कोई पदार्थ नहीं जो सूर्य्याराधन से न मिलै हे भगवन्! आप भी भक्ति से सूर्य्यनारायण का आराधन करैं यज्ञ पूजन नमस्कार शुश्रूषा उपवास और ब्राह्मण भोजनआदि करके सूर्य्यनारायण का आराधन करते हैं वे सब पापों से छूट सूर्य्यलोकको जाते हैं॥

निन्नानबेका अध्याय॥

सूर्य्यनारायण की उपासना की आवश्यकता॥

ब्रह्माजी कहते हैं कि हे विष्णु भगवन्! जो बहुत दृढ़ मन्दिर सूर्य्यनारायणकी प्रीति के लिये बनावै वह अपने सात पुरुषों सहित सूर्य्यलोक में निवास करता है जो पुरुष उत्तम पुष्प सुगन्ध धूप दीप और नैवेद्य सूर्य्यनारायण के अर्पण करै उसको यज्ञका फल प्राप्तहोता है यज्ञमें बहुत धन चाहिये इसलिये धनहीन मनुष्य दूर्वा के अंकुरों करके भी सूर्य्यनारायण

का पूजन करें तो यज्ञके फल को प्राप्त होयँ उत्तमउत्तम भूषण रक्तवर्ण के वस्त्र भांति २ के भक्ष्य भोज्य सूर्यनारायण को निवेदन करै तीर्थके जल घृत शहद दूध आदिसे स्नान करावै तो ऐसे लोक में निवास करै जहां घृत दुग्ध आदि के तलाव भरेहों। हे भगवन्! सूर्यनारायण का आराधन कर सतहत्तर पुरुष तो विदेहराज के और पचास पुरुष हैहय के मुक्ति को प्राप्त भये इसलिये सूर्यनारायण की अवश्य उपासना करनी चाहिये यह सुन विष्णुभगवान् ने पूछा कि हे ब्रह्माजी! उपवास करनेसे किसप्रकार सूर्यनारायण प्रसन्न होते हैं उपवास में त्याज्य क्या २ है और सूर्यनारायण का आराधन किस विधि करना चाहिये यह आप वर्णन करैं। यह भगवान् का वचन सुन ब्रह्माजी कहने लगे कि महाराज गन्ध पुष्प आदि उपचारों से पूजनकरै तो सूर्यनारायण अनुग्रह करते हैं फिर उपवास करनेहारे पर तो बहुत ही प्रसन्न क्यों न होयँ पापों से निवृत्त होकर गुणों के साथ जो निवास उसका नाम उपवास है एकरात्र द्विरात्र अथवा त्रिरात्र उपवास कर सूर्य्यनारायण का ध्यान करै और निष्काम हो भक्ति से पूजन जप आदि करै तो मुक्ति पावै सूर्यनारायण के आराधन विना सद्गति नहीं प्राप्त होती जिस पुरुष का चित्त विषयों में आसक्त हो और सूर्यनारायण के आराधन में अनेक विकल्प करै वह कभी उत्तम गति नहीं पाता जो संसार से मुक्त होने की इच्छा होय तो सूर्यनारायण का आराधन करै पुष्प न मिलैं तो वृक्ष के कोमल पत्र और दूर्वा के अंकुरों से ही पूजन करै पूजन आदि में भक्तिही प्रधान है भक्ति से फल होता है सूर्य्यनारायण के मन्दिर को जो पुरुष बाहिर

भीतर से मार्जन करै वह बाहिर भीतर से निष्पाप होजाय सूर्य्य भगवान् को एक बार प्रणाम करै तो दश अश्वमेध का फल होय परन्तु दश अश्वमेध करनेहारा फिर भी संसार में जन्म लेता है और सूर्यनारायण को प्रणाम करनेहार फिर जन्म नहीं लेता सूर्य्यनारायण का आराधन कर ह भगवान् ब्रह्महत्या से छूटे हमको यह पद उनके ही अनुग्र से प्राप्त भया चारों वर्ण और आश्रमों के पूज्य सूर्य्यनारायण हैं उनकेही आराधन से सब प्रकार के मनोरथ सिद्ध होते हैं और उत्तम गति मिलती है॥

सौवां अध्याय॥

फाल्गुन शुक्ल सप्तमी के उपवास का विधान॥

ब्रह्माजी कहते हैं कि हे विष्णु भगवन्! अब हम उपवासों का वर्णन करते हैं जिनके करने से मनोवाञ्छित फल प्राप्त होते हैं। फाल्गुन शुक्ल सप्तमी को उपवास कर सूर्य्यनारायण का पूजन करै और चलने में गिरने में छींकने में हेलि इस सूर्य्य-नारायण के नाम का उच्चारण करै और दिनभर इसी नाम को जपै पाखंडी पतित और पापी पुरुषों के साथ संभाषण न करै और पूजन के अन्त में हाथ जोड़ सूर्यनारायण के सम्मुख यह श्लोक पढ़ै (हंसहंसकृपालुस्त्वमगतीनांगतिर्भव। संसारा र्णवमग्नानां त्राताभवदिवाकर) पूर्वाह्ण मेंही स्नान कर पूजन करै और हंस २ इस नाम का स्मरण करै चैत्र वैशाख और ज्येष्ठमें भी इसी विधि से पूजन करै तो सत्यलोकको जाय आषाढ़ आदि चार महीने भी इसी रीति से अर्चन कर मार्तण्ड नाम का जप करै और गोमूत्र का प्राशन करै तो सूर्य्य-लोक में प्राप्तहोय कार्त्तिक आदि चार मास पूजन कर दुग्ध

का प्राशनकरै और भास्कर नामका जप करै वह भी सूर्य्य-लोकमें चिरकाल निवास करै प्रतिमास ब्राह्मणों को दान देवै और प्रति चतुर्मास की समाप्ति पर पौराणिक का पूजन कर पुराण श्रवणकरै प्रथम चार मास के व्रतकरने से उत्तम भोग मिलते हैं दूसरे से इन्द्रके समान ऐश्वर्य्य और तीसरे चातुर्मास्य के उपवास से सूर्य्यलोक की प्राप्तिहोय। इस सप्तमी व्रत को जो पुरुष अथवा स्त्री करै वह उत्तम गति को प्राप्त होय यह तिथि धन्यहै पाप हरने में समर्थ है और सूर्य्यनारायण के आराधन योग्य है इसका माहात्म्य भी पढ़ने और सुनने से सब पाप निवृत्त होते हैं और त्रिवर्ग की प्राप्ति होती है॥

एकसौएकका अध्याय॥

सप्तमीव्रतके उद्यापन का विधान और फल॥

ब्रह्माजी कहते हैं कि हे विष्णुजी! फाल्गुनशुक्ल सप्तमी को उपवासकर अष्टमी को पारणकरै अष्टमीके दिन प्रभात-ही उठ स्नानकर भक्तिसे सूर्य्यनारायण का पूजन करै और सूर्य्यनारायण की प्रीति के लिये अग्निमें घृत से हवन करै और ब्राह्मणों को भोजनकराय दक्षिणा दे इन मन्त्रों से सूर्य्य-नारायण की प्रार्थना करै कि (यमाराध्यपुरादेवी सावित्री काममापवै। समांददातुदेवेशः सर्वान्कामान्विभावसुः १ यमाराध्यादितिःप्राप्ता सर्वान्कामान्यथेप्सितान्। सददात्वखिलान्कामान्प्रसन्नोमेदिवस्पतिः २ भ्रष्टराज्यस्तुदेवेन्द्रो यमाराध्यदिवस्पतिम्। कामार्थमाप्तवान्राज्यं समेकामंप्रयच्छतु ३) इन श्लोकों से प्रार्थनाकर पूजा समाप्त करै और अन्न भोजन करै फाल्गुन आदि चारमास में

पुष्प अगुरु धूप और खण्डसे वेष्टित पक्वान्न का नैवेद्य इनसे सूर्य्यनारायण का पूजन करै और गोशृङ्ग का जल प्राशन करै आषाढ़ आदि चार महीनों में चमेली के पुष्प गूगल का धूप और पायस नैवेद्य इन करके पूजनकरै और कुशोदक प्राशन करै आप भी पायस भोजन करै कार्त्तिक आदि चार मास में रक्तकमल महांग धूप कसार नैवेद्य इन करके सूर्य्यनारायण का पूजन करै और गोमूत्र प्राशन करै और प्रतिमास ब्राह्मणों को दक्षिणा देवै कपूर चन्दन नागरमोथा अगुरु रक्तचन्दन कस्तूरी सिह्लक और शर्करा इनके सम भाग मिलाने से महांगधूप बनता है यह धूप सूर्य्यनारायण को बहुत प्रियहै प्रत्येकपारण में भक्ति से पूजन करै क्योंकि सूर्य्यनारायण भक्ति सेही प्रसन्न होते हैं और प्रसन्न होकर अभीष्ट सिद्ध करते हैं यह सप्तमीव्रत का विधान है जिसके करने से सब पदार्थ मिलते हैं इस व्रतके करने से इन्द्रको त्रैलोक्य का राज्य सावित्री और अदिति के पुत्र शुक्र को ज्ञान धौम्य मुनि को वेद आपको लक्ष्मी और हमको सृष्टि रचने का सामर्थ्य प्राप्तहुआ इस व्रतको ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य शूद्र स्त्री आदि कोई करै वह अपना मनोवाञ्छित फल पावै इस व्रतके करने से पुत्र धन और आरोग्य मिलता है इस व्रतके करनेहारा मनुष्य जन्मान्तर में भी अपुत्र निर्द्धन और रोगी नहींहोता और स्त्रीयोनि में भी नहीं होता और सुवर्ण के विमान में बैठ इन्द्रलोक में जाय बहुत काल वहां निवासकर भूमिपर आय प्रतापी राजा होता है॥

एकसौ दोका अध्याय ॥

पापनाशिनी सप्तमी का विधान ॥

ब्रह्माजी कहते हैं कि हे विष्णुजी! फिर भी हम तिथियों का माहात्म्य कहते हैं जो सूर्य्यनारायण ने ऋषियों के प्रति कहा है जया विजया जयन्ती और अतिजया ये तिथि और उत्तरायणकी संक्रान्ति ये काल सूर्य्यनारायण के पूजनमें उत्तम हैं इनमें एक बार पूजन करने से वर्ष दिन करीहुई पूजा का फल प्राप्त होताहै यह सुन विष्णुजीने पूछा कि जया विजया आदि तिथियों का आप वर्णन करें तब ब्रह्माजी कहने लगे कि जब शुक्ल सप्तमी को हस्तनक्षत्र होय वह जया सप्तमी होती है उस दिन पूजन करै तो सात जन्मों में किये पापों से छुटै जो उपवास करै वह सब पापों से मुक्तहोय सूर्य्यलोक को जावै उस दिन का किया हुआ दान हवन आदि कर्म अक्षय होता है उस दिन सूर्य्यनारायण के सन्मुख श्रद्धा से जिस वेदका एक मंत्र पढ़ै उस सम्पूर्ण वेदके पाठका फल प्राप्त होय जिस प्रकार आकाशमें तारा प्रकाशित होरहे हैं इसी भांति इस व्रत के करनेहारा देदीप्यमान होय और बहुतकाल उत्तम लोकों में निवासकर भूमिपर जन्म ले राजा होय ॥

एकसौतीनका अध्याय ॥

पदद्वय व्रतका कथन ॥

ब्रह्माजी कहते हैं कि हे विष्णुजी ! लोकों के हितके लिये सुमेरु रूपपाद पीठपर दो पद सूर्य्यनारायण ने स्थापन किये हैं उत्तरायण रूप वामपाद को हम और आप पूजते हैं और दक्षिणायन रूप दक्षिण चरणका इन्द्र और रुद्र पूजन करते हैं सूर्य्यनारायण का आराधन वही मनुष्य करसकता है जिस

पर उनका अनुग्रह होय उत्तरायण के दिन स्नानकर घृत दुग्ध आदि से सूर्य्यनारायण को स्नान करावै और अनुलेपन धूप नैवेद्य वस्त्र भूषण आदि से सूर्य्यनारायण का अर्चन कर ब्राह्मण भोजन करावै उस दिन से पदद्वय व्रतका ग्रहणकरै और सर्व्वकालमें चित्रभानु का स्मरण करै जबतक उत्तरायण होय तबतक इसी नाम का स्मरण करतारहै और नित्य इन श्लोकों से प्रार्थनाकरै (यावज्जीववधंकश्चिज्ज्ञानतोज्ञानतोपिवा । करिष्येहंतदाचैव कीर्त्तयिष्यामितंप्रभुम् १ यदावक्ष्येऽनृतंकिञ्चिद्यदावक्ष्यामिदुर्वचः । अज्ञानादथवाज्ञानात्कीर्त्तयिष्येहतंप्रभुम् २ षण्मासानेकजापोमे चित्रभानुमयःपरम् । तंस्मरन्मरणेयाति यांगतिंसास्तुमेगतिः ३ षण्मासाभ्यन्तरेमृत्युः पदेतस्मिन्भवेन्मम । तन्मयाभास्करस्येह स्वयमात्मानिवेदितः ४ परमार्थमयंब्रह्म चित्रभानुमयंपरम् । यमन्तेसंस्मरन्याति समेभानुःपरागतिः ५ यदिप्रातस्तथासायं मध्याह्ने वाम्रियाम्यहम् । षण्मासाभ्यन्तरेन्यासं कृतंव्रतमतोमया ६ तथाकुरुजगन्नाथसर्व्वलोकपरायण । चित्रभानोयथानान्यात्वत्तोभवतिमेगतिः ७) इस प्रकार दक्षिणायन के आरम्भ पर्य्यन्त पूजन के अन्त में नित्य प्रार्थना करै इस विधि व्रत समाप्त कर ब्राह्मण भोजन करावै और भक्ति से पुराण श्रवण कर पौराणिक का वस्त्र भूषण सुवर्ण आदि से पूजन करै इस पद द्वय नामक व्रत करने से सब पाप दूर होते हैं और वह पुरुष उत्तरायण में देह त्याग उत्तम गति को प्राप्त होता है जो अनशन व्रतके करने से मिलती है और सूर्य्यनारायण के चरणद्वय के पूजनका फल मिलता है यह सूर्य्यनारायण ने अपने मुखसे शूरके प्रति कहा है ॥

एकसौचौथा अध्याय ॥
सर्वाप्ति सप्तमीका विधान ॥

ब्रह्माजी कहते हैं कि माघमासकी कृष्णसप्तमी को सर्वाप्ति सप्तमी कहते हैं उस दिन व्रत करने से सब कामना सिद्ध होती हैं माघ आदि छः मासकी संक्रांतियों को मार्त्तण्ड अर्क चित्रभानु विभावसु भग और हंस इनका पूजनकरै और क्रम से प्रतिमास इनकाही स्मरण करै छःमासपर्यन्त तिलों से स्नान और तिलही प्राशनकरै फिर श्रावणआदि छःमहीनों में पंचगव्य से स्नान और पंचगव्यका प्राशनकरै प्रतिमास भक्ति से सूर्य्यनारायण का पूजन कर यथाशक्ति दक्षिणा ब्राह्मणों को देवै और उपवास के पारण में तैल और क्षार से रहित भोजन रात्रिको करै इस विधि जो उपवास करै और भक्तिसे सूर्य्यनारायण का अर्चन करै वह सब उत्तम फल पावै इस व्रतके करने से सब पदार्थ मिलते हैं इसीसे इसका नाम सर्वाप्ति सप्तमी है आप भी इस व्रतसे सूर्य्यनारायण का आराधन करैं जिसप्रकार पूर्वकाल में गणों के स्वामी दिण्डी ने किया था ॥

एकसौपांचवां अध्याय ॥
मार्तण्ड सप्तमी का विधान ॥

ब्रह्माजी कहते हैं कि हे विष्णुजी ! पौषशुक्ल सप्तमी को मार्तण्ड सप्तमी कहते हैं उस दिन भक्ति से सूर्य्यनारायण का पूजनकर मार्तण्ड इस नाम का जप करै पाखण्डी पातकी आदिसे सम्भाषण न करै और गौके दुग्ध दधिआदि केवल भोजन करै ब्राह्मणों को दक्षिणा देवै इसी प्रकार दूसरे दिन व्रत करै और मार्त्तण्ड नाम का सर्व काल ९

गौओंको भोजनदेवै पांच सुवर्ण शृंगी गौ और एक उत्तम वृष इनके दान करने से जो फल होताहै वही इस व्रतसे प्राप्त होय इस व्रतको करनेहारा सूर्यलोक में जाता है इस व्रत को करनेवाले अबतक भी आकाश में प्रकाशित देख पड़ते हैं इसलिये आप भी इस व्रतको करें॥

एकसौछठा अध्याय॥

अनन्तसप्तमी का विधान॥

ब्रह्माजी कहते हैं कि हे विष्णुजी! भाद्रशुक्ल सप्तमी अनन्त सप्तमी कहाती है उस दिन उपवास कर गन्ध पुष्प धूप आदिकरके सूर्यनारायण का पूजन करै ब्राह्मणों को दक्षिणा दे रात्रिके समय हविष्य भोजन करै और पाखण्डादिकों से भाषण न करै सर्व कालमें आदित्य नामका स्मरण करै इस प्रकार बारह महीनेपर्यन्त व्रत करै अन्त में सूर्यनारायण का पूजनकर व्रतका उद्यापन करै और पुराण सुनै इस प्रकार जो इस व्रतको करै वह भूमिपर सब उत्तमभोग भोगकर सूर्यलोकको जाये और स्त्री इस व्रतको करै तो स्वर्गमें वासकरै॥

एकसौसातवां अध्याय॥

अभ्यंगसप्तमीका विधान॥

ब्रह्माजी कहते हैं कि हे विष्णुजी! श्रावण शुक्ल सप्तमी को अभ्यङ्ग सप्तमी कहते हैं उस दिन उपवास कर सूर्य्यनारायण को अभ्यंग करावे अभ्यंग के समय भांति २ के बाजे बजैं ब्राह्मण वेद पढ़ैं जिस प्रकार और देवताओं को श्रावण में पवित्रार्पण करते हैं इसी भांति सूर्य्यनारायण को अभ्यंगार्पण होता है इस प्रकार अभ्यंग कराय बड़ा उत्सव करै और ब्राह्मण भोजन कराय रात्रिके समय आपभी भोजन

करै इस विधि से बारह महीने उपवास कर अन्त में पारण करै और ब्राह्मणों को यथा शक्ति दक्षिणा देवै इस व्रत को करनेवाला पुरुष दिव्य विमान में बैठ सूर्य्यलोक को जाता है ॥

एकसौआठवां अध्याय ॥

त्रिप्राप्ति सप्तमी का विधान ॥

ब्रह्माजी कहते हैं कि हे विष्णुजी ! भक्तिसे जलमात्र करके भी सूर्य्यनारायण का पूजन करै तो दुर्लभ फल भी प्राप्त होते हैं पुष्प फल जल आदि किसी पदार्थ के देने से सूर्य्यनारायण प्रसन्न नहीं होते केवल शुद्ध हृदय से उनका आराधन करने सेही प्रसन्न होते हैं राग द्वेष आदि से रहित हृदय असत्य आदि से अदूषित वाणी और हिंसावर्जित कर्म्म सूर्य्यनारायण के आराधन योग्य हैं रागादि दोषों को करके दूषित हृदयमें सूर्य्यनारायण का निवास नहीं होता जैसे कर्दम युक्त जल में हंस नहीं रहता असत्य आदि युक्तवाणी सूर्य्यनारायण की स्तुति के योग्य नहीं होती जैसे मेघ से ढकी हुई चन्द्रमा की कला अन्धकार हरणे के योग्य नहीं हिंसा दूषित कर्म्म से कोई जीव प्रसन्न नहीं होता फिर सूर्य्यनारायण तो क्योंकर प्रसन्न होसक्ते हैं कुटिल चित्त पुरुष सर्वस्व भी सूर्य्यनारायण के अर्पण कर देवै तो भी वे सन्तुष्ट नहीं होते इस लिये सदा शुद्ध हृदय से आराधन करना चाहिये यह सुन विष्णु भगवान्‌ने ब्रह्माजी से कहा कि उत्तम कुलमें जन्म आरोग्य और ऐश्वर्य ये तीनों पदार्थ जिस कर्म के करने से प्राप्त होयँ उसका आप वर्णन करैं यह भगवान् का वचन सुन ब्रह्माजी कहने लगे कि महाराज मार्गशीर्ष सप्तमी को जब हस्त नक्षत्र और रविवार होय उस दिन उपवास कर गन्ध

पुष्प धूप बलि आदि से सूर्य्यनारायण का पूजन करै एक वर्ष व्रतकर तिल, धान, जौ, सुवर्ण, जलके पात्र, अन्न, पान, छत्र, दुग्ध, गुड़, बताशे, वस्त्रआदि ब्राह्मणों को दानदेवै और सूर्य्यनारायण का अर्चन कर गोमूत्र, जल, घृत, कच्चाशाक, दूध दही, धान्य तिल, यव, सूर्य्य किरणों करके तपाहुआ जल और क्षीर इनका क्रमसे प्राशन करै इस व्रत के करने से उत्तम कुल में जन्म आरोग्य सुख और ऐश्वर्य पावै ॥

एकसौनवां अध्याय ॥

मन्दिर बनवाने का फल, सूर्य्यभक्तों का प्रभाव ॥

विष्णु भगवान् पूछते हैं कि हे ब्रह्माजी ! सूर्य्यनाराय का मन्दिर बनावै मूर्त्ति स्थापन करै भक्ति से सब उपचा करके पूजन करै तो किस फलको प्राप्त होताहै यह आप वर्ण करैं यह सुन ब्रह्माजी कहने लगे कि आपने बहुत उत्तम बा पूछी अब आप एकाग्र चित्त होकर श्रवण करैं सूर्य्यनाराय का मन्दिर जो पुरुष बनावै उसके सौ कुल पिछले और अगले सूर्य्यलोक को जाते हैं मन्दिर बनाने का आर करतेही सात जन्म के पाप कट जाते हैं उत्तम स्थान जो मन्दिर बनावै वह अक्षय स्वर्ग्ग वास पाता है जित दिन मन्दिर की ईंट बनी रहैं उतने हज़ार वर्ष स्वर्ग्ग रहता है लक्षण युक्त मूर्त्ति बनावै तो सूर्य्यलोक में निवा करै जो भक्ति से प्रतिमा स्थापन करै वह अपने अग पिछले सब कुलों का उद्धार करै जितने कल्पके आदि से कु व्यतीत भये और कल्पांततक जितने होंगे वेसब प्रतिष्ठा क ही उत्तम गति के भागी होजाते हैं यमराज सदा अपने दू से यह कहा करते हैं कि भूमिपर कोई पुरुष तुम्हारी आज्ञा भ

न करेगा केवल सूर्यभक्तों से तुम बचते रहना जिसको सूर्यनारायण का पूजन जप स्तुति नाम स्मरण आदि करते देखो उस से दूर रहो वे यहां नहीं आवैंगे जो नित्य नैमित्तिक उत्सव करते हों उनकी ओर देखना भी नहीं क्योंकि वे हमारे पिता के भक्त हैं जो मन्दिर में मार्जन अथवा उपलेपन करैं उनकी तीन पीढ़ी छोड़ना जो मन्दिर बनवावे उन के सौ कुलों की ओर दृष्टि भी मत करना जो प्रतिमा स्थापन करैं उन के सब कुल त्यागना कोई तुम्हारी आज्ञा भंग न करैगा केवल पिता के भक्तों से बचना इतना यमराज ने अपने किंकरों को शासन भी करदिया तो भी प्रमाद से सूर्यनारायण के परमभक्त सत्राजित को जाय घेरा परन्तु उसके तेज से मूर्च्छित हो भूमि पर सब दूत गिरे जैसे वज्र के प्रहार से पर्वत यह मन्दिर आदि बनाने का फल हमने संक्षेप से वर्णन किया है सूर्यनारायण के यज्ञ करै तो सब पापों से मुक्त हो मनोवांछित फल पावै ॥

एकसौदशवां अध्याय ॥

घृत और दुग्ध से सूर्यनारायणको अभिषेक करने का फल ॥

ब्रह्माजी कहते हैं कि स्थापित प्रतिमा का पूजन करने से सब कार्य सिद्ध होते हैं जो घृत से प्रतिमा को स्नान करावै वह अनन्त फल पाता है सेरभर घृतसे स्नान कराने करके सौ गोदान का फल होता है चार सेर घृतसे स्नान करावे तो सप्तद्वीपवती भूमि के दानका फल पावै प्रतिमास में शुक्लाष्टमी के दिन सूर्य्यनारायण को घृत से स्नान करावै तो सब पापों से छूटै सप्तमी अथवा षष्ठी को गोघृत से स्नान करावै तो सब पातक दूर होयँ सन्ध्या समय स्नान करावै तो ज्ञात अज्ञात सब पाप दूर होयँ सर्व यज्ञरूप सूर्य्यनारायण हैं औ-

हव्यों में उत्तम घृत है इस लिये उन दोनों का संगम होतेही सब पाप बिलायजाते हैं दुग्धसे स्नान करावै तो ऐसे लोक में निवास करै जहां दूधकी नदी बहती है और सरोवर खीर से भरे हैं दुग्ध से स्नान करावे तो सात जन्म पर्यन्त सुखी आरोग्य और रूपवान् होय जिस प्रकार दुग्ध निर्मल होता है इसी प्रकार दुग्ध से स्नान कराने करके निर्मल ज्ञान की प्रीति होती है घृत और दुग्ध के स्नान से सूर्यनारायण बहुत प्रसन्न होते हैं और तुष्टिपुष्टि सम्पूर्ण मनुष्यों की प्रीति उस मनुष्य को मिलती है जो घृत और दुग्धसे स्नान करावै॥

एकसौ ग्यारहवां अध्याय॥

कौशल्या और गौतमी की कथा पूजा के योग्य पुष्पों का कथन॥

ब्रह्माजी कहते हैं कि हे विष्णुजी! कौशल्या और गौतमी का संवाद जो पूर्व काल में हुआ था वह हम वर्णन करते हैं स्वर्ग में गौतमी ब्राह्मणी ने कौशल्या से पूछा कि हे कौशल्ये! स्वर्ग में देव देवांगना सिद्ध सिद्धपत्नी आदि बहुत हैं परन्तु न तो उनके शरीर में ऐसा उत्तम गन्ध जैसा तुम्हारे देह में है न ऐसी कान्ति न ऐसा रूप और न उनके धारण किये हुये वस्त्र भूषण ऐसे शोभित होते हैं जैसे तुम दोनों स्त्री पुरुष को सजते हैं और तुम्हारा चित्त भी अति निर्मल है देवताओं की भांति ईर्षा आदि दोषों से दूषित नहीं यह कौन से तप व्रत दान अथवा होमका फल है तुम वर्णन करो यह गौतमी का वचन सुन कौशल्या बोली कि हे गौतमि! हम दोनों ने भक्ति से सूर्यनारायण का आराधन किया है सुगन्ध युक्त तीर्थ जलों से हमने सूर्य्यनारायण को स्नान कराया उससे देवताओं से भी अधिक

कान्ति पाई और मनमें प्रसन्नता सौम्यता और शरीर सुख उसी का फल है हम सबको प्रिय हैं यह घृत से सूर्य्यनारायण को स्नान कराने का फल है जो वस्त्र भूषण रत्न अनुलेपन आदि हम दोनों को प्रिय होते वे सब हम सूर्य्यनारायण के अर्पण करते इसी से शरीर में यह उत्तम सुगन्ध पाया हमने स्वर्गकी कामना से सूर्य्यनारायण का आराधन किया इस से हम दोनों स्वर्ग सुख भोगते हैं जो पुरुष निष्काम सूर्य्यनारायण की उपासना करते हैं वे मुक्तिपाते हैं इतनी कथा सुनाय ब्रह्माजी बोले कि हे विष्णुजी ! सूर्य्यनारायण के आराधन से सब पदार्थ मिलते हैं जो वस्तु अपने को प्रिय हो वही सूर्य्यनारायण के अर्पण करै विजयधूप आदि भाँति २ के धूप अनेक प्रकारके गन्ध उत्तम नैवेद्य सूर्य्यनारायण को अर्पण करै मालती मल्लिका जूही अतिमुक्तक पाटला करवीर जपा कुब्जक कर्णिकार कुरंटक चम्पक बाण कुन्द अशोक तिलक लोध्र बकपुष्प अगस्त्य किंशुक और कमल आदि पुष्प सूर्य्यनारायण के अर्पण करै बिल्वपत्र शमीपत्र भृङ्गराज के पत्र तमालपत्र तुलसी कालीतुलसी केतकी के पुष्प और पत्र नीलकमल श्वेतकमल गुंजाकेपुष्प धतूरेके पुष्प और अनेक प्रकार के सुगन्ध पुष्प सूर्य्यनारायण को चढ़ावै परन्तु कुटजपुष्प शाल्मलिपुष्प और भी जो गन्धरहितपुष्प होयँ वे सूर्य्यनारायण पर न चढ़ावै उनके चढ़ाने से भय रोग और दारिद्र्य होता है जो पुष्प उत्तम गन्ध और रङ्ग करके युक्त हों और जिनका निषेध न हो वे सूर्य्यनारायण के अर्पण करै कपूर अगुरु मुरा जटामासी आदि उत्तम धूप भाँति २ के वस्त्र अनेक प्रकार के नैवेद्य पकेहुये फल सुवर्ण चांदी मो-

हीरे और भी जो २ पदार्थ अपने को प्रियहों सब भक्ति से सूर्यनारायण को अर्पण करै॥

एकसौ बारहवां अध्याय॥

राजा सत्राजित की कथा क्रम व्रतका विधान॥

ब्रह्माजी कहते हैं कि हे विष्णुजी! ययाति के वंश में सत्राजित नाम एक बड़ाप्रतापी राजाभया और सप्तद्वीपवती पृथिवी का राज्यकरता भया उसके राज्य में पुराण जानने वाले यों कहते थे कि जहां तक सूर्य का उदय और अस्त होता है वहां तक सत्राजित काही राज्य है उसके राज्य में अन्यायी असत्क अदाता और पापी पुरुष कोई नहीं था उस राजाकी स्वभावसेही सूर्य्यनारायण में परमभक्ति थी राजा का ऐश्वर्य देख सब मनुष्यों को विस्मय होताथा और राजाभी निरन्तर इसी चिन्ता में था कि ऐसा कौन उपाय होय जिससे यह ऐश्वर्य दूसरे जन्म में भी पाऊँ जब विचार करते २ कुछ निश्चय न हुआ तब अर्वावसु आदि धर्म्मज्ञ और शास्त्र वेत्ता ब्राह्मणों को बुलाय भली भांति उनका पूजन कर आसनपर बैठाय प्रार्थना करता भया कि महाराज जो आपका मेरे ऊपर अनुग्रह होय तो जो मैं पूछताहूँ वह आप कथन करैं यह राजा का वचन सुन ब्राह्मणों ने कहा कि महाराज जो आपके हृदय में सन्देह होय वह पूछिये हम निवृत्त करैंगे हमारा आपने सदा पालन पोषण किया है ब्राह्मण सन्तुष्ट होयँ तो विद्या पढ़ैं धर्म के सन्देह हरैं अधर्म से निवारण करैं और हित उपदेश देवैं यहही ब्राह्मणों का काम है आप की जो इच्छा होय सो पूछिये इसी अवसर में राजा से उसकी रानी विमलमति ने कहा कि महाराज मेरा भी एक सन्देह

इन महात्माओं से पूछिये आपके सन्देह तो कईप्रकार से निवृत्त होसक्ते हैं परन्तु मैं केवल अन्तःपुरमें रहतीहूँ मेरा सन्देह आप प्रथम निवृत्त करादीजिये यह सुन राजा ने कहा कि हे प्रिये! कहो क्या पूछना चाहतीहो प्रथम तुम्हारा भी सन्देह पूछैंगे तब रानी बोली कि महाराज मुझे यह सन्देह है कि पहिले भी बहुत राजा भये हैं परन्तु आपके समान किसीका ऐश्वर्य्य नहीं भया यह कौनसे कर्म्म का फल है और मैंने कौन उत्तम कर्म्म किया था जिससे आप की रानीभई यह आप मुझे पूछदीजिये यह भार्या का वचन सुन राजा बहुत प्रसन्न भया और कहनेलगा कि हे प्रिये! मेरे मनकी बात तुमने जानी मैंभी यही इन महात्माओं से पूछना चाहताहूँ यह रानी से कह विनय से मुनियों को पूछता भया कि यह आपकथनकरैं कि मैं पूर्व जन्ममें कौनथा और क्याकर्म किया तथा इस हमारी रानी ने क्या उत्तम कर्म किये हम में परस्पर अति प्रीति है सब राज मेरे वशहैं द्रव्य का अंतही नहीं अप्रतिहत बल है और शरीर सदा आरोग्य रहता है इस मेरी भार्या के समान कोई नारी रूपवती नहीं और मेरे तेजको कोई नहीं सहसकता ये सब किस कर्म के फल हैं आप त्रिकालज्ञ हैं इस लिये कथन करैं यह सुन सब ब्राह्मणों ने सूर्य्य नारायण के परमभक्त परावसु से कहा कि आप इनका सन्देह निवृत्त करैं परावसु भी सब ब्राह्मणों की सम्मति से राजा के प्रति कथन करनेलगा कि महाराज आप पूर्व जन्म में बड़े हिंसक और निर्दय शूद्र थे तबभी यह रानी तुम्हारीही भार्या थी और ऐसी पतिव्रता थी कि तुम्हारे क्रूर-वचनों करके पीड़ित होकर भी सदा तुम्हारी शुश्रूषा में

रहती परन्तु तुम्हारी अति क्रूरता देख सम्पूर्ण बन्धु तुम से अलग होगये और पिता पितामह का संचय किया हुआ धनभी निबड़गया तब तुम ने खेतीकरी परन्तु ईश्वर की इच्छा से वहभी निष्फल भई तब तुम अतिदीन हो औरों की सेवा करने में प्रवृत्त भये तुम तो अपनी स्त्रीका त्याग करना बहुत चाहते थे परन्तु उस ने तुम्हारा संग न छोड़ा तब तुम दोनों कान्यकुब्ज देश में जाय सूर्य्यनारायण के मन्दिर में सेवा करनेलगे वहां नित्य मार्जन उपलेपन जल छिड़कना आदि काम तुम दोनों करते और मन्दिर में पुराणकी कथा होती वहभी श्रवण करते तुम्हारी स्त्रीने अपने पिताकी दीहुई अँगूठी कथापर चढ़ाई सब काल तुम्हारे मन में यही चिन्ता रहती कि यह मन्दिर स्वच्छ रहै और बहुतकाल स्थिररहै इसभांति तुम दोनों निष्काम हो सूर्य्यनारायणकी सेवाकरते और जो मिलता उसी से निर्वाह करलेते एक समय बड़ी सेना सहित कुबलाश्व राजा वहां आया उसकी सम्पत्ति और हजारों उत्तम २ रानी देख तुम दोनों की भी राजाबननेकी इच्छाभई और थोड़ेकाल के अनन्तर तुम्हारा देहान्तभया उस सूर्य्यनारायण की सेवा के और पुराण श्रवण के प्रभावसे तुम राजा और तुम्हारी स्त्री रानी भई अब जो आपको जन्मान्तर में भी ऐश्वर्य की इच्छाहोय तो सूर्य्यनारायण का भक्ति से आराधनकरो गन्ध पुष्प धूप दीप नैवेद्य वस्त्र भूषण औरभी जो पदार्थ अपने को प्रियहों सब सूर्य्यनारायण के समर्पणकरो और उन के मन्दिरों में मार्जन उपलेपन आदि करायाकरो उत्तम दिनों में उपवास कर रात्रिको जागरण करो और नृत्य गीत वाद्य

से बड़ा उत्सव कराओ, पुराण इतिहास आदि की कथा श्रवण करो सूर्यभगवान् के सम्मुख वेद पाठ कराओ इन कर्मों के करने से प्रसन्न हो सूर्यनारायण अभीष्ट फल देते हैं पुष्प नैवेद्य रत्न सुवर्ण आदि से सूर्यनारायण प्रसन्न नहीं होते केवल भक्ति से सन्तुष्ट होते हैं देखो तुमने भक्ति से मन्दिर में केवल मार्जन आदि किया और तुम्हारी स्त्री ने एक अंगुलीयक पौराणिक को दिया उससे इतना ऐश्वर्य पाया अब जो तुम भक्ति से सूर्यनारायण का आराधन करो और सब उपचारों से पूजन करो तो इन्द्रसे भी अधिक ऐश्वर्य पावो अब आप अपनी रानी सहित सूर्यनारायण के आराधन में यत्न से प्रवृत्तहो इससे सब मनवांछित फल पाओगे। ब्रह्माजी कहते हैं कि हे विष्णुजी! यह वृत्तान्त सुन राजा बहुत हर्षित हुआ और अति विनय से परावसु के प्रति कहने लगा कि महाराज जैसा इन्द्रपद पायके अथवा अमर होके पुरुषको आनन्द होताहै वैसा आनन्द आपके वचन श्रवण कर हमको भया अज्ञान रूप अन्धकार में आपका वचन हमारे लिये दीपक भया हम दोनों सम्पत्ति के नाश की सम्भावना कर बहुत व्याकुल रहते थे परन्तु आपने सब सम्पत्तियों का बीज बतादिया यह भी हमने जाना कि भक्तिमान् दरिद्री भी सूर्यनारायण को प्रसन्न करसक्ताहै और भक्ति हीन धनवान् परभी उनका अनुग्रह नहीं होता चाहे जितने रत्न सुवर्ण आदि निवेदन करै अब आप सूर्य भगवान् के आराधन का प्रकार हमको उपदेश करैं जिस के करने से शीघ्रही उनका अनुग्रहहो यह राजाका वचन सुन परावसु बोले कि हे राजन्! अब हम सूर्य्यनारायण के आराधन

विधान कहतेहैं जिसके करने से स्त्री पुरुष संसार सागर का पारपावैं कार्त्तिक मास में नित्य सूर्य्यनारायण का पूजन कर ब्राह्मण को भोजन कराय आप एकबार भोजन करैं तो पूर्व अवस्था में किये हुये ज्ञात अज्ञात पापोंसे छूटै इसी प्रकार जो स्त्री अथवा पुरुष मार्गशीर्ष में एक भक्त व्रतकरैं वे मध्य अवस्था में किये पातकों से मुक्तहोयँ और पौषमास में भी इसी विधि से एक भक्तकरै तो वृद्धावस्था में किये पाप दूरहोयँ इस त्रिमासिक व्रतको जो पुरुष अथवा स्त्री करैं वे सूर्य्यनारायण के कृपा पात्रहों और सब पापोंसे छूटैं दूसरे वर्ष इसी भांति त्रिमासिक व्रतकरै तो सब उपपातक निवृत्त होयँ और तीसरे वर्ष इस व्रतको करैं तो सब महापातक कटैं और मनोवांछित फलपावै यह व्रत तीन मासमें होताहै तीन वर्ष तक करते हैं और तीनों अवस्थाओं के तीन प्रकार के पातक हरता है इससे इस सर्व पापहर व्रतको त्रिक्रम करते हैं यह परावसु का वचन सुन राजा ने कहा कि महाराज व्रतका विधान तो हमने सुना परन्तु भोजन कौन से ब्राह्मण को देना यह आप कृपाकर कहैं यह सुन परावसु बोले कि हे राजा! पौराणिक ब्राह्मण को देनाचाहिये इस विषय में अरुण के प्रति जो सूर्य्यनारायण ने कहा वह हम आपको कहते हैं एक समय उदयाचल पर अरुण ने सूर्य्यनारायण से पूछा कि महाराज कौन कौन पुष्प नैवेद्य वस्त्र आदि आपको प्रिय हैं और कौन से ब्राह्मण के पूजन से आप प्रसन्न होतेहैं यह आप कृपाकर वर्णन करैं इस प्रकार अरुणकी प्रार्थना सुन सूर्य्यनारायण कहने लगे कि हे अरुण! करवीर के पुष्प रक्त चन्दन गुग्गुल अथवा घृत का धूप मोदक नैवेद्य ये हमको प्रिय हैं और

भोजक हमारा पूजनकरै तो हम बहुत प्रसन्न होते हैं और हमारी प्रीतिके अर्थ पौराणिक को दान देवै उसीका पूजन करै तो हमारी प्रसन्नता होती है गीत वाद्य पूजन आदि से वैसी तृप्ति हमारी नहीं होती जैसी पुराण श्रवणसे होती है इसलिये सदा पौराणिक का पूजन कर इतिहास पुराण आदि सुनै और भोजकसे पूजन करावै ॥

एकसौतरहवां अध्याय ॥

भोजक की उत्पत्ति और उसके लक्षण ॥

अरुण पूछते हैं कि महाराज यह भोजक कौनहै किस का पुत्र है और इसने ऐसा कौन उत्तम कर्म किया कि ब्राह्मण आदि वर्णोंको छोड़ इसपर आपका इतना अनुग्रह भया यह आप कृपाकर वर्णन करैं यह सुन सूर्य्यनारायण बोले कि हे अरुण! तुमने बहुत अच्छा प्रश्न किया अब हम जो कथन करते हैं वह सावधान होकर श्रवण करो ब्राह्मण आदि वर्ण अपने अपने घरोंमें हमारा अर्च्चन करते हैं मन्दिरों में नहीं पूजते और मन्दिरों में वृत्तिके लिये जो ब्राह्मण पूजन करैं वे देवल कहाते हैं इसलिये अपने तेजसे भोजक को हमने उत्पन्न किया कि जो सर्वत्र हमारा पूजन करै भोजक हमको अतिप्रिय है इससे सदा इसका सत्कार करना चाहिये पूर्वकालमें शाकद्वीप के स्वामी प्रियव्रत राजाके पुत्र ने शाकद्वीप में विमान के समान हमारा मन्दिर बनाया और उसमें स्थापन के लिये सब लक्षणों करके युक्त सुवर्ण की प्रतिमा बनवाय चिंतन करने लगा कि मन्दिर और सूर्यनारायण की प्रतिमा ये दोनोंही बहुत उत्तम बने पर अब प्रतिष्ठा कौन करावै ऐसा कोई योग्य पुरुष नहीं

पड़ता इस प्रकार चिन्ता करते करते हमारे शरणमें आया हमने भी अपने भक्त को चिन्ताग्रस्त देख प्रत्यक्ष दर्शन दिये और उससे पूछा कि हे राजा! किस चिन्तासे व्याकुल होरहे हो शीघ्र हमको कहो कि दुष्कर कार्य्य भी तुम्हारा सिद्धकरैं तुम हमारे परमभक्त हो तब राजा बोला कि महाराज मैंने भक्तिसे आप का मन्दिर बनाया और सुवर्ण की सुन्दर प्रतिमा निर्माण कराई परन्तु इस द्वीपमें ब्राह्मण तो हैं नहीं क्षत्रिय आदि तीन वर्ण हैं वे आपकी प्रतिष्ठा करा नहीं सक्के इससे मुझे बहुत चिन्ता होरही है अब आप जो आज्ञा करैं वह करी जाय राजाकी यह बात सुन सूर्य्यनारायण ने कहा कि ठीकहै इस द्वीपमें तीनही वर्ण हैं वे प्रतिष्ठा नहीं करासक्के और हमारे पूजनकेभी अधिकारी नहीं यह वचन राजाको कह हमने विचार किया विचार करतेही श्वेत वर्ण के आठ पुरुष वेद पढ़ते हुये हमारे शरीरसे निकले ललाटसे दो, वक्षस्स्थलसे दो, किरणों से दो और हमारे चरणों से दो इस भाँति आठ पुरुष उत्पन्न भये वे सब कषाय वस्त्र पहिने थे और हाथों में कमलके पुष्प और करंड धारेथे वे सब हाथजोड़ हमसे प्रार्थना करने लगे कि हे पिता! हम आप के पुत्र हैं आप आज्ञा कीजिये किस कार्य के लिये हमको उत्पन्न किया है यह सुन हमने उन आठों से कहा कि तुम सब इस राजा का वचन करो यह कह राजासे हमने कहा कि हे राजन्! ये हमारे पुत्र प्रतिष्ठा करावैंगे मन्दिरकी प्रतिष्ठा कर वह मन्दिर इनको अर्पण करदो ये सदा हमारा पूजन किया करैंगे परन्तु देकर फिर इनसे हरण मत करना हमारे निमित्त जो धन, धान्य, गृह, भूमि, ग्राम, बाग, नगर आदि मन्दिर में अर्पण

करो उस सबके स्वामी इन हमारे पुत्र भोजकों को बनाओ
जिस भांति पिताके द्रव्यका अधिकारी पुत्र होता है ऐसेही
हमारे धन के अधिकारी भोजक हैं ब्राह्मण आदि वर्ण नहीं
यह हमारी आज्ञापाय राजाने वैसाही किया और भोजकों
से प्रतिष्ठा कराय वह मन्दिर उनके अर्पण किया हे अरुण!
इसप्रकार हमने भोजक उत्पन्न किये हमारी प्रीति के अर्थ
जो देना होय वह भोजकको देवै परन्तु भोजकका धन कभी
न हरै जो द्वेषसे लोभसे अथवा प्रमाद से हरै तो अन्धता-
मिस्रनाम नरकमें जाय हमारे सब धन का स्वामी भोजक
है परन्तु भोजक में भी ये लक्षण होने चाहिये कि पहिले
वेदपढ़ै विवाहकरै नित्य त्रिकाल स्नान करै दिन रात्रि में
पांचबार हमारा पूजन करै वेद ब्राह्मण और देवता इनकी
कभी निन्दा न करै हमारे नैवेद्य विना कोई पदार्थ भोजन
न करै शूद्रका उच्छिष्ट और शूद्रके घर जाय कभी भोजन
न करै परन्तु जो शूद्र अपने घर आय देजावे तो उसका
अन्न लेनेमें कुछ दोष भी नहीं होता नित्य हमारे सन्मुख
शंख बजावै छःमहीने पुराण सुननेसे जो प्रीति हमको होती
है वह एक वार शंखध्वनि श्रवणकरने से होजाती है इसलिये
भोजक नित्य शंखबजावे अभोज्य पदार्थ नहीं भक्षण करते
इससे भोजक कहाते हैं और नित्य हमको भोजन कराते हैं
इससे भी उनको भोजक कहते हैं भोजक सदा अव्यंग को
धारण करै अव्यंग विना भोजक अशुचि होता है जो भो-
जक अव्यंग धारे विना हम को भोजन करावै उसकी सं-
तति नष्ट होजाती है और हमारी प्रसन्नता भी नहीं होती
भोजक शिर मुंड़ाये रहै परन्तु दाढ़ी न मुंड़ावै पत्नी

दिन नक्तव्रतकर सप्तमीको उपवास करै और संक्रांति कामी व्रतकरै तीनकाल हमारे सम्मुख गायत्री जपै परन्तु पूजन के समय वस्त्रसे अपना मुख लपेट लेवै और मौन से पूजन करै क्रोध का त्याग करै हमारा निर्माल्य शूद्र और वैश्या को न देवै जो लोभ अथवा कामसे देवै तो नरक को जाय हमारे निर्माल्य धारण करने के ब्राह्मण आदि तीन वर्ण अधिकारी हैं लोभादि से हमको विना चढ़ाये पुष्प जो पहिलेही किसी को देदेवै वह हमारा शत्रु है सदा हमारा नैवेद्य भोजन करै वह नैवेद्य भोजक को शुद्ध करने के लिये पंचगव्य के समान है हमारे चढ़ाहुआ गन्ध पुष्प वस्त्र भूषण आदि बेचै नहीं और वेश्याआदि को भी न देवै हमारे स्नानके जल और निर्माल्य को उल्लंघन न करै करै तो नरकमें पड़े हमारे को घृत दुग्ध जल आदि से ऐसी युक्ति करके स्नान करावै कि उसको कोई उल्लंघनकरै नहीं और श्वान भी न खाय सदा पवित्र रहै एकबार भोजनकरै और क्रोध अमङ्गल वाक्य और अशुभ कर्म को त्यागै ऐसे लक्षणों करके युक्त भोजक हमको प्रिय है उसका सदा सत्कार करना चाहिये जो भोजक की वृत्तिको हरै हम क्रोध कर उसके कुलका संहार करते हैं हे अरुण ! पौराणिक भी हम को तुम्हारे तुल्य प्रियहैं और हमारे मन्दिर में मार्जन उपलेपन आदि करनेहारा पुरुष भी हमारा प्रीतिपात्र है इतना कह परावसु बोले कि हे राजा ! इसप्रकार अरुणको उपदेश कर सूर्य्यनारायण आकाशमें भ्रमण करनेलगे और अरुण भी सुनके बहुत प्रसन्न भया हे राजा ! पौराणिक ब्राह्मण सूर्यनारायण को बहुत प्रिय है इसलिये पौराणिक कोही

दान देना चाहिये ब्रह्माजी कहते हैं कि हे विष्णुजी ! पराशरसु के मुख से यह कथा श्रवण कर राजा सत्राजित और उसकी रानी विमलमति बहुत हर्षित भये पृथिवी पर जहां जहां सूर्य्यनारायण के मन्दिर थे सब में मार्जन और उपलेपन कराने लगे सब मन्दिरों में कथा करने को पौराणिक बैठा दिये और बहुत दक्षिणा दे पौराणिकों को प्रसन्न किया भांति २ के उपचारों से भक्ति करके सूर्य्यनारायण का नित्यपूजन करने लगे इस प्रकार राजा और रानी सूर्य्यनारायण का आराधन कर मनोवांछित फल पाते भये ॥

एकसौ चौदहवां अध्याय ॥

भद्रनाम ब्राह्मण की कथा, सूर्य्य के मन्दिर में दीपदानका फल ॥

ब्रह्माजी कहते हैं कि हे विष्णुजी ! सूर्य्यनारायण के मंदिर में दीप प्रज्वलित करै तो यज्ञ के फल को प्राप्तहोता है कार्त्तिकमास में तो दीपक का बहुतही फल है हे भगवन् ! भद्र नाम ब्राह्मणकी कथा हम कहते हैं आप श्रवण करैं माहिष्मती नाम नगरी में एक नागशर्म्मा नाम ब्राह्मण था उस के सौ पुत्र भये जिन में सब से छोटेका नाम भद्र था वह भद्र सदा सूर्य्यनारायण के मन्दिर में जाय दीपक जलाया करता एक समय उस के सब बड़े भाइयों ने कहा कि हे भद्र ! एक बात हम पूछते हैं तुम कथन करो तब भद्र बोला कि आप सब मेरे पिता के समान हैं आपके प्रश्न का उत्तर मैं क्योंकर देसकताहूं परन्तु आप पूछैं जो मुझे विदित होगा तो कहूंगा तब उस के भाइयों ने पूछा कि हम नित्य देखते हैं कि तुम पुष्प धूप नैवेद्य आदि कभी सूर्य्यनारायण के अर्पण नहीं करते और ब्राह्मण भोजन भी कभी नहीं कराते केवल नि-

और रात मन्दिर में जाय सूर्य्यनारायण के सम्मुख दीपक जलाते रहतेहो इस में क्या कारण है यह तुम वर्णन करो यह अपने भ्राताओं का वचन सुन भद्र कहने लगा कि हे भ्राताओ! जो आपने यही पूछा तो श्रवण कीजिये इक्ष्वाकु नाम राजा के पुरोहित वशिष्ठजी ने सरयू नदी के तटपर सूर्य्य नारायण का मन्दिर बनाया और नित्य वहां गन्धपुष्पादि उपचारों से सूर्य्यनारायण का अर्चन करते और दीपक प्रज्वलित करते विशेष कर कार्त्तिक मास में दीपोत्सव किया करते एक समय रात्रि को सूर्य्यनारायण के मन्दिर का दीपक शान्त होगया मैं भी पूर्वजन्म में अनेककुष्ठ आदि दुष्टरोगों से पीड़ितहो उसीमन्दिरके समीप पड़ारहता और जो कुछ मिल जाता उस से अपना पेट भरलेता वहां के निवासी भी मुझे रोगी और दीन जान भोजन देदेते एकदिन मेरी यह दुष्ट बुद्धिभई कि रात्रि के समय सूर्यनारायण के भूषणहरलूं इसी विचार में देखतारहा जब वे सब भोजक निद्रावश भये तब मंदिर में धीरे २ घुसा वहां देखा कि दीपक शान्तहोगयाहैतब मैंने अग्नि जलाय दीप प्रज्वलित किया और उस में घृत डाल सूर्यनारायण के भूषण उतारने लगा इस अवसर में वे भोजक जाग उठे और मुझे हाथ में दीवा लिये देखा देखतेही आकर पकड़ लिया मैं भी भयभीतहो विलाप करने लगा और उन के चरणोंपर गिरा मेरी दीनता पर उन को दया आई और मुझे छोड़ दिया परन्तु वहां राजपुरुष सब यह चरित्र देखते थे उन्होंने मुझे फिर बांधा और पूछनेलगे कि रे दुष्ट!दीपक हाथ में लेकर मन्दिर में तू क्यों घुसा यह कह मुझे ताड़न करनेलगे रोगकी व्यथा से भय से और उन-

के ताड़न करनेसे मेरे प्राण उसी समय जाते रहे प्राण मुक्त होतेही सूर्यनारायणके गण विमान में बैठाय मुझे सूर्यलोक को लगये वहां मैंने एककल्प पर्यंत बहुत सुख भोगा और फिर उत्तम कुलमें जन्म पाय तुम्हारा भ्राता भया यह कार्तिक मासमें सूर्यनारायणके मन्दिर में दीपक जलाने का फल है मैंने दुष्टबुद्धि करके भूषण हरनेके लिये दीपक जलाया उससे यह उत्तम फल पाया कि कुष्ठीशूद्र होकर भी इस उत्तम ब्राह्मण कुलमें मेरा जन्म भया वेद शास्त्र पढ़े और जातिस्मर भया दुष्ट बुद्धि से भी दीप जलाने का यह फल देख अब मैं नित्य भक्ति से सूर्यनारायण के सम्मुख दीप जलाता हूं हे भाइयो! आपके पूछने से यह मैंने दीपदानका संक्षेप से फल कहा इतनीकथा सुनाय ब्रह्माजीबोले कि हे विष्णुजी! यह दीपका प्रभाव भद्र ने अपने भ्राताओं को सुनाया पुरुष सूर्यनारायण के नाम जपता हुआ मन्दिर में दीपदान करै वह आरोग्य धन बुद्धि सन्तान पावै और जातिस्मर होय षष्ठी अथवा सप्तमी को जो दीपदान करै वह दिव्य विमानमें बैठ सूर्य्यलोक को जाय इसलिये सूर्य्यनारायण के मन्दिर में भक्तिसे दीप प्रज्वलित करै प्रज्वलित दीपोंको अस्तव्यस्त न करै और उनका तेलभी न हरै दीपक हरनेहारा पुरुष अंधमूषक होता है इसकारण कल्याण की इच्छा वाला पुरुष दीप प्रज्वलित करै हरै नहीं॥

एकसौ पन्द्रहवां अध्याय॥

यमदूत और नारकीय जीवोंका संवाद, मंदिरसे दीपक हरनेका दोष॥

ब्रह्माजी कहते हैं कि हे विष्णुजी! घोर नरक में पड़े हुये भूखे अतिदुःखी और विलाप करते हुये जीवों को एक स-

यमदूत ने कहा कि रे मूढ़ो! विलाप करने से क्या होता है पहिले ही क्यों न समझे कि बुरे कर्मों का आगे फल भोगना पड़ेगा हज़ारों जन्म लेकर एकबार मनुष्य जन्म मिलता है उसमें मनुष्य अपना हित नहीं करते पुत्र स्त्री धन घर क्षेत्र आदिमें आसक्त हो अनेक दुष्कर्म करते हैं यह नहीं जानते कि सूर्य्य चन्द्र काल आत्मा ये मनुष्य के सब शुभ अशुभ कर्म को जानते हैं यह मोह की महिमा देखो कि पुत्र स्त्री रूप नरक में आसक्त हो अपनाहित भूलजाते हैं सूर्य्य नारायण का नाम लेने में कुछ दाम नहीं लगते मन्दिर में दीप जला देने में कुछ अधिक परिश्रम नहीं पड़ता परन्तु इतना भी किसी से नहीं होसक्ता अब रोदन और विलाप करनेसे क्या होता है जैसा कर्म किया वैसा फल पाया फिर पाप कर्म में से बुद्धि मत करना जो अज्ञान से पाप कर्म बनभी पड़े तो सूर्य्यनारायण के आराधन से उसका फल नष्ट हो जाता है यह यमदूत का वचन सुन नरक के जीव बोले कि हे यमदूत! हमने कौन ऐसा कर्म किया जिससे हमको इस दारुण नरक में वास करना पड़ा तब यमदूत ने कहा कि तुमने सूर्यनारायण के मन्दिर से दीपहरण किये उसीसे तुम यह नरक दुःख भोगते हो फिर ऐसा कभी मत करना ब्रह्माजी कहते हैं कि हे विष्णुजी! यह दीपदान और दीपहरण का फल वर्णन किया है दीपदान करने का तो सर्वत्र ही उत्तम फल है परन्तु सूर्यनारायण के मन्दिर में विशेष फल है जो जगत् में मूक अन्ध वधिर विवेक हीन रोगी दरिद्री देख पड़ते हैं उन सबने साधु जनों के प्रज्वलित किये हुये दीप सूर्यनारायण के मन्दिर से हरण किये हैं॥

एकसौसोलहवां अध्याय ॥

वैवस्वतके लक्षण और सूर्यनारायणकी महिमा ॥

विष्णु भगवान् पूछते हैं कि हे ब्रह्माजी ! सब मनुष्य विष रोग ग्रह और भांति २ के उपद्रवों से पीड़ित होते हैं इसलिये आप कोई ऐसा उपाय कथन करें कि जिससे जीवों को रोग आदि की बाधा न होय यह सुन ब्रह्माजी बोले कि हे विष्णुजी ! जो पुरुष व्रत उपवास आदि करके सूर्य्यनारायण का आराधन करते हैं उनको रोग आदि नहीं सताते जो सूर्य्यनारायण से विमुख हैं वेही भांति २ के उपद्रवों से पीड़ित होते हैं सूर्य्यनारायण के भक्तपर सब ग्रह सौम्य दृष्टि रखते हैं कोई उसका धर्षण नहीं करसकता रोग समीप नहीं आते परन्तु सूर्य्यनारायण का अनुग्रह उसी पुरुषपर होताहै जो सब जीवों को अपने समान मानै और भक्तिसे उनका आराधन करै ब्रह्माजी का यह वचन सुन विष्णुजी ने पूछा कि महाराज पहिले से तो सूर्य्यनारायण का आराधन किया न हो और रोग आदि करके पीड़ित होजाय वह उस कष्टसे क्योंकर छुटै यह आप वर्णनकरैं हमभी सूर्य्यनारायण का आराधन भक्ति से किया चाहते हैं यह सुन ब्रह्माजी ने कहा कि हे भगवन् ! जो आप सूर्य्यनारायण का आराधन किया चाहते हो तो पहिले वैवस्वत होजाओ वैवस्वत हुये विना सूर्य्यनारायण की उपासना नहीं होती मनुष्यों के पाप जब क्षीण होते २ थोड़े शेष रहजायँ तब सूर्य्यनारायण और ब्राह्मणों में भक्ति होतीहै जिससे पुरुष मुक्ति पाताहै अब आप भी वैवस्वत हो सूर्य्यनारायण का आराधन करैं भगवान् ने पूछा कि हे ब्रह्माजी ! वैवस्वतों का क्या लक्षणहै और वैवस्व-

को क्या करना चाहिये यह आप कहैं तब ब्रह्माजी कहने लगे कि हे विष्णुजी ! मन वचन कर्म करके सूर्यनारायण का भक्तहो और जीवहिंसा कभी न करै ब्राह्मण देवता भोजक इनको नित्य नमस्कारकरै पराया धन न हरै देवता मनुष्य पशु पक्षि पिपीलिका वृक्ष पाषाण काष्ठ भूमि जल आकाश दिशा इन सब में सूर्यनारायणको व्याप्तसमझै और अपने को भी सूर्यनारायण से भिन्न न समझै वह वैवस्वत होता है जो जीवोंमें दुष्टभाव रक्खै वह कभी वैवस्वत नहीं होसकता न किसी से प्रीति और न किसी से वैर जो पुरुष रक्खै निष्कामहो भक्तिसे सूर्यनारायणका आराधन करै वह वैवस्वत कहाता है जिस उत्तमगतिको वैवस्वत प्राप्त होताहै वह योगी और बड़े २ तपस्वियों कोभी दुर्लभहै जो सब प्रकार से सूर्यभगवान्‌का दृढ़भक्तहै वह धन्य है वह नीच कुल में भी उत्पन्न होय तौभी उत्तमही होता है भक्ति से आराधनकरने करकेही सूर्यनारायणका अनुग्रह होता है बाहर के आडंबरसे कुछ प्रयोजन नहीं सूर्यनारायण के दक्षिण किरणसे हम उत्पन्न हुये हैं और उनकेही अनुग्रह से सृष्टि रचते हैं आपभी उनके वामकिरण से उत्पन्नहो उनकी इच्छाहीसे सृष्टिका पालन और दैत्योंका संहार करतेहो इसीभांति रुद्र इन्द्र चन्द्र वरुण पवन अग्नि आदि सब देव सूर्यनारायण से उत्पन्नहो उनकी आज्ञानुसार अपने २ कार्य में प्रवृत्त होरहे हैं इसलिये हे भगवन् ! आप भी उपवास ध्यान जप आदि से सूर्यनारायणका आराधन करो सुमन्तु मुनि कहते हैं कि हे राजाशतानीक ! यह ब्रह्माजी का वचन सुन विष्णु भगवान् सूर्यनारायण का आराधन करने व

शाकद्वीप में गये वहां जाय भांति २ के उपचारों से सूर्य-नारायण का पूजन किया और नानाप्रकार के भक्ष्य भोज्यों से भोजकों को संतुष्ट किया इस प्रकार बहुत काल सूर्यना-रायण का आराधन कर उनके अनुग्रह से सब देवताओं में श्रेष्ठ भये हे राजन्! आपभी सूर्यनारायण का आराधन करो जिससे सब तुम्हारे मनोरथ सिद्ध होयँ इस ब्रह्माजी और विष्णुजी के संवाद को जो श्रवण करै वहभी सब मनोवांछित फल पावै और अन्तसमय सुवर्ण के विमान में बैठ गोलोक को जाय और वहां देवता गन्धर्व और अप्सराओं के साथ विहारकरै॥ एकसौ सत्रहवां अध्याय॥

सूर्यनारायण के उत्तम रूप बनाने की कथा और उनकी स्तुति॥

राजा शतानीक पूछते हैं कि हे सुमन्तु मुनि! आपने सूर्य भगवान् के तेज न्यूनकर उत्तमरूप निर्माण करने का सं-क्षेप से वर्णन किया अब आप विस्तार से वर्णन कीजिये यह राजाका वचन सुन सुमन्तुमुनि कहने लगे कि हे राजन्! जब सूर्यनारायणकी भार्यासंज्ञा अपने पिता के घरको चलीगई तब सूर्यभगवान् ने विचार किया कि हमारे तेज से व्याकुल हो हमारी पत्नी चलीगई और हमारा उत्तम रूप होने के अर्थ तप करती है इससे उसका मनोरथ सिद्ध होने के लिये हम विश्वकर्मा से अपना रूप उत्तम बनवावैं सूर्यनारायण यह विचार करतेही थे कि वहां ब्रह्माजी आये और सूर्य नारायणसे कहा कि आप सब देवताओं में मुख्य हैं और सब जगत् आपने व्याप्त कर रक्खाहै अब आप अपने श्वशुर विश्वकर्मा से उत्तम रूप बनवालें यह कहकर विश्वकर्मा से ब्रह्माजीने कहा कि तुम सूर्यनारायण का सुन्दर रू

बनाओ यह ब्रह्माजी की आज्ञा पाय खराद पर चढ़ाय धीरे २ विश्वकर्मा सूर्यनारायण का रूप सुधारने लगे उस समय ब्रह्मा इन्द्र विश्वामित्र आदि ऋषि स्तुति पढ़ने लगे (स्वस्तितेस्तुजगन्नाथदेववर्षदिवाकर । शान्तिस्त्वंसर्वलोकानांदेवदेवदिवाकर १ त्वन्नाथमोक्षिणांमोक्षोध्येयश्चध्यायिनामपि । त्वंगतिःसर्वभूतानां त्वयिसर्वंप्रतिष्ठितम् २ शंप्रजाभ्योस्तुदेवेश शंनोस्तुजगतःपते । त्वत्तोभवतिवैनित्यजगत्संलीयतेत्वयि ३ त्वमेकस्त्वंद्विधाचैव त्रिधाचैवनसंशयः। त्वयाविनाजगन्मूढं त्वयैकेनप्रबोधितम् ४) इस स्तुति से ऋषि स्तुति करते भये और विद्याधर यक्ष राक्षस नाग सब हाथ जोड़ बारंबार प्रणामकर स्तुति करते थे हाहा हूहू नारद तुम्बरु आदि गन्धर्व षड्ज मध्यम गान्धार आदि स्वर तीनिग्राम मूर्च्छना और तान सहित राग गाने लगे विश्वाची घृताची उर्वशी तिलोत्तमा मेनका सहजन्या आदि अप्सरा हाव भाव सहित नृत्य करने लगीं वेणु वीणा मृदंग पणव दुन्दुभि पटह आदि बाजे बजने का आरम्भ हुआ गन्धर्वों के गानसे अप्सराओं के नृत्य से और अनेक प्रकार के बाजों के शब्द से बहुत कोलाहल भया सब देवता मस्तक पर अंजलिबांध प्रणाम करने लगे इस प्रकार सब देवता गन्धर्व आदि के कोलाहल में विश्वकर्मा धीरे २ सूर्यनारायण का तेज छीलने लगे हे राजा! इस कथा को जो भक्ति से श्रवण करै वह सूर्य्य लोक में प्राप्त होता है॥

एकसौ अठारहवां अध्याय॥

सूर्यनारायणकी स्तुति, और उनके परिवार देवताओं का वर्णन॥

राजा शतानीक कहते हैं कि हे सुमन्तुमुनि! इस सूर्य्य-

नारायण की कथा सुनते सुनते मुझे तृप्ति नहींहोती इस लिये फिर भी सूर्य नारायण केही गुण आप वर्णन करैं यह राजा का वचन सुन सुमन्तु मुनि बोले कि हे राजा ! ब्रह्माजी ने जो ऋषियों के प्रति सूर्य्य नारायण की कथा कही उस का हम वर्णन करते हैं जिस के सुनतेही सब पाप कटजायँ एक समय सूर्य्य भगवान् के प्रचण्ड तेजसे सन्तप्त हो ऋषियों ने ब्रह्माजी से पूछा कि महाराज यह अग्नि के तुल्य दाह करनेवाला तेज पुञ्ज आकाश में कौन है यह हम जानना चाहते हैं आप कृपाकर वर्णनकरैं ऋषियों का प्रश्न सुन ब्रह्माजी कहनेलगे कि हे मुनीश्वरो ! प्रलय के समय जब सब स्थावर जंगम नष्ट होगये और सर्वत्र अन्धकार व्याप्त होरहाथा उस समय पहिले बुद्धि उत्पन्न हुई बुद्धि से अहंकार अहंकार से महाभूत महाभूतों से अण्ड उत्पन्न हुआ जिस में सात लोक और सात समुद्रों सहित पृथ्वी स्थित है उसी अण्ड में हम विष्णु जी और शिवजी स्थित थे परन्तु सब अन्धकार से व्याकुल थे तब परमेश्वरका ध्यान करनेलगे ध्यानकरने से अन्धकार को हरनेहारा एक तेज उत्पन्न भया उसको देख हम स्तुति करने लगे कि (ॐ आदिदेवोसिदेवानामैश्वर्य्याच्चत्वमीश्वरः । आदिकर्त्तासि भूतानां देवदेवःसनातनः १ जीवनंसर्वसत्वानां देवगन्धर्व्व रक्षसाम् । मुनिकिन्नरसिद्धानामुरगाप्सरसांतथा २ त्वं ब्रह्मात्वंमहादेवस्त्वंविष्णुस्त्वंप्रजापतिः । वायुरिन्द्रश्चसोम श्चविवस्वान्वरुणस्तथा ३ त्वंकालःसृष्टिकर्त्ताच भर्त्ता हर्त्ता विभुस्तथा । भूतादिर्भूर्भुवः स्वश्च महर्जनस्तपस्तथा ४ दीप्तदीपनंनित्यंसर्व्वलोकप्रकाशकम् । दुर्निरीक्ष्य

यद्रूपंतस्यतेनमः ५ सुरसिद्धगणैर्जुष्टंभृगवत्रिपुलहादिभिः। शुभ्रंपरममृत्युग्र यद्रूपंतस्यतेनमः ६ वेद्यंवेदविदांनित्यं सर्व्वज्ञानसमन्वितम् । सर्वदेवाधिदेवं च यद्रूपंतस्यतेनमः ७ पञ्चतीर्थस्थितंयच्च दशैकादशएवच । अर्द्धमासमतिक्रम्य स्थितंयत्सूर्य्यमण्डलम् ८ तस्मैरूपायतेदेवप्रणेमुःसर्वदेवता। विश्वकृद्विश्वरूपंच वैखानससुरार्चितम् ९ विश्वस्थितमचिन्त्यंच यद्रूपंतस्यतेनमः । परंयज्ञात्परंदेवात्सत्यलोकात्परं दिवः १० त्वरक्रमेतियःख्यातस्तस्मादपिपरस्परात् । परमात्मेतिविख्यातंतद्रूपंतस्यतेनमः ११ अविज्ञेयमचिन्त्यचअध्यात्मगतमव्ययम् । अनादिनिधनंचैवयद्रूपंतस्यतेनमः १२ नमोनमःकारणकारणाय नमोनमःपापविमोचनाय । नमोनमोवन्दितवन्दिताय नमोनमोरोगविमोचनाय १३ नमोनमः सर्व्ववरप्रदाय नमोनमः सर्व्वसुखप्रदाय । नमोनमोज्ञाननिधेसदैव नमोनमः पञ्चदशात्मकाय १४) इति॥ इसप्रकार हमारी स्तुति रूप वाणी सुन वह तेजस् रूप बड़े मधुर वचन से बोला कि हे देवताओ ! वरमांगो तब हम सब बोले कि हे प्रभो ! आपके इसप्रचण्ड रूपको कोई देखनहीं सक्ता इसलिये आप सौम्यरूप धारण करें यह देवताओं की प्रार्थनासुन सब लोकोंको सुखदेनेहारा उत्तमरूपधारी समन्तुमुनि कहते हैं कि हे राजा शतानीक ! सांख्ययोग आदि शास्त्र सूर्य्यनारायणसेही उत्पन्नभये हैं मोक्षकी इच्छावाले पुरुष इनकाही ध्यान करते हैं सूर्य्यनारायण के ध्यानसे बड़े २ पाप निवृत्त होजाते हैं अग्निहोत्र वेद पाठ और बहुत दक्षिणा करके युक्त यज्ञ सूर्य्यभक्ति की सोलहवीं कलाके भी समान नहीं फल देते हैं तीर्थों के भी तीर्थ मङ्गलों के भी मं·

गल और पवित्रों के भी पवित्र करनेहारे श्रीसूर्य्यनारायण हैं इनका जो आराधन करैं वे सब पापों से छुट सूर्य्यलोक को जाते हैं जिसप्रकार पतिव्रता स्त्रीको पतिकी सेवा अवश्य करनी चाहिये इसी भांति सब लोकों को सूर्य्यनारायण की उपासना अवश्य कर्त्तव्य है राजा शतानीक पूछते हैं कि हे सुमन्तुमुनि! सूर्य्यनारायणकारूप सुन्दर करने के लिये प्रथम किसने कहा यह आप वर्णन करैं तब सुमन्तुमुनि कहनेलगे कि हे राजा! एक समय ब्रह्मलोक में जाय ऋषियों ने ब्रह्माजीसे प्रार्थनाकरी कि महाराज अदिति के पुत्र सूर्य्यनाराय-ण आकाश में अतिप्रचण्ड तेजसे तपरहे हैं इससे सबलोक नाशको प्राप्तहोनेलगे हम भी अति पीड़ित होरहे हैं और आप के आसन का कमलभी सूखाजाता है कोई सुखी नहीं इसलिये आप ऐसाउपाय करैं कि यह तेज शान्तहोय यह ऋषियोंकी प्रार्थनासुन ब्रह्माजी बोले कि हे मुनीश्वरो! आप सब देवताओं सहित सूर्यनारायणकेही शरणमें जायँ जिस-से कल्याण होय यह ब्रह्माजी की आज्ञा पाय सब देवता और ऋषि सूर्यभगवान् के शरण में प्राप्तहो स्तुति करनेलगे॥

(सदान्धमूकान्वधिरान्सकुष्ठान् दद्रुव्रणाद्यैर्विविधैर्गदैर्द्दुतान्। करोषितानेवपुनर्नवानहो अतोमहाकारुणिकायते नमः १ यदौदरंज्योतिरनिन्धनंमहद्यदप्सुतेजोयदपीहच क्षुषि। तवैवतद्रूपमनेकधास्थितं मुरद्विषः सागरतोयवासिनः २ प्रचण्डपाशासिपरश्वधायुधाः समुत्थितास्तेतुसुपापचेतसः। विप्रैस्तुसन्ध्याञ्जलिनासमाहताप्रयान्तिनाशंतव देवदर्शनात् ३ वेदोभवांस्तीर्थफलंसमस्तंयज्ञेषुनित्यंभगवानवस्थितः। दमोभवान्नात्रविचारमस्ति तथासमः शान्ति

करोनराणाम् ४ नमोनमस्त्रिभुवनभूतलाखिल क्रतुक्रियागत फलसम्प्रदायिने । शुभाशुभप्रतिहतकर्मसाक्षिणेसहस्रसद्दीधितयेनमोनमः ५ प्रसक्तसप्ताश्वयुजेक्षसामयेधुरैकराश्मप्राधिते नमोनमः । सवालखिल्याप्सरकिन्नरोरगैः ससिद्धगन्धर्वपिशाचपन्नगैः ६ सयक्षरक्षोगणगुह्यकोत्तमैः स्तुतः सदादेवनमोनमोस्तुते । यच्चापिलोकेतपउच्यतेनरैः तत्तेमहातेजउशन्तिपण्डिताः ७ यतोरसांक्षिपसेशरीरिणांगभस्तिभिर्हिमकुलकालसन्निभैः । जगच्चसंशोषयसेत्वदेव यतोसिलोकेजगतांविभुस्त्वम् ८) यह देवताओं के मुखसे स्तुति सुन प्रसन्नहो सूर्यनारायण ने कहा कि हे देवताओ ! वर मांगो तब देवताओं ने यहीवरमांगा कि आपके तेजको विश्वकर्मा न्यूनकरैं यह आप आज्ञादेवैं सूर्यनारायण ने देवताओंकी प्रार्थना स्वीकार करी और विश्वकर्मा ने उन के तेज को छीललिया उसी तेजसे विष्णुभगवान् का चक्र और देवताओं ने शूल शक्ति गदा वज्र बाण परशुआदि आयुध बनाये इस देवताओं के किये स्तोत्र को जो तीनकाल पढ़े वह रोगों करके पीड़ित नहीं होता और पुत्र धन बल ऐश्वर्य दीर्घ आयुष और विजय पाता है सूर्यनारायण का तेज सौम्य होजाने से और उत्तम उत्तम आयुध मिलने से देवता अति मुदित हो फिरभी सूर्य्यनारायण की स्तुति में प्रवृत्त भये (ॐनमस्तेऋचरूपाय सामरूपायतेनमः । नमोयजुः स्वरूपायअथर्वांगिरसेनमः १ ज्ञानैकधामभूतायानिर्धूततमसेनमः । शुद्धज्योतिस्वरूपाय निस्तत्त्वायामलात्मने २ नमोखिलजगद्व्यापि स्वरूपायात्ममूर्त्तये । सर्वकारणभूताय निष्ठायैज्ञानचेतसाम् ३ नमस्तेसूर्यरूपाय प्रकाशा

लक्षरूपिणे। भास्करायमहेशाय सर्वान्तर्यामिनेनमः ४ त्वंसर्व मेतद्भगवन् जगदेभ्रमतात्वया। भ्रमत्याविद्ध्वमखिलं ब्रह्माण्डंसचराचरम् ५ त्वदंशुभिरिदंसर्वं संस्पृष्टंजायतेशुचि। क्रियतेत्वत्करस्पर्शात् जलादीनांपवित्रता ६ होमदानादिकोधर्मो नोपकारायजायते। तावद्यावन्नसंयोगि जगदेतत्त्वदंशुभिः ७ प्राह्णहोमंप्रशस्तंहि उदितेत्वयिजायते। अस्तंगते तथासायं त्वयिहोमः प्रशस्यते ८ ऋचस्सकलपान्येतानियजूष्येतानिचान्यतः। सकलानिचसामानितपत्वेदंजगत्सदा ९ ऋङ्मयस्त्वंजगन्नाथ त्वमेवचयजुर्मयः। यतस्साममयश्चैव ततोनाथत्रयीमयः १० त्वमेवब्रह्मणोरूपंपरंचापरमेवच। मूर्त्तामूर्त्तंतथा स्थूल सूक्ष्मरूपतयास्थितम् ११ निमेषकाष्ठादिमयं कालरूपंक्षयात्मकम्। प्रसीदस्वेच्छयारूपंस्वतेजोमयमादिश १२ इसप्रकार देवताओं की स्तुतिसुन बहुत प्रसन्न हो सूर्य्यनारायण अभीष्ट वर देतेभये देवताओं ने परस्पर विचार किया कि दैत्यवरों से दर्पित होरहे हैं वे अवश्य सूर्यनारायण को हरनेकायत्न करेंगे इसलिये हम को उन के चारोंओर रहना चाहिये यह विचारकर दंडनायक का रूपधार स्वामिकार्त्तिकेय सूर्य नारायण के बाईं ओर स्थितभये दंडनायक को सूर्य नारायण ने आज्ञादी कि तुम जीवों के शुभाशुभ कर्म लिखो पिंगल रूप से दहिनी ओर अग्नि और दोनों पार्श्वों में अश्विनीकुमार स्थित भये। राज्ञ और स्रोष दो द्वारपाल हैं राज्ञ कार्त्तिकेय का अवतार और स्रोष रुद्रका अवतार है ये दोनों द्वारपाल धर्म और अर्थ र के युक्त प्रथम द्वारपर रहते हैं दूसरे द्वारपर कल्माष औ ...ी ये दो द्वारपाल हैं कल्माष यमराज हैं और पक्षी

हैं ये दोनों दक्षिण दिशा में हैं कुबेर और विनायक उत्तर में दिण्डी और रेवन्त पूर्व में हैं दिण्डी रुद्रकारूप है और रेवन्त सूर्य्यनारायण का पुत्र है ये सब देवता दैत्यों को मारने के लिये सूर्य्य नारायण के चारों ओर स्थित हैं ये सब सुरूप कुरूप अल्प रूप और स्वेच्छ रूप हैं और अनेक प्रकार के आयुध धारे हैं और चारों वेद उत्तम रूपधार चारों ओ सूर्य्यनारायण के स्थितहैं॥

एकसौ उन्नीसवां अध्याय॥

सूर्य्यनारायणके आयुधव्योमका लक्षण ग्रह और लोकों का वर्णन॥

सुमन्तुमुनि कहते हैं कि हे राजा शतानीक! अब हम सूर्य्यनारायण के मुख्य आयुध व्योमका लक्षण कहते हैं वह व्योम सर्व देवमय है चार शृंगोंकरके युक्त है और सुवर्ण का बना है जिस प्रकार वरुण का पाश ब्रह्माका हुंकार विष्णु का चक्र रुद्रका त्रिशूल और इन्द्र का वज्र आयुध हैं इसी भांति सूर्य्यनारायण का आयुध व्योम है उस व्योम में ग्यारह रुद्र बारह आदित्य तेरह विश्वेदेव आठ वसु दो अश्विनीकुमार ये सब अपनी २ कला करके स्थित हैं हर शर्व त्र्यंबक वृषाकपि शम्भु कपर्दी रैवत अपराजित अजैकपाद अहिर्बुध्न्य और गर्भ ये ग्यारह रुद्र हैं ध्रुव धर सोम नल अनल आप प्रत्यूष और प्रभास ये आठ वसुहैं नासत्य और दस्र ये दो अश्विनीकुमार हैं क्रतु दक्ष स्रुव सह्यकाल काम धृति कुरु शक्र मात्र अवमान ऋभु और असह्य ये विश्वेदेवहैं इसी प्रकार साध्य तुषित मरुत आदि देवता हैं इनमें आदित्य और मरुत् कश्यपके पुत्रहैं विश्वेदेव वसु और साध्य ये धर्म के पुत्र हैं धर्मका पुत्र तीसरावसु सोम है और ब्रह्माका

पुत्र धर्म्म है स्वयम्भुव स्वारोचिष उत्तम तामस रैवत चाक्षुष ये छः मनु तो व्यतीत होगये हैं और सातवां वैवस्वत मनु वर्त्तमान है और अर्कसावर्णि ब्रह्मसावर्णि रुद्रसावर्णि धर्म्म सावर्णि दक्षसावर्णि रौच्य और भौत्य ये सात मनु आगे होंगे। अब हम चौदह इन्द्रों के नाम कहते हैं विश्वभुक् विपति विभु प्रभुशिखी मनोजव ये व्यतीत होगये ओजस्वी नाम इन्द्र वर्त्तमान है और बलि अद्भुत त्रिदिव सुशान्ति सुकीर्त्ति ऋतधामा और दिवस्पति ये सातइन्द्र आगे होंगे कश्यप अत्रि वशिष्ठ भरद्वाज गौतम विश्वामित्र और जमदग्नि ये सप्तर्षि हैं प्रवह अवह उद्वह संवह विवह परिवह और परावह ये सात मरुत् हैं और्व अग्नि का नाम शुचि वैद्युत् अग्नि का नाम पावक और अरणिसे उत्पन्नहुये अग्नि का पवमान नाम है ये तीन अग्नि हैं अग्नियों के पुत्र पौत्र उञ्चासहैं और मरुत्भी उञ्चासही हैं संवत्सर परिवत्सर इद्वत्सर अत्थवत्सर और वत्सर ये पांच संवत्सर हैं। और ब्रह्माजी के पुत्रहैं। सूर्य्य सोम भौम बुध गुरु शुक्र शनि राहु और केतु ये नवग्रह हैं जगत् का भाव अभाव सदा सूचन करते हैं। इनमें सूर्य और चन्द्र मण्डल ग्रह भौमादि पांच तारा ग्रह और राहु केतु छाया ग्रह कहाते हैं। सूर्य्य कश्यप के पुत्र हैं सोम धर्म्म के भौम महादेवजी के बुध चन्द्र के गुरु और शुक्र प्रजापति के शनि सूर्य्य के राहु सिंहिकाके और केतु ब्रह्माजी के पुत्र हैं सब ग्रहों के नीचे सूर्य्य नारायण भ्रमण करते हैं उनसे ऊपर चन्द्र चन्द्र से ऊपर नक्षत्रमण्डल नक्षत्र मण्डल के ऊपर बुध बुध के ऊपर शुक्र शुक्र के ऊपर भौम भौम के ऊपर गुरु गुरु के ऊपर शनि और शनि के ऊपर

सप्तऋषि भ्रमण करते हैं राहु सूर्य्य मण्डल में रहता है और
कभी चन्द्र मण्डल में चला जाताहै और केतु सदा चन्द्रमण्ड-
ल मेंही रहता है नौ हजार योजन सूर्य्य मण्डल का व्यास
है और इससे त्रिगुण परिधि है इस से दूना अर्थात् अठ-
हजार योजन चन्द्रमा का व्यास है चन्द्रमण्डल से द्विगु
विस्तार नक्षत्रों का है नक्षत्रों के विस्तार में चतुर्थांश न्यून व
तो बृहस्पति का व्यास होता है उस में चौथाई घटाने
शुक्र और भौम का प्रमाण सिद्ध होता है इनके व्यास में भी
चौथा भाग घटाने से बुधका व्यास होजाता है बुध के समान
छोटे नक्षत्र हैं सूर्य्य मण्डल के प्रमाण राहु है और केतुका प्र-
माण नियत नहीं और उसकी गतिका भी निश्चय नहीं
पृथ्वी को भूलोक कहते हैं अन्तरिक्षको भुवर्लोक त्रिदिव
स्वर्लोक कहते हैं भूलोक का स्वामी अग्नि है भुवर्लोक
वायु और स्वर्लोक का प्रभु सूर्य्य है गन्धर्व अप्सरा गुह्यक
और राक्षस भूलोकमें रहते हैं मरुत् भुवर्लोकमें रहतेहैं और रुद्र
अश्विनीकुमार आदित्य वसु और देवगण स्वर्लोक में निवा-
स करते हैं चौथा महर्लोक है जिसमें प्रजापतियों सहि
कल्पवासी रहते हैं पांचवें जनलोक में ऋभु सनत्कुमा
आदिक ऋषि और भूमिदान करनेहारे मनुष्य बसते है
छठवें तपोलोक में ऋषि रहतेहैं और सातवें सत्यलोक में वे पु-
रुषरहतेहैं जो जन्म मरण से छुटजाते हैं और पुराण बांचने-
वाले तथा श्रवण करनेवाले भी उसी लोकको जातेहैं भू
से लाख योजन ऊंचा सूर्य्यमण्डल है और सात कोटि यो-
जन दूर ध्रुव है तेईस लाख योजन तीनों लोकोंकी ऊँचाई है
और ध्रुवसे ऊपर दूनी २ ऊँचाई करके बाकी चार लोक हैं

देव दानव गन्धर्व यक्ष राक्षस नाग भूत और विद्याधर ये आठों देवयोनि हैं इस प्रकार इस व्योम में सातलोक स्थित हैं मरुत पितर मेघ अग्नि ग्रह और आठों देव योनि तथा मूर्त और अमूर्त सब देवता इसी व्योम में स्थित हैं इसलिये जो भक्ति और श्रद्धासे व्योमका पूजनकरै उसको सब देवताओं के पूजनकाफल प्राप्तहोता है और सूर्य्यलोक को जाता है इस लिये अपने कल्याण के अर्थ सदा व्योमका पूजन करै ॥

एकसौबीसवाँ अध्याय ॥

मेरुपर्वत का वर्णन ॥

सुमन्तुमुनि कहते हैं कि हे राजा शतानीक ! आकाश ख-वियत् व्योम अंतरिक्ष नभ अम्बर पुष्कर गगन मेरु विपुल आप छिद्र शून्य तम इत्यादि सब नाम व्योमके हैं । लवण क्षीर दही घृत इक्षुरस मद्य और मीठाजल इन के सात समुद्र हैं हिमवान् हेमकूट निषध नील श्वेत और शृङ्गवान् ये छः वर्षपर्वतहैं और इनके मध्यमें सुमेरुस्थितहै मेरु के ऊपर आठों दिक्पालोंकी अपनी २ दिशामें पुरीहैं पृथिवी में लोकालोक पर्वत है सबलोक ब्रह्मांडके भीतर हैं ब्रह्मांडके बाहिर चारों ओर जल है अग्नि करके वेष्टित है अग्नि वायु करके वायु आकाश करके आकाश भूतादि करके और भूतादि महत्तत्त्व करके महत्तत्त्व प्रकृतिकरके प्रकृति पुरुषकरके और पुरुष ईश्वर करके आवृत है वह सम्पूर्ण जगत् को आवरण करनेवाला ईश्वर सूर्य्यनारायणही है भूः भुवः स्वः महः जनः तपः और सत्य ये सात ऊपरके लोकहैं और तल सुतल पाताल तलातल अतल वितल और रसातल ये सातलोक भूमिके नीचे हैं ये सब पहिली भांति ईश्वर करके आवृत हैं पृथ्वी के मध्य में

सिद्ध गन्धर्व देवताआदि करके सेवित चतुरस्र सुवर्ण का बनाहुआ चारशृंगोंकरकेयुक्त सुमेरु पर्वत है उसकी ऊँचाई चौरासीहजार योजन है और सोलहहजारयोजन भूमिमें गड़ा है इसप्रकार मिलकर एकलाखयोजन मेरुपर्वत गिनाजाता है अट्ठाईसहजार योजन चौड़ा और छप्पनहजारयोजन लम्बा मेरुपर्वत है उसका सौमनसनाम पहिला शृंग सुवर्णका है ज्योतिष्कनाम दूसरा शृंग पद्मरागमणि से बना है तीसरा चित्र नामशृङ्गसर्वधातुमयहै और चौथा चन्द्रौजशनाम शृङ्ग चांदी काहै सौमनसनाम पहिले शृङ्ग में सूर्यनारायण का उदय होता है तब सबलोक देखतेहैं उसीका नाम उदयाचल है उत्तरायण में सौमनस शृंगमें दक्षिणायन में ज्योतिष्क शृंग में और मेष तुलासंक्रांतियों में मध्य के दोशृंगों में सूर्य्यनारायणका उदय होता है उस पर्वतके ईशानकोण में इन्द्र और विष्णु अग्नि कोणमें अग्नि नैर्ऋत्य कोण में पितर वायव्य में मरुत् और मध्यमें साक्षात् ब्रह्मा निवासकरते हैं इसी को व्योम कहते हैं जहां सूर्य्यनारायण आप निवास करते हैं इस प्रकार सर्व देवमय और सर्वलोकमय व्योम है एकशृंगपर सूर्य्य दूसरे पर हेलि तीसरे पर धननाथ और चौथे शृंगपर सोमस्थितहैं मध्य में ब्रह्मा विष्णु और शिव निवास करते हैं और उन्हीं शृंगों में विधुक्षय गोपति शांडिली सुत यम विरूपाक्ष वरुण इन्द्र दशावक्त आदि देवता निवास करतेहैं मध्यमें ब्रह्मा और अधोभाग में अनन्त की स्थिति है यह व्योम अथवा मेरु सर्व धर्ममय और सर्वदेवमय है इसके चारों शृंग धर्म आदि चार पुरुषार्थ अथवा ऋग्वेद आदि चारों वेद हैं॥

एकसौइक्कीसवाँ अध्याय।

साम्बकृत सूर्य्यनारायण का आराधन और स्तुति॥

राजा शतानीक पूछते हैं कि साम्ब ने किस प्रकार सूर्य्यनारायण का आराधन किया और उस दारुण रोग से क्योंकर छुटा यह आप कृपा कर वर्णन कीजिये यह राजा का वचन सुन सुमन्तु मुनि बोले कि हे राजन्! आपने बहुत उत्तम कथा पूछी इसको हम विस्तार से वर्णन करते हैं जिसके सुनते ही सब पाप दूर होजायँ नारदजी के मुखसे सूर्य्यनारायण का माहात्म्य सुन अपने पिता श्रीकृष्णचन्द्र के समीप जाय साम्ब नें प्रार्थना करी कि महाराज रोग ने मुझे दबालिया है और औषधों से कुछ शांति नहीं होती अब आप आज्ञा देवें कि मैं वन में जाय सूर्य्यनारायण का आराधन कर इस दुःख से छूटूँ यह पुत्र का वचन सुन प्रसन्न हो श्रीकृष्ण भगवान् ने आज्ञा दी साम्ब भी पिता की आज्ञा पाते ही चन्द्रभागा नदी के तटपर जगत्प्रसिद्ध मित्रवन नाम सूर्य्यक्षेत्र में जाय तप करने लगा और उपवास कर सूर्य्यनारायण के आराधन में प्रवृत्त होगया ऐसा तप किया कि शरीर में अस्थिमात्र रहगई नित्य मंत्रका जप करता और इस स्तोत्र करके सूर्य्यनारायण की स्तुति करता (यदेतन्मण्डलंशुक्लं दिव्यंचाजरमव्ययम् । युक्तंमनोजवैरश्वैर्हरितैर्ब्रह्मवादिभिः १ आदिरेषहिभूतानामादित्यइतिसंज्ञितः । त्रैलोक्यचक्षुरेषोत्र परमात्माप्रजापतिः २ यएषमण्डलेह्यस्मिन् पुरुषोदीप्यतेमहान् । एषविष्णुरचिन्त्यात्मा ब्रह्माचैवपितामहः ३ रुद्रोमहेन्द्रोवरुण आकाशःपृथिवीजलम् । वायुःशशाङ्कःपर्जन्यो धनाध्यक्षोविभावसुः ४ यएषमण्डलेह्यस्मिन्

वैप्रकाशते । सहस्ररश्मिःसूर्योयं द्वादशात्मादिवाकरः ५ य एषमण्डलेह्यस्मिन् पुरुषोदीप्यतेमहान् । एषसाक्षान्महादेवोवृत्तकुम्भनिभःशुभः ६ कालोह्येषमहायोगी निरोधोत्पत्तिलक्षणः । यएषमण्डलेह्यस्मिंस्तेजोभिःपूरयन्महीम् ७ भासतेह्यव्यवच्छिन्नो धातोह्यमृतलक्षणः । नातःपरतरंकिञ्चित् तेजसाविद्यतेक्वचित् ८ पुष्णातिसर्वभूतानि एषएवसुधामृतैः । अन्त्यजान्म्लेच्छजातीयांस्तिर्यग्योनिगतानपि ९ कारुण्यात्सर्वभूतानि पासिदेवविभावसो । श्वित्रिकुष्ठ्यन्धबधिरान्खञ्जान्पंगुलकांस्तथा १० प्रपन्नवत्सलोदेवो नीरुजःकुरुषेभवान् । दद्रुमण्डलमग्नांश्च निर्धनान्पुरुषांस्तथा ११ प्रत्यक्षदर्शीत्वंदेव समुद्धरसिलीलया । कामेशक्तिस्तवस्तोतुमार्तोहं रोगपीडितः १२ स्तूयसेत्वंसदादेव ब्रह्मविष्णुशिवादिभिः । महेन्द्रसिद्धगन्धर्वैरप्सरोभिःसगुह्यकैः १३ स्तुतिभिः किंपवित्राभिरन्याभिर्वामहेश्वर । यस्यतेऋग्यजुःसाम्नांत्रितयंमण्डलेस्थितम् १४ ध्यानिनांत्वंपरंध्यानं मोक्षद्वारञ्चमोक्षिणाम् । अनन्ततैजसाक्षोभ्य अचिन्त्याव्यक्तनिष्कल १५ यन्मयाऽव्याहृतंकिञ्चित् स्तोत्रेस्मिञ्जगतःपते । आर्तिभक्तिञ्चविज्ञायतत्सर्वंक्षन्तुमर्हसि १६) इसप्रकार साम्ब से स्तुति सुन अतिप्रसन्न हो सूर्यनारायण ने प्रत्यक्ष दर्शन देकर कहा कि हे साम्ब! वर मांग हम तेरे तपसे बहुत प्रसन्न भये हैं तब साम्बने कहा कि महाराज आपके चरणों में दृढ़ भक्ति होय यही वर चाहता हूं सूर्यनारायण ने कहा कि यह तो होहीगी परन्तु और भी वरमांगो तब फिर साम्बने कहा कि महाराज जो आपकी यही इच्छाहै तो यह मेरे शरीर का कलंक निवृत्त होजाय तब सूर्यनारायण ने कहा कि

ऐसाही होय यह करतेही साम्बका दिव्यरूप और उत्तम स्वर होगया फिर भी सूर्य्यनारायण ने कहा कि हे साम्ब! हम प्रसन्न होके और भी वरदेते हैं कि यह नगर तुम्हारे नामसे प्रसिद्ध होगा और लोकमें तुम्हारी अक्षय कीर्त्ति होगी और हम तुमको नित्य स्वप्न में दर्शन देंगे अब तुम इस चन्द्रभागा नदी के तटपर हमारी प्रतिमा स्थापन करो इतना कह सूर्य्यनारायण अन्तर्द्धान भये हे राजा! इस साम्ब के किये स्तोत्र को जो पढ़ै वह राज्य धन आरोग्य पावै और साम्बकी भांति सूर्य्यनारायण का प्रीतिपात्र हो सूर्य्यलोक को जाय॥ एकसौबाईसवां अध्याय॥

सूर्यनारायण का एकविंशतिनामात्मस्तोत्र॥

सुमंतुमुनि कहते हैं कि हे राजा शतानीक! तपकरनेके समय साम्ब सहस्र नामसे स्तुति किया करताथा तब स्वप्नमें सूर्य्यनारायण ने कहा कि हे साम्ब! सहस्र नाम से हमारी स्तुति करने की कुछ अपेक्षा नहीं हम अत्यन्त गुह्य पवित्र और शुभ अपने नाम तुमको बताते हैं जिनके पाठ करने से सहस्र नाम के पाठका फलहोय (ॐ विकर्तनोविवस्वांश्चमार्तण्डो भास्करोरविः। लोकप्रकाशकःश्रीमाँल्लोकचक्षुर्ग्रहेश्वरः १ लोकसाक्षीत्रिलोकेशः कर्ताहर्तातमिस्रहा। तपनस्तापनश्चैव शुचिःसप्ताश्ववाहनः २ गभस्तिहस्तोब्रह्मा च सर्वदेवनमस्कृतः) यह इक्कीस नामका हमारास्तोत्र त्रैलोक्य में प्रसिद्ध है जो दोनों संध्याओं में इस स्तोत्र को पढ़ै वह सब पापों से छुटै और धन सन्तान आरोग्य आदि जो पदार्थ चाहै वही मिलै इतना साम्ब को उपदेश कर सूर्य्यनारायण अन्तर्द्धान भये साम्ब भी इस स्तवराज के पाठ से आरोग्य [illegible]

भया और भी जो पुरुष भक्तिसे इस स्तोत्र का पाठ करै वह सब रोगों से छुटै ॥

एकसौतेईसवां अध्याय ॥

चंद्रभागा नदीसे साम्बको सूर्यनारायण की प्रतिमा प्राप्तहोनेका वृत्तान्त॥

सुमन्तु मुनि कहते हैं कि हे राजा शतानीक! इस प्रकार सूर्यनारायण से वरपाय साम्ब अतिहर्षित हुआ एक दिन तपस्वियों के साथ पहिली भांति चन्द्रभागा नदीपर स्नान करने गया वहां स्नानकर मण्डल बनाय सूर्यनारायण का भक्तिसे पूजन किया और मन में विचार करने लगा कि सूर्यनारायण की कैसी प्रतिमा स्थापन करूं यह विचार करतेही नदी में देखा कि अतिप्रकाशवती एक प्रतिमा बही चली आती है प्रतिमा देखतेही साम्ब को निश्चय हुआ कि यह अवश्य सूर्यनारायण की प्रतिमा है और उनकी इच्छा से मेरे दृष्टिगोचर हुई यह मन में विचार नदी से उस प्रतिमा को वाहर निकाल लाया वही प्रतिमा साम्बने मित्रवन में विधिपूर्वक स्थापन करी एक दिन साम्ब ने प्रतिमासेही पूछा कि महाराज यह आपकी प्रतिमा किसने बनाई है आप कृपाकर मुझ से कहैं यह सुन प्रतिमा बोली कि हे साम्ब पूर्वकाल में हमारा रूप प्रचण्ड तेजकरके युक्त था उस से व्याकुलहो सब देवताओं ने हम से प्रार्थना करी कि आप इस रूप को सौम्यकीजिये नहीं तो सब लोक दग्धहोजायँगे देवताओं की प्रार्थना हमने स्वीकार करी और शाकद्वीप में जाय विश्वकर्मा से अपना तेज छिलवा डाला उसी विश्वकर्मा ने कल्पवृक्ष के काष्ठ से यह हमारी सुलक्षण प्रतिमा बनाई और अब तुम्हारी इच्छा पूरी करने के लिये हमारी आज्ञानुसार

विश्वकर्मानेही नदीमें बहाई है साम्ब यह हमारा क्षेत्र तुम्हारे नाम से प्रसिद्ध होगा मध्याह्नके पूर्व मुण्डारक्षेत्र में मध्याह्न के समय कालप्रिय में और मध्याह्न के अनन्तर इस स्थान में हमारा सान्निध्य होगा इन तीनों कालों में क्रमसे ब्रह्मा विष्णु और शिव सदा हमारा पूजन करते हैं यह सूर्यनारायण की प्रतिमाके मुखसे सुन साम्ब अतिहर्षित हुआ ॥

एकसौचौबीसवां अध्याय ॥

प्रासाद योग्य भूमिका कथन प्रासाद का सामान्य लक्षण और मेरु आदि बीस प्रासादों के विशेष लक्षण भूमिपरीक्षा अंगदेवताओंके स्थापन का प्रकार ॥

राजा शतानीक पूछते हैं कि हे सुमन्तुमुनि ! साम्ब ने सूर्यनारायण की प्रतिष्ठा किस विधि करी और प्रासाद कैसा बनाया यह आप वर्णन करें यह राजाका वचन सुन सुमन्तुमुनि बोले कि हे राजा ! प्रतिमा मिलनेके अनन्तर साम्ब ने नारदजी का स्मरण किया स्मरण करतेही नारदजी वहां आये उनका पूजन सत्कार आदि कर आसन पर बैठाय साम्बने पूछा कि महाराज सूर्यनारायण की प्रतिष्ठा किस विधान से करनी चाहिये और प्रतिष्ठा से क्या फल होता है यह आप कृपाकर कहें। तब नारदजी बोले कि हे साम्ब ! पहिले तो उत्तम प्रासाद बनाना चाहिये पीछे उसमें मूर्ति स्थापन होता है साम्बने फिर पूछा कि महाराज प्रासाद का क्या लक्षण है और कैसी भूमिमें बनाना चाहिये यहभी आप कथन करें यह साम्बका प्रश्न सुन नारदजी कहनेलगे कि हे साम्ब ! पहिले तो उत्तम जलाशय बनावे उसके तट पर सुन्दर बाग लगाय बाग के मध्य में प्रासाद बनाय उसमें

देवता का स्थापन करै अथवा उत्तम जनों करके युक्त नग्र प्रासादि बनावै इष्ट अर्थात् यज्ञादि और पूर्त्त अर्थात् कु तटाक आदि इन दोनों कर्मों के फलकी इच्छा होय देवता स्थापन करै जल और सुन्दर सघन वृक्षों करके यु रमणीय स्थानों में अवश्य देवता निवास करते हैं कमलों कर आच्छादित हंस कारण्डव क्रौञ्च चक्रवाक आदि पक्षि करके शोभित तटमें पक्षियों के विहार योग्य शीतल औ सघन छाया युक्त वृक्षों करके भूषित सरोवरों में उत्तम २ न दियोंके तटोंमें पर्वतों के निर्झरों के समीप सदा देवता वि हार करते हैं ब्राह्मण आदि वर्णोंके लिये जैसी भूमि घर बना के लिये कही है वैसीही भूमिमें देवप्रासाद भी बनावै घरकी भांति देवालय में चतुष्षष्टि पदका वास्तु रचै मध्यमें द्वा रकवे विस्तारसे द्विगुण प्रासादकी ऊँचाई होती है और ऊं चाई की तिहाई प्रासाद की कटि अर्थात् मध्यभाग होता है विस्तारके आधे में गर्भमन्दिर और आधे में भित्ति बनती है गर्भकी चौथाई के तुल्य चौड़ा और उससे दूना ऊंचा द्वार होता है विस्तारकी चौथाई के तुल्य द्वारशाखा बनावै और द्वारशा खाओं के नीचले चतुर्थांश में प्रतीहारकी मूर्ति बनावै बाकी द्वारसाखा में भांति २ के बेल बूटे पक्षी आदि बनादेवै द्वार शाखाके अष्टमांश के तुल्य पिण्डिका अर्थात् नीचेकी चौकी सहित प्रतिमा बनावै उसमें एक भाग पिण्डिका और दो भाग प्रतिमा बनती हैं मेरु मन्दर कैलास विमान नन्दन समुद्र पद्म गरुड़ नन्दिवर्द्धन कुंजर गृहराज वृष हंस सर्व तोभद्र घट सिंह वृत्त चतुष्कोण षडस्र अष्टास्र ये बीस भांति के प्रासाद होते हैं हे साम्ब! अब तुम इनके लक्षण सुनो नौ

आठ छः अथवा तीन अश्रियों करके युक्त बारह भूमिका अर्थात् खण्ड का चार द्वारों करके शोभित तीस हाथ विस्तार करके युक्त मेरु प्रासाद होता है तीस हाथ विस्तार में दश भूमिका का मन्दर प्रासाद होता है अट्ठाईस हाथ विस्तार में और आठ खण्ड का प्रासाद कैलास कहाता है सुन्दर जाली झरोखों से शोभित सात खण्ड का और इक्कीस हाथ के विस्तार में विमान प्रासाद होता है छः भूमिका करके संयुक्त बत्तीस हाथ विस्तार में नन्दन प्रासाद बनता है और समुद्रप्रासाद वर्तुल होता है और पद्मप्रासाद पद्म के आकार आठ हाथ विस्तार में होता है उसमें एक शृंग और एकही भूमिका होती है गरुड़प्रासाद गरुड़ के आकार होता है नन्दिवर्द्धनप्रासाद साठ हाथ के विस्तार में सात भूमिका करके युक्त और बीस अश्रियों करके युक्त होता है सोलह हाथ ऊँचा और हाथी की पीठ के आकार कुंजरप्रासाद होता है सोलह हाथ के विस्तार में तीन चन्द्रशालाओं करके युक्त गृहराजनाम प्रासाद बनता है बारह हाथ के विस्तार में चारों ओर वर्तुल एक भूमिका और एक शृंगकरके युक्त वृषप्रासाद होता है हंसप्रासाद हंस के आकार आठ हाथ विस्तार में होता है चारद्वार बहुत से शिखर और अनेक चन्द्रशालाओं करके युक्त छब्बीस हाथ विस्तार में पांच खण्ड का प्रासाद सर्वतोभद्र कहाता है बारह हाथ के विस्तार में सिंहाक्रान्त नाम प्रासाद सिंह के आकार होता है बाकी प्रासाद नाम के सदृश रूपवाले होते हैं मयासुर के मत में एक एक भूमिका एक सौ आठ अंगुलकी होती है विश्वकर्मा के मत में साढ़े तीन हाथकी भूमिका और स्थपति अर्थात् कारीगरों के म

में प्रत्येक भूमिका सौ २ अंगुल की होती है भूमिका कुछ न्यून रहजाय तो उसके ऊपर कपोतपालिका बना देने से पूरी होजाती है साम्ब पूछते हैं कि हे नारदजी ! ये बीसप्रासाद आपने कहे इन में सूर्य्यनारायण के लिये कौनसा प्रासाद बनवाना योग्य है और नगर में प्रासाद बनावे तो कौनसी दिशा में बनावे यह आप कृपा कर वर्णन करें यह सुन नारद जी कहने लगे कि हे साम्ब ! नगर के मध्य में अथवा पूर्व्व द्वारके समीप भूमिकी परीक्षाकर उस में प्रासाद बनावे सुन्दर वर्ण रस और गन्ध करके युक्त स्निग्ध भूमि अच्छी होती है कंकर तुष केश अस्थि अङ्गार आदि जिस भूमि से निकलें वह प्रासाद योग्य नहीं जिस भूमि को ताड़न करने से मेघ अथवा दुन्दुभीके शब्द के समान शब्द होय और जिस भूमि में सब प्रकारके बीज ऊगआवैं वह भूमि उत्तमहोती है शुक्ल रक्त पीत और कृष्ण वर्ण की भूमि क्रम से ब्राह्मण आदि वर्णों के लिये श्रेष्ठ है इस प्रकार भूमि की परीक्षा कर उत्तम भूमि जान उस में चार हाथ लम्बा चौड़ा चतुरस्र चौका लगाय एक हाथ लम्बा चौड़ा और दश अंगुल गहरा एक गढ़ा खोदै और उस गढ़े को फिर उसी मृत्तिका से भरे जो गढ़े से निकलीहो जो गढ़ा भरजाय और कुछ मृत्तिका शेषरहे तो वह भूमि उत्तम होती है मृत्तिका न बढ़ै और घटै भी नहीं तो मध्यम और मृत्तिका न्यून होजाय गढ़ा न भरै वह भूमि अच्छी नहीं होती सूर्य्यनारायण का मन्दिर पूर्व्वाभिमुख बनाना चाहिये और पूर्व्वकी ओर द्वार रखने का स्थान न होय तो पश्चिमाभिमुख बनावै परन्तु मुख्य तो पूर्व्वाभिमुखही है उस में स्थानों की कल्पना इस प्रकार करै कि

मुख्य मन्दिर से दक्षिण ओर सूर्य्यनारायण का स्नान गृह और उत्तर की ओर अग्निहोत्र शाला बनावै शिव जी और मातृका इनका मन्दिर उत्तराभिमुख बनावै पश्चिम की ओर ब्रह्मा उत्तर को विष्णु दाहिनी ओर निक्षुभा और बायें ओर राज्ञी का स्थापन करै दक्षिण भाग में पिंगल वामभागमें दण्डनायक और सूर्य्यनारायण के सम्मुख श्री और महाश्वेता का स्थापन होता है देवगृह के बाहर अश्विनी कुमारों का स्थान बनावै दूसरी कक्षा में राज्ञ और श्रौष तीसरी में कल्माष और पक्षी दक्षिण में माठर उत्तर में कुबेर और कुबेर से उत्तर रेवन्त और विनायक स्थापन करै अथवा जिस दिशा में उत्तम स्थान हो वहांही स्थापन करै वाम दक्षिण में दो मण्डल अर्घ्य देने के लिये बनावै उदय के समय दक्षिण मण्डल में और अस्त के समय वाम मण्डल में सूर्य्यनारायण को अर्घ्य देवै और चक्राकार पीठके ऊपर स्नानगृह में चार कलशोंकरके सूर्यनारायणकी प्रतिमा को स्नानकरावै स्नान के समय शंख आदि वाद्य बजैं तीसरे मण्डलमें सूर्यनारायण का पूजनकरै सूर्य्यनारायण के सम्मुख खड़ा हुआ दिण्डी स्थापन करै सूर्य्यनारायण के सम्मुख समीपही व्योम का स्थान बनावे जिसका हमने प्रथम वर्णन किया है मध्याह्न के समय वहां सूर्य्यनारायण को अर्घ्यदेवै अथवा मध्याह्न के अर्घ्यके लिये चक्रनामक तीसरा मण्डल बनालेवै पहिले स्नान कराय पीछे अर्घ्यदेवै और सूर्यनारायण के समीपही पुराण बांचनेका स्थान बनावै यह क्रमसे देवताओं के स्थापनका विधान है गृहराज और सर्वतोभद्र ये दो प्रासाद ... र्यनारायण को अतिप्रिय हैं इसलिये येही बनाने चा...

एकसौपच्चीसवां अध्याय ॥

सात प्रकारकी प्रतिमा प्रतिमा बनाने के योग्यवृक्ष उन वृक्षों के काटने का विधान ॥

नारदजी कहते हैं कि हे साम्ब! अब हम विस्तारसे प्रतिमा का विधान कहते हैं सब देवताओं की प्रतिमा और विशेष करके सूर्य्यनारायण की सात प्रकार की होती है सुवर्ण की चांदी की ताम्रकी पाषाण की मृत्तिका की काष्ठ की और चित्र में लिखी हुई इन सात प्रकार की प्रतिमाओं में काष्ठ की प्रतिमा का विधान हम कहते हैं ज्योतिषियों से उत्तम मुहूर्त्त पूछ उस मुहूर्त्त में बहुत उत्सवकर अच्छे शकुन देख वन में जाय वहां प्रतिमा के लिये वृक्ष देखे दुग्ध युक्त वृक्ष दुर्बल वृक्ष चतुष्पथ देवस्थान वल्मीक श्मशान चैत्य आश्रम आदि में लगेहुये वृक्ष पुत्रक वृक्ष अर्थात् जो वृक्ष किसी अपुत्र मनुष्यने अपना पुत्रकरके लगाया होय जिनमें कोटर बहुत होयँ और बहुत पक्षी रहते होवें वृक्ष शस्त्र वायु अग्नि बिजुली हाथी आदि करके दूषित वृक्ष एक दोशाखा वाले वृक्ष और जिनका अग्र सूखगया हो ऐसे वृक्ष प्रतिमा बनानेके योग्य नहीं होते महुवा देवदारु राजवृक्ष चन्दन बिल्व अंवाड़ा खदिर अंजन निम्ब श्रीपर्णी पनस सरल अर्जुन और रक्तचन्दन ये वृक्ष प्रतिमाके लिये उत्तम हैं महुवा आदि दो २ वृक्ष क्रम से चारों वर्णों के लिये श्रेष्ठ हैं और निम्बआदि छः वृक्ष सर्व साधारण हैं देवदारु चन्दन शमी और महुवा ब्राह्मणोंके लिये निम्ब पीपल खदिर और बिल्व क्षत्रियोंके अर्थ अर्जुन खदिर रक्तचन्दन और स्यन्दन वैश्यों के लिये और तेंदू नागकेसर सर्ज अंजन आम्र और शाल ये

वृक्ष शूद्रोंके लिये प्रतिमा बनाने के अर्थ उत्तम हैं इन वृक्षोंके काष्ठ से प्रतिमा अथवा लिङ्ग बनाय स्थापन करै शुचि एकांत सम केश अङ्गार कण्टक आदि से रहित और पूर्व तथा उत्तर को झुकीहुई भूमि में जो वृक्ष उत्पन्न हुआहो जो वृक्ष सुन्दर शाखा पत्र पुष्प फलोंकरके युक्तहो सीधाहो और जिसमें व्रण न होय ऐसा वृक्ष उत्तम होता है जो आपही टूटपड़ै खड़ा २ सूखजाय और जिस में मधुमक्षिका शहद का छत्ता लगावै वह वृक्ष शुभ नहीं होता कातिक आदि आठ महीनों में उत्तम मुहूर्त देख वृक्ष ग्रहणकरै वृक्षके नीचे चारोंओर चौका लगाय स्नानकर सुन्दर श्वेत नयेवस्त्र धारणकर गन्ध पुष्प माला धूप बलि आदि से वृक्ष का पूजन कर हवन करै ॐ भूर्भुवः स्वः इस मन्त्र से वृक्षका पूजन करै पूजनकर इन श्लोकों से वृक्षको सान्त्वन करै (वृक्षलोकस्यशान्त्यर्थंगच्छदेवालयंशुभम् । देवत्वंयास्यसेतत्रछेददाहविवर्जितः १ कालेधूपप्रदानेनसपुष्पैर्बलिकर्मभिः । लोकास्त्वांपूजयिष्यन्तिततोयास्यसिनिर्वृतिम् २) इन श्लोकों को पढ़ धूप माल्य आदि से कुठार का पूजनकर वृक्षके समीप रक्खै और कुठार का शिर पूर्वकी ओर करै फिर मोदक खीर भात दही मांस भाँति २ के पुष्प धूप दीप आदि से देवता पितर राक्षस पिशाच नाग असुर गण विनायक आदिको रात्रि के समय बलि देकर वृक्षका पूजन करै और वृक्षको स्पर्शकर ये श्लोकपढ़ै (अर्चार्थममुकस्यत्वंदेवस्यपरिकीर्त्तितः । नमस्तेवृक्षपूजेयंविधिवत्प्रतिगृह्यताम् १ यानीहभूतानिवसन्तितानिबलिंगृहीत्वाविधिवत्प्रयुक्तम् । अन्यत्रवासंपरिकल्पयन्तु कल्याणनाःसन्तुनमोस्तुतेभ्यः) इस प्रकार प्रार्थना कर शयन करै प्रभात उठ

स्नानकर वृक्षका पूजन करै और ब्राह्मण तथा भोजकों को दक्षिणा देकर स्वस्तिवाचन कराय उस वृक्षको कटवावै पूर्व ईशान और उत्तरकी ओर कटकर वृक्षगिरै तो अच्छा होताहै बाक़ी पांचदिशा अशुभ हैं इनमें भी वायव्य और पश्चिम मध्यमहैं पहिले वृक्षकी शाखा कटवाय पीछे वृक्षको ऐसी रीति से काटै कि पूर्वादि दिशाओं में गिरै जो वृक्ष गिरतेही दोटूक होजाय अथवा उससे शहद घी तेल रुधिर आदि स्रवै वह वृक्ष ग्रहण न करना चाहिये कुठार का प्रहार करतेही जो वृक्ष में पीत वर्ण का मण्डल पड़जाय तो उस वृक्ष में गोधा होती है कालामण्डल होय तो सर्प पुण्ड्रवर्ण होय तो पाषाण कपिल वर्ण होय तो पल्वी शुक्ल वर्ण होय तो जल और मंजीठ के समान रक्त वर्ण मण्डल पड़जाय तो उस वृक्ष में कृमि होते हैं ये दोष जिस वृक्ष में न होयँ उसको ग्रहण करै काटने के अनन्तर थोड़े कालतक पत्तों से वृक्ष को ढकदेवै पीछे प्रतिमा बनवावै ॥

एकसौछब्बीसवां अध्याय ॥

प्रतिमा बनानेका प्रकार, प्रतिमाके शुभ अशुभ लक्षण ॥

नारदजी कहते हैं कि हे साम्ब! एक हाथकी तीन हाथ की साढ़ेतीन हाथ अथवा प्रासाद और द्वार के अनुसार जितना प्रमाण आवै उतनी लम्बी प्रतिमा बनावै एक हाथ की प्रतिमा सौम्य होती है दो हाथ की धन धान्य देती है तीन हाथ की प्रतिमा से सब काम सिद्ध होते हैं और साढ़े तीन हाथ लम्बी प्रतिमा स्थापन करीजाय तो सुभिक्ष क्षेम और आरोग्य होता है जो प्रतिमा अग्र में मध्य में और मूल में सम हो उस को गान्धर्वी कहते हैं वह प्रतिमा धन और

धान्य देनेहारी है देवालय के द्वार का जितना विस्तार हो उसके अष्टांश के समान प्रतिमा बनावै उस में भी एकभाग पिण्डिका छोड़ दोभाग में प्रतिमा बनती है अपने चौरासी अंगुलकी प्रतिमा उत्तम होती है उसमें बारह अंगुल लम्बा और चौड़ा प्रतिमाका मुखबनता है मुखकी तिहाई ठोढ़ी और बाक़ी ललाट और नासिका होती है नासिका के तुल्य कान बनते हैं दोदो अंगुल के नेत्र और इसकी तिहाई में नेत्र की तारा और ताराकी तिहाई में दृष्टि बनती है ललाट और मस्तककी ऊँचाई समानही होती है मस्तक का विस्तार बत्तीस अंगुल होता है नासिका के तुल्य ग्रीवा होती है और मुख के समान हृदयका अन्तर बनता है मुख के तुल्य नाभि और उसके अनन्तर शिश्न बनाया जाता है ऊरु के ऊपर कटि बनती है बाहु और प्रबाहु तथा ऊरु और जंघा समान बनाई जाती हैं गुल्फ अर्थात् टँकने के नीचे चारअंगुल ऊँचे पाद बनते हैं पादोंकी चौड़ाई छःअंगुल होती है और पैरों के अँगूठे तीन तीन अंगुल लम्बे होते हैं और अँगूठों के समानही तर्जनी होती हैं बाक़ी तीन अंगुली क्रमसे छोटी बनती हैं और नखभी क्रमसे छोटे होते जाते हैं पैरकी लम्बाई चौदह अंगुल होती है इन लक्षणों करके युक्त प्रतिमा पूजन के योग्य होती है कन्धे छाती ऊरु भ्रू ललाट नासिका और कपोल ये अवश्य ऊँचे होने चाहिये विशाल नेत्र कमल के समान मुख रक्तवर्ण ओठ रत्नजटित मुकुट से भूषित मस्तक मणि कुण्डल कटक अंगद हार आदि भूषणों से शोभित अव्यंग धारेहुये हाथों में कमल और लवण मालालिये अतिमनोहर सूर्यनारायण की प्रतिमा बनावै ऐसी मूर्ति प्र

कल्याण करनेहारी होती है प्रतिमा का कोई अंग अधिक होय तो राजभय होता है न्यूनहोय तो रोगभीति पेट बड़ा होय तो क्षुधाका भय और कृशप्रतिमा होय तो दारिद्र्य होता है प्रतिमा में क्षतहोय तो शस्त्रभय होय फूटी प्रतिमा होय तो मृत्यु दहिनी ओर झुकी होय तो आयुष्का क्षय बाईं ओर झुकीहोय तो पत्नी से वियोग होता है इसलिये सुन्दर और सीधी सूर्यनारायणकी प्रतिमा बनावै प्रतिमा की दृष्टि ऊपरको होय तो स्थापन करनेवाला अन्धा होजाय नीचे दृष्टि होय तो चिन्ता होय यह सब प्रतिमाओं का शुभाशुभ फल हमने कहा है कमण्डलु धारे कमलासन पर बैठे चार मुखों करके युक्त ब्रह्माजी की प्रतिमा बनावै स्वामि-कार्त्तिकेयकी मूर्त्ति कुमार स्वरूप हाथमें बर्छी लिये बहुत सुन्दर बनानी चाहिये और उनके ध्वजा में मयूर का चिह्न होता है चार दन्तों करके युक्त शुक्लवर्ण के ऐरावत नाम हाथी पर आरूढ़ वज्र हाथ में लिये ऐसी प्रतिमा इन्द्र की बनवावै प्रतिमा जिस प्रकार सुन्दर और सुलक्षण होय वैसे बनवानी चाहिये ॥

एकसौसत्ताईसवां अध्याय ॥

सूर्यनारायणका सर्वदेवमयत्व प्रतिपादन ॥

नारदजी कहते हैं कि हे साम्ब! इसप्रकार प्रतिमा बनाय ईशान कोण में चार तोरण पल्लव पुष्पमाला पताका आदि से अलंकृत अधिवासन मण्डप बनावै काष्ठकी प्रतिमा आयुष और धनदेतीहै मृत्तिका की प्रतिमा सर्वलोकों का हितकरती है मणिमयी प्रतिमा क्षेम और सुभिक्ष करनेहारी है सुवर्णकी पुष्टि चांदीकी कीर्त्ति ताम्रकी सन्तान और

पाषाणकी प्रतिमा भूमि देती है शकुन करके उपहत प्रतिमा प्रधान पुरुषको मारती है इस लिये सर्व्वदेवमय श्रीसूर्यनारायणकी प्रतिमा उत्तम शकुनसे बनावै साम्ब पूछते हैं कि हे नारदजी ! सूर्यनारायण सर्व्व देवमय क्योंकर हैं यह आप कृपाकर वर्णन कीजिये तब नारदजी कहने लगे कि हे साम्ब ! इस भाँति सूर्यनारायण सर्व देवमय हैं कि बुध और भौम उनके नेत्रों में स्थितहैं ललाट में रुद्र ब्रह्मा शिरमें कण्ठमें विष्णु नक्षत्र और ग्रह दांतों में धर्म और अधर्म ओष्ठों में सरस्वती जिह्वामें दिशा विदिशा कर्णोंमें ब्रह्मा और इन्द्र तालु में बारहों आदित्य भ्रूमध्य में सब ऋषि रोमकूपों में समुद्र पेट में यक्ष किन्नर गन्धर्व पिशाच दानव राक्षस ये सब हृदय में नदी बाहुओं में नाग कक्षाओं में मेरु पर्वत पीठ में धर्मराज नाभि में पृथिवी कटिमें सृष्टि लिंगमें अश्विनीकुमार जानुओं में पर्व्वत ऊरुओं में सातपाताल अलकों में वन और समुद्रों करके युक्त भूमण्डल चरणों में और कालाग्नि रुद्र सूर्य्यनारायण के दन्तों में स्थित हैं इस प्रकार सूर्य्यनारायण सर्व देवमय हैं सूर्य्यनारायण से सब जगत् व्याप्त है जिसप्रकार वायु से क्योंकि वायु भी सूर्य्यनारायण के अङ्गमेंही रहता है हे साम्ब ! यह परमज्ञान हमने तुमको कहा है अब जिस प्रकार ब्रह्माजी ने पूर्व्वकाल में प्रतिमा स्थापन कहा है वह हम कहते हैं ॥

एकसौअट्ठाईसवां अध्याय ॥

प्रतिष्ठा का मुहूर्त्त और मण्डप बनाने का विधान ॥

नारदजी कहते हैं कि हे साम्ब ! प्रतिपदा द्वितीया चतुर्थी पञ्चमी दशमी त्रयोदशी पूर्णिमा ये तिथि नाम बुध गुरु

और शुक्र ये वार और तीनों उत्तरा रेवती अश्विनी रोहिणी हस्त पुनर्वसु पुष्य श्रवण और भरणी ये नक्षत्र सूर्य प्रतिष्ठा के लिये उत्तम हैं तुष केश पाषाण अस्थि अङ्गार आदि शोधन कर दश हाथ लम्बा चौड़ा अतिमनोहर मण्डप बना उसमें चारहाथ की वेदीरचै नदी संगम से रेतालाय उस बिछावै और मण्डप को भलीभांति गोबर से लीपकर पूर्वदि शामें चतुरस्र दक्षिण में अर्द्धचन्द्र पश्चिम में वर्तुल और उत्तर में पद्माकार कुण्ड बनावै बड़ पीपल गूलर बिल्व प लाश शमी अथवा चन्दन के पांच पांच हाथके तोरण बना शुक्ल वस्त्र पुष्प माला कुश आदिसे प्रत्येक तोरण को भू षित कर अग्निमीले इत्यादि मन्त्र से पूर्व दिशा में तोरण खड़ा करै। अग्नि आयाहि इत्यादि मन्त्र से दक्षिण में इ त्वोर्जेत्वा इत्यादि मन्त्र से पश्चिम में और शन्नोदेवी इत्यादि मन्त्र से मण्डप के उत्तर की ओर तोरण स्थापन करै स्वच्छ जलसे परिपूर्ण चन्दन वस्त्र और पुष्प मालाओं से भूषित और सुवर्णयुक्त कलश आजिघ्र इत्यादि मन्त्र से स्थापन करै सुन्दर चित्रवर्ण के दुपट्टों से मण्डप के स्तम्भ वेष्टित करै क लशों के ऊपर यव अथवा धानों से भरे मृत्तिका के शराव रक्खै ध्वजा दर्पण पताका चामर वितान आदि से मण्डप को अलंकृत कर शङ्ख भेरी घण्टा आदिके शब्द वेदध्वनि और जय शब्दोंकरके बड़ा उत्सव करै मण्डप के मध्य भूषित वेदी के ऊपर कुश बिछाय पुष्पों से ढककर प्रतिमा को रक्खै और मण्डप के आठों दिशाओं में क्रमसे पीत रक्त नील कृष्ण श्वेत कृष्ण हरी और चित्रवर्ण की आठ पताका दिक्पालों की प्रीतिके अर्थ लगावै पंचरंगों से वेदी को अलंकृत कर उस

पर पूर्वाग्र और उत्तराग्र कुशा बिछावै वहां उत्तम बिछौने और दो तकियों करकेयुक्त एक शय्या भीस्थापन करै और भांति २ के भक्ष्यभोज्य मण्डप में रक्खै एक उत्तम छत्र वहां स्थापनकरै और विचित्रदीपमालासे मंडपको अलंकृत करै ॥

एकसौउनतीसवां अध्याय

प्रतिष्ठा समय सूर्यके स्नान कराने की विधि व आचार्य के लक्षण ॥

नारदजी कहते हैं कि हे साम्ब ! अब हम सूर्य्यनारायण के स्नानका विधान कहते हैं वेदपाठी शौच आचार में निष्ठ शास्त्र जाननेहारा और सूर्य्यनारायण का परमभक्त ब्राह्मण अथवा भोजक स्नान करावै स्नानगृह में एक हाथ लम्बा चौड़ा और ऊंचा पीठ बिछाय हाथी गाड़ी अथवा रथ इन पर प्रतिमा को रख प्रासाद से स्नानगृह में लाय उस पीठ पर रक्खै रस्ते में वेदध्वनि और भांति भांति के बाजोंके शब्द होते आवैं फिर समुद्र गङ्गा यमुना सरस्वती चन्द्रभागा सिंधु पुष्कर आदि जो तीर्थ नदी सरोवर और पर्वतों के झरने हैं उनका जल लाकर सूर्य्यनारायण को स्नान करावै आठ ब्राह्मण और आठ भोजक सुवर्ण के कलशों से स्नान करावैं स्नान के जल में रत्न सुवर्ण गन्ध सर्व बीज सर्वौषध ब्राह्मी सुवर्चला सोथा विष्णुक्रान्ता शतावरि दूर्वा शङ्खपुष्पी हलदी प्रियंगु इत्यादि सब औषधी डालै और कलशों के मुखपर बड़ पीपल आम और शिरीष के कोमल पल्लव रक्खै इस भांति गायत्री मन्त्रसे अभिमंत्रित सोलह कलशों से सूर्य्यनारायण को स्नान करावै सुवर्ण के कलश न होवैं तो चांदी तांबे अथवा मृत्तिका के कलशों से ही स्नान करावै और फिर बनीहुई वेदी के ऊपर कुशा बिछाय उस

मूर्तिस्थापनकर अभिषेककरै और अभिषेक के समय ये मन्त्र पढ़ै (देवास्त्वामभिषिञ्चन्तु ब्रह्मविष्णुशिवादयः। व्योमगङ्गाम्बुपूर्णेनकलशेनसुरोत्तम १ मरुतश्चाभिषिञ्चन्तु भक्तिमन्तोदिवस्पते। मेघतोयाभिपूर्णेनद्वितीयकलशेनतु २ सारस्वतेनपूर्णेन कलशेनसुरोत्तम। विद्याधराभिषिञ्चन्तु तृतीयकलशेनतु ३ शक्राद्याश्चाभिषिञ्चन्तु लोकपालाःसुरोत्तम। सागरोदकपूर्णेन चतुर्थकलशेनतु ४ वारिणापरिपूर्णेन पद्मरेणुसुगन्धिना। पञ्चमेनाभिषिञ्चन्तु नागास्त्वांकलशेनतु ५ हिमवद्धेमकूटाद्या अभिषिञ्चन्तुचाचलाः। नैर्ऋतोदकपूर्णेन षष्ठेनकलशेनतु ६ सर्वतीर्थाम्बुपूर्णेन पद्मरेणुसुगन्धिना। सप्तमेनाभिषिञ्चन्तु ऋषयःसप्तखेचराः ७ वसवश्चाभिषिञ्चन्तु कलशेनाष्टमेनवै। अष्टमङ्गलयुक्तेन देवदेवनमोस्तु ते ८) ये मन्त्र पढ़ वैदिकमन्त्रभी पढ़ै समुद्रंगच्छ। इमंमेगङ्गे समुद्रज्योतिः इत्यादि मन्त्र पढ़ सिनीवाली इस मन्त्र से बल्मीक की मृत्तिका और शमी उदुम्बर पीपल पलाश बड़ इन पांच वृक्षों का कषाय यज्ञायज्ञेति मन्त्र करके मूर्तिपर चढ़ाय पञ्चगव्य बनावै गायत्री से गोमूत्र गन्ध द्वारा इस मन्त्र से गोबर आप्यायस्व इस मन्त्र से दूध दधि क्राव्ण इस मंत्र से दही तेजोसि इस मंत्र से घृत और देवस्यत्वा इस मन्त्र से कुशोदक लेकर ताम्र के नये पात्र में पञ्चगव्य बनाय सूर्यनारायण को स्नान करावै या ओषधी इस मन्त्र से ओषधी स्नान कराय द्रुपदा मन्त्र से उबटना लगावै मानस्तोके इस मन्त्र से शिरः स्नान कराय विष्णोरराट इस मन्त्र से गन्धयुक्त जल करके और जातवेदसे इस मन्त्र से शुद्ध और छने हुये नदी के जल से स्नान करावै और (एह्येहि

भगवन् भानो लोकानुग्रह कारक। यज्ञ भागंप्रगृह्यत्वमर्क, देवनमोस्तुते) इस मन्त्र से सूर्य्य नारायण का आवाहन कर सुवर्ण के पात्र से इदं विष्णुर्विचक्रमे इस मन्त्रकर सूर्य्य नारायण को अर्घ्य देवै पहिले मृत्तिका के कलश से पीछे ताम्र कलश से और फिर सुवर्ण के कलश से अभिषेक करै फिर सम्पूर्ण तीर्थोदक और सर्वौषध करके युक्त शंख सूर्य्य-नारायण के मस्तक पर घुमाय उसके जलसे स्नान करावै पीछे पुष्प और धूपदेकर क्रमसे जल दूध घृत सहत और इक्षुरस करके स्नान करावै इसरीतिसे जो पुरुष स्नान करावै वह अग्निष्टोम गोमेध ज्योतिष्टोम वाजपेय राजसूय और अश्वमेध यज्ञ के फलको प्राप्तहोताहै जो पुरुष केवल स्नान के समय सूर्य्यनारायण का दर्शनही करै वहभी इनका आधा फलपावै परन्तु ऐसे स्थान में स्नान करावै कि स्नान के जल को कोई लङ्घन न करै और स्नान के दही दूधको कुत्ता काक आदि निन्दित जीव भक्षण न करैं इस विधि स्नान कराय आचमस्व यह पद कहकर वर्द्धिनी नामक पात्र से प्रतिमा के आगे तीन जलधारा देवै फिर वेदोसि इस मन्त्र करके प्रतिमाको पोंछ बृहस्पते इस मन्त्र से दो वस्त्र पहिनावै युञ्जान इस मन्त्र से गोरोचन और रक्त चन्दन चढ़ाय येन-श्रियं इस मन्त्रसे पुष्पमाला पहिनावै धूरसि इस मन्त्र से धूप देवै दीर्घायुष्ट्वाय इसमन्त्र करके आरती करै समिद्धा-ञ्जनं इस मन्त्रसे अंजल लगावै इस स्नान के विधान करने केलिये जैसे ब्राह्मण और भोजक चाहिये उनके हम लक्षण कहते हैं जिसके सब अङ्ग पूरेहोयँ कोई न्यून अधिक न हो शास्त्र जानता हो सुन्दर कुलीन श्रद्धावान् और आर्य्य

देश में उत्पन्न हुवाहो गुरुभक्त जितेन्द्रिय तत्ववेत्ता और सौर शास्त्र का जाननेवाला हो इन लक्षणों करके युक्त ब्राह्मण सूर्यनारायण का स्नान और प्रतिष्ठा करावे और हीनाङ्ग अधिकाङ्ग वामन अतिकृष्ण अतिगौर चार्वाक दुर्मुखवाचाल शूद्र का शिष्य शूद्रान्नभोजी अशुचिरोगी बालक वृद्ध कुष्ठी योगी काणा दुर्बुद्धि संकीर्णजाति अन्ध खल्वाट विकलेन्द्रिय अविनीत दुरात्मा पंगु नासिका कर्ण आदि से रहित नक्षत्र सूची जीविका के अर्थ विद्या पढ़ानेवाला जो ब्राह्मण होय उससे कभी प्रतिष्ठा न करावै पहिले परीक्षाकरके आचार्य बनाना चाहिये ॥

एकसौ तीसवां अध्याय ॥

सूर्यनारायण के अधिवासन और प्रतिष्ठा करने का विधान और फल ॥

नारदजी कहते हैं कि हे साम्ब! अब हम अधिवासन कहते हैं । पवित्र भूमि में लेपन देकर पांच रंगों से बहुत सुन्दर मण्डल रचै और पताका ध्वज तोरण छत्र पुष्पमाला आदि से उसको भूषित कर मण्डल में कुशा बिछाय सूर्यनारायण की मूर्ति वहां स्थापन कर अर्घ्य पाद्य आचमन मधुपर्क धूप दीप आदि से पूजन कर अव्यंग पहिनावे जिस भांति और देवताओं को पवित्रार्पण होता है इसी प्रकार प्रति वर्ष श्रावण मास में नया अव्यंग बनाय सूर्यनारायण को अर्पण करै उनका यही पवित्रक है नया अव्यंग समर्पण करने के समय ब्राह्मण भोजन भी करावे प्रतिमा को सुगन्ध द्रव्यों से लेपन कर पुष्पमाला चढ़ाय शम्भवाय इस मंत्र से शय्या के ऊपर शयन कराय विश्वतश्चक्षुः इस मन्त्र करके सकली करण करै जो न्यास अपने देहमें करै वही प्रतिमा में भी

करै इस को सकलीकरण कहते हैं। ॐ हंखः खखोल्काय स्वाहा यह मूलमंत्र है इस में त्र्यक्षरमंत्र मिलाने से साक्षात्सूर्यस्वरूप द्वादशाक्षर मन्त्र होता है इस के वर्णों को क्रम से मस्तक नासिका ललाट उदर कण्ठ हृदय दक्षिणभुज वामभुज और कुक्षि इन नौ अङ्गों में न्यासकरै। ह्रां ह्रीं सः यह त्र्यक्षर मन्त्र है इस के मिलने से द्वादशाक्षर मन्त्र होता है क्रम से इन बारह वर्णों के ये रंग हैं अग्निवर्ण शुभ्रवर्ण अंजनवर्ण तरुणादित्यवर्ण सुवर्ण वर्ण श्वेतपद्म के समानवर्ण चमेली के पुष्प के तुल्य वर्ण हिम अथवा कुन्द पुष्प के सदृश वर्ण अमृतवर्ण विद्युत्वर्ण पीत वर्ण और क्षीरवर्ण इन वर्णों का इस प्रकार ध्यानकर सूर्य्यनारायण की प्रतिमा को शय्या के ऊपर शयन कराय हवनकरै सूर्य्यकान्तिमणि से अथवा अरणी से अग्नि उत्पन्न कर कुंडों में स्थापन करै फिर पूर्व के कुण्ड में बहृवृच दक्षिण के में माध्यन्दिन उत्तर के में आश्वलायन पश्चिम में कठशाखाध्यायी और मध्य के कुण्ड में भोजक हवनकरै शमी पलाश उदुम्बर और अपामार्ग की समिधाओं से हवनकरैं अग्निमूर्द्धा इस मन्त्र से कुण्डका प्रोक्षण आदि करै अग्निरुत इत्यादि मन्त्र से अग्नि का गर्भाधान संस्कार कर मूलमन्त्र से एक सहस्र आहुति दे सीमन्त और पुंसवन करै प्राणाय स्वाहा इस मन्त्र से जातकर्म नमःस्वाहा इस मन्त्र से नामकर्म महायज्ञं इस मन्त्र से निष्क्रमण अन्नप्राशन मन्त्र से अन्नप्राशन अदेतुमरत्ने इस मन्त्र से चौलकर्म मन्त्र करके व्रतबन्ध आकृष्णेन इस मन्त्र से समावर्तन और पत्नीमुख्य इस मन्त्र से अग्नि का विवाह नामक संस्कार करै और पूर्वोक्त संस्कार में ब्राह्मणाग्नियों से आहुतिदें और हवन के अ-

में सब देवताओं को बलि देवै इस भांति पांच दिन तीन दिन अथवा एकही रात्रि प्रतिमा का अधिवासनकरै देवागार के ईशान कोण में उत्तम स्थान के बीच कुशाबिछायवहां शय्या रक्खै दहिनें भाग में निक्षुभा वामभाग में राज्ञी और पादों के समीप दण्डनायक और पिंगल को महाश्वेता मन्त्र से स्थापन करै उस रात्रि में सूर्य्यनारायण के समीप जागरण करै वन्दी चारण आदि स्तुतिपढ़ें गीत नृत्य आदि उत्सव होतारहै प्रभात होतेही प्रतिमा को बोधनकरै और ब्राह्मण तथा भोजकों को हविष्य अन्न भोजन कराय दक्षिणादे प्रसन्न करै फिर मन्दिर के गर्भ गृह में पिंडिका के ऊपर सातअश्वों करके युक्त सुवर्ण का रथ स्थापन कर सूर्य्यनारायण को अर्घ्यदे उत्तम मुहूर्त्त और स्थिरलग्न में प्रतिमा स्थापनकरै प्रतिमा का मुख नीचे अथवा ऊपर को न होजाय सीधा रहै सूर्य्यनारायण की प्रतिमा के दहिने और बायें राज्ञी और निक्षुभाकी प्रतिमा स्थापन करै फिर मोदक पायस उल्लूपिका शष्कुली आदि से दश दिक्पालों को क्रम से इन मन्त्रों करके बलिदेवै इन्द्रायदेवपतये बलिनेवज्रधारिणे । शतयज्ञाधिपतस्मै पूर्वे इन्द्रायवैनमः १ अग्नयेरक्तनेत्राय ज्वालामालार्चितायच । शक्तिहस्तायतीव्राय नमोवैकृष्णवर्त्मने २ दण्डहस्तायकृष्णाय महिषध्वजवाहिने । सूर्य्यपुत्रायदेवाय धर्मराजायवै नमः ३ नैर्ऋत्येखड्गहस्ताय नीललोहितकायच । सर्व्व रक्षोधिपायेह विरूपायनमोनमः ४ वारुण्यांपाशहस्ताय भषारूढसितायच । निम्नगापतयेवीर वरुणायचवैनमः ५ प्राणात्मकायधूम्राय शशगायानिलायच । ध्वजहस्तायभीमाय नमोगन्धवहायच ६ गदाहस्तायसोमाय शुष्मिणेन

गताथच । गारुत्मतप्रभायाथ सोमराजायवैनमः ७ गणाधिपतयेदेव नीलकण्ठायशूलिने। विरूपाक्षायरुद्राय त्रैलोक्यपतयेनमः ८ सर्वनागाधिराजाय श्वेतवर्णायभोगिने। सहस्रशिरसेनित्यमनन्तायनमोनमः ९ चतुर्मुखायदेवाय पद्मासनगतायच । कृष्णाजिननिषण्णाय नमोलम्बोदराय च १० इन मन्त्रों से दशदिक्पालों को बलि देकर सूर्य्यनारायण का पूजन करै पीछे ब्राह्मण और भोजकोंको भोजनकरायदक्षिणादेवै दक्षिणा दिये विना यह सूर्य्य नारायण का यज्ञ सफल नहीं होता इस विधिसे जो प्रतिमा स्थापनकरीजाय वह देश की वृद्धि करनेवाली होती है और उसमें सदा सूर्य्यनारायण का सांनिध्य रहता है चारोंवर्णों में जो सूर्य्यनारायण का स्थापन करै वह संसार से मुक्ति पाता है जे पुरुष भक्ति से सूर्य्यनारायण का अधिवासन देखैं वे सात जन्म तक आरोग्य होते हैं जो तीन दिन उत्सव में रहैं और गंध पुष्प आदि से सूर्य्यनारायण का पूजनकरैं वे सूर्य्यलोकको जाते हैं प्रतिष्ठा को जो भक्ति से देखै वह गोलोक में निवास करै सूर्य्यनारायण की प्रतिमा स्थापन करने से दश अश्वमेध और सौ वाजपेय का फल प्राप्त होता है। ध्रुवाद्यौश्चध्रुवा भूमिर्ध्रुवंविश्वमिदं जगत् । श्रेयसेयजमानस्य तथात्वंध्रुव तांव्रज ॥ इस मन्त्रसे प्रतिमा स्थापनकरै सूर्यनारायण के पूजन से जो फल मिलता है वह सौ यज्ञ करने करके भी नहीं प्राप्तहोता जो पुरुष जन्मभर पाप करतारहै और अन्त में सूर्यनारायण के आराधन में तत्पर होजाय वह सब पापों से छूट सूर्यलोकमें निवास करता है मन्दिर की ईंट जबतक चूर्ण होवैं तब तक मन्दिर बनाने वाला पुरुष स्वर्ग सुख

भोगता है और प्राचीन मन्दिर का उद्धार करने से इससे भी अधिक फल प्राप्त होताहै जो पुरुष उत्तम मन्दिर बनाय विधि से प्रतिमा स्थापन करै वह संसार के सब सुख भोग सौ कल्प पर्यंत गोलोक में निवासकरै ॥

एकसौ इकतीसवां अध्याय ॥

सब देवताओं की प्रतिष्ठा का साधारण विधान और फल ॥

नारदजी कहते हैं कि हे साम्ब ! जो पुरुष देवताओं के प्रासाद बनाते हैं उनको परलोक में तो उत्तम फल मिलताही है परन्तु इस लोकमें भी उनकी कीर्ति सर्वत्र व्याप्त होजाती है यह हमने सूर्य नारायण की प्रतिष्ठा का विधान कहा है अब हम सर्वदेव प्रतिष्ठा की साधारण विधि कहतेहैं । प्रतिमाको पहिले स्नान कराय उत्तम वस्त्र पहिनाय गन्ध पुष्प आदिसे पूजनकर उत्तम शय्या के ऊपर सुला देवे और उसरात्रि में नृत्य गीत आदि उत्सव से जागरण करै दूसरे दिन पूजनकर मन्दिरकी प्रदक्षिणा कराय शुभ लग्न में पिण्डिका के ऊपर प्रतिमाको स्थापन करै फिर देवताओं को बलिदेकर ब्राह्मण भोजन करावै पीछे स्थापन करने वाले आचार्य ज्योतिषी और स्थपति अर्थात् कारीगर इनको भूषण वस्त्र देकर सन्तुष्ट करै इस विधिसे देवप्रतिष्ठा करने वाला पुरुष दोनों लोकों में सुखी होता है विष्णुके भागवत सूर्य के मग अर्थात् भोजक शिवजी के भस्म रुद्राक्ष धारने वाले ब्राह्मण मातृकाओं के मातृशासन जाननेहारे ब्रह्माके वैदिक ब्राह्मण जिनके श्वेताम्बर बुद्धके रक्ताम्बर इत्यादि और भी जो जिस देवता के भक्तहोवें उसकी प्रतिष्ठा करावें । यह सामान्य प्रतिष्ठा विधान हमने कहाहै इसको जो विधिसे करै

अथवा देखै वह सब मनोवांछित फलपाय ब्रह्मलोकको जावै सूर्यनारायण का भक्तिसे स्थापनकर उनके आगे पुराणकी कथाकहवावै और भलीभांति से स्थापक अर्थात् आचार्य्य और पौराणिक का वस्त्र भूषण आदिसे पूजनकरै और देवताओं के मंदिरोंमें भी पुराण बांचनेका बहुत फलहै पुराण कथासुन सब देवता प्रसन्न होतेहैं ॥

एकसौ बत्तीसवां अध्याय ॥

ध्वजारोपण का विधान और फल ॥

नारदजी कहतेहैं कि हे साम्ब ! हम अब ध्वजारोपण का विधान कहते हैं जो ब्रह्माजी ने कहाहै। पूर्वकाल में देवता और असुरों का घोर संग्राम हुआ उसमें देवताओं ने अपने २ रथों के ऊपर चिह्न कल्पना किये वेही ध्वज हैं लक्ष्म चिह्न ध्वज केतु इत्यादि ध्वज के नामहैं अब ध्वजका लक्षण कहते हैं प्रासादका जितना व्यासहोय उतना लम्बा सीधा और व्रणरहित ध्वजा का बांस चाहिये अथवा चार आठ दश सोलह वा बीसहाथ लम्बा ध्वजदंड होय बीस हाथसे अधिक न होय पांच सात आदि विषम हस्तका न होय चार अंगुल उसकी मोटाईहोय बहुत मोटा अथवा बहुत पतला न होय और टढ़ीहोय टेढ़ाहोय तो पुत्रनाश व्रणयुक्त होय तो धननाश विषम हस्तहोय तो रोग प्राप्ति और प्रमाण से अधिक लम्बा ध्वजाका बांस होय तो सब प्रकार की हानि करै तो हाथ के बांसकी संज्ञा जयहै चार हाथका बांस जयंत कहाताहै छः हाथका जैत्र आठ हाथ का शत्रुहंता दशहाथ का अपराजित बारह हाथका नन्द चौदह हाथका उपनन्द सोलहहाथ का ... अठारह हाथका

भोगता है और प्राचीन मन्दिर का उद्धार करने से इससे भी अधिक फल प्राप्त होताहै जो पुरुष उत्तम मन्दिर बनाय विधि से प्रतिमा स्थापन करै वह संसार के सब सुख भोग सौ कल्प पर्यंत गोलोक में निवासकरै॥

एकसौ इकतीसवां अध्याय॥

सब देवताओं की प्रतिष्ठा का साधारण विधान और फल॥

नारदजी कहते हैं कि हे साम्ब! जो पुरुष देवताओं के प्रासाद बनाते हैं उनको परलोक में तो उत्तम फल मिलताही है परन्तु इस लोकमें भी उनकी कीर्ति सर्वत्र व्याप्त होजाती है यह हमने सूर्य नारायण की प्रतिष्ठा का विधान कहा है अब हम सर्वदेव प्रतिष्ठा की साधारण विधि कहतेहैं। प्रतिमाको पहिले स्नान कराय उत्तम वस्त्र पहिनाय गन्ध पुष्प आदिसे पूजनकर उत्तम शय्या के ऊपर सुला देवे और उसरात्रि में नृत्य गीत आदि उत्सव से जागरण क दूसरे दिन पूजनकर मन्दिरकी प्रदक्षिणा कराय शुभ ल में पिण्डिका के ऊपर प्रतिमाको स्थापन करै फिर देवता को बलिदेकर ब्राह्मण भोजन करावै पीछे स्थापन करने वा आचार्य ज्योतिषी और स्थपति अर्थात् कारीगर इनको भू षण वस्त्र देकर सन्तुष्ट करै इस विधिसे देवप्रतिष्ठा कर वाला पुरुष दोनों लोकों में सुखी होता है विष्णुके भागव सूर्य के मग अर्थात् भोजक शिवजी के भस्म रुद्राक्ष धार वाले ब्राह्मण मातृकाओं के मातृमण्डल जाननेहारे ब्रह्माके वैदिक ब्राह्मण जिनके श्वेताम्बर मुक्के रक्ताम्बर इत्यादि और भी जो जिस देवता के भक्तहोवें उसकी प्रतिष्ठा करावें। यह सामान्य प्रतिष्ठा विधान हमने कहाहै इसको जो विधिसे करै

अथवा देवै वह सब मनोवांछित फलपाय ब्रह्मलोकको जावै सूर्यनारायण का भक्तिसे स्थापनकर उनके आगे पुराणकी कथाकहवावै और भलीभांति से स्थापक अर्थात् आचार्य्य और पौराणिक का वस्त्र भूषण आदिसे पूजनकरै और देवताओं के मन्दिरोंमें भी पुराण बांचनेका बहुत फलहै पुराण कथासुन सब देवता प्रसन्न होतेहैं ॥

एकसौ बत्तीसवां अध्याय ॥

ध्वजारोपण का विधान और फल ॥

नारदजी कहतेहैं कि हे साम्ब! हम अब ध्वजारोपण का विधान कहते हैं जो ब्रह्माजी ने कहाहै। पूर्वकाल में देवता और असुरों का घोर संग्राम हुआ उसमें देवताओं ने अपने २ रथों के ऊपर चिह्न कल्पना किये वेही ध्वज हैं लक्ष्म चिह्न ध्वज केतु इत्यादि ध्वज के नामहैं अब ध्वजका लक्षण कहते हैं प्रासादका जितना व्यासहोय उतना लम्बा सीधा और व्रणरहित ध्वजा का बांस चाहिये अथवा चार आठ दश सोलह वा बीसहाथ लम्बा ध्वजदंड होय बीस हाथसे अधिक न होय पांच सात आदि विषम हस्तका न होय चार अंगुल उसकी मोटाईहोय बहुत मोटा अथवा बहुत पतला न होय और दृढ़भीहोय टेढ़ाहोय तो पुत्रनाश व्रणयुक्त होय तो धननाश विषम हस्तहोय तो रोग प्राप्ति और प्रमाण से अधिक लम्बा ध्वजाका बांस होय तो सब प्रकार की हानि करै दो हाथ के बांसकी संज्ञा जयहै चार हाथका बांस जयंत कहाताहै छः हाथका जैत्र आठ हाथ का शत्रुहंता दशहाथ का जयावह बारह हाथका नन्द चौदह हाथका उपनन्द सोलहहाथ का इन्द्र अठारह हाथका

उपेन्द्र और बीस हाथका बांस आनन्दकहाताहै ये दशभेद बांसके हैं ध्वज दंडमें लटकती हुई पताका बनावै वह पताका दश प्रकार की होती है अंगुर पल्लव स्कन्ध शाखा पताका कदली केतु लक्ष्मी जय और ध्वज ये उनके नामहैं अब इनके लक्षण कहतेहैं दो अंगुलकी पताका अंगुर चार अंगुलकी पल्लव छः अंगुलकी स्कंध आठअंगुलकी शाखा ग्यारह अंगुल की पताका चौदहअंगुल की कदली सोलह अंगुलकी केतु अठारहअंगुलकी लक्ष्मी बीसअंगुल की जय और चौबीस अंगुलकी पताका ध्वज कहाती है देवागार के पहिले कलशतक मार्जन करै वह पताका अंगुरा कहातीहै दूसरे कलश तक पहुंचे वह पल्लव और मन्दिर के तृतीय भाग पर्यंत मार्जनकरै वह स्कन्ध नामक पताका होती है गज मेष महिष कबन्ध वृष हरिण वृक और नग ये आठ भूमि में छोड़ेहुये ध्वजके स्थान हैं पूर्व आदि दिशाओं में ध्वजकी कल्पनाकरै शुक्ल वस्त्रकी चित्रवर्ण और मनोहर पताका बनावै और ध्वजके ऊपर देवता के सूचनकरनेहार चिह्न सुवर्ण अथवा चांदी का बनावै विष्णु के ध्वजपर गरुड़ शिवजीके ध्वजपर वृष ब्रह्माजी के पद्म सूर्यके व्योम इन्द्र के हस्ती दुर्गा के सिंह महादेवी के गोधा रेवंत के अश्व वरुण के कच्छप वायु के हरिण अग्नि के मेष और गणपति के ध्वज के ऊपर कक्षाका चिह्न बनावै जिस देवका जो वाहन होय वही ध्वजपर बनावै विष्णु के ध्वज का दंड सुवर्ण का और पताका पीतवर्णकी होनी चाहिये शिवका ध्वजदण्ड चांदीका और वृष के समीप श्वेतवर्ण की पताका ब्रह्माका ध्वजदंड तांबेका और कमलके समीप पद्मवर्णा पताका सूर्यनारायण

के सुवर्ण का ध्वजदण्ड और व्योम के नीचे पञ्चरंगी पताका जिस में किंकिणी लगी होयँ इन्द्र के सुवर्ण का ध्वजदण्ड और हस्ती के समीप अनेक वर्णकी पताका यमके लोह का ध्वजदण्ड और महिष के समीप कृष्ण वर्ण की पताका नभोधिपति के चांदी का ध्वजदण्ड और हंस के समीप शुक्लवर्ण की पताका कुबेर के मणिमय ध्वजदण्ड और मनुष्यपाद के समीप रक्त वर्ण की पताका बलदेव के चांदी का ध्वजदण्ड और ताल वृक्ष के नीचे श्वेतवर्ण पताका कामदेव के ध्वज में त्रिलोह का दण्ड और मकर के समीप रक्तवर्ण की पताका कार्तिकेय के त्रिलोह का ध्वजदण्ड और मयूर के समीप चित्रवर्ण पताका गणपति के ताम्रका ध्वजदण्ड और हस्तिदन्त तथा कन्न के समीप शुक्लवर्ण की पताका मातृकाओं के पीतलका ध्वजदण्ड और अनेक वर्णकी बहुतसी पताका रेवन्तके पीतलका ध्वज दण्ड और अश्वके समीप रक्तवर्णकी पताका चामुण्डा के लोहका ध्वजदण्ड और मुण्डमालाके समीप नील वर्ण का ध्वज गौरी के ताम्रका ध्वजदण्ड और इन्द्रगोप के समान अतिरक्तवर्ण पताका अग्नि के सुवर्णका दण्ड और मेष के समीप अनेक वर्णकी पताका वायु के लोहका दण्ड और हरिण के समीप कृष्णवर्ण की पताका और भगवती के ध्वज का दण्ड सर्व धातुमय बनाय उस के ऊपर सिंह के समीप तीनरंग की पताका चढ़ावै इस रीति से पहिले ध्वज बनाकर उसका अधिवासन करै लक्षण युक्त वेदी बनाय कलश स्थापन कर सर्वौषध जल से ध्वज को स्नान कराय वेदी के मध्य में खड़ाकर सब उपचारों से उसका पूजनकर पुष्पमाला पहिनाय दिग्पालों को बलि देकर एक रात्रि अधिवासन करै

दूसरे दिन ब्राह्मण भोजन कराय शुभमुहूर्त्तमें स्वस्तिवाचन आदि मंगल कर्मकर ध्वज को मन्दिर के ऊपर चढ़ावै उस समय अनेक प्रकार के बाजे बजें और ब्राह्मण वेदध्वनि करैं इस प्रकार से जो ध्वज चढ़ावै उसकी सम्पत्ति नित्य बढ़ती है जिस मन्दिर पर ध्वज न होय उस मन्दिर में असुर निवास करते हैं इसलिये ध्वजहीन मन्दिर न रक्खै ध्वज के चढ़ाने के समय यह मन्त्र पढ़ै ॥ ॐएह्येहिभगवन्देवदेवेशखग वाहन । श्रीकरश्रीनिवासेशजैत्रजैत्रोपशोभित १ व्योमरूप महारूपधर्मात्मंस्त्वंचतुर्गते । सान्निध्यं कुरुदण्डेस्मिन्साक्षी वध्रुवतांव्रज २ कुरुवृद्धिंसदाकर्तुः प्रासादस्यार्कवल्लभ । ॐ एह्येहिभगवन् ईश्वरविनिर्म्मित उपरिचर वायुमार्गानुसारिन् श्रीनिवासरिपुध्वंसक पक्षिनिलयसर्व्वदेवप्रियसर्व्वदाशान्तिस्वस्त्ययनंकुरु सर्वविघ्नान्यपहर सान्निध्यंकुरुनमः ॥ इस मन्त्र से ध्वजदण्ड को छिद्रमें प्रवेश करै और पूर्व्वाभिमुखहोकर दण्ड के ऊपर पताका चढ़ावै चढ़ातेही वह पताका जिस दिशा को लटकै उसी दिशाके स्वामी के लोक में ध्वजारोपण करने वाला पुरुष आनन्द पूर्व्वक चिरकाल पर्यन्त निवास करै ध्वजा रोपण करने से सब मनोरथ सिद्ध होते हैं और अन्त में सूर्यलोक की प्राप्ति होती है ॥

एकसौतेंतीसवां अध्याय ॥

नारदजी की आज्ञा से साम्बका गौरमुख के समीप गमन देवलककी निंदा मगोंकी उत्पत्ति शाकद्वीपसे मगों का लाना ॥

साम्ब कहते हैं कि हे नारदजी ! आप के अनुग्रह से सूर्यनारायण का मुझे प्रत्यक्ष दर्शन हुआ और उत्तम रूप भी पाया परन्तु एक चिन्ता मुझे बहुत है कि इस मूर्त्ति का

पूजन और रक्षा कौन करैगा यह आप मुझे बतावैं जिस से मेरी चिन्ता निवृत्त होय यह सुन नारदजी ने कहा कि हे साम्ब ! ब्राह्मण तो कोई इस काम को स्वीकार न करैगा क्योंकि जो ब्राह्मण देवधन से अपना निर्वाह करते हैं वे देवल कहाते हैं और शूद्रकी भांति पंक्तिबाह्य होते हैं और देवधन से कोई ब्राह्मीक्रिया नहीं होसक्ती जो पुरुष देवधन और ब्राह्मण धनको लोभ से ग्रहण करते हैं वे नरक में पड़ते हैं और वहां उनको गृध्रों का उच्छिष्ट भोजन मिलताहै इसलिये कोई ब्राह्मण देवता का पूजक नहीं बनना चाहता अब तुम सूर्यनारायणसेही पूछो कि जो उनका पूजन विधि से कियाकरै अथवा उग्रसेन राजा के पुरोहित से कहो जो कदाचित् इस काम को स्वीकार करैं यह नारदजी का वाक्य सुन साम्ब उग्रसेन के पुरोहित गौरमुख के घर गये गौरमुख भी स्नान सन्ध्याकर अपने घर में स्वस्थ बैठे थे साम्ब ने प्रणामकर अपना अभिप्राय उन से प्रकट किया कि महाराज मैंने एक सूर्यनारायण का प्रासाद बनाया है उसमें पत्नीसहित सूर्यनारायण की प्रतिमा स्थापन करी है और अपने नाम से नगर बसाया है अब मेरी यह प्रार्थना है कि आप इस सबको ग्रहण करैं यह साम्बका वचन सुन गौरमुख बोले कि हे साम्ब ! हम ब्राह्मण हैं और आप राजा हो जो यह प्रतिग्रह हम आप से ग्रहण करैं तो हमारा ब्राह्मणत्व नष्टहोजाय और शूद्रके तुल्य देवलक बनजायँ जन्मान्तर में राक्षस बनैं और तुमको भी केवल पापही प्राप्तहोय देवलक जिस पंक्ति में बैठ भोजन करै वह पंक्ति अपवित्र होजाती है और कृच्छ्रचान्द्रायण किये विना शुद्ध नहीं होती

देवलक जिसके यज्ञोपवीत आदि संस्कार करै उसके पितर अधोगति को प्राप्त होते हैं और सब प्रतिग्रह तो ब्राह्मण ग्रहण करते हैं परन्तु देवप्रतिग्रह ब्राह्मण को कभी न लेना चाहिये साम्बने कहा कि महाराज कोई ब्राह्मण इसको स्वीकार न करैगा तो फिर मैं किसको यह दानदेकर अपनी चिंता निवृत्त करूं और सूर्यनारायण का पूजन कौन करै यह सुन गौरमुख ने कहा कि हे साम्ब! यह दान तुम मगको दो वही देवपूजा का अधिकारी है तब साम्बने पूछा कि महाराज मग कौन है कहां रहता है किसका पुत्र है और इसका क्या आचार है यह आप कृपा कर कथन करैं तब गौरमुख कहने लगे कि हे साम्ब! मग सूर्यनारायण का पुत्र है एक समय निक्षुभा को शाप भया तब ऋजिह्व नाम ऋषि की कन्या हो निक्षुभा ने जन्म लिया वह अपने घर में पिता की आज्ञा से अग्नि की सेवा किया करती एक दिन उस को सूर्यनारायण ने देखा उस का उत्तम रूप और यौवन देख सूर्यनारायण कामवश होगये और विचारकर अग्निमें प्रवेश किया वह कन्या अग्नि की प्रदक्षिणा करती थी उससमय अग्नि से प्रकट हो सूर्यनारायण ने उस कन्या का हाथ पकड़लिया और क्रोधकर कहा कि तैंने हमको उल्लंघनकिया यह वेदकी विधि नहीं है अब हम तेरे में पुत्र उत्पन्न करैंगे इतना कह उसमें जलगण्डनामक पुत्र उत्पन्न किया मग अग्निजाति के द्विजाति सोमजाति के और भोजक आदित्यजाति केहैं मगों का मिहिर गोत्र और ब्रह्मभतहै उसमें पुत्र उत्पन्न कर सूर्यनारायण अन्तर्द्धान भये यह बात ऋजिह्व मुनिने जानी तब अपनी कन्या को शाप दिया कि तैंने अपनी चंचलता

से पुत्र उत्पन्न किया इसलिये यह अपूज्य होगा यह पिता का शाप सुन बहुत व्याकुल भई और अग्निरूप सूर्य्यनारायणका स्मरण किया स्मरण करतेही सूर्य्यनारायण प्रत्यक्ष भये तब उन से कहा कि महाराज इस आप के पुत्र को मेरे पिता ने शाप देदिया है कि यह अपूज्य होगा अब आप ऐसा अनुग्रह करैं कि यह पूज्य होय तब गम्भीर वाणी से सूर्य्य भगवान् बोले कि हे प्रिये ! तुम्हारा पिता बड़ा तपस्वी है इस लिये उनका शाप अन्यथा नहीं होसकता परन्तु तुम्हारे पुत्रके वंश में वेद पढ़ैंगे और हमारे परमभक्त होंगे सदा हमारा और तुम्हारा पूजनकरैंगे मग इनकी संज्ञा होगी ये सब महात्मा ब्रह्मवादी वेद के तत्त्वको जाननेवाले और हमारे ध्यान में परायण होंगे दाढ़ी और अव्यंग सदा धारण करैंगे जो मग विधि से हीन मन्त्रवर्जित और श्रद्धा विनाभी हमारा पूजन करैंगे वेभी हमारे लोकमें निवास करैंगे ये हमारे वंशके मग महात्मा और वेदवेदांगों के पारगामी होंगे इस प्रकार अपनी प्रियाको आश्वासन कर सूर्य्यभगवान् अन्तर्द्धान भये और निक्षुभा भी परमहर्षको प्राप्तभई हे साम्ब ! इस प्रकार ये मग सूर्य्यनारायण से निक्षुभा में उत्पन्न भयेहैं वेही इस प्रतिग्रह को ग्रहण कर सूर्य्यनारायण का पूजन करैंगे यह गौरमुख का वाक्य सुन साम्बने पूछा कि महाराज वे कहां रहते हैं आप मुझे बतावें तो मैं अभी उनको लेआऊं तब गौरमुखने कहा कि यह तो हमको भी ज्ञान नहीं कि वे किस द्वीप में बसते हैं यह बात सूर्य्यनारायणही जानते हैं इस लिये तुम उनके शरण में प्राप्त हो यह गौरमुख का वचन सुन सूर्य्यनारायण की प्रतिमा से साम्बने प्रार्थना करी कि

राज आपका पूजन कौन करेगा यह आप कृपाकर कहैं तब प्रतिमा बोली कि हे साम्ब ! जम्बूद्वीप में तो कोई हमारे पूजन का अधिकारी है नहीं शाकद्वीप से हमारे पूजन करने के अर्थ मगों को लावो जम्बूद्वीप के अनन्तर शाकद्वीप है उस में भी चारवर्ण बसते हैं मग मगस मानस और मन्दग इनमें मग ब्राह्मणों के तुल्य मगस क्षत्रियों के सदृश मानस वैश्यों के समान और मन्दग शूद्र सरीखे हैं इन में किसी प्रकार का संकर नहीं है सब सुखपूर्वक अलग २ बसते हैं उन्हें विश्वकर्मा ने हमारे तेजसे रचे हैं उन को सरहस्य वेद हम ने पढ़ाये हैं और वेदोक्त विधान से वे हमारा ही आराधन करते हैं सदा अव्यंग धारे रहते और सिद्ध गन्धर्व आदि कभी उस द्वीप में आय उन के साथ क्रीड़ा करते हैं जम्बूद्वीप में हम विष्णुरूपसे पूजेजाते हैं शाल्मलिद्वीप में शक्ररूप से क्रौंचद्वीप में भगरूप से प्लक्षद्वीप में भानुरूप से शाकद्वीप में दिवाकररूप से पुष्कर द्वीप में ब्रह्माके रूपसे और कुशद्वीप में महेश्वर रूपसे हमारा पूजन होता है हे साम्ब ! अब तुम गरुड़पर चढ़ शाकद्वीप में जावो और हमारे पूजनके लिये शीघ्र मगोंको लेआवो यह सूर्यनारायण की आज्ञापाय द्वारका में जाय साम्ब ने सम्पूर्ण वृत्तान्त अपने पिता श्रीकृष्णचन्द्रसे कहा और उनकी आज्ञा से गरुड़के ऊपर चढ़ शीघ्रही शाकद्वीप में जाय पहुँचा वहां देखा कि बड़े तेजस्वी महात्मा मग सूर्य्यनारायण के आराधन में तत्पर हैं साम्ब ने उनको प्रणामकर प्रदक्षिणा करी और कुशल प्रश्नके अनन्तर उनसे कहा कि आप सब धन्य हैं जो निरन्तर सूर्य्यनारायण की सेवा में आसक्त हैं श्रीकृष्ण भगवान् का मैं पुत्रहूँ साम्ब मेरा नामहै और मैंने चन्द्र-

भागा नदी के तटपर सूर्य्यनारायण की प्रतिमा स्थापन करी है और सूर्य्यनारायण की आज्ञा सेही उनके पूजन के अर्थ आपको जम्बूद्वीप में लेजाने के लिये यहां आया हूँ मेरी यह प्रार्थना है कि आप कृपा कर जम्बूद्वीप में चलैं यह साम्ब का वचन सुन मगोंने कहा कि हे साम्ब! यह बात हमको सूर्य्यनारायण ने पहिलेही कहदी है यहां मगों के अठारह कुल हैं वे तुम्हारे साथ जायँगे यह सुन साम्ब बहुत प्रसन्न भया और उन अठारह कुलोंके कुमारों को गरुड़ पर बैठाय वहां से चला और मित्रवन में पहुँचा सूर्यनारायण भी मगों को देख बहुत प्रसन्न भये और साम्ब से कहा कि अब ये हमारा पूजन किया करैंगे तुम कुछ चिंता मत करना॥

एकसौचौंतीसवां अध्याय॥

मगोंके ज्ञान का वर्णन और उनके विवाहों का कथन॥

सुमन्तुमुनि कहते हैं कि हे राजा! इस प्रकार शाकद्वीप से भोजकों को लाय धन धान्यसे पूर्ण वह साम्बपुर उन अठारह कुलोंको देदिया और वे सब भी सूर्यनारायण की शुश्रूषा में प्रवृत्त भये साम्ब भी सूर्यनारायण को और मगों को प्रणाम कर अतिहर्षित हो द्वारका में आया और भोजवंशियों से मगों के लिये कन्याओं की याचना करी भोजवंशियों ने अपनी २ कन्या अलंकृत कर साम्ब को दीं साम्ब ने वे सब कन्या सूर्यनारायण के मन्दिर में भेजदीं और आप भी वहां जाय सूर्यनारायण से पूछा कि मगोंका क्या ज्ञान है यह आप मुझे बतावैं तब सूर्यनारायण ने कहा कि हे साम्ब! नारद मुनि से पूछो वे कहैंगे सूर्यनारायण की आज्ञा पाय नारदजी के पास जाय साम्ब ने सब वृत्तान्त कहा नारदजी

बोले कि हे साम्ब ! हमतो मगों का ज्ञान नहीं जानते परन्तु व्यासजी से तुम पूछो वे तुमसे सब ज्ञान कह देंगे यह सुन साम्ब वेदव्यासजी के आश्रम में गया और प्रणामकर उन से प्रार्थनाकरी कि महाराज शाकद्वीप से अठारह मगों के कुमार मैं लाया हूँ और वे सब सूर्यनारायण का अर्चन कर हैं परन्तु मुझे बहुत संशय है कि ये सूर्य्यभगवान् के पूज क्यों भये मग और भोजक में क्या भेद है इनका ज्ञान क है मौनव्रत इनके लिये क्यों है ये वर्चार्च क्यों कहाते अव्यंग क्या वस्तु है जिसको मग धारते हैं वेद कैसे पढ़ते हैं यज्ञ किस विधि करते हैं पंचवेला इनकी कौन हैं यह स आप वर्णन करैं जिससे मेरा सन्देह निवृत्त होय यह साम्ब का वचन सुन वेदव्यासजी कहने लगे कि हे साम्ब ! यह बात है तो दुर्ज्ञेय परन्तु सूर्यनारायण के अनुग्रह से हमारे स्मरण में आगई इस लिये हम वर्णन करते हैं, ये सब ज्ञानी होके कर्म योग में प्रवृत्त हो रहे हैं विपर्यस्त वेद से सूर्यनारायण को गाते हैं इसलिये इनकी संज्ञा मग है ब्रह्माजी प्रवृत्त और बड़े २ तपस्वी ऋषि कूर्च अर्थात् दाढ़ी रखते हैं इस लिये मग भी सदा कूर्च धारण करते हैं सब मुनि मौन से भोजन करते हैं और ये मगभी शाकद्वीप के मुनि हैं इसलिये मौन से ये भी भोजन करते हैं वर्चनाम सूर्य का है उनका अर्चन करने से ये वर्चार्च कहाये भोजकन्याओं में उत्पन्न होने से भोजक कहावैंगे, ब्राह्मणों के लिये ऋग्वेद यजुर्वेद सामवेद और अथर्वणवेद ब्रह्माजीने कहे येही चारों वेद विपरीत कर वद विश्ववेद वीवद और आंगिरस इन नामों से मगों के लिये कहे हैं इन के पढ़ने से मग वेदवेत्ता कहाये शेषनामक

महाभाग सब लोकों के सुख के अर्थ सूर्य रथमें बैठ किरणों के साथ वर्त्तता है उसका नेमोक अर्थात् कंचुक सूर्यनारायण धारते हैं उसकी संज्ञा अमाहक और अव्यंग है यज्ञोपवीत के समय ब्राह्मण यज्ञोपवीत धारते हैं उससमय मगों को अमाहक धारनी चाहिये ब्राह्मणों के लिये जिस प्रकार गायत्री है उसी विधि मगों के लिये महाव्याहृति पूर्वक आदित्य मन्त्र है अमाहक के विना कभी मग भोजन न करें और मृतक शरीर तथा रजस्वला स्त्री को स्पर्श भी न करें जिसप्रकार वेदोक्त विधि से सौत्रामणी आदि यज्ञों में ब्राह्मण सुरापान करते हैं इसी भांति मग भी मन्त्रों से संस्कार किये हुये मद्यको हवि मानकर पान करते हैं और ब्राह्मणों के तुल्य यज्ञ अग्निहोत्र आदि कर्म करते हैं और इन को भी सब विधि निषेध ब्राह्मणों के तुल्यही हैं दो बेर दण्डनायक को और तीनों सन्ध्याओं में सूर्यनारायणको धूप देना चाहिये ये पांच धूपके काल हैं ॥

एकसौपैंतीसवां अध्याय ॥

मगों के विवाह और सन्तान का वर्णन ॥

साम्ब कहते हैं कि हे वेदव्यासजी ! मैंने अपने समीप बैठाय उन भोजककुमारों को कहा कि तुम अपना वृत्त कहो तब उन में से एक बुद्धिमान् कुमार कहने लगा कि हे साम्ब ! ये अठारह कुमार तुम लाये हो इनमें दश तो मग हैं बाकी आठ मन्दग अर्थात् शूद्र हैं यह सुन मैंने मगों के दश कुमारों को तो दश भोजकन्या दीं और मन्दगों को आठ कन्या शकोंकी व्याहीं और उन को उसी नगर में सुखपूर्वक बसाया उन में मगों के पुत्र जो भोजकन्याओं से उत्पन्न भये

वे भोजक कहाये और ब्राह्मणों के समान भये और मन्दगों के पुत्र जो शक कन्याओं में जन्मे मन्दगही रहे परन्तु सूर्यनारायण के परिचारक येभी भये वे सबमग अव्यंग धारते हैं इतना कह साम्ब ने पूछा कि हे व्यासजी ! यह अव्यंग क्या पदार्थ है क्योंकर बनता है और इस के धारण से क्या फल है यह आप कृपाकर वर्णनकरैं सुमन्तुमुनि कहते हैं कि हे राजा ! यह साम्ब का वचनसुन व्यासजी बोले कि हे साम्ब ! हम अव्यंग का लक्षण कहते हैं तुम प्रीतिसे सुनो ॥

एकसौछत्तीसवां अध्याय ॥

अव्यंग का लक्षण और माहात्म्य ॥

व्यासजी कहते हैं कि हे साम्ब ! देवता ऋषि नाग गन्धर्व अप्सरा यक्ष और राक्षस ऋतु क्रमसे सूर्यनारायण के रथके साथ रहते हैं वासुकि नाम नाग से वह रथ बँधा है एक समय वासुकि का कञ्चुक उतर कर गिरा उसको अरुण ने उठाकर सूर्यनारायण को निवेदन किया सूर्यनारायण ने भी अति सुन्दर वासुकि का कंचुक देख सुवर्ण और रत्नों से शोभित कर अपने मध्यभाग में धारण किया और अपने भक्तों को भी धारण करने की आज्ञादी उस दिन से सूर्यपूजक उस का अनुकरण अव्यंग बनाय धारने लगे उस के धारण से भोजक पवित्र होजाता है और उसपर सूर्यनारायण का अनुग्रह भी होता है जो भोजक इसको न धारे वह अशुचि होता है और सूर्यनारायण के पूजन का अधिकारी भी नहीं होता जो अव्यंग धारे विना सूर्यनारायण का पूजन करै वह नरक को जाता है और सन्तति तथा आरोग्य से भी हीन रहता है इसलिये अव्यंग धारे विना कभी सूर्यनारायण

का पूजन न करै वह अव्यंग सर्प के निर्मोककी भांति बीच से पोला रक्खै और कपास के सूत्रका बनावै एकसौ बत्तीस अंगुलका उत्तम एकसौबीस का मध्यम और एकसौआठ अंगुलका निकृष्ट होता है इससे छोटा नहीं बनाना चाहिये यज्ञोपवीतकी भांति अष्टम वर्ष में अव्यंग धारण होता है भोजकों के लिये यह मुख्य संस्कार है इसके धारण से सब क्रियाओं का अधिकारी होजाता है अव्यंग अमाहक पठितांग और सार ये सब नाम अव्यंग के हैं यह अव्यंग सर्वदेवमय सर्ववेदमय और सर्वलोकमय है इसके मूलमें ब्रह्मा मध्य में विष्णु और अग्र में शिव निवास करते हैं इसी भांति ऋग्वेद यजुर्वेद सामवेद तो मूलमध्य अग्रमें रहते हैं और अथर्वण ग्रन्थि में निवास करता है पृथिवी जल तेज वायु आकाश और भूर्लोक आदि सप्तलोक अव्यंग में निवास करते हैं सूर्यभक्त भोजक सर्वकाल में अव्यंग को धारै केवल मैथुन के समय और सूतक में अव्यंग धारण का निषेध है ॥

एकसौसैंतीसवां अध्याय ॥

सूर्यनारायण को अर्घ्य और धूपदेने का विधान उनके मन्त्र और फल ॥

सुमन्तुमुनि कहते हैं कि हे राजा! इस प्रकार व्यासजी से भोजक ज्ञान सुन उनको प्रणामकर नारदजी के पास साम्ब आया उनको सब वृत्तान्त सुनाय यह पूछता भया कि हे नारदजी! सूर्य्यनारायणको स्नान अर्घ्य आचमन और धूप भोजक क्योंकर समर्पण करैं यह आप कृपाकर वर्णन कीजिये यह साम्ब का वचन सुन नारदजी बोले कि हे साम्ब! जो तुमने पूछा इसको हम कहते हैं तुम प्रीति से सुनो प्रथम शरीर में तीन बार मृत्तिका लगाय नदी आदि में

स्नानकर शुद्धवस्त्र गायत्री मन्त्र करके पहिन पूर्वाभिमुख अथवा उत्तराभिमुख बैठकर आचमन करै निर्म्मल जल से तीन आचमन कर तीनवेर मार्जन और अभ्युक्षण करै आचमन किये विना जो क्रियाकरै वह निष्फल होती है और विना आचमन पुरुष शुचि नहीं होता वेदमें कहा है कि देवता और पितर शुचिकोही चाहते हैं आचमनकर देवालय में जाय आसन पर बैठ प्राणायाम कर अनेक प्रकार के पुष्पों से सूर्यनारायणका पूजनकरै और गुगलका धूप देकर ॐ व्रतेन नित्यं व्रतिनो वर्द्धयन्तु देवा मनुष्याः पितरश्च सर्वे । तस्यादित्यस्यशरणमहंप्रपद्येयस्तेजसाप्रथममाविभाति इस मन्त्र से प्रतिमा के मस्तक पर पुष्पांजलि देवै धूप की पांच वेला हैं प्रभात जिस समय तारे देख पड़तेहोयँ उस समय दण्डनायकको धूप देवै प्रदोष के समय राज्ञीको और तीनों सन्ध्याओं में सूर्यनारायण को धूपदेना चाहिये अर्द्धोदित आकाशके मध्यमें स्थित और अर्द्धास्त जिस समय सूर्यमण्डल होय वेही समय पूजा के हैं पूर्वाह्न में मिहिर को मध्याह्न में ज्वलन को और मध्याह्न के अनन्तर वरुण को अर्घ्य देवै रक्तचन्दन पद्म करवीर कुंकुमआदि जल में मिलाय ताम्र के पात्र से सूर्यनारायण को अर्घ्य देवै अर्घ्य पात्र हाथमें उठाय दोनों जानुपर बैठ पहिले यह मन्त्र पढ़ै (एहिसूर्यसहस्रांशो तेजोराशेजगत्पते । अनुकम्पांहिमेकृत्वा गृहाणार्घ्यंदिवाकर) पीछे अर्घ्य देवै अर्घ्य देकर आदित्य हृदय का पाठकर यह मन्त्र जपै । ॐ नमोभगवते आदित्याय वरिष्ठाय वरेण्याय ब्रह्मणे लोककर्त्रे ईशानाय पुराणाय पुराणपुरुषाय सामाय ऋग्यजुरथर्वाय ॐ भूः ॐ भुवः

ॐस्वः ॐमहः ॐजनः ॐतपः ॐसत्यं ब्रह्मणे आदित्यायनमः। इस प्रकार अर्घ्यदान कर तीनों कालों में इन मन्त्रों से धूप देवै। ॐत्वमेको रुद्राणां वसूनां च पुरातनो देवानां गीर्भिरभिष्टुतः शाश्वतो दिवि। इस मन्त्र से पूर्व्वाह्ण में। ॐनमो भगवते ज्वालामालाकुलाय तद्विष्णोः परमं पदं सदापश्यन्तिसूरयो दिवीवचक्षुराततम्। इस मन्त्र से मध्याह्न में। ॐनमोवरुणायआकृष्णेनरजसावर्तमानो निवेशयन्नमृतंमर्त्यंच। हिरण्मयेनसविता रथेनदेवो याति भुवनानिपश्यन्। इस मन्त्र से सायङ्काल के समय धूप देवै फिर गर्भगृह में जाय प्रतिमा को ॐमिहिरायनमः इस मन्त्र करके धूप देकर निक्षुभाय नमः राज्ञेनमः दण्डनायकाय नमः पैङ्गलाय नमः राक्षसाय नमः श्रौषाय नमः कल्माषाय नमः गरुत्मते नमः दिण्डिने नमः रेवन्ताय नमः ईश्वराय नमः व्योमाय नमः विश्वेभ्योदेवेभ्यो नमः रुद्रेभ्यो नमः पितृभ्यो नमः ऋषिभ्यो नमः साध्येभ्योनमः ॐब्रह्मणेण्डपतये आदित्यायपुरुषस्वरूपायनमोनमः ॐअनेकान्ताय अनन्तरूपाय नमः। वासुकितक्षककर्कोटकशङ्खकुलिकपद्मेभ्यो नागराजेभ्यो नमः। तलसुतलपातालरसातलविशालादिभ्यो नमः। दैत्य दानवपिशाचेभ्यो नमः मातृभ्यो नमः ग्रहेभ्यो नमः मुण्डकाय नमः माठराय नमः विनायकाय नमः इन मन्त्रों से सब देवताओं को धूप देकर सूर्यनारायण की प्रार्थना करै कि (अर्चितस्त्वंयथाशक्त्या मयाभक्त्याविभावसो। ऐहिकामुष्मिकींनाथ कार्यसिद्धिंददस्वमे॥ तीनकाल स्नानकर जो इस विधि से पूजन करै और धूपदेवै वह अश्वमेधके फल को प्राप्तहोय और धन पुत्र आरोग्य पाय अन्त में सूर्यलोक

को जाय विधिपूर्वक करने से ही सर्व कार्य सिद्ध होते हैं इस लिये विधिका उल्लंघन न करै उत्तम पुष्प न मिलैं तो पत्रोंसेही पूजन करै धूपही देवै भक्तिसे जलमात्रही सूर्य्य-नारायण के अर्पणकरै यह भी न होसके तो प्रणामही करै प्रणाम करने में भी असमर्थ होय तो मानसी पूजाकरै यह विधि द्रव्य के अभावमें कही है द्रव्यहोय तो सब उपचारों से पूजन करना चाहिये पीछे जो मन्त्र कहे हैं उनके उच्चारण-मात्र सेही धूपदानका फल होता है मुखको वस्त्र से बांध सूर्य्यनारायण का अर्चन करै जो पूजन के समय प्रतिमाको श्वास वायु लगजाय तो अनिष्ट होता है इसलिये भलीभांति मुखबांध पूजन करै जो सूर्य्यनारायण का पूजन भक्ति से देखैं वे भी अश्वमेध का फलपाय सूर्यलोक को जाते हैं और जो धूपदान के समय दर्शन करैं वे उत्तम गति पाते हैं॥

एकसौअड़तीसवां अध्याय॥

मगों की प्रशंसा सूर्यमण्डल का वर्णन॥

सुमन्तु मुनि कहते हैं कि हे राजा शतानीक! एक दिन व्यासजी श्रीकृष्ण भगवान् के दर्शन के लिये द्वारकामें आये श्रीकृष्णचन्द्र ने भी अपने हाथ से उनको पाद्य अर्घ्य आ-चमन आदिदे आसन पर बैठाय प्रणाम किया और कुशल प्रश्नके अनन्तर कहा कि हे व्यासजी! शाकद्वीप में से साम्ब जिन भोजकों को लाया है वे बहुत उत्तम हैं सदा सूर्यनारा-यण के आराधन में प्रवृत्त रहते हैं और सदाचार हैं उन को देख हम को भी परमहर्ष हुआ है सूर्यनारायण के अनुग्रह विना मोक्ष नहीं मिलता और भोजकों के आराधन विना सूर्यनारायण का अनुग्रह नहीं होता यह हमारे मनका

निश्चय है यह श्रीकृष्ण भगवान् का वचन सुन वेद-व्यास जी कहने लगे कि हे भगवन्! आप जैसा कहते हैं वैसाही है ये भोजक धन्य हैं जो अनन्य भक्त सूर्यनारायणकेहैं ये सब कर्मनिष्ठ और ज्ञानी हैं सदा पुष्प फल अन्न औषध आदि सूर्यनारायण के अर्पण करते हैं और उनकी प्रीति के लिये घृतका हवन करते हैं ये सब सूर्यनारायण की तेजसी कलामें लीनहोंगे सूर्यनारायण की प्रथम कला अग्नि में स्थितहै जिससे सर्वकर्मों का साधन होता है दूसरी प्रकाशिका कला आकाश में स्थित है और तीसरी कला सूर्यमण्डल में है यह मण्डल वेदत्रय स्वरूप है इस मण्डल के मध्य में सदसदात्मक वह परमात्मा स्थितहै वह क्षर और अक्षर तथा सूक्ष्म और स्थूल है निष्कल और सकल ये दो उसके भेद हैं तत्त्वोंकरके सहित और सब भूतोंमें स्थित वह परमात्मा सकल कहाताहै और तत्त्वहीन होय तो निष्कल तृण गुल्मलता वृक्ष सिंह वृक हाथी पक्षी देवता सिद्ध मनुष्य जलजन्तु आदि सबमें वह व्याप्त होरहा है। जब वह दूसरी कलामें स्थित होता है तो वृष्टि आदि करता है और कालात्मा कहाता है तीसरी तेजसकला में स्थित होकर अपने भक्तों को मोक्ष देता है जिस मोक्षपद में प्राप्त होनेवाले कभी नहीं शोचते ॐकार में वह परमात्मा स्थित है ॐकारकी साढ़ेतीन मात्रा हैं उनमें अर्द्धमात्रा रूप मकार का जो ध्यान करते हैं उनको सदसदात्मक ज्ञान होता है पचीस तत्त्वों में स्थित सूर्यनारायण का रूप मकारहै मकार के ध्यान करने से ये मग कहाते हैं और धूप माल्य आदिसे सूर्यनारायण का पूजनकर भांति भांति के पदार्थ उनको भोजन कराते हैं इससे इनकी भोजक संज्ञा है॥

एकसौउनतालीसवां अध्याय॥

श्रीकृष्णजी प्रति व्यासजी का कहा मग ज्ञानयोगका वर्णन॥

श्रीकृष्ण भगवान् कहते हैं कि हे व्यासजी! भोजकों की सब ज्ञानोपलब्धि आप वर्णन करैं हमको श्रवण करने में बड़ा कौतुक है यह भगवान् का वचन सुन व्यासजी कहने लगे कि हे श्रीकृष्णजी! यह शरीररूप एक मन्दिर हैं जिस में अस्थियों की थूनी लगी हैं चर्म और स्नायुओं से यह बँधा है रुधिर और मांस से लिपाहै मूत्र विष्ठा आदि दुर्गन्ध पदार्थों से परिपूर्ण है जरा शोक और रोग इसमें निवास करते हैं इस मन्दिर में बुद्धिमान् पुरुष कभी आसक्त नहीं होते विरक्त पुरुषों के ये चिह्न हैं कि वृक्षों के मूल में एकाकी रहना उत्तम वस्त्र नहीं पहिनना पत्र कपाल आदि में भोजन करना और सब जीवोंको समदृष्टि से देखना तिलों में तैल गौओं में घृत और काष्ठ में अग्नि जिस प्रकार स्थित है इसी भांति परमेश्वर भी गुप्त रूप से सब पदार्थों में स्थित है पहिले चंचल चित्तको वशमें करके बुद्धि और इन्द्रियों को ऐसा रोके जिस भांति पिंजरे में पक्षियों को रोकते हैं इन्द्रिय निरोध से इस शरीर की ऐसी तृप्ति होती है जैसी अमृत धारासे होय प्राणायाम से दोष धारणा से पाप प्रत्याहार से संसर्ग और ध्यान करके अनीश्वर गुण निवृत्त होते हैं अग्नि में धौंकने से जिस प्रकार धातुओं के दोष दग्ध होजाते हैं इसीप्रकार शरीर के दोष प्राणायाम से दग्ध होते हैं पहिले चित्त शुद्धि के लिये यत्न करना चाहिये चित्त शुद्धि होने से शुभाशुभ कर्म्म का ज्ञान होता है तब शुभाशुभ कर्म्मों से छुट निर्द्वन्द्व निर्ममनिष्परिग्रह और निरहंकार हो मुक्ति को प्राप्त होता है पूर्वाह्न में

कवर्ण ऋग्वेद स्वरूप सूर्यनारायणका राजसरूप होता है
ध्याह्न में यजुर्वेदस्वरूप शुक्लवर्ण सात्त्विकरूप और सा-
ङ्काल में कृष्णवर्ण तामस सामवेद स्वरूप सूर्यनारायण
ा रूप होता है इन तीनों से भिन्न ज्योतिःस्वरूप सूक्ष्म
ौर निरंजन चौथा रूप है जिसको वेदवेत्ता प्रतिपादन
रते हैं पद्मासन से बैठ सुषुम्णा में चित्तको स्थिरकर प्र-
व से पूरक कुम्भक और रेचक ये तीन प्राणायाम कर पा-
ंगुष्ठ के अग्रसे लेकर मस्तकपर्यन्त ध्यान करै नाभि में
ग्नि का हृदय में चन्द्रका और मस्तक में अग्निशिखा का
यान कर इन सबसे ऊपर सूर्यमण्डलका ध्यान करै यह
थान चतुर्थ है और मोक्षार्थी पुरुषों को अवश्य जानना
ाहिये ऋषिलोग सूर्यनारायण के इसी तुरीयस्थान में मन
ो लीनकर मुक्त भये हैं और मगभी इसी स्थानका ध्यान
र मुक्तिभागी होते हैं इतना कह व्यासजी बोले कि हे
श्रीकृष्णचन्द्र ! ज्ञान करके युक्त यह मगों का चरित हमने
आप को श्रवण कराया इसको जो जाने वह उत्तम गति
ाता है यह ज्ञान श्रद्धावान् पुरुषको देना चाहिये नास्तिक
इसका अधिकारी नहीं है सुमन्तुमुनि कहते हैं कि हे राजा !
श्रीकृष्णचन्द्र को यह भोजक ज्ञान सुनाय श्रीवेदव्यासजी
अपने आश्रम को गये जो बदरी के समीप गंगा के तटपर
है और त्रैलोक्य में प्रसिद्ध है ॥

एकसौचालीसवां अध्याय ॥

आदित्यहृदय स्तोत्र ॥

राजा शतानीक पूछते हैं कि हे सुमन्तुमुनि ! उदय होते हुये सूर्यनारायण का क्योंकर उपस्थान करै यह आप कृपा

कर वर्णन करैं यह राजा का प्रश्न सुन सुमन्तुमुनि बोले कि हे राजा ! यही बात भारत युद्ध में कुरुक्षेत्र के बीच अर्जुन ने श्रीकृष्णचन्द्र से पूछी थी वह हम वर्णन करते हैं बड़े वि नय से अर्जुन ने श्रीकृष्णचन्द्र से कहा कि धर्मशास्त्रों रहस्य अतिगुप्त ज्ञान आप के मुख से श्रवण किया अ आप सूर्यनारायण का स्तुति रूप न्यास कहैं मैं आप भक्ति पूर्वक पूछता हूँ यह अर्जुन का वचन सुन श्रीकृष्ण भग वान् बोले कि हे पार्थ ! तुम ने बहुत उत्तम और गुप्त बा पूछी है यह हमने इन्द्र आदि देवताओं के पूछने पर भी कही परन्तु तुम हमारे परम भक्त हो इसलिये कहते प्रीति से सुनो सब प्रकार के मंगल देनेहारा सर्व पापों निवर्त्तक रोग और शत्रुओं का संहार करनेहारा धन पु और विजय देनेहारा आदित्यहृदय स्तोत्र हम कहते जिस के श्रवणमात्र से सब पाप कटजाते हैं और जो आदि त्यहृदय तीनों लोकों में विख्यात तथा भुक्तिमुक्तिप्रद प्रभात उठ सूर्यनारायण का स्मरण कर उन को नमस्क करै तो अनेक प्रकार के विघ्न दूर होजायँ और जो पुरु सूर्यनारायण का आवाहन कर आदित्यहृदय का पाठ क वह दारिद्र्य और कुष्ठ आदि महारोगों से छुट उत्तम सि पावै हे अर्जुन ! वह आदित्यहृदयस्तोत्र हम कहते हैं ज अतिगुप्त है तुम भक्तिसे श्रवण करो ॥

ॐअस्यश्रीआदित्यहृदयस्तोत्रमन्त्रस्य श्रीकृष्णऋ रनुष्टुप्छन्दः सूर्य्योदेवताहरितहयरथंदिवाकरं घृणिरि बीजम् । ॐनमोभगवतेजितवैश्वानरजातवेदसइतिशक्ति ॐनमोभगवतेआदित्याय इति कीलकम् । श्रीसूर्यनार

यणप्रीत्यर्थे जपेविनियोगः ॐह्रांअङ्गुष्ठाभ्यां नमः ॐह्रीं
तर्ज्जनीभ्यां नमः । ॐह्रूंमध्यमाभ्यां नमः ॐह्रैं अनामिका
भ्यां नमः । ॐह्रौंकनिष्ठिकाभ्यां नमः । ॐह्रः करतलकरपृष्ठा
भ्यां नमः । इति करन्यासः । एवंहृदयादिन्यासः । अथ ध्या
नम् । भास्वद्रत्नाढ्यमौलिः स्फुरदधररुचारञ्जितश्चारुकेशो
भास्वान् योदिव्यतेजाः करकमलयुतः स्वर्णवर्णप्रभाभिः । वि
श्वाकाशावकाशो ग्रहगणसहितो भाति यश्चोदयाद्रौ । सर्वान
न्दप्रदाता हरिहरनमितः पातु मां विश्वचक्षुः १ पूर्वमष्टद
लंपद्मं प्रणवादिप्रतिष्ठितम् । मायाबीजं दलाष्टाग्रे यन्त्रमुद्धा
रयेदिति २ आदित्यं भास्करं भानुं रविं सूर्यं दिवाकरम् ।
मार्तण्डं तपनंचेति दलेष्वष्टसु योजयेत् ३ दीप्ता सूक्ष्मा जया
भद्रा विभूतिर्विमला तथा । अमोघा विद्युता चेति मध्येश्रीः
सर्वतोमुखी ४ सर्वज्ञः सर्वगश्चैव सर्वकारणदेवता । सर्वेशः
सर्वहृदयस्तं नमामि विभावसुम् ५ सर्वात्मा सर्वकर्त्ताच सृष्टि
जीवनपालकः । हितः स्वर्गापवर्गश्च भास्करेश नमोस्तुते ६
नमोनमस्तेस्तु सदा विभावसो सर्वात्मने सप्तहयायभानवे ।
अनन्तशक्ते मणिभूषणाय ददस्व भुक्तिं मम मुक्तिमव्ययाम् ७
अर्कन्तुमूर्ध्नि विन्यस्य ललाटे तु रविं न्यसेत् । विन्यसेन्ने
त्रयोःसूर्यं कर्णयोश्चदिवाकरम् ८ नासिकायांन्यसेद्भानुं मु
खेवैभास्करंन्यसेत् । पर्जन्यमोष्ठयोश्चैव तीक्ष्णं जिह्वान्तरे न्य
सेत् ९ सुवर्णरेतसंकण्ठे स्कन्धयोस्तिग्मतेजसम् । बाह्वो
स्तुपूषणंचैव मित्रं वै पृष्ठतो न्यसेत् १० वरुणं दक्षिणे हस्ते
त्वष्टारंवामतःकरे । हस्तावुष्णकरः पातु हृदयं पातु भानुमान्
११ उदरेतु यमं विद्यादादित्यं नाभिमण्डले । कट्यांतुविन्य
सेद्धंसं रुद्रमूर्वोस्तु विन्यसेत् १२ जान्वोस्तु गोपतिं न्यस्य

सवितारन्तु जङ्घयोः। पादयोश्च विवस्वन्तं गुल्फयोश्च दि
वाकरम् १३ बाह्यतस्तु तमोध्वंसं भगमभ्यन्तरे न्यसेत्।
सर्वाङ्गेषु सहस्रांशुं दिग्विदिक्षु भगं न्यसेत् १४ एषआदि
त्यविन्यासो देवानामपि दुर्लभः। इमं भक्त्या न्यसेत्पार्थ स
याति परमांगतिम् १५ कामक्रोधकृतात्पापान्मुच्यते न।
संशयः। सर्पादपि भयं नैव संग्रामेषु पथिष्वपि १६ रिपुस
ङ्कटकालेषुतथाचोरसमागमे। त्रिसन्ध्यं जपतो न्यासं महापा
तकनाशनम् १७ विस्फोटकसमुत्पन्नं तीव्रज्वरसमुद्भवम्।
शिरोरोगंनेत्ररोगं सर्वव्याधिविनाशनम् १८ कुष्ठव्याधिस्त
थादद्रुरोगाश्चविविधाश्चये। जपमानस्यनश्यन्तिशृणु
भक्त्या तदर्जुन १९ आदित्यो मन्त्रसंयुक्त आदित्यो भुव
नेश्वरः। आदित्यान्नापरोदेवो ह्यादित्यःपरमेश्वरः २०
आदित्यमर्चयेद्ब्रह्मा शिवआदित्यमर्चयेत्। यदादित्यम
यं तेजो मम तेजस्तदर्जुन २१ आदित्यं मन्त्रसंयुक्तमा
दित्यं भुवनेश्वरम्। आदित्यं ये प्रपश्यन्ति मां पश्यन्ति
न संशयः २२ त्रिसन्ध्यमर्चयेत्सूर्यं स्मरेद्भक्त्यातुयोनरः।
न स पश्यति दारिद्र्यं जन्मजन्मनिचार्जुन २३ एतत्ते कथितं
पार्थआदित्यहृदयंमया। शृण्वन्मुक्तः स पापेभ्यः सूर्यलोके
महीयते २४ नमोभगवते तुभ्यमादित्याय नमोनमः। आ
दित्यः सविता सूर्यः खगः पूषागभस्तिमान् २५ सुवर्णः
स्फटिको भानुः स्फुरितो विश्वतापनः। रविर्विश्वो महातेजाः
सुवर्णः सुप्रबोधकः २६ हिरण्यगर्भस्त्रिशिरास्तपनो भास्क
रोरविः। मार्तण्डोगोपतिः श्रीमान् कृतज्ञश्चप्रतापवान् २७
तमिस्रहा भगो हंसो नासत्यश्चतमोनुदः। शुद्धोविरोचनः के
शी सहस्रांशुर्महाप्रभुः २८ विवस्वान्पूषणो मृत्युर्मिहिरोज

मन्देहनिजित् । धर्मरश्मिः पतङ्गश्च शरण्यो मित्रहा तपः २९
दुर्विज्ञेयगतिः शूरस्तेजोराशिर्महायशाः । शम्भुश्चित्राङ्गद
स्सौम्योहव्यकव्यप्रदायकः ३० अंशुमानुत्तमोदेव ऋग्यजुः
सामएवच । हरिदश्वस्तमोदारः सप्तसप्तिर्मरीचिमान् ३१
अग्निगर्भोदितेः पुत्रः शम्भुस्तिमिरनाशनः । पूषा विश्व
म्भरो मित्रः सुवर्णः सुप्रतापवान् ३२ आतपी मण्डली भास्वां
स्तपनः सर्वतापनः । कृतविश्वो महातेजाः सर्वरत्नमयोद्भवः
३३ अक्षरश्च क्षरश्चैव प्रभाकरविभाकरौ । चन्द्रश्चन्द्राङ्ग
दः सौम्यो हव्यकव्यप्रदायकः ३४ अङ्गारकोङ्गदोगस्त्यो
रक्ताङ्गश्चाङ्गवर्द्धनः । बुद्धोबुद्धासनो बुद्धिर्बुद्धात्मा बुद्धिवर्द्धनः
३५ बृहद्भानुर्बृहद्भासो बृहद्धामा बृहस्पतिः । शुक्रस्त्वं शुक्ररे
तास्त्वंशुक्राङ्गः शुक्रभूषणः ३६ शनिमाञ्छनिरूपस्त्वं श
नैर्गच्छसि सर्वदा । अनादिरादिरादित्यस्तेजोराशिर्महातपः
३७ अनादिरादिरूपस्त्वमादित्यो दिक्पतिर्यमः । भानुमान्
भानुरूपस्त्वंस्वर्भानुर्भानुदीप्तिमान् ३८ धूमकेतुर्महाकेतुःस
र्वकेतुरनुत्तमः । तिमिरावरणः शम्भुः स्रष्टा मार्तण्ड एव च ३९
नमः पूर्वायगिरये पश्चिमाय नमोनमः । नमोत्तराय गिरये द
क्षिणाय नमोनमः ४० नमो नमः सहस्रांशो ह्यादित्याय नमो
नमः । नमः पद्मप्रबोधाय नमस्तेद्वादशात्मने ४१ नमोविश्व
प्रबोधाय नमो भ्राजिष्णुजिष्णवे । ज्योतिषेचनमस्तुभ्यं ज्ञाना
र्कायनमोनमः ४२ प्रदीप्तायप्रगल्भाय युगान्ताय नमोनमः ।
नमस्तेहोतृपतये पृथिवीपतयेनमः ४३ नमोङ्कारवषट्कार
सर्वयज्ञनमोस्तुते । ऋग्वेदाययजुर्वेदसामवेदनमोस्तुते ४४
नमो हाटकवर्णाय भास्कराय नमोनमः । जयाय जयभद्राय
हरिदश्वाय ते नमः ४५ दिव्याय दिव्यरूपाय ग्रहाणांपतये

भवेत्। आदित्यहृदयं पुण्यं सूर्यनामविभूषितम् ८० श्रुत्वा च निखिलंपार्थ सर्वपापैः प्रमुच्यते। अतःपरतरं नास्ति सिद्धिकामस्य पाण्डव ८१ एतज्जपस्व कौन्तेय येन श्रेयो ह्यवाप्स्यसि। आदित्यहृदयं पुण्यं यःपठेन्सुसमाहितः ८२ भ्रूणहामुच्यते पापात् कृतघ्नो ब्रह्मघातकः। गोघ्नः सुरापी दुर्भोजी दुष्प्रतिग्रहकारकः ८३ पातकानि च सर्वाणि दहत्येव न संशयः। य इदं शृणुयान्नित्यंजपेद्वापिसमाहितः ८४ सर्वपापविशुद्धात्मा सूर्यलोके महीयते। अपुत्रो लभते पुत्रान्निर्धनो धनमाप्नुयात् ८५ रोगीचमुच्यतेरोगाद्भक्त्यायःपठतेसदा। यस्त्वदित्यदिनेपार्थनाभिमात्रजलेस्थितः ८६ उदयाचलमारूढंभास्करं प्रणतः स्थितः। जपते मानवो भक्त्या शृणुयाद्वापिभक्तितः ८७ सयातिपरमंस्थानंयत्रदेवोदिवाकरः। अमित्रदमनंपार्थयदाकर्तुंसमारभेत् ८८ तदाप्रतिकृतिंकृत्वा शत्रोश्चरणपांशुभिः। आक्रम्य वामपादेन आदित्यहृदयं जपेत् ८९ एतन्मन्त्रं समाहूय सर्वसिद्धिकरं परम्। ॐह्रींमालीढंस्वाहा। ॐह्रींनिलीढंस्वाहा। ॐह्रींमालीढंस्वाहा। इतिमन्त्रः। त्रिभिश्चरोगीभवतिज्वरीभवतिपञ्चभिः। जपैस्तुसप्तभिः पार्थराक्षसीतनुमाविशेत् ९० राक्षसेनाभिभूतस्य विकाराञ्छृणुपाण्डव। गीयतेनृत्यतेनग्नआस्फोटयतिधावति ९१ शिवारुतञ्चकुरुतेहसतेक्रन्दतेपुनः। एवंसंपीड्यतेपार्थयद्यपिस्यान्महेश्वरः ९२ किंपुनर्मानुषःकश्चिच्छौचाचारविवर्जितः। पीडितस्यनसन्देहोज्वरोभवतिदारुणः ९३ यदाचानुग्रहंतस्यकर्तुमिच्छेच्छुभंकरम्। तदासलिलमादाय जपेन्मन्त्रमिमंबुधः ९४ नमोभगवतेतुभ्यमादित्यायनमोनमः। जयायजयभद्राय हरिदश्वायते नमः ९५ स्नापयेत्तेन मन्त्रेण शुभं भवति

नान्यथा । अन्यथाचमत्रेदोषो नश्यतेनात्रसंशयः ९६
स्तवस्तेनिखिलः प्रोक्तः पूजांचैवनिबोधमे । उपलिप्तेशुचौ
देशे नियतोवाग्यतः शुचिः ९७ वृत्तंवाचतुरस्रंवालिप्तभूमौ
लिखेद्बुधः । त्रिधातत्रलिखेत्पद्ममष्टपत्रंसकर्णिकम् ९८
पूर्वपत्रेलिखेत्सूर्यमाग्नेय्यान्तुरविंन्यसेत् । याम्यांचैवविव
स्वन्तंनैर्ऋत्यांतुभगंन्यसेत् ९९ प्रतीच्यांवरुणंविद्याद्वाय
व्यांमित्रमेवच । आदित्यमुत्तरेपत्रेईशान्यांसूर्यमेवच १००
मध्येतुभास्करंविद्यात्क्रमेणैवंसमर्चयेत् । अतः परतरंना
स्तिसिद्धिकामस्यपांडव १०१ महातेजःसमुद्यन्तंप्रणमेत्सु
कृताञ्जलिः । सकेसराणिपद्मानिकरवीराणिचार्जुन १०२
तिलतन्दुलयुक्तानिकुशगन्धोदकानिच । रक्तचन्दनमिश्रा
णिकृत्वावैताम्रभाजने १०३ धृत्वाशिरसितत्पात्रंजानुभ्यां
धरणींस्पृशन् । मन्त्रपूतंगुडाकेश चार्घ्यंदद्याद्गभस्तये १०४
ॐ ह्रांह्रींह्रूंह्रैंह्रौंह्रः सूर्यमूर्तयेस्वाहा । नमोस्तुसूर्याय सहस्र
भानवे नमोस्तुवैश्वानरजातवेदसे । त्वमेवचार्घ्यंप्रतिगृह्णण
देवदेवाधिदेवायनमोनमस्ते १०५ नमोभगवतेतुभ्यंनमस्ते
जातवेदसे । दत्तमर्घ्यंमयाभानोत्वंगृहाणनमोस्तुते १०६ ए
हिसूर्यसहस्रांशोतेजोराशेजगत्पते । अनुकंपयमांभक्त्यागृ
हाणार्घ्यंदिवाकर १०७ सर्वदेवाधिदेवायआधिव्याधिविना
शिने । ममेप्सितंफलंदेहिप्रसीदपरमेश्वर १०८ सर्वसंकट
दारिद्र्यशत्रुनाशयनाशय । सर्वलोकेषुविश्वात्मन्सर्वात्मन्स
र्वदर्शक १०९ नमोभगवतेसूर्यकुष्ठरोगान्विखण्डय । आयु
रारोग्यमैश्वर्यंदेहिदेवनमोस्तुते ११० आदित्यंचशिवंविद्या
च्छिवमादित्यरूपिणम् । उभयोरन्तरंनास्तिआदित्यस्य
शिवस्यच १११ उदयेब्रह्मणोरूपोमध्याह्नेतुमहेश्वरः

अस्तमानेस्वयंविष्णुस्त्रयीमूर्तिर्दिवाकरः ११२ जयोजय
श्चविजयोजितप्राणोजितश्रमः । मनोजवोजितक्रोधोवाजि
नः सप्तकीर्तितः ११३ हरितहयरथंदिवाकरंकनकमयाम्बु
जरेणुपिंजरम् । प्रतिदिनमुदयेनवंनवं शरणमुपैमिहिरण्य
रेतसम् ११४ नतंव्यालाः प्रबाधन्तेनव्याधिभ्योभयंभवेत्।
ननागेभ्योभयंचैवनचभूतभयंक्वचित् ११५ अग्निशस्त्रभयं
नास्तिपार्थिवेभ्यस्तथैवच । दुर्गतिंतरतेघोरांप्रजांचलभे
पशून् ११६ सिद्धिकामोलभेत्सिद्धिंकन्याकामस्तुकन्यकाम्
एतत्पठस्वकौन्तेय भक्तियुक्तेनचेतसा ११७ अश्वमेध
सहस्रस्यवाजपेयशतस्यच । कन्याकोटिसहस्रस्यदत्तस्यफ
माप्नुयात् ११८ इदमादित्यहृदयं योधीतेसततंनरः । स
पापविशुद्धात्मासूर्य्यलोकेमहीयते ११९ नास्त्यादित्यसमो
देवोनास्त्यादित्यसमागतिः । प्रत्यक्षोभगवान्विष्णुर्येनवि
श्वंप्रतिष्ठितम् १२० गवांशतसहस्रस्यसम्यग्दत्तस्ययत्फ
लम् । तत्फलंलभतेविद्वान्शान्तात्मास्तौतियोरविम् १२
योधीतेसूर्य्यहृदयंसकलंसफलंलभेत् । अष्टानांब्राह्मणानाञ्च
खयित्वासमर्पयेत् १२२ ब्रह्मलोकेऋषीणांचजायतेमानुषे
पिवा । जातिस्मरत्वमाप्नोति शुद्धात्मानात्रसंशयः १२
अजायलोकत्रयपावनायभूतात्मनेगोपतयेवृषाय । सूर्याय
वैप्रलयान्तकायनमोमहाकारुणिकोत्तमाय १२४ विवस्वते
ज्ञानभृतान्तरात्मनेजगत्प्रदीपायजगद्धितैषिणे । स्वयंभुवे
दीप्तसहस्रचक्षुषेसुरोत्तमायामिततेजसेनमः १२५ सुरेन्द्र
कैः परिसेविताय हिरण्यगर्भायहिरण्मयाय । महात्मनेमो
क्षपदायनित्यंनमोस्तुतेवासरकारणाय १२६ आदित्यश्च
र्चितोदेवआदित्यः परमंपदम् । आदित्योमातृकारूप आ

दित्योवाङ्मयंजगत् १२७ आदित्यंपश्यतेभक्त्यामांपश्य
तिध्रुवंनरः। नादित्यंपश्यतेयस्तुनसपश्यतिमांनरः १२८ न
मःसवित्रेजगदेकचक्षुषे जगत्प्रसूतिस्थितिनाशहेतवे। त्रयी
मयायत्रिगुणात्मधारिणे विरंचिनारायणशंकरात्मने १२९
यस्योदयेनेहजगत्प्रबुध्यतेप्रवर्त्ततेचाखिलकर्मसिद्धये। ब्रह्मे
न्द्रनारायणरुद्रवन्दितः सनःसदायच्छतुमण्डलंरविः १३०
नमोस्तुसूर्यायसहस्ररश्मये सहस्रशाखान्वितसम्भवात्मने।
सहस्रयोगोद्भवभावभागिने सहस्रसङ्ख्यायुगधारिणेनमः
१३१ यन्मण्डलंदीप्तिकरंविशालंरत्नप्रभंतीव्रमनादिरूपम्।
दारिद्र्यदुःखक्षयकारणंच पुनातुमांतत्सवितुर्वरेण्यम् १३२
यन्मण्डलंदेवगणैःसुपूजितं विप्रैस्तुतं भावनमुक्तिकोविदम्।
तन्देवदेवंप्रणमामिसूर्यं पुनातुमांतत्सवितुर्वरेण्यम् १३३
यन्मण्डलंज्ञानघनंत्वगम्यं त्रैलोक्यपूज्यंत्रिगुणात्मरूपम्।
समस्ततेजोमयदिव्यरूपंपुनातु० १३४ यन्मण्डलंगूढमति
प्रबोधंधर्मस्यवृद्धिंकुरुतेजनानाम्। यत्सर्वपापक्षयकारणंच
पुनातु० १३५ यन्मण्डलंव्याधिविनाशदक्षं यदृग्यजुःसाम
सुसम्प्रगीतम्। प्रकाशितंयेनचभूर्भुवःस्वः पुनातु० १३६
यन्मण्डलंवेदविदोवदंति गायन्तियच्चारणसिद्धसंघाः।
यद्योगिनोयोगजुषांचसंघाःपुनातु० १३७ यन्मण्डलंसर्वज
नेषुपूजितं ज्योतिश्चकुर्यादिहमर्त्यलोके। यत्कालकालाद्यम
नादिरूपंपुनातु० १३८ यन्मण्डलंविष्णुचतुर्मुखाख्यंयदक्ष
रंपापहरंजनानाम्। यत्कालकल्पक्षयकारणंचपुनातु० १३९
यन्मण्डलंविश्वसृजंप्रसिद्धमुत्पत्तिरक्षाप्रलयप्रगल्भम्। य
स्मिन्जगत्संहरतेखिलंचपुनातु० १४० यन्मडलंसर्वगत
स्यविष्णोरात्मापरंधामविशुद्धतत्त्वम्। सूक्ष्मान्तरैर्योगपथा

नुगम्यंपुनातु० १४१ यन्मण्डलंवेदविदोपगीतं यद्योगिनां
योगपथानुगम्यम् । तंसर्वदेवंप्रणमामिसूर्यं पुनातुमांतत्स
वितुर्वरेण्यम् १४२ ध्येयःसदासवितृमण्डलमध्यवर्तीनारा
यणः सरसिजासनसन्निविष्टः । केयूरवान्मकरकुण्डलवान्
किरीटीहारीहिरण्मयवपुर्धृतशंखचक्रः १४३ सशंखचक्रं
विमण्डलस्थितं कुशेशयाकान्तमनन्तमच्युतम् । भज
बुद्ध्यातपनीयमूर्त्तिंसुरोत्तमंचित्रविभूषणोज्ज्वलम् १४४ ।
ब्रह्मादयोदेवाऋषयश्चतपोधनाः । कीर्तयन्तिसुरश्रेष्ठं
नारायणंविभुम् १४५ वेदवेदाङ्गशरीरंदिव्यदीप्तिकरंपरम्
रक्षोघ्नंरक्तवर्णंचसृष्टिसंहारकारकम् १४६ एकचक्रोर
थस्यदिव्यःकनकभूषितः । समेभवतुसुप्रीतःपद्महस्तोदि
करः १४७ आदित्यःप्रथमंनामद्वितीयंतुदिवाकरः । तृती
भास्करंप्रोक्तंचतुर्थंतुप्रभाकरः १४८ पंचमंतुसहस्रांशुःष
चैवत्रिलोचनः । सप्तमंहरिदश्वश्चअष्टमन्तुविभावसुः १४
नवमंदिनकृत्प्रोक्तंदशमंद्वादशात्मकः । एकादशंत्रयीमूर्
द्वादशंसूर्यएवच १५० द्वादशादित्यनामानि प्रातःका
पठेन्नरः । दुःस्वप्ननाशनंचैवसर्वदुःखंचनश्यति १५१ द
कुष्ठहरंचैवदारिद्र्यंहरतेध्रुवम् । सर्वसम्पत्प्रदंचैवसर्वका
प्रवर्द्धनम् १५२ यःपठेत्प्रातरुत्थायभक्त्यानित्यमिदंनरः
सौख्यमायुस्तथारोग्यंलभतेमोक्षमेवच १५३ अग्निमीळे
नमस्तुभ्य मिषेत्वोर्जेस्वरूपिणे । अग्नआयाहिवीतस्त्वं
स्तेज्योतिषांपते १५४ शन्नोदेवीनमस्तुभ्यं जगच्चक्षुर्नमोस्तु
ते। पंचमायोपवेदाय नमस्तुभ्यंनमोनमः १५५ पद्मासनःपद्म
करः पद्मगर्भसमद्युतिः । सप्ताश्वरथसंयुक्तो द्विभुजः ।
सदारविः १५६ आदित्यस्यनमस्कारंयेकुर्वन्तिदिनेदिने ।

जन्मान्तरसहस्रेषुदारिद्र्यंनोपजायते १५७ उदयगिरिमुपेतं भास्करंपद्महस्तं निखिलभुवननेत्रंदिव्यरत्नोपमेयं । तिमिरकरिमृगेन्द्रंबोधकंपद्मिनीनां सुरवरमभिवन्दे सुन्दरंविश्ववंद्यम् १५८ ॥ इति श्रीआदित्यहृदयस्तोत्रंसमाप्तम् ॥

एकसौ इकतालीसवां अध्याय॥

आगेहोनेवाले राजाओं का वर्णन और उनके राज्यका समय ॥

राजाशतानीक कहते हैं कि हे सुमन्तुमुनि! आप के मुखारविंद से सूर्य भगवान् के गुणानुवाद और परम पवित्रआदित्य हृदयस्तोत्र श्रवण किया जिस से चित्त को अत्यन्त आनन्द भया अबआप कृपाकर यह वर्णनकरें कि कलियुग में कौन २ राजाहोंगे और कितने २ वर्ष राज्य करेंगे आप श्री वेदव्यास जीके शिष्य और त्रिकालज्ञ हैं यह राजाका प्रश्नसुन सूतजी बोले कि हे राजा शतानीक! आप ने बहुत उत्तम प्रश्न किया अब हम कलियुग के राजाओंका वर्णन करते हैं आप प्रीतिसे श्रवणकरें कलियुगकी संध्या से लेकर परीक्षित आदि तुम्हारे वंश के राजा इक्ष्वाकु वंशके राजा और मागध वंश के राजा एकसहस्रवर्ष तक राज्य करेंगे इनतीनों वंशों के राजाओं के अनन्तर प्रद्योत नामक पांच राजा एकसौ अड़तीस वर्ष राज्य करेंगे पीछे शिशुनाग आदि दशराजा तीन सौ साठ वर्षपर्यन्त राज्यभोगेंगे यहांतक तो धर्मात्मा राजा होंगे इन के अनन्तर शूद्री के गर्भ से उत्पन्न नन्दनाम राजा होगा और उसके आठपुत्र सौवर्ष पर्यन्त राज्य करेंगे नन्द के पुत्रोंको राज्य के अयोग्यजान कोई ब्राह्मण उनको राज्य सिंहासन से उतार मौर्यवंश के चन्द्रगुप्त को राज्य देगा तब एक सौ सैंतीस वर्ष पर्यन्त मौर्यों के दश राजा राज्य करेंगे इनके

रैगा तब फिर सत्ययुगकी प्रवृत्ति होगी इतनाकह सुमन्तु मुनि बोले कि हे राजन्! यह हमने कलियुग में होनेवाले राजाओंका संक्षेपसे वर्णनकिया अब तुम और क्या श्रवण किया चाहतेहो वह कथन कीजिये॥

श्रीभविष्यपुराणका पूर्व्वार्द्धसमाप्तभया॥



श्रीगणेशाय नमः ॥

भविष्यपुराण भाषा ॥

उत्तरार्द्ध ॥

पहिला अध्याय ॥

श्लोक ॥

नमोस्तुवासुदेवायसशार्ङ्गायसकेतवे ॥ सगदायसचक्राय सश्रीकायनमोनमः १ नमःशिवायसौम्यायसगणायससूनवे॥ सवृषव्यालशूलायसकपालायसेन्दवे २ शिवंध्यात्वाहरिं स्तुत्वाप्रणम्यपरमेष्ठिनम् ॥ चित्रभानुंसुभानुंच नत्वाग्रन्थमुदीरयेत् ३॥

राजा शतानीक कहते हैं कि हे मुनिसत्तम ! सुमन्तुमुनि आपके अमृत से भी मधुर वचन सुनते सुनते मुझे तृप्ति नहीं होती अब आप और भी कोई उत्तम विषय वर्णन कीजिये जिससे चित्तको हर्ष होय और पुण्यकी प्राप्ति भी होय यह राजाका वचन सुन सुमन्तुमुनि बोले कि हे राजन् ! तुम श्रवण करानेके पात्रहो और श्रद्धा से सुनतेहो इस लिये फिरभी हम प्राचीन वृत्तांतका वर्णन करतेहैं तुम्हारे बड़े प्रपितामह राजा युधिष्ठिर को जब राज्याभिषेक भया उस समय राजाको देखनेके लिये श्रीवेदव्यास आदि महर्षि वहां आये मार्कण्डेय माण्डव्य शाण्डिल्य शाकटायन गौतम गालव गार्ग्य ऋष्यशृङ्ग पराशर परशुराम भरद्वाज भृगु भागुरि उत्तङ्क शङ्खलिखित शौनक पुलस्त्य पुलह दाल्भ्य

वृहदश्व लोमश नारद पर्वत रैभ्य जह्नु वसु परावसु आदि बड़े २ तपस्वी और वेद वेदांग के पारगामी ऋषीश्वरों को देख श्रीकृष्ण धौम्य और भीमसेन आदि अपने भाइयों सहित राजा युधिष्ठिर सिंहासन से उठे और सब मुनीश्वरों को प्रणामकर आसनों पर बैठाय अर्घ्य पाद्य आचमन आदि से उनका पूजन करते भये इस प्रकार सबका सत्कार कर विनय से नम्रहो राजायुधिष्ठिर श्रीवेदव्यास जी के प्रति कहने लगे कि महाराज आप के अनुग्रह से हमने निष्कण्टक राज्यपाया और अपने शत्रु दुर्योधन को मारा परन्तु अपने इष्टमित्र बंधुआदिबिना यह राज्य हमको सुख नहीं देता जिस प्रकार रोगी पुरुष को भोग वन में रहने के समय कन्द मूल से निर्वाहकर जैसा सुख हम को प्राप्त होता था वैसा अब सब बन्धुओं को मार राज्य मिलने से नहीं होता जो हमारे गुरु वन्धु विपत्ति में रक्षाकरनेहारे भीष्मपितामह थे उनको हमने राज्य के लोभ से मार दिया इस से अधिक कौन दुष्कर्म होगा अविवेक मद से अन्ध हम होरहे हैं और हमारा मन पापरूप कर्दम से लिप्त होरहा है उस को आप अपनी वाणी रूप निर्मल नदी प्रवाह से क्षालन कीजिये। आपने पुराणों का संस्कार किया वेद विभक्त करे अब आप बुद्धिरूप दीपक से धर्म का सर्वस्व हम को दिखावें ये सब धर्म के रक्षण करनेहारे मुनि आये हैं और अपने नेत्र भ्रमरों करके आप के मुखकमल को पान कर रहे हैं अर्थशास्त्र धर्मशास्त्र और मोक्षशास्त्र भीष्मपितामह से श्रवण किये अब उन के स्वर्ग गमन के अनन्तर श्रीकृष्ण और आप हम को उत्तम उपदेश करने वाले हैं और इन सब मुनीश्वरों

को भी यह निश्चय है कि युधिष्ठिर को व्यासजी अवश्य विशेष धर्मों का उपदेश करेंगे इसलिये आप सबका मनोरथ सफल कीजिये यह राजा का वचन सुन व्यासजी बोले कि हे राजन्! जो कुछ धर्मका उपदेश आपको करनाथा सो सब हमने भीष्मजीने मार्कण्डेयने धौम्यने और लोमश ने किया और तुमभी धर्मज्ञ गुणवान् और बुद्धिमान् पुरुषों के सम्मतहो धर्म अधर्म के निश्चय में कोई वस्तु आपको अज्ञात नहीं अब जगत्के सृष्टि स्थिति संहार करनेहारे श्रीकृष्णभगवान् के सन्मुख धर्मका उपदेश करनेको किसकी जिह्वा प्रवृत्तहोसकतीहै इसलिये येही तुमको धर्म उपदेश करेंगे इतनाकह पाण्डवों से पूजनग्रहणकर व्यासजी तो अपने तपोवन को गये और शान्तचित्त सबमुनीश्वर श्रीकृष्ण भगवान् के मुखकी ओर देखनेलगे कि ये क्या कहते हैं॥

दूसरा अध्याय॥

सृष्टिकी उत्पत्ति और भूगोल का वर्णन॥

राजायुधिष्ठिर श्रीकृष्णभगवान् से पूछतेहैं कि यह जगत् किसमें स्थित है कहां से उत्पन्न होताहै किस से लय को प्राप्त होताहै और इसका हेतु क्याहै पृथिवी पर कितने द्वीप कितने समुद्र और कितने कुलाचलहैं पृथिवी का प्रमाण कितनाहै और भुवन कितने हैं यह आप वर्णनकरें। यहप्रश्न सुन श्रीकृष्ण कहने लगे कि हे महाराज! आपने जो पूछा सो पुराण का विषयहै परन्तु हमने भी संसार में विचरते हुये सुनाहै और अनुभव किया है अब निर्गुण अज विश्वरूप परमेश्वर को प्रणामकर हम उस विषयका वर्णनकरते हैं यह बात याज्ञवल्क्यमुनि ने सूर्य्यनारायण से पूछी थी

उनको सूर्य्यनारायण ने जो उत्तर दिया वह हमने भी श्रवण किया वही आपको सुनाते हैं वह एक परमेश्वर सब प्राणियों में स्थित है और जल में चन्द्र के प्रतिबिम्बों की भांति अनेक रूप से देख पड़ता है ब्रह्मा विष्णु और शिव ये तीनों सनातन देव एक परमात्मा के स्वरूप हैं केवल इनमें नाम का और क्रिया का भेद है वास्तव में कुछ भेद नहीं प्रक्रिया अनुषङ्ग उपोद्घात और उपसंहार ये चार पाद वर्णनीय विषय के होते हैं यह जो विषय आपने पूछा बहुत बड़ा है परन्तु हम संक्षेप से वर्णन करते हैं पुरुष करके अधिष्ठित प्रकृति से महत्तत्त्व उत्पन्न होता है महत्तत्त्व से त्रिगुण अहंकार अहंकार से पांच तन्मात्रा तन्मात्राओं से पांच महाभूत और भूतों से चराचर जगत् उत्पन्न होता है प्रलय के समय स्थावर जंगम सब नष्ट होगये केवल जल ही सर्वत्र व्याप्त था उसमें भूतात्मक अण्ड उत्पन्न हुआ कुछ काल के अनन्तर उसके दो खण्ड हुये उनमें एक खण्ड भूमि और दूसरा खण्ड आकाश भया अण्ड के बीच जो उल्व अर्थात् जरायु था उससे मेरु आदि पर्वत बने और धमनी अर्थात् नाड़ी नदीरूप भई मेरुपर्वत सोलह हज़ार योजन तो भूमि के भीतर है और चौरासी हजार योजन भूमि के ऊपर है और मेरु के मस्तक का विस्तार बत्तीस हजार योजन है भूमि तो कमलरूप है और मेरु पर्वत कर्णिका है उस अण्ड से आदिदेव आदित्य उत्पन्न भया जो प्रातःकाल ब्रह्मा मध्याह्न में विष्णु और सायङ्काल में रुद्र रूप से स्थित होता है वह त्रयीमय एक आदित्य देव ही तीन रूप धारता है ब्रह्मा से मरीचि अत्रि अंगिरा पुलस्त्य पुलह

क्रतु भृगु वशिष्ठ और नारद ये नव मानस पुत्र उत्पन्न भये पुराणों में इनको भी ब्रह्माही कहते हैं दक्षप्रजापति के पुत्र जब क्षीण होगये तब उनने कन्या उत्पन्न करी जिनमें से दश कन्या धर्म को तेरह कश्यप को सत्ताईस चन्द्रमा को दो बहुपुत्र को दो कृशाश्व को चार अरिष्टनेमिको एक भृगु को और एक शिवजी को दी जिनसे चराचर जगत् उत्पन्न भया मेरुपर्वत के तीनों शृंगोंपर ब्रह्मा विष्णु शिव की पुरी हैं और पूर्व आदि आठों दिशाओं में इन्द्रादि दिक्पालों की नगरी हैं हिमवान् हेमकूट निषध मेरु नील श्वेत और शृङ्ग-वान् ये सात जम्बूद्वीप में कुल पर्वत हैं जम्बूद्वीप का प्रमाण लक्षयोजन है और उसमें नव वर्ष हैं जम्बू शाक कुश क्रौंच शाल्मलि प्लक्ष पुष्कर ये सातद्वीप हैं और सातों समुद्रों क-रके वेष्टित हैं क्षारजल दुग्ध इक्षुरस सुरा दही घृत और स्वादु जल इनके सात समुद्र हैं सातों समुद्र और सातोंद्वीप एक से एक द्विगुण हैं भूर्लोक भुवर्लोक स्वर्लोक महर्लोक जनलोक तपोलोक और सत्यलोक ये देवताओं के निवास स्थान सातलोक हैं महातल भूमितल सुतल निस्तल तल रसा-तल और तलातल ये सात पाताल हैं इनमें हिरण्याक्ष आदि दानव और वासुकि आदि नाग निवास करते हैं स्वायम्भुव स्वारोचिष उत्तम तामस रैवत और चाक्षुष ये छः मनु व्य-तीत होगये और वैवस्वतमनु अब वर्त्तमान है जिस के पुत्र पौत्रों ने यह पृथिवी व्याप्त कर रक्खी है बारह आदित्य आठ वसु ग्यारह रुद्र और दो अश्विनीकुमार ये तेंतीस देवता वैवस्वत मन्वन्तर में कहे हैं विप्रचित्तिसे दैत्य और हिरण्याक्षसे सब दानव उत्पन्नभये हैं द्वीप और समुद्रों करके

युक्त भूमिका प्रमाण पचास कोटि योजन है और नावकी भांति यह भूमि जलपर तरती है परन्तु गलती नहीं इसके चारोंओर लोकालोक पर्वत है वहांतक सूर्यका प्रकाश पहुँचताहै उससे आगे अन्धकार है जिसको सूर्य आदि भी नहीं निवृत्तकरसकते नैमित्तिक प्राकृत आत्यन्तिक और नित्य यह चारभेद प्रलयके हैं यह संसार जिससे उत्पन्न होताहै प्रलयके समय उसी में लीन होजाता है ऋतुके ऊपर जिस भांति वृक्षोंके पुष्प फलआदि आपही उत्पन्न होते हैं उसी भांति संसार भी अपने समय पर उत्पन्न होता है हिंस्र अहिंस्र मृदु क्रूर धर्म अधर्म सत्य असत्यआदि कर्मोंकरके भावितजीव अनेक योनियोंमें प्राप्तहोते हैं भूमि जल करके जल तेज करके तेज वायु करके और वायु आकाश करके वेष्टित है आकाश अहंकार करके अहंकार महत्तत्त्वकरके महत्तत्त्व प्रकृति करके और प्रकृति उस अविनाशी पुरुषकरके परिवृत है इस भांतिके हजारों अण्ड उत्पन्न होतेहैं और नाशको प्राप्त होतेहैं यह सुर नर किन्नर नागआदि करके युक्त जगत् नारायणके उदरमें स्थित है शुद्धबुद्धि पुरुष इसको भीतर बाहर से देखते हैं परन्तु परमात्माकी मायाको कोई नहीं जानता॥

तीसरा अध्याय॥

नारदजी को विष्णुमाया का दिखाना॥

राजा युधिष्ठिर पूछते हैं कि हे श्रीकृष्ण! वह विष्णुभगवान् की माया कैसी है जो सब जगत्को व्यामोह करती है उसका आप वर्णन कीजिये यह सुन श्रीकृष्ण भगवान् कहने लगे कि हे महाराज! एक समय नारदमुनि श्वेतद्वीप में नारायण के दर्शन को गये वहां नारायण के दर्शनकर

उनको प्रसन्न देख नारद मुनि ने प्रार्थना करी कि महाराज आपकी माया कैसी है और कहां रहती है आप उसका रूप मुझे दिखावें यह नारदका वचन सुन विष्णु भगवान् ने हँसके कहा कि हे नारद ! माया को देखकर क्या करोगे और जो कुछ तुम्हारी इच्छाहोय सो मांगो तब फिर नारद जी ने यही कहा कि महाराज आप कृपाकर अपनी मायाही हम को दिखावें और किसी वरकी हमको इच्छा नहीं इस प्रकार नारद का आग्रहदेख विष्णु भगवान्ने कहा बहुत अच्छा आप हमारी माया देखिये यहकह नारदकी अंगुली पकड़ श्वेतद्वीप से चले मार्गमें आय भगवान् ने वृद्धब्राह्मण का रूप धारा कि शिखा यज्ञोपवीत कमण्डलु मृगचर्म धारे कुशा के पवित्र हाथों में पहिने वेदका पाठ करने लगे और अपना नाम यज्ञशर्मा रक्खा यह रूप धार नारद सहित जम्बूद्वीप में पहुँचे वेत्रवती नदी के तटपर शोभित विदिशानाम नगरी में गये उस नगर में धनधान्य करके समृद्ध बड़ा उद्यमी पशुपालन में तत्पर बहुत खेती करने वाला शीरभद्रनामक एक वैश्यथा पहिले दोनों उसी के घर गये उसने भी देखा कि कोई दो ब्राह्मणहैं इनका आदर करना चाहिये यह विचारकर उनका आसन आदिसे सत्कारकिया और बोला कि हमारा अन्न जो आपको रुचै तो भोजन कीजिये तब हँसकर वृद्धब्राह्मणरूप भगवान् बोले कि तुम्हारे बहुत पुत्रपौत्र होयँ सब खेती और व्यापारमें तत्पररहैं और नित्य तुम्हारे पशु और खेतीकी वृद्धिहोय यह हमारा आशीर्वादहै इतना कह वहांसे दोनों चले मार्गमें गंगाके तट पर ढिक्कानाम गांव में गोस्वामीनाम ब्राह्मण रहताथा उस

के समीप पहुँचे वह भी अपने खेत की चिंता में लगरहा था उस को भगवान् ने कहा कि हम बहुत दूर से आये हैं और तुम्हारे अतिथि हैं हम को भोजन करावो यह उन का वचन सुन दोनों को संगले ब्राह्मण अपने घरआया वहां अपनी पत्नी से कहा कि ये दो अतिथि हैं इन की भली भांति भोजनआदि से शुश्रूषाकरो उस ने भी पति की आज्ञानुसार दोनों को स्नानकराय भोजनकराया भोजन कर रात्रि को सुखपूर्वक उत्तम शय्यापर सोये ब्राह्मण भी उन की सेवा में रहा प्रभात उठ भगवान् ने ब्राह्मण से कहा कि हम तुम्हारे घर में बहुत सुख से रहे अब जाते हैं परमेश्वर करे कि तुम्हारी खेती निष्फलहोय और संतान भी न बढ़ै इतना कह वहां से चल दिये मार्ग में नारद ने पूछा कि महाराज वैश्य ने कुछ शुश्रूषा न करी जिस को तौ आपने उत्तम वर दिया और इस ब्राह्मण ने इतनी सेवाकर यह शापरूप आशीर्वाद पाया इस में क्याहेतु है यह सुन भगवान् बोले कि हे नारद वर्ष भर मत्स्य पकड़नेवाले को जितना पाप होता है उतना एक दिन हलजोतने से होता है इसी से खेती करनेवाला नरकको जाताहै वह शीरभद्र वैश्य अपने पुत्र पौत्र सहित इसी कार्य्य में तत्परहै और घोर नरक में जायगा इसीसे हमने उसके घरमें विश्राम न किया और भोजन भी न किया और इस ब्राह्मण के घरमें भोजन किया और ऐसा आशीर्वाद दिया कि जिससे संसार जालमें न फँसै और मुक्तिपावै इसप्रकार बातचीत करतेहुये दोनों कान्यकुब्ज के समीप पहुँचे वहां एक अतिरमणीय सरोवर देखा उस सरोवर की शोभा देख प्रसन्नहो भगवान् ने नारद से कहा

कि हे नारद ! यह उत्तम तीर्थ है और आज पुण्य तिथि है इस लिये तुम स्नान करो पीछे वशिष्ठजी के नाम से प्रसिद्ध श्रीमहोदय नाम इस नगरमें प्रवेश करैंगे इतना कह भगवान् उस सरोवर में झटपट एक गोता लगाय बाहिर निकल आये और नारदजी भी स्नान करने को सरोवर में प्रविष्ट भये स्नानकर जब बाहिर आये तो एक अति रूपवती स्त्री बनगये जिसके बड़े बड़े नेत्र चन्द्रसा मुख कामदेव के पाशों के समान कर्ण दर्पण से कपोल तिल पुष्पके समान नासिका काम धनुष से भ्रू हीरे से दांत मूँगा के तुल्य अति रक्त वर्ण अधर मयूर के कलाप के समान केशपाश शङ्ख की भांति तीन रेखाओं करके शोभित कण्ठ माधवी लताकी भांति कोमल और सरल जिसके भुज रक्तवर्ण के नख और पतली २ अँगुलियों से शोभित कमल से भी कोमल और अरुण जिसके हस्तपीन ऊँचे कठोर गोल अविरलश्लक्ष्ण कलशके समान जिसके स्तन मानो चक्रवाकों का जोड़ा होय मुष्टिग्राह्य जिसका मध्य अति गम्भीर और वर्त्तुल जिसकी नाभि तीन बलियों करके भूषित जिसका उदर अति सुन्दर जिसकी रोमावली कामदेव का निवास स्थान अति विस्तीर्ण जिसका नितम्ब नितम्ब के मध्य में अति शोभित जिसके कुकुन्दर अर्थात् नितम्ब कूप कदली स्तम्भ के समान जिसके ऊरु सीधी रोम रहित और कोमल जिसकी जांघ दोनों गुल्फ अर्थात् टङ्कने जिसके अतिगूढ़ रक्तवर्ण की अंगुली और सुन्दर नखों से भूषित रक्तकमल के समान जिसके चरण जो भली भांति भूमिपर टिकजाय इस प्रकार सब उत्तम लक्षणों करके युक्त जगत् को व्यामोह करनेवाली अति रूपवती स्त्री

सरोवरसे निकली जिस प्रकार समुद्र से लक्ष्मी उस को देख भगवान् तो अन्तर्द्धान भये और वह स्त्री भी अच्युत हरिणी की भांति इधर उधर भयभीतहो देखने लगी इसी अवसर में अपनी सेना साथलिये राजा तालध्वज वहां आया और उस नारी को देख कामातुर हो चिन्तन करनेलगा कि यह स्त्री कौनहै कोई देवांगना है कि अप्सरा है इसका रूपही देख मूर्च्छा होती है इतना विचार कर राजाने उस से पूछा कि हे बाले ! तू कौनहै और इस स्थान में कहां से आई है यह राजा का वचन सुन उसने कहा कि महाराज मैं माता पिता से हीन और निराश्रयहूँ विवाह भी मेरा नहीं भया है अब आपके शरणहूँ यह सुनतेही प्रसन्नहो राजाने उसको अपने पीछे घोड़ेपर चढ़ालिया और अपनी राजधानी में लाकर विधि पूर्वक उससे विवाह किया विवाह के अनन्तर महलों उपवनों में सरोवरों के तीरों पर पर्वत के शृंगोंपर नदी समुद्र आदि के तटोंपर ऊँचे ऊँचे प्रासादोंपर उस उत्तम स्त्री के साथ राजा विहार करनेलगा इसप्रकार विहारकरते २ एक दिनकी भांति बारहवर्ष बीतगये तेरहवें वर्ष में उसको गर्भरहा और समय पूरा होनेपर एक अलावु अर्थात् तूँबा उत्पन्न भया जिसमें सैकड़ों छोटे २ बालक थे वे सब घृत कुण्डों में छोड़े गये और थोड़े दिनोंमेंही बड़े पराक्रमी हृष्टपुष्ट होगये उन सब के विवाह भये और पुत्र पौत्रोंकी बहुत वृद्धि भई वे सब अहंकारी परस्पर विरोधी और राज्य की कामनावाले थे कुछ कालके अनन्तर राज्य के लोभ से कौरव पाण्डवों की भांति उन का परस्पर युद्ध हुआ और यादवों के तुल्य सब के सब नष्टहोगये इस प्रकार अपने कुलका संहार देख वह स्त्री शिर

और छाती पीट पीट विलाप करनेलगी और मूर्च्छित हो भूमि पर गिरी और राजाभी शोकसे अतिपीड़ित हो रोदन करता था इस अवसर में ब्राह्मण का वेषधार देवताओं सहित विष्णुभगवान् आये और राजा रानी को उपदेश करने लगे कि तुम दोनों शोककर बहुत रोदन मत करो यह विष्णुमाया ऐसेही है सैकड़ों चक्रवर्ती और हजारों इन्द्र दीपक की भांति कालरूप प्रचण्ड पवनने नष्ट करदिये जो पुरुष समुद्र सुखाने को भूमि पीसकर चूर्ण करडालने को पर्वत पीठपर उठाने को समर्थ भये वेभी समय पाय काल के कराल मुख में गये त्रिकूटपर्वत जिसका दुर्ग अर्थात् क़िला समुद्र उसकी खाई लङ्का राजधानी राक्षस जिसके योधा वह सब शास्त्र और वेद जाननेहारा रावणभी न रहा युद्धमें घरमें पर्वत पर समुद्र में चाहे जहां जाय जो भावी है वही होता है पाताल में जाय इन्द्रलोक में प्रवेश करै मेरु पर्वत पर चढ़जाय मन्त्र औषध शस्त्र आदि करके चाहे जितनी अपनी रक्षाकरै परन्तु जो होना होता है वह होताही है इसमें कुछ सन्देह नहीं मनुष्यों को भाग्यानुसार जो कुछ शुभ अशुभ प्राप्त होना होता है वह अवश्यही होता है हजारों उपाय करो परन्तु भावी किसी प्रकार नहीं टलसक्ती कोई आंसू टपकाय रोताहै कोई बड़ी प्रसन्नता से नाचताहै कोई हृदय को हरनेहारा गीत गाताहै कोई धन के लिये अनेक प्रकार के जाल रचता है इस भांति यह संसार एक प्रकार का नाटक है और सब जीव अनेक रूप धारनेवाले नट हैं इतना उपदेशकर उस रानीका हाथ पकड़ भगवान्ने कहा कि विष्णुमाया देखली उठो अब स्नानकर अपने पुत्र पौत्रों का और्ध्वदैहिक करो इतना

... तीर्थ में उसको स्नान कराया स्नान करतेही ... ... मुनि अपने रूपको धारण करते भये राजा ... अपने मन्त्री और पुरोहितों सहित देखा कि जटाधारे ... पहिने दण्ड कमण्डलु हाथों में लिये खड़ाउँओं पर चढ़े बड़े तेजस्वी एक मुनिहैं मेरी रानी नहीं उसी समय भगवान् नारदका हाथ पकड़ वहां से आकाशमार्ग करके चले और क्षणमात्र में श्वेतद्वीप पहुँचे और नारदसे कहा कि हे देवर्षि ! हमारी माया देखी नारदजीनेभी हँसकर उन को प्रणाम किया और भगवान्की आज्ञापाय तीनोंलोकों में विचरने लगे इतनी कथासुनाय श्रीकृष्ण बोले कि महाराज यह विष्णुमायाका हमने संक्षेपसे वर्णन किया है इसमाया के प्रभावसे संसारके जीव पुत्र कलत्र धनआदि में आसक्त होकर कोई रोते हैं कोई हँसते हैं कोई गाते हैं और अनेक प्रकार की चेष्टा करते हैं ॥

चौथा अध्याय ॥

संसार के दोषों का वर्णन ॥

राजा युधिष्ठिर पूछते हैं कि हे श्रीकृष्णचन्द्र ! यह जीव कौनसे कर्म से देवता मनुष्य और पशुआदि योनिमें जन्म लेता है और अतिदारुण गर्भवास का क्लेश कैसे सहता है गर्भमें क्या खाता है स्वरूप और धनवान् किसकर्म सेहोताहै और पण्डित पुत्रवान् त्यागी होकरभी अल्पायुष् क्यों होजाता है सुखपूर्वक क्योंकर मरणहोताहै और शुभाशुभकर्म का भोग किसप्रकार जीव करताहै यह आप विस्तारसे वर्णन करैं यह राजा का प्रश्न सुन श्रीकृष्ण भगवान् कहनेलगे कि महाराज उत्तम कर्म से देवयोनि मिश्रकर्म से मनुष्ययोनि और केवल

अशुभ कर्म से तिर्यक्योनि में जीव जन्म लेता है इस धर्म अ-धर्म के निश्चयके लिये श्रुतिही प्रमाण है पापसे पापयोनि और पुण्य से पुण्ययोनि प्राप्तहोती है ऋतुकाल में निर्दोष शुक्र वायु करके प्रेरित शोणितके साथ एकता को प्राप्त होता है शुक्र के साथही कर्म्मोंकरके प्रेरित जीव भी योनि में प्रविष्ट होता है एकदिन में वह शुक्र शोणित मिलकर कलल बनता है पांच रात्रि में कलल बुद्बुदरूप होजाता है सात रात्रि में बुद्बुद की मांसपेशी बनती है चौदह दिनमें वह मांसपेशी मांस और रुधिर से व्याप्तहोकर दृढ़होजाती है पचीसदिनमें उस पेशीमें अंकुर निकलते हैं महीने में उन अंकुरों के पांच पांच भाग होजाते हैं और चार मास में वेही अंकुरों के भाग अंगुली बनजाते हैं पांचमहीनों में मुख नासिका और कर्ण बनते हैं छः महीने में दन्तपंक्ति नख और कर्णों के छिद्र बनते हैं सात महीने में गुदा लिंग अथवा योनि और नाभि बनते हैं और अंगों में संकोचभी होता है आठ महीने में अंग प्रत्यंग सब सम्पूर्ण होजाते हैं और शिर में केशभी आजाते हैं माता के भोजन का रस नाभि के द्वारा बालक के शरीर में पहुँचता है उसीसे उसका पोषण होता है गर्भमें स्थितजीव सब सुखदुःख समझता है और यह विचार करता है कि मैं अनेक योनियों में जन्मा और वारंवार मृत्यु वश भया अब जन्म होतेही फेर संसार बन्धन में प्राप्तहूँगा इस प्रकार अनेक विचार करताहुआ और मोक्षका उपाय सोचता हुआ जीव अति दुःखी गर्भ में रहता है पहाड़ के नीचे दबजाने से जितना क्लेश जीवको होय उतना जरायु से वेष्टित होनेकरके होता है समुद्र में डूबने से जो दुःखहोय वही दुःख गर्भ के जल में भीगनेसे

होता है तप्तलोह स्तम्भसे बांधने में जीव जो क्लेशपाताहै
गर्भ में जठराग्नि के ताप से होता है तपाई हुई सूचियों
वेधने करके जो व्यथा होती है उससे आठगुणी अधिक
में जीव को होती है गर्भवास से अधिक कोई दुःख जीवों
लिये नहीं है गर्भवास से कोटिगुण अधिक क्लेश जन्म
समय योनियन्त्र के पीड़न से होता है उस दुःख से मूर्च्छित
होजाती हैं सूतिमारुतकी प्रेरणा से गर्भ के बाहिर निकलते
जिसप्रकार कोल्हू में पीड़न करने से तिल निस्सार होजाते
इसीप्रकार शरीरभी योनियन्त्र के पीड़न से निःसत्त्व होजा
है मुखरूप जिसका द्वार है दोनों ओष्ठ कपाट हैं सब इन्द्रि
गवाक्ष अर्थात् जाली झरोखे हैं दन्त जिह्वा गल
पित्त कफ जरा शोक काम क्रोध तृष्णा राग द्वेष आदि
समें उपकरण हैं ऐसा यह देहरूप अनित्य गेह नित्य आ
का निवास स्थान है शुक्र शोणित के संयोग से शरीर उ
होता है और नित्यही मूत्र विष्ठा आदि से भरा रहता है
लिये अत्यन्त अपवित्र है जिसप्रकार विष्ठा से भराहु
घट बाहिर के धोने से शुद्ध नहीं होता इसी भांति यह दे
स्नान आदि से शुचि नहीं होसक्ता पंचगव्य आदि शु
पदार्थ जिस के संगसे अशुचि होजाते हैं उस से अधिक
कौन पदार्थ अशुचि होगा उत्तम भोजन पान आदि देह
संसर्ग से मलरूप होजाते हैं फिर देहकी अपवित्रता
वर्णन करें बाहिर से चाहे जितना देह को शुद्धकरो परन्तु
तर तो कफ मूत्र विष्ठा आदि भरेही रहेंगे चाहे जि
सुगन्ध देह में लगावो परन्तु कभी इस देह का मालि
दूर नहीं होता यह आश्चर्य्य है कि सब मनुष्य अपने

का दुर्गन्ध सूँघकर नित्य अपना मल मूत्र देखकर और नासिका का मल निकाल कर भी इस देह से विरक्त नहीं होते और उनको देहमें घृणा नहीं उत्पन्नहोती मोहका बड़ा प्रभाव है कि शरीरके दोषदेखकर और इसकादुर्गंध सूँघकरभी इससे ग्लानि नहीं होती जन्महोतेही बाहरका पवनलगनेसे सबपूर्वजन्मका स्मरण जातारहता है और जीव संसारके व्यवहारमें आसक्तहो अनेक दुष्कर्म करते हैं और अपनेको तथा परमेश्वरको भूलजाते हैं आंखोंके होते नहीं देखते बुद्धिके होते भला बुरा नहीं समझते सूधेमार्ग मेंभी उनके पैर खिसलते हैं यह सब मोहमहिमा है दिव्यदर्शी महर्षियों ने यह गर्भका वृत्तांत प्रकट किया है इसको सुनकर भी मनुष्यों को वैराग्य नहीं उत्पन्न होता और अपना कल्याण नहीं करते यह बड़ाही आश्चर्य है बाल्यावस्थामें भी केवल दुःखही है कि बालक अपना अभिप्राय नहीं कहसक्ता और जो चाहै वह काम नहीं करनेपाता इस से नित्य व्याकुलरहता है दांत ऊगने के समय बालक बहुत क्लेश भोगते हैं और भांति भांतिके रोग और बालग्रह उन को सताते हैं क्षुधा तृषा से पीड़ितहो रोदन करते हैं मोह से बालक विष्ठा आदि भी भक्षण करलेते हैं फिर कर्णवेध के समय दुःख होता है अक्षरारम्भ के अवसर में गुरु से बड़ाही त्रासहोताहै माता पिता ताड़नकरते हैं युवावस्था में भी सुखनहीं अनेकप्रकार की ईर्षा मन में उपजती हैं कामदेव सताता है रात्रिको निद्रा नहीं आती और धनकी चिंता से दिनमें भी चैन नहीं पड़ता स्त्री से संग करके वीर्यपात करने में कुछ विशेष सुखनहीं इतनाही सुख है जितना पकेहुये गण्ड अर्थात् गूमड़के फूट जाने से होता है अथवा

मूत्र विष्ठाआदि त्याग करने से होता है इससे अधिक नहीं विचार करो तो सब दोषों के निवासस्थान अतिअशुचि नारी के देहमें कोई वस्तु सुख देनेहारी नहीं है अपमानने सन्मान वियोगने प्रियसंगम और बुढ़ापे ने यौवन नष्ट किया अब सुख काहेसे होय जो पुरुष युवावस्था में नारियों को अति प्रिय होता है वही जब बूढ़ा होजाय शरीर कांपने लगे सब अंग जर्जर होजायँ तब किसीको भला नहीं लगता इतनी दुर्दशा देखकर भी पुरुषों को वैराग्य नहीं उपजता बुढ़ापे में दुराचार पुत्र पौत्रआदि अवज्ञा करते हैं तब अत्यन्त दुःख होता है बुढ़ापे में कोई कर्म नहीं सिद्ध होसक्ता इसलिये युवावस्था मेंही अपना हित साधन करै वात पित्त आदि के वैषम्य अर्थात् न्यून अधिक होने से अनेक रोग होते हैं और यह शरीर रोगोंका घर है फिर सुख कैसेहोय एकसौ एक मृत्यु इस देहके हैं उन में एक तो कालमृत्यु है बाकी सौमृत्यु आगन्तुक अर्थात् अकालमृत्यु हैं आगन्तुकमृत्यु जप होम औषध आदि से टल भी जाते हैं परन्तु कालमृत्यु का कोई उपायनहीं अनेक प्रकार के रोग सर्प शस्त्र विष क्रोधआदि आगन्तुकमृत्यु के द्वार हैं जब कालमृत्यु आयपहुँचे तब धन्वन्तरि भी कुछ नहीं करसक्ते और औषध तन्त्र मन्त्र तप दान रसायन योग आदि भी रक्षा नहीं करसक्ते मृत्यु के समान कोई दुःख जीवों को नहीं है पुत्र स्त्री मित्र राज्य ऐश्वर्य धनआदि सब से मृत्यु वियोग करादेता है और बड़े बड़े वैरभी मृत्यु से निवृत्त होते हैं सौवर्ष का आयुष् पुरुष का है परन्तु कोई अस्सी कोई सत्तर और प्रायः साठ वर्ष मनुष्य जीते हैं और बहुतसे साठसे पहिलेही मृत्युवश होते हैं जितना

मनुष्य का आयुष् होय उस के आधे को तो रात्रि हरलेती है बीसवर्ष बाल्य और बुढ़ापे में वृथा बीतते हैं यौवन अवस्था में अनेक प्रकार की चिन्ता और काम की व्यथा रहती है इसलिये वह समय भी निरर्थकही जाता है इस भांति यह आयुष् समाप्त होजाता है और मृत्यु आय पहुँचता है मरण के समय जो दुःख होता है उस की कोई उपमा नहीं देसके हे माता! हे पिता! अरे भाई! इस भांति पुकारते हुये को मृत्यु ग्रसलेता है जैसे मेंडक को कालासर्प व्याधि से पीड़ित खाटपर पड़ा इधर उधर हाथ पैर पटकता है लम्बे सांस लेता है खाट से भूमिपर और कभी भूमि से खाटपर जाता है परन्तु कहीं चैन नहीं पड़ता कंठ में घुर २ शब्द होने लगता है मुख सूखता जाता है शरीर मूत्र विष्ठाआदि से लिप्त होजाता है वाणीबन्ध होजाती है पड़ा २ चिन्ता करता है कि मेरे धन को कौन भोगेगा और मेरे कुटुम्ब की रक्षा कौन करैगा इस प्रकार अनेक यातना भोगकर मनुष्य मरता है और इस देह से निकलतेही जीव दूसरे देह में प्रविष्ट होजाता है मरण से अधिक दुःख विवेकी पुरुषों को याचन अर्थात् मांगने से होता है देखो विष्णुभगवान् भी बलिको याचना करने से वामन होगये फिर और तो ऐसा कौन है जो याचना करने से लाघव को न प्राप्तहोय आदि अन्त और मध्य में दुःखही है बहुत खाओ तो दुःख थोड़ाखाओ तो दुःख किसी समय भी सुख नहीं है क्षुधा सब रोगों में प्रबल है और इस का औषध अन्न है इस लिये अन्नभी सुख का साधन नहीं प्रभात उठतेही मूत्र विष्ठा आदि की बाधा मध्याह्नमें क्षुधा तृषाकी पीड़ा और पेट भरने पर काम की व्यथा होती है रात्रि को निद्रा दुःख देती है

के बलसे ब्राह्मणों का तिरस्कार करै वहभी ब्रह्महा है जो अपनी मिथ्या स्तुतिकरके अपने गुणों का उत्कर्ष दिखावै और गुरुओं के प्रतिकूल हो वह ब्रह्महा है क्षुधा तृषासे व्याकुल ब्राह्मण भोजन करनेलगे उससमय जो विघ्नकरै वह ब्रह्महा है पिशुन सब लोकों के छिद्र ढूँढ़नेहारा और क्रूरपुरुष भी ब्रह्मघ्नके समान है तृषाकरके पीड़ित गौ जलपीनेलगे उस समय जो विघ्नकरै वह ब्रह्महत्याका भागी होता है दूसरे पर जो मिथ्यादोष आरोपणकरै और क्रोधीहोय वह ब्रह्महा है देवता ब्राह्मण और गौओं की जो वृत्ति हरै वह ब्रह्महा है ब्राह्मण का न्यायोपार्जित धन हरै तो ब्रह्महत्या के समान पाप होय अग्निहोत्र का त्याग माता पिता का त्याग झूठी साक्षी मित्रद्रोह गौओं के मार्गमें वनमें और ग्रामआदिमें अग्नि लगादेना ये सब घोरपाप सुरापानके समान हैं स्त्री हाथी घोड़ा गौ भूमि चांदी रत्न औषधी चन्दन अगुरु कपूर कस्तूरी रेशमीकपड़ा इन सब का चोरना सुवर्णस्तेय के तुल्यहै वरयोग्य कन्याका विवाह न करना पुत्र मित्र आदि स्त्री भगिनी कुमारी नीचस्त्री और दूसरे वर्णकी स्त्री इनके साथ संग करना गुरुस्त्रीगमनके समान है महापातकों के तुल्यये सबपातक कहाते हैं। अब उपपातकोंका वर्णन करते हैं। ब्राह्मण को कोई पदार्थ देना कहकर फिर नहीं देना ब्राह्मणका धनहरना अत्यंत अहंकार अतिक्रोध दाम्भिकत्व कृतघ्नता कृपणता विषयों में अतिआसक्ति सत्पुरुषोंसे द्वेष परस्त्रीहरण कुमारीगमन आश्रम आदि को पीड़ादेना स्त्री पुत्र आदिका बेचना तीर्थयात्रा व्रत उपवास यज्ञ आदिका

 विक्रयकरना स्त्रीधन से निर्वाह करना स्त्री की रक्षा न

करना मद्यपान करनेहारी स्त्री से संग करना ऋणलेकर न देना निन्दित धनका ग्रहण करना विषदेना मारण उच्चाटन विद्वेषणआदि अभिचार कर्म करना मूल्य लेकर पढ़ाना और पढ़ना सबवस्तु भक्षण करना देवता अग्नि साधु गौ ब्राह्मण राजा और पतिव्रता की निन्दाकरना दुःशीलता नास्तिकता रजस्वला पशुस्त्री और नीच स्त्री से मैथुन करना सबकाल में मैथुन करना स्त्री पुत्र मित्र आदि की प्रीति में विघ्न करदेना प्रतिज्ञा भंग करना तलाव बन्ध रास्ता पुल आदि को तोड़ देना एकपंक्ति में भोजन का भेद करना ये सब उपपातक हैं इन पापों के करनेहारे पुरुषों का जो संसर्ग करें वेभी पातकी होते हैं परस्त्री को दूषित करनेहारे परद्रव्य हरनेहारे ब्राह्मणों को अनेक प्रकारों से दुःख देनेवाले सुरापान करनेवाले द्विज होकर शूद्र की सेवा में तत्पर गोष्ठ जल अग्नि रथ्या अर्थात् गली और वृक्ष की छाया इन को नाश करनेहारे झूठा पत्र लिखनेवाले झूठे साक्षी धनुष शस्त्र और शय्या बेचने वाले पशु दमन करनेहारे अर्थात् बैल बधिया करनेहारे स्वामी भृत्य और गुरु से द्रोह करनेहारे मायावी शठ भार्या पुत्र मित्र बालक वृद्ध दुर्बल रोगी भृत्य अतिथि बन्धु आदि को भूखा मारने वाले एकाकी मीठा भोजन करनेवाले बैलों के साथ गौ कोभी जोतनेवाले बकरी भेड़ भैंस आदि से जीविका करनेवाले और शस्त्र से वृत्ति करके निर्वाह करनेहारे नरक को जाते हैं जो अपने आश्रम में आये भूखे प्यासे और थकेहुये अतिथि का सत्कार नहीं करते और बालक वृद्ध अनाथ विकल दीन रोगी दुर्बल आदि पर दया नहीं करते वे नरकगामी होते हैं शिल्पी सुनार वैद्य आदि भी नरकके अ-

धिकारी हैं जो ब्राह्मण राजा से दानलेते हैं वे नरकको जाते हैं परदारगामी और चोरको जो पापहोताहै वही रक्षा न करनेवाले राजाको होताहै और उससेभी अधिक उस ब्राह्मण को पातक लगता है जो राजप्रतिग्रह ग्रहणकरै घी तेल अन्न पान मधु मांस सुरा गुड़ क्षीर इक्षु शाक दही मूल फल तृण काष्ठ पुष्प पत्र औषध कांस्यपात्र जूता छतुरी शकट आसन शय्या तांबा सीसा रांग कांसी कर्पास वाद्य घर के उपकरण और भी छोटी मोटी वस्तु जो पुरुष किसीकी हरैं वे सब नरकको जाते हैं सरसों के समान भी पराई वस्तु चोरे तो नरक में अवश्य ही पड़े इसभांति के पाप करनेहारे मनुष्यों को मरण के अनन्तर यमदूत नरक में लेजाते हैं और यमराज उनको दंडदेते हैं और जो पुरुष भूल से पाप करते हैं उन को गुरु शासन करके प्रायश्चित्त करादेता है इसलिये वे नरक नहीं देखते और परदारगामी तथा चोर आदि को राजा दंड देताहै और जो गुप्त पापी होय तो यमही शासन करता है प्रथम तो इन पापों से बचै और जो कभी भूल से बनभी पड़े तो प्रायश्चित्त कर देवै जो पुरुष मन वचन कर्म से पापकरैं दूसरे से करावैं अथवा पाप करते हुये पुरुषों का अनुमोदन करैं वे सब नरक को जाते हैं ये पापके भेद संक्षेप से वर्णन किये हैं इस भांति हजारों प्रकार के पाप और भी हैं मन वचन और शरीर से अनेक प्रकार के पाप करनेहारे नरक में पड़ते हैं और यमयातना भोगते हैं और जो पुरुष उत्तम कर्म करते हैं वे स्वर्ग में सबसे आनन्द भोगते हैं॥

छठा अध्याय॥

शुभाशुभकर्मों के फल और नरकों का वर्णन॥

श्रीकृष्ण कहते हैं कि महाराज इन पापों के करने से जीव घोरनरकों को जाते हैं यमराजकी सभा में सबके शुभ अशुभकर्मों का विचार चित्रगुप्त आदि करते हैं और कर्मानुसार फलभोगना पड़ता है इसलिये सदा शुभकर्महीं करने चाहिये किये कर्म्म का विना भोग किसी प्रकार क्षय नहीं होता। अब पुण्यकर्मों के फलका वर्णन करते हैं। जो ब्राह्मणों को जूता अथवा काठकी खड़ाऊं पहिनावे वह उत्तम विमान में बैठकर यमलोक को जाता है बागलगानेहारे कुआं बावड़ी तलाव आदि बनवानेवाले उत्तम विमानों पर बैठ ठण्ढी ठण्ढी छाया में जाते हैं देवता गुरु अग्नि ब्राह्मण माता पिता आदिकी शुश्रूषा करनेहारे बड़े सत्कारपूर्व्वक उत्तम विमान में आरूढ़ हो गमन करते हैं दीपदान करनेहारे प्रकाश में जाते हैं अन्न ओषधी आदि देनेहारे सुखपूर्व्वक जाते हैं वाहन दान करनेहारों को पैरों से नहीं चलना पड़ता भूमिदान करनेवाले सब भांति सुख से जाते हैं अन्नदान से खाते पीते सुखसे विमान में बैठे जाते हैं सब दानों में अन्न दान उत्तम है जिससे शीघ्रही प्रसन्नता होजाय तीनों लोकों का जीवन अन्न है इसलिये अन्नदान के समान कोई दान नहीं अन्न वाहन गौ वस्त्र भूमि शय्या छत्र और आसन इन आठों का दान परलोक में हितप्रद है परन्तु इन सब में अन्नदान प्रधान है धर्म करनेहारे सुखपूर्व्वक यमलोक में जाते हैं और पापी अनेक प्रकार के दुःख भोगते वहां पहुँचते हैं इसलिये सदा धर्महीं करना चाहिये छिद्रा-

हजार योजन जाकर यमराज के नगर में पहुँचते हैं पुण्यात्मा-ओंको यहीमार्ग थोड़ासा जान पड़ता है और पापियोंके लिये बहुत लम्बा होजाता है पापी जिस मार्ग में चलते हैं उसमें तीखेकांटे कंकर रेता कीचड़ गढ़े और तरवार की धार के समान तीक्ष्ण पत्थर पड़े हैं और लोहे की सुई बिखरी हैं कहीं उस मार्ग में अग्नि लगा है कहीं सिंह वृक व्याघ्र मक्षिका सर्प वृश्चिक आदि दुष्टजन्तु उसमें फिरते हैं किसी ओर मस्त हाथी तीखे सींगोंवाले मतवाले बैल और पर्वताकार वने महिष घूमते हैं जिनको देखतेही प्राण मुक्त होजायँ कहीं डाकिनी शाकिनी रोग और बड़े क्रूर राक्षस क्रीड़ा कर रहे हैं उस मार्ग्ग में कहीं छाया और जल नहीं है इस प्रकार के भयङ्कर मार्ग्ग में यमदूत पापियों को लोह की शृंखलासे पैरों को बांध घसीटते हुये लेजाते हैं उन पापियों की उस समय यह दशा रहती है कि एकाएकी पराधीन मित्र बन्धु आदि से रहित अपने कर्मों को शोचते हुये और रोते हुये वस्त्रहीन भूख प्यास के मारे कण्ठ तालु ओष्ठ सूखेजाते हैं भयभीत और यमदूत उन को बारबार तर्जन करते हैं और पैरोंमें अथवा चोटी में सांकल से बांध खैंचते लेजाते हैं उन में कइयों को अधोमुख और कइयों को ऊर्ध्वमुख करके खींचते हैं कइयों को पिछली ओर दोनों भुजा बांधकर लेजाते हैं कोई रोतेहुये अति दुःखी चोर की भांति बँधेहुये जाते हैं यमदूत अपने शस्त्रों से किसी की नाक काटते हैं किसी के कान किसी की आंख फोड़ते हैं और उन के अंगों को तीखे शस्त्रों से छीलते हैं और रुधिर की धार उन की देह से बहती है इस प्रकार दुःखभोगते २ यमलोक में पहुँचते हैं पुण्यकरने

वाले उत्तम मार्गसे सुखपूर्वक यमलोक में पहुँच सौम्य स्वरूप यमराजका दर्शन करते हैं और यमराज भी उनका बहुत आदरकर कहते हैं कि हे महात्माओ! आपने दिव्य सुखकी प्राप्ति के लिये बहुत पुण्य कियाहै इसलिये इस उत्तम विमानपर चढ़ स्वर्गको जायँ और दिव्य अप्सराओं से विहारकरैं बहुतकाल स्वर्गमें उत्तम भोग भोगकर पुण्यकेक्षय होनेपर यहां आय जो कुछ तुमने थोड़ापाप किया है उसका फल भोगलेना वही यमराज पापी पुरुषों को अतिभयंकर देखपड़ता है कि ऊपरको खड़े जिसकेकेश लम्बीदाढ़ी नीलांजन के पर्वत समान जिसका अतिक्रूर रूप अठारहों भुजों में भांति भांति के शस्त्रलिये क्रोधसे जिसका ओष्ठ फरकरहा है मस्तक में भृकुटी चढ़रही है रक्तवर्ण की पुष्पमाला और वस्त्र धारण किये है मानो अभी सब सृष्टि को ग्रास करलेता है यमराज के समीपही कालाग्नि के समान क्रूर कृष्णवर्ण मृत्यु विराजमान है और काल कृतान्त और मारी महामारीनामक कालकी दो शक्ति तथा अनेकप्रकार के रूपधारण किये सम्पूर्ण रोग वहां बैठे हैं और सबोंने शक्ति शूल अंकुश पाश चक्र खड्ग वज्रदण्डआदि शस्त्र हाथों में धारणकरक्खेहैं और कृष्णवर्ण भयंकर बड़े बलवान् और नानाविधि शस्त्र अस्त्र हाथों में लिये हज़ारों यमदूत चारों ओर खड़े हैं पापीजीव इस रूपमें स्थित यमराजको देखते हैं और यमराज के समीप बैठे हुये चित्रगुप्त उनको भर्त्सन करके कहते हैं कि अरे तुमने ऐसे बुरेकर्म क्योंकिये तुमने पराया धनहरा रूपके गर्व से परस्त्रियों का धर्षण किया और भी अनेकप्रकारके पातक उपपातक तुमने किये अब अपने कर्म्म का फल भोगो

कोई तुम्हारी रक्षा नहीं करसक्ता इसी प्रकार राजाओं को चित्रगुप्त कहते हैं कि अरे राजाओ! तुमने थोड़े दिन राज्य पाकर इतना दुष्कर्म क्यों किया राज्य लोभ से दीन प्रजा का पीड़न किया और अन्याय में प्रवृत्तरहे अनेक प्रकार के विषयों में आसक्त होकर बहुत पाप किये अब वह राज्य और रानी राजकुमार आदि काम न आवेंगे जिनके लिये इतनी भारी पापकी गठरी बांधी वे सब वहांहीं रहे और तुम एकाकी यहां आये अब तुम्हारा वह बल और पराक्रम कहां है जिससे अनाथ प्रजा को सताते थे अब यमदूत तुम को दण्ड देंगे इस भांति राजाओं को तर्जनकर चित्रगुप्त यमदूतों को आज्ञा देते हैं कि इनको लेजाकर नरकोंकी अग्निमें डालो इतनी आज्ञा पातेही राजाके दोनों पैर पकड़ घुमाकर अतिवेगसे यमदूत तप्तशिलापर फेंकते हैं और कोई दूत दौड़कर उसके मस्तक में ताड़न करते हैं तब वह मूर्च्छित होजाताहै कुछ कालके अनन्तर जब उसकी मूर्च्छा खुलती है तब नरक को लेजाते हैं सातवें पाताल में घोर अन्धकार के बीच अति दारुण अट्ठाईस करोड़ नरक हैं जिनमें पापी जीव यातना भोगते हैं वहां यमदूत उन को ऊंचे ऊंचे वृक्षों की शाखाओं में टांग देते हैं और सैकड़ों मन लोह उन के पैरों में बांधते हैं उस बोझ से उनका शरीर टूटनेलगता है और अपने अशुभ कर्म्मों को याद कर कर रोते और चिल्लाते हैं और तपाये हुये कांटों करके युक्त लोहदण्ड से और कशा अर्थात् चाबुकों से यमदूत उन को ताड़न करते हैं जब उन के देहों में घाव पड़जायँ तब उन में क्षार लगाते हैं कभी उन को उतार खौलते हुये तेलके कड़ाह में डालते हैं वहांसे निकाल विष्ठा के

कूप में उनको डुबोते हैं जिनमें कीड़े काट काट खाते हैं फिर मेद रुधिर पूय आदि के कुंडों में उनको पटकते हैं जहां लोहे की चोंच वाले काक और श्वान आदि जीव उनका मांस नोच २ खाते हैं कभी उनको तीक्ष्ण शूलों में पिरोते हैं अ-भक्ष्य भक्षण और मिथ्या भाषण करनेवाली जिह्वा को बहुत दण्ड मिलता है उस जिह्वा को खैंच२ यमदूत आध कोस लंबी बढ़ा लेते हैं और उसके ऊपर अतितीक्ष्ण हल जोतते हैं जो पुरुष माता पिता और गुरुको कठोर वचन बोलते हैं उनके मुख में वज्रकी जोंकें लगाई जाती हैं और जोंकों के व्रणों में खार भरते हैं और फिर उनके मुख में औटता हुवा तेल डालते हैं और उनके मुख में विष्ठा भरते हैं सुवर्ण चोराने वाले और परद्रव्यापहारी कंटकों से व्याप्त तपेहुये लोह के शाल्मलि वृक्ष से बांधे जाते हैं और पीठ के ऊपर लोह के मुद्गरों से ताड़न करते हैं और कभी बड़े कठोर और तीखे करो-त से शिर से लेकर पैर तक उनको चीरते हैं और उनका मांस उनकोही खिलाते हैं जो अतिथि को अन्न जल विना दिये उसके सम्मुखही आप भोजन करते हैं वे इक्षुकी भांति कोल्हू में पेरे जाते हैं असिताल नामक वनमें लेजाकर उन को खण्ड खण्ड करते हैं इस भांति अनेक क्लेश भोगने पर भी उनके प्राण नहीं निकलते रौरव और महारौरव नाम नरक में अत्यन्त पीड़ा देते हैं तपे हुये लोहेके कील पापियोंके पैर हाथ छाती पार्श्व मुख मस्तक नेत्र नाककान आदिमें ठोकते हैं गरमबालूमें डालकर चनेकी भांति भूनते हैं जिस २ पर के साथ सङ्ग कियाहो उस आकार की तप्त लोहे की आलिङ्गन कराते हैं और परपुरुषगामिनी स्त्री को

रूप से लिपटाते हैं और कहते हैं कि हे दुष्टे ! जिस प्रकार तैंने निज पति को त्याग परपुरुष को आलिंगन किया उसी विधि इस लोहपुरुष को भी आलिंगन कर यहां से जल्दी न छुटैगी कभी पापियों को लोहके कुम्भ में डाल ऊपरसे ढक चूल्हे पर चढ़ाय मंदी २ आंच से पकाते हैं किसी समय उखल में डाल मूसल से कूटते हैं कभी अंध कूप में ऊपरसे पटकते हैं क्षार के कूपों में डालते हैं भ्रमर आदि कीटों से कटाते हैं जिससे सब शरीर जर्जर होजाता है दोनों टांग थीचापर चढ़ादेते हैं और दोनों भुजा पिछली ओर लौटाकर दृढ़ बांध देते हैं और लोह के तीक्ष्ण कण्टक भ्रमरों से कटाते हैं मानी और क्रोधी पुरुषों के शरीर को तप्तशिला के ऊपर चन्दन की भांति घिसते हैं करीष और तुषकी अग्निमें दग्ध करते हैं संपूर्ण देह को कीड़ों से खिलाते हैं जो पुरुष शिवालय बाग वापी कूप मठ आदि को नष्ट करते हैं उनको तप्तकुंड में कण्ठ तक डुबोकर नीचे अग्नि देते हैं जो मैथुन आदि अनेक प्रकार के पाप करते हैं उन को अनेक प्रकार के यंत्रों से पीड़न करते हैं और जब तक चन्द्र सूर्य रहें तबतक नरककी अग्नि में पड़े जलते हैं जो गुरुनिन्दा श्रवण करते हैं उनके कर्णों को दण्ड मिलताहै इसी प्रकार जिस २ इन्द्रिय से पाप करे वह २ इन्द्रिय कष्ट पाती है जो पुरुष परस्त्री को हाथ से स्पर्श करते हैं उनका हाथ सूचियों से बेधा जाता है और संपूर्ण शरीर में घाव करके क्षार से लेपन करते हैं जो स्निग्ध दृष्टि से परस्त्री को देखते हैं उनके नेत्र सूचियों से पूरित किये जाते हैं जो देवता अग्नि गुरु ब्राह्मण आदि का पूजन विना किये भोजन करते हैं उनके मुख में तपे हुये लोहके कील भरते हैं जो देवतापर विना चढ़ाये पुष्प

को सूंघते हैं और अपने मस्तकपर धारते हैं उन के नासिका और शिर में लोहकेशंकु गाड़ेजाते हैं जो मूढ़ शिवभक्त और शाश्वत शिवधर्म्म की निन्दाकरते हैं उनकी छाती कण्ठ जिह्वा दन्त संधिआदि में लोहशंकु गाड़ेजाते हैं और क्षार तप्ततेल गलाहुआ ताम्र उन के ऊपर डालते हैं इस भांति सम्पूर्ण नरकों में यातना भोगते हैं जो पुरुष परद्रव्य हरैं शिव के उपकरण चोरैं और चोरी करनेके अभिप्राय से जायँ उन के हाथ पैर लोहे के घनों से चूर्ण कियेजाते हैं और क्षार ताम्र तैलआदि से उन को दग्धकरते हैं जो शिवालय आदि के समीप मूत्र अथवा विष्ठाकरते हैं उन के वृषण और लिंग सूचियों से बेधकर लोह के मुद्गरों से चूर्णकरते हैं और कण्टकयुक्त तपायाहुआ लोहदण्ड उनकी गुदा में देकर शिरसे निकालते हैं और गुदाआदिको क्षार आदि से पूरित करते हैं सब इन्द्रियों का प्रवर्तकमन है इस लिये इन्द्रियों को दुःखहोने से मनको दण्डमिलजाता है जो पुरुष धनवान्हो-करभी दान नहीं देते और घरमें प्राप्तअतिथिका सत्कार नहीं करते उन के हाथ पांवबांध लोह के तोरण में लटका देते हैं और हाथपांवों के तलों में लोहे के कील ठोंकते हैं और उनके वृषणों में लोहका भार लटकादेते हैं लोहकी चोंचवालेपक्षी और तीक्ष्णमुख कीटों से उन को कटाते हैं और उन के शरीर से तिल प्रमाण मांस काटकर उन को नित्य खानेके लिये देते हैं इसप्रकारकी अनेक घोर यातना पापीपुरुष सम्पूर्ण नरकों में भोगते हैं जिनका सौवर्ष में भी वर्णन नहीं होसक्ता अनेकभांतिकी दारुण व्यथा भोगते हैं परन्तु प्राण नहीं जाते और भी इन से अधिक दारुण यातना हैं जिनका

वर्णन नहीं किया मृदुचित्त पुरुष उन को सुनकरही मर रहैं इसकारण उन को नहीं कहा पापी आपही वहांजाय उनका अनुभव करते हैं पुत्र मित्र स्त्री आदिके लिये अनेक प्रकार के पाप करते हैं परन्तु उस समय कोई सहाय नहीं करता केवल एकाकी दुःख भोगता है और प्रलय पर्य्यन्त नरक में पड़ासड़ता है महापातकी पुरुष आचन्द्रतारक नरक में पीड़ा भोगते हैं इस से आधेकाल पर्यन्त चौदह नरकों में पातकी निवास करते हैं और इससेभी अर्द्धसमय उपपातकी नरक में रहते हैं बुद्धिमान् मनुष्य जीवनको चंचल जानकर भी पाप न करे पापसे अवश्यही नरक भोगना पड़ता है पाप का फल दुःख है और नरक से अधिक कहीं दुःख नहीं बड़ा आश्चर्य है कि मनुष्य पापकर्म्म में तत्पर होते हैं और यह कभी नहीं शोचते कि मरण के अनन्तर हमारी क्यागति होगी पापीमनुष्य नरकवास के अनन्तर फिर भूमिपर जन्म लेते हैं और वृक्ष आदि अनेकप्रकार के स्थावर बनते हैं पीछे कीट पतंग पक्षी पशुआदि अनेक योनियों में जन्मलेते हुये अतिदुर्लभ मनुष्यजन्मपाते हैं मनुष्यजन्मपाकर ऐसाकर्म करनाचाहिये जिस से नरक न देखनापड़े धर्म से मनुष्यजन्म मिलता है मनुष्यजन्मपाकर उस धर्मकी वृद्धिकरनीचाहिये वृद्धि न होसके तो उतनाही बनायरक्खे मूल में भी घाटा न होनेदे जिस से नरकभोगनापड़े मनुष्यजन्मपाकरभी ब्राह्मणहोना बहुत दुर्लभ है और सब देशों में यह देश उत्तम है बहुतपुण्यसे भारतवर्ष में जन्महोता है इस देश में जन्मपाकर जो अपने कल्याण के अर्थ पुण्यकरै वही बुद्धिमान् है स्वर्ग भोगभूमि है और यह कर्मभूमिहै यहां जो कर्मकरोगे वही स्वर्ग

में भोगोगे जबतक यहशरीर स्वस्थ रहै तबतक जोकुछ पुण्य बनपड़े सोठीक है फिर कुछभीनहीं होसक्ता दिनरात्रिके बहाने से नित्य एक २ टुकड़ा आयुष्का खण्डित होताजाता है तौभी मनुष्योंको बोध नहींहोता कि एकदिन मृत्युभी आयपहुँचैगा यहतो किसीको निश्चय हैही नहीं कि किसका मृत्यु किस समय में होगा फिर मनुष्य को क्योंकर धैर्यहोय और सुखमिलै यह जानते हैं कि एक दिन इससब सामग्री को छोड़ अकेले चले जायँगे फिर अपने हाथसेही सत्पात्रों को क्यों नहीं बांट देते इस पुरुषके लिये दानही पाथेय अर्थात् रस्ते के लिये भोजन है जे दान करते हैं वे सुखपूर्वक जाते हैं और दान हीन मार्ग में अनेक दुःख पाते भूखे मरतेजाते हैं इन सब बातों को विचार पुण्यही करनाचाहिये और पापसे सदा बचनाचाहिये जोपुरुष अनेक प्रकार के पापकरके भी शिवजी के शरणमें प्राप्तहोजाते हैं वेभी नरक नहीं देखते परन्तु किये हुये पातकों का फल भोगने के लिये शिवजी की आज्ञा से कुछकाल प्रेतोंके राजा बनते हैं पीछे सद्गति को प्राप्तहोते हैं जो सत्पुरुष सर्वप्रकार से श्रीसदाशिवके शरण में प्राप्त हैं वे कभी पाप करके लिप्त नहीं होते जैसे पद्मपत्र जलकरके इस लिये द्वन्द्वसे छुट भक्ति से श्रीशंकरका आराधन करै पञ्च महापातक करनेसे चिरकाल नरकवास होताहै इस लिये इनसे सदा बचै और किसीभांति काभी पाप न करै ॥

सातवां अध्याय ॥

शकटव्रतका माहात्म्य ॥

श्रीकृष्ण जी कहते हैं कि हे महाराज ! यह जो हमने अति गम्भीर नरक समुद्र वर्णन किया यह व्रतउपवासरूप नौका

से तरजाता है अति दुर्लभ मनुष्य जन्म पाकर ऐसा कर्म्म करै जिससे पश्चात्ताप न करना पड़े जिसकी यहां व्रत उपवास आदि की कीर्त्ति बनीहै वह परलोकमें सुख भोगता है व्रत करनेवाले पुरुष सदासुखी होते हैं इस लिये व्रत अवश्य करने चाहिये इसमें एक प्राचीन इतिहास हम वर्णन करते हैं योग सिद्धकरके संसिद्धकोई एकसिद्ध अति भयंकर विकृत रूपधार भूमिपर विचरताथा कि जिसके लम्बे ओष्ठ टूटेदांत पिंगल नेत्र चपटेकान फटा मुख लम्बापेट टेढ़ेपैर और भी संपूर्ण अंग कुरूप थे उसको मूलजालिक नाम ब्राह्मणने देखा और पूछा कि आप स्वर्गसे कब आये और किस प्रयोजन से यहां आगमन भया आपने देवताओं के चित्त को मोहन करनेहारी और स्वर्गके भूषण रम्भा को देखा कि नहीं अब आप स्वर्गमें जायँ तो रम्भासे कहना कि अवन्तिपुरी का निवासी ब्राह्मण तुमको कुशल पूछता था यह ब्राह्मणका वचनसुन सिद्धने चकितहो पूछा कि हे ब्राह्मण! तुमने हमको क्योंकर पहिचाना तब ब्राह्मणने कहा कि महाराज कुरूपपुरुषों का एक दो अंग विकृतहोता है और आपके सबअंगटेढ़े और विकृतहैं इसीसे मैंने अनुमान किया कि ये अपनारूप गुप्तकिये कोई स्वर्ग के निवासी सिद्ध हैं यह ब्राह्मण का वचन सुनतेही सिद्ध वहां से अन्तर्द्धानभया और कईदिनोंके अनन्तर फिर ब्राह्मण के समीप आया और उससे कहा कि हे ब्राह्मण! हम स्वर्गमें गये और इन्द्रकी सभामें जब नृत्यहोचुका उसके अनन्तर एकांतमें रंभासे तुम्हारा संदेशकहा परन्तु रंभाने यहकहा कि मैं उस ब्राह्मणको नहीं जानती यहां तो उसी का नाम जानते हैं जो

निर्मल विद्या पौरुष दान तप यश अथवा व्रत आदि करके युक्तहोय और उसका नाम स्वर्गभर में चिरकाल स्थिर रहता है यह सिद्ध के मुख से रंभाका वचन सुन ब्राह्मण ने कहा कि हम शकट व्रत नियम से करते हैं आप रम्भा से कहदीजिये यह सुनतेही फिर सिद्ध अन्तर्द्धान भया और स्वर्ग में जाकर रम्भा से ब्राह्मणका सन्देशकहा और उस के गुण वर्णन किये तब रम्भा प्रसन्नहोकर कहनेलगी कि हे सिद्ध! महाकाल वन के निवासी उस शकट ब्रह्मचारी को मैं जानतीहूं दर्शन से संभाषणसे एकत्र निवास से और उपकार करने से मनुष्यों का परस्पर स्नेह होता है परन्तु मुझे उस ब्राह्मण का दर्शन संभाषण आदि एक भी नहीं हुआ केवल नाम श्रवण सेही इतना स्नेह होगया है इतना सिद्ध से कह इन्द्र के समीप जाय रम्भा ने ब्राह्मण के व्रत आदिका करना और अपने ऊपर अनुरक्तहोना वर्णन किया इन्द्र ने भी प्रसन्नहो रंभा से पूछ उत्तम विमानमें बैठाय दिव्य वस्त्र भूषण आदिसे अलंकृत कर उस ब्राह्मणको स्वर्गमें बुलाया और बड़ा सत्कार ब्राह्मण का करके रम्भाको उस के अधीन करदिया वह ब्राह्मण भी अपनी प्रिया रम्भाको पाय चिरकाल दिव्यभोग भोगताभया यह शकटव्रतका माहात्म्य हमने संक्षेप से वर्णन किया है राज्यलक्ष्मी उत्तमलोक मनोवाञ्छित फल आदि कोई पदार्थ जगत् में दृढ़ व्रत पुरुष के लिये दुर्लभ नहीं हैं इसलिये सदा व्रत में तत्पर रहना चाहिये॥

आठवां अध्याय॥

तिलक व्रतका विधान और माहात्म्य॥

राजा युधिष्ठिर पूछते हैं कि हे श्रीकृष्णचन्द्र! ब्रह्मा विष्णु

शिव गौरी गणपति दुर्गा सोम अग्नि सूर्य्य आदि देवताओं के व्रत शास्त्रों में वर्णन किये हैं जिनके करनेसे भोग और मोक्ष मिलते हैं उन व्रतों को आप प्रतिपदादि क्रम से वर्णन करैं और जिस देवता की जो तिथि है और उस तिथि को जो क-रनाचाहिये वहभी आप कथन करैं यह राजाका प्रश्न सुन श्रीकृष्णभगवान् कहनेलगे कि हे महाराज! वसन्त ऋतु के आरम्भ में जो शुक्लप्रतिपदा होती है उसदिन नदी अथवा तालाव में स्त्री अथवा पुरुष स्नानकर देवता और पितरों का तर्पण करैं पीछे घरमें आय पिष्ट अर्थात् आटे से पुरुषाकार संवत्सर की मूर्ति लिखकर चन्दन पुष्प धूप दीप नैवेद्य आदि उपचारों से पूजन करै और ऋतु तथा मासों के नमों-तनाममन्त्रों से पूजन और प्रणामकर यह मन्त्र पढ़ै। ॐ संवत्सरोसिपरिवत्सरोसितद्दयनोसितद्वत्सरोसि उषस्ते क-ल्पतामहोरात्रस्ते कल्पतामर्द्धमासास्ते कल्पन्तामृतवस्ते कल्प न्तांवत्सरस्तेकल्पताम्। यह मन्त्र पढ़ वस्त्र से उस को वेष्टित करै पीछे फल पुष्प मोदक आदि नैवेद्य चढ़ाय हाथ जोड़ प्रार्थना करैं कि हे भगवन्! आपके अनुग्रह से सुखपूर्वक वर्ष व्यतीतहोय यह कहकर यथाशक्ति ब्राह्मणको दक्षिणादेवै और उसी दिनसे ललाटको नित्य चन्दनके तिलकसे अलंकृत करै इसप्रकार स्त्री अथवा पुरुष इस व्रतको करै तो उत्तम भोग पावै और भूत प्रेत पिशाच ग्रह डाकिनी और शत्रु उस के म-स्तकमें तिलक देखतेही पराङ्मुख होजाते हैं अब हम एक इतिहास वर्णन करते हैं पूर्वकाल में शत्रुञ्जय नाम एक राजा था और चित्रलेखा नाम उसकी रानी थी उन के बहुत अव-स्था बीतने पर एक पुत्रहुआ जिसके जन्म से उन को बहुत

आनन्द प्राप्त हुआ वह रानी सदा संवत्सरव्रत किया करती और नित्यही मस्तक में तिलक देती कुछ काल के अनन्तर राजा को प्रबल ज्वर होगया और वह बालक भी रोगाक्रान्त हुआ तब रानी अति शोकाकुल भई और दिन रात उनके समीप बैठी रहती परन्तु उन दोनों को वह वातज्वर और शिरोव्यथा इतनी बढ़ी कि मरणासन्न होगये और यमदूत उनके लेजानेको आपहुँचे परन्तु देखा कि उन के समीप तिलक लगाये चित्रलेखा रानी बैठी है उसको देखतेही उलटे लौटे भीतर तिलक के प्रभाव से नहीं प्रवेश करसके यमदूतों के लौटतेही राजा और राजकुमार आरोग्य होनेलगे और थोड़ेही काल में प्रसन्न होगये और चिरकाल तक राज्य किया हे महाराज! यह परम उत्तम व्रत पूर्वकाल में श्रीशिवजी महाराज ने हमको उपदेश किया और हमने आपको सुनाया यह तिलक व्रत सकल अरिष्ट को हरनेहारा है इस व्रतको जो भक्ति से करै वह चिरकाल पर्यन्त संसार के सुख भोग अन्त में स्वर्ग को जाता है॥

नवां अध्याय॥

अशोक व्रतका माहात्म्य और विधान॥

श्रीकृष्णजी कहते हैं कि महाराज आश्विनशुक्ल प्रतिपदा को गन्ध पुष्प धूप दीप सप्तधान्य फल नारिकेल दाड़िम पूरी लड्डू आदि अनेक प्रकार के नैवेद्य से अशोकवृक्ष का पूजनकरै तो कभी शोकको प्राप्त न होय और (पितृभ्रातृपतिश्वश्रूश्वशु णांतथैवच। अशोकशोकशमनोभवसर्वत्रनःकुले) इस मन्त्र श्रद्धा करके अर्घ्य देवै और वस्त्र से अशोकवृक्ष को ष्टितकर पताकाओं से अलंकृत करै इस व्रतको स्त्री भक्ति

से करै वह दमयन्ती स्वाहा वेदवती और सतीकी भांति अपने पति की अतिप्रिया होय वनगमन के समय सीता ने मार्ग में अशोकवृक्ष देखा और भक्ति से गन्ध पुष्प धूप दीप नैवेद्य तिल अक्षत आदि से उसका पूजन कर यह प्रार्थना करी कि हे रक्ताशोक ! मेरा वृद्ध श्वशुर राजा दशरथ चिरकाल जीवै मेरा पति लक्ष्मण आदि देवर और कौशल्या चिरंजीव होयँ इतनी प्रार्थनाकर अशोककी प्रदक्षिणा दे सीता वनको गई जो स्त्री तिल अक्षत जौ गेहूं घृत आदि से अशोकका पूजनकर यह मन्त्र पढ़ै (महावृक्षंमहाशाखं मकरध्वजमन्दिरम् । प्रार्थयेत्वांमहाभागं वनोपवनभूषणम्) पीछे प्रणाम और प्रदक्षिणाकर ब्राह्मणको दक्षिणा दे अपनी सखियों सहित घरको जाय वह स्त्री चिरकालतक अपने पति के सहित संसारके सुखभोग अन्तमें गौरीलोकमें निवास करै यह अशोक व्रत सबप्रकार के शोक और रोग हरनेहारा है॥

दशवां अध्याय॥

करवीरव्रतका विधान और माहात्म्य॥

श्रीकृष्ण कहते हैं कि हे महाराज ! ज्येष्ठमास की शुक्ल प्रतिपदाको सूर्योदय के समय बाग में जाय करवीरवृक्ष का पूजन करै लालसूत्र से वृक्षको वेष्टित कर गन्ध पुष्प धूप दीप नैवेद्य सप्तधान्य नारिकेल नारङ्गी और भी भांति भांति के फलों से पूजनकर इस मन्त्र से प्रार्थना करै। करवीराम्बिका वास नमस्ते भानुवल्लभ । मौलिमण्डलसद्रत्न नमस्ते केशवाश्रय ॥ इस भांति प्रार्थना कर ब्राह्मणको दक्षिणा दे वृक्षकी प्रदक्षिणाकर घरको जाय इस व्रतको सूर्यनारायण की प्रसन्नता के लिये अरुन्धती सावित्री सरस्वती गायत्री

गंगा दमयन्ती और सत्यभामा आदि और भी स्त्रियों ने किया है इस व्रतको जो भक्तिसे करै वह अनेक प्रकारके सुख भोग कर अन्तमें सूर्यलोकको जाता है ॥

ग्यारहवां अध्याय ॥

कोकिल व्रतका विधान और माहात्म्य ॥

राजा युधिष्ठिर पूछते हैं कि हे श्रीकृष्णचन्द्र! पतिव्रता स्त्रियों का पति के साथ जिस व्रतके करने से अत्यन्त स्नेह रहै वह व्रत आप कथन कीजिये यह सुन श्रीकृष्ण बोले कि हे महाराज! यमुनाके तटपर मथुरा नाम नगर है उसमें पूर्व समय रामचन्द्रका भ्राता शत्रुघ्न नाम राजा था उसकी रानी कीर्तिमाला नाम बड़ी पतिव्रता थी उसने एक दिन अपने कुलगुरु वशिष्ठमुनि से प्रार्थना करी कि महाराज कोई ऐसा व्रत बतावैं जिससे सौभाग्यकी वृद्धिहोय तब वशिष्ठजी कहनेलगे कि हे कीर्तिमाले! आषाढ़ की पूर्णमासीको सायंकालके समय यह संकल्पकरै कि श्रावण मास भर नित्य स्नान रात्रिके समय भोजन और भूमि में शयन करूँगी और ब्रह्मचर्य्य से रहूँगी इसभांति स्त्री अथवा पुरुष संकल्प कर प्रभात उठ सब सामग्री ले नदी तालाब आदिपर जाय दन्तधावनकर सुगन्ध युक्त तिल और आंवलेका उबटना लगाय विधिसे स्नानकरै इसप्रकार आठ दिन स्नान करै पीछे सर्वौषधियों का उबटना लगाय आठ दिन स्नान करै शेष दिनोंमें बचा और मुलहठीका उबटना मलकर नहावै स्नानकर सूर्य्य भगवान् का ध्यान कर संध्या और तर्पण करै पीछे तिलपिष्ट करके कोकिला पक्षी लिखै और रक्तचन्दन चम्पा के पुष्प पत्र धूप दीप नैवेद्य तिल

चावल दूर्वा आदिसे पूजनकर इस मन्त्रसे प्रार्थना करे। तिलाः स्नेहं तिलाः सौख्यं त्रिवर्णतिलकप्रिये। सौभाग्यद्रव्य पुत्रांश्च देहि मे कोकिले नमः॥ इसप्रकार पूजन कर घरमें आय भोजनकरै इस विधि से एक मास व्रतकर अन्तमें तिल-पिष्टकी कोकिला बनाय उसके सुवर्णके नेत्रलगाय ताम्रपात्र में स्थापन कर वस्त्र धान्य गुड़ और दक्षिणा सहित श्वश्रू श्वशुर दैवज्ञ पुरोहित अथवा और किसी ब्राह्मणको देवै इस विधिसे जो कोकिलाव्रत करै वह सात जन्मतक सौभाग्य-वतीहोय और अन्तमें उत्तम विमानपर चढ़ गौरीलोकको जाय इसविधि वशिष्ठजी से सुन कीर्तिमाला ने व्रत किया और मनोवाञ्छित फल पाया और भी जो स्त्री इस व्रत को भक्तिसेकरै वह सौभाग्य पावै और जो पुरुष तिलपिष्ट से कोकिला बनाय ताम्रपात्रमें स्थापनकर ब्राह्मण को देवैं वे बहुत कालतक नन्दनवनमें विहारकर मनुष्यलोकमें जन्म लेतेहैं तब अत्यन्त मधुरस्वरवाले होते हैं॥

बारहवां अध्याय॥

बृहद्व्रतका विधान और फल॥

श्रीकृष्ण कहते हैं कि हे महाराज! अब हम सब पाप हरनेहारा एकव्रत कहते हैं जो सुर असुर और मुनियों कोभी दुर्लभ है आश्विन मासकी समाप्ति के दिन उपवास कर रात्रि के समय घृत और पायस भोजनकरै दूसरे दिन प्रभात उठ पवित्रहो आचमनकर बिल्वके काष्ठका दन्तधावन करै पीछे इस मन्त्र से महादेवजी की प्रार्थना करै। अहंदेवव्रतमिदं कर्त्तुमिच्छामि शाश्वतम्। तवाज्ञया महादेव यथानिर्वहतेकुरु॥ फिर नियमकर सोलहवर्ष पर्यन्त प्रतिपदा को व्रतकरै

मार्गशीर्षकी प्रतिपदाको महादेव का स्मरण करताहुआ उपवासकरै और स्नानकर भक्तिसे शिवपूजन करै और रात्रि के समय दीपक जलाय शिवजी को निवेदन करै शिवभक्त सपत्नीक सोलह ब्राह्मणों का वस्त्र भूषणआदि से पूजन कर भोजन करावै अथवा आठदम्पतीका पूजन करै जो सामर्थ्य न होय तो एकही जोड़ेका पूजन करै व्रतकर रात्रि को निराहारही भूमि में शयन करै सूर्योदय होतेही स्नानकर सब सामग्री ले शिवालय में जाय वहां शिवजीको अभ्यंग कराय पंचगव्य से स्नानकरावै फिर क्रम से दूध घृत दही शहद इक्षुरस तिलोदक और गरम जल से स्नानकरावै पीछे कर्पूर चन्दन आदिका लेपकर कमल आदि उत्तम पुष्प चढ़ावै और दो वस्त्र पताका धूप दीप घण्टा भांति भांति के नैवेद्य महादेवजी के अर्पण कर विधि से हवन करै पीछे घर में आय पंचगव्य का प्राशन कर अपने सब बन्धुओं के साथ भोजन करै इस विधानको धनवानहो चाहै निर्धन सामर्थ्य के अनुसार करै और श्रद्धारक्खै कार्त्तिककी प्रतिपदा से लेकर प्रतिमास इसी विधि से व्रत करै और आरम्भ के विधान सेही पारण करै दूसरे वर्ष में पूर्णिमाको नक्तव्रत करके प्रतिपदा और द्वितीया को उपवासकरै और प्रतिमास दो दो उपवास करता जाय और पहिली भांति शिवजीका पूजन कर सुवर्णशृंगी रौप्यखुरी घंटा और कांस्य के दोहनपात्र सहित उत्तमगौ महादेवजी के निमित्त शिवभक्त ब्राह्मणको देवै पीछे सोलह ब्राह्मणोंका विधि से पूजन कर वस्त्र भूषण छत्र जूता दंडआदि उन को देकर उनकी पत्नियोंका भी वस्त्र भूषण आदि से पूजनकर उत्तम भोजन करावै और भी यथाशक्ति ब्राह्मण भोजनकराय दक्षिणादे दीन अन्ध

आदिको भोजन देवे यह व्रत सब प्रकार के पापहरनेहारा है और भूःभुवःस्वः आदि लोकों में अनेक प्रकारके उत्तम भोग देताहै चारोंवर्णों के लिये यह व्रत स्वर्ग की सीढ़ी है जो धन पाकर इसव्रतको न करै वह मूढ़बुद्धिहै धन आयुष् रूप सौभाग्यआदि इसवृत के करने से मिलते हैं प्रतिमास उपवास कर यथाशक्ति ब्राह्मण भोजन करावै और अन्त में आरम्भ के विधान से समाप्त करै वर्षभरसे न्यून भी वृत श्रद्धासे करै तो भी सम्पूर्णफलको प्राप्तहोता है जो इस विधान को पढ़ै अथवा सुनै वह उत्तम फल पावै और जो पुरुष सोलहवर्ष इस व्रत को भक्तिसे करते हैं वे सूर्य्यमण्डल को भेदनकर शिवजी के चरणोंमें प्राप्तहोते हैं॥

तेरहवां अध्याय॥

भद्रव्रतका फल और विधान, यमद्वितीया का विधान॥

राजायुधिष्ठिर पूछते हैं कि हे श्रीकृष्ण! जातिस्मर होना अत्यन्त दुर्लभ है आप यह कृथनकरैं कि ऋषियों के वरदान से देवताओं के सेवन से अथवा तीर्थ स्नान होम जप तप वृत आदि के करने से जातिस्मरता प्राप्तहोसक्ती है कि नहीं और कोई व्रत ऐसा होय जिस के करनेहारा जातिस्मर होय वह आप वर्णन करैं। यह राजा का प्रश्न सुन श्रीकृष्ण भगवान् बोले कि हे महाराज! चारभद्रों का उपवास करने से मनुष्य जातिस्मरहोता है पूर्वकाल में यमुनाके तटपर शुभोदयनाम वैश्य ने यह व्रत कियाथा वह इस के प्रभाव से स्वर्णष्ठीवी नामक सृंजयराजाका पुत्रहुआ और जातिस्मर भया उस को चोरों ने मारडाला फिर नारदजी के प्रभाव से जिया और व्रत के प्रभाव से अपने सम्पूर्ण पूर्व वृत्तान्त को जानता

भया राजा पूछते हैं कि स्वर्णष्ठीवी क्यों कहाया और चोरों ने उसको क्योंमारा और फिर क्योंकर सजीवभया यह आप वर्णन कीजिये यह प्रश्न सुन श्रीकृष्णचन्द्र बोले कि महाराज कुशावती नगरी में सृंजय नाम राजा था एक दिन नारद और पर्वत दोनों मुनि राजाके पासगये उसी समय गूढ़गुल्फा उन्नत कुचोंकरके युक्त कमललोचना लम्बे और कृष्ण केशोंवाली अतिरूपवती युवती राजकन्या वहां आई उसको देख पर्वत ने कहा कि इस तरुणी का क्या उत्तम रूप है और लावण्यकी कैसी झलक है कि जिसमें अंगभी स्फुट नहीं देखपड़ते इसभांति उसपर मोहितहो राजा से पर्वतमुनिने पूछा कि यह हमारे मनको हरनेहारी कौन है राजा ने कहा कि हे पर्वतमुनि ! यह मेरी कन्या है इसी अवसर में नारद बोले कि हे राजन् ! यह अपनीकन्या हमको देदीजिये और जो दुर्लभ वर आपको चाहिये हमसे लीजिये राजाने प्रसन्नहो कहा कि हे नारदजी ! ऐसा पुत्र चाहताहूँ कि वह जहां मूत्रपुरीषआदि त्यागे और जिस स्थानमें निष्ठीवनकरे वहां उत्तम सुवर्ण बनजाय नारदने कहा कि ऐसाही पुत्र तुम्हारे उत्पन्न होगा तब राजा ने अभीष्ट वरपाय अपनी कन्याको वस्त्र भूषण आदि पहिनाय नारदजी से विवाह दिया नारदजीभी ऐसी रूपवती युवती से विवाहकर बहुत प्रसन्नभये परन्तु पर्वतमुनि क्रोधसे लालनेत्रकर नारदजी को कहनेलगे कि हे नारद ! पहिले इस कन्यासे विवाह करनेकी हमने इच्छाकरी और तुमने बीचमें बलात्कार से अपना विवाह करलिया इसलिये तुम्हारा स्वर्गमें गमन न होगा और इस राजाके जो पुत्रहोगा वह भी चोरों के हाथ

माराजायगा यह सुन नारदजी बोले कि हे पर्वत ! तू मूर्ख है तैंने वृद्धों का सेवन नहीं किया जिससे हम को शाप देताहै यह तो कन्याथी इसपर किसी का स्वत्व नहीं माता पिता जिसको देदेवें वही इसका स्वामी है हे पर्वत ! तैंने मूढ़ता से हमको शाप दिया इसलिये तेराभी गमन स्वर्ग में न होगा और जो राजपुत्र को चोर मारडालैंगे तो हम यम लोकसे भी उसको लेआवेंगे इसभांति परस्पर शाप देकर दोनों मुनि अपने आश्रमको गये और सातवें महीने में राजा के पुत्र हुआ वह अतिरूपवान् और जातिस्मर हुआ जहां वह मूत्र पुरीष श्लेष्मआदि त्यागता वहीं सुवर्ण होजाता इसलिये राजाने उसका नाम स्वर्णष्ठीवी रक्खा वह राजपुत्र सब जीवों की बोली समझता था राजाने भी पुत्रके प्रभाव से अनन्त धनपाय राजसूयआदि यज्ञ किये दानदिये कूप तड़ाग देवालय आदि बनवाये और बहुतसी सेना रक्खी इसी अवसर से राजपुत्रकी ख्याति सुन लोभवश होकर चोर उसको उठालेगये जब उसके देहमें कहीं स्वर्ण न देखा तब मारकर जंगल में फेंकगये राजा भी पुत्र को मरा देख अतिदुःखीहो विलाप करनेलगा तब नारदजी वहां आये और प्राचीन राजाओंके अनेक इतिहास सुनाकर राजाका शोक दूरकिया और यमलोकमें जाय राजपुत्र को लेआये राजाभी पुत्रकोपाय अतिप्रसन्न भया और नारदजीसे पूछने लगा कि महाराज यह बालक स्वर्णष्ठीवी किस कर्म के प्रभावसे भया और जातिस्मर काहेसे है तब नारदजीने कहा कि हे राजा ! चतुर्भद्र व्रत इसने कियाहै यह सब उसीका फल है इतना कह नारदजी अपने आश्रमको गये श्रीकृष्णचन्द्र

कहते हैं कि हे महाराज! इस व्रत के करने से उत्तम कुल में जन्म लेकर दाता धनवान् रूपवान् जातिस्मर और दीर्घायुष् होता है चारभद्र इस व्रत के चार पाद हैं मार्गशीर्ष में पहिला फाल्गुन में दूसरा ज्येष्ठ में तीसरा और भाद्र में चतुर्थ भद्र होता है फाल्गुनशुक्ल आदि तीनमास त्रिपुष्करनाम भद्र रूप और लक्ष्मी देनेहारा है ज्येष्ठशुक्ल आदि तीन महीने विराम नामक भद्र सत्य और शौर्यदायक है भाद्रशुक्ल आदि तीनमास निरुगनाम भद्र बहुत विद्या देनेहारा है और मार्ग शुक्लआदि तीनमास सभान नामक भद्र सब कामना देनेहारा है यह भद्रव्रत सब स्त्री पुरुषों को करना चाहिये राजा युधिष्ठिर कहते हैं कि हे श्रीकृष्णचन्द्र! भद्रों का विधान आप विस्तार से कथन करें यह राजा का प्रश्नसुन श्रीकृष्ण कहने लगे कि महाराज यह अतिगुप्त विधान हमने किसी से नहीं कहा है अब आपको श्रवण कराते हैं सावधान होकर सुनिये। मार्गशीर्ष के शुक्लपक्ष में द्वितीया तृतीया चतुर्थी और पंचमी इन चार तिथियों को एक भक्त करै पहिले द्वितीया को मध्याह्न के समय गोबर मृत्तिका आदि लेकर स्नानकरै अब हम सब मन्त्र कहते हैं इन मन्त्रों के अधिकारी ब्राह्मण आदि चारों वर्ण हैं केवल संकीर्ण अर्थात् वर्णसंकरों को इन का अधिकार नहीं है और जो विधवा स्त्री अपने आचार में स्थितहो वह भी इन स्नन मन्त्रों की अधिकारिणी है नदी तलाव वापी कूप और घर में स्नानकरने से दशांश २ फल स्नान से होता है अर्थात् नदी स्नान के फल का दशांश फल तलाव में स्नान करने से होता है इसी भांति और भी जानो प्रथमही (त्वंमृदेवन्दितादेवैः सबले

दैवघातिभिः। समापिवन्दिलाभक्त्या ममाङ्गंविमलंकुरु) इस मन्त्र से मृत्तिका लेकर शरीर में लगाय जल के समीप जाय श्वेत सर्षप तिल वच और सर्वौषधिका उबटना लगाय जल में मण्डल लिख ये मन्त्र पठनकरै (ॐत्वमादिः सर्वदेवानां जगतां च जगन्मय। भूतानां वीरुधानांच रसानां पतयेनमः १ गङ्गासागरगंतोयं पुष्करंनर्मदातथा। यमुना सन्निहत्याच सान्निध्यंकुरुतांसदा २) ये मन्त्रपढ़ स्नान कर शुद्धवस्त्रपहिन सन्ध्या और तर्पणकर घरमें आय नियमपूर्वक रहै और चन्द्रोदयपर्यन्त किसी से सम्भाषण न करै इसीभांति तृतीया आदि तिथियोंमें भी स्नान कर नियमसे रहै और क्रमसे चार तिथियोंमें कृष्ण अच्युत अनन्त और हृषीकेश इन नामों से भगवान् का पूजन भक्तिसे करै पहिले दिन भगवान् के चरणारविन्द का पूजन करै दूसरे दिन नाभिका, तीसरे दिन वक्षःस्थलका और चतुर्थ दिन में नारायण के मस्तक का पूजन विधिसे करै उत्तम पुष्प धूप दीप नैवेद्य आदिसे भक्ति करके पूजन करै और रात्रिको जब चन्द्रोदय होय उस समय शशी चन्द्र शशांक और इन्दु इन नामों से क्रम करके चन्द्रमाको अर्घ्यदेवै चन्दन अगुरु और कर्पूर अर्घ्य में डालै चन्द्रमाने ब्रह्महत्या करीथी उस हत्याको छःभाग करके वृक्ष जल नदी भूमि अग्नि और ब्राह्मणों में बांटदिया और उसी हत्या की निवृत्तिके लिये अर्घ्य देते हैं यह भद्रव्रत का विधान है द्वितीया के दिन प्रेत अर्थात् पितरोंका सञ्चार भयाहै इसलिये द्वितीया को प्रेतसंचरा कहते हैं अग्निष्वात्त बर्हिषद आज्यप सोमप ये सब पितरहैं जो इनका श्रद्धासे पूजन करै उसकी ये भी सब प्रकार से रक्षा

करते हैं कार्तिक शुक्ल द्वितीया के दिन यमुना ने यमराज को भोजन कराया है और उसी दिन नरक के जीव बन्धन से छुटे हैं और यमराज के नगर में बड़ा उत्सव हुआ है इसलिये इसका नाम यमद्वितीया है उस दिन अपने घरमें भोजन न करे बहिन के घर जाय प्रीति से भोजन करै दान देवै और वस्त्र भूषण आदि देकर भगिनियों को प्रसन्न करै अपनी सगी बहिन न होय तो पिता के भाई की कन्या मातुल की पुत्री मौसी अथवा बुवा की बेटी ये भी बहिन हैं इन के हाथ से भोजन करै उस दिन यमुना ने यमराज को प्रीति से भोजन कराया है इस कारण जो पुरुष यमद्वितीया को बहिन के हाथ भोजन करै वह धन यश आयुष् धर्म और अपरिमित सुख पाता है इतना कह श्रीकृष्ण भगवान् ने कहा कि महाराज यह भद्रा का विधान और यमद्वितीया का विधान अतिरहस्य हमने आप को श्रवण कराया अब आप क्या सुनना चाहते हैं॥

चौदहवां अध्याय॥

अशून्यशयनव्रतका विधान और फल॥

राजा युधिष्ठिर पूछते हैं कि हे श्रीकृष्णचन्द्र! आपने कहा कि सब धर्मों का साधन गृहस्थाश्रम है वह गृहस्थाश्रम स्त्री और पुरुषसे होता है पत्नीहीन पुरुष और पुरुषहीन नारी धर्म आदि साधन करने को समर्थ नहीं होते इसलिये आप ऐसा कोई व्रत कथन करैं जिसके करने से स्त्री विधवा न होय और पुरुष पत्नीहीन न होय यह राजाका वचन सुन श्रीकृष्ण भगवान् कहने लगे कि हे महाराज! अशून्य शयन नामक व्रत द्वितीया तिथिको होता है उस के करनेसे स्त्री विधवा नहीं होय और पुरुष पत्नीहीन नहीं होता उस

को विष्णु भगवान् लक्ष्मी सहित शयन करते हैं उस दिन उपवास नक्त अथवा अयाचित व्रत करना चाहिये श्रावण कृष्ण द्वितीया को नदी अथवा तड़ाग में स्नानकर देवता और पितरों का तर्पण करै पीछे मृत्तिका का चतुरस्र एक स्थण्डिल बनाय उसके ऊपर लक्ष्मी सहित भगवान् का आवाहन कर गन्ध पुष्प धूप दीप नैवेद्य और अनेक प्रकार के ऋतु फलों से पूजन कर हाथ जोड़ भक्तिसे इस भांति प्रार्थना करै (श्रीवत्सधारिञ्छ्रीकान्त श्रीधरश्रीपते ऽच्युत । गार्हस्थ्यंमाप्रणाशंमे यातुधर्मार्थकामदम् ॥ अग्नयोमाप्रणश्यन्त माप्रणश्यन्तुदेवताः । पितरोमाप्रणश्यन्तुमत्तोदाम्पत्यसम्भवाः ॥ लक्ष्म्यानशून्यंशयनंकदाचित्त वकेशव । शय्याममाप्यशून्यास्तु तथाजन्मनिजन्मनि) इन मन्त्रोंसे प्रार्थनाकर चन्द्रोदयके समय पंचगव्य प्राशनकरै और ब्राह्मण को यथाशक्ति दक्षिणा देवै इस विधि से चारमासपर्य्यन्त कृष्णपक्षकी द्वितीया को व्रत और नारायण का पूजन करै कार्त्तिकमासकी द्वितीया को लक्ष्मीनारायण की सुवर्ण की मूर्ति बनाय उत्तम शय्यापर स्थापन कर भक्ति से पूजनकर सब सामग्री और जलपूर्ण कलश सहित सत्पात्र ब्राह्मण को देकर ब्राह्मण भोजन करावे व्रतके दिन दधि अक्षत मूल फल पुष्प जल आदि सुवर्ण के पात्र में रख इस मन्त्र करके चन्द्रमा को अर्घ्य देवै (गगनाङ्गनसम्भूत दुग्धाब्धिमथनोद्भव । भाभासितदिगन्तस्त्व निशाकरनमो स्तुते) इसविधि से जो पुरुष चारमास व्रतकरै उसको स्त्री वियोग कभी नहीं होता और सब प्रकार का ऐश्वर्य्य प्राप्त होता है और जो स्त्री भक्तिसे इस व्रतको करै वह तीन जन्म

तक विधवा और दुर्भगा नहीं होती यह अशून्यशयन द्विती-
या का व्रत सब कामना और उत्तम भोग देनेहारा है इसलिये
अवश्यही करना चाहिये ॥

पन्द्रहवां अध्याय ॥

गोत्रिरात्र व्रतका विधान और फल ॥

श्रीकृष्ण कहते हैं कि हे महाराज ! भाद्रशुक्ल तृतीया को
प्रतिवर्ष गोपद नाम व्रत श्रद्धा से करै स्त्री अथवा पुरुष
पहिले स्नानकर दधि अक्षत और पुष्पमाला आदि से गो
का पूजन कर उसके शृंग आदि सब अंगों को भूषित करै
और दिनभर की तृप्तिके योग्य भोजन गोको देवै और आप
भी तैल और लवण आदि क्षार से रहित अग्निपर विना सिद्ध
किया भोजन करै और वनको जाती हुई तथा वनसे आती
हुई गोका पूजन करै इस भांति तीन दिन व्रतरक्खै और नित्य
गो पूजन करै इस व्रत के करनेहारा सौभाग्य रूप लावण्य
धन धान्य यश सन्तानआदि सब पदार्थ पाताहै और उसका
घर नित्य गो और बछड़ों से पूर्ण रहता है और मरण के अन-
न्तर दिव्यरूपधार दिव्यभूषण वस्त्र माला आदि से अलं-
कृत हो विमान में बैठ स्वर्ग को जाता है वहां दिव्य सौयुग
निवास कर विष्णुलोक में प्राप्त हो भगवान् का पार्षद होता है
जो इस गोत्रिरात्र व्रत को करै गौओं को पूजै गोविन्द को
प्रणाम करै गोरस आदि भोजन करै और नियम से रहै वह
अपने मनोवाञ्छित फल पाता है ॥

सोलहवां अध्याय ॥

हरकाली व्रतका विधान और फल ॥

श्रीकृष्ण कहते हैं कि हे महाराज ! भाद्रशुक्ल तृतीया को

सब प्रकार के धान्य एकत्र कर उन पर हरकाली भगवती की मूर्त्ति स्थापन कर गन्ध पुष्प धूप दीप मोदक आदि नैवेद्य और भांति २ के उपचारों से पूजन कर रात्रिके समय गीत नृत्य आदि उत्सव कर जागरण करै प्रभात होतेही सुवासिनी स्त्री उस मूर्त्ति को बड़े उत्सव से लेजाकर जल में विसर्जन करै इतना सुन राजा युधिष्ठिर पूछते हैं कि हे श्रीकृष्ण! हर-कालीनाम भगवती का क्योंकर भया और हरकाली का पूजन करने से स्त्रियों को क्या फल प्राप्त होता है यह आप वर्णनकरैं श्रीकृष्णचन्द्र कहने लगे कि महाराज दक्षप्रजापतिकी कन्या कालीनाम थी और उसका वर्ण भी नीलकमल के समान था वह शिवजी को विवाही। शिवजी भी विवाह के अनन्तर काली भगवती के साथ विहार करने लगे एकसमय विष्णु जी सहित श्रीसदाशिव अपनी सभा के मण्डप में विराज-मान थे उसी अवसर में हास्य करके शिवजी ने कालीभग-वती को बुलाया कि हे प्रिये! हे गौरि! यहां आओ यह शिव जी का वक्र वाक्य सुन भगवती को बहुत क्रोध हुआ और रोदन करने लगीं कि शिवजीने हमारा कृष्णवर्ण देख हास्य करके हमको गौरी कहा है इसलिये इस देह को हम प्रज्वलित अग्नि में हवन करदेंगी यह मन में विचार अपने देह की हरित वर्ण कान्ति को शाद्वल अर्थात् हरीदूर्वायुक्त स्थल में त्याग अपना देह अग्नि में हवन किया और हिमालय की पुत्री गौरीनाम होकर शिवजी के वामांगमें निवास किया उसी दिन से जगत्पूज्य श्रीभगवती का नाम हरकाली भया पूजन इस मन्त्रसे करना चाहिये (हरकर्मसमुत्पन्ने हरकालिहरप्रिये। मन्त्रदैवतमूर्त्तिस्थे प्रणमामिनमोनमः) विसर्जन इस

मन्त्रसे करै (अर्चितासिमयाभक्त्या गच्छदेविसुरालयम्। हरकालिमहागौरि पुनरागमनंत्वया) इस विधिसे प्रतिवर्ष जो स्त्री अथवा पुरुष व्रतकरै वह आरोग्य दीर्घआयुष् सौभाग्य पुत्र पौत्र धन बल ऐश्वर्य आदिपाता है और सौवर्षतक संसार का सुख भोगकर शिवलोक में प्राप्तहोताहै वहां वीरभद्र महाकाल नन्दीश्वर विनायक आदि शिवजी के गण उसकी आज्ञामें रहते हैं जो स्त्री भक्तिसे इस हरकाली व्रत को करती हैं और रात्रिके समय गीत वाद्य नृत्यसे जागरणकर बड़ाउत्सव करती हैं वे पतिकी अतिप्रिया होती हैं॥

सत्रहवां अध्याय॥

ललिता तृतीया व्रतका विधान और फल॥

राजा युधिष्ठिर पूछते हैं कि हे श्रीकृष्णचन्द्र! अब आप द्वादश मासिकव्रत कहैं जिसके करने से सब उत्तम फल प्राप्तहोवैं और प्रत्येक मासका विधान कहैं। यह राजाका प्रश्नसुन श्रीकृष्णभगवान् बोले कि महाराज हम प्राचीन वृत्तान्त कहते हैं आप श्रवण कीजिये। एक समय अनेक प्रकारके पुष्पफलयुक्त वृक्षोंसे शोभित आम्र चंपक अशोक कदम्ब बकुल आदिके पुष्पोंपर विहार करते भ्रमरों से शब्दायमान मयूर राजहंस मृग हाथी सिंह वानर आदि जीवों करके युक्त गन्धर्व यक्ष किन्नर सिद्ध तपस्वी नाग आदिकों करके सेवित कैलासपर्वत में सब देवता और गणों करके पूजित श्रीसदाशिव विराजमान थे उस समय अति विनयसे पार्वतीजी ने प्रार्थनाकरी कि महाराज ऐसा व्रत आप कथनकरैं जिसके करनेसे सौभाग्य धन सुख पुत्र

रूप लक्ष्मी और स्वर्गकी प्राप्तिहोय और दीर्घ आयुष् तथा आरोग्यभी मिलै यह पार्वतीजीका वचन सुन हँसकर शिव जी बोले कि हे प्रिये ! ऐसा कौनपदार्थहै जो आपको दुर्लभ है कि जिसकी प्राप्तिके लिये व्रतपूछतीहो तब पार्वतीजी ने कहा कि महाराज मुझे तो आपके अनुग्रहसे तीनलोकके सब उत्तम पदार्थ प्राप्तही हैं परन्तु संसारमें अनेक स्त्री मेरा आराधन करती हैं कोई पुत्रकेलिये कोई पतिकेलिये कोई सौभाग्यके अर्थ कोई सासुकरके पीड़ित अपना दुःख दूर होनेके लिये और कोई रूपलावण्यकी प्राप्तिकेहेतु मेरा भक्तिसे सेवन करतीहैं और मेरे शरण में प्राप्तहोती हैं जिसप्रकार वे अपना २ अभीष्ट अनायाससे पावैं वह उपाय आप कथनकीजिये उनके अर्थही मेराप्रश्नहै यह पार्वतीजीका वचन सुन शिवजी कहने लगे कि माघशुक्ल तृतीयाको प्रभात उठ शौचकर हाथ पांव और मुखधोकर दन्तधावनकर व्रतके नियम ग्रहण करै और मध्याह्नके समय तिल और आमलक लगाय स्नानकर शुद्धवस्त्र पहिन गन्ध पुष्प धूप दीप कर्पूर कुंकुम और भांति २ के नैवेद्यों से भक्तवत्सला श्रीभगवतीका पूजनकरै पीछे ताम्रपात्रमें जल अक्षत और सुवर्ण डालकर पात्र को हाथमें उठाय अपने अभीष्ट को मनमें ध्यान करताहुआ ये मन्त्रपढ़ै (ब्रह्मवर्त्तसमाख्याता ब्रह्मयोनिविनिर्मिता । भद्रेश्वरीततोदेवी ललिताशङ्करप्रिया १ गङ्गाद्वारेहरंप्राप्तागङ्गाजलपवित्रता । सौभाग्यारोग्यपुत्रार्थमर्थार्थञ्जनवल्लभे २ अजातघटिकांभद्रेप्रतीच्छस्वनमोनमः) ये पढ़ भगवतीको अर्घ्यदेवै और आचमन कर रात्रिके समय भूमि में कुशाकी शय्यापर सोवै दूसरे

दिन प्रभात उठ स्नान कर विधि से भगवती का पूजन कर यथाशक्ति ब्राह्मण भोजन कराय आपभी मौन से भोजन करै इस भांति प्रथम मास में कालिका भगवती का पूजन करै द्वितीयमास में पार्वती का तृतीय में शंकरप्रिया का चतुर्थ में भवानी का पांचवें में गौरीका छठे में दक्षपुत्रीका सातवें में मेनाकीका आठवें में ललिता का नवम में साध्वी का दशवें में सौभाग्यदायिनी का ग्यारहवें में उमा का और बारहवें महीने में गौरी का पूजन करे और बारहों महीनों में क्रम से कुशोदक दुग्ध घृत गोमूत्र गोबर फल निंब बच मुलहठी बिल्वपत्र पंचगव्य और शाक इनको प्राशन करै इस प्रकार बारहमास का व्रत कर श्रद्धा से भगवती का पूजन करै और इन मन्त्रों से प्रार्थना भी करै (ॐकारपूर्वकेदेवि नमस्कारान्तदीपिते। एभिस्तुपूजितामन्त्रैस्तुष्यसि ब्राह्मणप्रिये। तुष्टात्वमीप्सितान्कामान्ददासिप्रीतिपूर्वकम्) व्रत समाप्त होने पर वेदपाठी ब्राह्मण को भार्या सहित बुलाय दोनों का शिव पार्वती बुद्धि से पूजन कर प्रीति से भोजन कराय दक्षिणा वस्त्र भूषण आदि देकर उनको सन्तुष्ट करै ब्राह्मण को शुक्ल वस्त्र और ब्राह्मणी को रक्तवस्त्र देवै इस व्रत को जो स्त्री भक्ति से करै वह अपने पति सहित दिव्यलोक में प्राप्तहो दश हजार वर्ष उत्तम भोग भोगते हैं और मनुष्यलोक में जन्म ले फिर भी दोनों दंपतीही होते हैं और आरोग्य धन विद्या संतान आदि सब उत्तम पदार्थ उनको प्राप्त होते हैं और उस स्त्री के सदा भर्ता अधीन रहता है और वह स्त्री पति को प्राणों से भी अधिक प्रिय होती है और उत्तम रूप लावण्य और सौभाग्य पाती है और जन्मांतर में राजा की रानी हो

भूमि का भोग करती है इस ललिताव्रतके विधान को जो सुने वह भी सब उत्तम फल पावे ॥

अठारहवां अध्याय ॥

अवियोग तृतीया व्रतका विधान और फल ॥

युधिष्ठिर पूछते हैं कि हे श्रीकृष्णचन्द्र ! जिसव्रतके करने से स्त्री पति करके वियुक्त न होय अन्त में शिवलोक में वास पावै और जन्मान्तर में भी विधवा न होय ऐसा व्रत आप वर्णन करें यह राजा का वचन सुन श्रीकृष्ण भगवान् कहने लगे कि हे महाराज ! यही बात पार्वतीजी ने शिव जीसे और अरुंधती ने वशिष्ठजीसे पूछी थी उनने जो कहा वही हम आपको श्रवण कराते हैं । मार्गशीर्ष मास की शुक्लद्वितीया को आचमन कर शिव और पार्वती को दण्ड-प्रणाम करै पीछे गूलर के काष्ठ से दन्तधावन कर स्नान करै और शालिपिष्ट से शिव पार्वती की प्रतिमा बनाय उत्तम पात्र में स्थापन कर विधिपूर्वक उनका पूजन करै और रात्रिके समय खीर का भोजन करै शिव पार्वती का स्मरण करता हुआ भूमि पर शयन करै प्रभात उठ दक्षिणा सहित वह प्रतिमा आचार्य को दे उत्तम भोजन से शिवभक्त ब्राह्मणों को सन्तुष्ट करै और यथाशक्ति दंपति पूजन भी करै इस भांति प्रतिमास व्रत कर पूजन करै अब हम बारह महीनों के नाम पूजन के अर्थ कहते हैं पौषमास में गिरीश और पार्वती का पूजन कर पंचगव्य का प्राशन करै माघ में भव और भवानीका पूजन करै फाल्गुन में महादेव और उमा का अर्चन करै चैत्र में शङ्कर और ललिताका पूजन करै वैशाख में स्थाणु और लोलनेत्राका पूजन करै ज्येष्ठ में रुद्र और रुद्राणीका पू-

जनकरै आषाढ़ में पशुपति और सती का पूजनकरै श्रावण में श्रीकंठ और सुतारा का पूजनकरै भाद्रमें भीम और कालरात्रिका पूजन करै आश्विनमें शिव और दुर्गाका पूजनकरै और कार्त्तिकमास में ईशान और शिवा देवी का भक्तिसे अर्चन करै इन नामों से विना पूजन किये व्रतसिद्धि नहींहोती और बारहमासमें क्रमकरके इनपुष्पों से अर्चनकरै नीलोत्पल करवीर किंशुक चमेली कदम्ब द्रोणमालती बकुल अगस्त्य कमल कुमुद और बिल्वपत्र प्रतिमास में नित्य इन पुष्पों करके पूजनकरै वर्षसमाप्तिमें शिवपूजाकरै सुवर्णका कमल दो वस्त्र ध्वजा दीपक और भांति २ के नैवेद्य शिवजी के अर्प्पण कर आरती करै और यथाशक्ति ब्राह्मण मिथुनों का पूजनकर सुवर्ण की शिव पार्वती की मूर्त्ति बनाय ताम्रपात्र में स्थापन कर उसी पात्र में चौंसठमोती चौंसठमूंगा और चौंसठ पुखराजधर पात्रको वस्त्र से ढक आचार्य्य के अर्पण करै व्रती ब्राह्मण और दम्पती इनसबको सुवर्ण और वस्त्रदेवै अड़तालीस जलपूर्ण कलश छत्र जूता और सुवर्ण ब्राह्मणों को बांटै और दीन अन्ध कृपणों को अन्न देवै किसीको उस दिन विमुख न जानेदेवै इतना करनेका समर्थ न होय तो कुछ न्यूनकरै परन्तु वित्तशाठ्य न करै इस व्रतके करने से रूप सौभाग्य धन आयुष पुत्र और शिवलोक की प्राप्ति होती है इष्ट वियोग कभी नहीं होता जो पतिव्रता इस व्रत को करै वह कभी पति पुत्र सौभाग्य और धनसे वियुक्त नहीं होती और शिवलोक में निवास करतीहै॥

उन्नीसवां अध्याय॥

उमामहेश्वर व्रतका विधान और फल॥

राजायुधिष्ठिर पूछते हैं कि हे कृष्णचन्द्र! किसव्रतके करने से नारियों को बहुतसे पुत्र पौत्र सुवर्ण वस्त्र और सौभाग्य मिलताहै यह आप वर्णनकरैं यह राजाका प्रश्नसुन श्रीकृष्णबोले कि हे महाराज! सब व्रतों में उत्तमव्रत हम वर्णन करतेहैं जिसके करनेसे स्त्रियों को बहुत सन्तान दास दासी भूषण वस्त्र और सौभाग्य प्राप्तहोय यह उमामहेश्वरव्रत अप्सरा विद्याधरी किन्नरी ऋषिकन्या रम्भा सीता अहल्या रोहिणी दमयन्ती तारा अनसूया आदि सब स्त्रियों ने किया है और सब उत्तम स्त्री करती हैं मनुष्य लोक में दुर्भगा और कुरूपा स्त्रियों के हितके लिये पार्वतीजी ने इस व्रतका प्रचार किया है मार्गशीर्ष शुक्ल तृतीया को नियम पूर्वक स्त्री उपवास करै और स्नानकर शिवजी के वामांग में निवास करनेवाली श्रीललिता भगवती का पूजन करै प्रभातउठ नदी में स्नानकर शिव पार्वतीका ध्यान करती हुई यह मन्त्र पढ़े (नमोनमस्तेदेवेश उमादेहार्द्धधारक। नमोदेविनमस्तेस्तु हरकायार्द्धवासिनि) फिर घर में आय दक्षिणभागमें शिवजीकी मूर्त्ति और वामभाग में पार्वतीकी मूर्त्तिस्थापनकर गन्ध पुष्प गुग्गुल धूप दीप और घृतपक्व नैवेद्यसे भक्तिपूर्वक पूजनकर तिल और घृतसे हवनकराय अपने देहकी शुद्धिकेलिये पंचगव्य प्राशनकरै इसभांति बारह महीने पूजनकर प्रसन्न चित्तहो व्रतका उद्यापनकरै चांदीकी शिवमूर्त्ति और सुवर्णकी पार्वतीकी मूर्त्ति बनवाय दोनोंको चांदीके वृषकेऊपर स्थापनकर सबवस्त्र और भू-

षणों से अलंकृत करै चन्दन श्वेतपुष्प श्वेतवस्त्र आदि से शिवजी का और कुंकुम रक्तपुष्प आदि से पार्वतीजीका पूजन करै पीछे शिवभक्तवेदपाठी और शांतचित्त ब्राह्मणोंको भोजन कराय सबको दक्षिणादे प्रदक्षिणाकर यह मन्त्र पढ़ै (उमा महेश्वरौदेवौसर्वसत्वपितामहौ । व्रतेनानेनसम्प्रीतौभवेतां ममसर्वदा) इस भांति प्रार्थनाकर जितक्रोधहो व्रत समाप्त करै इसव्रत को जो स्त्री भक्तिसे करै वह शिवजीके समीप एक कल्प निवास करै और किन्नरी अप्सरा विद्याधरी आदि उसकी सेवामें रहैं फिर मनुष्यलोक में उत्तम कुलके बीच जन्म लेकर रूप यौवन पुत्र आदि सब पदार्थ पाय बहुत काल अपने पतिके साथ संसार के सुखभोग अन्त में शिव सायुज्यपातीहै चांदी और सुवर्णकी शिव पार्वती की प्रतिमा बनाय चांदी के वृषपर स्थापन कर उत्तम वस्त्र भूषणों से अलंकृतकर भक्तिसे पूजाकरै पीछे ब्राह्मणको देवे वह नारी कभी विधवा नहींहोती और पुत्र धन आदि सब पदार्थ पातीहै ॥

बीसवां अध्याय ॥

सौभाग्यशयन व्रतका विधान और फल ॥

श्रीकृष्ण कहतेहैं कि हे महाराज ! अबहम सौभाग्य शयन नाम व्रत कहते हैं जो पुराणों में प्रसिद्धहै प्रलय के समय सब लोकदग्धहोगये तबसबका सौभाग्य इकट्ठाहोकर वैकुण्ठ में विष्णु भगवान् के वक्षस्स्थल में स्थित हुआ फिर जब सृष्टि भई तब आधा सौभाग्य तो ब्रह्माके पुत्र दक्षप्रजापति ने पान करलिया जिससे उनका रूप और लावण्य अधिक भया और आधे से इक्षुताल निष्पाव क्षीर कुसुंभ कुंकुम चन्दन और लवण ये आठ पदार्थ उत्पन्न भये इनका नाम सौभाग्या-

ष्टक है दक्षप्रजापति ने जो सौभाग्य पान किया उससे सती नाम कन्या उत्पन्न भई सबलोक में उसका सौन्दर्य्य अधिक भया इसीसे उसका नाम ललिता भया वह त्रैलोक्य सुन्दरी कन्या शिवजीको विवाही उस जगन्माता के आराधन से भुक्ति मुक्ति और स्वर्ग का राज्य भी मिलता है इतना सुन राजा युधिष्ठिर पूछते भये कि भगवती के आराधन का क्या विधान है आप जगत् के कल्याण के अर्थ वर्णन करें तब श्रीकृष्ण भगवान् कहने लगे कि महाराज चैत्रमास की शुक्ल तृतीया को ललिता भगवती का शिव जीके साथ विवाह हुआ है उस दिन पूर्वाह्न में तिलों से स्नान कर गन्ध पुष्प धूप दीप नैवेद्य भांति भांति के फल गोघृत और गन्धोदक करके भक्ति से शिव पार्वती का पूजन करै फिर पाटला और शम्भु का चरणों में पूजन करै त्रियुगा और शिव का गुल्फों में और भद्रा सहित ईश्वर का मस्तक पर गंधमाल्य आदि से पूजन करै ये सब प्रणवादि नमोंतनाम मन्त्र कहे इसभांति पूजन कर सौभाग्याष्टक का निवेदन करै और रात्रि को भूमि पर सोवै प्रभात उठ स्नान कर ब्राह्मणदंपती का पूजन कर दोधरण अर्थात् छह मासे सुवर्ण और सौभाग्याष्टक ब्राह्मण को देवै और यह कहे कि ललिता देवी प्रसन्न होय इस भांति एक वर्ष पर्यंत प्रतिमास की तृतीया को पूजन करै और चैत्र आदि बारह महीनों में गोशृङ्गजल गोबर मंदार पुष्प बिल्वपत्र दही कुशोदक दूध घृत गोमूत्र घी कृष्ण तिल और पंचगव्य का प्राशन करै और ललिता विजया रुद्रा भवानी कुमुदा शिवा सुदेवी गौरी मंगला कमला सती और उमा इन नामों को दान काल में क्रमसे बारहमहीनों में

उच्चारण करै मल्लिका अशोक कमल उत्पल मालती कु-
टज करवीर बाण अम्लान कुंकुम सिंदुवार और जपा ये
बारह महीनोंमें पूजाके लिये क्रमसे पुष्प कहे हैं इनमें जो
प्राप्तहोय उसीसे भगवतीका पूजन करै परन्तु करवीर पुष्प
सदा भगवती को प्रिय है इसभांति एक वर्ष व्रतकरके उत्तम
शय्या बनवाय उसके ऊपर तीन पल सुवर्ण की उमा महे-
श्वरकी प्रतिमा स्थापनकर ब्राह्मणको देवै और उसके साथ
एक उत्तम गौ भी देवै और भी वस्त्र भूषण गौ दक्षिणा आदि
से यथाशक्ति दम्पतीपूजन करै वित्तशाठ्य न करै इस व्रतके
करने से सब कामना सिद्ध होती हैं और परलोक मेंभी सुख
की प्राप्ति होती सौभाग्य आरोग्य रूप आयुष् वस्त्र भूषण आदि
का तीनसौजन्मतक वियोग नहीं होता जो इसव्रत को बारहवर्ष
करै वह तीन अयुत कल्पपर्यन्त स्वर्ग में रहै जो स्त्री पुरुष
कुमारी इस सौभाग्यशयन नाम व्रतको भक्ति से करै अथवा
इसके माहात्म्य को सुनै वह दिव्यदेह धार स्वर्ग को जाय यह
व्रत कामदेवने शशाङ्किन्दु ने औरभी कई देवताओं ने किया
है और सबको करना चाहिये ॥

इक्कीसवां अध्याय ॥

अनन्तफलदा तृतीयाका विधान और फल ॥

राजा युधिष्ठिर पूछते हैं कि सौभाग्य आरोग्य आदि
फल देनेहारा और शत्रुओं का क्षयकारक भुक्तिमुक्तिप्रद
कोई व्रत आप और भी वर्णन करैं यह राजाका प्रश्न सुन
श्रीकृष्ण कहनेलगे कि हे महाराज! जो व्रत विष्णु भग-
वान् ने लक्ष्मीजी को कहा है वह हम आपको कथन करते हैं
आप सावधान हो श्रवण कीजिये वैशाख भाद्रपद अथवा

मार्गशीर्ष की शुक्ल तृतीयाको श्वेत सरसों का उबटन लगाय स्नानकर गोरोचन मोथा गोमूत्र दही गोबर और चन्दन इन सबको मिलाय मस्तकमें तिलक करै यह तिलक सौभाग्य और आरोग्य करनेहारा है और ललिता भगवती को अतिप्रियहै प्रतिमासकी तृतीयाको सौभाग्यवती स्त्री रक्तवस्त्र पहिन कर विधवा पीतवस्त्र और कुमारी शुक्लवस्त्र पहिन पूजन करै पहिले पञ्चगव्यकरके और केवल दुग्ध करके भगवती को अर्घ्य देकर मधु और गन्धोदक से स्नान कराय श्वेतपुष्प और अनेक प्रकार के फल चढ़ावै धनियां मुलहठी लवण गुड़ दुग्ध घृत अक्षत और तिलोंकरके अर्घ्यदेवै पीछे वरदायैनमः शिवप्रियायैनमः अशोकायैनमः भवान्यैनमः गौर्य्यैनमः त्रिनेत्रायैनमः तुष्ट्यैनमः पुष्ट्यैनमः सृष्ट्यैनमः कात्यायन्यैनमः श्रियैनमः रम्भायैनमः ललितायैनमः वासुदेव्यै नमः इनमन्त्रोंसे क्रमपूर्वक भगवती के चरण गुल्फ जंघा जानु हृदय लोचन ललाट और शिरका पूजनकर अपने अग्रभाग में द्वादशदल कमल लिखै पीछे वाम भागमें गौरी दक्षिण में भवानी और मध्यमें रुद्राणी पश्चिममें सौम्या मदनवासिनी पाटला उग्रा उमा स्वाहा स्वधा तुष्टि मंगला कुमुदा सती और रुद्राणी इनका द्वादशदलमें पूजनकर कर्णिकाके ऊपर ललिताका पूजनकरै अनेकप्रकारके उपचारों से पूजनकर नमस्कारकरै पीछे सुवासिनी को स्नानआदि कराय उसके शिरमें सिंदूर पातनकर रक्तचंदन पुष्प रक्तवस्त्र भूषण आदि से उसका पूजन करै भाद्र आदि बारह महीनों में उत्पल बन्धूक कमल कुन्द कुंकुम सिंदुवार चमेली मल्लिका अशोक पाटला चम्पक कदम्ब इन पुष्पों से क्रमपूर्वक

पूजन करै गोमूत्र गोबर दुग्ध दही घृत कुशोदक गोशृं-गोदक जल पुष्प तिलपिष्ट पंचगव्य और बिल्व इनका बारह महीनों में प्राशनकरै प्रत्येक तृतीया को इसी विधि से पूजन करै ब्राह्मण और ब्राह्मणी को शिव पार्वती मान भोजन कराय वस्त्र भूषण आदि से उनका पूजन करै पुरुषको पीत वस्त्र और स्त्रीको रक्त वस्त्र पहिनावै और भी चौबीस अथवा बारहमिथुन अर्थात् स्त्री पुरुष के जोड़ों का पूजनकर गुरुका पूजन करै जो गुरुपूजन न करैं उनकी सब क्रिया निष्फल होती हैं इस भगवती के पूजन में वित्तशाठ्य नहीं करना चाहिये गर्भिणी सूतिका और रोगिणी स्त्री दूसरे से पूजन करावैं और आप भक्ति से देखैं इस अनन्तफलदा तृतीया का व्रत जो भक्ति से करै वह सौकोटि कल्प पर्यन्त शिवजी के समीप निवास करै धनहीन भी तीनवर्ष इस व्रत को करै और पत्र पुष्प जो मिलैं उनसेही भक्ति करके पूजन करै वह भी सम्पूर्ण फलपाता है जो स्त्री इस व्रत के विधान को श्रवण करै वह भी किन्नरी विद्याधरी आदि करके सेवित पार्वती के समीप निवास करै ॥

बाईसवां अध्याय ॥

रसकल्याणिनी तृतीया का विधान और फल ॥

श्रीकृष्ण कहते हैं कि हे महाराज! अब हम रसकल्याणिनी नाम तृतीया का विधान कहते हैं माघशुक्ल तृतीया को प्रभातही गोदुग्ध और तिलोंकरके स्नानकर शहद और इक्षुरस करके भगवतीको स्नान कराय चमेली अथवा कुंकुम करके पूजन करै पहिले दक्षिणओर के अङ्गोंकी पूजाकर वाम भागके अङ्गपूजे ललितायैनमः इस मन्त्र करके

गुल्फ जंघा जानुका पूजन करै श्रियैनमः इस करके अंगुलियों का नन्दालसायै नमः इस मन्त्र करके कटिका कुमुदायैनमः इस मन्त्र करके ग्रीवाका माधव्यै नमः इस करके भुज और भुजाग्रका कमलायैनमः इस करके मुखका रुद्राण्यैनमः इस करके भ्रू और ललाटका विश्ववासिन्यै नमः इस करके मुकुटका कान्त्यैनमः इससे अलकोंका मदनायैनमः इससे ललाटका मोहिन्यैनमः इस करके भ्रूका चक्रधारिण्यैनमः इस करके नेत्रोंका पुष्ट्यैनमः इस करके मुख का उत्कण्ठिन्यै नमः इस करके कण्ठका जयायै नमः इस करके कन्धराका रम्भायै नमः इस करके वामभुजा का विशोकायै नमः इस करके हाथका मन्मथायै नमः इस करके हृदयका पाटलायै नमः इस करके उदर का सुरलवासिन्यै नमः इस करके कटिका वरपकश्रियै नमः इस करके ऊरुका गौर्यैनमः इस करके गुल्फका गायत्र्यैनमः इस करके शिरका पूजनकर (ॐनमोभवान्यैकामिन्यै वासुदेव्यैजगच्छिवे। आनन्दायै नन्दनायै रुद्रायैच नमोनमः) इस मन्त्र से प्रार्थना कर ब्राह्मण दम्पतीका पूजन करावै इसी विधिसे प्रतिमास पूजन करै और माघ आदि महीनों में क्रमसे लवण गुड़ नवान्न मधुपानक जीरा क्षीर दही घृत शाक धनियां और शर्करा इनको त्यागै अर्थात् भक्षण न करै और प्रतिमास एक पात्र इन पदार्थोंका भर ब्राह्मणको दक्षिणा सहित देवै और माघ में पूजन के अन्त में कुमुदा प्रीयताम् यह कहै इसीभांति फाल्गुन आदि महीनों में माधवी गौरी रम्भा भद्रा जया शिवा उमा शची सती मङ्गला रतिलालसा का नाम ग्रहण करै पंचगव्यका सर्वत्र प्राशनकरै और उपवास करै जो सामर्थ्य न

होय तो नक्तव्रतही करै फिर माघमास आवै तब शर्करा पूर्ण पात्र के ऊपर सुवर्णकी पार्वतीकी मूर्तिस्थापनकर वस्त्र भूषण रत्न आदिसे अलंकृतकर गोमिथुन अर्थात् एकबैल और एक गौ सहित ब्राह्मणको देवै इसविधि से जो व्रत करै वह तत्क्षण सब पापों से मुक्तहोजाता है और हज़ार जन्मतक दुःखी नहीं होता हज़ार अग्निष्टोम यज्ञका फल पाता है जो स्त्री कुमारी विधवा आदि भी इस व्रतको करै तो सब प्रकार के उत्तम फल पावै जो इसविधान को सुनै अथवा व्रत करने के लिये औरोंको उपदेश करै वह भी सब पापों से मुक्त हो पार्वतीलोक में निवास करता है ॥

तेईसवां अध्याय ॥

आर्द्रानन्दकरी तृतीया का विधान और फल ॥

श्रीकृष्णचन्द्र कहते हैं कि हे महाराज! अब हम आर्द्रानन्दकरी तृतीयाका विधान वर्णन करते हैं जब कभी आषाढ़ शुक्ल तृतीयाको रोहिणी अथवा मृगशिरा नक्षत्रहोय उस दिन से इसव्रत का आरम्भ करै कुशा और गन्धोदक करके स्नानकर श्वेत चन्दन श्वेतमाला और श्वेत वस्त्र पहिन उत्तम सिंहासन पर शिव पार्वती की प्रतिमा स्थापन कर रक्तचन्दन रक्तपुष्प आदि से पूजन करै पीछे वासुदेव्यै नमः शोकविनाशिन्यै० रम्भायै० अदित्यै० माधव्यै० आनन्दकारिण्यै० उत्कण्ठिन्यै० उत्पलधारिण्यै० परिरम्भिण्यै० विलासिन्यै० श्रुतिस्मृतिरूपायै० सद्मवासिन्यै० रतिप्रियायै० इन्द्राण्यै० स्वाहायै नमः इनमन्त्रों से भगवती के और शङ्कराय नमः आनन्दाय नमः शिवाय० शूलपाण-

गुल्फ जंघा जानुका पूजन करै श्रियैनमः इस करके अंगुलियों का मन्दाखसायै नमः इस मन्त्र करके कटिका कुमुदायैनमः इस मन्त्र करके ग्रीवाका माधव्यै नमः इस करके भुज और भुजाग्रका कमलायैनमः इस करके मुखका रुद्राण्यैनमः इस करके भ्रू और ललाटका विश्ववासिन्यै नमः इस करके मुकुटका कान्त्यैनमः इससे अलकोंका मदनायैनमः इससे ललाटका मोहिन्यैनमः इस करके भ्रूका चक्रधारिण्यैनमः इस करके नेत्रोंका पुष्ट्यैनमः इस करके मुख का उत्कण्ठिन्यै नमः इस करके कण्ठका जयायै नमः इस करके कन्धराका रम्भायै नमः इस करके वामभुजा का विशोकायै नमः इस करके हाथका मन्मथायै नमः इस करके हृदयका पाटलायै नमः इस करके उदर का सुरतवासिन्यै नमः इस करके कटिका चम्पकश्रियै नमः इस करके ऊरुका गौर्यैनमः इस करके गुल्फका गायत्र्यैनमः इस करके शिरका पूजनकर (ॐनमोभवान्यैकामिन्यै वासुदेव्यैजगच्छ्रियै। आनन्दायै नन्दनायै रुद्रायैच नमोनमः) इस मन्त्र से प्रार्थना कर ब्राह्मण दम्पतीका पूजन करावै इसी विधिसे प्रतिमास पूजन करै और माघ आदि महीनों में क्रमसे लवण गुड़ नवान्न मधुपानक जीरा क्षीर दही घृत शाक धनियां और शर्करा इनको त्यागै अर्थात् भक्षण न करै और प्रतिमास एक पात्र इन पदार्थोंका भर ब्राह्मणको दक्षिणा सहित देवै और माघ में पूजन के अन्त में कुमुदा प्रीयताम् यह कहै इसीभांति फाल्गुन आदि महीनों में माधवी गौरी रम्भा भद्रा जया शिवा उमा शची सती मङ्गला रतिलालसा का नाम ग्रहण करै पंचगव्यका सर्वत्र प्राशनकरै और उपवास करै जो सामर्थ्य न

होय तो नक्तव्रतही करै फिर माघमास आवै तब शर्करा पूर्ण पात्र के ऊपर सुवर्णकी पार्वतीकी मूर्तिस्थापनकर वस्त्र भूषण रत्न आदिसे अलंकृतकर गोमिथुन अर्थात् एकबैल और एक गौ सहित ब्राह्मणको देवै इसविधि से जो व्रत करै वह तत्क्षण सब पापों से मुक्तहोजाता है और हज़ार जन्मतक दुःखी नहीं होता हज़ार अग्निष्टोम यज्ञका फल पाता है जो स्त्री कुमारी विधवा आदि भी इस व्रतको करै तो सब प्रकार के उत्तम फल पावै जो इसविधान को सुनै अथवा व्रत करने के लिये औरोंको उपदेश करै वह भी सब पापों से मुक्त हो पार्वतीलोक में निवास करता है ॥

तेईसवां अध्याय ॥

आर्द्रानन्दकरी तृतीया का विधान और फल ॥

श्रीकृष्णचन्द्र कहते हैं कि हे महाराज! अब हम आर्द्रानन्द-करी तृतीयाका विधान वर्णन करते हैं जब कभी आषाढ़ शुक्ल तृतीयाको रोहिणी अथवा मृगशिरा नक्षत्रहोय उस दिन से इसव्रत का आरम्भ करै कुशा और गन्धोदक करके स्नानकर श्वेतचन्दन श्वेतमाला और श्वेत वस्त्र पहिन उत्तम सिंहासन पर शिव पार्वती की प्रतिमा स्थापन कर रक्तचन्दन रक्तपुष्प आदि से पूजन करै पीछे वासुदेव्यै नमः शोकविनाशिन्यै० रम्भायै० अदित्यै० माधव्यै० आनन्द-कारिण्यै० उत्कण्ठिन्यै० उत्पलधारिण्यै० परिरम्भिण्यै० विभासिन्यै० श्रुतिस्मृतिरूपायै० मदनवासिन्यै० रतिप्रि-यायै० इन्द्राण्यै० स्वाहायै नमः इनमन्त्रों से भगवती के और शङ्कराय नमः आनन्दाय नमः शिवाय० शूलपाण-

ये० शम्भवाय० इन्दुधारिणे० नीलकण्ठाय० रुद्राय
नृत्यशीलाय० द्विपमाक्षाय० विश्ववक्त्राय० विश्वधाम्ने
ताण्डवेशाय ० हव्यवाहाय ० पञ्चशिराय नमः इनमन्त्रों
शिवके पाद जङ्घा ऊरु कटि नाभि स्तन कण्ठ हाथ भुजा मुखने
भ्रू ललाट और मुकुट इन अंगोंका क्रमसे पूजनकर यह मन्
पढ़े (विश्वकायौ विश्वमुखौ विश्वपादकरौ शिवौ । प्रसन्नव
नौवन्देपार्वतीपरमेश्वरौ) इस विधि से पूजनकर मूर्तियों
आगे अनेक प्रकारके कमल शंख स्वस्तिक चक्र वर्द्धमा
आदि के चित्र पंचरंग से लिखै गोमूत्र गोवर क्षीर द
घृत कुशोदक गोशृंगोदक बिल्वपत्र कूटयुक्त जल उशी
अर्थात् खसका जल यवचूर्ण का जल और तिलोदक
क्रम से मार्गशीर्ष आदि महीनों में प्राशनकरै परन्तु य
प्राशन प्रतिपक्ष की द्वितीया को कर शयन करै सर्व
पूजा के लिये शुक्लपुष्प श्रेष्ठ हैं और दानकाल में यह मन
पढ़े (गौरीमेप्रीयतां नित्यमघनाशंचमङ्गलम् । सौभाग्य
मस्तुललिता शर्वाणीसर्वसिद्धये) वर्ष के अन्त में लव
गुड़ चन्दन दो श्वेतवस्त्र इक्षु और भांति भांतिके फलों सहि
सुवर्ण की शिव पार्वती की प्रतिमा सपत्नीक ब्राह्मण क
देवै और गौरीमेप्रीयताम् यह कहै इस आर्द्रानन्दकर
तृतीयाको व्रत करनेहारा पुरुष शिवलोक में निवासकरत
है और इसलोक में भी धन आयुष आरोग्य ऐश्वर्य और सुख
पाता है और कभी उसको शोक नहीं होता प्रतिपक्ष में इस
व्रतको करै और विधि से पूजन करै तो रुद्राणी लोक में प्राप्त
होय जो इस विधान को सुनै अथवा सुनावै वहभी गन्धर्वों
करके पूजित इन्द्रलोक में निवास करै जो स्त्री इस व्रत को

करैं वे संसार के सब सुख भोग अन्त में अपने पति सहित गौरीलोक में निवास करती हैं ॥

चौबीसवां अध्याय ॥

चैत्र भाद्र और माघशुक्ल तृतीया का विधान और फल ॥

राजा युधिष्ठिर कहते हैं कि हे श्रीकृष्णचन्द्र! चैत्र भाद्र और माघकी तृतीया रूप सौभाग्य और पुत्र देनेहारी हैं उन का आपने वर्णन क्यों न किया क्या हम भक्तिरहित हैं अथवा वेदमार्ग का उल्लंघन करनेहारे हैं कि सब जगत् में प्रसिद्ध व्रत आपने हमसे गुप्त रक्खे यह सुन श्रीकृष्ण भगवान् बोले कि हे महाराज! आप धर्मार्थ में कुशल हैं और सर्वज्ञ हैं जो आपकी उन व्रतों के ही श्रवण करने की इच्छा होय तो सुनिये आप से उत्तम श्रोता कौन मिलैगा जया विजया नाम पार्वती जी की सखी हैं उनसे एक समय मुनिकन्याओं ने पूछा कि दोनों तुम भगवती की परिचारिका हो यह बताओ कि किस दिन किन उपचारों और मन्त्रों से पूजन करने करके पार्वती भगवती सन्तुष्ट होती हैं यह सुन जया बोली कि हे मुनिकन्याओ! सुनो सब कामना सिद्ध करनेहारा व्रत मैं वर्णन करती हूँ चैत्र शुक्ल तृतीया को प्रभात उठ दन्तधावन कर व्रत के नियम ग्रहण करै कुंकुम सिंदूर रक्तवस्त्र ताम्बूल आदि सौभाग्यवती के चिह्न धार भक्ति से पूजन करै पहिले अतिसुन्दर मण्डप बनाय उसके मध्य में एक मनोहर वेदी रच एक हाथ प्रमाण का कुण्ड बनावे पीछे स्नान कर उत्तम वस्त्र पहिन मण्डप में जाय ब्राह्मण द्वारा सब कर्म करावै देवता और पितरों का अर्चन कर आठ नामों करके भगवती का पूजन करै कुंकुम कर्पूर अगुरु चन्दन आदि लेपन ल-

गाय अनेक प्रकार के सुगन्ध युक्त पुष्प चढ़ाय धूप दीप आदि उपचार समर्पण करै पार्वती ललिता गौरी गान्धारी शाङ्करी शिवा उमा और सती ये आठ नाम हैं लड्डू अपूप आदि बहुत भांति के घृतपक्व नैवेद्य और दाड़िम नारिकेल आमलक कूष्मांड कर्कटी बीजपूर आदि फल निवेदन करै और शंख तूर्य मृदङ्ग आदि के शब्द और उत्तम गीतसे उत्सव करै इस भांति भक्ति से पार्वती जी का पूजन कर प्रदोष के समय नये मृत्तिका के घटों में जल लाकर उससे स्नान कर पूर्वोक्त विधि से फिर भगवती का अर्च्चन कर गीला वस्त्र पहिने और भगवती के सम्मुख पद्मासन पर बैठकर सम्पूर्ण रात्रिको व्यतीत करै प्रतिपहर में पूजन और घृतयुक्त तिलों से हवन करै उस समय कोई स्त्री गावैं कोई हर्ष से नृत्य करैं कोई भक्ति से भगवती के गुण वर्णन करैं नृत्य करके शिव जी गीत करके पार्वती जी और भक्तिसे सब देवता वश होते हैं ताम्बूल कुंकुम और उत्तम २ पुष्प सुवासिनी स्त्री भगवती को अर्पण करैं उस रात्रि को जागरण का उत्सव होय और नट वेश्याआदि के तमाशा भी होवैं इस भांति प्रसन्नता से रात्रि बिताय प्रभातही स्नान कर पार्वती का पूजन कर तुला के ऊपर चढ़ै गुड़ लवण कुंकुम कर्पूर अगुरु चन्दन आदि द्रव्यों से यथाशक्ति तुलै विशेष करके लवण की तुला करै इस विधि से जो नारी व्रत और तुला दान करै वह अपने पति सहित इन्द्रलोक में निवास कर ब्रह्मलोक में और वहां से शिवलोक में प्राप्तहोवैं और इस लोक में भी रूप सौभाग्य सन्तान धन आदि पावै उसके वंश में दुर्भगा कन्या और दुर्विनीत पुत्र कभी उत्पन्न न होय और उसके घरमें दारिद्र्य

रोग शोक आदि नहीं होते जो कन्या इस व्रत को करै और वस्त्र भूषण आदिसे वाचक ब्राह्मण का पूजनकरै वह अभीष्ट वरपाय संसारका सुखभोगै माघमास में उत्तममणियों करके चैत्रमें विचित्र पुष्पोंकरके और भाद्रमें भांति २ के सस्योंकरके इसी विधानसे पतिव्रता नारी भगवतीका पूजनकरती हैं॥

पच्चीसवां अध्याय॥

अनन्तादि तृतीयाका विधान और फल॥

राजा युधिष्ठिर पूछतेहैं कि हे श्रीकृष्णचन्द्र! शुक्लपक्ष की तृतीया तो बहुतहैं परन्तु अनन्तादि तृतीयाव्रतका आप वर्णनकरैं और प्रतिमासके नाम और प्राशनभी कहैं यह सुन श्रीकृष्ण भगवान् कहनेलगे कि हे महाराज! यह आनन्तर्य व्रत ब्रह्मा विष्णु शिव आदि देवताओं ने भी नहीं कहा गुप्त रक्खा उसको हम वर्णन करते हैं इसव्रतका आरम्भ मार्गशीर्षसे करै द्वितीयाके दिन नक्तव्रतकर तृतीयाको उपवास करै गन्ध पुष्प आदिसे उमादेवी का पूजनकर शर्करा और पूरीका नैवेद्य लगाय आपभी दही प्राशनकर रात्रिको शयन करै और प्रभातउठ ब्राह्मण दम्पती को भोजन करावै इस विधिसे जो नारी व्रतकरै वह सम्पूर्ण अश्वमेध के फलको पातीहै मार्गकृष्ण तृतीयाको कात्यायनी का पूजन कर नारिकेल नैवेद्य लगाय क्षीरप्राशनकर काम क्रोधत्याग रात्रिको शयन करै प्रभातउठ दम्पती पूजन करै तो गोमेध यज्ञके फलको पावै पौषकृष्ण तृतीयाको गौरीका पूजन कर लड्डू नैवेद्य लगाय घृतप्राशन कर शयन करै और प्रभातउठ मिथुन पूजन करै तो नरमेधयज्ञ का फलपावै माघशुक्लतृतीया को सुरनायिका का पूजन कर खण्डके पकान्न नैवेद्य लगाय कुशो-

दूधका प्राशन कर सोवै और मिथुनको मिष्टान्न भोजन करावै तो तीर्थयात्रा का फलपावै माघकृष्ण तृतीयाको स्कन्दमाता का पूजन कर अपूप नैवेद्य लगावै और पंचगव्य प्राशन कर देवीके आगे शयनकर दूसरेदिन भक्तिसे दम्पती पूजा करै तो कन्यादान का फल पावै आषाढ़मास में सतीका पूजन कर दही और सत्तू नैवेद्य लगावै और गोशृंग जल प्राशन कर सोवै और मिथुन पूजा करै तो भूमिदानका फल पावै आषाढ़ कृष्ण तृतीयाको कूष्मांडीका पूजनकर गुड़ और घृत सहित सत्तू नैवेद्य लगाय कुशोदक प्राशन कर सोवै और मिथुन पूजाकरै तो गोसहस्र दानका फल प्राप्तहोय श्रावण में चन्द्रघण्टा का पूजन कर कुल्माष अर्थात् घुँघुनी नैवेद्य लगाय पुष्पोदक प्राशनकर सोवै और दम्पती का पूजन करै तो अभय दानका फलहोय श्रावणकृष्ण तृतीया को रुद्राणी का पूजन कर सक्तुपिण्ड नैवेद्य लगाय पिण्याक अर्थात् खलका प्राशनकर सोवै और ब्राह्मण मिथुन पूजै तो इष्टापूर्त्त का फलपावै भाद्रशुक्ल में कमलालया का पूजनकर कांस्यपात्रमें मांसको रस नैवेद्य लगावै और गन्धोदकका प्राशन कर सोवै प्रभात मिथुन पूजाकरै तो उत्तमलोक पावै भाद्र कृष्ण तृतीयाको दुर्गा का पूजन कर गुड़युक्त पिष्ट और फल नैवेद्य लगाय गोमूत्र प्राशनकर सोवै और मिथुन पूजा करै तो अन्नदानका फल प्राप्तहोय आश्विन में नारायणी का पूजनकर खण्डके पक्वान्न नैवेद्य लगावै चन्दन प्राशनकर सोवै और मिथुन पूजन करै तो अग्निहोत्रका फलपावै कार्त्तिक तृतीयाको स्वाहा का पूजनकरै और घी खण्डयुक्त खीर नैवेद्य लगाय कुसुम्भबीज प्राशन कर सोवै और मिथुन पूजा

करै तो गयाह्निकका फलपावे कार्त्तिककृष्ण तृतीया को चण्डी का पूजन कर गुड़युक्त उत्तम भात नैवेद्य लगावै और कुंकुम प्राशनकर रात्रिको सोवै और मिथुनपूजन करै तो एक भक्तका फलपावे फिर मार्गकृष्ण तृतीयाको गुरुकी आज्ञा पाय शास्त्र की रीतिसे नवनाभ मंडल लिखकर सुवर्णकी शिवपार्वती की प्रतिमा बनावे उन प्रतिमाओं के नेत्रोंमें मोती और नीलम जड़ै ओष्ठों में प्रवाल अर्थात् मूंगा और कानों में रत्नकुंडलपहिनावै शिवजीको सुवर्णके यज्ञोपवीत और पार्वतीजीको मोतियोंके हारसे अलंकृतकर श्वेत और रक्तवस्त्रपहिनावे पीछे गन्ध पुष्प धूप आदि उपचारोंसे पूजनकर मंडल में पूजाकर होमकरै और अपराजिता भगवती का भी अर्चनकरै और मुस्तक अर्थात् नागरमोथा प्राशनकर रात्रिको जागरण और गीत नृत्यआदि उत्सवकरै प्रभात होतेही उत्तम शय्या और तकियों करके युक्त पलंग बिछाय उसपर मण्डल बनाय मण्डलमें शिव पार्वतीकी प्रतिमा स्थापन करै और वितान ध्वज माला किंकिणी दर्पणआदिसे मण्डप को शोभितकरै पीछे शिव पार्वतीका पूजनकर यथाशक्ति ब्राह्मण दम्पतियों को भोजन कराय ताम्बूल और दक्षिणा देवै और लालरङ्ग की सुशील सुन्दर सुवर्णशृंगी रौप्यखुरी कांस्यके दोहनपात्र सहित घण्टासे अलंकृत वस्त्रसे ढकीहुई बहुत दूध देनेहारी सवत्सा गौ जूता खड़ाऊँ छतुरी अनेकप्रकारके भक्ष्य पदार्थ और दक्षिणा गुरुके अर्पणकरै और शिव पार्वतीके आगे प्रणामकर गुरुके चरणों में भी नमस्कारकरै इस भांति इस व्रत को समाप्तकरै जो स्त्री अथवा पुरुष इस व्रतको करै वह दिव्य विमानमें बैठ गन्धर्वलोक ब्रह्मलोक और देवलोक में जाता है

वहां बहुत काल उत्तम भोग भोगकर भूमिपर जन्मलेवै और बड़ा प्रतापी राजाहोय वह स्त्री उसकी पटरानीहोय जिस भांति शिवजीके साथ पार्वती इन्द्रके साथ शची वशिष्ठके साथ अरुन्धती विष्णुके साथ लक्ष्मी और ब्रह्माके साथ सदा सावित्री रहती हैं इसी भांति वह नारी भी जन्म २ में अपने पतिके साथ सुखभोगै इस व्रतको करनेहारी नारी कभी पतिसे वियुक्त नहीं होती और पुत्र पौत्र आदि सब वस्तु पाती है यह आनन्तर्य व्रत हमने अतिगोप्य आपको कहा आपने भी भक्त और विनीत को यह व्रत कहना इस अनंतादि तृतीया को जो स्त्री भक्तिसे करती हैं वे किसीकाल में भी पति पुत्र बन्धु धन और सौभाग्यसे वियुक्त नहीं रहती हैं ॥

छब्बीसवां अध्याय ॥

अक्षयतृतीया का फल और विधान ॥

श्रीकृष्ण कहते हैं कि हे महाराज ! बहुत कहनेसे क्या फल है केवल वैशाखशुक्लतृतीया काही आप माहात्म्य श्रवण करैं उस दिन स्नान दान तप होम स्वाध्याय तर्पण आदि जो कर्मकरै सब अक्षयहोता है सत्ययुगका आरम्भ इसी दिन हुआहै इससे युगादि तृतीया भी इसको कहते हैं शाकल नगरमें प्रिय और सत्य बोलनेहारा देवब्राह्मणपूजक और धर्मात्मा धर्मनामक एक वणिक् था उसने एक दिन कथा में श्रवणकिया कि रोहिणी नक्षत्र और बुधवार करकेयुक्त वैशाखशुक्लतृतीया को जो दान देवै वह अक्षय होता है यह सुन उसने अक्षयतृतीया के दिन गंगा में पितरों का तर्पण किया और जलके भरे घट अन्न सत्तू दही चना गेहूँ गुड़ खांड़आदि इक्षुविकार और सुवर्ण ब्राह्मणोंको दिया उसकी

भार्या निषेधभी करती परन्तु वह अक्षयतृतीया को अवश्य ही दान करता कुछ कालके अनन्तर उसका देहान्त भया तब वह कुशावतीनाम नगरी में जन्मले वहांका राजाबना उसके ऐश्वर्य और धनका अन्तनहीं था बड़ी २ दक्षिणावाले यज्ञकिये ब्राह्मणोंको गौ भूमि सुवर्ण आदि दिन राति देता रहता परन्तु उसके धनका क्षय न भया यह अक्षयतृतीया को जो उसने प्रथमजन्म में दान दियाथा उसका फल है हे महाराज! इस तृतीयाका फल अक्षय है अब हम इसका विधान वर्णनकरते हैं सब रस अन्न शहदकरके युक्त जलकुंभ पितरों की तृप्तिकेलिये ब्राह्मणों को देवै और भांति २ के फल छत्र जूता आदि ग्रीष्मऋतु में उपयुक्त सामग्री अन्न गो भूमि सुवर्ण वस्त्र आदि जो जो पदार्थ अपनेको प्रिय और उत्तम होयँ सब ब्राह्मणों को देने चाहियें यह अतिरहस्य हमने आपसे कथन कियाहै इस तिथिको कियेहुये कर्म का क्षय नहीं होता इसलिये इसकानाम मुनियोंने अक्षयतृतीया रक्खा है॥

सत्ताईसवां अध्याय॥

अंगारकचतुर्थी का विधान और फल॥

श्रीकृष्ण कहतेहैं कि हे महाराज! परमगुह्य आप श्रवण कीजिये जो हमने वनमें भी आपको पूर्वसमय में नहीं कहा वह अब कहते हैं शिव पार्वती के रति के समय एक रुधिर बिन्दु भूमिपर गिरा उसको बड़े यत्न से भूमि ने धारण किया उसी से भौमनामक कुमार उत्पन्न भया शिव जी के अंग से उत्पन्न भया इस से अंगारक कहाया सौभाग्य सुख आदि देने से उसका नाम मंगल रक्खा चतुर्थी के दिन जो स्त्री अथवा पुरुष इस का पूजन करैं वे रूप धन और सौभाग्य पाते

हैं अब हम स्नान होम आदि सहित इस व्रत का विधान कहते हैं पहिले संकल्पकर (त्वंस्र्टेविहितापूर्वं कृष्णेनोद्धर ताकिल। तेनमेदहपापौघं यन्मयापूर्वसंचितम्) इस मन्त्र से जल में स्थित मृत्तिका ग्रहण करै और यह मन्त्र पढ़ता हुआ सूर्यनारायण को दिखावै (आदित्यरश्मिसंततांग झजलविलोखिताम् । तामिमांशिरसिप्रोक्ष्य पूर्वसर्वाङ्गस न्धिषु) पीछे मृत्तिका को सर्वांग में लगाकर (त्वमापोयोनिः सर्वेषां दैत्यदानवरक्षसाम् । स्वेदजोद्भिज्जयोनीनां रसानां पतयेनमः ॥ स्नातोहंसर्वतीर्थेषु सर्वप्रस्रवणेषुच । नदीषुते वखादेषु सुस्नातंतेपुमेभवेत्) इन मन्त्रों को पढ़ स्नान करै (त्वंदूर्वेमृतजन्मासिसर्वदेवैश्चवन्दिता । वन्दितादहतत्स र्वं यन्मयादुष्कृतंकृतम्)इस मन्त्र से दूर्वा को स्पर्शकरै (अ क्षिस्पन्दंभुजस्पन्दंदुःस्वप्नंदुर्विनीतकम् । शत्रूणांचसमुत्थान मश्वत्थंशमयस्वमे) इस मन्त्र से अश्वत्थ को स्पर्श करै (सर्वदेवमयेदेवि दैवतैस्त्वंसुपूजिता । तस्मात्स्पृशामिवन्दा मि वन्दितापापहाभव) इस मन्त्र को पढ़ गौ को स्पर्शकर प्रदक्षिणा करै तो सम्पूर्ण पृथिवी की प्रदक्षिणा का फल पावै पीछे घरमें आय हाथ पांव धोय आचमन कर भौमका पूजन कर (शर्वायशर्वपुत्राय पार्वत्यागोसुतायच । कुजायलोहि ताङ्गाय ग्रहेशाङ्गारकायच) इस मन्त्र कर के खदिर की स- मिधा घृत दुग्ध तिल यव और भी अनेक प्रकार के भक्ष्य भोज्यों से हवन करै इस भांति से हवन कर रत्न सुवर्ण कृष्ण अगुरु चन्दन अथवा और किसी उत्तम काष्ठ की भौम प्रतिमा बनाय सुवर्ण के चांदी के अथवा गुड़ सहित ताम्र के पात्र में स्थापन कर रक्तचन्दन रक्तपुष्प धूप दीप नैवेद्य

फल और रक्तवस्त्र करके भक्तिसे भौम का पूजन करै कई मनुष्य मृत्तिका के पात्र में स्थापन करके भी पूजन करते हैं इस विधि पूजाकर आठ पुष्पांजलिदेवै ॥ ॐअङ्गारकायनमः शिरसि ॐकुजायनमः वदने ॐभौमायनमः स्कन्धयोः ॐमङ्गलाय नमः उरसि ॐक्रूरायनमः कट्याम् ॐआरायनमः जङ्घयोः ॐलोहिताङ्गायनमः गुल्फयोः ॐमहीनन्दनाय नमः पादयोः इन आठ मन्त्रों से आठों अंगों में पुष्पांजलिदेकर घृत गुग्गुलु सहित अगुरु का धूपदेकर पूर्वोक्तरीति से हवन करै पीछे भोजन वस्त्र और दक्षिणा सहित वह मूर्त्ति ब्राह्मण को देवै इस कर्म में वित्तशाठ्य न करै फिर (सर्वौषधिरसोपेते सर्वदा सर्वदायिनि । अवलेभोक्तुकामोहं तद्भुक्तमस्तुतंभवेत्) यह मन्त्र पढ़ भूमिपर अन्नरख आपभी भोजन करै इतना सुन राजा युधिष्ठिर बोले कि हे श्रीकृष्णचन्द्र ! भौमवार युक्त चतुर्थी को नक्तव्रत करने से क्या फल होताहै यह भी आप वर्णन करैं श्रीकृष्ण भगवान् कहते हैं कि हे महाराज ! धनहीन पुरुष इस अंगारकचतुर्थी का व्रतकर भक्ति से भौम का पूजनकरै तो अवश्य ही धनपावै और धनवान् इस विधान से पूजन करै कि उत्तम मंडप बनाय उस के मध्य में वेदीके ऊपर बीसपल सुवर्ण के पात्रमें दशपल अथवा पांचपल सुवर्ण की भौम की मूर्त्ति स्थापनकर गन्ध पुष्प आदि उपचारों करके भक्तिसे पूजन करै इस प्रकार जो पूजन करै वह देह के अन्त में दिव्य विमान पर चढ़ दिव्य नारियों कर के सेवित देवलोक को जाता है वहां बत्तीस चतुर्युग पर्यन्त निवास कर पृथ्वी पर जन्मले बड़ा प्रतापी और दानी राजा होताहै और जो स्त्री इस पूजन को करै वह रूप सौभाग्य पुत्र पौत्रआदि

युक्त होकर चिरकाल अपने पति के साथ भोग करैं और अन्त में स्वर्गवास पावे हे महाराज! यह देवताओं को भी दुर्लभ अंगारकचतुर्थी का रहस्य आप को कहा है इस चतुर्थी को जो देवपूजन पितरों को पिण्डदान और भक्ति से भौम का पूजन करैं वे सब उत्तम फल पाते हैं॥

अट्ठाईसवां अध्याय॥

गणपतिकरकेउपद्रुतपुरुषकेलक्षण और गणपतिके अभिषेक का विधान॥

राजा युधिष्ठिर पूछते हैं कि हे श्रीकृष्णचन्द्र! मनुष्य कार्यों का आरंभ करते हैं परन्तु वे कार्य प्रायः सिद्ध नहीं होते बीचमेंही विघ्नहोजाता है इस में क्या कारण है आप कथन करैं यह राजा का प्रश्न सुन श्रीकृष्णभगवान् कहने लगे कि हे महाराज! शिवजी ने और ब्रह्माजी ने लोकों के कार्य सिद्धि के अर्थ विनायक को नियुक्त किया है और गणों का स्वामी बनाया विनायक करके उपद्रुत अर्थात् जिस पर विनायक का कोपहोय उस पुरुष का हम लक्षण वर्णन करते हैं आप सुनैं विनायक करके उपसृष्ट पुरुष स्वप्न में तैल के बीच डूबताहै मुंडे मूंड़के और कषायवस्त्रधारी पुरुषों को देखता है ऊंट गर्दभ श्वान आदि जीवों पर चढ़ता है चाण्डालों के साथ गमन करता है चलता हुआ अपने पीछे किसी दूसरे को आते देखताहै उदास रहताहै विना कारण दुःखी होताहै राक्षसों करके वेष्टित अपने को देखताहै करवीर की माला पहिनता है गणपति करके उपद्रुत राजा राज्य नहीं पाता कुमारी को पति नहीं मिलता गर्भिणी के सन्तान नहीं होती श्रोत्रिय आचार्य्यत्व को नहीं प्राप्त होता शिष्य अध्ययन नहीं करता व्यापारी को लाभ नहीं

होता और खेती करनेहारे की खेती निष्फल होती है इस दोष के निवृत्त करने के अर्थ श्वेत सरसों का उपटना लगाय पूर्व्वाह्न में सर्व्वौषधि और सर्व्व गन्ध से शिरको धोय स्नान करै इस प्रकार गुरुवार युक्त शुक्ल चतुर्थी को स्नान कर उत्तम आसन पर बैठ चारों वेद जाननेहारे ब्राह्मणों से स्वस्तिवाचन कराय शिव पार्व्वती स्कन्द अग्नि राहु और गणेश का पूजनकरै अश्वस्थान गजस्थान बल्मीक नदीसंगम और ह्रद से मृत्तिका लाकर कुम्भमें डालै और गोरोचन तथा गुग्गुल भी उस जलमें डालै पीछे लाल बैलको चर्म बिछाय उसपर सिंहासन रख उसपर गणपति स्थापनकर इन मन्त्रों से अभिषेक करै (ॐसहस्राक्षंशताधारमृषिभिः पावनंकृतं। तेनत्वामभिषिञ्चामि पावमानाः पुनन्तु ते १ भगन्तेवरुणोराजा भगमिन्द्रोबृहस्पतिः। भगंसूर्य्यश्चवायुश्चभगंसप्तर्षयोविदुः २ यत्तेकेशेषुदौर्भाग्यंसीमन्तेयच्चमूर्द्धनि। ललाटेकर्णयोरक्ष्णोरापस्त द्घ्नन्तुसर्वदा ३) इस प्रकार अभिषेक कर चतुष्पथ में कुशा बिछाय उसके ऊपर चावल भात मांस पुष्प गन्ध तीन प्रकार की सुरा मूली पूरी अपूप खीर दही फल पत्र मोदकआदि रख मितसंमित शालकंटकट और सपुत्र कूष्माण्डको स्वाहान्त नाममन्त्र से बलिदेवै पीछे नमस्कार कर इनका विसर्जनकरै फिर विनायककी माता श्रीजगदम्बाको दूर्वा और सर्षपयुक्त अर्घ्य देकर पुष्पांजलि देवै यह सब कर्म शुक्ल वस्त्र शुक्ल गन्ध और शुक्ल पुष्पमाला से अलंकृतहोकर करै इसभांति पूजनआदि कर ब्राह्मण भोजन कराय दो वस्त्र और दक्षिणा गुरु को देवै इस विधि से विनायक और ग्रहों का पूजन करै तो सब कार्य सिद्धहोवैं विघ्न निवृत्तहोवैं लक्ष्मी प्राप्तहोय इसी भांति सूर्य्यना-

रायणका पूजन करने से भी सर्व फल प्राप्त होते हैं यह विनायक के अभिषेकका विधान हमने कहा है जो पुरुष इसको भक्तिसे करैं उन के सब अभीष्टकार्य सिद्ध होतेहैं और सम्पूर्ण विघ्नभी निवृत्त होते हैं ॥

उनतीसवां अध्याय ॥

विघ्नविनायक चतुर्थीका विधान और फल ॥

श्रीकृष्ण कहते हैं कि हे महाराज ! अब हम ऐसा व्रत कहते हैं जिस के करने से सब विघ्न निवृत्तहोयँ फाल्गुनमास की चतुर्थीको यह व्रत ग्रहणकरै नक्तव्रत रखकर तिलों से पारणकरै तिलोंका हवनकरै और तिलही ब्राह्मण को देवै शूराय स्वाहा वीरायस्वाहा गजाननायस्वाहा लम्बोदरायस्वाहा एकदंष्ट्रायस्वाहा इन मन्त्रों से पूजन और हवनकरै इसप्रकार चार महीने व्रतकर सोनेकी गणपतिकी मूर्त्तिबनाय पूजाकर ब्राह्मण को देवै और खीरके भरे चार ताम्रपात्र और एक तिलपूर्ण पात्र भी गणपति के साथ देवै धनहीन होय तो मृत्तिकाकेही पात्रदेवै और चांदीकी प्रतिमा बनावै इस प्रकार जो व्रतकरै वह सब विघ्नों से मुक्त होता है और अन्त में रुद्रपुरको जाताहै यह वराहभगवान्का वचन है जो चतुर्थी के दिन केवल कृष्ण तिलोंसेभी गणनाथ का अर्चनकरै उसके सब विघ्न दूरहोतेहैं॥

तीसवां अध्याय ॥

शान्तिव्रतका विधान और फल ॥

श्रीकृष्ण कहते हैं अब हम शान्तिव्रत कहते हैं जिसके करने से गृहस्थों को सब प्रकार की शान्ति होय कार्त्तिकशुक्ल

पंचमीसे लेकर एकवर्षपर्यन्त अम्ल अर्थात् खटाई न खाय और नक्तव्रतकर शेषनागके ऊपर स्थित भगवान्का पूजन करै पीछे अनन्ताय नमः (पादौ) धृतराष्ट्राय नमः (कटिम्) तक्षकाय नमः (उदरम्) कर्कोटकाय नमः (उरः) पद्माय नमः (कर्णौ) महापद्माय नमः (भुजौ) शङ्खपालाय नमः (वक्षः) कुलिकाय नमः (शिरः) इन मन्त्रों से इन २ अङ्गों में भगवान् के पूजन करै पीछे मौनसे भगवान् को दुग्ध करके स्नानकराय दुग्ध और तिलोंका हवनकरै वर्षपूरा होने पर सुवर्णकी नारायणप्रतिमा और शेषनाग बनवाय उनका पूजनकर ब्राह्मणको देवै और सवत्सागौ पायससेपूर्ण कांस्यपात्र दोवस्त्र और सुवर्णभी ब्राह्मणको देवै पीछे ब्राह्मण भोजनकराय व्रत समाप्तकरै इस व्रतको जो करै उसके सब प्रकारकी शान्तिहोय और नागोंका भयभी कभी न होय॥

इकतीसवां अध्याय॥

सरस्वतीव्रतका विधान और फल॥

राजा युधिष्ठिर पूछते हैं कि मधुरवाणी विद्यामें अति कुशलता सौभाग्य दीर्घआयुष् और स्त्री पुरुष का अवियोग कौनसे व्रतके करनेसे होता है यह आप कथनकरैं यह राजा का प्रश्नसुन श्रीकृष्ण भगवान् बोले कि हे महाराज! बहुत उत्तम बात आपने पूछी अब हम सारस्वत व्रतका विधान कहते हैं जिसके कीर्त्तनमात्रसे भी सरस्वती प्रसन्न होती हैं पंचमी आदित्यवारके दिनसे व्रतका आरम्भ करै उसदिन भक्तिसे स्वस्तिवाचन कराय गायत्रीका पूजनकरै शुक्लगंध शुक्लमाला और श्वेत वस्त्रआदिसे पूजाकर हाथजोड़ (यथा नदेवि भगवान् ब्रह्मालोकपितामहः। त्वांपरित्यज्यसन्तिष्ठेत्त

थाभवचरम्भना ॥ वेदशास्त्राणिसर्वाणि नृत्यगीतादिकं च यत्। नहीनं त्वयादेवि तथामे सन्तु सिद्धयः ॥ लक्ष्मीमेधावरातुष्टिर्गौरीपुष्टिःप्रभावती । एताभिःपाहितनुभिरष्टभिर्मांसरस्वति) इन मन्त्रोंसे प्रार्थनाकरै और गायत्रीका ऐसा ध्यान करै कि श्वेत वस्त्र पहिने वीणा अक्षमाला कमण्डलु और पुस्तक चारों भुजाओंमें धारे सब भूषणोंसे भूषित है इस विधि पूजनकर मौनसे रात्रिको भोजनकरै और प्रत्येक पंचमीको सुवासिनी का पूजनकर सेरभर चावल घृतपात्र दुग्ध और सुवर्ण उसको देवै और यह कहै कि (गायत्री प्रीयताम्) सायङ्कालके समय मौनसे रहै इस भांति तेरह महीने व्रतकरै पीछे श्वेतभात और दही आदि से ब्राह्मण भोजन कराय दो श्वेतवस्त्र सवत्सा गौ चन्दन तन्दुल आदि ब्राह्मणको देवै और गुरुका पूजनकरै वित्तशाठ्य न करै इस विधिसे जो पुरुष सारस्वत व्रतकरै वह विद्वान् धनवान् कवि और मधुरकण्ठ होताहै और तीन अयुत कल्पपर्यन्त ब्रह्मलोक में निवास करता है जो इस व्रतके माहात्म्यको पढ़ै अथवा सुनै वह इतनाकाल विद्याधरलोकमें रहता है और स्त्रीभी इस व्रतको करनेसे सब फल पाती हैं ॥

बत्तीसवां अध्याय ॥

नागपंचमी के व्रतका विधान और फल ॥

श्रीकृष्णचन्द्र कहते हैं कि हे महाराज! पंचमीतिथि नागोंको प्रिय है उस दिन नागलोकमें बड़ा उत्सव होता है जो उस दिन नागोंका पूजनकरै उसको वासुकि तक्षक कालिय मणिभद्र धृतराष्ट्र ऐरावत कर्कोटक धनंजय आदि नाग अभय देतेहैं और पंचमीके दिन जो दुग्धसे नागोंको स्नान करावै

उसके कुलमें सर्प भय नहीं होता माता के शाप से नाग दग्ध होनेलगे तब दुग्ध से उनकी दाह शान्ति भई इसी से उनको दुग्ध स्नान प्रिय है इतना सुन राजा युधिष्ठिर पूछते हैं कि हे श्रीकृष्णचन्द्र! माता ने नागों को क्यों शाप दिया और शाप मोक्ष क्योंकर हुआ राजा का प्रश्न सुन श्रीकृष्णचन्द्र कहने लगे कि हे महाराज! समुद्र मथन के समय अतिशुक्ल वर्ण उच्चैःश्रवा नाम अश्व निकला उसको देख गरुड़ की माता विनता ने अपनी सपत्नी नागों की माता कद्रू से कहा कि देखो यह अश्व कैसा श्वेत है तब कद्रू बोली कि श्वेत तो नहीं मुझे कृष्ण देख पड़ता है विनता ने कहा कि जो तू इस अश्व में एक बाल भी कृष्ण दिखला देवै तो मैं तेरी दासी होजाऊँ और मैं तुझे श्वेत दिखादूँ तो तू मेरी दासी होजा इस प्रकार प्रण करके दोनों अपने २ स्थान को गईं कद्रूने अपने पुत्र नागों को बुलाकर कहा कि तुम कृष्णवर्ण के बाल होकर अश्व के शरीर में स्थित होजाओ जिससे मैं विनता को दासी बनाऊँ यह माता का वचन सुन नाग बोले कि हे माता! यह अधर्म्म हम नहीं करते यह पुत्रोंका वचन सुन क्रोध कर कद्रू ने शाप दिया कि जनमेजय राजा सर्पयज्ञ करेगा उसमें तुम दग्ध होजाओगे यह माता का शापसुन दुःख से वासुकि नाग मूर्च्छित होगया तब उसको सांत्वन कर ब्रह्माजी ने कहा कि हे वासुकि! शोक मत कर हमारा वचन सुन यह जरत्कारु नाम तेरी बहिन है इसको बड़े तपस्वी जरत्कारु मुनि को विवाह देना इनसे आस्तीक नामक पुत्र उत्पन्न होगा वह राजा जनमेजय को अपने वचनों से प्रसन्न कर सर्पों को भय देनेहारे यज्ञको निवारण करेगा इसलिये अतिरूपवती

यह अपनी भगिनी जरत्कारु मुनि को दो और भी जो कुछ मुनि कहैं उसको विना विचारे अङ्गीकार करो इसी में तुम्हारा कल्याण है यह ब्रह्माजी का वचन सुन नाग बड़े हर्ष को प्राप्त भये यह ब्रह्माजी का वरदान पञ्चमी तिथि को भया और आस्तीक ने भी सर्पसत्र पञ्चमी को निवारण किया इस कारण पञ्चमी नागों को अति प्रिय भई पञ्चमी के दिन नागों का पूजन करै पीछे ब्राह्मण भोजन कराय आप भी अपने मित्र बन्धु भृत्य आदि सहित भोजन करै प्रथम मधुर भोजन करै इस व्रत को करनेहारा पुरुष मरने के अनन्तर विमान में बैठ नागलोक को जाता है वहां बहुत काल सुख भोगकर पांच जन्मतक बड़ा प्रतापी आधि व्याधि रहित सब सम्पत्तियों करके युक्त राजा होता है इस लिये घृत दुग्ध आदि करके अवश्य नागों का पूजन करना चाहिये इतना सुन राजा युधिष्ठिर पूछतेभये कि हे श्रीकृष्णचन्द्र! जिसको सर्प काटै और वह मृत्युवश होजाय फिर किस गति को प्राप्त होता है यह आप कथन करैं। तब श्रीकृष्ण भगवान् कहने लगे कि महाराज वह पुरुष नीचे जाय निर्विष सर्प होता है फिर राजा युधिष्ठिर पूछते हैं कि जिसके माता पिता भ्राता बहिन पुत्र कन्या आदि कोई सर्प के काटने से मृत हुये हों वह उनके उद्धार के लिये कौन उपाय करै यह आप कहैं। यह राजा का प्रश्न सुन श्रीकृष्णचन्द्र कहने लगे कि हे महाराज! भाद्रशुक्ल पञ्चमी से व्रत का आरम्भ करै चतुर्थी के दिन एक भक्त कर पञ्चमी को नक्तव्रत करै और नागों का पूजन करै सुवर्ण अथवा चांदी का पञ्च फण युक्त नाग बनाय करवीर कमल चमेली आदि पुष्प धूप भांति भांति के

नैवेद्यों से उसको पूजै पीछे घृत पायस और मोदक ब्राह्मण को भोजन करावै इसविधि प्रतिमास की शुक्लपंचमी को व्रत करै और अनन्त वासुकि शंख पद्म कंवल कर्कोटक अश्वतर धृतराष्ट्र शंखपाल कालिय तक्षक और पिङ्गल इनका बारह महीनों में क्रम से पूजन करै वर्षभर व्रत करके ब्राह्मण भोजन करावै और इतिहासवेत्ता को सुवर्ण का नाग वस्त्र और सवत्सा गौ देकर व्रत समाप्त करै। इस व्रत को जो करै उसके वंशमें जो सर्पदष्ट होकर मृत हुआ हो वह सद्गति को प्राप्त होता है जो इस विधान को केवल श्रवणही करै उसके भी कुटुम्ब में सर्प भीति नहीं होती और जो पुरुष भाद्रशुक्ल पंचमी को रंग से कृष्णवर्ण के नाग लिखकर गन्ध पुष्प घृत गुग्गुल के धूप और पायस आदि नैवेद्य से उनका पूजन करते हैं उनके ऊपर तक्षक आदि नाग प्रसन्न होते हैं और उनके कुलमें सर्पका भय नहीं होता आश्विनकी पंचमी को कुशाके नाग बनाय इन्द्राणी सहित उनका पूजन करै घृत जल और दुग्ध करके उनको स्नान कराय दुग्ध और गोधूमसे बने पक्वान्नका नैवेद्य लगावै और नक्तव्रत करै उसके ऊपर शेष आदि महानाग प्रसन्न होकर सब प्रकारकी शान्ति करते हैं और उत्तम लोकको प्राप्त होता है यह पंचमीकल्प हमने वर्णन किया जहां यह पढ़ाजाय वहां सर्पभय नहीं होता॥

तैंतीसवां अध्याय॥

श्रीपंचमी के व्रतका विधान और फल॥

राजा युधिष्ठिर पूछते हैं कि हे श्रीकृष्णचन्द्र! व्रत होम तप जप नमस्कार आदि जिस कर्म के करने से स्थिरलक्ष्मी

प्राप्त होय उसको आप वर्णन करें। यह राजाका वचन सुन श्रीकृष्णभगवान् कहनेलगे कि हे महाराज! प्रथम भृगुमुनि की कन्या लक्ष्मीभई और विष्णुभगवान् ने उस कमललोचना गजगामिनी भामिनी को अतिरूपवती देख अपने साथ उसका विवाह किया वह भी भगवान् को वर पाय अपने को कृतार्थ मानती भई और सम्पूर्ण जगत् लक्ष्मी के कटाक्ष पातसे आनंदित होता भया प्रजामें क्षेम और सुभिक्ष रहने लगा सब उपद्रव शान्तहोगये ब्राह्मण हवन करने लगे देवता हवि भोजन करते थे राजा चारों वर्णोंका पालन प्रसन्नता पूर्वक करते थे देवता बड़े बड़े आनन्द में थे यह देख विरोचन आदि दैत्य लक्ष्मी प्राप्तिके लिये तप करनेलगे और अतिउत्तम आचरण और धर्म में प्रवृत्त भये कुछ कालके अनन्तर देवताओं को लक्ष्मी का मद होगया और शौच आचार सब त्याग दिया तब देवताओं को सत्य शौच आदिसे हीन देख लक्ष्मी दैत्यों के समीप चलीगई और देवता श्रीहीन भये परन्तु लक्ष्मी के प्राप्त होतेही दैत्यों को भी बड़ा गर्व हुआ कहनेलगे कि हमहीं देवता हैं हम यज्ञ हैं हम ब्राह्मण हैं सम्पूर्ण जगत् हमारा रूप है ब्रह्मा विष्णु इन्द्र चन्द्र आदि हम हैं इसप्रकार अति अहङ्कार युक्त हो नाना प्रकार के अनर्थ करनेलगे। तब लक्ष्मी व्याकुलहोकर दैत्योंको भी त्याग क्षीरसागर में प्रवेशकरतीभई क्षीरसागर में लक्ष्मी के प्रवेश करजाने से सारा जगत् श्रीहीन अति मलिन होगया उससमय इन्द्र ने बृहस्पति से पूछा कि महाराज कोई ऐसा व्रत बतावैं जिसके करने से लक्ष्मी प्राप्त होय और फिर त्याग न करै अपने इष्टमित्रों के उपभोग में

आवै लक्ष्मी पायकर भी कन्या की भांति उसका पालन न करना पड़ै क्योंकि जिस लक्ष्मी को अपने मित्र बन्धु भृत्य आदि न भोगें वह वृथा है यह इन्द्र का वचन सुन बृहस्पति कहने लगे कि हे इन्द्र! यह अतिगुप्त श्रीपंचमी का व्रत आप को हम उपदेश करते हैं जो हमने आज तक किसी को नहीं बताया इस वृत को तुम करो तो तुम्हारा अभीष्ट सिद्ध होय इतना कह बृहस्पति ने सरहस्य श्रीपंचमी वृत का विधान इन्द्र को उपदेश किया इन्द्र उस व्रत को करने लगा और सब देवता दैत्य दानव गन्धर्व यक्ष राक्षस सिद्ध विद्याधर नाग ब्राह्मण और ऋषि भी इन्द्र को व्रत करते देख वृत करने लगे कोई सात्त्विक भाव से कोई राजस से और कोई तामस भाव से वृत करते थे कुछ काल के अनन्तर व्रत समाप्त कर उत्तम बल और तेज पाकर सब ने विचार किया कि समुद्र को मथन कर लक्ष्मी और अमृत को ग्रहण करैं यह विचार परस्पर कर मन्दर पर्वत को मथान और वासुकिनाग को नेता बनाय समुद्र मथन करने लगे मथन करते २ पहिले अति उज्ज्वल चन्द्रमा निकला पीछे थोड़े काल के अनन्तर लक्ष्मी का प्रादुर्भाव भया लक्ष्मी के कटाक्ष परतेही सब देवता और दैत्य अपने २ स्वरूप को प्राप्तहो परमआनन्द को प्राप्त भये इन्द्र ने राजस भाव से व्रत किया था इसलिये त्रिभुवन का राज्य पाया और दैत्यों ने तामस भाव से किया इसलिये ऐश्वर्य पाकर भी ऐश्वर्यहीन होगये हे महाराज! इस भांति इस व्रत के प्रभाव से श्रीहीन जगत् फिर श्रीयुक्त हुआ इतना सुन राजा युधिष्ठिर बोले कि हे श्रीकृष्णचन्द्र! यह व्रत किस विधि से किया जाता है और कबसे इसका प्रारम्भ होता है यह

आप वर्णन करें यह राजा का वचन सुन श्रीकृष्ण भगवान् कहने लगे कि हे महाराज! मार्गशीर्ष की शुक्ल पंचमी को यह व्रत करना चाहिये पहिले प्रभात उठ शौच दन्तधावन आदि कर व्रत के नियम धारण करै पीछे नदीपर जाय अथवा अपने घरमेंही स्नान कर दो वस्त्रधार देवता और पितरों का पूजन तर्पण कर घरमें आय लक्ष्मी का पूजन करै पहिले सुवर्ण चांदी ताम्र काष्ठ अथवा चित्रपट मेंही लक्ष्मी की मूर्त्ति बनावै कमल के ऊपर विराजमान हाथों में कमल पुष्प धारण किये सब भूषणों से अलंकृत कमललोचना और दिग्गज जिसको सुवर्ण के कलशों से स्नान करारहे हैं इस ध्यान की मूर्त्ति बनाय सब उपचारों से पूजन कर। चपलायै नमः इस मन्त्रकरके पादोंका चंचलायै नमः इस करके जानुओं का कमलवासिन्यै ० इस करके कटिकादेव्यै नमः इस करके नाभि का मन्मथवासिन्यै ० इस करके स्तनों का ललितायै ० इसकरके दोनों भुजाओं का उत्कण्ठिण्यै ० इसकरके कण्ठका मध्याय० इसकरके मुखका और श्रियै नमः इस मन्त्रकरके शिर का पूजन कर भक्ति से नैवेद्य और भांति २ के फल निवेदनकरै पीछे पुष्प और कुंकुम आदि से सुवासिनी का पूजनकर मधुर भोजन उसको कराय प्रणाम कर विसर्जन करै सेरभर चावल और घृत का पात्र ब्राह्मण को देकर (श्रीशःप्रीयताम्) यहकहै इस भांति पूजन कर मौनसे भोजन करै प्रतिमास यह व्रतकरै और श्री लक्ष्मी कमला सम्पत् उमा नारायणी पद्मा धृति स्थिति पुष्टि ऋद्धि सिद्धि इनका बारह महीनोंमें क्रमसे पूजन और कीर्त्तन करै बारहवें महीने की पंचमी को वस्त्रसे उत्तम मण्डप बनाय गन्ध पुष्प आदि से अलंकृत कर उसके मध्य में सब

उपकरणों सहित लक्ष्मी की मूर्त्ति स्थापन करै आठ मोती रेशमीवस्त्र सप्तधातु सप्तधान्य खड़ाऊँ जूता छतरी अनेक प्रकार के पात्र और भांति २ के भोजन वहां स्थापन कर विधिसे लक्ष्मी का पूजन करै पीछे वेदवेत्ता कुटुम्बी और सदाचार ब्राह्मणको सवत्सागौसहित यह सब सामग्री देवै और यथाशक्ति ब्राह्मण भोजन कराय सबको दक्षिणा देवै। इस विधि से जो श्रीपंचमी का व्रतकरै वह अपने इक्कीस कुल सहित लक्ष्मीलोक में निवास करै जो सभर्तृका स्त्री इस व्रतको करै वह रूप सन्तान और धनपावै तथा पतिकी अति प्रिया बनीरहै जो भक्ति से पंचमी का व्रतकर भृगुकी पुत्री और विष्णु भगवान् की प्रिया श्रीलक्ष्मीजी का भक्तिसे पूजन करते हैं वे संसार में चिरकाल तक राज्य आदि सुख भोगकर अन्त में विष्णुलोकके बीच निवास करते हैं॥

चौंतीसवां अध्याय॥

विशोकषष्ठीव्रत का विधान और फल॥

राजा युधिष्ठिर कहते हैं कि हे श्रीकृष्णचन्द्र! आपके मुखसे पंचमीका विधान सुन चित्त बहुत प्रसन्न हुआ अब आप षष्ठीका विधान वर्णन कीजिये जिसके करने से सब कामना प्राप्त होयँ यह राजा का वचन सुन श्रीकृष्णचन्द्र कहने लगे कि हे महाराज! हम विशोकषष्ठीका विधान कहते हैं जिसके उपवास करने से मनुष्य को शोक नहीं होता मार्गशुक्ल पंचमीको प्रभात उठ दन्तधावन कर स्नान आदि करै और ब्रह्मचर्य से रहै दूसरे दिन स्नान आदि कर सुवर्ण का कमल बनवाय उसको सूर्य्यनारायण का स्वरूप मान रक्तचन्दन रक्तकरवीर पुष्प और रक्तवर्ण के दोवस्त्र धूप दीप

नैवेद्य आदि से पूजन कर हाथ जोड़ (यथाविशोकभवने त्वमेवादित्यसर्वदा । विशोकंकुरुमांदेव भक्तंजन्मनिजन्मनि) इस मन्त्र से प्रार्थना करै इस विधि पूजन कर ब्राह्मण भोजन कराय गोमूत्र प्राशन करै और गुड़ अन्न उत्तम दो वस्त्र और सुवर्ण ब्राह्मणको देकर सप्तमीको तैल और लवण रहित भोजन मौनसेकरै और पुराण श्रवणभी करै इस भांति एकवर्ष पर्यन्त दोनों पक्षोंकी षष्ठीका व्रतकर अन्त में शुक्लषष्ठी को सुवर्ण कमलयुक्त कलश उत्तम शय्या और कपिलागौ ब्राह्मण को देवै इसमें वित्तशाठ्य न करै इस विधिसे जो व्रत करै वह करोड़ों जन्म तक स्वर्ग में निवास करता है किसी कामना से इस व्रतको करै तो वह कामना सिद्ध होती है और निष्काम होकर करै तो मोक्ष प्राप्ति होय जो इस रोगविनाशिनी षष्ठी का एकबार भी उपवास करै वह कभी दुःखी नहीं होता और चन्द्रलोक में निवास करता है ॥

पैंतीसवां अध्याय ॥

कमलषष्ठी का विधान और फल ॥

श्रीकृष्ण कहते हैं कि हे महाराज ! और भी हम कमल षष्ठी नाम व्रत का विधान कहते हैं जिसका उपवास करने से पुत्र प्राप्ति और ऐश्वर्य वृद्धि होय मार्गशुक्ल पंचमी को नियत व्रत होकर षष्ठी को उपवास करै और सुवर्ण का कमल दो वस्त्र खीर और खंड ब्राह्मण को देवै इसी भांति एक वर्ष पर्यंत प्रतिषष्ठी को उपोषण करै और भानु अर्क रवि ब्रह्मा सूर्य शुक्र हरि शिव श्रीमान् विभावसु त्वष्टा वरुण इन बारह नामों से क्रम करके बारह महीनों में पूजन करै और भानुर्मेप्रीयताम् इत्यादि वाक्य प्रतिमास दान और पूजन

के अन्त में उच्चारण करै व्रत के अन्त में ब्राह्मण मिथुन की पूजाकर वस्त्र भूषण शर्करा पूर्णकलश और सुवर्णका कमल ब्राह्मण को देकर (यथानविफलाःकामास्त्वद्भक्तानांसदारवे। तथानन्तफलावाप्तिरस्तुजन्मनिजन्मनि) यह मन्त्र पढ़ व्रत समाप्त करै जो इस पद्मषष्ठी के व्रत को करै वह सब पापों से मुक्तहोकर सूर्य्यलोक में निवास करता है और उस के इक्कीस कुल सद्गति को प्राप्त होते हैं सुरापान आदि महापातक और बड़े २ रोग इस व्रत के करने से निवृत्त होते हैं॥

छत्तीसवां अध्याय॥

मंदारषष्ठी का विधान और फल॥

श्रीकृष्णभगवान् कहते हैं कि हे महाराज! अब हम सब पाप हरनेहारी और सर्व कामप्रद मंदारषष्ठी का विधान कहते हैं माघ शुक्ल पंचमी को स्वल्प भोजनकर नियम से रहै और षष्ठी को उपवास करै ब्राह्मणों का पूजनकर मन्दार अर्थात् आक का पुष्प प्राशनकर रात्रि को शयन करै प्रभात उठ स्नान आदि कर ताम्रपात्र में काले तिलों करके अष्टदल कमल बनाय उस में सुवर्णकी पद्महस्त सूर्य्यनारायण की मूर्त्तिस्थापनकर अर्कपुष्पों से और गन्धआदि उपचारों से पूजनकर पूर्वआदि दलों में भास्कराय नमः सूर्य्याय० अर्काय० यज्ञाय० सुधाम्ने० चन्द्रभानवे० कृष्णाय० आनन्दाय नमः इनमंत्रों करके अर्कपुष्पोंसे पूजनकर मध्यमें (सर्वात्मनेपुरुषाय नमः) इस मन्त्र से पूजन करै इस प्रकार सब उपचार वस्त्र भूषण आदिसे पूजनकरै वर्ष के अन्त में यही मूर्त्तिपात्र कलश के ऊपर स्थापनकर वस्त्र सुवर्ण और गौसहित ब्राह्मणको देवै और यह मन्त्र पढ़े (नमोमन्दारनाथाय मन्दारभवनायच।

त्वंरवेतारयस्वास्मानस्मात्संसारसागरात्) इस विधि से जो मन्दारषष्ठी का व्रत करै वह सब पापों से मुक्तहोकर सुखपूर्वक एककल्प स्वर्गमें निवास करताहै और अर्कपुष्पों से सूर्य्यनारायण का पूजनकरै तो सूर्य्यलोक में निवासकरै जो इस विधान को पढ़ै अथवा सुनै वह सब पापोंसे मुक्तहोय मन्दार षष्ठीके दिन तिल रचित कमलकी कर्णिकामें मन्दार पुष्पों से सूर्य्यनारायण का पूजन करने करके जो फल प्राप्त होता है वह गौ भूमि सुवर्ण तिल पर्वत आदि के दान करने से भी नहीं मिलता॥

सैंतीसवां अध्याय॥

ललितापष्ठी का विधान और फल॥

श्रीकृष्ण भगवान् कहते हैं कि हे महाराज! भाद्र महीने की शुक्लषष्ठी को रूप सौभाग्य और सन्तान कामनावाली स्त्री नदी पर जाय स्नानकर वहांसे बांस के पात्रमें बालूरेत लेकर घरमें आय भगवती का पूजनकरै उसी पात्रमें तपोवननिवासिनी ललिता गौरी का ध्यान कर सब उपचारों से पूजन करै पीछे चम्पक करवीर तमाल मालती नीलोत्पल केतकी और तगर पुष्प इनमें प्रत्येककी आठ आठ पुष्पांजलि (ललितालल्लितादेवीसौभाग्यारोग्यदायिनी । यासौभाग्य समुत्पन्नातस्यैदेव्यैनमोनमः) इस मन्त्रसे देवै इस भांति पूजनकर भांति २ के पक्वान्न कूष्माण्ड ककड़ी ककोड़े वृंताक बिल्व करंज आदि फल भगवती के आगे रक्खै और धूप दीप वस्त्र भूषण आदिभी समर्पण करै इस विधिसे पूजनकर रात्रि को जागरणकर गीत नृत्य आदि उत्सव करावै चार पहर सावधान होकर जागै जो स्त्री इस रात्रिको नेत्रनिमी-

लनकरै वह दुर्भगा और बन्ध्या होय इस प्रकार जागरण कर सप्तमी को गीत वाद्य सहित मूर्त्ति को नदी पर लेजाय वहां पूजनकर पूजासामग्री ब्राह्मण को देवै और बालुकामयी मूर्त्ति को नदी में विसर्जन करै पीछे घर में आय हवन कर देवता पितर और मनुष्यों का पूजन कर कुमारिका और पन्द्रह ब्राह्मणों को अनेक प्रकार के भक्ष्य भोज्यों से सन्तुष्ट कर दक्षिणा देवै और (ललिताप्रीतियुक्तास्तु) यह वाक्य कहकर उनका विसर्जन करै इस ललिताषष्ठी के व्रत को जो पुरुष अथवा स्त्री करै उस को संसार में कोई पदार्थ दुर्लभ नहीं है इस व्रत के करनेहारे बहुत कालपर्य्यन्त गौरीलोक में निवास करते हैं ॥

अरतीसवां अध्याय ॥

कुमारषष्ठीका विधान और फल ॥

श्रीकृष्ण कहते हैं कि हे महाराज ! मार्गशीर्ष मास की षष्ठी पापहरा और अतिकल्याण करनेहारी है उस दिन कार्त्तिकेय ने तारकासुर का वध किया है इसलिये वह षष्ठी स्वमिकार्त्तिकेय को बहुत प्रिय है उस दिन किया हुआस्नान दान आदि कर्म अक्षय होता है दक्षिण देश में स्थित कार्त्तिकेयका जो उस तिथि को दर्शन करै वह ब्रह्महत्यादि पापों से छुटता है उस दिन उपवास कर कुमार स्वामी के दक्षिण मस्तक पर (चन्द्रमण्डलसम्भूता तवरूपञ्चविभ्रती । कुमारगङ्गाधारेयं पतितातवमस्तके) इस मन्त्र से धारापातन करै इस भांति स्नान कराय सूर्य्यनारायण का पहिले पूजन कर पीछे (देवसेनापतेस्कन्द कार्त्तिकेयभवोद्भव । कुमारगुहगाङ्गेय शक्तिहस्तनमोस्तुते) इस मन्त्र से पुष्प धूप नैवेद्य

आदि उपचारों से कार्त्तिकेय का पूजन करे दक्षिण देश के फल और मलय का चन्दन भी चढ़ावे पीछे स्वामिकार्त्तिकेय के परमप्रिय छाग कुक्कुट और मयूर इनका प्रत्यक्ष पूजन करै अथवा सुवर्ण के बनाकर पूजै और कार्त्तिकेय के समीपही कृत्तिकाशकट की पूजाकरै पीछे पूर्वोक्त नामों करके तिलों से हवन कर एकफल भक्षण कर भूमि में कुशा की शय्या के ऊपर शयन करै नालिकेर मातुलुंग नारंगी पनस जम्बीर दाड़िम द्राक्षा आम्र बिल्व आमलक ककड़ी और केला ये फल क्रम से बारह महीनों में भक्षण करै ये न मिलैं तो जो उस काल में प्राप्त होय वही एकफल खालेवै प्रभातही प्रत्यक्ष छाग और कुक्कुट अथवा सुवर्ण के बनवाकर ब्राह्मण को देवै और (सेनानी प्रीयताम्) यह वाक्य कहै। सेनानी शरसम्भूत क्रौंचारि षण्मुख गुह गांगेय कार्त्तिकेय स्वामी बालग्रह छागप्रिय शक्तिधर और कुमार इनका बारह महीनों में क्रम से पूजन करै और इन नामों के अन्त में (प्रीयताम्) यह पद लगाय पूजा के अन्त में उच्चारण करै पीछे ब्राह्मण को भोजन कराय आप भी मौन से भोजनकरै वर्ष समाप्त होने पर वस्त्र भूषण आदि से कार्त्तिकेय का पूजन करै होम करै और सब सामग्री ब्राह्मण को देवै इस विधि से जो पुरुष अथवा स्त्री व्रत करैं वे सब उत्तम फल पाय इन्द्रलोक में निवास करते हैं कार्त्तिकेय का सदा पूजन करना चाहिये राजाओं के लिये तो कार्त्तिकेय से अधिक कोई देवता पूज्य नहीं है जो राजा कार्त्तिकेय का पूजन कर युद्ध में जाय वह अवश्य ही जय पावै जो षष्ठी को नक्तव्रत करै वह कार्त्तिकेय के लोक में निवास करता है दक्षिण दिशा में जाय जो भक्तिसे कार्त्तिकेय

का दर्शन और पूजनकरै वह शिवलोकको जाताहै जो सदा कार्त्तिकेय का आराधन करै वह बहुतकाल स्वर्गसुख भोग भूमि पर जन्मले चक्रवर्ती राजाका सेनापति होताहै॥

उनतालीसवां अध्याय ॥

विजयसप्तमी का विधान और फल ॥

राजा युधिष्ठिर पूछते हैं कि हे श्रीकृष्णचन्द्र! सप्तमीका क्या विधान है उसका आप वर्णनकरैं आपके मधुर वचन सुनते सुनते हमको तृप्ति नहीं होती यह राजाका वचन सुन श्रीकृष्णभगवान् कहनेलगे कि हे महाराज! शुक्लपक्षकी सप्तमी जो आदित्यवार युक्त होय उसको विजयसप्तमी कहते हैं उस दिन कियाहुआ स्नान दान जप होम उपवास आदि कर्म अनन्त फलदायक होताहै उसदिन जो फलपुष्प आदिकरके सूर्यनारायणकी प्रदक्षिणाकरै वह सर्वगुणयुक्त पुत्र पाताहै पहिली प्रदक्षिणा नारिकेरों करके दूसरी बीजपूरों करके तीसरी नारंगों करके चौथी कदलीफलों करके पांचवीं कूष्माण्डों करके छठी पके हुये तिन्दुकफलों करके और सातवीं वृन्ताकों करके करै अथवा अष्टोत्तरशत प्रदक्षिणा करै मोती लाल नीलम पन्ना हीरा गोमेद और वैदूर्य करके प्रदक्षिणा करै औरभी जो उस कालमें फल मिलैं उनकरके प्रदक्षिणा देवै फलसे प्रदक्षिणा करने करके फल प्राप्त होता है प्रदक्षिणाके बीच बैठे नहीं न किसीको स्पर्शकरै और न किसीसे सम्भाषण करै एकाग्रचित्त हो प्रदक्षिणा करने से सूर्यभगवान् प्रसन्न होते हैं गौके घृतसे वसुधारा देवै और किंकिणी युक्त ध्वज तथा श्वेत छत्र चढ़ावै पीछे गन्ध पुष्प धूप नैवेद्य आदि उपचारों से पूजनकर (भानोभास्करमार्तण्डच

ण्डरश्मेदिवाकर ॥ आरोग्यमायुर्विजयं पुत्रंदेहिनमास्तुते) यह मन्त्रपढ़ क्षमापन करावै उपवास नक्त अथवा आयाचित व्रतकरै इसभांति आदित्यवार युक्त सात सप्तमी व्रत करके सूर्य्यभगवान् का पूजनकर षडक्षर मन्त्र करके अष्टोत्तरशत हवन करै सुवर्णकी सूर्य्यप्रतिमा सुवर्णपात्र में स्थापन कर रक्तवस्त्र गौ और दक्षिणासहित (ॐभास्कर यशस्करसप्तीहितार्थप्रदोभव नमो नमः) इस मन्त्र से ब्राह्मण को देवै। और भी दान श्राद्ध पितृतर्पण आदि कर्म करै जो राजा जयकी इच्छाकर इस तिथिको यात्रा करै वह अवश्यही जयपावै इसी से इसका नाम विजयसप्तमी है इस व्रतको करनेहारा पुरुष संसार के सब सुख भोग सूर्य्यलोक में निवास करता है और फिर भूमिपर जन्मलेकर दानी भोगी विद्वान् दीर्घायुष् नीरोग सुखी और बड़ा प्रतापी राजा होता है और स्त्री भी इस व्रतको करै तो सब उत्तमफल पाती है यह विजय सप्तमी स्वर्ग में वास अभीष्ट कामनाकी सिद्धि और विजय देती है और मुनिलोगभी इस को ढूँढ़ते हैं सूर्य्यभक्तों को तो इसका व्रत अवश्य करना चाहिये ॥

चालीसवां अध्याय ॥

आदित्यमण्डकदानका विधान ॥

श्रीकृष्ण जी कहते हैं कि हे महाराज ! अब हम आदित्य मण्डकनाम दानका विधान कहते हैं जिसके करने से सब अशुभ दूरहोता है यवचूर्ण अथवा गोधूमचूर्ण में गुड़ और गौका घृत मिलाकर सूर्यमण्डल के समान अतिसुन्दर अपूप बनावै फिर सूर्य्यभगवान् का पूजनकर उनके आगे रक्तचन्दन का मण्डल लिख उसके ऊपर वह मण्डकधर पीछे

ब्राह्मणको बुलाय उसका पूजनकर (आदित्यतेजसोत्पन्नं राज्ञीकरविनिर्मितम्। श्रेयसेममविप्रत्वं प्रतीच्छांकुरुसुव्रत) यह मन्त्रपढ़ रक्तवस्त्र और दक्षिणासहित वह अपूप ब्राह्मणको देवै ब्राह्मणभी उसका ग्रहणकर (कामदंधनदंधर्म्मं पुत्रदंसुख दंतव। आदित्यप्रीतयेदत्तं प्रतिगृह्णामिमण्डकम्) यह मन्त्रपढ़ै इसप्रकार विजयसप्तमी को मण्डक दानकरै और सामर्थ्य होय तो नित्यही सूर्यनारायणकी प्रीतिके लिये मण्डकदेवै इस विधि जो मण्डक दानकरै वह सूर्यनारायणके अनुग्रह से राजा होता है॥

इकतालीसवां अध्याय॥

वर्ज्यसप्तमीका विधान और फल॥

राजा युधिष्ठिर कहते हैं कि और भी सप्तमी व्रत आप कहें जिस के करने से सब मनोरथ सिद्धहोयँ यह राजा का वचन सुन श्रीकृष्णभगवान् कहनेलगे कि हे महाराज! उत्तरायण व्यतीत होने के अनन्तर शुक्लपक्ष में आदित्यवार को सप्तमीव्रत ग्रहणकरै और व्रीहि अर्थात् धान तिल यव उड़द मूंग गेहूँ मांस मद्य मैथुन कांस्यपात्र तैलाभ्यंग अञ्जन और शिलापर पिसीहुई वस्तु इन सब का षष्ठी को त्याग करै और देवता मुनि पितर इन सब का तर्पण कर सूर्यनारायण का पूजन करै और घृतयुक्त तिल और यवका हवन कर सूर्यनारायण का ध्यान करताहुआ भूमिपर सोवै ये तेरह द्रव्यों को षष्ठी के दिन त्याग केवल चनै दूसरे दिन प्राशन करै इस विधि जो एकवर्ष व्रतकरै तो सब मनोवाञ्छित फल पावै॥

बयालीसवां अध्याय ॥

कुक्कुटी व्रत का फल और विधान ॥

श्रीकृष्णचन्द्र कहते हैं कि हे महाराज ! एकसमय लोमश ऋषि मथुरा में आये वहां हमारे माता पिता ने उनका भक्तिसे पूजन किया मुनिभी प्रसन्नहो अनेक प्रकारकी कथा कहने लगे उसी प्रसंग में हमारी माता से कहा कि हे देवकि ! कंसने तेरे बहुत बालक मारदिये इस लिये तू मृतवत्साहोकर अति दुःखभागिनी होगई चन्द्रमुखीभी प्रथम तेरी भांति मृतवत्साथी परन्तु पीछे व्रत के प्रभाव से जीवत्पुत्रा भई यह मुनि का वचन सुन देवकी ने पूछा कि महाराज चन्द्रमुखी कौनथी और क्या व्रत उस ने कियाथा जिस से उसके संतानजीनेलगे आप कृपाकर मुझेभी वह व्रत बतावें तब लोमश मुनि कहनेलगे कि हे देवकि ! अयोध्याका राजा नहुष था उसकी रानी चन्द्रमुखीथी और राजाके पुरोहितकी भार्य्या से रानीकी बहुत प्रीति थी एक दिन वे दोनों सरयूपर स्नान करनेगईं उस समय और भी बहुत सी नगरकी नारी वहां नहाने आईं थीं उन सब नारियों ने स्नानकर मण्डल बनाय उस में शिव पार्वती की प्रतिमा लिख गन्ध पुष्प अक्षत आदि से उन का भक्तिपूर्वक पूजन किया पीछे यथाविधि प्रणाम कर अपने २ घरको सब नगरकी नारी जानेलगीं तब उन को रानी और पुरोहितानी ने पूछा कि हे नारियो ! तुमने यह किसका पूजन किया तब वे स्त्री बोलीं कि शिवपार्वती का हमने पूजन किया है और शिवजी को आत्मा निवेदन कर यह सुवर्णसूत्र हाथ में धारण किया है जब तक प्राण रहेंगे तब तक इसको धारे रहेंगी और शिव पार्वती का पूजन किया करेंगी यह सुन वे

दोनों भी उस व्रत को धारण करती भईं परन्तु उनमें चन्द्रप्रभा व्रतको भूलगई और सूत्रभी न बांधा इसलिये वह मरनेके अनन्तर वानरी भई और पुरोहितानी ने व्रतका उद्यापननहीं किया इसलिये वह मरकर कुक्कुटीबनी वहांभी उन दोनों की मैत्री रही फिर कुछकालके अनंतर दोनों मृत्युवश भईं उनमें चन्द्रप्रभा पृथ्वीशनाम राजाकी मुख्यरानी और पुरोहितानी उसीराजाके पुरोहितकी भार्या हुई रानीका नाम ईश्वरी और पुरोहित स्त्री का नाम भूषणा था भूषणा जातिस्मरा और उत्तम पुत्रों करके युक्तभई ईश्वरीके बहुत काल में एकपुत्र उत्पन्नभया वहभी रोगीथा इसीसे थोड़े कालके अनन्तर मरगया तब भूषणा उसको आश्वासन करने आई उसके बहुतसे पुत्र देख ईश्वरीके मनमें बड़ी ईर्षाभई और कुछ कालके अनंतर ईश्वरी ने भूषणाके पुत्र मरवाडाले परन्तु शिवजी के अनुग्रहसे वे मरकर भी फिर जीउठे तब ईश्वरी ने भूषणासे कहा कि हे सखि ! तैंने ऐसा कौन पुण्य किया है जिससे मरेहुये भी तेरेपुत्र फिर जी उठते हैं और बहुतसे चिरंजीव पुत्र तेरे उत्पन्नभये सदा तू भूषण पहिने अति शोभित रहती है यह सुन भूषणा कहनेलगी कि हे सखि ! भाद्रमासकी सप्तमीको स्नान कर मण्डल बनाय उसमें शिव पार्व्वती का पूजन करै और शिवको आत्मनिवेदन का सूत्र हाथमें धारणकर अथवा चांदीसोनेकी अँगूठी बनाय अंगुलीमें पहिने उस दिन उपवासकरै पीछे व्रतका उद्यापन करै तब शिवपार्वतीका मण्डलमें पूजनकर वह अँगूठी ताम्र के पात्रमें धर ब्राह्मणको देवै और यथाशक्ति ब्राह्मणभोजन करावे इस व्रत के करने से सब पदार्थ प्राप्तहोते हैं हे सखि !

यहव्रत तुमने और मैंने साथही कियाथा परन्तु प्रमादकर तुमने छोड़दिया इसीसे तुम्हारे सन्तान नष्ट होते हैं और राज्य पाकर भी दुःखीरहती हो मैंने वहव्रत भक्तिसे पालनकिया इससे मैं सबप्रकार सुखीहूँ केवल व्रतोद्यापन मैंने नहींकिया इसलिये एक जन्म मुझे कुक्कुटी बननापड़ा हे सखि! अब मैं तुमको अपने व्रतका आधा फल देती हूँ तुम ग्रहणकरो जिससे सब दुःख दूरहोयँ इतना कह भूषणा ने आधा व्रतका फल ईश्वरी को दिया तब उसके दीर्घायुष् बहुत पुत्र उत्पन्न भये और सबप्रकार का सुख प्राप्त हुआ इतना कह लोमशमुनि बोले कि हे देवकि! तूभी इस व्रतको करै तो सन्तान स्थिर रहै और त्रिलोकका स्वामी तेरा पुत्र होय इतना कह लोमशमुनि अपने आश्रम को जाते भये इतनी कथा सुनाय श्रीकृष्णभगवान् बोले कि हे महाराज! यह प्रसंग से हमने व्रतका माहात्म्य कहाहै जो स्त्री इस कुक्कुटीव्रतको करें उनको कभी सन्तान का वियोग न होय और अन्तमें शिवलोक में प्राप्त होयँ॥

तेंतालीसवां अध्याय॥

सप्तमीकल्पका विधान और फल॥

श्रीकृष्णभगवान् कहते हैं कि हे महाराज! अब हम सप्तमीकल्पका वर्णन करते हैं आप प्रीतिसे श्रवण कीजिये माघमहीने की शुक्लसप्तमी को अहोरात्र व्रतका संकल्प कर वरुणका पूजनकरै और अष्टमीके दिन तिल पिष्ट गुड़ और भात ब्राह्मणों को भोजन करावै तो अग्निष्टोम यज्ञका फल पावै फाल्गुन शुक्लसप्तमी को सूर्य्य का पूजनकरै तो वाजपेय यज्ञका फल प्राप्तहोय चैत्र में देवांशु का पूजनकरै तो महादान का फल पावै वैशाख में भानुका पूजनकरै तो अ-

भयदान का फल प्राप्तहोय ज्येष्ठ में इन्द्रका पूजन करने से अतिदुर्लभ वाजपेययज्ञका फल मिलता है आषाढ़सप्तमी को दिवाकरका पूजनकर बहुसुवर्णयज्ञका फल प्राप्त होताहै श्रावण में लोलार्कका पूजनकरै तो सौत्रामणी यज्ञ का फल पावै भाद्र में शुचिका पूजनकरै तो तुलादान का फल पावै आश्विन में सविताका पूजन करने से सहस्र गोदानका फल मिलता है कार्त्तिक में सप्ताश्वको पूजे तो पौण्डरीकयज्ञ का फलपावै मार्ग में रविका पूजन करने से दश राजसूययज्ञ का फल प्राप्तहोता है पौष में भास्करका पूजन करै तो नर-मेध यज्ञका फलपावै इस भांति एक वर्ष व्रत और पूजनकर उद्यापनकरै सुन्दर भूमिपर एक हाथ दोहाथ अथवा चार हाथ रक्त चन्दनका मण्डल बनाय उस में सिंदूर और गेरू का सूर्य्यमण्डल रक्त चन्दन करवीर कमल आदि रक्त पुष्प और अनेक प्रकार के नैवेद्यों से पूजनकर जलपूर्ण दशक-लश स्थापनकरै फिर अग्निसंस्कार कर तिल घृत गुड़ और आककी समिधाओं से आकृष्णेन इत्यादि वैदिक मन्त्र करके एक हजार आहुतिदेवै पीछे द्वादश ब्राह्मणों को रक्त वस्त्र एक एक सवत्सागौ छतुरी जूता दक्षिणा और भोजनदे-कर क्षमापन करावै पीछे आपभी मौन से भोजन करै इस विधि से जो सप्तमी व्रतकरै वह नीरोग रूपवान् और दीर्घायुष् होता है सप्तमी के दिन उपवासकर सूर्यनारायण का जो पुरुष दर्शनकरै वह सब पापों से मुक्तहो सूर्यलोक में निवासकरता है यह सप्तमी व्रत अशुभका नाशकर शरीरा-रोग्य और सूर्य्यलोक में वासदेनेहारा है जो भक्ति से इस व्रत को कर सूर्य्यनारायणका पूजन करें वे पुरुष सदा आरोग्य

और सुखी रहते हैं और अन्तमें सूर्य्यलोक में जाय सूर्यनाराय-
णके गण बनते हैं ॥

चवालीसवां अध्याय ॥

कल्याण सप्तमीका विधान और फल ॥

राजायुधिष्ठिर पूछते हैं कि हे श्रीकृष्णचन्द्र! और भी कोई व्रत स्वर्ग आरोग्य और सब प्रकार के सुख देनेहाराकथनकरै यह राजाकाप्रश्न सुन श्रीकृष्णभगवान् कहनेलगे कि हे महाराज! जिस शुक्लसप्तमी को आदित्यवार होय उस को विजय सप्तमीकहते हैं उस दिन प्रभातही गोदुग्ध से स्नानकर शुक्ल वस्त्र धार अक्षतों करके अतिसुन्दर कर्णिका युक्त अष्टदल कमललिखे पीछे पूर्वादि आठोंदलों में क्रम से तपनाय नमः मार्तण्डायनमः। विवस्वतेनमः। भगाय नमः। वरुणाय नमः। भास्कराय नमः। अरुणाय नमः। रवये नमः। इन मन्त्रों करके पूजनकर कर्णिका में परमात्मने नमः। इसमन्त्र से सब उपचारों करके पूजनकर शुक्लवस्त्र फल भक्ष्य पुष्पमाला अनुलेपन गुड़ और लवण करके नमस्कारान्त नाम मन्त्रों से स्थंडिल के ऊपर पूजाकरै पीछे व्याहृति होमकर यथाशक्ति ब्राह्मण भोजन कराय सुवर्णसहित तिलपात्र गुरुकी भेंटकरै पीछे आपभी पायसभोजन करै इस भांति एक वर्ष यह व्रत कर सूर्य्यनारायण का पूजनकरै और जलका कुम्भ घृतपात्र सुवर्ण वस्त्र भूषण और सवत्सागौ दरिद्री ब्राह्मण को देवै जो इस कल्याणसप्तमी व्रतको करै अथवा इसके माहात्म्यको पढ़ै और सुनै वह सब पापों से मुक्तहो सूर्य्यलोक में निवास करता है॥

पैंतालीसवाँ अध्याय ॥

शर्करासप्तमीका विधान और फल ॥

श्रीकृष्णचन्द्र कहते हैं कि हे महाराज ! अब हम शर्करा सप्तमी का विधान कहते हैं जिसके करने से आयुष् आरोग्य और ऐश्वर्य्य की प्राप्ति होती है वैशाखशुक्ल सप्तमी को प्रभात ही तिलों से स्नानकर शुक्ल वस्त्र पहिन स्थण्डिल के ऊपर कुंकुम करके कर्णिका सहित अष्टदल कमल लिख कर पवित्रे नमः इस मन्त्र करके शर्करा पात्र सहित जलपूर्ण कलश स्थापन करै उस कलश को रक्त वस्त्र माला आदि से अलंकृत कर (विश्ववेदमयोयस्माद्वेदकर्तेतिचोच्यते। त्वमेवामृतसर्वस्वं मतःपाहिसनातन) इस मन्त्र से उसका पूजन करै फिर सूर्य्यसूक्त का जप करता हुआ दिन रात्रि व्यतीत करै अष्टमी के दिन प्रभात उठ स्नान आदि नित्यक्रिया कर सूर्य्यनारायण का पूजन करै पीछे वह सब सामग्री वेदवेत्ता ब्राह्मण को देकर शर्करा घृत और पायस करके यथाशक्ति ब्राह्मण भोजन करावै आप भी तैल लवण रहित भोजन मौनपूर्वक करै इस भांति प्रतिमास व्रत करके वर्ष पूरा होने पर उत्तम शय्या दुग्धदेनेहारी गौ शर्करा पूर्णवट सब गृहस्थ के उपकरणोंसे युक्त घर और हजार निष्कसे एक निष्क पर्य्यन्त सुवर्ण का बना हुआ अश्व सामर्थ्यानुसार ब्राह्मण को देवै इसमें कभी वित्तशाठ्य न करै सूर्य्य भगवान् के मुखसे अमृत पान करने के समय जो अमृतबिन्दु गिरे उनसे शाली मुद्ग और इक्षु उत्पन्नभये हैं और शर्करा इक्षुकासार है इसलिये हव्य कव्य में प्रशस्त और सूर्य्यनारायण को अतिप्रिय अमृतरूप शर्करा है यह शर्करासप्तमीव्रत अश्वमेधके फलको देनेहारा है

और सन्तान की वृद्धि इसव्रत से होतीहै इसव्रतका करनेहारा एक कल्प स्वर्ग में निवास कर मोक्ष को प्राप्त होता है॥

छियालीसवां अध्याय॥

अचलासप्तमीको स्नानका माहात्म्य और विधान॥

राजा युधिष्ठिर पूछते हैं कि हे श्रीकृष्णचन्द्र! आपने सब उत्तम फल देनेहारा माघस्नान का विधान कहा था परन्तु जो प्रातःस्नान करने को समर्थ न हो वह क्या करे नारीअति सुकुमारी होती हैं वे किस भांति माघस्नान का कष्ट सहसकैं इसलिये आप कोई ऐसा उपाय बतावैं कि थोड़से परिश्रम से नारियों को रूप सौभाग्य संतान और अनन्त पुण्य प्राप्तहोय। यह राजाकाप्रश्नसुन श्रीकृष्णचन्द्रबोले कि हे महाराज! हम अचलासप्तमी का अतिगोप्य विधान कहते हैं जिसके करने से सब उत्तम फल प्राप्त होते हैं राजा सगर के अति रूपवती चन्द्रमती नाम वेश्या थी जिसका मनोहर रूप देख कामदेव भी कामातुर होजाय एक दिन वह वेश्या प्रभातही बैठी२ संसार की अनवस्थिति का चिंतन करने लगी कि देखो यह संसारसागर कैसा भयंकर है जिसमें डूबते हुये जीव जन्म मृत्यु जरा आदि जलजन्तुओं करके पीड़ित किसीभांति पार नहीं पाते काल रूप अग्नि सब को पकाता है धर्म काम अर्थसे रहित जो दिन बीत जाते हैं वे वृथा हैं और फिर आते भी नहीं पुत्र घर क्षेत्र धन आदि की चिंता में आयुष् पूरा होजाताहै और मृत्यु आदबाता है। इस भांति अनेक प्रकार के संकल्प विकल्प करती चन्द्रमती वेश्या वशिष्ठजी के आश्रम में गई वहां वशिष्ठजी को प्रणाम कर हाथ जोड़ प्रार्थना करने लगी कि महाराज मैंने न तो दान दिया न तप जप व्रत उपवास

आदिकिये और न शिव विष्णु आदि किसी देवताका आराधन किया अब मैं संसारसे भीतहो आपके शरण में आई हूँ कोई व्रत आप मुझे उपदेशकरैं जिससे मेरा उद्धारहो यह उसका दीन वचन सुन परमदयालु वशिष्ठ मुनि कहने लगे कि हे वरानने ! माघशुक्ल सप्तमीको स्नानकरो जिससे रूप सौभाग्य सद्गति आदि सब फल प्राप्तहोयँ षष्ठी के दिन एकभक्त कर सप्तमीको प्रभातही जलके तटपर जाय वहां दीपदान कर स्नान करो पीछे यथाशक्ति ब्राह्मणको दानदो इससे तुम्हारा कल्याण होगा यह वशिष्ठजी का वचन सुन अपने स्थान में आय सब स्नान दान आदि विधिपूर्वक करतीभई उस स्नान के प्रभाव से बहुत दिन संसारसुख भोग देह त्यागनेके अनन्तर इन्द्रकी मुख्यरानी शची बनी यह अचला सप्तमी के स्नानका फल है इतना सुन राजायुधिष्ठिर पूछते हैं कि हे श्रीकृष्णचन्द्र ! अचलासप्तमी का माहात्म्य तो सुना अब स्नान विधान सुनना चाहते हैं तब श्रीकृष्ण भगवान् कहनेलगे कि हे महाराज ! षष्ठीके दिन एकभक्त कर सूर्य्यनारायण का पूजनकरै सप्तमीको प्रभातही उठ नदी सरोवर तलाव आदिपर जाकर स्नानकरै जब तक कोई पशुपक्षी जलको न हिलावै तबतकही स्नान करने का फल है सुवर्ण चांदी कांस्य अथवा ताम्रके पात्रमें कुसुंभकी रँगीहुई बत्ती और तिलों का तेल डाल दीपक प्रज्वलित कर शिरपरधर हृदयमें सूर्य्यनारायण का ध्यान करताहुआ (नमस्तेरुद्ररूपाय रसानांपतयेनमः । वरुणायनमस्तेस्तुहरिवास नमोस्तु ते) यह मन्त्र पढ़ै पीछे स्नानकर देवता और पितरों का तर्पण करै और चन्दन से कर्णिका सहित अष्टदल कमल लिखकर उस

के मध्य में शिव पार्वती का और पूर्वआदि आठों दलों में क्रम से रवि वैश्वानर विवस्वान् भास्कर सविता अर्क सहस्रकिरण और सर्वात्माका पूजनकरै इन नामों के आदिमें प्रणव और अन्त में नमः पदलगाकर पूजै इस भांति पुष्प धूप दीप नैवेद्य वस्त्र आदिमें भास्कर का पूजनकर (स्वस्थानंगम्यताम्) इस वाक्यको उच्चारणकर विसर्जनकरै पीछे ताम्र के अथवा मृत्तिका के पात्रमें गुड़ और घृत सहित तिलचूर्ण और सुवर्णका बना ताम्बूल रखकर रक्तवस्त्रसे ढक (आदित्यस्य प्रसादेन प्रातःस्नानफलेनच । दुष्टदौर्भाग्यदुःखेभ्योमया तु संतुतास्त्वकम्) यह मन्त्रपढ़ विधिपूर्वक वह पात्र ब्राह्मणको देवै और (रविलोकः प्रीयताम्) यह वाक्य कहै पीछे गुरुको वस्त्र तिल गौ और दक्षिणा देकर यथाशक्ति ब्राह्मण भोजन कराय व्रत समाप्तकरै यह अचलासप्तमीका व्रत रूप सौभाग्य और सब प्रकार के उत्तमफल देनेहारा है जो पुरुष इस विधिसे अचलासप्तमी को स्नानकरै वह संपूर्ण माघ स्नान का फल पाता है जो इस माहात्म्य को भक्तिसे पढ़ै सुनै और लोगों को इसका उपदेशकरै वह उत्तमलोकको जाय॥

सैंतालीसवां अध्याय॥

बुधाष्टमीका विधान और फल॥

श्रीकृष्ण भगवान् कहतेहैं कि हे महाराज! अब हम बुधाष्टमी का विधान कहते हैं जिसके करनेहारा कभी नरक नहीं देखता सत्ययुगके आदिमें इलनामक एक राजा भया वह एक दिन मृगया में हरिणके पीछे लगाहुआ हिमालय पर्वत के समीप एक वनमें पहुँचा उस वनमें प्रवेश करतेही स्त्री बनगया वह वन शिवजीने पार्वतीजी के साथ बिहार करने

के लिये बनाया था और यही शिवजी की आज्ञा थी कि जो पुरुष इस वन में प्रवेश करै वह तत्क्षण स्त्री बनजाय इस कारण से राजा इल नारी होगया और वन में विचरने लगा उसी समय उस को चन्द्र के पुत्र बुध ने देखा और उस के उत्तमरूप पर मोहित हो अपनी भार्या बनाय उसमें पुत्र उत्पन्न किया जिसका नाम पुरूरवा भया उसी से चन्द्र वंश का आरंभ भया जिस दिन बुधने विवाह किया उस दिन बुधाष्टमी थी इसीसे यह जगत् में पूज्य भई उर्मिला नाम मिथिला देश में एक स्त्री थी वह विपत्ति करके बहुत पीड़ित भई तब अपने बालक और कन्या को साथ लेकर अवन्ति देश को गई वहां जाय एक ब्राह्मण के घर में सेवा कर अपना निर्वाह करने लगी पीसनेके समय थोड़ेसे गेहूँ चोर कर क्षुधा से पीड़ित अपने दोनोंबालकों को देती कुछ काल के अनन्तर इसकी कन्या तरुण अवस्था को प्राप्त भई जिसका नाम श्यामला था उस को रूपवती देख धर्मराजने अपनी भार्य्या बनाया और उस की माता उर्मिला मृत्युवश भई यमराज ने अपनी प्रिया से कहा कि और सब काम तुम करना परन्तु ये सात स्थान जिन के ताले बन्द हैं इन में कभी मत जाना उसने भी कहा कि बहुत अच्छा परन्तु मन में सन्देह उत्पन्न होगया एक दिन धर्मराज तो किसी कार्य में व्यग्रथे श्यामला ने एक मकान का ताला खोलकर देखा तो उस की माता उर्मिला को अति भयङ्कर यमदूत बांध २ कर तप्ततैल के कड़ाह में बार २ डालते हैं लज्जित होकर वह ताला बन्द किया दूसरा खोल देखा तो वहां भी उस की माता को शिला के ऊपर रखकेभी चटनी की भांति यमदूत पीसरहे हैं और वह चिल्लाती है इसी भांति तीसरे

उस की माता के मस्तक में लोहे के कील ठोकते हैं चौथे में अतिभयंकर श्वान उस को भक्षण कर रहे हैं पांचवें में लोहे के संदंश से उस को पीड़ित करते हैं छठे में कोल्हू के बीच इक्षु की भांति पेरी जाती है और सातवें स्थान का ताला खोल देखा तो वहां भी उस की माता को हजारों कृमि भक्षण कररहे हैं और वह राध रुधिर आदिसे व्याप्तहोरही है यहदेख श्यामला ने विचार किया कि मेरी माता ने ऐसा कौन पाप किया जिस से इस दारुण गति को प्राप्त भई यह सोच कर सब वृत्तान्त अपने पति धर्मराजसे कहा धर्मराज बोले कि हे प्रिये! इसी लिये हमने कहा था कि ये सात ताले मत खोलना नहीं तो तुमको पश्चात्ताप होगा तुम्हारी माता ने संतानके स्नेह से ब्राह्मण के गेहूँ चोरे तुम क्या नहीं जानती हो यह सब उसी कर्म का फल है ब्राह्मण का धन प्रणय से भक्षण करै तोभी सात कुल अधोगति को प्राप्त होते हैं और चोर कर खाय तब तो जब तक चन्द्र सूर्य्य रहैं तब तक नरक से उद्धार नहीं होता जो गोधूम इस ने चुराये थे वेही कृमि बनकर इस को भक्षण करते हैं यह यमराज का वचन सुन श्यामला बोली कि महाराज यह सब मैं जानती हूँ परन्तु अब आप ऐसा कोई उपाय बतावैं जिस से मेरी माताका नरक से उद्धार होय यह उसका कथन सुन कुछ काल विचार कर धर्मराज ने कहा कि हे प्रिये! सात जन्म पूर्व तैंने बुधाष्टमीका व्रत किया था जो उस का फल तू अपनी माता को देवै तो यह इस संकट से छूटै यह सुनते ही श्यामला ने स्नान कर अपने व्रत का फल माता को दिया वह उस की माता भी उसी क्षण दिव्य देहधार विमान में बैठ अपने पति सहित स्वर्ग

को गई और आजतक स्वर्गसुख भोगती है इतनी कथा सुन राजा युधिष्ठिर ने पूछा कि हे श्रीकृष्ण! बुधाष्टमी व्रत का क्या विधान है तब श्रीकृष्णभगवान् कहने लगे कि महाराज जब शुक्लपक्ष की अष्टमी को बुधवार होय उस दिन एकभक्त व्रत करना चाहिये पूर्वाह्न में नदी आदि में स्नानकर नयापात्र जल से भर भोजन और दक्षिणा सहित ब्राह्मण को देवै आठ बुधाष्टमी का व्रत करै और आठों में क्रम से ये आठ पक्वान्न भक्षण करै मोदक गुड़क घेवर वटक कसार सोमलक अपूप और आठवीं अष्टमी को पूरी मिठाई आदि अनेक पदार्थ भोजनकरै अपने इष्टमित्रों के साथ बैठकर भोजन करै और बुधाष्टमी की कथा भी सुनै बुधकी मूर्ति बनाय पूजनकरै वह मूर्ति एक माशे सुवर्ण की बनावै और गन्ध पुष्प नैवेद्य वस्त्र दक्षिणा आदि से उसका अर्चनकर (ॐबुधोयंप्रतिगृह्णातुद्रिव्यस्थोत्रबुधःस्वयम्। दीयतेबुधराजेन्द्र तुष्यतांमे बुधोत्तमः) यह मंत्र पढ़ ब्राह्मण को सब सामग्री सहित बुध की मूर्त्ति देवै ब्राह्मण भी मूर्त्ति लेकर यह मन्त्र पढ़ै (दुर्बुद्धिवोधन्दुरितं नाशयित्वाचयोबुधः। सौमनस्यंसुखं नित्यंकरोतुशशिनन्दनः) इस विधिसे जो बुधाष्टमीका व्रतकरै वह सातजन्म पर्यन्त जातिस्मरहोय और धन धान्य पुत्र पौत्र दीर्घायुष् ऐश्वर्य्य आदि संसार के सब पदार्थ पाय अन्त समय नारायण का स्मरण करताहुआ तीर्त्थपर प्राण त्यागता है और प्रलय पर्यन्त स्वर्ग में निवास करता है जो इस विधानको श्रवण करै वह भी ब्रह्महत्यादि पापोंसे छूटता है यह अतिगुप्त बुधाष्टमी विधान हम ने कहा है जो यह व्रत करै और पक्वान्नपात्र सहित बुधकी मूर्त्ति ब्राह्मण को देवै वह कभी यमलोक नहीं देखता॥

अड़तालीसवां अध्याय॥

श्रीकृष्णजन्माष्टमी का विधान और फल॥

राजा युधिष्ठिर कहते हैं कि हे श्रीकृष्णचन्द्र! आप जन्माष्टमी व्रतका विधान कथन करें यह सुन श्रीकृष्ण भगवान् कहने लगे कि हे महाराज! मथुरा में जब कंस मारागया उस समय और उसी रंग वाटस्थान में जहां मल्लयुद्ध हुआ था और कुकुर अंधक वृष्णि आदि सब बैठे थे देवकी हमको आलिंगन कर स्नेहसे रोदन करने लगी और वसुदेवजी भ गद्गद वाणी हो हमको और बलदेवजी को आलिंगन कर कह लगे कि आज हमारा जन्म सफल भया जो दोनों पुत्रों क कुशल युक्त देखते हैं इस भांति हमारे माता पिताको अ हर्षित देख सब मनुष्य वहां एकत्र भये और कहने लगे कि श्रीकृष्ण! आपने बड़ा काम किया जो इस दुष्ट कंसको मार हम सब इससे बहुत पीड़ितथे अब आप यह कृपाक कहें कि किसदिन आप देवकी के गर्भसे उत्पन्न भयेहो हम सब उसदिन बड़ा उत्सव किया करेंगे उस समय हमा पिताने भी कहा कि अपना जन्मदिन इनको बतादो तब हमने मथुरानिवासी जनों को जन्माष्टमी का व्रत कथन किय सिंह राशिपर सूर्य और वृष राशिपर चन्द्रमाथा उस भाद्र कृष्ण अष्टमी अर्द्धरात्रके समय रोहिणी नक्षत्र में हमारा जन्म भया। यह व्रत सब वर्णोंको करना चाहिये प्रथम यह व्रत मथुरामें प्रसिद्ध भया पीछे और लोकोंमें इसकी ख्याति भई उसी दिन भगवती काभी बड़ा उत्सव करना चाहिये इतनासुन राजा युधिष्ठिरने पूछा कि हे श्रीकृष्णचन्द्र! अब इस व्रतका आप विधान वर्णन कीजिये जिसके करने से जगत् के

प्रभु आप प्रसन्नहोते हैं तब श्रीकृष्ण भगवान् कहनेलगे कि हे महाराज! इस एक व्रतकेही करनेसे सात जन्मके पाप निवृत्त होजाते हैं पहिले दिन दन्तधावन आदिकर व्रतके नियम ग्रहणकरे पीछे व्रत के दिन मध्याह्न में स्नानकर देवकीका सूतिकागृह बनावे गोकुलकी भांति गोपगोपी गौ आदि से अलंकृतकर खड्ग छाग मुशल आदि रक्षाके लिये द्वारपर रक्खे षष्ठी देवीका स्थापनकरै इस भांति यथाशक्ति उस सूतिका गृहको भूषितकर बीचमें पर्यंक के ऊपर सोतीहुई हमारे सहित देवकी की प्रतिमा स्थापनकरै प्रतिमा आठ प्रकार की होती हैं सुवर्णकी चांदीकी ताम्बकी पित्तलकी मृत्तिकाकी मणिकी रंगसे लिखीहुई और मनोमयी इनमें से सर्व लक्षण युक्त कोई प्रतिमा बनाय स्थापन करै और स्तनपान करते हुये बालस्वरूप नीलकमल के समान वर्ण हमारी प्रतिमा देवकी के समीप पलँग के ऊपर स्थापन करै बाहर खड्ग चर्म्म धारणकिये वसुदेवकी मूर्त्तिबनावै और कन्या जन्मती हुई यशोदा भी वहां बनावै और ऊपर को देवता ग्रह नाग विद्याधर आदिकी मूर्त्ति रचै वसुदेव कश्यप का अवतार हैं देवकी अदितिका बलदेवजी शेषनागका नन्दगोप दक्षप्रजापतिका यशोदा दितिका और गर्गमुनि ब्रह्माजीका अवतारहैं वहां नाचती गातीहुई अप्सरा और गन्धर्व बनावै और एक ओर कालियनाग को यमुना के ह्रद में स्थापन करै इस भांति अति रमणीय नवसूतिका देवी का स्थापन कर भक्ति से गन्ध पुष्प धूप बीजपूर सुपारी नारंगी पनस आदि जो फल उस देश में प्राप्त होवें उन सब से पूजनकर (गायद्भिः किन्नराद्यैः सततपरिवृता वेणुवीणा निनादैर्भृङ्गारादर्शकु

स्मयवरकरतलैः किन्नरैर्गीयमाना। पर्य्यङ्केसामिसुप्तासुदिततर मनाः पुत्रिणी सम्यगास्ते सादेवी देवमाताजयतिसुवदना देवकी कान्तरूपा) यह श्लोक पढ़ै। और यह ध्यान करै कि कमलवासिनी लक्ष्मी देवकी के चरण दबारही है ॐ श्रियै नमः देवक्यै नमः वसुदेवाय नमः बलदेवाय नमः नन्दाय नमः यशोदायै नमः इत्यादिनाम मन्त्रों से सबका अलग २ पूजन करै पीछे (अनर्घ्यंवामनंसौरिंवैकुण्ठंपुरुषोत्तमम्। वासुदेवं हृषीकेशंमाधवंमधुसूदनम् १ वाराहंपुण्डरीकाक्षं नृसिंहंदैत्य सूदनम्। दामोदरंपद्मनाभं केशवंगरुडध्वजम् २ गोविन्दम च्युतंकृष्णमनन्तमपराजितम्। अधोक्षजंजगद्बीजं सर्ग स्थित्यन्तकारणम् ३ अनादिनिधनंविष्णुंत्रैलोक्येशंत्रिविक्र मम्। नारायणंचतुर्बाहुंशङ्खचक्रगदाधरम् ४ पीताम्बरधरंनि त्यंवनमालाविभूषणम्। श्रीवत्साङ्कंजगत्सेतुं श्रीधरंश्रीपतिं हरिम्। योगेश्वरंचयोगीशं गोविन्दम्प्रणतोस्म्यहम् ५) इसमन्त्र से हमारी मूर्त्तिको स्नान करावे (यज्ञेश्वराययज्ञाय यज्ञपतये गोविन्दाय नमः) इस मन्त्र से अर्घ्य चन्दन धूप दीप अर्पण करै (विश्वेश्वराय विश्वसम्भवाय विश्वपतये गोविन्दाय नमः) इस मन्त्र से नैवेद्य चढ़ावै (धर्म्मेश्वराय धर्म्मसम्भवाय धर्म्मपतये गोविन्दाय नमः) यह मन्त्र पढ़ शयन करावै। इस भांति पूजन कर स्थण्डिल के ऊपर रोहिणी सहित चन्द्रमा वसुदेव देवकी नन्द यशोदा और बलदेवजी का पूजन करै तो सब पापों से मुक्तहोजाय च- न्द्रोदय के समय (क्षीरोदार्णवसम्भूत अत्रिनेत्रसमुद्भव। गृहाणार्घ्यंशशाङ्केदंरोहिण्यासहितोमम) इसमन्त्र से च- न्द्रमा को अर्घ्य देकर घृतकी वसुधारा करै और षष्ठी देवी का

पूजनकर उसीक्षण हमारा नामकरण आदि करै नवमी के दिन हमारे उत्सवके समान भगवती का उत्सवकरै पीछे यथाशक्ति ब्राह्मणोंको भोजनकराय उनको सुवर्ण वस्त्र गौ आदि देकर संतुष्टकरै और यह वाक्य कहै कि (श्रीकृष्णोमेप्रीयताम्) और ये मन्त्र भी पढ़ै (यंदेवंदेवकीदेवी वसुदेवोप्यजीजनत् । भौमस्यब्रह्मणोगुप्त्यै तस्मैब्रह्मात्मनेनमः ॥ सुजन्मवासुदेवाय गोब्राह्मणहितायच । जगद्धितायकृष्णायगोविन्दायनमोनमः । शान्तिरस्तुशिवंचास्तु) यहपढ़ब्राह्मणोंको विसर्जन करै इसप्रकार हमारेभक्त पुरुष अथवा स्त्री जो इस उत्सवको प्रतिवर्ष करैं वे सन्तान आरोग्य धन धान्य दीर्घ आयुष् और राज्य पाते हैं जिस देशमें यह उत्सव कियाजाय वहां पर चक्रव्याधि और अवृष्टि आदिका कभी भय नहीं होता जिस घरमें पुत्रयुक्त देवकी लिखकर पूजी जाय वहां बालक का मृत्यु गर्भपात वैधव्य दौर्भाग्य और कलह नहीं होता जो एक बारभी इस व्रतको करै वहभी विष्णुलोकको प्राप्तहोता है इस व्रतके करने हारे संसार के सब सुख भोग विष्णुलोकमें निवास करते हैं ॥

उनचासवां अध्याय ॥

दूर्वाष्टमीका विधान और फल ॥

श्रीकृष्णचन्द्र कहते हैं हे महाराज ! भाद्रशुक्ल अष्टमीको दूर्वाष्टमी का व्रत जो पुरुष करै उसका वंश कभी क्षय नहीं होता दूर्वा के अंकुरोंकी भांति दिन दिन बढ़ता जाताहै राजा युधिष्ठिर पूछतेहैं कि हे श्रीकृष्णचन्द्र ! यह दूर्वा कहांसे उत्पन्न हुई चिरायुष् क्योंकर भई और लोकमें वन्द्य और पूज्य क्यों

है यह आप वर्णनकरें यह राजाका प्रश्नसुन श्रीकृष्णभगवान् कहनेलगे कि हे महाराज ! देवताओं ने जब क्षीरसागर मथन किया उस समय विष्णुभगवान्ने अपनी पीठ पर मन्दराचलको धारणकिया उसकी रगड़ से भगवान् के जो रोम उखड़कर जलमें गिरे उनसे दूर्वा उत्पन्न भई उस दूर्वापर देवताओंने अमृतके कुम्भ रक्खे उनसे जो अमृत विन्दुगिरे उनके स्पर्श से यह अजर और अमर भई और देवताओंने गन्ध पुष्प धूप दीप नैवेद्य खर्जूर नालिकेर द्राक्षा कपित्थ लकुच नारंग बीजपूर दाड़िम दही अक्षत माला आदिसे (त्वंदूर्वेऽमृतजन्मासि वन्दितासिसुरासुरैः । सौभाग्यसन्ततिंदत्त्वा सर्वकार्यकरीभव १ यथाशाखाप्रशाखाभिर्विस्तृतासिमहीतले । तथाममापिदेहित्वमजरामरतांसदा इन मन्त्रों करके दूर्वाका पूजन कियाहै सब देवपत्नी स्वाह गौरी संज्ञा श्रीवेदवती दमयन्ती सीता सुकेशी घृताची रम्भा मिश्रकेशी देवयोनि कामकन्दला मेनका उर्वशीआदि सब स्त्रियोंने दूर्वा का पूजनकर अपना अपना अभीष्ट फल पाया है और भी जो नारी स्नानकर शुद्ध वस्त्र पहिन दूर्वा का पूजन कर तिल पिष्ट गोधूम सप्तधान्य आदि का दानकर ब्राह्मण भोजन करावैं और श्रद्धासे इसव्रतको करैं वे पुत्र पौत्र सौभाग्य धन आदि सब पदार्थ पाय बहुत काल संसारसुख भोग अन्त में अपने पतिसहित स्वर्गको जाती हैं और प्रलयपर्यंत वहांही निवास करती हैं ॥

पचासवां अध्याय ॥

प्रतिमासकी कृष्णाष्टमीका विधान और फल ॥

श्रीकृष्णचन्द्र कहते हैं कि हे महाराज ! अब हम कृष्णा-

ष्टमीका विधान वर्णन करते हैं मार्गशीर्ष मासकी कृष्णाष्टमी को उपवास के नियम धारणकर ब्रह्मचारी और जितक्रोध हो गुरुकी आज्ञानुसार उपवास करै मध्याह्न के अनन्तर नदी आदि में स्नान कर गन्ध उत्तम पुष्प गुग्गुल धूप दीप अनेक प्रकार के नैवेद्य ताम्बूल आदि उपचारोंसे शिवलिङ्गका पूजन कर कृष्णतिलोंका हवनकरै मार्ग्ग मास में शंकर का पूजनकरै और गोमूत्र प्राशन कर भूमिपर सोवै तो अतिरात्रि यज्ञका फलपावै पौषकृष्णाष्टमीको शंभुका पूजन कर घृत प्राशनकरै तो वाजपेय यज्ञका फलपावै माघकृष्णाष्टमीको महेश्वरका पूजनकर गोदुग्धप्राशनकरै तो आठ गोमेधयज्ञ का फल प्राप्तहो या फाल्गुन में महादेवका पूजन कर तिल प्राशन करै तो आठ राजसूयका फलपावै चैत्र में स्थाणु का पूजन करै और यवप्राशन करै तो अश्वमेध का फलमिलै वैशाख में शिवका पूजन कर रात्रि के समय कुशोदक प्राशन करै तो दशनरमेध यज्ञों का फलपावै ज्येष्ठ में पशुपति का पूजन कर गोशृंगजल प्राशन करै तो लक्ष गोदानका फल प्राप्त होय आषाढ़ में उग्रका पूजनकर गोमय प्राशनकरै तो अयुत वर्ष से भी अधिक रुद्र लोकमें निवासकरै श्रावण कृष्णाष्टमीको शर्वका पूजनकर रात्रि के समय दूर्वा प्राशनकरै तो बहुसुवर्णयज्ञ का फल पाताहै भाद्रमें त्र्यम्बकका पूजनकर बिल्वपत्रका प्राशनकरै तो तीनवर्ष दीक्षित होनेका फल पावै आश्विन में भवका यजनकर तन्दुलोदक प्राशनकरै तो दश पौण्डरीक यज्ञोंका फल मिलै कार्तिककृष्णाष्टमी को रुद्र का भक्ति से अर्चनकर दही प्राशनकरै तो अग्निष्टोम यज्ञका फल प्राप्त होय इस प्रकार बारह महीने शिव पूजनकर अन्त में शिवभक्त ब्राह्मणों ने

घृत शर्करायुक्त पायस भोजन करावे और सुवर्ण वस्त्र आदि उनको देकर प्रसन्नकरै और कृष्ण तिल पूर्ण बारह कलश छत्र जूता वस्त्र आदि बारह ब्राह्मणों को देकर दुग्ध देनेहारी सवत्सा एक कृष्णवर्ण गौ महादेवजी की भेटकरै इस कृष्णाष्टमी व्रतको जो एक वर्ष निरन्तरकरै वह सब पापोंसे मुक्तहो उत्तम ऐश्वर्यपाय सौ वर्ष पर्यन्त संसारके सुख आनन्द से भोगता है इस व्रतके करने से इन्द्र चन्द्र ब्रह्मा विष्णु आदि देवता उत्तम २ पदोंको प्राप्त भये हैं जो पुरुष अथवा स्त्री इस व्रतको भक्तिसे करै वह अप्सराओंसहित उत्तम विमान में बैठ देवताओं करके स्तूयमान शिवलोकको जाताहै वहां हीं तीन अयुत कल्प पर्यन्त निवास करता है और जो इस व्रतके माहात्म्यको सुनै वह सब पापों से मुक्त होताहै भक्ति से कृष्णाष्टमी व्रतकर पूर्वोक्त रीतिसे शिवपूजन और प्राशन कर तिल और अन्न सहित कृष्णवर्णके कलश ब्राह्मणों को देवै तो अवश्यही शिवलोक को जाय॥

इक्यावनवां अध्याय॥

दत्तात्रेय और कार्त्तवीर्य की कथा अनघाष्टमीका विधान और फल॥

श्रीकृष्णचन्द्र कहते हैं कि हे महाराज! ब्रह्माजी के पुत्र अत्रिऋषिभये जिनकी पत्नी अनसूयाथी उनके पुत्र बड़े तपस्वी विष्णुका अवतार दत्तात्रेय नामहुये जिनको अनघभी कहते हैं उनकी पत्नी लक्ष्मी का अवतारथी उसका नाम अनघा था उनके आठपुत्र बड़े तपस्वी और ब्रह्मवेत्ता भये दत्तात्रेय योगी विन्ध्याचलके बीच अपने आश्रममें योगसाधन करते थे इसी समय जम्भ नामक दैत्यने ब्रह्मा जी से वरपाय बड़ी सेना साथले इन्द्रकी पुरी अमरावती

को जायघेरा और दिव्य सौ वर्षतक युद्ध हुआ अन्त में देवता व्याकुलहो नगरछोड़ भागे तब गदा मुद्गर पट्टिश शतघ्नी बाण खड्ग आदि अनेक प्रकार के शस्त्रधारे वृष महिप शरभ सिंह व्याघ्र वानर गैंड़े हाथी आदि वाहनों पर चढ़ेहुये बड़े पराक्रमी जम्भ आदि दैत्य भी देवताओं के पीछे लगे देवता भयभीत हुये २ दत्तात्रेय के आश्रम में पहुँचे दत्तमुनि ने उनको अभय दिया और अपने शरण में रक्खा इतने में गर्जते और शस्त्रोंकी दृष्टिकरते दैत्य भी वहां पहुँचे और घोर शब्द से परस्पर कहने लगे कि इस ब्राह्मण को बांधलो और इसके आश्रम वृक्षोंको उखाड़कर फेंकदो यह सुन दत्तात्रेय ने क्रोधकर दैत्यों को देखा देखतेही सब दैत्य निस्तेज और पराक्रमहीन होगये तब देवताओं ने उनकोजीता और स्वर्ग का राज्य पाया तब से दत्तात्रेय का प्रभाव लोक में प्रसिद्ध भया दिव्य तीनहजार वर्ष पर्यन्त दत्तात्रेय योगीने अपनी पत्नी सहित तपकिया इतने काल में सब लोकोंपर अनेक उपकार किये यह सब वृत्तान्त मार्ग कृष्णाष्टमी को हुआथा दत्तात्रेय जब योगाभ्यास करते थे उस समय माहिष्मती नगरी का राजा कार्त्तवीर्यार्जुन एकाकी रहकर दिन रात दत्तात्रेय की सेवा करताथा जब दत्तात्रेय का नियम सम्पूर्ण हुआ तब प्रसन्नहो कार्त्तवीर्य से कहा कि वरमांग तैंने बहुत काल सेवाकरी इससे हम सन्तुष्टहैं तब कार्त्तवीर्य ने प्रथम यह वर मांगा कि महाराज मेरे हजार भुजा होवैं दूसरा यह कि संपूर्ण पृथिवी का राज्यमिले तीसरा यह कि धर्म से राज्य मिले और धर्म से मैं पालनकरूं चौथा यह वर कि युद्ध में सदा जय होवे

दत्तात्रेय ने ये सबवर उसको दिये वह भी वरके प्रभाव से सब राजाओं को जीत चक्रवर्ती बना सातोंद्वीपों में उसने दश हजार यज्ञकिये सब यज्ञों में सुवर्ण की वेदी और यूप बनेथे प्रत्येक यज्ञमें अपरिमित धन ब्राह्मणों को दिया देवता गन्धर्व अप्सरा आदि सदा उसके यज्ञों में वर्त्तमान रहते थे और नारदमुनि तो उसकी महिमा यों गातेथे कि कार्तवीर्य के तुल्य यज्ञदान तप पराक्रम और शास्त्र में न तो कोई राजा पहिले हुआ और न आगे होगा खड्ग चर्म धनुषबाण धारे सब प्रजाकी रक्षाके लिये कार्तवीर्य आप घूमता रहता था उसके राज्य में अधर्म दुराचार शोक नहींथे और किसी का धनभी नष्ट नहीं होताथा दुष्टोंको वह आप दंडदेता पचासी हजारवर्ष कार्त्तवीर्य ने धर्मराज्य किया और प्रजाको परिपूर्ण सुखदिया वह हजार भुजाओं करके ऐसा शोभित होता जिस भांति अपने सहस्त्रकिरणों करके सूर्य्य शोभित होयँ नर्मदा नदी में वर्षाऋतु के समय जब कार्तवीर्य क्रीड़ाकरता तब नर्मदाका प्रवाह उलटा चलने लगता मत्तहोकर समुद्र में जब विहार करने के लिये प्रवेश करता उस समय समुद्रका जल बेला के बाहर होजाता और पाताल में नाग और असुर त्रासको प्राप्त होते हजार २ भुजाओं से जब धनुषकी ज्याका शब्द करता तब ऐसा प्रतीत होता मानों प्रलयकाल के मेघ गर्जते हैं अथवा हजारों वज्रपात एकबार होते हैं एक समय कार्त्तवीर्य्य लंका से रावणको पकड़ लाया और अपने कारागार में कैद करदिया तब पुलस्त्य मुनि ने आय बड़ी दीनता दिखाय रावण को छुटाया किसी समय अग्नि ने कार्त्तवीर्य्य से भिक्षा मांगी तब कार्त्तवीर्य्य ने सप्तद्वीपवती पृथिवी

भिक्षामें देदी इससे अग्नि प्रसन्नहो अद्यापि उसके कुंडमें निवास करताहै अनघ मुनिके प्रसादसे यह सब प्रभाव कार्त्तवीर्य का भया कार्त्तवीर्य ने अनघाष्टमी व्रत लोकमें प्रवृत्त किया अघ नाम पापका है पापहरने से इसका नाम अनघा भया दत्तात्रेय मुनिको भी योगके प्रभावसे अणिमा लघिमा प्राप्ति प्राकाम्य महिमा ईशित्व वशित्व और कामावसायिता ये आठ ऐश्वर्य प्राप्तभये इतनी कथा सुन राजायुधिष्ठिर पूछते भये कि किस तिथिका व्रत कार्त्तवीर्य ने कियाथा और किस विधानसे किया यह आप कथन करें तब श्रीकृष्णचन्द्र कहनेलगे कि हे महाराज ! कार्त्तवीर्य ने अनघाष्टमी व्रत करके सब अभीष्ट पाया अनघाष्टमी का यह विधान है कि मार्गशीर्ष कृष्णाष्टमीको कुशाका अनघमुनि और बहुत पुत्रों सहित उनकी पत्नी अनघा बनाय स्थंडिलके ऊपर स्थापन कर स्नान कराय गन्ध आदि उपचारोंसे (इदंविष्णुर्विचक्रमे) इत्यादि वैदिक मंत्रोंकरके उनका पूजनकरै अनघको विष्णु रूप अनघा को लक्ष्मीरूप और उनके पुत्रों को प्रद्युम्नादि रूपसे भावना कर पूजनकरै उस कालमें जो फल मिलैं वे सब चढ़ावै और धूप दीप अनेकप्रकार के नैवेद्य निवेदन करे पीछे यथाशक्ति ब्राह्मण भोजन कराय आपभी अपने मित्र बन्धुओं सहित भोजन करै रात्रि के समय जागरणकर बड़ा उत्सव करै नवमी के दिन प्रभातही नदी में उनका विसर्जन करे इसव्रतको ग्रहणकर त्याग न करै प्रतिवर्ष श्रद्धासे यह दत्तात्रेय मुनिका उत्सवकरै तो सब पाप दूरहोवैं कुटुम्बकी वृद्धिहोय विष्णु भगवान् प्रसन्न होवैं और सात जन्मतक आनन्द रहै जो पुरुष भक्तिसे इस व्रतको करें वे कार्त्तवीर्य की भांति

ऐश्वर्य्य पाते हैं और अन्त में विष्णु लोक को जाते हैं॥

बावनवां अध्याय॥

सोमाष्टमी और अर्काष्टमी का विधान और फल॥

श्रीकृष्णचन्द्र कहते हैं कि हे महाराज! हम और भी व्रत कहते हैं जिसके करने से सबप्रकारके कल्याण और शिवलोक की प्राप्ति होय सोमवार युक्त अष्टमी जिस दिन होय उस दिन हरिहरका पूजन करै ऐसी प्रतिमा स्थापन करै जिसका दक्षिण भाग शिवरूप और वामभाग विष्णुरूप होय पीछे पञ्चामृत आदिसे विधि पूर्वक स्नान कराय कर्पूर युक्त चन्दन का दक्षिण भागमें और तुरुष्क नाम सुगन्धि द्रव्ययुक्त कुंकुम का वाम भागमें लेपन करै शिवके ऊपर नीलम और विष्णु के ऊपर मोती चढ़ावै श्वेतरक्तपुष्प चढ़ाय घृत पक्व नैवेद्य लगावै और पचीस दीपकों करके आरती करै और निराहार रहै दूसरे दिन पूजन कर घृतयुक्त तिलों का हवनकर व्रती और ब्राह्मणों को भोजन करवै और यथाशक्ति मिथुन पूजा करै एकवर्ष इसभांति व्रतकर अन्तमें पूर्वोक्त रीति से पूजन कर श्वेत पीतवस्त्र वितान पताका घण्टा धूपदानी दीप वृक्ष औरभी पूजनके उपकरण ब्राह्मणों को देवै और यथा शक्ति ब्राह्मण भोजन करावै चतुरस्र मण्डल में शिवका और त्रिकोण मण्डल में पार्वती का पूजन कर वस्त्र भूषण भोजन आदिसे ब्राह्मण दम्पती का पूजन कर पचीस दीपकों से धीरे २ नीराजन करै इस विधिसे पांचवर्ष अथवा भक्तिसे एकही वर्ष व्रतकरै वह विष्णुलोक और शिवलोक में निवास कर मोक्षको प्राप्त होता है और जो पुरुष जन्मभर इस व्रत को करै वह तो साक्षात् विष्णु स्वरूपही होजाता है आपदा

दुःख शोक ज्वर ग्रह आदि कभी उस के समीप नहीं आते इतना विधान कह श्रीकृष्णभगवान् ने कहा कि महाराज इसी भांति आदित्यवार युक्त अष्टमी को भी व्रत होता है उस दिन दक्षिणभाग में शिव और वामभाग में पार्वती का अर्चनकरै शिवजीपर मोती और पार्वतीजीपर पद्मराग चढ़ावै और रत्न न मिलै तो सुवर्णही निवेदनकरै चन्दन और कुंकुमका लेपन शुक्ल और रक्त पुष्प और वस्त्र घृतपक्क नैवेद्य आदि से पूजनकरै बाक़ी सब विधान पूर्वव्रतकी भांति है परन्तु इसव्रतका पारण गोघृत से करनाचाहिये व्रत के अन्त में पूर्वरीति से उद्यापन करै इस व्रतका करनेहारा सूर्यादिलोकों में उत्तम भोग भोगकर शिवलोक में प्राप्त हो जन्म मरण से रहित होता है इसव्रतको जो करै वह प्रतापी अदीन जनप्रिय नीरोग धनवान् पुत्रवान् और सुखी होता है ॥

तिरपनवां अध्याय ॥

श्रीवृक्षनवमी का विधान और फल ॥

श्रीकृष्ण भगवान् कहते हैं कि हे महाराज ! देवता और दैत्यों ने जब समुद्र मथनकिया उस समय समुद्र से लक्ष्मी निकली लक्ष्मीको देख सबकी इच्छा भई कि हमहीं इसको लें इसलिये देवता और दैत्योंका युद्ध होनेलगा लक्ष्मी भी श्रांत हो बिल्व वृक्षके नीचे बैठगई विष्णुभगवान् ने सबको जीत आप लक्ष्मी को ग्रहण किया बिल्ववृक्षके नीचे लक्ष्मी बैठी इसलिये बिल्ववृक्ष को श्रीवृक्ष कहते हैं भाद्रशुक्ल नवमी को सूर्योदयके समय अनेक प्रकार के पुष्प गन्ध वस्त्र फल तिलपिष्ट मालाआदि से (श्रीनिवासनिवासेस्तु श्रीवृक्षशिववल्लभ । ममाभिलषितं कृत्वा सर्वविघ्नहरोभव) इस मन्त्र करके

। बिल्ववृक्षका पूजन करै पीछे ब्राह्मण भोजन कराय आपभी तैल लवण रहित बिना अग्नि के सिद्धकिया भोजन दही पुष्प फल आदि भूमिपर रख भोजन करै इसभांति जो भक्ति से श्रीवृक्ष का पूजनकरै वह अवश्यही सब सम्पत्ति पाता है ॥

चौवनवां अध्याय ॥

ध्वज नवमी का विधान और फल नवदुर्गास्तोत्र ॥

श्रीकृष्ण कहते हैं कि हे महाराज ! महिषासुर को भगवती ने मारदिया इस वैरसे दैत्यों ने देवताओं के साथ बहुत संग्राम किये और भगवती ने भी धर्म की रक्षा के लिये नाना रूप धार दैत्यों को मारा तब महिषासुर के पुत्र रक्तासुर ने साठिहज़ार वर्षपर्यन्त घोर तपकर ब्रह्माजी को प्रसन्न किया और उनसे वरपाय दैत्यों को इकट्ठेकर इन्द्र के साथ युद्धकरने अमरावती में गया देवताओं ने भी देखा कि दैत्यों की सेना युद्धके लिये आई है तब सब एकत्र हो इन्द्रको आगे कर युद्धके लिये निकले और युद्ध होनेलगा रुधिरकी नदी बहनेलगी और देवता दैत्य कट २ कर गिरनेलगे तब रक्तासुर कोपकरके देवताओं से युद्ध करनेलगा और ऐसा युद्ध किया कि देवता रणको छोड़भागे और रक्तासुरने अमरावती में अपना राज्य जमाया देवता भी कटच्छत्रापुरी में गये जहां चामुण्डा और नवदुर्गासहित भगवती निवास करती है महालक्ष्मी नन्दा क्षेमकरी शिवदूती महारुण्डा भ्रामरी चन्द्रमंडला रेवती और हरसिद्धि ये नव दुर्गाओं के नाम हैं वहां जाय हाथजोड़ सब देवता इनकी भक्तिसे स्तुति करनेलगे

अमरपतिमुकुटचुम्बितचरणाम्बुज सकलभुवन सुखजननी।
जयति जगदीशवन्दित सकलामलनिष्कला दुर्गा ॥ १ ॥

विकृतनखदशनभूषणा रुधिरवसाच्छुरित खड्गकृतहस्ता। जयति नरमुण्डमण्डितपिशितसुरासवरता चण्डी ॥ २ ॥ प्रज्वलितशिखिगणोज्ज्वल विकटजटाबद्धचन्द्रमणिशोभा। जयति दिगम्बरभूषा सिद्धवटेशामहालक्ष्मीः ॥ ३ ॥ करकमलजनितशोभापद्मासनबद्धपद्मवदना च। जयति कमण्डलुहस्ता नन्दादेवी नतार्त्तिहरा ॥ ४ ॥ दिग्वसनाविकृतमुखा फेत्कारोद्दामपूरितदिशौघा। जयति विकरालदेहा क्षेमकरी रौद्रभावस्था ॥ ५ ॥ क्षोभितब्रह्माण्डोदरस्वमुखस्वरहुंकृतनिनादा। जयति महीमहितासा शिवदूत्याख्याप्रथमशक्तिः ॥ ६ ॥ मुक्ताट्टहासभैरवदुस्सहरवचकितसकलदिक्चक्रा। जयति भुजगेन्द्रबन्धनशोभितकर्णासहारुण्डा ॥ ७ ॥ पटुपटहमुरजमर्दलझल्लरिकारावनर्तिताचरवा। जयतिमधुव्रतरूपा दैत्यहरी भ्रामरीदेवी ॥ ८ शान्ताप्रशान्तवदनासिंहरथाध्यानयोगसन्निष्ठा। जयति चतुर्भुजदेहा चन्द्रकलाचन्द्रमङ्गलादेवी ॥ ९ ॥ पक्षपुटचञ्चुघातैः संचूर्णितविबुधशत्रुसंघाता। जयति शितशूलहस्तावहुरूपारेवतीरौद्रा ॥ १० ॥ पर्यटतिशक्तिहस्ता पितृवननिलयेपुयोगिनीसहिता। जयति हरसिद्धिनाम्नी हरिसिद्धिर्वन्दितासिद्धैः ११) इसप्रकार नवदुर्गा स्तुतिकर बारंबार प्रणामकर सब देवता प्रार्थना करतेभये कि हे भगवती ! इस सङ्कट में आपही हमारी रक्षाकरो और कोई हमको अवलम्ब नहीं है यह देवताओं का वचन सुन सिंहपर आरूढ़ बीसभुजाओं में नानाप्रकार के आयुधधारे नवदुर्गा सहित कुमारीस्वरूप भगवती प्रकट भई और बड़े पराक्रमी प्रचण्ड ब्रह्माजी के वरदान से गर्वित बड़े अधर्मी और अन्तर्भूमग से दैत्य भी वहांही आये उन में रुन्द्रसारी गुन्कर्ण।

नरकारिष्ट पुलोमा शरभ शम्बर दुन्दुभि इल्वल नमुचि भौम वातापि धेनुक कलि मायावृत वलवन्धु कैटभ काल-जित् राहु पौंड्र आदि दैत्य मुख्य थे ये सब प्रज्वलित अग्नि के समान तेजस्वी अनेक प्रकार के शस्त्र अस्त्र और ध्वजा धारण किये अनेक भांति के वाहनों पर चढ़े थे उनके आगे पणव भेरी गोमुख शंख डमरू डिंडिमआदि वाजे वजते थे वे सब दैत्य आयकर युद्धके बीच शर शूल परिघ पट्टिश शक्ति तोमर कुन्त शतघ्नी गदा मुद्गर आदि नानाप्रकार के आयुधों की वृष्टि भगवती के ऊपर करनेलगे तब भगवती क्रोधसे प्रज्वलितहो दैत्योंका संहार करनेलगी और उनके ध्वजआदि चिह्न वलात्कार से हरकर देवताओं को दिये क्षण-मात्र मेंही अनन्त दैत्यों का क्षयकिया और रक्तासुरको कण्ठ से पकड़ भूमिपर गिराय त्रिशूल से उसका हृदय विदारणकर दिया शेष दैत्य भयसे पलायन करगये इसभांति देवताओं ने जयपाया पीछे छत्रपुरमें आय भगवती का बड़ा उत्सव किया और तोरणको बड़े २ ध्वजों से अलंकृत किया देवताओं ने नवमी के दिन जयपाया और उत्सवकिया इसलिये और भी जो राजा नवमीका उपवासकर भगवतीका उत्सव करें और ध्व-ज चढ़ावें वे अवश्यही जयपावें इतना सुन राजा युधिष्ठिर ने पूछा कि हे श्रीकृष्णचन्द्र ! नवमीव्रतका क्या विधान है उसको आप वर्णन करें तब श्रीकृष्ण भगवान् कहने लगे कि हे महाराज ! पौषशुक्ल नवमी को स्नानकर पूजन के लिये अपने हाथ से पुष्पलावे और सिंहवाहिनी कुमारी भगवतीका पू-जन करै और अनेक प्रकार के ध्वज भगवती के आगे स्थापन कर मालतीपुष्प धूप दीप नैवेद्य पशुबलि सुरा मांस माला

वस्त्र दधि चन्दन और भी विना अग्नि सिद्ध अनेक प्रकार के भक्ष्य भोज्य भगवती को निवेदन कर (रुद्रांभगवतीं कृष्णां ग्रहनक्षत्रमालिनीम् । प्रपन्नोहंशिवांरात्रिं सर्व्वशत्रुक्षयंकरीम्) यह मन्त्र पढ़ै पीछे कुमारी और भगवती के भक्त ब्राह्मणों को भोजन कराय क्षमापन करावै उपवास करै अथवा भक्ति से एक भक्तही करै इस भांति जो पुरुष नवमी का उपवास कर ध्वजों से भगवती का पूजन करैं उनको चौर अग्नि जल राजा शत्रु आदि का भय नहीं होता इस नवमी को भगवती का विजय भया है इस लिये यह नवमी भगवती को अति प्रिय है जो भक्ति से नवमी को भगवती का पूजन कर ध्वजा रोपण करै वह सब सुख भोग अन्त में वीरलोक को जाता है ॥

पचपनवां अध्याय ॥

उल्का नवमी का विधान और फल ॥

श्रीकृष्णभगवान् कहते हैं कि हे महाराज ! आश्विन शुक्ल नवमी को स्नान कर देवता और पितरों का तर्पण कर गन्ध पुष्प धूप नैवेद्य मांस मत्स्य सुरा आसव आदि से भैरवप्रिया चामुण्डा का पूजन कर हाथ जोड़ नम्रहो (महिषघ्नि महामाये चामुण्डेमुण्डमालिनि । द्रव्यमारोग्यविजयं देहिदेवि नमोस्तुते) पीछे सात पांच अथवा एक कुमारी को भोजन कराय नील कंचुक भूषण वस्त्र दक्षिणा देकर सन्तुष्ट करै श्रद्धा से भगवती प्रसन्न होती है यह वीरानुशासन है पीछे अभ्युक्षण कर गोबर का चौका लगाय उसपर आसन बिछाय आसन पर आप बैठे और सन्मुख पात्र धरकर जो कुछ भोजन सिद्ध होय सब परोस लेवै पीछे एक मुट्ठी तृण और आठ

सूखे पत्र लेकर अग्नि से प्रज्वलित कर भोजन करने लगे जबतक वह अग्नि प्रज्वलित रहै तावत्काल में भोजन करै अग्नि शान्त होतेही आचमन कर चामुंडा का हृदय में ध्यान करता हुआ प्रसन्नता पूर्वक गृह कृत्य करै इस प्रकार प्रति मास व्रत कर वर्ष समाप्त होनेपर कुमारी पूजन कर उनको वस्त्र भूषण भोजन आदि देकर क्षमापन करावै और ब्राह्मण को सुवर्ण और गौ देवै इस विधिसे जो पुरुष नवमी व्रतकरैं उनको शत्रु अग्नि राजा चोर भूत प्रेत पिशाच आदि का भय नहीं होता युद्ध के बीच शस्त्र नहीं लगते और सब संकटों में चामुण्डा उनकी रक्षा करतीहै इस उल्का नवमी व्रतके करनेहारे पुरुष और स्त्री उल्काकी भांति तेजस्वी होजाते हैं॥

छप्पनवां अध्याय॥

दशावतार व्रतका विधान और फल॥

श्रीकृष्ण कहते हैं कि हे महाराज! सत्ययुग के आदि में भृगुऋषि भये उनकी भार्य्या बड़ी पतिव्रता थी जिसका नाम दिव्या था भृगु भी उससे अत्यन्त प्रसन्न रहते थे एक समय अपने अग्निहोत्र आदि अपनी भार्य्या को सौंप आप संजीवनी विद्या के लिये हिमालय के उत्तर भाग में जाय तप करनेलगे और शिवजी का आराधन कर उन से संजीवनी विद्या पाय दैत्यराज को सदा विजयी किया चाहते थे इसी अवसर में गरुड़ पर चढ़ विष्णुभगवान् वहां आय दैत्यों का वध करने लगे और क्षणमात्र में दैत्यों का संहार किया तब भृगुकी भार्य्या भगवान् को शाप देने के लिये उद्यत हुई उसके मुखसे शाप निकलनाही चाहता था कि विष्णुभगवान् ने चक्र से उसका भी शिर भुट्टासा उड़ा दिया इतने में भृगु

मुनिभी संजीवनी विद्यापाय वहांआये, तो देखा कि सब दैत्य और ब्राह्मणी भी मारीगई, तब क्रोधकर विष्णुभगवान्‌को शाप दिया कि तुम दश बार भूमिपर जन्मलो इतना कह, श्रीकृष्ण भगवान् बोले कि हे महाराज! भृगुमुनि के शाप से और जगत् की रक्षा के लिये हम बार२ अवतार लेते हैं जो मनुष्य भक्तिसे हमारा अर्चन करते हैं वे अवश्य स्वर्गगामी होते हैं राजा युधिष्ठिर कहते हैं कि हे श्रीकृष्णचन्द्र! आप अब दशावतार व्रतका विधान वर्णन कीजिये तब श्रीकृष्ण भगवान् कहनेलगे कि हे महाराज! भाद्रपद की शुक्ल दशमी को नदी आदि में स्नान और तर्पणकर घर आय दो मूठी धान्य चूर्ण लेकर घृत में पकावे इस भांति दश वर्षतक प्रति वर्षकरै और दशों वर्षों में क्रम से पूरी घेवर कसार गणक सोमलकखण्डवेष्टित कसार अर्कपुष्प कर्णवेष्ट और मण्डक ये पक्वान्न उस चूर्ण के बनाय भगवान्‌को नैवेद्य लगावे और भी बहुतसा पक्वान्न बनाय आधा भगवान् को नैवेद्य लगाय चौथाई ब्राह्मण को दे और चौथाई में से आप भोजन करे प्रथम गन्ध पुष्प धूप दीप आदि उपचारों करके (मत्स्यंकूर्मंवराहं च नरसिंहं त्रिविक्रमम् । रामं रामं च रामं च बुद्धंचैवसकल्किनम् ॥ गतोस्मिशरणंदेवं हरिं नारायणंप्रभुम् । प्रणतोस्मिजगन्नाथं सचविष्णुःप्रसीदतु ॥ छिनत्तुवैष्णवींमायां भक्त्याप्रीतोजनार्दनः । श्वेतद्वीपंनयत्वस्मान्मयात्माविनिवेदितः) इन मन्त्रों से दशावतार का पूजन करे इस प्रकार जो इस व्रत कोकरै वह भगवान् के अनुग्रह से जन्म मरण रहित हुई और सर्वदा विष्णुलोकमें निवास करै॥

सत्तावनवां अध्याय॥

तारकद्वादशीका विधान फल और एक राजा की कथा॥

राजा युधिष्ठिर बोले कि हे श्रीकृष्णचन्द्र! मैं बड़ा पातकी हूं भीष्म द्रोण आदि महात्माओं का मैंने वध किया अब कृपा कर आप ऐसा कोई उपाय बतावैं जिससे इस पाप से छूट जाऊं राजा का यह वचन सुन श्रीकृष्णभगवान् कहने लगे कि हे महाराज! विदर्भ देश में एक बड़ा प्रतापी यशोध्वज नाम राजा था एक दिन उसने मृगया में मृग के धोखे एक तपस्वी ब्राह्मण को बाण से मार दिया उस पाप से वह मरने के अनन्तर रौरव नरक में पड़ा वहां बहुत काल तक यातना भोगकर भयङ्कर सर्प बना सर्प योनि में भी उसने क्रोध वश हो एक ब्राह्मण को डसा डसतेही वह ब्राह्मण मरगया और मरते मरते एक लाठी सांप को भी मारी जिससे उस के भी प्राण गये फिर वह सिंह बना और जीवों का संहा करनेलगा वह सिंह एक राजा के हाथ से मारा गया फि वह व्याघ्र हुआ और एक वैश्य को उसने वन में मारा फिर वह मार्जार हुआ और चाण्डाल बालकों के हाथ मारा गय पांचवें जन्म में समुद्र के बीच अति भयङ्कर मकर बना और एक स्त्री वहां स्नान करने आई थी उसको खैंच लेगया और धीवरों ने उसको मारा छठे जन्म में पिशाच हुआ और अनेक मनुष्यों के प्राण हरे तब एक सिद्ध ने अपनी शक्ति से उसका संहार किया सातवें जन्म में अति क्रूर ब्रह्मराक्षस हुआ और गुर्जर देश को शून्य करने लगा तब भी सदास राजा ने ब्रह्मास्त्र से उसका संहार किया फिर आठवें जन्म में व्याघ्र बना और एक बराह ने उसको मारा नवें जन्म में जम्बुक हुआ

और श्मशान में मांसके लिये गयाथा वहां चिता ऊपर गि-
रने से दग्धहोगया दशवें जन्ममें गृध्रहुआ उसको भी एक
चाण्डाल ने बाण से मारा ग्यारहवें जन्म में बड़ा क्रूरकर्मा
और भयङ्कर स्वरूप चाण्डाल हुआ और कई मनुष्य उसने
मारे इसलिये राजाने उसको शूलीपर चढ़ाया बारहवें ज-
न्म में बिलवासी जीव बना और एक व्याध के हाथ मरा उस-
ने पूर्वकाल में तारक द्वादशी का व्रतकियाथा इसलिये इन
पाप योनियों से जल्दी २ छुटतागया फिर वह विदर्भ देशका
धर्मात्मा राजा हुआ और भक्तिसे तारक द्वादशीका व्रत
किया करता उसके प्रभाव से बहुतकाल निष्कण्टक राज्य
कर स्वर्गको गया इतना सुन राजा युधिष्ठिर पूछते भये कि हे
श्रीकृष्णचन्द्र ! इसव्रतको क्योंकर करना चाहिये और पतिकी
आज्ञापाय नारी इसव्रतको किस विधान से करै यह आप
कहैं । तब श्रीकृष्णभगवान् कहनेलगे कि हे महाराजन् !
एकसमय द्वारका में हमारे पास बड़े तपस्वी मुद्गलमुनि आये
हमने उनको पूजनकर आसनपर बैठाया और यमादर्शन
नाम व्रतका विधान उनसे पूछा तब मुद्गलमुनि कहनेलगे कि
हे श्रीकृष्णचन्द्र ! एकसमय यमदूत आये और उनने दण्ड
से हमारे मस्तक में ताड़नकिया तब हमको मूर्च्छा होगई च-
मकते भी अंगुष्ठमात्र पुरुष हमारे देह से निकाल दृढ़ बांध
कर यमलोकको लेगये वहां देखा कि अति भयंकर कृष्ण-
वर्ण यमराज तो मध्य में सिंहासन के ऊपर बैठे हैं और उनके
चारोंओर [illegible]
भयानक [illegible] कुम्भकर्ण प्रमेह [illegible] आदि [illegible]
[illegible] हाथ जोड़े खड़े हैं अनेक प्रकार के शस्त्र

अस्त्र लिये दूत और हजारों राक्षस विद्यमान् हैं चित्रगुप्त आदि लेखक सम्मुख बैठे सबके पाप पुण्यका हिसाब कर रहे हैं यह अद्भुत रचना यमराजकी सभाकी देख हम को बहुत त्रासहुआ यमराज ने हम को देख दूतों से कहा कि हे मूर्खो ! इस मुनिको क्यों ले आये कौंडिन्य नगर में भीष्मक का पुत्र मुकुन्दनाम क्षत्रिय है उसको लाओ और इस ब्राह्मण को छोड़दो तब हमको उनने छोड़दिया हमने भी यमराज को प्रणामकिया और यमादर्शन व्रतका विधान उनसे पूछा उनने भी प्रसन्नहो जो हमको कहा वह विधान हम आप को कहते हैं इतना कह मुकुलमुनि ने व्रतविधान हम को कहा वही हम आपके आगे वर्णन करते हैं मार्गशुद्ध पक्ष की द्वादशी को नदी आदि में स्नानकर तर्पण पूजन आदि कर हवनकरै सूर्यास्त पर्यंत हवन करता रहै सूर्यास्त होतेही गोबरका मण्डल भूमिपर बनाय उसमें चन्दनका ध्रुव लिख चांदी अथवा ताम्र के अर्घ्यपात्र में मोती पुष्प फल अक्षत गन्ध सुवर्ण जल रखकर मस्तक तक उस पात्रको उठाय दोनों जानु भूमिपर टेक पूर्वाभिमुख होकर सहस्र-शीर्षा मन्त्र करके अर्घ देवै पीछे ब्राह्मण भोजन करावे बारह महीनों में क्रम से खण्डखाद्य सोमलके तिल तण्डुल गुड़ के अपूप मोदक खंडवेष्टक सत्तू अपूप मधुशीर्ष पायस घृत पूर और कसार ब्राह्मणों को भोजनकरावे पीछे क्षमापन कर मौन से आपभी भोजनकरै इस विधि से जो पुरुष अथवा स्त्री व्रतकरैं वे अप्सरा गन्धर्व यक्ष विद्याधर आदि करके सेवित सूर्य के समान भासमान विमान में बैठ नक्षत्र लोकको जाते हैं वहां अयुतकल्प पर्यंत निवासकर विष्णुलोक में

प्राप्त होते हैं यह व्रत सती श्री उमा, सीता, राज्ञी, दमयंती, रुक्मिणी, सत्यभामा, मेनका, रम्भा, उर्वशी आदि नारियों ने किया है इस व्रतके करनेसे अनेक जन्मोंमें किये पातक कट जाते हैं ॥

अट्ठावनवां अध्याय ॥

अरण्य द्वादशी का विधान और फल ॥

राजा युधिष्ठिर कहते हैं कि हे श्रीकृष्णचन्द्र ! अब आप अरण्य द्वादशीका विधान वर्णन करैं तब श्रीकृष्णभगवान् कथन करने लगे कि हे महाराज ! यह व्रत रामचन्द्र जी की आज्ञासे वनमें सीता ने कियाथा और अनेक प्रकारके भक्ष्य भोज्य आदिसे मुनिपत्नियों को सन्तुष्ट किया उस व्रतका हम विधान कहते हैं आप प्रीतिसे श्रवण करैं मार्गशुक्ल एकादशी को प्रभातही स्नान कर भगवान्का भक्तिसे पूजन करै उपवास रक्खै और रात्रिको जागरण करै दूसरे दिन स्नान आदिकर वेद वेदांग जाननेहारे ब्राह्मणों को उपवन में ले-जाय भोजन कराय पंचगव्यप्राशन कर आपभी भोजन करै इस विधिसे एकवर्ष व्रतकरै और माघ, श्रावण और कार्तिक में मण्डक घृतपूर खण्डवेष्टक अनेक प्रकार के शाक और व्यंजन अपूप मोदक सोहालक आदि भांति २ के पक्वान्न और नाना विधि दधिरत भोजनसे ब्राह्मणों को तृप्त करै और कर्पूर, इलायची, कुंकुम, कस्तूरी आदि से सुगन्धित पानक इनसे विविध सुन्दर फलोंसे युक्त वन में ज-लाशय के निकट [illegible] भोजन करावै वनमें रहने हारे मुनि [illegible] ब्राह्मणों को भोजन करावै [illegible] पद्मनाभ, विष्णु

गोवर्द्धन, त्रिविक्रम, श्रीधर, हृषीकेश, पुण्डरीकाक्ष और वराह इन नमस्कारान्त नामोंसे एक एक ब्राह्मण का पूजन कर भोजन कराय वस्त्र और दक्षिणा देकर (विष्णुर्मेप्रीयताम्) यह वाक्य कहै पीछे अपने सुहृत् सम्बन्धी और बान्धवों सहित आपभी वहां भोजन करै इस प्रकार जो अरण्य द्वादशी व्रत करै वह अपने सब परिवार सहित दिव्य विमान में बैठ श्वेत द्वीप को जाताहै जहांके सब निवासी चतुर्भुज श्याम देह पीतवस्त्र शंख चक्र गदा पद्मधारे कौस्तुभ मणि और मुकुट कुण्डल आदि भूषणोंसे शोभित और लक्ष्मी करके आलिंगित साक्षात् विष्णुस्वरूपही हैं वहां प्रलय पर्यंत निवास कर मुक्ति पाता है और जो नारी इस व्रतको करैं वेभी संसारके सबसुख भोग भगवान् के अनुग्रह से मोक्ष पाती हैं ॥

उनसठवां अध्याय ॥

रोहिणी व्रतका विधान और फल ॥

राजा युधिष्ठिर पूछते हैं कि हे श्रीकृष्णचन्द्र! वर्षाकाल में जब आकाश नीलमेघों से आच्छादित होजाता मयूर चारों ओर मीठी मीठी बोली बोलने लगते हैं दर्दुर कोलाहल मचाते हैं उस समय कुलस्त्री किसको अर्घ्यदेती हैं क्या व्रत करती हैं और किस तिथिको करती हैं यह आप वर्णन करैं यह राजाका प्रश्न सुन श्रीकृष्णभगवान् कहने लगे कि हे महाराज ! श्रावण मासके कृष्णपक्ष की एकादशी को शुचि होकर सर्वौषधि जलसे स्नान करै पीछे उड़दके आटेकी एकसौ डिडिरिका और पांच मोदक बनाय सब सामग्री लेकर उत्तम जलाशय पर जावै वहां गोबर का मण्डल बनाय उसमें रोहिणी सहित चन्द्रका गन्ध पुष्प धूप दीप अक्षत

नैवेद्य आदिसे पूजनकर कटिप्रमाण जल में प्रवेशकर मन में रोहिणी और चन्द्रका ध्यान करता हुआ वे डिडिरिका जल के मत्स्यआदि जीवोंको खिलावे पीछे जल के बाहिर आकर चन्द्रमाको अर्घ्यदेकर ब्राह्मणको भोजन कराय द-क्षिणादेवै दशवर्ष पर्यंत इस विधि से जो स्त्री अथवा पुरुष व्रतकरै वह धन धान्य पुत्र पौत्र आदि सब पदार्थ पाय बहुत काल संसारसुख भोगकर ब्रह्मलोक जो जाता है वहां से वि-ष्णुपुर में और वहांसे भी शिवलोक में प्राप्त होताहै ॥

साठवां अध्याय ॥

अवियोग व्रतका विधान और फल ॥

राजा युधिष्ठिर पूछते हैं कि हे श्रीकृष्णचन्द्र ! अब आप यह वर्णन करें कि अवियोग व्रत किस विधि से किया जाता है तब श्रीकृष्णभगवान् कहने लगे कि महाराज अवियोग व्रत सब व्रतों में उत्तम है अब हम उसका विधान कहते हैं आप श्रवण कीजिये। भाद्र शुक्ल द्वादशी को प्रभात उठ जलाशय पर जाकर स्नान करे और उसके तट पर हरे गोबर से मण्डल लिखकर उसमें लक्ष्मी सहित विष्णु गौरी सहित शिव सावित्री सहित ब्रह्मा और संज्ञा सहित सूर्यनारायण का सब उपचारों से इन मन्त्रों करके पूजन करे (सहस्रशीर्षा पु-रुषः पद्मनाभो जनार्दनः । आद्यर्षिः कपिलाचार्यो भगवान् पुरुषोत्तमः १ नारायणो हृषीकेशो विष्णुर्दामोदरो हरिः । ब्रह्मा महेशो गोविन्दः केशवानन्तश्च धरः २ कृष्णः सपुण्डरीकाक्षो विष्वक्सेनोऽधिक्षजः । उपेन्द्रो वासुदेवश्च वैकुण्ठो माधवो ध्रुवः ३ [illegible] । [illegible] [illegible] ४ [illegible]

श्रीकः केशिसूदनः ५) उमापतिर्नीलकण्ठः स्थाणुःशम्भुर्भ गास्तिहत् । ईशानोभैरवः शूली त्र्यम्बकस्त्रिपुरान्तकृत् १ कपर्द्दीशोमहालिङ्गी महाकालोवृषध्वजः । शिवःशंभुर्महादेवोरुद्रोभूतमहेश्वरः २ समास्त्वहहिपार्वत्या शङ्करःशङ्कर श्रियस् ३) ब्रह्माशम्भुःप्रभुःस्रष्टा पुष्करीप्रपितामहः । हिरण्यगर्भोवेदज्ञः परमेष्ठीप्रजापतिः १ वेधाश्चतुर्मुखःकर्त्ता स्वयम्भूःकमलासनः । विरञ्चिःपद्मयोनिश्च ममास्तुवरदः प्रभुः २) आदित्योभास्करोभानुः सूर्योर्कःसविताःरविः । मार्तण्डोमण्डलीज्योतिरग्निरश्मिर्महेश्वरः १ प्रभाकरः सप्तसप्तिः पारगस्तरणिःखगः । दिवाकरोदिनकरः सहस्रांशुर्मरीचिमान् २ पद्मप्रबोधनःपूषा किरणीमेरुभूषणः । निक्षुभावल्लभोदेवः सुप्रीतोस्तुसदाममम ३) लक्ष्मीःश्रीःसम्पदापद्मा मेविभूतिर्हरिप्रिया । पार्वतीललितागौरी उमाशङ्करवल्लभा । गायत्रीविकृतिःसृष्टिः सावित्रीमेवरप्रदा । राज्ञीभानुमतीसंज्ञा निक्षुभाभास्करप्रिया) इन मन्त्रों से चारों मिथुनों का पूजन कर ब्राह्मण भोजन कराय अनेक प्रकार के दान कर आपभी भोजन करै जो इस व्रतको करै उसको कभी इष्ट वियोग नहीं होता और वहुत काल संसार सुख भोग कर क्रम से ब्रह्मा विष्णु शिव और सूर्य्यलोक में निवास कर मोक्ष पाता है और जो नारी इस व्रत को करै वह भी सब अभीष्ट फल पावै॥

इकसठवां अध्याय॥

गोवत्सद्वादशी का विधान, फल गौओंका माहात्म्य, मुनियों और राजा उत्तानपादकी कथा॥

राजा युधिष्ठिर कहते हैं कि हे श्रीकृष्णचन्द्र ! अठारह

अक्षौहिणी सेना मेरे निमित्त मारी गई उस पाप से मेरे चित्त में बड़ी ग्लानि रहती है उनके बीच ब्राह्मण क्षत्रिय आदि सब थे भीष्म द्रोण कर्ण शल्य दुर्योधन आदि सब मार-दिये उनके वध का पाप निरन्तर मेरे मर्मों को छेदन करता है अब आप कोई ऐसा उपाय कहैं कि इस पाप का क्षालन होय तब श्रीकृष्ण भगवान् ने कहा कि हे महाराज! आप गोवत्सद्वादशी का व्रत करें उससे सब पातक छूट जाते हैं। राजा ने पूछा कि उस व्रत का क्या विधान है और कब किया जाता है तब श्रीकृष्ण भगवान् फिर कहने लगे कि पारियात्र पर्वत पर लकुलिकाश्रम के बीच जिसका नाम ठंढा गिरि है वहां एक बड़ा वन है जिसमें अनेक मुनियों के आश्रम हैं चारों ओर सिंह, हाथी, हरिण, वानर, शश, वराह आदि जीव विहार करते हैं और वृक्षों करके वह वन अतिही रमणीय है वहां सत्ययुग में बहुत से मुनि लकुलिकाश्रम के बीच तप करने लगे बहुत काल उनको तप करते हुआ तब शिवजी वृद्ध ब्राह्मण का रूप धार लाठी हाथ में लिये कांपते हुये वहां आये और पार्वती जीने भी जैसा रूप बनाया वह सुनो समुद्र मथन के समय पांच गौ उत्पन्न भई हैं नन्दा, सुभद्रा, सुरभी, सुशीला और नन्दिनी ये पांचों [illegible] हैं और देवताओं की तृप्ति तथा लोकोपकार के लिये उत्पन्न भई हैं इन पांचों धेनुओं को जमदग्नि भरद्वाज वशिष्ठ गौतम और शिवजी ने ग्रहण किया गोबर गोमूत्र गोरोचन दुग्ध दही और घृत ये छः पवित्र पदार्थ गौओं से [illegible] होते हैं गोबर से बिल्ववृक्ष उत्पन्न भया जो शिवजी को प्रिय [illegible]

उसको श्रीवृक्ष कहते हैं उत्पल और कमलों के बीज भी गोबरसेही उत्पन्न भये हैं गोरोचन मांगल्य पवित्र और सर्वकार्य साधक होता है गोमूत्र से अति सुगन्ध गुग्गुल उत्पन्न हुआ जिसका धूप सब देवताओं को और विशेष कर- के शिवजी को प्रिय है दुग्ध से अनेक उत्तम पदार्थों की उ- त्पत्ति है दही मंगलप्रद है और घृतसे सब देवताओं को तृप्त करनेहारा अमृत उत्पन्न हुआ एक कुलकेही ब्राह्मण रूप और गोरूप दोभाग होगये हैं ब्राह्मणों में मन्त्र रहते हैं और गौओं में हवि गौओंसे यज्ञ प्रवृत्त होते हैं सब देवता गौओं में निवास करते हैं षडंग सहित वेद गौओं से उत्पन्न भये हैं गौओं के शृंगमूलमें ब्रह्मा और विष्णु स्थित हैं शृंगाग्र में स्था- वर जंगम सब तीर्थों का निवास है शिर में महादेव ललाट में पार्वती नासावंस में कार्तिकेय नासिका के दोनों पुटों में कं- बल अश्वतर नाग कानों में अश्विनीकुमार नेत्रों में सूर्य्य चन्द्र दन्तों में सबवायु जिह्वामें वरुण हुंकारमें सरस्वती दोनों पार्श्व में यम और कुबेर दोनों सन्ध्यागलकंबलमें ग्रीवामें इन्द्र आठवसु पार्ष्णि में जंघाओं में चतुष्पाद धर्म खुरों के मध्य में गन्धर्व खुराग्रों में नाग खुरों के पृष्ठभागमें सम्पूर्णराक्षस पुच्छ में आदित्य गोमूत्र में साक्षात् गंगा गोबर में यमुना रोमकूपों में तेंतीसकोटि देवता उदर में पर्वत समुद्र आदि सहित भूमि चारोंस्तनों में चारसागर दुग्धधारा में विद्युत् सहित मेघ श्वेत रक्त पीत कृष्ण गौओं के इनचारवर्णोंमें ऋग्वेद यजु- र्वेद सामवेद और अथर्ववेद स्थित हैं इस भांति सर्व देवमयी और सर्वतीर्थमयी धेनु हैं। यह मनमें विचार पार्वतीजीने नं- दिनीधेनुकारूप धारा जिसके सब अंग अति सुन्दर शुक्ल

वर्ण और चारोंस्तनों से दुग्ध टपकरहा है कार्तिकेय बछड़ा बने महादेवजी भी वृद्ध ब्राह्मण का रूपधारे उन दोनों गौ और बछड़ा को लेकर जहां मुनि तपकरते थे वहां पहुंचे और कुलपति भृगुमुनि के पासजाय कहा कि दो दिन आप इस हमारी गौको अपने पास रहने देवैं इतने में हम समीपवर्ती तीर्थ की यात्रा करआवैं भृगुजीने कहा बहुत अच्छा और वह धेनु मुनियों के हवाले करदी महादेवजीने वहां से अन्तर्द्धान होकर सिंह का रूपधारण किया कि जिसके वज्र कठोर और अतितीक्ष्ण नख जलतेहुये पिंगल वर्ण नेत्र बड़ी २ और तीखी दाढ़ लम्बी पूंछ और लटकती हुई लाल जिह्वा इस प्रकार अति कराल रूपधार आश्रम के समीप आय गर्जने लगे वह घोर शब्द सुन गौ और बछड़ा त्रास को प्राप्त भये सब मुनियों में हाहाकार मच गया गौ बछड़ा भय से भगे और सिंह भी पीछे लगा उन सब के चरणोंके चिह्न आज तक भी शिला के ऊपर देख पड़ते हैं जिनको सब देवता पूजते हैं और तीर्थ सहित शिवलिंग भी वहां है जिसलिंगके स्पर्श से गोहत्या निवृत्त होती है और जंबू मार्ग में स्थित उस शिव तीर्थ में स्नान करने से ब्रह्महत्या आदि महापातक कटजातेहैं वे मुनि भी यह वृत्तान्त देख प्राण त्याग करने को उद्यत भये तब देखा कि नतो कहीं सिंह है और न बछड़े समेतगौ है सब मुनि यह आश्चर्य देख विचारही कर रहे थे कि पार्वती सहित वृष पर आरूढ़ त्रिशूल हाथ में लिये कार्तिकेय, गणपतिनन्दी महाकाल, भृङ्गी, वीरभद्र, घंटाकर्ण, चामुंडा, मातृका, भूतयक्ष राक्षसगुह्यकदेव, दानव, गन्धर्व आदि सहित श्रीमहादेव जी वहांप्रकट भये मुनि उनका दर्शन पाय कृतार्थ भये और भक्ति से

उनका पूजन किया और गोरूपिणी श्रीपार्वती का सपत्नीकमुनियों ने प्रीति से अर्चन किया उसीदिन से कार्तिककृष्णपक्ष में गोवत्सद्वादशी व्रत का प्रचार हुआ है उत्तानपाद इस व्रतको सदा किया करता था उसका हम वृत्तान्त कहते हैं उत्तानपाद एकराजा था उसके रुची और श्रुघ्नीनामदो रानी थीं श्रुघ्नीके ध्रुव नामक पुत्र उत्पन्न भया कुछ दिनके अनन्तर श्रुघ्नी ने रुचीसे कहा कि हे सखि! तू इसबालकका पालन कर और मैं पति की शुश्रूषा में रहूँगी रुची ने यह बात अंगीकार करली और श्रुघ्नी पति की सेवा में तत्परभई एक दिन ईर्षासे रुचीने उसबालकको मार खण्ड२ कर रांधलिया और भोजनके समय राजा के आगे वही मांस परोसा राजा भोजन कियाही चाहता था कि वह बालक जीकर उठ खड़ा हुआ तब सबको आश्चर्य भया कि यह क्या माया है रुची ने श्रुघ्नी से पूछा कि यह तेरे किस पुण्य का प्रभाव है कि सातबार इसबालक को ईर्षा से मैं वध करचुकी परन्तु यह फिर जी उठता है क्या तू मृतसंजीविनी विद्या जानती है कि कोई मणिमन्त्र औषधी आदि तेरे पास है जिससे यह बालक नहीं मरता पात मुझको सत्यबता दे तब श्रुघ्नी ने कहा कि हे रुचि! मैंने गोवत्स द्वादशी व्रत किया है उसीका यह सब प्रभाव है इस व्रत के करने से कभी पुत्र से वियोग नहीं होता तूभी इस व्रत को करै तो बड़े प्रतापी और दीर्घजीवी पुत्र पावै यह सपत्नीके वचन सुन रुची भी व्रत करने लगी और पुत्र धन सुख आरोग्य आदि सब पाये और अन्त में पति सहित ध्रुवस्थान में प्राप्त भई ब्रह्माजीने भी उनका बहुत सत्कार किया अद्यापि ध्रुव उत्तानपाद और रुचि का आकाश में दर्शन होता है

जो उनके दर्शनकरै वह सब पापों से मुक्तहोय इतनी कथा सुन राजा युधिष्ठिरने गोवत्सद्वादशी व्रतका विधान पूछा तब श्रीकृष्णचन्द्र कहने लगे कि हे महाराज! कार्तिक कृष्ण द्वादशी को स्त्री अथवा पुरुष संकल्पकर नदीमें स्नान करै और एकभक्त व्रत रखकर मध्याह्नके समय सुशीला और सवत्सा कपिला गौ का गन्ध पुष्प जल अक्षत दीप अनेक प्रकारके नैवेद्य उड़दके बड़े और भी जो पदार्थ गौ को प्रियहों उनसे गौ और बछड़े का (ॐमाता रुद्राणां दुहिता वसूनां स्वसादित्यानामम्तस्यनाभिः। प्रणवोचश्चिकितुषेजना पनागामदितिं वशिष्ठयानमो गोभ्यो नमः स्वाहा) इस मन्त्र करके पूजनकरै पीछे हाथ जोड़ (ॐसर्वदेवमये देवि सुभद्रेभद्रवत्सले। मातर्ममाभिलषितं सफलं कुरु नन्दिनि) यह मन्त्रपढ़ क्षमापन कराय गौको तृप्ति पूर्वक भोजन करावै और आपभी तवे और स्थाली में सिद्धहुआ भोजन न खाय और ब्रह्मचर्य से भूमिपर शयनकरै इस व्रतका करने द्वारा गौके शरीरमें जितने रोमहैं उतने दिव्यवर्ष गोलोक में निवास करता है। मेरुपृष्ठके ऊपर अष्ट दिक्पालों की पुरी हैं और इन सबके ऊपर गोलोक है जो कार्त्तिक कृष्ण द्वादशी को गन्ध पुष्प वटकआदि से सवत्सा गौका भक्ति से पूजन करते हैं वे कभी सन्तान का कष्ट नहीं पाते और संसार का सनसुख भोग गोलोक को जाते हैं॥

वासठवां अध्याय॥

गोविन्दशयन व्रतका विधान चातुर्मास्य के नियम और फल॥

श्रीकृष्णचन्द्र कहते हैं कि हे महाराज! अब हम गोविन्दशयन व्रतका विधान और चातुर्मास्य के नियम कहते

हैं मिथुन के सूर्य में विष्णु भगवान् को शयन करावै और तुला के सूर्य्य में फिर उठावै आषाढ़ शुक्लपक्षकी एकादशी को उपवासकर शंख चक्र गदा पद्म धारे पीताम्बर पहिने ऐसी अति सुलक्षण भगवान्की प्रतिमाको पलंगके ऊपर शय्या बिछाय तकिये लगाय उसपर सुलावै प्रथम मूर्तिका पूजन कर इतिहास और पुराण जाननेहारा प्रतिमाको पंचामृत और शुद्ध जलसे स्नान कराय उत्तम गन्धसे लेपन कर भूषण वस्त्र पहिनाय पुष्प धूप और अनेक प्रकारके नैवेद्य निवेदन कर (सुप्तेत्वयिजगन्नाथ जगत्सुप्तंभवेदिदम् । विबुद्धेत्वयिबुध्येत जगत्सर्वंचराचरम्) इस मन्त्रसे प्रतिमाको शयन करावै प्रतिमा शयनसे उत्थापन पर्यन्त चार महीने स्त्री अथवा पुरुष भक्तिसे नियम ग्रहण करे उन नियमों को फल सहित हम कथन करते हैं गुड़को त्यागे तो मधुर स्वर होय तैलाभ्यंग न करै तो सुन्दर शरीरहोय कटुतैल छोड़े तो शत्रु नाश होय महुआ का तेल त्यागदे तो अतुल सौभाग्य पावै पुष्प आदि उपभोग त्यागने से स्वर्ग में जाय विद्याधर बनै जो योगाभ्यास करै वह ब्रह्मपद पावै कटु तिक्त मधुर क्षार आदि रसका त्याग करै वह कभी वैरूप्य और दौर्गन्ध्य को प्राप्त न होय ताम्बूल त्यागने से भोगी और मधुरस्वर होय घृत के त्याग से स्निग्ध और लावण्ययुक्त शरीर होय फल त्याग से पुत्र और बुद्धिकी प्राप्तिहोय शाक न खाय तो भोगी होय अपक्व भोजनकरै तो अमलहोय पादाभ्यंग और शिरोभ्यंग त्यागै तो धनकास्वामी यदा होय दही दूध छोड़ै तो गोलोक में प्राप्तहोय स्थालीपाक त्यागने से स्वर्ग को जाय कड़ाही तवे का पदार्थ त्यागै तो बहुत सन्तति होय भूमिपर सोवै

तो चतुरहोय मधु मांस त्यागै तो सदा मुनि और सदायोगी होय सुराका त्यागकरने से आरोग्य प्राप्त होय इत्यादि और भी वस्तुओं के परित्यागसे धर्म होता है एकान्तर उपवास करने से ब्रह्मलोककी प्राप्ति होती है नख और केशों के धारण करने से नित्य गंगास्नानका फल प्राप्तहोता है जो मौनरक्खे उसकी आज्ञा कभी भंग न होय भूमिपर रखकर भोजन करै तो भूमिपति होय (ॐनमोनारायणाय) इस मन्त्र को जपै तो अनशन व्रतका फलपावै विष्णुभगवान्के चरणों में प्रणामकरै तो गोदानका फलहोय चरणों के स्पर्शकरने से कृतकृत्य होजाय जो नित्य विष्णु भगवान् के सम्मुख लोगोंको पुराणसुनावै और धर्मोपदेश करै वह साक्षात् वेद-व्यासही है और अन्त में विष्णुलोकको जाय पुष्पमाला से भगवान्का पूजनकरै तो विष्णुलोकमें प्राप्तहोय विष्णुभग-वान्के आगे प्रेक्षणक अर्थात् नाचतमाशा करावै तो अ-प्सरालोक में निवास करै तीर्थ में स्नानकरै तो निर्मल देह पावै पंचगव्य प्राशन करने से चान्द्रायणका फल होय एक भक्तकरने से अग्निहोत्रका फलमिलै नित्य गंगास्नान करै तो नरक न देखै पात्रका त्यागकरै तो पुष्कर स्नानका फल होय पत्रों में जो भोजनकरै तो कुरुक्षेत्रका फलपावै शिला र भोजनकरै तो प्रयागस्नानका फल होय इत्यादि व्रतों से गवान् प्रसन्नहोते हैं चारोंवर्णों में विवाह यज्ञोपवीत चूड़ा रणआदि शुभक्रिया विष्णुशयन में न करै और भी गृह-वेश देवप्रतिष्ठा आदि न करै इसीप्रकार दक्षिणायन में ौर मलमास में भी शुभकृत्य न करै भाद्रशुक्ल एकादशी को गवान् करवटलेते हैं उसदिनभी महापूजा और बड़ाउत्सव

हैं मिथुन के सूर्य में विष्णु भगवान् को शयन करावै और तुला के सूर्य में फिर उठावै आषाढ़ शुक्लपक्षकी एकादशी को उपवासकर शंख चक्र गदा पद्म धारे पीताम्बर पहिने ऐसी अति सुलक्षण भगवान्की प्रतिमाको पलंगके ऊपर शय्या बिछाय तकिये लगाय उसपर सुलावै प्रथम मूर्त्तिका पूजन कर इतिहास और पुराण जाननेहारा प्रतिमाको पंचामृत और शुद्ध जलसे स्नान कराय उत्तम गन्धसे लेपन कर भूषण वस्त्र पहिनाय पुष्प धूप और अनेक प्रकारके नैवेद्य निवेदन कर (सुप्तेत्वयिजगन्नाथ जगत्सुप्तंभवेदिदम् । विबुद्धेत्वयिबुध्येत जगत्सर्वंचराचरम्) इस मन्त्रसे प्रतिमाको शयन करावै प्रतिमा शयनसे उत्थापन पर्यन्त चार महीने स्त्री अथवा पुरुष भक्तिसे नियम ग्रहण करैं उन नियमों को फल सहित हम कथन करते हैं गुड़को त्यागै तो मधुर स्वर होय तैला-भ्यंग न करै तो सुन्दर शरीरहोय कटुतैल छोड़े तो शत्रु नाश होय महुआ का तेल त्यागदे तो अतुल सौभाग्य पावै पुष्प आदि उपभोग त्यागने से स्वर्ग में जाय विद्याधर बनै जो योगाभ्यास करै वह ब्रह्मपद पावै कटु तिक्त मधुर क्षार आदि रसका त्याग करै वह कभी वैरूप्य और दौर्गन्ध्य को प्राप्त न होय ताम्बूल त्यागने से भोगी और मधुरस्वर होय घृत के त्याग से स्निग्ध और लावण्ययुक्त शरीर होय फल त्याग से पुत्र और बुद्धिकी प्राप्तिहोय शाक न खाय तो भोगी होय अपक्व भोजनकरै तो अमलहोय पादाभ्यंग और शिरोभ्यंग त्यागै तो धनकास्वामी यक्ष होय दही दूध छोड़ै तो गोलोक में प्राप्तहोय स्थालीपाक त्यागने से स्वर्ग को जाय कड़ाही तवे का पदार्थ त्यागै तो बहुत सन्तति होय भूमिपर सोवै

तो चतुरहोय मधु मांस त्यागै तो सदा मुनि और सदायोगी होय सुराका त्यागकरने से आरोग्य प्राप्त होय इत्यादि और भी वस्तुओं के परित्यागसे धर्म होता है एकान्तर उपवास करने से ब्रह्मलोककी प्राप्ति होती है नख और केशों के धारण करने से नित्य गंगास्नानका फल प्राप्तहोता है जो मौनरक्खे उसकी आज्ञा कभी भंग न होय भूमिपर रखकर भोजन करै तो भूमिपति होय (ॐनमोनारायणाय) इस मन्त्र को जपै तो अनशन व्रतका फलपावे विष्णुभगवान्के चरणों में प्रणामकरै तो गोदानका फलहोय चरणों के स्पर्शकरने से कृतकृत्य होजाय जो नित्य विष्णु भगवान् के सम्मुख लोगोंको पुराणसुनावे और धर्मोपदेश करै वह साक्षात् वेद-व्यासही है और अन्त में विष्णुलोकको जाय पुष्पमाला से भगवान्का पूजनकरै तो विष्णुलोकमें प्राप्तहोय विष्णुभग-वान्के आगे प्रेक्षणक अर्थात् नाचतमाशा करावै तो अ-प्सरालोक में निवास करै तीर्थ में स्नानकरै तो निर्मल देह पावै पंचगव्य प्राशन करने से चान्द्रायणका फल होय एक भक्तकरने से अग्निहोत्रका फलमिले नित्य गंगास्नान करै तो नरक न देखै पात्रका त्यागकरै तो पुष्कर स्नानका फल होय पत्रों में जो भोजनकरै तो कुरुक्षेत्रका फलपावै शिला पर भोजनकरै तो प्रयागस्नानका फल होय इत्यादि व्रतों से भगवान् प्रसन्नहोते हैं चारोंवर्णों में विवाह यज्ञोपवीत चूड़ा करणआदि शुभक्रिया विष्णुशयन में न करै और भी गृह-प्रवेश देवप्रतिष्ठा आदि न करै इसीप्रकार दक्षिणायन में और मलमास में भी शुभकृत्य न करै भाद्रशुक्ल एकादशी को भगवान् करवटलेते हैं उसदिनभी महापूजा और बड़ाउत्सव

करै अब हम इसशयनका कारण कहते हैं पूर्वकाल में योग निद्रा ने बड़ा तपकर हमको प्रसन्न किया और यह वर मांगा कि आपके शरीरमें मेरा निवासहोय तब हमने विचार किया कि हमारे वक्षस्स्थल में लक्ष्मीका निवास है चारों भुजाओं में शङ्ख चक्र आदि रहते हैं नाभिके नीचे गरुड़ ने रोकरक्खा है शिरपर मुकुट और कानोंमें कुण्डल रहते हैं केवल नेत्र खा़लीहैं यह विचार हमने योगनिद्रा को कहा कि चार महीने हमारे नेत्रों में निवास कियाकर उसदिनसे चार महीने हमारे लोचनों में प्रसन्नहोकर योगनिद्रा निवास करती है और हम शेषशय्या पर सोते हैं चातुर्मास्य में जो पुरुष अथवा स्त्रीव्रत और नियमसे रहै वह अवश्यही विष्णुलोक में निवासकरै फिर कार्त्तिकशुक्ल एकादशी को (इदंविष्णुर्विचक्रमे) इस मन्त्र कर के विष्णुभगवान् को शयनसे उठावै उस दिन से सब शुभ कृत्यों की प्रवृत्ति होती है शयनसे भगवान् को उठाय पहिली भांति महापूजनकर रथपर बैठाय नगर में घुमावै और दीप मालाआदि बड़ा उत्सव करै जहां २ भगवान् का रथ जाय वह भूमि स्वर्गसमान होजाती है रात्रिको देवालय में जागरणकरै द्वादशी के दिन प्रभातही स्नानकर भगवान् का अर्चनकरै और घृतयुक्त तिलों का हवन कर घृत क्षीर दही मोदक आदि पदार्थ ब्राह्मणों को भोजन करावै ग्यारह आठ पांच दो अथवा एकही ब्राह्मण का गन्ध पुष्प आदि से पूजन कर श्राद्धोक्त विधि से नित्य भोजन करावै और भी ब्राह्मणों को भोजन दक्षिणा देकर सन्तुष्ट करै और चातुर्मास्य में जिस वस्तुका त्याग कियाहोय वह भी ब्राह्मण को देवै पीछे आप भी भोजन करै इस विधिसे जो व्रत करै वह विष्णुलोक में

प्राप्त होता है जिसका यह चातुर्मास्यव्रत निर्विघ्न पूराहोजाय वह कृतकृत्य होजाता है और अन्त में विष्णुलोक को जाताहै जो भगवान् का यह उत्सवकरै और इसका अनुमोदनकरै वह विष्णुलोक में प्राप्तहोय जो सुनै ध्यानकरै स्तुति करै हवनकरै परन्तु हृदय में भगवान् की भक्तिहोय वह अवश्यही विष्णुलोक में निवास करै जिसदिन भगवान् सोवैं और जिसदिन उठैं उसदिन जो उपवास और भगवान् का अर्चन करै वह सद्गति पावै इस में कुछ सन्देह नहीं॥

तिरसठवां अध्याय॥

सबप्रकारकी शान्तिकरनेहारा नीराजन विधान॥

श्रीकृष्णचन्द्र कहते हैं कि हे महाराज! पूर्वकाल में प्रजापालनाम एक राजाथा उसने अपनी प्रजाके सब उपद्रव शान्तहोने के लिये शान्तिकरी जिससे उसकी प्रजा अत्यन्त सुख को प्राप्त भई इसीसे राजाका नाम प्रजापाल पड़ा और ज्वर आदि सब बड़े २ रोग राजा के आधीन रहतेथे उसीसमय बड़ाप्रतापी रावण नाम लंकाका राजाथा सब देवता जिसकी आज्ञा मानतेथे अखण्ड चन्द्रमण्डल छत्ररूप बनताथा इन्द्र जिसका सेनापतिथा वायु झाडूदेता वरुण जलछिड़कता कुबेर धनकी रक्षाकरता यम शत्रुओंका संहार करता मनु मन्त्र के समय सेवा में आता मेघ सेचनकरते और छत्र पुष्पवृष्टि करते ब्रह्मा सहित सनत्कुमारादि शान्ति आदि में तत्पर रहते नाग पहरादेते गन्धर्व गाते और अप्सरा नाचतीं गङ्गा आदि नदी स्नान करातीं अग्नि रसोई बनाता विश्वकर्मा अन्न का संस्कार करता मयासुर सब शिल्प के काम बनाता सब राजा नगरकी रक्षा करते सूर्यभगवान् प्रकाश करते

एकदिन रावणने पूछा कि हमारी सेवामें जो नहीं आयाहो उसको शीघ्रलाओ तब एक राक्षस हाथजोड़कर बोला कि महाराजाधिराज काकुत्स्थ मान्धाता धुंधुमार नल अर्ज्जुन ययाति नहुष भीम विदूरथ आदि सब राजा आपकी सेवा में स्थितहैं केवल एक प्रजापाल नाम राजा यहां नहीं आता यह सुनतेही रावणने अति कोपकिया और दूत से कहा कि जल्दी जाकर प्रजापाल से कहो कि शीघ्र हमारी सेवा में आवे नहीं तो चन्द्रहास नामक खड्ग से उसका मुण्ड रुण्ड से अलग करदेंगे यह आज्ञा पातेही धूम्राक्षनाम दूत राजाप्रजापाल के पास गया राजाको देखा कि दिनरात प्रजाकी रक्षा में तत्परहै दूतने रावण का संदेश सुनाया राजाने सुनकर दूतको तो विसर्जन किया और ज्वरको बुलाकर कहा कि तुम रावण के पास जाओ यह आज्ञा पातेही लङ्कामें रावण के पास ज्वरपहुंचा और रावण के शरीरको आक्रान्तकिया रावण अति व्याकुल भया और जाना कि यह सब काम प्रजापाल का है तब ज्वरसे कहा कि प्रजापाल अपने स्थान में ही रहैं हमको उसकी सेवा से कुछ प्रयोजन नहीं इतना कहतेही ज्वरने उसको छोड़दिया उस प्रजापालने सब रोग और उपद्रव शान्त करनेहारी शान्ति बनाईहै उसका हम विधान कहते हैं हरिप्रबोध के अनन्तर कार्त्तिक शुक्लद्वादशी को प्रदोष के समय अरणी से अग्नि उत्पन्नकर वर्धमान वृक्षकी समिधाओं से प्रज्वलितकर शान्ति मन्त्रोंसे हवनकरै और विष्णुभगवान् की प्रतिमा बनाय गन्ध पुष्प धूप दीप नैवेद्य वस्त्र भूषण रत्न लाजा इक्षु आदि से पूजनकर लक्ष्मी ब्रह्मा चण्डिका आदित्य शङ्कर गौरी कार्त्तिकेय गणपति ग्रह पितर नाग आदि देवताओंका पूजनकर सब

का नीराजन अर्थात् आरती करै गौ भैंस आदि को भी भूषित कर उनका नीराजन करै पीछे घण्टादि वाद्योंके शब्द से उनको त्रासदेवै जिससे वे दौड़ैं उनके पीछे पीछे बछड़े और उनके पीछे रक्त पीत श्वेत वस्त्र पहिने गोपाल दौड़ते फिरैं इसभांति कोलाहल कर घोड़े हाथी आदि का पूजन और नीराजन करै फिर राजा सिंहासन परबैठे और पुरोहित मंत्री भृत्य आदि चारों ओर बैठैं और राज्यके चिह्न छत्र चामर आदिका पूजन और नीराजन करके राजाके ऊपर धारै पीछे सर्व शुभ लक्षण युक्त वेश्या अथवा और कोई सौभाग्यवती स्त्री राजाका नीराजन करै ब्राह्मण वेदघोष करैं अनेक प्रकारके बाजे बजैं पीछे चतुरंगिणी सेनाका नीराजन करै यह शान्ति जिसदेश में करीजाय वहां रोग और दुर्भिक्ष का भय नहीं होता प्रजाका आयुष् बढ़ता है यह शान्ति प्रजा के कल्याण के अर्थ प्रतिवर्ष करनी चाहिये जो राजा भगवान् का नीराजन कर गौ ब्राह्मण हाथी घोड़े सेना और राजचिह्नों का नीराजन करैं वे संसार में सुखभोग उत्तम लोक पाते हैं यह राजा प्रजापाल का वाक्य है ॥

चौंसठवां अध्याय ॥

भीष्मपंचक का विधान और फल ॥

श्रीकृष्णचन्द्र कहते हैं कि हे महाराज! अब हम भीष्मपंचक का विधान कहते हैं भीष्मपंचक का व्रत वशिष्ठ भृगु गर्ग आदि मुनि ब्रह्मचर्य जप होम आदिमें तत्पर ब्राह्मण सत्यशौच में परायण क्षत्रिय शौरभद्र आदि स्वधर्मनिष्ठ वैश्य और अनेक उत्तम शूद्रभी करते हैं जिसने यह व्रत किया उसने सब उत्तमकर्म किये इस भीष्मपंचक में मद्य

मांस मैथुन असत्य भाषण शिकार खेलना आदिका त्याग करै पांच दिन विष्णुभगवान् का पूजन कर शाकाहार करै भर्त्ताकी आज्ञा से सुख प्राप्तिके लिये स्त्री इस व्रतको करै विधवानारी पुत्र पौत्रोंकी वृद्धिकेलिये अथवा मोक्षके अर्थ इस व्रतको करै नित्यस्नान दान वैश्वदेव और विष्णुभगवान्का पूजनकरै कार्त्तिक शुक्लएकादशी से व्रतकरके पूर्णमासी को अतिभयंकर जिसकामुख खड्ग हाथमें लिये विकृतस्वरूप ऐसी पापपुरुषकी लोहकी मूर्त्तिबनाय काले तिलों के ढेरपर स्थापनकर सुवर्ण के कुण्डल और कृष्ण वस्त्र उसको पहिनाय करवीर पुष्प आदि से धर्मराज के नामोंकरके भक्तिपूर्वक उसका पूजनकर हाथों में पुष्पांजलि लेकर (यदन्यजन्मनिकृतमिहजन्मनिवापुनः । पापप्रशममायातु त्वणपंतवपूजनात्) यह मन्त्रपढ़ पुष्पांजलि देकर ब्राह्मणको वह प्रतिमा देवै और (कृष्णोमेप्रीयताम्) यह वाक्य कहै पीछे नीलोत्पलके समान श्यामवर्ण चतुर्भुज चतुर्दंष्ट्र अष्टपाद त्रिनेत्र शङ्कुकर्ण व्याघ्रचर्म ओढ़े जटाधारे सर्पों के भूषण पहिने ऐसे रुद्रका ध्यानकरै शरशय्यापर सोयेहुये भीष्मने यह व्रत कहा है जो इस व्रतकोकरै वह ब्रह्महत्या गोहत्याआदि बड़े बड़े पापों से छुटजाताहै और सद्गतिपाता है॥

पैंसठवां अध्याय॥

मल्लद्वादशी का विधान॥

राजायुधिष्ठिर पूछते हैं कि हे श्रीकृष्णचन्द्र! मल्लद्वादशीका क्या विधानहै आप उसका वर्णनकरैं यह सुन श्रीकृष्णचन्द्र कहनेलगे कि हे महाराज! हमारी अवस्था जब आठवर्षकी थी उससमय यमुना के तटपर भाण्डीरवृक्षकेनीचे हमको सिंहा-

सत्तपर बैठाय सुभद्र भद्र सुभद्रांग इन्द्रभट आदि बड़े बड़े मल्ल गोप और गोपाली पालिका धन्या धनिष्ठा राधा अनुराधा सोमा तारका आदि गोपी इन सबने दही दुग्ध सुरा मांस आदि से कंस के वध के अर्थ हमारा पूजनकिया और तीनसौ मल्लोंने भक्ति से पूजनकर मल्लयुद्धकिया और हमारी प्रसन्नताके लिये बड़ा उत्सव किया परस्पर बड़ेप्रेम से मिले उस दिन से यह मल्लद्वादशी प्रसिद्ध हुई इस व्रतको कार्त्तिक शुक्ल द्वादशी से आरम्भ करै और प्रतिमास क्रम से केशव, नारायण, माधव, गोविन्द, विष्णु, मधुसूदन, त्रिविक्रम, वामन श्रीधर, हृषीकेश, पद्मनाभ, दामोदर इन नामों से गन्धपुष्प धूपदीप गीतवाद्य मल्लयुद्ध घृत दुग्ध दान आदि से हमारा पूजन करै और (कृष्णोमेप्रीयताम्) यह वाक्य कहै यह विधि इस व्रतकी है बाल्यावस्था में यह उत्सव हमने किया है इसलिये यह द्वादशी हमको बहुत प्रियहै मल्लोंने इस व्रतकी प्रवृत्तिकरी इसलिये इस का नाम मल्लद्वादशी है और अरण्य में करी इसलिये अरण्यद्वादशी कहाई जिन गोपों ने हमारा पूजन किया उनके भैंस गौ आदिकी बहुत वृद्धि भई और भी जो पुरुष इस व्रतको करैं वे आरोग्य बल ऐश्वर्य और सद्गति पावैं ॥

छियासठवां अध्याय ॥

वामन द्वादशीका विधान और फल ॥

श्रीकृष्ण कहते हैं कि हे महाराज! पूर्वकाल में विदर्भदेश का स्वामी दमयन्ती का पिता बड़ा पराक्रमी और प्रजापालक राजा भीम भया है एकदिन तीर्थयात्रा करते हुये ब्रह्मा जी के पुत्र पुलस्त्यमुनि वहां आये राजा ने उनका व

सत्कार किया अपने हाथ से आसन बिछाय बैठाया पाद्य अर्घ्य आदि से उनका पूजन किया पुलस्त्यमुनि ने भी प्रसन्न हो राजा से कुशल पूछा तब राजाने अति विनय से कहा कि महाराज जहां आपका आगमन होय वहां सब प्रकार का कुशलही होता है इसभांति अनेक प्रकारकी स्नेहकी बातें राजा और मुनि परस्पर करतेरहे कुछ कालके अनन्तर राजा ने पूछा कि महाराज संसार के जीव दिन रात अनेक प्रकार के दुःखों से पीड़ित रहते हैं गर्भवास बड़ा दुःखहै पीछे अनेक प्रकार के रोग सताते हैं यह दशा जीवोंकी देख मुझे अत्यन्त त्रास होताहै ऐसा कौन उपायहै जिस से थोड़ापरिश्रम करकेही जीव संसार के दुःखों से छूटैं ऐसा उपवास दान आदि जो कर्महोय उसका आप वर्णन करें यह राजा का वचन सुन पुलस्त्यमुनि कहनेलगे कि हे राजन्! माघ शुक्ल द्वादशीका उपवास करै तो मनुष्य कभी दुःखभागी न होय राजाने व्रतका विधान पूछा तब पुलस्त्यमुनि बोले कि हे राजन्! यह व्रत अति गुप्तहै तुम्हारे स्नेह से हम कहते हैं अदीक्षित को यह व्रत कभी मतकहना जितेन्द्रिय धर्मनिष्ठ और विष्णुभक्त पुरुष इस व्रतके अधिकारी हैं ब्रह्महा गुरुघाती गोघ्न स्त्री घातक कृतघ्न मित्रद्रोही आदि बड़े बड़े पातकी भी इस व्रतके करने से निष्पाप होजाते हैं पहिले अच्छे मुहूर्त्त में दशहाथ लम्बा चौड़ा मण्डप बनाय उसके मध्य में पांचहाथ विस्तारकी वेदीबनावै वेदी के ऊपर पांच रंगका मण्डल बनावै और आठ अथवा चारकुण्ड बनावै मण्डल के मध्य में कर्णिका के बीच पश्चिमाभिमुख भगवान् की मूर्त्तिस्थापनकर गन्ध पुष्प धूप दीप भांति भांति के नैवेद्यों

से शास्त्रोक्त विधि करके वेदवेत्ता ब्राह्मणोंसे पूजन करावै और नारायणके सम्मुख दो स्तम्भ गाड़कर उनके ऊपर एक आड़ाकाष्ठ रख उसमें एक दृढ़ छींका बांधै उसपर सुवर्ण चांदी ताम्र अथवा मृत्तिका का शतच्छिद्र कलश उत्तम जलसे पूर्णकर रक्खै पलाश की समिधा तिल घृत क्षीर और शमीपत्रों से हवन करै और ईशान कोण में ग्रहों का पीठ स्थापनकर ग्रहपूजा करै और अपनी अपनी दिशामें इन्द्र यम वरुण और कुबेरका पूजन करै पीछे शुक्लवस्त्र चन्दन से भूषित दर्भपाणि यजमानको पीठके ऊपर पूर्वोक्त कलशके नीचे ब्राह्मण बैठावैं यजमान भी एकाग्रचित्त होकर (नमस्तेदेवदेवेश नमस्तेभुवनेश्वर । व्रतेनानेनमांत्राहि परमात्मन्नमोस्तुते) यह मन्त्रपढ़ै और कलशसे गिरती जलधाराको मस्तकपर धारै उस समय चारों दिशाओं में ब्राह्मण हवन करैं शान्तिकाध्याय विष्णुसूक्त पुण्याहवाचन आदि पढ़ैं अनेक प्रकारके बाजे बजैं इस भांति बड़ा उत्सव करावै हरिवंश सौवर्णिक उपाख्यान और महाभारत आदिका यजमान श्रवण करै इस भांति सम्पूर्ण रात्रि व्यतीत करै और ब्राह्मण हवन करते रहैं इतनाकह श्रीकृष्णभगवान् बोले कि हे महाराज ! विष्णुभगवान् वामनरूप धार बलिके पास गये और कहा कि हे दैत्येन्द्र ! तीनपद भूमि आप हमको देवैं तो हम रहनेको कुटी बनालेवैं बलिने कहा कि तुमको जहां चाहिये तीनपद भूमि ग्रहणकरो तब वामन वृद्धिको प्राप्त भये दोनोंपैर भूमिपर रख इन्द्रादिकों के लोक नाभिसे आवृत्तकर ब्रह्मलोकमें शिर लगाया एक पाद कममें इतना दबाया और दूसरा चरण उसपर रक्खा और तीसरे पाद-

न्यासको स्थान नहीं मिला तब देवदुन्दुभी बजानेलगे सब देवता और सिद्ध प्रशंसा करनेलगे इस भांति त्रिभुवन को वशमें कर बलिको भगवान्ने कहा कि तुम पातालमें निवास करो और यथेच्छभोग भोगो और वर्त्तमान इन्द्रके अनन्तर तुम इन्द्र बनोगे बलिभी भगवान्की आज्ञा पाय प्रणाम कर पातालको गया भगवान्ने दिक्पालोंको कहा कि अपने अपने स्थानको जाओ इस भांति जगत्कार्य करके भगवान् अन्तर्द्धान भये यहसब कृत्य भगवान्ने एकादशी को किया था इसलिये यह तिथि भगवान् को अतिप्रिय है फाल्गुन शुक्लमें पुष्ययुक्त एकादशी होय तो विजया एकादशी कहाती है उसदिन उपवास कर रात्रिके समय सुवर्णके काष्ठ के अथवा बांसके पात्रमें कमण्डलु छत्र खड़ाऊँ माला आदि स्थापन कर श्वेत वस्त्रसे ढकै पीछे गन्ध पुष्प धूप दीप अनेक प्रकारके नैवेद्य तिल जौ गोधूम आदिसे भगवान् का पूजन कर मृगचर्म और सुवर्ण सहित वह पात्र भगवान् को निवेदन करै मन्त्रसे पूजाकरै तो शतगुण भक्तिसे करै तो लक्षगुण और मंत्रसहित भक्तिसे पूजन करै तो कोटिगुण फलहोता है रात्रि को जागरण कर बड़ाउत्सवकरै प्रभात होतेही स्नान कर भगवान् का पूजन कर सब सामग्री ब्राह्मण कोदेकर (वामनोदाता कर्त्ता च द्रव्यस्थोवामनस्वयम् । वामनोस्यप्रतिग्राही तेनवै वामनेनमः) यह मन्त्र पढ़ै ब्राह्मणभी दान लेकर (वामनः प्रतिगृह्णाति वामनोनोददातिच । वामनस्तारकोनित्यंते नवैवामनेनमः) यह मंत्र पढ़ै (मत्स्यंकूर्मंवराहं च नरसिंहंतुवामनम् । रामंरामंचकृष्णंचतेनवैवामनेनमः) इसमंत्र से पूजन करै ॐमत्स्यायनमः जानुनोः वराहायनमः गुह्ये ।

नरसिंहाय नमः नाभ्याम्। वामनाय नमः उरसि। रामाय नमः भुजयोः। रामाय नमः मुखे। कृष्णाय नमः शिरसि। इस प्रकार न्यासकरै इस प्रकार एकादशी को उपवास और पूजनकर द्वादशी को ब्राह्मण भोजन कराय आपभी भोजन करै इसव्रत को करनेहारा एक मन्वन्तरपर्य्यन्त विष्णुलोक में निवास करता है फिर भूमिपर जन्म लेकर धन धान्य हाथी घोड़े पुत्र पौत्र रूप सौभाग्य आरोग्य दीर्घायुष् आदि पाकर चक्रवर्त्ती राजा होताहै यह एकादशी का विधान है इसी प्रकार श्रवणयुक्त द्वादशी को भी व्रत पूजनआदि करै तो सब फलपावै उस दिन ब्राह्मणों को दही भात भोजन करावै यह वामन द्वादशी का व्रत सगर काकुत्स्थ धुन्धुमार गाधिआदि बड़े बड़े राजा और वशिष्ठआदि मुनियों ने कियाहै इस व्रत के करने से अणिमादि सिद्धि और सद्गति प्राप्त होती है॥

सरसठवां अध्याय॥

प्राप्तिद्वादशी का विधान और फल॥

श्रीकृष्णचन्द्र कहते हैं कि हे महाराज! अब हम पौष कृष्ण द्वादशी व्रतका विधान कहते हैं जिसके करने से सब मनोरथ सिद्ध होते हैं उस दिन उपवास कर विष्णु भगवान् का पूजनकरै और पाखण्डों के साथ सम्भाषण आदि न करै प्रतिमास भगवान् का पूजनकरै पौष से लेकर ज्येष्ठपर्य्यन्त क्रमसे पुण्डरीकाक्ष माधव विश्वरूप पुरुषोत्तम अच्युत और जय का पूजनकरै इस छःमहीने के प्रथम पारण में तिलों से स्नान और तिल प्राशनकरै आषाढ़ादि छःमहीनों में भी इनहीं नामों से भगवान् का पूजनकरै परन्तु पंचगव्य का प्राशन और स्नानकरै एकादशी को उपवास कर द्वादशी को

इस विधान से पूजनकर ब्राह्मण भोजन करावै इस भांति एक वर्ष व्रतकर सवत्सा गौ सुवर्ण वस्त्र पात्र आसन आदि वस्तु ब्राह्मण को देवै और (केशवः प्रीयताम्) यह वाक्य कहै। भक्तिसे जो इस संप्राप्ति द्वादशीका व्रतकरै वह पापों से मुक्त होय सब कामना पावै इस माहात्म्य को जो श्रवण करै उसके भी सब मनोरथ सिद्ध होते हैं जो विष्णुभक्त इस प्राप्ति द्वादशी व्रतको श्रद्धा से करैं वे संसार सुख भोग अन्त में स्वर्ग में वास करते हैं॥

अड़सठवां अध्याय॥

गोविंदद्वादशी का विधान और फल॥

श्रीकृष्णचन्द्र कहते हैं कि हे महाराज! अब हम गोविन्द द्वादशी का विधान कहते हैं जिसके करने से अभीष्ट फल मिलता है पोष शुक्लद्वादशी को उपवास कर पुष्प धूप दीप नैवेद्य आदि से गोविन्द का पूजनकर इसी नाम का उच्चारण करतारहै पाखण्डों से सम्भाषण न करै फिर ब्राह्मणों को यथाशक्ति दक्षिणा देकर आपभी गोमूत्र गोमय दधि अथवा गोदुग्ध प्राशनकरै दूसरे दिन स्नान कर उसी विधि से गोविन्दका पूजनकर ब्राह्मण भोजन कराय आप भी गोदुग्ध आदि भोजन करै और गौको तृप्ति पूर्वक भोजन करावै इसी प्रकार प्रतिमास व्रत करै वर्ष समाप्त होनेपर सुवर्ण की गोविन्द प्रतिमा बनाय पुष्प धूप दीप माला वस्त्र भूषण नैवेद्य आदि से पूजनकर (गोविन्दो गोपतिर्गोप्ता श्रीकान्तः श्रीधरो हरिः। सर्वकामफलावाप्तिं करोतु मम केशवः) यह मन्त्र पढ़ सवत्सागौ सहित ब्राह्मणों को देवै और (गोविन्दः प्रीयताम्) यह वाक्य कहै उस दिन भी गौवों को भोजन

देवै सुवर्ण शृङ्ग रौप्य खुर उत्तम वृष प्रतिमास ब्राह्मण को देने से जो फल प्राप्त होता है वही इस व्रत के करने से भी होताहै और इस गोविन्द द्वादशी व्रत का करनेहारा सब सुख भोग गोलोक को जाता है ॥

उनहत्तरवां अध्याय ॥

अखण्ड द्वादशी व्रतका विधान और फल ॥

राजा युधिष्ठिर पूछते हैं कि हे श्रीकृष्ण ! उपवास आदि में जो कुछ वैकल्य अर्थात् किसी बात की न्यूनता रहजाय तो क्या फल होता है यह आप कथन करैं यह सुन श्रीकृष्णचन्द्र कहने लगे कि हे महाराज ! उपवास आदि के प्रभाव से राज्य उत्तम रूप आदि पाकर वैकल्य दोष से काणे अन्धे कुबड़े होजाते हैं वैकल्य दोषसेही स्त्री पुरुषों में वियोग होता है उत्तम कुल में जन्म पाकर भी दुःशील होते हैं धनाढ्य होकर भी धन का भोग और दान नहीं करसक्ते उत्तम रूप युक्त होकर वस्त्र भूषणोंसे हीन रहते हैं इसलिये यज्ञ में व्रतमें और भी धर्मकृत्यों में विकलता न होने देवै राजा युधिष्ठिर पूछते हैं कि हे श्रीकृष्णचन्द्र ! जो कदाचित् उपवास आदि में वैकल्य होभी जाय तो कौन कर्म करना चाहिये जिससे वह अच्छिद्र होय तब श्रीकृष्णचन्द्र बोले कि हे महाराज ! अखण्ड द्वादशी का व्रत करने से सब प्रकार का वैकल्य दोष दूर होता है उसका आप विधान सुनैं मार्गशीर्ष शुक्ल द्वादशी को स्नान कर भगवान् का भक्ति से पूजन करै उपवास रक्खै और नारायण का स्मरण करता रहै पूजा के अन्त में (सप्त जन्मनि यत्किंचिन्मयाखण्डं व्रतं कृतम् । भगवंस्त्वत्प्रसादेन तदखण्डमिहास्तु मे ॥ यथाऽखण्डं जगत्सर्वं त्वमेव पुरुषोत्तम ।

तथाखिलान्यखण्डानि व्रतानिममसन्तुवै) यह मन्त्रपढ़ै और चार महीने में प्रथम पारण कर ब्राह्मणों को तिलपात्र देवै और भगवान् का पूजन करै चैत्रादि चार मास के अनन्तर दूसरा पारण करै और शर्करापात्र ब्राह्मणों को देवै श्रावणादि चार मास के अनन्तर तीसरा पारणकर नारायण का पूजन करै और घृत पूर्णपात्र ब्राह्मणों को देवै सुवर्ण चांदी ताम्र मृत्तिका अथवा पलाश पत्र के पात्र अपने वित्तानुसार बना कर देवै पीछे जितेन्द्रिय बारह ब्राह्मणों को क्षीर भोजन कराय वस्त्र भूषण और दक्षिणा देकर क्षमापन करावे और आचार्य्य का भी विधिपूर्वक पूजन करै इस विधिसे जो अखण्ड द्वादशी का व्रत करै उसके सात जन्मतक कियेहुये व्रत सम्पूर्ण फलदायक होजाते हैं इसलिये स्त्री पुरुषों को व्रतों का वैकल्य दोष निवृत्त करनेके लिये अवश्य यह व्रत करना चाहिये ॥

सत्तरवां अध्याय ॥

मनोरथ द्वादशी का विधान और फल ॥

श्रीकृष्णचन्द्र कहते हैं कि हे महाराज ! स्त्री अथवा पुरुष फाल्गुन शुक्ल एकादशी को उपवास कर भगवान् का पूजन करै और उठते बैठते हरिका स्मरण करता रहै द्वादशी के दिन प्रभातही स्नान कर भगवान् का अर्चन करै और घृत से हवन कर ब्राह्मण को दक्षिणा देकर (पातालसंस्था वसुधा यमासाद्य मनोरथम् । अवाप वासुदेवोसौ प्रददातु मनोरथान् ॥ भ्रष्टराज्यश्च देवेन्द्रो यमभ्यर्च्य जगत्पतिम् । मनोरथमवाप्तोसे स ददातु मनोरथान्) यह मन्त्र पढ़ै पीछे मौन से हविष्य भोजन करै चार मास में प्रथम पारण करै रक्तपुष्प तुलसी गुग्गुल धूप और हविष्यान्न नैवेद्य से भग-

वान् का अर्चन कर गोशृङ्ग जल प्राशन करै फिर आषाढ़ आदि चार मास के अनन्तर चमेली के पुष्प शालधूप और शाल्यन्न का नैवेद्य इनसे भगवान् का यजन कर कुशोदक प्राशन करै कार्त्तिकादि चार मास के अनन्तर तीसरा पारण करै जपापुष्प उत्तम धूप और कषाय रसयुक्त नैवेद्य से नारायण का पूजन कर गोमूत्र प्राशन करै प्रतिमास ब्राह्मणों को दक्षिणा देवै वित्तशाठ्य न करै वर्ष के अन्त में एक कर्ष सुवर्ण की नारायण प्रतिमा बनाय पूजन कर दो वस्त्र और दक्षिणा सहित ब्राह्मण को देवै और बारह ब्राह्मणों को भोजन कराय प्रत्येक को जलका घट छतरी जूता वस्त्र और दक्षिणा देवै इस द्वादशी व्रत के करने से सब मनोरथ सिद्ध होते हैं इसी से इसका नाम मनोरथ द्वादशी है इन्द्र ने त्रैलोक्य का राज्य इसी व्रत से पाया है और भी कोई जिस अभिलाष से इस व्रत को करै वह उसको अवश्य पावै पुत्र धन आरोग्य आदि सब पदार्थ इस व्रत से मिलते हैं कभी इष्ट वियोग नहीं होता स्त्री और शूद्र भी इस व्रत को कर स्वर्ग को जाते हैं और लाखों वर्ष वहां उत्तम भोग भोगकर अच्छे कुल में जन्म पाते हैं जो पुरुष भगवान् का पूजन नहीं करते गो ब्राह्मण की सेवा नहीं करते और मनोरथ द्वादशी का व्रत नहीं करते वे किस प्रकार अपना अभीष्ट फल पासक्ते हैं ॥

इकहत्तरवां अध्याय ॥

तिल द्वादशी का विधान और फल ॥

राजायुधिष्ठिर कहते हैं कि हे श्रीकृष्णचन्द्र! थोड़े से परिश्रम से अथवा स्वल्पदान से सब पाप कट जायँ ऐसा कोई उपाय आप कहें यह सुन श्रीकृष्णभगवान् कहने लगे कि हे

महाराज! माघ कृष्ण द्वादशी को जब मूल अथवा पूर्वाषाढ़ नक्षत्र होय तब एकादशी के दिन उपवास कर द्वादशी को श्रीकृष्ण भगवान् का पूजनकरै ब्राह्मण को कृष्ण तिल देवै और आपभी स्नान प्राशन आदि कृष्ण तिलों से करै और (कृष्णोमेप्रीयताम्) यह वाक्य कहै इस प्रकार एक वर्ष व्रतकर अन्तमें तिलों से पूर्ण कृष्णवर्ण के कुम्भ पक्वान्न छत्र जूता वस्त्र और दक्षिणा बारह ब्राह्मणों को देवै जितने उन तिलों के बोने से तिल उत्पन्न होयँ उतने हज़ारवर्ष इस व्रतका करनेहारा स्वर्ग में निवास करताहै और किसी जन्ममें अन्ध बधिर कुष्ठी आदि नहीं होता सदा आरोग्य रहताहै इस तिल दान से बड़े बड़े पाप कटजाते हैं न इस व्रतमें बहुत परिश्रम और न बहुत धनका व्यय इसलिये अवश्य यह व्रत करना चाहिये तिलों से स्नान करै तिल दानकरै और तिलही भोजन करै तो अवश्यही सद्गति पावै॥

बहत्तरवां अध्याय॥

एक वैश्यकी कथा और सुकृत द्वादशी का विधान॥

राजा युधिष्ठिर पूछते हैं कि हे श्रीकृष्णचन्द्र! ऐसा कौन कर्म है कि जिसके करने से सन्ताप होय और ऐसा कौन है जिसको करके सन्ताप न होय यह आप वर्णन करें आप के वचन सुनते सुनते हम को तृप्ति नहीं होती यह सुन श्रीकृष्णचन्द्र कहने लगे कि हे महाराज! आपने जो पूछा उस का हम वर्णन करते हैं पूर्वकालमें त्रिदिशा नगरी के बीच शीरभद्र नाम एक वैश्य था वह पुत्र पौत्र कन्या स्त्री आदि में ऐसा आसक्त था कि दिन रात उनके भरण पोषण में लगा रहता कभी स्वप्न में भी परलोक की चिन्ता नहीं करता न्याय से

अन्याय से सब प्रकार धनका उपार्जन करता कभी दान हवन देवपूजन आदि कर्मका नामभी नहींलेता कुछकाल के अनन्तर वह वैश्य मृत्युवश भया और वेत्रवती नदी के तटपर बड़ा प्रेतबना एकदिन ग्रीष्म ऋतु में विपीत नामक वेदवेत्ता ब्राह्मण ने उस प्रेतको देखा कि सूर्य किरणों से अत्यन्त सन्तप्त नदी के वालू में लोटता है सब अंग में छाले पड़गये हैं तृषासे कण्ठ सूखता है और जिह्वा लटकपड़ी है और अतिदुःखी हो चिल्लारहा है यह उसकी दशा देख ब्राह्मणको बड़ी दया आई और उसका वृत्तान्त पूछा तब वह प्रेत कहने लगा कि हे ब्राह्मण! पूर्वजन्ममें परलोकके लिये कोई कर्म नहीं किया उससे अब दग्धहोरहाहूं धन घर खेत पुत्र स्त्री आदिकी चिन्ता में सदा आसक्त रहा कभी अपने हित का चिन्तन न किया इससे यह कष्ट भोगरहा हूँ यह काम किया और यह करना है इसी चिन्ता में सब जन्मखोया उसका फल भोगता हूँ लोभवश होकर शीत उष्ण सब सहे परन्तु धर्म के लिये किंचित् भी कष्ट न सहा उससे अब जलाजाता हूँ देवता पितर और अतिथि का कभी मैंने पूजन आदि न किया उसीसे अब मुझे अन्न जल नहीं मिलता अन्याय से मैंने बहुत धन एकत्र किया उसका उपभोग अब औरही करतेहोंगे यह सोच सोच मुझे कलनहीं पड़ती घरमें आये ब्राह्मणका कभी मैंने पूजन न किया न देवार्चन कभी मनपड़ा केवल कुटुम्बका पोषण किया उससे अब एकाकी दग्धहोता हूँ जिनकेलिये मैंने अनेक पापकिये वे सबतो इस समय सुख भोगते हैं और मैं एकाकी इस मरुस्थलमें पड़ा जलताहूं पापका सञ्चय मैंने किया और चैन औरोंने उड़ाया यह

विचार २ दिन रात मनहीं मन में जलाजाता हूँ और बाहिरसे सूर्य्यकिरणों करके दग्धहोरहाहूँ परन्तु न तो भीतर शोक दग्ध करताहै न बाहर सूर्य यह केवल मेरा पापही दो भाग होकर भीतर बाहरसे मुझे जलाताहै हे मुनीश्वर ! ऐसाभी कोई उपाय है कि जिससे इस दुर्गति से मेरा उद्धारहोय इस भांति शीरभद्रके अति दीन वचन सुन विपीत मुनि बोले कि हे शीरभद्र ! दश जन्म पहिले तैंने द्वादशी का उपवास कियाहै उस के प्रभाव से यह बड़ा भारी तेरे पापका पहाड़ क्षय होगया है अब तू स्वल्प कालमेंही उत्तम गतिको प्राप्त होगा वह द्वादशी व्रत पापका क्षय और पुण्य का जय करनेहाराहै इसी से उस का नाम सुकृतद्वादशी है इस भांति शीरभद्र को आश्वासन कर विपीत मुनि अपने आश्रम को गये और शीरभद्र भी द्वादशी व्रतके प्रभाव से थोड़े कालके अनन्तर मोक्षको प्राप्त भया इतना कह श्रीकृष्णभगवान् बोले कि हे महाराज ! यह उपवास का प्रभावहै कि इतना पाप थोड़ेही काल में क्षयहुआ इसलिये सदा मनुष्य को पुण्य के लिये यत्नकरना चाहिये और अपने कल्याणके अर्थ उपवास आदि करते रहना चाहिये राजा युधिष्ठिरने पूछा कि हे श्रीकृष्णचन्द्र ! पापों से अतिदारुण नरकयातना भोगनी पड़ती है ऐसा कौन व्रत है जिससे सब पाप निवृत्त होयँ और मोक्ष प्राप्त होय उसका आप वर्णन करैं तब श्रीकृष्णचन्द्र कहने लगे कि हे महाराज ! फाल्गुनशुक्लएकादशी को उपवास करै और काम क्रोध लोभ दम्भ मोह आदि का त्यागकर संसार की असारताका भाव न करता हुआ (ॐनमोनारायणाय) इस मन्त्र का दिनभर स्मरण करतारहै इसी भांति द्वादशी

को भी करै प्रथम चारमासके पारणमें सुवर्ण चांदी ताम्र अथवा मृत्तिकाके पात्रों में यव भरकर ब्राह्मणों को देवै आषाढ़ादि दूसरे पारण में घृतपात्र देवै और कार्त्तिकादि चार मास के पारणमें तिलपात्र ब्राह्मणों के अर्पण करै और (नारायण नमस्तेस्तु जहि पापमशेषतः। अनेकजन्म जनितं बाल्ययौवनवार्द्धके॥ पुण्यानिवैविवर्द्धन्तु पापंयातु च संक्षयम्। आकाशादिषुशब्दादौ महदादिषु पार्थिवे॥ प्रकृतौ पुरुषे चैव ब्रह्मण्यपि च यः प्रभुः। यथासर्वत्र धर्मात्मा वासुदेवोऽव्यवस्थितः॥ तेनसत्येनमेपापं नरकार्त्तिप्रदं सदा। प्रयातुक्षीणतां पुण्यं वृद्धिमभ्येत्वनुत्तमम्) ये मन्त्र पढ़े पीछे मौनसे भोजन करै वर्ष पूरा होने पर सुवर्ण की विष्णुमूर्त्ति बनाय पूजन कर वस्त्र सुवर्ण सवत्सा धेनु और दक्षिणा सहित ब्राह्मणको देवै और यथाशक्ति ब्राह्मण भोजन करावै इस विधिसे जो पुरुष अथवा स्त्री इस सुकृत द्वादशी का व्रतकरै वह कभी नरक नहीं देखता जो नारायण का भक्त होय उसको कभी नरक बाधा नहीं होती विष्णुका नाम उच्चारण करतेही सब पाप नष्ट होजाते हैं फिर नरक का क्या भयहै वासुदेव नारायण आदि नामों को जो उच्चारण करता रहै वह कभी यम का मुख नहीं देखता पाखंडी पुरुषों को कभी इस व्रत का उपदेश न करै॥

तिहत्तरवां अध्याय॥

धरणी द्वादशी व्रत का विधान और फल॥

राजा युधिष्ठिर पूछते हैं कि हे श्रीकृष्णचन्द्र! यह सब वेदों में प्रसिद्ध है कि विधि पूर्वक यज्ञ करने से बड़े २ दान देने से और बड़े परिश्रम से परमेश्वर की प्राप्ति होती है

परन्तु कलियुग के मनुष्य न तो दान देसकैं न यज्ञ उनसे होसके फिर उनका मोक्ष किस प्रकार होय यह आप वर्णन करैं जिससे चारों वर्ण अल्प आयास करके मुक्ति भागी होयँ यह राजा का वचन सुन श्रीकृष्ण भगवान् कहने लगे कि हे महाराज! हम परमरहस्य आपसे कहते हैं प्रीतिसे श्रवण कीजिये जब प्रलय के समय भूमि जल में डूबकर रसातल को चलीगई उस समय अपने उद्धार के लिये भूमिने व्रत किया उस व्रत से भगवान् प्रसन्न भये और भूमि को उस संकटसे उद्धार कर अपने स्थानमें स्थापन किया जो व्रत भूमिने किया उसका हम विधान कहते हैं मार्गशुक्लदशमी को शौच आदि कर अष्टांगुल प्रमाण क्षीर वृक्ष के काष्ठका दन्तधावन करै स्नान कर भगवान् का पूजन और अग्निहोत्र करै पीछे हविष्य अन्नका भोजन करे एकादशी के दिन स्नान कर शंख चक्र गदा पद्मधारे पीत वस्त्र पहिने प्रसन्न मुख श्रीनारायण का ध्यान कर सूर्य्यनारायण को अर्घ्य देवै और यह मन्त्र पढ़ै (एकादश्यां निराहारः स्थित्वाचाहंपरेऽहनि। भोक्ष्यामिपुण्डरीकाक्ष शरणंमे भवाच्युत) पीछे भगवान् का पूजन कर उपवास रक्खे और रात्रि को (ॐनमोनारायणाय) यह मन्त्र जपता हुआ भगवान्के आगे शयन करै प्रभात उठ नदी के तटपर जाय (धारणंपोषणंत्वत्तोभूतानांदेविसर्वदा। तेनसत्येन मां भद्रे पापान्मोचयसुव्रतम्) इस मन्त्रसे मृत्तिका ग्रहण करै (ब्रह्माण्डोदरतीर्थानि करैस्स्पृष्टानि ते रवे। भवन्तिपूतानिसदा मृत्तिकांकिरणैःस्पृश) इस मन्त्र से मृत्तिकाको सूर्य्यदर्शन करावै (त्वयिसर्वेरसानित्यं स्थितावरुणसर्वदा। तेनेमां मृत्तिकां प्लाव्य मां पूतं कुरु माचि

रम्) इस मन्त्र से मृत्तिका में जल डालै उस मृत्तिकाको शरीर में लगाय स्नान कर सन्ध्या तर्पण आदि करै पीछे देव गृह में आय (केशवाय नमः पादयोः । दामोदराय नमः कट्याम् । नृसिंहाय नमः ऊर्वोः । श्रीवत्सधारिणे नमः उरसि । कौस्तुभधारिणे नमः कण्ठे । श्रीपतये नमः वक्षसि । त्रैलोक्यविजयाय नमः मुखे । सर्वात्मने नमः शिरसि । रथाङ्गधारिणे नमः चक्रे । शङ्खपाणये नमः शङ्खे । गम्भीराय नमः गदायाम् । शान्तमूर्तये नमः पद्मे) इन मन्त्रों से भगवान् के इन इन अंगों विषे पूजन करै फिर चार कलश जल पूर्ण स्थापन करै उनके बीच चन्दन सुवर्ण रत्न आदि डाल तिलपात्रों से उनको आच्छादन करै ये चारों कलश चार समुद्र हैं उनके मध्य में वस्त्रयुक्त एकपीठ स्थापन करै उस पर सुवर्ण चांदी ताम्र अथवा काष्ठ का जल पूर्णपात्र रख उसमें मत्स्यरूपी भगवान् की सुवर्ण की प्रतिमा स्थापन करै पीछे गन्ध पुष्प धूप दीप अनेक प्रकार के नैवेद्य और फलों से भगवान् का पूजन कर (रसातलगता वेदा यथा देव त्वयाहृताः । मत्स्यरूपेण तद्वन्मां भवादुद्धर केशव) यह मन्त्र पढ़े और रात्रि के समय जागरण कर बड़ा उत्सव करै प्रभात उठ स्नान कर भगवान् का पूजन करै और वे चारोंघट चारवेद जाननेवाले ब्राह्मणों को एक २ देकर मत्स्यावतार की मूर्ति सहित वह पात्र भी कुटुम्बी ब्राह्मण को देवै पीछे यथाशक्ति ब्राह्मणभोजन कराय आप भी अपने परिवार सहित भोजन करै इस विधि से जो द्वादशी व्रत करै उसका पुण्य फल ब्रह्मा के तुल्य आयुष होय तोभी नहीं वर्णन कर सके इस व्रत का करनेवाला अवश्यही ब्रह्मलोक को जाता है और

जन्म २ में किये ब्रह्महत्यादि पाप इस से कटजाते हैं यह मत्स्यद्वादशी का विधान है इसी भांति पौष शुक्ल द्वादशी को कूर्म भगवान् का पूजन करै स्नान आदि पूर्ववत् करके (कूर्माय नमः पादयोः । नारायणाय नमः कट्याम् । सङ्कर्षणाय नमः उदरे । विशोकाय नमः उरसि । मत्स्यरूपाय नमः भुजयोः । हरये नमः कण्ठे । सर्वात्मने नमः शिरसि) इन मन्त्रों से इन अङ्गों का पूजन कर गन्ध पुष्प आदि उपचारों से विधि पूर्वक भगवान् का अर्चन कर एक कलश स्थापन करै और ताम्रपात्र में जल भर कर उसमें सुवर्ण की कूर्म भगवान् की प्रतिमा स्थापन कर घृत पूर्ण कलश के ऊपर उसपात्र को रक्खै और भक्तिसे पूजनकर रात्रिको जागरण और गीतनृत्य आदि उत्सव कर दूसरे दिन वह मूर्त्तिसहित पात्र ब्राह्मण को देवै और ब्राह्मणों को खीरखण्ड और घृत भोजन कराय आप भी भोजन करै इसविधि से व्रत करनेहारा संसारचक्रसे मुक्त हो विष्णुलोक को जाता है अनेक जन्मों के किये पाप तत्क्षण नाश को प्राप्तहोते हैं और पूर्वोक्त सबफल इसव्रतके करने से प्राप्त होता है इसी भांति माघशुक्ल में वाराह द्वादशी का व्रत करै इस व्रत में भी स्नान पूजन कलशस्थापन आदि पहिली भांति कर (अमृतोद्भवाय नमः । दिव्यायुधाय नमः । गदिने नमः । प्रद्युम्नाय नमः) इन मन्त्रों से क्रम करके शङ्ख चक्र गदा और पद्म का पूजन कर कुम्भ के ऊपर सुवर्ण अथवा ताम्र का पात्र सप्त जीवों से पूर्ण कर स्थापन करै उस बीच सुवर्ण की वराह भगवान् की प्रतिमा स्थापन करै कि जिनके दंष्ट्राग्र पर सप्तद्वीपवती पृथिवी स्थित है फिर गन्ध पुष्प धूप दीप नैवेद्य और दो श्वेत वस्त्रों से भगवान् का पू-

जनकरै रात्रिको जागरण करै और प्रभात उठ स्नान आदि कर कलश सहित वराह नारायण की मूर्त्ति वैष्णव ब्राह्मण के अर्पण करै केवल इसी व्रतको करै तो सौभाग्य लक्ष्मी कीर्त्ति पुष्टि और सद्गति पाताहै जो वर्षभर करै उसके फल और पुण्यका तो क्या अन्तहै इसी प्रकार फाल्गुन शुक्ल द्वादशी को व्रतकर (नरसिंहाय नमः पादयोः। गोविन्दाय नमः उदरे। विश्वजिते नमः कट्याम्। अनिरुद्धाय नमः उरसि। शितिकण्ठाय नमः कण्ठे। वैनतेयाय नमः शिरसि। असुरध्वंसनायनमःचक्रे। तोयात्मनेनमः शङ्खे। वैकुण्ठायनमः गदायाम्। सर्वात्मनेनमः पद्मे) इन मन्त्रों से इन अंगों का पूजन कर सब उपचारों से नृसिंह भगवान् का पूजन करै पीछे कलश स्थापन कर उसपर मूर्त्ति स्थापन करै और भक्तिसे पूजन कर वेदवेत्ता ब्राह्मण को देवै इस व्रतके करने से सब पाप दूर होते हैं और उत्तम फलकी प्राप्ति होती है इसी प्रकार चैत्र शुक्ल द्वादशी को स्नान आदि कर (वामनाय नमः पादयोः। विष्णवेनमःकट्याम्। वासुदेवायनमः उदरे। श्रीवत्सधारिणे नमः उरसि। विश्वभृते नमः कण्ठे। यमरूपिणे नमः शिरसि। विश्वजिते नमः भुजयोः। शङ्खायनमः शङ्खे। चक्राय नमः चक्रे) इन मन्त्रोंसे इनका पूजनकर वामन भगवान का स्थापनकरै उनके समीप कमंडलु छतुरी खड़ाऊं और दण्डभी रक्खै पीछे सब उपचारों से पूजनकर ब्राह्मण को देवै और (वामनरूपी विष्णुः प्रीयताम्) यह वाक्य पढ़ै इस व्रतके करने से अपुत्रको पुत्र निर्धनको धन और भ्रष्टराज्य को राज्य प्राप्त होता है इस व्रतका करनेहारा बहुत काल विष्णुलोक में निवासकर भूमिपर आय चक्रवर्ती राजा ब-

नता है वैशाख शुक्ल द्वादशी को भी पूर्ववत् स्नान आदि कर (जामदग्न्याय नमः पादयोः। सर्वधारिणे नमः उदरे। क्षत्रान्तकाय नमः भुजयोः। मणिकण्ठाय नमः कण्ठे। सुरूपाय नमः मुखे। ब्रह्माण्डधारिणे नमः शिरसि। शङ्खाय नमः शङ्खे। चक्राय नमः चक्रे) इन मन्त्रों से पूजन कर कलश स्थापन कर उसपर नये बांस के पात्रमें सुवर्णकी परशुराम प्रतिमा स्थापन करै जिसके दक्षिण हस्तमें कुठार धारण करावै फिर उसका विधिपूर्वक पूजन कर ब्राह्मण को देवै इस व्रतका करनेहारा एक कल्प ब्रह्मलोक में निवास कर चक्रवर्ती राजा बनताहै ज्येष्ठ शुक्ल द्वादशी को पूर्ववत् स्नान आदि कर (दामोदराय नमः पादयोः। त्रिविक्रमाय नमः कट्याम्। धृतविश्वाय नमः उदरे। संवर्त्तकाय नमः मुखे। संवत्सराय नमः कण्ठे। सर्वास्त्रधारिणे नमः बाह्वोः। सहस्रशिरसे नमः शिरसि। शङ्खाय नमः शङ्खे। चक्राय नमः चक्रे) इन मन्त्रोंसे पूजन कर कलश स्थापन करै उसपर पात्रमें सुवर्णकी राम लक्ष्मणमूर्त्ति स्थापनकर पूजनकरै पीछे ब्राह्मण को देवै इस व्रतके करने से उत्तम सन्तानकी प्राप्ति होती है, वशिष्ठजीकी आज्ञा से इस व्रतको सन्तानके अर्थ राजा दशरथने कियाथा इसलिये साक्षात् रामचन्द्रही उनके पुत्र बने विष्णु भगवान् ने चाररूप धार राजा दशरथके घरमें जन्मलिया इसलिये यह व्रत बहुत फल देनेहारा है इसी विधिसे स्नान आदि कर (वासुदेवाय नमः पादयोः। सङ्कर्षणाय नमः कट्याम्। प्रद्युम्नाय नमः उदरे। अनिरुद्धाय नमः उरसि। चक्रहस्ताय नमः कण्ठे। पुरुषाय नमः शिरसि। शङ्खाय नमः शङ्खे। चक्राय नमः चक्रे) इन मन्त्रों से पूजनकर पहिली भांति घटके ऊपर

सुवर्ण की संकर्षण की मूर्ति स्थापनकर विधि से उसका पूजन कर ब्राह्मण को देवै इस व्रतके करने से विद्या धन राज्य पुत्र प्राप्त होतेहैं और मरण के अनन्तर विष्णुलोक में छः मन्वन्तर पर्य्यन्त यह व्रत करनेहारा निवासकर सात जन्म तक राजा होता है पीछे मोक्षको प्राप्त होजाता है इसी प्रकार श्रावण शुक्ल द्वादशी को (बुद्धायनमः पादयोः। श्रीधरायनमः कट्याम्। पद्मोद्भवायनमः उदरे। संवत्सरायनमः उरसि। सुधीरायनमः कण्ठे। विश्ववाहिनेनमः भुजयोः। शङ्खायनमः शङ्खे। चक्रायनमः चक्रे) इन मन्त्रों से पूजनकर कलश के ऊपर सुवर्ण की बुद्धभगवान् की प्रतिमा स्थापन कर पूजन करै और ब्राह्मण को देवै यह व्रत शुद्धोदन ने किया जिससे बुद्धभगवान् उसके पुत्र बने और शुद्धोदन भी बहुत काल राज्य सुखभोग परमगति को प्राप्तभया इसी रीति से भाद्रशुक्ल द्वादशी को स्नानआदि कर (कल्किनेनमः पादयोः। हृषीकेशायनमः कट्याम्। म्लेच्छप्रध्वंसनायनमः उदरे। जगन्मूर्त्तयेनमः उरसि। शितिकण्ठायनमः कण्ठे। खड्गहस्तायनमः भुजयोः। विश्वमूर्त्तयेनमः शिरसि। शङ्खायनमः शङ्खे। चक्रायनमः चक्रे) इन मन्त्रों से पूजन कर कलश के ऊपर सुवर्णकी कल्कि नारायण की मूर्त्ति स्थापन कर दो वस्त्र उढ़ाय भक्तिसे पूजन कर दूसरे दिन ब्राह्मण के अर्पण करै इस व्रतके करने से सब उत्तम फल प्राप्त होते हैं यह दशावतारों दानका और पूजन का इसने विधान कहा अब इनका फल कथन करते हैं। सन्तानकी प्राप्ति के लिये श्रीकृष्ण भगवान् का पूजन करै। संसार उद्धारके लिये कूर्म का। संसार के उद्धार होने के अर्थ वाराहका। पाप निवृत्तिके लिये

नृसिंह का । मोहनाश के लिये वामन का । धन प्राप्तिके लिये परशुराम का । शत्रुनाश के अर्थ रामचन्द्र का । सन्तान के लिये बलदेव का । रूपकी प्राप्ति के अर्थ बुद्धभगवान् का और शत्रुसंहार के लिये कल्किनारायण का भक्तिसे पूजन करै इन सब का पूजन और दान करने से अभीष्ट कामना सिद्ध होती है इस प्रकार आश्विनशुक्ल द्वादशी को स्नान आदिकर (पद्मनाभाय नमः पादयोः। पद्मयोनये नमः कट्याम् । सर्व्वदेवाय नमः उदरे । पुष्कराक्षाय नमः उरसि । अव्ययाय नमः शिरसि । शङ्खायनमः शङ्खे । चक्रायनमः चक्रे) इन मन्त्रों से इन अंगोंका पूजनकर कलश स्थापन करे और उसको वस्त्र माला आदि से अलंकृत कर उसके ऊपर सुवर्ण की पद्मनाभ की मूर्त्ति स्थापनकर भक्तिसे पूजन करै पीछे दक्षिणा सहित दरिद्र ब्राह्मण के अर्पण करै इस व्रत के करने से जितना पुण्य होता है उसका कौन वर्णन करसक्ता है ब्रह्महत्या आदि पाप तो भगवान् का नाम स्मरण करतेही नष्ट होजाते हैं फिर व्रत और पूजन भी करै तो क्या कहना है इसी प्रकार कार्त्तिक शुक्ल द्वादशी को स्नान आदि कर (नमोदामोदराय) इस मन्त्र करके भगवान् के सर्वाङ्गका पूजन कर चार कलश स्थापन करै ये चारों समुद्र हैं इनके मध्यमें अतिसुन्दर पांचवां कलश स्थापन करै उसके बीच सुवर्ण रत्न आदि डाल श्वेत वस्त्र से उसको आच्छादित करै उसके ऊपर ताम्रपात्र में सुवर्णकी भगवान् की प्रतिमा स्थापन कर भक्तिसे सब उपचारों करके पूजन करै दूसरे दिन पांच ब्राह्मणों को भोजन कराय चारों को चार कलश और पांचवें को मूर्त्ति सहित कलश देवै वेदवेत्ता

ब्राह्मण को देवै तो सौगुणा फल होता है वेदवेदांग जानने हारे को देने से सहस्रगुणा सरहस्य वेदज्ञाता को देने से लक्षगुण और पौराणिक को देने से अनन्त गुण फल प्राप्त होता है इस प्रकार कलश देकर यथाशक्ति ब्राह्मण भोजन करावे और दीन अनाथ अन्ध आदि को भी भोजन देकर सन्तुष्ट करै यह व्रत धरणी ने किया तब भगवान् ने प्रसन्नहो वराह रूप धार भूमि का उद्धार किया । प्रजापति ने इसी व्रत के प्रभाव से प्रजा और मुक्ति पाई । कृतवीर्य राजा ने इस व्रत के करने से सहस्रबाहु नामक चक्रवर्ती पुत्र पाया । शकुन्तलाने यह व्रत किया तो उसके भरत नाम चक्रवर्ती पुत्र उत्पन्न भया और भी अनेक राजाओं के अभीष्ट इस व्रतसे सिद्ध भये हैं जो इस व्रतको करै अथवा इसके माहात्म्यको सुनै वह विष्णुलोक को प्राप्तहोय और उसके सात पुरुष सद्गति को प्राप्तहोयँ सम्पूर्ण माहात्म्य तो इस धरणीद्वादशी का कौन वर्णन करसक्ताहै यह हमने थोड़ा सा कहाहै ॥

चौहत्तरवां अध्याय ॥

विशोकद्वादशी और गुड़धेनुआदि दशधेनुओंके दानका विधान और फल ॥

राजा युधिष्ठिर पूछते हैं कि ऐसा कौन व्रतहै जिसके करने से इष्ट वियोग न होय ऐश्वर्य प्राप्ति होय और शोक मोह आदि का नाशहोकर संसार से मुक्ति मिलै यह राजा का प्रश्न सुन श्रीकृष्ण भगवान् कहने लगे कि हे महाराज ! यह देवता दैत्य आदि सबसे गुप्त है जो आपने पूछा परन्तु हम आप के स्नेह से कथन करते हैं आश्विन मास में विशोक द्वादशी का व्रत करने से ये फल प्राप्त होते हैं उसका यह विधान है कि दशमी के दिन शौचआदि कर पूर्व मुख अ-

थवा उत्तराभिमुख बैठ दन्तधावन कर स्नान करै पीछे सन्ध्या तर्पण आदि कर घरआय नारायण का पूजनकरै और लघु भोजन करै एकादशी के दिन निराहार रहै और भक्ति से लक्ष्मी सहित नारायण का पूजन करै रात्रि को जागरण कर प्रभात उठ सर्वौषधि जल और पञ्चगव्य से स्नान कर श्वेतवस्त्र और पुष्पमाला पहिन विशोकाय नमः। वरदाय नमः। श्रीशाय नमः। जलशायिने नमः। कन्दर्पाय नमः। माधवाय नमः। दामोदराय नमः। विपुलाय नमः। पद्मनाभाय नमः। मन्मथाय नमः। श्रीधराय नमः। मधुलिहे नमः। चक्रिणे नमः। गदिने नमः। वैकुण्ठाय नमः। यज्ञमुखाय नमः। वामनाय नमः। विश्वरूपिणे नमः। सर्वात्मने नमः। इनमन्त्रोंसे क्रम करके पाद जंघा जानू ऊरू गुह्य कटि उदर पार्श्व नाभि हृदय वक्षस्स्थल दोनों हाथ वामभुजा दक्षिणभुजा कंठ मुखललाट किरीट और सर्वांगका पूजनकरै पीछे नदीके बालू से सुन्दर चतुरस्रस्थण्डिल बनाय उसपर लक्ष्मी की और सूर्य्य की प्रतिमा स्थापनकर। ॐ देव्यै नमः। शान्त्यै नमः। विशोकायै नमः। इनमन्त्रों से पूजन करै सुवर्ण का कमल वस्त्र और अनेक प्रकार के नैवेद्य चढ़ावै रात्रिको नृत्यगीत आदिक उत्सवकरै दूसरे दिन उत्तम शय्यापर बैठाय वस्त्र भूषण भोजन आदि करके ब्राह्मण मिथुन का पूजनकरै और गुड़ धेनु सहित वह शय्या भी उनको देवै और (यथा लक्ष्मीर्न देवेश त्वां परित्यज्यगच्छति। तथाविशोकतामेस्तु भक्तिरग्र्या चकेशवे) यह मन्त्र पढ़ कर समापन करावै और सूर्य्य की तथा लक्ष्मी की प्रतिमा ब्राह्मण को देवै उत्पल करवीर बाण कुंकुम नागकेसर सिंदुवार मल्लिका अशोक पाटला कदम्ब और

चमेली ये पुष्प पूजन के लिये प्रशस्त हैं इतना सुन राजा युधिष्ठिर ने पूछा कि हे श्रीकृष्णचन्द्र ! आपने गुड़धेनु देनी कही उसका आप विधान भी कहैं कि क्योंकर गुड़धेनु बनती है और क्या मन्त्रहै तब श्रीकृष्णभगवान् कहने लगे कि हे महाराज ! अब हम गुड़धेनु का विधान कहते हैं आप प्रीति से श्रवण कीजिये पहिले भूमि को गोबरसे लीप उसके ऊपर दर्भ बिछाय दर्भों के ऊपर कृष्ण मृगचर्म बिछावै उसके ऊपर पूर्वाभिमुख अथवा उत्तराभिमुख गुड़धेनु बनावै एक भार प्रमाण गुड़की धेनु और इस के चतुर्थांश गुड़ करके बछड़ा बनावै इक्षुके पाद सीपी के कर्ण मोतियों के नेत्र श्वेत सूत्र की शिरा मूँगाकी भ्रू ताम्रकी पीठ नवनीत के स्तन और श्वेत चामरके उनके रोम बनाय श्वेत कम्बल से दोनों को आच्छादन करै और गन्ध पुष्प धूप दीप नैवेद्य अनेक प्रकार के फल और सुगन्ध द्रव्यों से उनका पूजन करै और हाथ जोड़ (यालक्ष्मीःसर्वभूतानां याचदेवेष्ववस्थिता । धेनुरूपेणसादेवी ममपापंव्यपोहतु ॥ विष्णोर्वक्षसियालक्ष्मीः स्वाहायाचविभावसोः । चन्द्रार्कशक्रशक्तिर्याधेनुरूपास्तुसाश्रिये ॥ चतुर्मुखस्यालक्ष्मीर्या लक्ष्मीर्धनदस्यच । यालक्ष्मीर्लोकपालानां साधेनुर्वरदास्तुमे ॥ स्वधात्वंपितृमुख्यानां स्वाहा यज्ञभुजांयतः । सर्वपापहराधेनुस्तस्माच्छान्तिंप्रयच्छमे ॥) यह मन्त्र पढ़े पीछे वह धेनु सत्पात्र ब्राह्मण को दे हे नृप गुड़धेनु का यही विधान है पापके नाश करनेहारी दश धेनु हैं उनके इन नाम और स्वरूप कहते हैं गुड़धेनु घृतधेनु तिलधेनु जलधेनु क्षीरधेनु मधुधेनु शर्कराधेनु दधिधेनु रसधेनु और [illegible]धेनु ये दश धेनु हैं [illegible]

नीतधेनु भी कहते हैं गुड़धेनु के तुल्य सब के दानका विधान और मन्त्रहैं जिसपर श्रद्धाहोय उसका दान करै व्रतों में विशोकद्वादशी व्रत उत्तम है उसका अंग गुड़धेनु है इसलिये वह सब धेनुओं में उत्तमहै अयन संक्रान्ति विषुव व्यतीपात और चन्द्रग्रहणादि पर्वों में गुड़धेनुआदि दश धेनुओं का दान करै यह विशोकद्वादशी व्रत सब पाप हरनेहारा है जिस वृतके करने से मनुष्य सौभाग्य आयुष् आरोग्य पाताहै और अन्त में विष्णुलोक को जाता है और हज़ारों जन्म तक दुःख शोक आदि से पीड़ित नहीं होता जो स्त्री इस वृतको कर नृत्य गीत आदि उत्सव करै वह भी सम्पूर्ण फल पाती है जो इस माहात्म्य को सुनै पूजन देखै अथवा वृत करने के लिये औरों को उपदेश करै वह भी इन्द्रलोक में निवास करताहै ॥

पचहत्तरवां अध्याय ॥

विभूतिद्वादशीका विधान फल और राजा पुष्पवाहन की कथा ॥

श्रीकृष्णचन्द्र कहते हैं कि हे महाराज ! अब हम विभूतिद्वादशी वृतका विधान कहते हैं आप श्रवण कीजिये कार्त्तिक वैशाख मार्गशीर्ष आषाढ़ अथवा फाल्गुनशुक्ल दशमी को मनुष्य लघु भोजन करै रात्रि के समय यह नियम ग्रहणकरै कि एकादशी को निराहार रह भगवान् का अर्चनकर द्वादशी को ब्राह्मणों के साथ भोजन करूँगा हे मधुसूदन ! यह मेरा वृत निर्विघ्न समाप्त होय प्रभात उठ स्नान आदिकर भूतिदाय नमः । विशोकाय नमः । शिवाय नमः । विश्वमूर्त्तये नमः । कन्दर्पाय नमः । आदित्याय नमः । दामोदराय नमः । वासुदेवाय नमः । माधवाय नमः । मुक्तिकृते नमः ।

श्रीधराय नमः । केशवाय नमः । शार्ङ्गधराय नमः । वरदाय नमः । शङ्खपाणये नमः । चक्रपाणये नमः । खड्गपाणये नमः । गदापाणये नमः । परशुपाणये नमः । सर्वात्मने नमः । इन मन्त्रों से शुक्ल माल्य अनुलेपन आदि करके पाद जानु ऊरू कटि मेढ़ हस्त उदर स्तन हृदय कण्ठ मुख केश पृष्ठ कर्ण इन अङ्गों का और शङ्ख चक्र खड्ग गदा परशु इन आयुधों का और सर्वाङ्ग का पूजन करै सुवर्ण का मत्स्य उत्पल सहित वित्तानुसार बनाकर जल के कुम्भ के बीच भगवान् के आगे स्थापन करै और शुक्ल वस्त्र से ढका गुड़ तिलयुक्त पात्र भी स्थापन करै रात्रि को जागरण कर इतिहास आदि श्रवण करै प्रभात उठ भगवान् का पूजन कर तीन कर्ष सुवर्ण का उत्पल और वह सब सामग्री कुटुम्बी ब्राह्मण को देवै और इसी विधान से मास क्रम करके दशावतार दान करै और उत्पल सहित व्यास और दत्तात्रेय की प्रतिमा का भी दान करै इस प्रकार एक वर्ष व्रत करके लवण पर्वत गुड़ शय्या ग्राम क्षेत्र घर और वस्त्र भूषण आदि देकर गुरु को सन्तुष्ट करै और भी ब्राह्मणों को भोजन कराय दक्षिणा गौ और वस्त्र देवै सामर्थ्य न होय तो भक्तिपूर्वक थोड़ी थोड़ी ही सब वस्तु देवै भगवान् भक्ति से प्रसन्न होते हैं इस विधि से जो पुरुष तीन वर्ष इस व्रत को करै उसके सौ कुलों का उद्धार होता है और हजारों युग वह स्वर्ग में निवास कर चक्रवर्ती राजा होता है पूर्वकाल में रथन्तर कल्प के बीच बड़ा प्रतापी पुष्पवाहन नाम एक राजा भया उसने बड़ा तप किया तब ब्रह्माजी ने प्रसन्न हो उस को एक सुवर्ण का कमल दिया जिसपर अपने अन्तःपुर और भृत्यों सहित बैठ सातद्वीपों में वह विचरता था

प्रसन्न हो जहां ब्रह्माजी ने कमल दिया वह द्वीप पुष्करद्वीप कहाया पुष्प रूप वाहन ब्रह्माजी ने उसको दिया इस लिये राजा का नाम पुष्पवाहन भया तीन लोक में कोई स्थान राजाको उस कमल के प्रभाव से अगम्य नहीं था उस राजा की रानी अति रूपवती पतिव्रता और हजारों उत्तम नारियों करके सेवित लावण्यवती नाम थी उसका पुत्र भी बड़ा पराक्रमी विनीत और धर्म्मात्मा था यह सब अत्युत्तम सामग्री अपनी देख राजा को बड़ा विस्मय भया तब प्रचेता मुनि के पास जाय राजा ने बड़े विनय से प्रणाम कर पूछा कि महाराज ऐसा मैंने कौन पुण्य किया है जिससे इतना ऐश्वर्य ऐसी उत्तम भार्या और पुत्र पाये और इतना बड़ा विमान मिला कि जिसमें लाखों हाथी घोड़े और सेना चढ़ जाय तो भी खालीही रहता है आप यह मेरा सन्देह निवृत्त कीजिये यह राजा का वचन सुन क्षणमात्र ध्यान कर प्रचेता मुनि बोले कि हे राजन्! पूर्व्वकाल में अति क्रूर स्वभाव कृष्णवर्ण रक्त नेत्र और सब जीवों को भय देनेहारा एक व्याध था वह नित्य वन के जीव मार उनके मांस से अपने कुटुम्ब का पोषण किया करता एक समय वृष्टि न होने से उस देश में बड़ा दुर्भिक्ष पड़ा एक दिन उस दुर्भिक्ष में वह व्याध सारे वन में भटका परन्तु कोई जीव हाथ न आया इस से व्याकुल हो घर को लौटा रस्ते में उसने एक सरोवर में कमल फूले देखे वहां से बहुत से कमल तोड़ लिये और घर आय वहां से अपनी पत्नी को सङ्ग ले कमल बेचने के लिये विदिशा नगरी में गया सारे नगरमें फिरा परन्तु कमल किसी ने न पूछे तब सायङ्काल के समय क्षुधा तृषा से व्याकुल अपनी भार्या स-

हित एक स्थान में बैठगया वहां उसने रात्रि के समय गीत-वाद्य का बड़ा शब्द सुना और जाना कि अनङ्गवती नाम वेश्या विभूतिद्वादशी का व्रतकरके अपने गुरु को लवणाचल और सब उपस्करों के सहित उत्तम शय्या देती है यह शब्द सुन वह व्याधभी अपनी भार्या सहित वहां गया और जायकर देखा कि मण्डप के बीच सुवर्ण की भगवान् की प्रतिमा स्थापनकर रक्खी है और सब उसका पूजनकर रहे हैं उसने सोचा कि ये कमल हमारे किसी काम के नहीं इस मूर्त्तिपरही चढ़ादेवें यह विचार दोनों स्त्री पुरुषों ने दूर से कमल के पुष्प भगवान् की प्रतिमा पर फेंकदिये अनङ्गवतीभी कमल के उत्तम पुष्प देख प्रसन्नभई और तीन सौ मोहर उनको पारितोषिक दिया उस प्रसन्नता में उन दोनों को रात्रि भर निद्रा न आई वेश्याने भी अपने गुरुको वस्त्र भूषण ग्राम घर शय्या और लवणपर्वत देकर सन्तुष्ट किया और ब्राह्मण भोजन कराय भार्या सहित उस व्याधको भी भोजनदे विसर्जन किया कुछ दिनके अनन्तर वह पापी व्याध और उसकी स्त्री मृत्युवश भये हे राजन्! वह व्याधतुमहो और व्याधकी भार्या तुम्हारी रानी है तुम से विना इच्छाही विभूतिद्वादशी को उपवास और रात्रि को जागरण बनपड़ा इस से तुम जन्मान्तर में राजा रानी भये और भगवान् पर तुमने कमल चढ़ाये इस से तुमको कमलाकार यह विमान मिला ब्रह्मा के रूप से विष्णुभगवानही तुमपर प्रसन्न भये हैं वह अनङ्गवती वेश्या भी कामदेवकी भार्या और रतिकी सपत्नीप्रीति नाम भईहै हे राजन्! इस शरीर के अनन्तर तुम मोक्ष को प्राप्तहोगे इतनी कथा सुन प्रसन्न हो मुनि को प्रणाम कर

राजा अपनी राजधानी को आया और विभूतिद्वादशी का व्रत श्रद्धा से करनेलगे इतनी कथा सुनाय श्रीकृष्णभगवान् ने कहा कि हे महाराज! भक्ति से विभूतिद्वादशी का व्रत करै और वित्तशाठ्य न करै तो अवश्यही अभीष्ट फल पावै जो इस माहात्म्य को सुनै अथवा सुनावै वह सद्गतिपावै॥

छिहत्तरवां अध्याय॥

मदनद्वादशी का विधान और फल गर्भिणी स्त्रीके धर्म॥

राजा युधिष्ठिर कहते हैं कि हे श्रीकृष्णचन्द्र! अब हम मदनद्वादशी का विधान सुनना चाहते हैं जिस व्रतके करने से दिति ने उनचास पुत्र पाये यह राजा का वचन सुन श्रीकृष्णभगवान् कहनेलगे हे महाराज! वशिष्ठ आदि मुनियों ने जो विधान दितिको बतायाथा वही हम आपको कहते हैं चैत्रशुक्ल द्वादशीको उत्तम कलश चावलों से पूर्ण श्वेत वस्त्रोंसे आच्छादित फल और इक्षुरस सहित स्थापन करै उस के ऊपर गुड़ और सुवर्ण सहित ताम्रपात्र रक्खै उसके ऊपर केला का पत्र बिछाय उसपर रति सहित कामदेव की मूर्त्तिस्थापन करै फिर गन्ध पुष्पादि उपचारों से पूजनकर। कामाय नमः। सौभाग्यदाय नमः। स्मराय नमः। मन्मथाय नमः शातोदराय नमः। अनङ्गाय नमः। पद्ममुखाय नमः। पञ्चशराय नमः। सर्वात्मने नमः इन मन्त्रों से पाद जंघा ऊरु कटि उदर वक्षस्थल मुख बाहू और मस्तक का पूजन करै दूसरे दिन मूर्त्ति सहित वह कुम्भ ब्राह्मण को देवै और यथाशक्ति ब्राह्मण भोजन करावै परन्तु लवण रहित भोजन ब्राह्मण को देवै फिर ब्राह्मण को दक्षिणा देकर (प्रीयतामत्रभगवान्कामरूपीजनार्दनः। हृदयेसर्वभूतानांयेनानन्दोविधीयते) यह मन्त्र

पढ़ै व्रतके दिन आपभी एकफल भक्षणकर रात्रिके समय भूमिपर सोवै। इसप्रकार बारह महीने व्रतकर तेरहवें मास में उत्तम शय्या सुवर्णकी कामदेव और रतिकी प्रतिमा शुक्ल वर्णकी सवत्सा गौ और वस्त्र ब्राह्मण दम्पतीका पूजनकर उनको देवै और गौ का दुग्ध शुक्लतिल और पायस करके कामदेव के नामों से हवनकरे और ब्राह्मणों को भोजन कराय उनको दक्षिणा पुष्पमाला इक्षुदण्ड और वस्त्र आदि देकर सन्तुष्टकरै इसमें वित्तशाठ्य न करै इस विधिसे जो इस व्रत को करै वह सौभाग्य रूप धन पुत्र पावै और बहुत दिन संसारका सुख भोग विष्णुलोक को जावै दितिने उत्तम वर और सन्तान के लिये यह व्रत किया तब कश्यपजीने आप आकर उसको वरा कुछकालके अनन्तर दितिने कश्यपजी से शत्रुओं के संहार करनेहारा पुत्र मांगा कश्यपजीने उस को वर दिया थोड़ेही समय में दितिके गर्भ रहा तब कश्यप जीने दिति से कहा कि हे प्रिये ! इस गर्भको तुम सौवर्ष पर्यन्त धारणकरो और सन्ध्या के समय भोजन न करो वृक्ष के नीचे शून्यघर में और जलके बीच कभी मत जाओ ऊखल आदिके ऊपर मत बैठो उद्विग्नचित्त मत रहो भस्म से नखसे और अङ्गार से भूमिपर रेखा न करो व्यायाम गात्र भङ्ग कलह अतिहास्य आदिका त्यागकरो केश खोलकर और नग्नहोकर कभी मत बैठो उत्तर और पश्चिमको शिर करके मत शयन करो पैरगीले मत रक्खो अमङ्गल वचन न बोलो नित्य गुरुशुश्रूषा और मङ्गल में तत्पर रहो सर्वौषधियुक्त गरम जलसे स्नान करो खोटी स्त्री और मृतवत्सा स्त्री का स्पर्श न करो वस्त्रके वायुको त्यागो जल्दी मत चलो

पराये घर न जाओ नदी को उल्लंघन मत करो दुष्ट वचन मत सुनो ग्लानि करनेहारी वस्तुको न देखो अजीर्ण से बचतीरहो गर्भकी रक्षा करनेहारी ओषधी धारण करो इस विधिसे जो गर्भिणी स्त्री रहे वह उत्तम पुत्र पातीहै नहीं तो गर्भ गिर जाता है अथवा स्तंभन होजाता है तुम इसी रीतिसे चलो तो अति सुन्दर और पराक्रमी पुत्र तुम्हारे होगा इतना उपदेश दितिको कर कश्यपमुनि अन्तर्द्धान भये दितिभी पति की कहीरीति पर चली और उनचास पुत्र उस के जन्मे और भी जो नारी इस व्रतको करै वह अवश्यही पुत्र पावै और पति सहित संसार का सुख भोगकरै॥

सतहत्तरवां अध्याय॥

दुर्गामहिमा और अङ्कपाद व्रत का विधान॥

राजा युधिष्ठिर पूछते हैं कि हे श्रीकृष्णचन्द्र! बड़े घोरव में समुद्रतरण में संग्राम में चोर आदि के भयमें व्याकु हुआ मनुष्य किस देवता का स्मरणकरै जो उस सङ्कट समय उसकी रक्षा करै यह आप कथन करैं तब श्रीकृष्ण चन्द्र कहने लगे कि हे महाराज! सर्व मङ्गल मङ्गला श्रीदुर्ग भगवती का स्मरण करनेहारा पुरुष कभी दुःख और भयव प्राप्त नहीं होता जब हम और बलदेवजी अपने गुरुसे स विद्या पढ़चुके उस समय हमने गुरुदक्षिणा के लिये कह तब गुरुने हमारा दिव्य प्रभाव जान यही कहा कि हे पुत्र! ह मारा पुत्र प्रभासक्षेत्र में गयाथा वहां उसको किसीने मा दिया हम उसीपुत्रको चाहते हैं जहां होय वहांसे तुम लाकर हमको देदो तब हम यमलोक में गये वहांसे गुरुपुत्र को लेकर गुरुके समीप आये और उनको उनका पुत्र दिया और

गुरुको प्रणाम कर चलनेलगे तब गुरुने कहा कि हे पुत्रो ! इस स्थान में तुम अपने पाद का चिह्नकर जाओ हमने भी गुरुकी आज्ञानुसार किया उस दिनसे दक्षिणपाद बलदेव जीका मध्यमें सर्व मङ्गलाका और वामपाद हमारा सब वहां पूजते हैं प्रतिमास की शुक्लत्रयोदशी को एकभक्त नक्त अथवा उपवास रहकर मृत्तिका अथवा सुवर्ण की प्रतिकृति बनाय गन्ध पुष्प धूप दीप नैवेद्य मधु शीधु सुरा आसव मांस और बलिकरके जो स्त्री अथवा पुरुष पूजन करें वह सब पापोंसे मुक्तहो स्वर्ग में निवास करता है जहां शुक्लत्रयोदशी को पुष्प मांस सुरा बलि आदि करके पादके अंकका पूजन किया जाय वहां मारी दुर्भिक्ष आदि उपद्रव नहीं होते ॥

अठहत्तरवां अध्याय ॥

दुर्गन्धनाशन व्रतका विधान ॥

राजा युधिष्ठिर पूछते हैं कि हे श्रीकृष्णचन्द्र ! ऐसा कौन व्रतहै जिसके करने से शरीर का दुर्गन्ध नष्ट होजाय और दौर्भाग्य भी दूरहोय तब श्रीकृष्ण भगवान् कहने लगे कि हे महाराज ! यही बात विष्णुमतीरानी ने जातूकर्ण्यमुनि को पूछीथी तब मुनिने यह कहा कि हे पतिव्रते ! ज्येष्ठशुक्ल त्रयोदशी को नदीमें स्नानकर गन्ध पुष्प धूप दीप नैवेद्य श्वेतार्क पुष्प करवीरपुष्प और निंबकरके सूर्य्यनारायण का पूजन करे निंब सूर्य्यभगवान् को बहुत प्रियहै इस भांति पूजनकर व्रत रक्खे इस प्रकार चार त्रयोदशी को व्रत और पूजनकरै तो शरीर का दुर्गन्ध और दौर्भाग्य नष्टहोय जो स्त्री इस व्रतको भक्तिसे करें और अर्क करवीर और निम्ब

जनकरैं वे दौर्भाग्य दौर्गन्ध्य और वन्ध्यापन से छूट पति के साथ अनेक प्रकार के सुख भोगती हैं ॥

उनासीवां अध्याय ॥

यमादर्शन व्रतका विधान और फल ॥

राजा युधिष्ठिर पूछते हैं कि हे श्रीकृष्णचन्द्र ! ऐसा कौन व्रतहै जिसके करने से यमको न देखना पड़ै तब श्रीकृष्ण भगवान् ने कहा कि हे महाराज ! मुद्गलमुनि ने यह बात हम से कही कि हे यदुपुङ्गव ! जब यमने मुद्गलक्षत्रिय को लाने की आज्ञादी उसीसमय यमदूत गये और उसको लेआये वह बड़ा धर्मात्माथा इसलिये यमराज ने भी उसका सत्कार किया और समीप बैठाया तब मुद्गलक्षत्रिय ने पूछा कि हे धर्म्मराज ! कोई ऐसा उपाय जीवों के लिये कहैं जिससे आपके लोकका दारुण मार्ग न देखना पड़ै तब यमराज कहने लगे कि हे मुद्गल ! जो पुरुष को नरक का भय होय तो मार्गशीर्ष आदि प्रतिमास की शुक्ल त्रयोदशी को तेरह आठ अथवा पांच ब्राह्मणों को हमारे नामसे बुलावै वे ब्राह्मण वेदवेत्ता शान्तचित्त आचारनिष्ठ सौम्यदर्शन और सूर्य्यभक्त होयँ पीछे उनको दिनके पहिले प्रहरमें तैलाभ्यङ्ग कराय गरमजल से नहवाय अच्छीधोती पहिनाय पूर्वाभिमुख सब को आसनपर बैठावै पीछे अपने हाथ से गुड़के अपूप पक्वान्न और अनेकप्रकार के सात्त्विक व्यञ्जन उनके आगे परोसै जब वे प्रसन्नता से भोजनकर आचमनआदि करचुकैं तब प्रत्येक को तिल चावलों से पूर्ण ताम्रपात्र छतुरी जूता वस्त्र जलपूर्ण कलश और दक्षिणा देवै पंक्तिभेद न करै और (ॐनमःशनैश्चरोमृत्युर्दण्डहस्तोविनाशकः ।

प्रभवः प्रलयः शान्तिर्दुस्वप्नः शमनोन्तकः॥ लोकपालोधनी क्रूरोरौद्रोघोरोनमःशिवः। नमः प्रसन्नमानस्को ददातुमम वाञ्छितम्) यह मन्त्र पढ़ै पीछे प्रसन्नता पूर्वक ब्राह्मणों को विसर्जन करै और उनके साथ पहुँचाने के लिये जाय इस व्रत को जो एक बारभी करै वह यमलोक को नहीं देखता यह यमराजने मुद्गल क्षत्रिय से कहा और हे श्रीकृष्ण! हमको उनने छोड़दिया तब हम अपने शरीर में प्रविष्ट भये और आज आपके मिलने को आये श्रीकृष्णचन्द्र कहते हैं कि हे महाराज! इतनी कथा सुनाय मुद्गल मुनि अपने आश्रम को गये इस व्रतको जो स्त्री अथवा पुरुष करते हैं वे यमको जीत इन्द्रलोक में निवास करते हैं जो एक वर्ष प्रति त्रयोदशी को यह यमादर्शन नाम व्रत करैं वे गन्धर्व और अप्सराओं करके सेवित दिव्य विमान में बैठ इन्द्रलोक में प्राप्त होते हैं और आधि व्याधि और बड़े भयंकर यमदूतों करके कभी पीड़ित नहीं होते और चिरकाल पर्यन्त स्वर्गमें निवास करते हैं॥

अस्सीवां अध्याय॥

अनंगत्रयोदशी व्रतका विधान और फल॥

श्रीकृष्ण भगवान् कहते हैं कि हे महाराज! शरीरको क्लेश देनेहारे बहुत व्रत करने से क्या प्रयोजन है एक अनंगत्रयोदशी काही व्रत करै तो सब कुछ पावै यह त्रयोदशी सब प्रकारके सुख देनेहारी नरक का भय हरने हारी और मंगल वृद्धि करनेहारी है शिवजी ने कामदेव को दग्धकर दिया फिर अनंग होकर सबके मनमें कामदेव का निवास भया तब कामदेव ने इस व्रतको किया इसी से इसका नाम अनंग त्रयोदशी पड़ा अब हम इस व्रतका विधान कहते हैं मार्ग

शुक्ल त्रयोदशी को नदी तड़ाग आदि में स्नान कर जितेन्द्रियहो पुष्प धूप दीप नैवेद्य और कालोद्भव फलों करके शशिशेखरका पूजन करै और तिल सहित अक्षतों करके हवन करै रात्रि को मधु प्राशन कर शयन करै वह कामदेव के तुल्य उत्तम रूप पाताहै। पौषमें योगेश्वर का पूजन कर चन्दन प्राशन करै तो शरीर से चन्दन के समान गन्ध होजाय और राजसूय यज्ञका फलपावै। माघमें नाट्येश्वरका पूजन कर मौक्तिक चूर्ण प्राशन करै तो सौभाग्य और बहु सुवर्ण यज्ञका फल पावै। फाल्गुनमें वीरेश्वरका पूजन कर कमल प्राशन करै तो तप्त सुवर्ण के समान शरीरकी कान्ति होजाय और गोमेध यज्ञका फल पावै चैत्रमें सुरूप का पूजन करै और कपूर प्राशन करै तो चन्द्रके तुल्य मनो पूजे के लिये और नरमेध यज्ञका फल पावै। वैशाख में महाकेजाय पूजन कर जातीफल प्राशन करै तो उत्तम जाति पावै उसके सब काम सफल होयँ और सहस्र गोदान का फल पाय विष्णुलोक में निवास करै। ज्येष्ठमें प्रद्युम्न का पूजन करै और लवंग प्राशन करै तो लावण्य सब प्रकार के सुख और वाजपेय यज्ञका फल पावै। आषाढ़ में उमापतिका पूजन कर तिलोदक प्राशन करै तो तिलोत्तमाके समान रूपपाय सौवर्ष सुख भोगै और पौण्डरीक यज्ञका फलपाय स्वर्ग को जावै। श्रावणमें ईशान का पूजन कर बिल्वपत्र का प्राशन करै तो अनन्त पुण्य पावै। भाद्र में सद्योजातका पूजन कर अगुरु प्राशन करै तो भूमिपर सर्वका गुरु बनै और पुत्र पौत्र धन आदि पाय बहुत दिन संसारसुख भोग अन्त में पौण्डरीक यज्ञके फलको प्राप्तहो विष्णुलोकमें निवास करै। आश्विनमें त्रिदशाधिपति का पूजन

कर स्वर्णादिक प्राशन करै तो उत्तम रूप विद्या और सुवर्ण कोटि दान का फल पावै। कार्तिक में विश्वेश्वरका पूजन कर मदन फल प्राशन करै तो मदन के समान रूपवान् होय और अन्त में शिवलोक में निवास करै जो इस व्रतमें किसी दिन विघ्न होजाय तो दूसरे दिन उसी विधान से व्रत करलेवै एक वर्ष इस प्रकार व्रतकर के कलश स्थापन कर उसके ऊपर ताम्र पात्र में सुवर्ण की शिव प्रतिमा स्थापन कर श्वेत वस्त्र से आच्छादन करै और गन्ध पुष्प धूप दीप नैवेद्य आदि से पूजन कर शिवभक्त ब्राह्मण को देवै और उसके साथ सवत्सा गौ छत्र जूता और यथाशक्ति दक्षिणा देवै और शिवभक्त ब्राह्मणों को भोजन कराय दक्षिणा वस्त्र और जलपूर्ण कलश उनको देवै और शिवलिंगको पंचामृत से स्नान करावे इस प्रकार जो व्रत करै और व्रत पारणके समय बड़ा उत्सव करै वह निष्कंटक राज्य आयुष बल यश और सौभाग्य सौजन्म तक पाताहै और अन्त में शिवलोक में निवास करताहै इस अनंग त्रयोदशी व्रत को जो पूर्वोक्त रीति से भक्ति पूर्वक करै वह अवश्यही शिवलोक को प्राप्त होता है ॥

इकासीवां अध्याय ॥

पाली व्रतका विधान और फल ॥

राजा युधिष्ठिर पूछते हैं कि हे श्रीकृष्णचन्द्र ! जलपूर्ण तड़ाग और सरोवरों में कुल स्त्री किसको अर्घ्य देती हैं यह आप कथन करैं तब श्रीकृष्णचन्द्र कहने लगे कि हे महाराज ! भाद्रशुक्ल चतुर्दशी को ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य शूद्र और स्त्री तड़ागके तटपर जाकर फल पुष्प वस्त्र दीप चन्दन महावर सप्त धान्य अग्निपाक बिना सिद्धकिये अन्न तिल चावल

खजूर नालिकेर बीजपूर नारंगी द्राक्षा दाड़िम सुपारी आदि करके वरुण का पूजन करै पहिले मण्डल लिख उसमें गया पुष्कर प्रभास और वरुणा सहित वरुण को लिख कर पूजन करै और (वरुणायनमस्तुभ्यं नमस्तेयादसांपते। अपांपतेनमस्तेस्तुरसानांपतयेनमः ॥ माक्लेदंमाचदौर्गन्ध्यंमावैरस्यंमुखेस्तुमे । वरुणोवारुणीभर्त्तावरदोस्तुसदामम) इस मन्त्र से मध्याह्न के समय वरुणको अर्घ्यदेवै और अग्नि विना सिद्ध किया भोजन करै और सब नैवेद्य ब्राह्मण को देवै इस विधि से जो इस पालीव्रत को करै तत्क्षण सब पापों से मुक्त होजाता है और आयुष् यश सौभाग्य पाता है और समुद्र के जल की भांति उसके धन का किसी को अन्त नहीं आता॥

बयासीवां अध्याय॥

रंभाव्रत का विधान और फल॥

श्रीकृष्णचन्द्र कहते हैं कि ब्रह्मसभा में देवलमुनि के उपदेश से अप्सरा गन्धर्व और देवताओं ने कदली को अर्घ्य दान किया है उसका हम विधान कहते हैं इसी भाद्रशुक्ल चतुर्दशी को नाना प्रकार के फल सप्तधान्य दीप चन्दन दही दूर्वा अक्षत वस्त्र पक्वान्न जायफल लवंग लवलीफल आदि करके (विचित्रकदलीकन्दकदल्येकामदायिनि । शरीरारोग्यलावण्यदेहिदेविनमोस्तुते) इस मन्त्र से केला के वृक्षका पूजन कर अर्घ्य देवै पीछे अग्नि विना सिद्धकिया भोजन करै जो पुरुष अथवा स्त्री भक्तिसे इस व्रतको करै उसके वंश में दुर्भगा दरिद्रा बन्ध्या पापिनी व्यभिचारिणी कुलटा वेश्या पुनर्भू दुष्टा और पतिविरोधिनी कोई कन्या नहीं उत्पन्न होती इस व्रतको करनेहारी नारी

सौभाग्य पुत्र पौत्र धन आयुष् कीर्त्ति आदि पाकर सौ वर्षपर्य्यन्त अपने पति के साथ संसार के सुख भोगती है। यह रम्भाव्रत गायत्री ने स्वर्ग में किया गौरी ने कैलास में इन्द्राणी ने नन्दन वनमें लक्ष्मी ने श्वेतद्वीपमें शची ने भारत मण्डलमें अरुन्धती ने दारुवनमें स्वाहाने मेरु पर्वत पर सीता देवी ने अयोध्या में देवकी ने रैवताचल पर और भानुमती ने यह व्रत नागपुरमें किया है जोस्त्री भाद्रमासमें पुष्प अक्षत धूप दीप नैवेद्यआदि करके कदलीका पूजन करें वे कभी दुःखोंकरके पीड़ित न होयँ और उनके वंश में विधवा कुरूपा कुलटा आदि कन्या उत्पन्न न होयँ ॥

तिरासीवां अध्याय ॥

उतथ्यमुनि और अंगिरामुनिकी कथा, शिवचतुर्दशीका विधान और फल ॥

राजा युधिष्ठिर पूछते हैं कि हे श्रीकृष्णचन्द्र! पूर्वकाल में जब अग्नि नष्ट होगया और देवताओं को अग्निका काम पड़ा उस समय अग्निका काम किसने दिया यह आप वर्णन करें आप सब कुछ जानते हैं इसलिये पूछा है यह राजा का वचन सुन श्रीकृष्णभगवान् बोले कि हे महाराज! जब तारकासुरने देवताओं को पराजित कर स्वर्ग से निकाल दिया उस समय सब देवता ब्रह्माजीके समीप गये और उनसे प्रार्थना करी कि महाराज तारकासुर ने हमको बहुत सताया है इसके नाश का कोई उपाय कल्पना कीजिये तब ब्रह्माजी ने कहा कि हे देवताओ! पार्वती और शिवजीके वीर्य्य से उत्पन्न और गंगा अग्नि कृत्तिका आदि करके वर्द्धित बालक इस दैत्यको मारैगा यह ब्रह्माजी का वचन सुन देवता शिवजीके समीपगये और प्रणामकर सब वृत्तान्त सुनाया शिव

जीनेभी बालक उत्पन्न करना अंगीकार कर देवताओं को विसर्जन किया और आप मैथुनमें प्रवृत्त भये इसमें एक दिव्यहजार वर्षसेभी अधिक काल बीतगया और मैथुन समाप्त न भया तब देवताओं को बड़ा भयहुआ और परस्पर विचार करनेलगे कि शिव पार्वती से जो बालक उत्पन्न होगा वह तारकासुर का वध करेगा परन्तु अभी तो सुरतही समाप्त नहीं होता बालक क्या जाने कब उत्पन्न होगा इसलिये इनके सुरत निवृत्तिका उपाय करना चाहिये यह सब देवताओं ने विचारकर अग्नि और वायुको वहां भेजा अग्निको पार्वतीजी ने देखा और लज्जित हो शिवजी को सूचन किया तब शिवजी ने कहा कि हे प्रिये! अब हमारे वीर्य को अग्नि धारण करेगा यह शिवजी का वचन सुनतेही अग्नि वहां से अन्तर्द्धान भया तब देवता अग्नि को ढूँढ़ने लगे परन्तु स्वर्ग भूमि आकाश आदि में कहीं पता न लगा तब देवताओं ने कृमि कीट पतंग और मण्डूकों को पूछा उनने अग्नि का मार्ग बताया इस लिये उनको अग्नि ने शाप दिया कि तुम्हारी मनुष्यवाणी जाती रहै फिर देवताओं ने हाथियों को पूछा हाथियों ने कहा कि अग्नि हमारे शरण में आया है यह सुनतेही हाथियों को अग्नि ने शाप दिया कि तुम्हारी जिह्वा उलटी होजाय यह शाप दे अग्नि हाथियों के मुखसे निकल चलागया तब देवताओं ने हाथियों को वर दिया कि अग्नि के शाप से तुम्हारी जिह्वा उलटी तो होजायगी परन्तु संज्ञा और चेष्टाकरके सब कुछ कह सकोगे और समझोगे इतना कह देवता आगेगये वहां जीवंजीवनामक पक्षी देखा उसको देवताओं ने अग्निका पता पूछा परन्तु वह कुछ न बोला और

बारंबार पूछने परभी चुप रहा तब अग्नि ने प्रसन्न हो उसको वर दिया कि हे जीवंजीव मैं प्रसन्न होकर तुझको वर देता हूँ कि जब तक तेरी इच्छा हो तब तक जीता रह और मनुष्य के समान तेरी वाणी होय और जो तेरा मांस भक्षण करे वह भी अजर और अमर होजाय एक सौ बारह वर्ष के अनन्तर क्षणमात्र तू म्लान हुआ करैगा परन्तु मृत नहीं होगा यह वर जीवंजीव को देकर अग्नि वहां से चला और बांस के बीच जाय छिपा देवता भी वहां पहुँचे और बांस से कहा कि उष्मा करके तेरा वर्ण कलुष होरहा है इसलिये तेरे गर्भ में अग्नि है हे वंश! तू हमको अग्नि बतादे हम तुझ को वर देते हैं कि जो गृहस्थी अथवा ब्रह्मचारी तेरी यष्टि धारण करेगा उसको पञ्चाग्नि तपने का फल प्राप्त होगा यह देवताओं से वर पाय वंश ने अग्नि को प्रकट कर दिया तब प्रसन्न हो देवताओं ने अग्नि से कहा कि तुम शिवजी का वीर्य धारण करो अग्नि ने देवताओं के कहे से शिवजीका वीर्य धारा परन्तु उसके तेज से दग्ध होने लगा तब जाकर वह वीर्य अग्नि ने गङ्गा में डाला गङ्गाभी दग्ध होनेलगी तब अपने तटपर शर वनके बीच फेंकदिया वहां कुमार उत्पन्न भया जिसने तारकासुर को मारा इतनी कथा सुन राजा युधिष्ठिर ने पूछा कि हे श्रीकृष्णचन्द्र! जितने काल अग्नि गुप्तरहा उतने समय में अग्नि का काम किसने किया यह आप कथन करैं तब श्रीकृष्णभगवान् कहने लगे कि हे महाराज! उतथ्यमुनि और अङ्गिरामुनि का विद्या में और तपमें परस्पर बड़ा विवाद हुआ उतथ्य कहैं कि हम अधिक हैं और अङ्गिरा कहैं कि हम इसका निश्चय करने के लिये दोनों

ब्रह्म लोक में गये और ब्रह्माजी से सब वृत्तान्त कहा तब ब्रह्माजी ने उन से कहा कि तुम जाकर सब देवता और लोकपालों को लेआओ तब सब के सम्मुख तुम्हारा विवाद देख कर निश्चय करैंगे यह ब्रह्माजी का वचन सुन दोनों मुनि गये और देवता ऋषि गन्धर्व किन्नर यक्ष राक्षस दैत्य दानव आदि सब को बुलालाये केवल सूर्य्यभगवान् नहीं आये तब ब्रह्माजी ने कहा कि सूर्य्य को भी किसी प्रकार से लाओ यह सुन उतथ्य मुनि सूर्य्यनारायण के समीप गये और उन से कहा कि आप शीघ्र हमारे साथ ब्रह्मलोक को चलैं तब सूर्य्यभगवान् ने कहा कि हे उतथ्य मुनि! हमारा चलना किस प्रकार होसके जो हम तुम्हारे साथ जायँ तो जगत् में अन्धकार छाजाय इसलिये हम नहीं चल सक्ते यह सुनि उतथ्य मुनि वहां से चले आये और ब्रह्माजी को सब वृत्तान्त सुनाया तब उनने अङ्गिरा मुनि से सूर्य्यभगवान् के लाने के लि कहा अङ्गिरा मुनि ब्रह्माजी की आज्ञा पाय सूर्य्यनारायण समीप गये और सब बात कही सूर्य्यनारायण ने वही उत्त इनको दिया जो उतथ्य को दिया था तब अङ्गिरा ने कह कि आप ब्रह्मलोक को जाइये हम आपके बदले यहां रहक प्रकाश करैंगे यह सुन सूर्य्यनारायण ब्रह्मलोक को गये औ अङ्गिरा प्रचण्ड तेज से तपने लगे सूर्य्यभगवान् ने ब्रह्माज से पूछा कि किसलिये हमको आपने बुलाया है तब ब्रह्माज ने कहा कि आप तो शीघ्र अपने स्थान पर जायँ नहीं त अङ्गिरामुनि सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड को दग्ध करडालैगा देखो गोलोक दग्धहोकर कृष्णवर्ण होगया है शाकद्वीप जलाजाता है इसलिये शीघ्रही आप जायँ यह सुनतेही सूर्य्यभगवान्

उलटे अपने स्थानपर आये और अंगिरा मुनि की प्रशंसा कर विसर्जन किया तब अंगिरा देवताओं के समीप आये और देवताओं से कहा कि हम तुम्हारा कौन कार्य्य करैं तब देवताओं ने अंगिरा मुनिकी बड़ीस्तुति करी और कहा कि जब तक हम अग्निको ढूंढ़ै तब तक आप अग्निका काम दीजिये यह देवताओंका वचन सुन अंगिरा मुनि अग्निका काम देने लगे जब अग्नि आये तो देखा कि अंगिरा मुनि अग्नि बने रहेहैं उनसे कहा कि हे मुनि! हमारा स्थान छोड़दो हम तुम्हारे ज्येष्ठपुत्र बनैंगे और औरभी बहुत पुत्र तुम्हारे होंगे यह वर पाय अंगिराने अग्निका स्थान छोड़ दिया अग्नि का अवतार बृहस्पति अंगिराके ज्येष्ठ पुत्र भये और सौकड़ों पुत्र पौत्र और भी अंगिरा मुनि के उत्पन्न भये अग्नि को अपना स्थान चतुर्दशी तिथि को प्राप्त भया इसलिये यह तिथि अग्नि को अति प्रिय है स्वर्ग में देवता और भूमि पर मान्धाता मनु नहुषआदि बड़े २ राजाओं ने इस तिथि को माना है जो पुरुष युद्धमें मारे जायँ सर्प्प आदि काटने से मरैं नदी पर्व्वत अग्नि विष आदि निमित्त से मरे हों और जिनने आत्मघात कियाहो उनका इस तिथि में श्राद्ध करना चाहिये जिससे वे सद्गति को प्राप्त होयँ इस तिथि के व्रत का हम विधान कहते हैं चतुर्दशी को उपवास करै और गन्ध पुष्प धूप दीप नैवेद्य आदि से त्रिलोचन श्री सदाशिव का पूजन करै और रात्रि को पञ्चगव्य अथवा लवण तेल रहित भोजन करै और अग्नये स्वाहा हव्यवाहाय स्वाहा सोमाय स्वाहा अङ्गिरसे स्वाहा । इन मन्त्रों से अष्टोत्तरशत कृष्ण तिलों का हवन करै दूसरे दिन प्रभातही स्नान कर पञ्चामृतसे शिवजी को स्नान कराय भक्तिसे पूजन

करै और पूर्वोक्त रीतिसे हवन कर हाथ जोड़ (नमोस्तुभूतपतये नमः सूर्याग्निरूपिणे । पुत्रान्यच्छसुखंयच्छ मोक्षंयच्छनमोस्तुते) यह मन्त्र पढ़ै पीछे आरती कर ब्राह्मण को भोजन कराय उन को दक्षिणा दे मौनसे आपभी भोजन करै इस प्रकार एक वर्ष व्रत कर सुवर्णकी शिव की प्रतिमा बनाय चांदी के वृषपर चढ़ाय दो श्वेत वस्त्रों से आच्छादित कर ताम्र पात्र में स्थापन करै पीछे गन्ध श्वेत पुष्प धूप दीप नैवेद्य आदि से पूजन कर ब्राह्मण को देवै जो बन पड़ै तो इस व्रत को सदाही करता रहै एक वर्ष जो इस व्रत को करै वह दीर्घ आयुष् भोग कर तीर्थपर प्राण त्यागता है और दिव्य विमान में बैठ दिव्य नारियों करके सेवित स्वर्ग में जाय देवताओं के साथ विहार करता है वहां बहुत काल सुख भोग भूमि पर राजा होता है और दाता यज्ञ करनेहारा चतुर ब्राह्मण प्रिय पुत्र पौत्र और उत्तम पत्नी करके युक्त होता है शुक्ल चतुर्दशीको जो मनुष्य भक्ति से शिवपूजन करैं उनको सब दुर्लभ पदार्थ भी प्राप्त होते हैं॥

चौरासीवां अध्याय॥

श्रवणिका व्रतका विधान और फल॥

राजा युधिष्ठिर पूछते हैं कि हे श्रीकृष्णचन्द्र! श्रवणिका व्रत किस प्रकार करना चाहिये और कब करना चाहिये यह आप वर्णन करैं यह सुन श्रीकृष्णचन्द्र कहने लगे कि हे महाराज! मार्गशीर्ष आदि बारहों महीनों में जब द्रव्य प्राप्ति होय और भक्ति होय तबहीं यह व्रत करना चाहिये और विधान इसका यह है कि शुक्लपक्ष की चतुर्दशी को अथवा अ-

ष्टमी को पूर्वाह्न में स्नान आदि कर पतिव्रता सुरूपा और सौभाग्यवती ग्यारह नारियों को निमन्त्रण देकर बुलावै और वेदवेदांग जाननेहारे एक ब्राह्मण को निमन्त्रित करै फिर पाद्य अर्घ्य चन्दन पुष्प धूप दीप आदि से उन सब का पूजनकर कण्ठसूत्र कटिसूत्र वस्त्र आदि उनको देकर अनेक प्रकार के पक्वान्न उनके आगे परोसे और एक एक जलपूर्ण वर्द्धनीपात्र भी सब के आगे रक्खै वे वर्द्धनीपात्र पुष्पमाला चन्दन वस्त्र आदि से भूषित और सुवर्णयुक्त होयँ फिर हाथ जोड़कर यजमान यह मन्त्र पढ़ै (यद्बाल्येयच्चकौमारेवार्द्धकेवापि यत्कृतम् । तत्सर्वं नाशमायातु ऋणं देवर्षिपितृजम् ॥ इमंमांसमये पूर्णे तारयस्व भवार्णवात् । अनृणोगन्तुमिच्छामि विष्णोःपदमनुत्तमम्) वे सब ब्राह्मणी भी एवमस्तु यह वाक्य उच्चारण करैं पीछे वह ब्राह्मण वर्द्धनीपात्र उठाकर (अमुख्याः शिरसोदेव्याः समुत्तीर्य रुहक्रमम् । कटुकं निम्बवृक्षं च ततोवृक्ष मधोरुहम् ॥ ततोगच्छ महादेवं श्रवणिश्रवणिकोत्तमे) इस मन्त्र से यजमान के शिर पर घुमावै पीछे यजमान उन सब को भोजन वस्त्र दक्षिणा आदि देकर सन्तुष्ट करे जो स्त्री अथवा पुरुष इस वृत को करै वह सुख पूर्वक प्राण त्यागता है और इस व्रत का करनेहारा पुरुष आरोग्य पुत्र पौत्र धन आदि पाय सौ वर्ष संसार का सुख भोग अन्त में इन्द्रलोक को जाता है और स्त्री इस व्रतको करै तो गौरीलोक में निवास करै स्त्री को मन्त्र विना भी वृत आदि करने से उसका फल होसक्ता है जो इस व्रत के माहात्म्यको भक्ति से सुनैं वे भी सब पापों से छूट परमगति को प्राप्त होते हैं जो पुरुष भक्ति से श्रवणिका वृत करैं और गुड़ घृतयुक्त पकान्न स्त्रियोंको भोजन कराय दक्षिणा सहित .

पूर्णपात्र उनको देवैं वे बहुत दिन सुखभोग उत्तम गति पाते हैं॥

पचासीवां अध्याय॥

नक्तव्रत का विधान और फल॥

श्रीकृष्णचन्द्र कहते हैं कि हे महाराज! अब आप नक्त वृत का विधान श्रवण कीजिये जिसके जानने सेही मनुष्य मोक्ष को प्राप्त होय चाहे जिस मास की कृष्णचतुर्दशी को ब्राह्मण भोजन कराय नक्तवृत का आरम्भ करै प्रतिमास में दो अष्टमी और दो चतुर्दशी होती हैं उस दिन भक्ति से शिव पूजन करै और शिवध्यान में तत्पर रहै रात्रि के समय भूमि को पात्र बनाय उसपर रख भोजन करै उपवास से उत्तम भिक्षा भिक्षा से अयाचित और अयाचित से भी उत्तम नक्त है इस लिये नक्तव्रत करना चाहिये पूर्वाह्ण में देवता भोजन करते हैं मध्याह्न में मुनि अपराह्ण में पितर और सायङ्काल में गुह्यक आदि भोजन करते हैं इस लिये सब के पीछे नक्त भोजन करना चाहिये नक्त व्रत करनेहारा पुरुष नित्य स्नान हविष्य और लघु अन्न का भोजन नित्य हवन और भूमि शयन करै इस भांति एकवर्ष वृत करके अन्त में सुवर्ण का चांदी का अथवा ताम्रका पात्र घृत से भर पूर्ण कलश के ऊपर स्थापन करै कपिला गौ के पंचगव्य से मृत्तिका के शिवलिङ्ग को स्नान कराय फल पुष्प यव क्षीर दधि दूर्वा तिल चावल ये आठ वस्तु जल में डाल अर्घ्य देवै दोनों जानु भूमि पर रख पात्र को शिरतक उठाय महादेवजी को अर्घ्य देवै पीछे अनेक प्रकार के भक्ष्य भोज्य और भात कर के बलिदेवै और एक उत्तम सवत्सा गौ और एक धुरन्धर

व दरिद्री और वेदवेत्ता ब्राह्मण को दक्षिणा सहित देवै स व्रत का करनेहारा दिव्य देह धार अप्सराओं करके वित उत्तम विमान में बैठ रुद्रलोक को जाता है वहां तीन ो कोटि वर्षपर्यन्त सुख भोग कर राजा बनता है एक बार ो जो इस विधान से नक्तव्रत कर श्रीसदाशिव का पूजन करै ह विमान में बैठ स्वर्गको जाताहै ॥

छियासीवां अध्याय ॥

प्रतिमास की शिवचतुर्दशी का विधान और फल ॥

राजा युधिष्ठिर कहते हैं कि हे श्रीकृष्णचन्द्र! और भी ो कोई भुक्ति मुक्ति देनेहारा व्रत होय तो आप वर्णन कीजैये तब श्रीकृष्णचन्द्र कहने लगे कि हे महाराज! अब स तीनों लोकों में प्रसिद्ध शिवचतुर्दशी का विधान कहते मार्गशीर्ष मास की शुक्लत्रयोदशी को एक बार भोजन करै और चतुर्दशी को निराहार रहकर पार्वती सहित शिवजी का पूजन करै गन्ध पुष्प धूप दीप आदि करके। नमः शिवाय नमः सर्वात्मने नमस्त्रिनेत्राय नमो हरये नम इन्दुमुखाय नमः श्रीकण्ठाय नमः सद्योजाताय नमो वामदेवाय नमोऽघोराय नमस्तत्पुरुषाय नमईशानाय नमोऽनन्तधर्माय नमो ज्ञानरूपाय नमोऽनन्तवैराग्याय नमोऽनन्तैश्वर्याय प्रधानाय नमः व्योमात्मने नमः व्योमव्योमात्मरूपाय नमः ॥ इन मन्त्रों से पाद ललाट नेत्र मुख कण्ठ कर्ण भुज हृदय स्तन उदर पार्श्व कटि ऊरु जानु जङ्घा गुल्फ और पृष्ठ इन अंगों का पूजन करै ॥ सृष्टयै नमः तुष्टयैनमः। इन मन्त्रों से पार्वती का अर्चन करै फिर सुवर्ण का वृष शुक्ल वस्त्र पंचरत्न और अनेक प्रकारके भक्ष्य भोज्य ब्राह्मण को देवै (प्रीयतांदेवदेवोऽत्रसद्योजातः

पिनाकधृक्) यह मन्त्र पढ़ उत्तराभिमुख हो घृत प्राशन क
भूमिपर शयन करै प्रतिमास की शुक्ल चतुर्दशी को यही वि
धान करै और मार्गशीर्ष आदि महीनों में शयनके समय (श
ङ्करायनमस्तुभ्यं नमस्ते परवीरहन्। त्र्यम्बकाय नमस्तेस्तु म
हेश्वरततः परम् १ नमः पशुपतेनाथ नमस्ते शम्भवे पुनः
नमस्ते परमानन्द नमः सोमार्द्धधारिणे ॥ नमोभीमाय चोग्र
यत्वामहंशरणंगतः २) ये मन्त्र हाथ जोड़कर पढ़ै और इन
बारह महीनों में क्रम से गोमूत्र गोमय दुग्ध दधि घृत कु
शोदक पंचगव्य घृत दुग्ध कमल गोशृङ्ग जल कृष्ण तिल
ये प्राशन करै और मन्दार मालती केतकी सिंदुवार अशो
मल्लिका कुब्जक पाटला अर्कपुष्प कदम्ब कमल और उ
त्पल इन करके क्रमसे बारहों चतुर्दशियों को पूजन क
इस प्रकार एक वर्ष करके कार्त्तिक मास में भक्तिसे शिवपूज
कर अनेक प्रकार के भोजन वस्त्र भूषण दक्षिणा आदि देक
ब्राह्मणों को सन्तुष्ट कर नीलेरंग का वृष छोड़ै और एक
तथा एक वृष सुवर्ण का बनवाय आठ मोतियों सहित उत्त
शय्या पर रक्खे जलका कुम्भ चावल घृत दक्षिणा आ
सहित वह सब सामग्री वेदवेत्ता शान्तचित्त सपत्नीक ब्रा
ह्मणको देवै इसमें कभी वित्तशाठ्य न करै इस व्रतको
पुरुष भक्ति से करै उसके सब पाप नष्ट होजाते हैं हजार अ
श्वमेध का फल पाता है और दीर्घायुष ऐश्वर्य सन्तान वि
आदि पाय बहुत दिन संसार सुख भोग विष्णुलोकादि
में विहार करता हुआ शिवलोक में प्राप्त होता है इस व्रत
सम्पूर्ण फल को बृहस्पति ब्रह्मा अनन्त सिद्ध आदि भी
नहीं वर्णन कर सके जो इस माहात्म्य को पढ़ै सुनै वह भी

शिवलोक को जाता है जो नारी पतिकी और गुरुकी आज्ञा लेकर इस व्रतको करै तो वहभी परमेश्वर के अनुग्रह से शिवलोकको प्राप्त होय ॥

सत्तासीवां अध्याय ॥

सर्व फलत्याग व्रतका माहात्म्य और फल ॥

श्रीकृष्णचन्द्र कहते हैं कि हे महाराज ! अब हम सर्व फलत्याग का माहात्म्य वर्णन कहते हैं आप प्रीति से श्रवण करैं मार्गशुक्ल चतुर्दशी को अथवा और मास की अष्टमी को ब्राह्मणों को पायस भोजन कराय दक्षिणादे इस व्रतका आरम्भ करै वर्षभर कोई फल मूल भक्षण न करै वर्षके अन्त में चतुर्दशीके अथवा अष्टमी के दिन सुवर्ण के रुद्र धर्मराज और कूष्माण्ड मातुलुङ्ग वृन्ताक पनस आम्रातक कपित्थ कलंज श्रीफल जम्बीर कदली फल बेर दाड़िम ये फल सुवर्ण के बनावै उदुम्बर नारिकेल द्राक्षा दोनों कटेली कङ्कोल एला ककड़ी करीर कुटज शमी ये फल चांदी के बनावै और ताम्रका तालफल बनावै और पिण्डारक खजूर सूरण कन्द पनस लकुच चिर्भट शाल्मलि फल करैला इंगुदी पटोल ये सब फलभी तांबे के बनवावै दो जलके कुम्भ दो वर्द्धनीपात्र दो पात्र भोजन सहित और धेनु तथा पूर्वोक्त सब फल वेदवेदांग जाननेहारे शांतचित्त और कुटुम्बी ब्राह्मण को शिवजी और यमराज की प्रसन्नता के लिये देवै और (यथाफलेषुसर्वेषुवसन्त्यमरकोटयः । तथासर्वफलत्यागाच्छिवप्रीतिः सदास्तु मे ॥ यथा शिवश्च धर्मश्च सदानन्तफलप्रदौ । तद्युक्तफलदानेन स्यातांमेवरप्रदौ ॥ यथाफलन्ति कामानि शिवभक्तस्य सर्व्वदा । तथानन्तफलावाप्तिर

स्तुमेजन्मजन्मनि ॥ यथाभिन्नान्नपश्यामि शिवविष्णवर्कप
द्मजान्। तथाममास्तुविश्वात्मा शङ्करः शङ्करः सदा) ये मन्त्र
पढ़े। सब उपकरणों सहित उत्तम शय्या भूषण दक्षिणा
और जलकुम्भ ब्राह्मण को देकर यथा शक्ति ब्राह्मण भोजन
करावै परन्तु तैल क्षारवर्जित भोजन देवै जो सब फल न त्याग
सकै तो एकही फलका त्यागकरै और सुवर्णआदि बनवाय इस
विधान से ब्राह्मणको देवै यह व्रत शैव वैष्णव भागवत योगी
आदि सबको करना चाहिये वेदवेत्ता इस सर्व फल त्याग
व्रतको अतिशस्त कहते हैं फलों में जितने परमाणु होयँ उ-
तने हजार युग इस व्रतका करनेहारा रुद्रलोक में निवास
करता है नारियोंको भी यह व्रत अवश्य करना चाहिये इस
व्रत के करनेहारे को किसी जन्ममें इष्टवियोग नहीं होता और
अन्त में स्वर्गवास मिलता है जो भक्तिसे इस माहात्म्य को
पढ़ै अथवा सुनै वहभी सब पापोंसे छूट स्वर्गको जाताहै ॥

अट्ठासीवां अध्याय ॥

तारा के निमित्त देवताओं से चन्द्रमाका युद्ध विजय पूर्णिमा व्रतका
विधान फल और अमावास्या को श्राद्धआदि करने का फल ॥

श्रीकृष्णचन्द्र कहते हैं कि हे महाराज ! पूर्णिमा तिथि
चन्द्रमा की प्रिया है उस दिन मास पूर्ण होता है इसलिये
उसको पूर्णमासी कहते हैं पौर्णमासी को युद्ध में चन्द्रमा ने
देवताओं से जय पाया है बृहस्पति की स्त्री तारामें चन्द्रमा
आसक्त होगया था इसलिये देवताओं से युद्ध हुआ राजा
युधिष्ठिर पूछते हैं कि हे श्रीकृष्णचन्द्र ! तारा किस की पुत्री
थी चन्द्रमा उसमें क्योंकर आसक्त भया और देवताओं से
किस विधि युद्ध हुआ यह आप कथन करें यह राजा का

प्रश्न सुन श्रीकृष्णचन्द्र कहने लगे कि हे महाराज! प्रजापति की अति सुन्दरी तारा नाम कन्या थी उसको प्रजापति ने बृहस्पति को विवाह दिया वह भी यत्नपूर्वक अपने पति की सेवा करने में प्रवृत्त भई एक दिन उस अति सुन्दरी को चन्द्रमा ने देखा देखतेही चन्द्रमा कामवश हुआ और तारा से कहने लगा कि हे तारे! मेरे समीप शीघ्र आगमन कर मैं तेरे अधीन हूं तारा ने भी चन्द्रमा का अभिप्राय जान कहा कि हे चन्द्र! मैं अंगिरामुनि के पुत्र बृहस्पति की भार्या हूं और परदारा का तुमको गमन करना योग्य नहीं यह तारा का वचन सुन कर भी चन्द्रमा ने न माना और तारा का दहिना हाथ पकड़ अपने स्थान को लेगया यह बात बृहस्पति ने जानी और बड़ा कोप कर सब वृत्तान्त इन्द्र से कहा इन्द्रने चन्द्रमा के पास दूत भेजा परन्तु चन्द्रने कुछ न माना तब इन्द्र ने सब देवताओं को बुला कर यह वृत्तान्त सुनाया यह सुनतेही सब देवता और गन्धर्व क्रोध से जल उठे और रथों पर चढ़ नाना प्रकार के शस्त्र अस्त्र धार चन्द्र से युद्ध करने उठ धाये चन्द्रमा ने देवताओं की इस भांति चढ़ाई देख दैत्य दानव राक्षस आदि अपनी सहाय के लिये बुलाये और आप भी रथ पर चढ़ युद्ध के लिये निकला दोनों ओर की सेना मिलतेही घोर युद्ध होने लगा चन्द्रमा ने हिमवृष्टि से देवताओं को भगा दिया और युद्ध में जय पाय चन्द्रमा गर्जने लगा देवता भी पराजित हो विष्णु भगवान् के शरण में गये और सम्पूर्ण वृत्तान्त उनके आगे वर्णन किया यह वृत्तान्त सुन विष्णु भगवान् गरुड़ पर चढ़ सुदर्शनचक्र धार सब देवताओंको साथ ले चन्द्रमा से युद्ध करने के लिये

आये फिर देवता और दैत्यों का घोर युद्ध आरम्भ हुआ परन्तु चन्द्रमा ने ऐसा युद्ध किया कि क्षणमात्र में इन्द्र सहित सब देवता और गन्धर्वों को जीत युद्ध से विमुख किया तब विष्णु भगवान् ने बड़ा कोप किया और शंखध्वनिकर चन्द्रमा को मारने के लिये सुदर्शनचक्र उठाया उस समय ब्रह्माजी ने कहा कि आपके चक्र को त्रैलोक्य में कोई अवध्य नहीं है और चन्द्रमा को हमने ब्राह्मणों का राजा बनाया है इसलिये आप इसका वध न करैं जो और उपाय आप कहैं वह किया जाय तब विष्णु भगवान् ने कहा कि अमावास्या को चन्द्रमा नष्ट होय और फिर जन्म लेकर पूर्णिमापर्यन्त वृद्धि को प्राप्त होय और ब्राह्मणों के हव्य कव्य देवता और पितरों को पहुंचावै यह दक्ष का भी शाप चन्द्रमा को है यह बात सब देवताओं ने स्वीकार करी ब्रह्माजीने चन्द्रमा को बुलाकर समझाया और कहा कि हे पुत्र! गुरुकी भार्या तुम देदो फिर कभी ऐसा अविनय मत करना चन्द्रमा ने ब्रह्माजी की आज्ञामान उसी समय तारा को बृहस्पति के अर्पण किया परन्तु सब देवताओं के सम्मुख यह कहा कि इसमें मेरा गर्भ है जो सन्तान होगी वह मेरी होगी यह चन्द्र का वचन सुन बृहस्पति ने कहा कि जिसका क्षेत्र होय वह उस बीज का स्वामी होता है बीज चाहे जिसका हो यह वेदशास्त्र सम्पन्न और धर्मनिष्ठ ऋषियों ने कहा है इसलिये इसका सन्तान तुमको नहीं मिल सक्ता तब चन्द्रमा ने कहा कि आप का वचन ठीक नहीं है माता तो केवल गर्भधारण करने के लिये एक थैली है सन्तान के ऊपर पिताकाही स्वत्व रहता है यह पौराणिकमुनियों का मत है इस भांति चन्द्रमा और बृहस्पति

को विवाद करते देख ब्रह्माजी ने एकान्त में तारासे पूछा कि तैंने किस से गर्भ धारण किया है यह ब्रह्माजी का वचन सुन लज्जासे ताराने कुछ उत्तर न दिया और उस गर्भ को उसी क्षण वहांहीं त्याग दिया वह बालक ऐसा तेजस्वी उत्पन्न भया कि सम्पूर्ण स्वर्ग में प्रकाश होगया ब्रह्माजी ने उस बालकसेही पूछा कि तू किसका पुत्र है बालक ने उत्तर दिया कि चन्द्रमा का पुत्रहूं तब ब्रह्माजीने प्रसन्नहो और बालक की बुद्धिमत्ता देख उसका नाम बुध रक्खा और चन्द्रमा को दिया चन्द्रमा उस बालक को ले प्रसन्न होता हुआ अपने घर आया और बृहस्पति भी अपनी भार्या को ले धीरे २ अपने सदनको गये चन्द्रमा ने कहा कि पूर्णिमा को हमारा विजय हुआ और उत्तम पुत्र पाया इस लिये यह तिथि हमको अत्यन्त प्रिय है इस दिन जो पुरुष और स्त्री व्रतकर हमारा पूजन करैंगे उनके सब मनोरथ पूर्ण होंगे इतनी कथा सुनाय श्रीकृष्ण भगवान् कहने लगे कि हे महाराज! पूर्णिमा के दिन नदी आदि में स्नानकर देवता और पितरों का तर्पण करै पीछे घरमें आय मण्डल बनाय उसके बीच नक्षत्रों सहित चन्द्रमा लिख श्वेत गन्ध पुष्प धूप दीप घृतपक्व नैवेद्य और शुक्ल वस्त्र करके चन्द्रमा का पूजन कर क्षमापन करावै और सायंकाल के समय (गगनार्णवमाणिक्यचन्द्रदाक्षायणीप्रिय। गृहाणार्घ्यंमयादत्तमत्रिनेत्रसमुद्भव) इस मन्त्र से अर्घ्य देकर रात्रिके समय मौनसे शाकाहार करै यह व्रत सब मनोरथ पूर्ण करनेहारा है अमावास्या तिथि पितरों को प्रिय है उस दिन दान तर्पण आदि करने से पितरों की तृप्ति होती है जो अमावास्या को उपवास करै उसको अक्षयवट के नीचे श्राद्धकर-

नेका फल होता है जो अमावास्याको पिंडदान करै वह इक्कीस कुलका उद्धार करता है और आपभी बहुत काल पितृलोक में सुखभोगकर पांच जन्मतक धनवान् और विद्वान् ब्राह्मण होताहै एक वर्षपर्यंत पूर्णिमाव्रत करके नक्षत्र सहित चन्द्रमा की सुवर्ण की प्रतिमा बनाय वस्त्र भूषण आदि से उसका पूजनकर ब्राह्मण को देवै इस व्रतका करनेहारा पुरुष सब पापों से मुक्तहो चन्द्रमा की भांति शोभित होता है और पुत्र पौत्र धन आरोग्य आदि पाय बहुत काल संसार सुख भोग अन्त समय प्रयाग में प्राण त्यागकर विष्णुलोक को जाता है वहां गन्धर्व और अप्सरा उसकी सेवा में रहती हैं वहां तीन अयुतकल्प निवास करता है जो पुरुष पूर्णिमा को चन्द्रमा का पूजन करै और अमावास्या को पितृतर्पण पिण्ड दान आदि करैं वे धन धान्य सन्तान आदि से कभी खाली नहीं रहते ॥

नवासीवां अध्याय ॥

वैशाखी कार्त्तिकी और माघी पूर्णिमा का विधान और फल ॥

राजायुधिष्ठिर पूछते हैं कि वर्ष भरमें कौन २ तिथि स्नान दान आदि में अधिक पुण्यप्रद हैं उनका आप वर्णन करें यह सुन श्रीकृष्णभगवान् कहने लगे कि हे महाराज ! वैशाख कार्त्तिक और माघ इन तीन महीनों की पूर्णिमा स्नानदानके लिये अतिश्रेष्ठ हैं इनको स्नान दान विना न बितावै तीर्थों में स्नान करै और वित्तानुसार दानदेवै वैशाखी को गंगा में कार्त्तिकी को पुष्कर में और माघीको काशीमें स्नान करै उसदिन जो पितरों का तर्पण करै वह अनन्त फल पाता है और पितरों का दुष्कृत से उद्धार करता है वैशाखी को भोजन सुवर्ण और वस्त्र सहित

जल पूर्ण कुम्भ ब्राह्मणों को देवै वह सब उत्तम फल पावै अनेक प्रकार के भोजन गौ भूमि सुवर्ण वस्त्र आदि कार्त्तिकी पूर्णिमा को देवै और माघी पूर्णिमा को देवला और पितरों का तर्पण कर सुवर्ण सहित तिलपात्र कम्बल रुई के वस्त्र कपास रत्न आदि दान करै कार्त्तिकी पूर्णिमा को वृषोत्सर्ग करै भगवान् का नीराजन करै हाथी घोड़े रथ और घृत धेनु आदि दश धेनुओं का दान करै और कदली खजूर नारिकेल दाड़िम मातुलुंग ककड़ी वृन्ताक करेला बिम्ब कूष्माण्ड आदि फल दान करै इन तिथियों को जो स्नान दान आदि नहीं करते वे जन्मान्तर में रोगी और दरिद्री होते हैं ब्राह्मणों को दान देने का तो फल हैही परन्तु बहिन भानजे दौहित्र बूआ आदिको दान देनेकाभी इन तिथियों में बड़ा पुण्य होता है भिन्न कुलीन विपत्ति करके पीड़ित दरिद्री और आशा करके दूरसे आयाहो वह अतिथि उत्तम है उसको दान देने से स्वर्गकी प्राप्ति होती है सीता और लक्ष्मण सहित रामचन्द्र जब वन को चलेगये उस समय मातामह के घरसे आय भरतने कौशल्या के आगे बहुत शपथ किये परन्तु कौशल्या को विश्वास न भया तब भरतने यह शपथ किया कि वैशाखी कार्त्तिकी और माघी पूर्णिमा विना स्नान दान के मेरी व्यतीत होयँ जो मेरी सम्मति से रामचन्द्र वनको गये होयँ तो यह सुनतेही कौशल्या को विश्वास आगया और भरतको अपने अंकमें बैठाय आश्वासन किया इन तीनों तिथियों का सम्पूर्ण माहात्म्य कौन वर्णन कर सक्ता है यह हमने संक्षेपसे कहाहै इन तीनों तिथियों को जल अन्न वस्त्र पात्र छतरी आदि दान करनेहारे पुरुष इन्द्रलोक को जाते हैं॥

नब्बेका अध्याय॥
युगादि तिथियों का माहात्म्य और विधान॥

राजा युधिष्ठिर कहते हैं कि हे श्रीकृष्णचन्द्र! और भी जो तिथि ऐसी होयँ कि जिनको किये स्नान दान जप आदि अक्षय होते हैं उनका आप वर्णन करैं यह राजा का वचन सुन श्रीकृष्णचन्द्र कहने लगे कि हे महाराज! यह अत्यन्त रहस्य हम आपको कहते हैं जो आजतक किसी को नहीं कहाथा वैशाख शुक्ल तृतीया कार्त्तिक शुक्ल नवमी भाद्रकृष्ण त्रयोदशी और माघकी पूर्णिमा ये चारों तिथि युगादि हैं अर्थात् इन तिथियों को क्रमसे चारों युगों का प्रारम्भ हुआ है इन तिथियों को उपवास तप दान जप होम आदि करने से कोटि गुण फल होताहै वैशाख शुक्ल तृतीया को गन्ध पुष्प धूप दीप नैवेद्य वस्त्र भूषण आदि से लक्ष्मी सहित नारायण का पूजन कर मेष के चर्मपर लवणधेनु स्थापन करै और उसके चतुर्थांश प्रमाण बछड़ा बनावै पीछे शास्त्रकी रीति से दान कर ब्राह्मणको देवै और (श्रीधरः श्रीपतिः श्रीमान् श्रीशः प्रीयताम्) यह वाक्य कहै तो दशहजार गोदान का फल पावै कार्त्तिक शुक्ल नवमी को नदी तड़ाग आदि में स्नान कर पुष्प धूप दीप नैवेद्य आदि करके पार्वती सहित श्री सदा शिवका पूजन करे और तिलधेनु दान करै (अष्टमूर्त्तिर्नीलकण्ठः प्रीयताम्) यह वाक्य उच्चारण करै इस प्रकार तिलधेनु दान करनेहारा शिवलोक में निवास करता है भाद्र कृष्ण त्रयोदशी को पितृ तर्पण कर शहद और घृत युक्त अनेक प्रकारके पक्वान्नों से ब्राह्मण भोजन कराय दुग्ध देने हारी सुन्दर तरुण सवत्सा गौ ब्राह्मण को देवै और (पिता

पितामहः प्रपितामहश्चप्रीयताम्) यह वाक्य कहै इस प्रकार गोदान करने से जो फल प्राप्तहोता है उसका कोटि वर्ष में भी वर्णन नहीं करसक्ते वह पुरुष इस लोकमें पुत्र पौत्र ऐश्वर्य और परलोकमें सद्गति पाता है माघपूर्णिमा को गायत्री सहित ब्रह्माजी का पूजनकर सुवर्ण वस्त्र अनेक प्रकार के फलों सहित नवनीत धेनुका दानकरे और (पितामहः पद्मयोनिः प्रीयताम्) यह वाक्य कहै इस प्रकार दान करनेवालों को तीनलोक में कोई पदार्थ दुर्लभ नहीं इन युगादि तिथियों में जो दानकरै वह अक्षय होता है निर्धनहोय तो थोड़ा २ ही दान करै उसीका अनन्त फलहै शय्या आसन छतुरी जूता वस्त्र सुवर्ण भोजन आदि ब्राह्मणों को देना चाहिये इन तिथियों को यथा शक्ति ब्राह्मण भोजन कराय पीछेसे आपभी भोजन करै युगादि तिथियों को दान पूजन आदि करने से कायिक वाचिक और मानसिक सब प्रकार के पाप नष्ट होजाते हैं और दान करनेहारा अक्षय स्वर्गवास पाताहै इन युगादि तिथियों में किये स्नान दान आदि कोटि गुण होजाते हैं यह व्यासादि मुनि कहते हैं ॥

इक्यानवेका अध्याय ॥

सत्यवान् और सावित्रीकी कथा,सावित्री व्रत का विधान और फल ॥

राजा युधिष्ठिर कहते हैं कि हे श्रीकृष्णचन्द्र ! अब आप सावित्री व्रतका विधान कथन करैं यह राजा का वचन सुन श्रीकृष्ण भगवान् कहने लगे कि हे महाराज ! सावित्री नाम राजकन्या ने वनमें जिस प्रकार यह व्रत किया उसका हम नारियों के हितके अर्थ वर्णन करते हैं पूर्वकाल में बड़ा पराक्रमी सत्यवादी ज्ञानवान् जितेन्द्रिय प्रजाके हितमें तत्पर

अश्वपति नाम राजाथा उसके कुछ संतान न भई इसलिये वह सावित्री व्रत किया करता कुछ कालके अनन्तर ब्रह्माजी की पत्नी सावित्री ने प्रसन्नहो राजाको वरदिया कि हे राजन्! एक कन्या तेरे उत्पन्नहोगी इतना कह कमण्डलुधरा श्रीसावित्री देवी अन्तर्द्धानभई और थोड़े कालके अनन्तर राजाके अति सुन्दरी एक कन्या उत्पन्न भई सावित्री के वरसे प्राप्तभई इसलिये राजाने उसका नाम सावित्री रक्खा कुछ कालके अनन्तर वह तरुण अवस्था में प्राप्तहुई तब तो उसका इतना तेजबढ़ा कि मानों तप्तसुवर्ण के उसके अङ्गहोयँ और देखनेवालों को यही निश्चय होय कि यह कोई देवकन्या है वह कन्याभी पिताके उपदेशसे सावित्री व्रत किया करती एक दिन व्रतकर शिरस्नान किया और सावित्री का पूजन और हवन आदि कर अपनी सखियो सहित पिताके पासगई पिताको प्रणामकर विनय से हाथ जोड़ बैठगई राजाने पुत्री का रूप और तारुण्य देख कहा कि हे पुत्री! तू अब वर योग्यहुई और कोई तेरको वरता नहीं अब तू मेरेधर्मकी रक्षाकर मैंने धर्मशास्त्रों में यह सुना है कि जो कन्या पिताके घर रजस्वला होजाय वह वृषली कहातीहै और उसका पिता ब्रह्महत्या को प्राप्तहो नरकको जाताहै इसलिये वृद्धअमात्यों को साथ लेकर तू स्वयंवर के लिये जा और जहां अपनेयोग्य कोई राजकुमार देखै उसी को वरले सावित्री ने भी यह पिताकी आज्ञा अङ्गीकार करी और सब राजपरिकर साथले वहांसे चली थोड़े काल मेंही राजर्षियों के आश्रम सब तीर्थ और तपोवनों में घूमती वृद्ध ऋषियों को अभिवन्दन करती सखियों सहित अपने

पिता के समीप आपहुंची उस समय नारदमुनि भी वहां बैठे थे सावित्री नारदजी को और पिता को प्रणाम कर अपना वृत्तान्त कहने लगी कि हे महाराज! सब आश्रम और तीर्थ मैंने देखे और एक राजकुमार को मैंने वर भी लियाहै द्युमत्सेन एक राजा है ईश्वर की इच्छा से वह राज्य करता २ अन्धाहोगया तब उसके शत्रु रुक्मी ने उसका राज्य हरलिया और उस को निकालदिया वह अब अपनी रानी समेत तपोवन में रहता है उसका एक पुत्र परम धार्मिक पिता का आज्ञाकारी सत्यवान् नाम है उसको मैंने वराहै यह सावित्री का वचन सुन नारदमुनि बोले कि हे राजन्! यह बात तेरी कन्याने अच्छी न करी वह बालक रूपवान् पितृभक्त ब्रह्मण्य है और शिविराजा के समान सत्यवादी है इसी से उसका नाम सत्यवान् पड़ा और ययातिके सदृश उदार चन्द्रकेतुल्य प्रियदर्शन और अश्विनीकुमारों के समान रूपवान् है उसको अश्व बहुत प्रिय है इसलिये मृत्तिका के अश्व बनाया करता है और चित्रोंमें भी अश्वही लिखता है इसलिये इसका नाम चित्राश्व भी पड़ गयाहै अब वह राजा द्युमत्सेन का पुत्र तरुण अवस्था को प्राप्त भया है बली है प्रतापी है इस प्रकार सब गुण उसमें हैं परन्तु यही बड़ा भारी दोष है कि आज से वर्षवें दिन मृत्युवश होजायगा यह नारदजी का वचन सुन सावित्री बोली कि हे देवर्षे! राजा एक वचन कहते हैं ब्राह्मण एक बात बोलते हैं कन्या एकबार वरीजाती है ये तीनोंबातें बार बार नहीं होतीं अब वह दीर्घायुष् हो चाहे अल्पायुष् निर्गुण हो वा गुणवान् मैंने उसको वरलिया दूसरे पति को कभी न करूंगी मन से निश्चय करके वचन से कहा जाता है

और जो वचन कहा वही करना चाहिये इसलिये मैंने जो मन में निश्चय कर कहा वही करूँगी यह सावित्री का निश्चय युक्त वचन सुन नारदजीने कहा कि हे पुत्रि ! जो तेरा ऐसा दृढ़ निश्चय है तो शीघ्र विवाह कर परमेश्वर सब बात भली करेंगे इतना कह नारद मुनि स्वर्गको गये और राजा ने भी शुभमुहूर्त में सावित्री का सत्यवान् से विवाह करदिया सावित्री भी मनोवांछित भर्त्तापाय अतिहर्ष को प्राप्त भई और सुखपूर्वक दोनों अपने आश्रम में रहनेलगे परन्तु नारदमुनि का वाक्य सावित्री के हृदय में खटकता था जब वर्ष पूरा होनेपर आया तब सावित्री ने विचार किया कि अब मेरे पतिका मृत्यु समीप है यहशोच भाद्रशुक्ल द्वादशी के प्रदोष से तीन रात्रिका व्रत ग्रहण कर बैठी और सावित्री भगवती का पूजन करती रही और यह निश्चयथाही कि आजसे चौथे दिन सत्यवान् का मृत्युहोगा तीन दिन रात सावित्री ने नियम से व्यतीत किये चौथे दिन देवता पितरोंको सन्तुष्ट कर ब्राह्मण भोजन कराय अपने श्वशुर और सास के चरणों पर प्रणाम किया सत्यवान् वन से काष्ठ लाया करता उस दिन भी काष्ठलेने चला तब सावित्री भी उसके सङ्ग चलपड़ी सत्यवान् ने वहां काष्ठ काटकर बोझबांधा और घरको चला परन्तु उसके मस्तक में वेदना उत्पन्नहुई जिससे चल न सका काष्ठका बोझा तो उतार दिया और सावित्री से कहा कि हे प्रिये ! मेरेशिर में बहुत व्यथा है इस लिये थोड़ाकाल तेरेउत्सङ्ग में शिररखकर सोना चाहता हूँ सावित्री ने कहा कि हे प्राणनाथ ! आप मेरेअङ्क में शिररखकर सुख से शयन कीजिये आपके शिरकी व्यथा निवृत्त

होजायगी तब आश्रम को चलैंगे सत्यवान् सावित्री के अंक में शिर धरके वट वृक्षकी छाया में सोया इतने में यमराज वहां आये सावित्री ने उनको देख प्रणाम किया और कहा कि देवता दैत्य गन्धर्व आदि तुम कौनहो इस वनमें मेरा धर्षण करना चाहते हो तो यह कभी नहीं होसकैगा कोई पुरुष मुझको स्पर्श नहीं कर सक्ता मैं पतिव्रता हूं दूसरे पुरुष को मेरा स्पर्श दीप्त अग्निज्वाला की भांति है यह सावित्री का वचन सुन धर्मराज ने कहा कि हे सावित्रि! सब लोक को नाश करनेहारा मैं यम हूं इस तेरे पतिकी आयुष् समाप्त हो-गया है परन्तु तू पतिव्रता है इसलिये मेरे दूत इस को न लेजासके तब मैं आप लेने आया हूँ इतना कह यमराज ने सत्यवान् के शरीर से अंगुष्ठमात्र पुरुष को खैंच लिया और लेकर अपने लोक को चला सावित्री भी उसके पीछे होली बहुत दूर जाकर यमराज ने सावित्री से कहा कि हे पतिव्रते! अब तू लौटजा इस मार्ग में इतनी दूर कोई नहीं आता तब सावित्रीने कहा कि महाराज पति के साथ आते हुये मुझे न तो ग्लानि भई और न कुछ श्रम मैं सुखपूर्वक चली आती हूँ वर्णाश्रमों का आधार वेद शिष्यों का आधार गुरु और नारियों का आधार पति है भूमि पर सबको आश्रय है परन्तु मुझको इसके बिना दूसरा कुछ अवलम्ब नहीं इस भांति धर्मयुक्त और मधुर सावित्री के वचन सुन यमराज प्रसन्न होकर कहने लगा कि हे पुत्रि! मैं तेरे से प्रसन्न हुआ जो वर तुझे अपेक्षित हो मांग तब सावित्री ने पांच वर मांगे कि मेरे श्वशुर के नेत्र अच्छे होजावैं और राज्य मिलजाय मेरे पिता के सौ पुत्र होवैं मेरा भर्ता दीर्घायु पावै सौ पुत्र मेरे उ-

त्पन्न होवें और हमारी सदा धर्ममें दृढ़ श्रद्धा रहै धर्मराज ने ये सब वर सावित्री को दे घरको बिदा किया सावित्री भी प्रसन्न होती हुई अपने पति को संग लेकर आश्रम में आई भाद्र की पूर्णिमा को जो उसने व्रत किया था यह सब उसका फल है इतनी कथा सुन राजा युधिष्ठिर ने पूछा कि हे श्रीकृष्णचन्द्र ! उस व्रत का विधान आप विस्तार से वर्णन करें तब श्रीकृष्ण भगवान् कहने लगे कि हे महाराज ! भाद्रशुक्ल त्रयोदशी को शौच आदि कर तीन दिन के व्रत का नियम ग्रहण करै जो तीन दिन उपवास रहने की शक्ति न होय तो त्रयोदशी को नक्त चतुर्दशी को अयाचित और पूर्णिमा को उपवास करै नित्य नदी तड़ाग आदि में स्नान करै और पूर्णिमा को सरसों का उबटना लगाय स्नान करै और बांस के पात्र में एक सेर नदी का बालू ले आवै पीछे सुवर्ण की ब्रह्मा सहित सावित्री की प्रतिमा बनाय उस पर स्थापन कर दो रक्तवर्ण वस्त्र से उनको आच्छादित करै फिर गन्ध पुष्प धूप दीप नैवेद्य से पूजन कर कूष्माण्ड नारिकेल ककड़ी तुरई खजूर कैथ दाड़िम जामुन जम्भीरी नारङ्गी अखरोट पनस गुड़ लवण जीरा सप्तधान्य आदि सब वस्तु बांस के पात्र में रख (ॐकारपूर्विकेदेविवीणापुस्तकधारिणि । वेदमातर्नमस्तुभ्यमवैधव्यं प्रयच्छमे) यह मन्त्र पढ़ सावित्री को अर्पण करै रात्रि के समय जागरण करै गीत वाद्य नृत्य आदि का बड़ा उत्सव होय नारी मिलकर गीतगावैं ब्राह्मण सावित्री कथा कहैं इस प्रकार सारी रात्रि उत्सव से बिताय प्रभातही सब सामग्री सहित सावित्री मूर्त्ति (सावित्रीब्रह्मयादत्ता साहिरण्यासहासना । ब्रह्मणःप्रीणनार्थाय ब्राह्मणप्रतिग-

ह्यताम्) यह मन्त्र पढ़ वेदवेत्ता अग्निहोत्री दरिद्री और सावित्री कल्प जाननेहारे ब्राह्मण को देवै और सब सामग्री ब्राह्मण के घर पहुँचा देवै आपभी उसके साथ दश क़दम जाय और यथाशक्ति ब्राह्मण भोजन कराय आप भी हविष्य अन्न भोजन करै इसीप्रकार ज्येष्ठमास की पूर्णिमा को वटवृक्ष के नीचे काष्ठ भार सहित सत्यवान् और सावित्री की प्रतिमा बनाय पूजन करै रात्रि को जागरण आदि कर प्रभात वह प्रतिमा ब्राह्मण को देवै इस विधान से जो सावित्री व्रत करै वह पुत्र पौत्र धन आदि सब पदार्थ पाय चिरकाल तक भूमिपर सब सुख भोग अपने पति सहित ब्रह्मलोक को जाती है यह व्रत पुण्यवर्द्धक पापहारक दुःखप्रणाशन और धनदायक है जो नारी भक्तिसे इस व्रत को करैं वे सावित्री की भांति दोनों कुलों का उद्धार कर पति सहित चिरकालतक सुख भोगती हैं जो इस माहात्म्य को पढ़ै अथवा सुनै वहभी मनोवाञ्छित फल पावै ॥

बानबेका अध्याय ॥

कलिंगभद्रा रानी की कथा कृत्तिकाव्रतका विधान और फल ॥

श्रीकृष्णचन्द्र कहते हैं कि हे महाराज! पूर्वकालमें मध्यदेश के बीच वृकस्थल नाम ग्राम में कलिंगभद्रा नाम अतिरूपवती और बहुपुत्रा राजा दिलीप की रानी थी वह सदा ब्राह्मणों को दान देती देवार्चन करती ब्राह्मण भोजन कराती उस समय में कलिङ्गभद्रा रानी के समान कोई दूसरा दान देनेहारा न था एक समय उसने कार्त्तिक मासमें छःमहीने का कृत्तिका व्रत धारण किया और नित्य पूजन दान ब्राह्मण भोजन हवन आदि में तत्पर रहती व्रतमें थोड़ाकाल अवशेष था कि एक दिन उस

को रात्रि समय पति के साथ सोतीहुई को भयङ्कर सर्पने काटा काटतेही उसके प्राण जातेरहे और जन्मान्तर में बकरी बनी परन्तु व्रतके प्रभाव से बकरी भी जातिस्मरा थी उसने अपना कृत्तिका वृत फिर ग्रहण किया अपने यूथ से अलगहो उपवास करने लगी एक दिन उसको उसके स्वामी ने बांध रक्खा था उस समय किसी जातिस्मर ऋषि ने उस को देखा और जाना कि यह रानी कलिङ्गभद्रा है तब दयाकर बन्धन से उसको छुटाया वहांसे छुट उसने बेरी के पत्र भक्षण कर शीतल जल पानकर व्रत पारण किया ऋषि अपने आश्रम को गये और वह अपने व्रतमें तत्पर भई और कुछ कालके अनन्तर उस ने प्राण त्याग किया और गौतम ऋषि की भार्या अहल्या के गर्भ से उत्पन्न भई माता पिताने उसका नाम योगलक्ष्मी रक्खा और तरुण भई जब गौतम मुनि ने बड़े तपस्वी और शान्तचित्त शांडिल्यमुनि को विवाहदी वह भी शांडिल्य के घरमें सरस्वती स्वाहा अरुन्धती गौरी राज्ञी गायत्री अथवा साक्षात् महालक्ष्मी की भांति शोभित होती थी नित्य देवता पितर और अतिथियों के सत्कार में लगी रहती ब्राह्मणों को भोजन देती एक दिन शाण्डिल्यमुनि ने योगबल से सब वृत्तान्त जानकर पूछा कि हे प्रिये ! कृत्तिका कितनी हैं तब योगलक्ष्मी को भी पूर्ववृत्त स्मरण आया और कहा कि महाराज छः कृत्तिका हैं तब शांडिल्यमुनि ने उसको मन्त्र और कृत्तिका व्रतका फिर उपदेश किया जिसके करने से दोनों चिरकाल संसार सुख भोग स्वर्ग को गये राजा युधिष्ठिरने इतनी कथा श्रवणकर पूछा कि हे श्रीकृष्णचन्द्र ! कृत्तिका व्रतका क्या विधानहै आप वर्णन करें तब श्रीकृष्ण-

चन्द्र कहनेलगे कि हे महाराज ! कार्त्तिक की पूर्णिमा को कृत्तिका नक्षत्र में चन्द्रमा और बृहस्पति होयँ और उस दिन सोमवार होय वह महाकार्त्तिकी होती है महाकार्त्तिकी तो बहुत वर्षों में और बड़े पुण्य से प्राप्त होती है इसलिये साधारण कार्त्तिकी पूर्णिमाकोही उपवास करै कार्त्तिकी पूर्णिमा को प्रभातही दन्तधावन आदि कर नक्तव्रत का अथवा उपवास का नियम ग्रहण करै पुष्कर प्रयाग कुरुक्षेत्र नैमिष कुशावर्त्त बिल्वक गोकर्ण अर्बुद अमरकण्टक आदि किसी तीर्थ में अथवा अपने घरमेंही स्नान करै फिर देवता ऋषि पितर और अतिथि का पूजनकर सायङ्काल के समय घृत और दुग्ध से पूर्ण पात्र में सुवर्ण चांदी रत्न नवनीत अन्न और पिष्ट से छः कृत्तिका की मूर्त्ति क्रम से बनाय स्थापन करै फिर उनको रक्तसूत्र से वेष्टितकर सिन्दूर कुंकुम चन्दन चमेली के पुष्प धूप दीप नैवेद्य आदि से उनका पूजनकर (ॐसप्तपितारा ह्यनलस्य वल्लभा ये ब्राह्मणा ऋषिभावेन युक्ताः । तुष्टाः कुमारस्य यथार्थमातरो मयापि सुप्रीततरा भवन्तु स्वाहा) यह मन्त्रपढ़ सब कृत्तिकाओं की मूर्त्ति ब्राह्मण को देवै ब्राह्मण भी ग्रहण करके ([illegible]) यह मन्त्र पढ़ै पीछे ब्राह्मण सब सामग्री लेकर अपने घर जावै और छः कृत्तिका नक्षत्र पर्यन्त उसी रीति से पूजनकर ब्राह्मण भोजन करावै इस प्रकार जो पुरुष कृत्तिका व्रत को कर [illegible] सूर्य के समान प्रकाशमान विमान में बैठ गन्धर्वलोक में [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible]

नक्षत्रलोक में जाय बहुत काल दिव्य भोग भोगती है और जो स्त्री पुरुष इस माहात्म्य को भक्तिसे सुनै वह सब पापों से मुक्त होताहै इस विधि से सुवर्ण आदि की छः कृत्तिका बनाय पात्रमें रख गन्ध पुष्प अक्षत धूप दीप नैवेद्य आदि से पूजनेहारा जन्म मरण से छूट जाता है ॥

तिरानबेका अध्याय ॥

मनोरथपूर्णिमा का विधान और फल ॥

श्रीकृष्णचन्द्र कहते हैं कि हे महाराज ! फाल्गुन की पूर्णिमा को स्नान आदि कर लक्ष्मी सहित जनार्दन का पूजन करै और चलते फिरते बैठते उठते जनार्दन का स्मरण करै और पाखण्ड पतित नास्तिक चण्डाल आदि से सम्भाषण न करै जितेन्द्रिय रहे रात्रि के समय चन्द्रमा को नारायण का रूप और रात्रि को लक्ष्मी रूप भावना कर (श्रीनिशाचन्द्र रूपस्त्वं वासुदेवजगत्पते । मनोभिलषितंदेव पूरयस्व नमो नमः) इस मन्त्र से अर्घ्य देवै पीछे तैल लवणरहित भोजन मौन से करै इसी प्रकार चैत्र वैशाख ज्येष्ठ इन तीन महीनों में भी पूजन कर प्रथम पारण करै आषाढ़ श्रावण भाद्रपद और आश्विन इन चार महीनों की पूर्णिमा को श्री सहित श्रीधर का पूजनकर चन्द्रमा को अर्घ्य देवै और पूर्ववत् दूसरा पारण करै कार्त्तिक आदि चार महीनों में भूति सहित केशव का यजन कर चन्द्रमा को अर्घ्य देवै और तीसरा पारण करै प्रत्येक पारण के अन्त में ब्राह्मणों को दक्षिणा देवै प्रथम पारणके चार महीनों में पञ्चगव्य दूसरे पारण के चार महीनों में कुशोदक और तीसरे में सूर्य्य किरणों करके तप्त जल प्राशन करै रात्रि के समय गीत वाद्य भगवान् के गुण कीर्त्तन आदि

करै और प्रतिमास जलकुम्भ जूता छतुरी सुवर्ण वस्त्र भोजन और दक्षिणा ब्राह्मण को देवै और मार्गशीर्ष आदि महीनों में केशव नारायण माधव गोविन्द विष्णु मधुसूदन त्रिविक्रम वामन श्रीधर हृषीकेश राम पद्मनाभ इनका कीर्त्तन करै प्रतिमास देने को समर्थ न होय तो वर्ष के अन्त में सुवर्ण का चन्द्रबिम्ब बनाय फल वस्त्र आदि से पूजन कर ब्राह्मण को देवै इस प्रकार व्रत करनेहारे पुरुष को अनेक जन्म पर्यन्त इष्टवियोग नहीं होता और वह पुरुष नारायणस्मरण करता हुआ मृत्यु वशहो स्वर्ग को जाता है यमराज का मुख नहीं देखता बहुत काल स्वर्ग सुख भोगकर धन धान्ययुक्त सत्कुल में जन्म लेता है जो इस मनोरथपूर्णिमा का व्रत करै और रात्रिको लक्ष्मी रूप तथा चन्द्रमा को नारायण स्वरूप मान चन्दन तिल अक्षत आदि से अर्घ्य देवें उनके सब मनोरथ सिद्धहोते हैं ॥

चौरानवेका अध्याय ॥

अशोकपूर्णिमा का विधान और फल ॥

श्रीकृष्ण भगवान् कहते हैं कि हे महाराज ! अब हम अशोकपूर्णिमा का विधान कहते हैं जिस उपवास को कर मनुष्य कभी शोक को नहीं प्राप्त होता फाल्गुन की पूर्णिमा को शिर आदि अङ्गों में मृत्तिका लगाय नदी आदि में स्नान कर मृत्तिका का स्थंडिल बनाय उसके ऊपर भूधर नारायण और अशोका धरणी का पुष्प पत्र नैवेद्य आदि से पूजन कर हाथजोड़ (यथाविशोकांधरणिंकृतवांस्त्वांजनार्दनः । तथा मांत्वंशोकेभ्योमोचयाशेषधारिणि ॥ यथानन्दनकुञ्जनानाघ्रा ...न्नरम्भिता । [illegible] ॥

ध्यानमात्रेयथाविष्णोःसावधानासिमेदिनि। तथा मनः सुस्थितंमेकुरुत्वं भूतधारिणि) ये मन्त्रपढ़ै पीछे रात्रि के समय चन्द्रमा को अर्घ्यदेवै उपवासरक्खै अथवा रात्रि के समय तैल क्षारवर्जित भोजनकरै चार चार मास में एक एक पारणकरै प्रत्येक पारण के अन्त में विशेष पूजा और जागरणकरै प्रथम पारण में धरणी द्वितीय में मेदिनी और तृतीय में वसुन्धरा का पूजनकरै प्रतिपारण में दो वस्त्र ब्राह्मण को देवै और धरणी सहित भगवान् को घृतस्नानकरावै वस्त्र के अभावमें सूत्र से धरणी का पूजन करै और घृताभाव में दुग्ध से स्नानकरावै वर्ष के अन्त में सवत्सा गौ भूमि वस्त्र भूषण आदि ब्राह्मणको देवै यह व्रत पाताल में स्थित भूमिने किया तब भगवान् ने वराह रूप धार उसका उद्धार किया और प्रसन्न होकर कहा कि हे धरणि! तेरे इस व्रत से हम परम सन्तुष्ट भये और भी जो पुरुष स्त्री इस व्रतको भक्तिसे कर हमारा पूजन करेंगे और यथा विधि पारण करेंगे वे जन्म जन्म में सब प्रकार के क्लेशों से छुट तुम्हारी भांति सब कल्याण के भाजन होंगे जो पुरुष इस अशोक पूर्णिमा व्रतको करै वह सबपापों से और शोकसे छुट सबप्रकार की सम्पत्ति पावै॥

पंचानबेका अध्याय॥

रानी शीलघनाकी कथा और अनन्तव्रतका विधान और फल॥

राजा युधिष्ठिर कहते हैं कि हे श्रीकृष्णचन्द्र! भक्तिसे नारायण का आराधनकरैं तो सब मनोवाञ्छित फल प्राप्तहोते हैं परन्तु स्त्री पुरुषों को सन्तानहीन होना इस से अधिक कोई दुःख और शोक नहीं सब सुखोंका हेतु सन्तान है जगत् में वे धन्य हैं जो सर्वगुणसम्पन्न आरोग्य बलवान् धर्मज्ञ

शास्त्रवेत्ता दीन अनाथों का आश्रय भाग्यवान् हृदय को आनन्द देनेहारा और दीर्घायुष् पुत्र पाते हैं अब हम ऐसा व्रत सुनना चाहते हैं कि जिसके करने से ऐसे लक्षणों करके युक्त पुत्र उत्पन्न होयँ यह राजा का वचन सुन श्रीकृष्ण भगवान् कहने लगे कि हे महाराज! इसमें एक प्राचीन इतिहास हम वर्णन करते हैं हैहय वंश में कृतवीर्य्य नाम राजा हुआ है उसकी हज़ार रानियों में मुख्य सब लक्षणों करके युक्त शीलघना नाम रानी थी उसने एक दिन पुत्रप्राप्ति के लिये ब्रह्मवादिनी मैत्रेयी से पूछा तब मैत्रेयी ने उसको यह व्रत उपदेश किया कि मार्गशीर्ष मास में जिस दिन मृगशिरा नक्षत्र होय उस दिन स्नान आदि कर अनन्त भगवान् के वाम चरण का पूजन गन्ध पुष्प धूप दीप आदि से करै और (अनन्तं सर्व्वकामानामनन्तं भगवत्फलम् । नमास्यनन्तं च पुनस्तदेवापुत्रजन्मनि ॥ अनन्तपुण्योपचयमनन्तं च महाव्रतम् । यथाभिलषितावाप्तिं कुरु मे पुरुषोत्तम) ये मन्त्र पढ़ प्रार्थना कर एकाग्रचित्त हो वारंवार प्रणाम कर ब्राह्मण को दक्षिणा देवै और (अनन्तः प्रीयताम्) यह वाक्य उच्चारण करै और गोमूत्र प्राशन करै और रात्रि के समय तैल क्षारवर्ज्जित भोजन करै इसी विधि से पौष मास पुष्य नक्षत्र में भगवान् की वाम कटि का पूजन कर गोमूत्र प्राशन करै माघ मास मघा नक्षत्र में भगवान् के भ्रू का पूजन करै फाल्गुन में फाल्गुनी नक्षत्र में स्कन्ध का पूजन करै इन चार महीनों में गोमूत्रप्राशन करै और सुवर्ण सहित तिल ब्राह्मण को देवै चैत्र में चित्रा नक्षत्र में भगवान् के दक्षिण स्कन्ध का पूजन करै वैशाख में विशाखा नक्षत्र में दक्षिण भुजा का पूजन करै ज्येष्ठ में ज्येष्ठा

नक्षत्रमें दक्षिण कटिका पूजन करै आषाढ़ में आषाढ़ा नक्षत्र में दक्षिण पाद का पूजन करै इन चार महीनों में पञ्चगव्य प्राशन करै ब्राह्मण को सुवर्ण देवै और रात्रि को भोजन करै श्रावण मास में श्रवण नक्षत्र में भगवान् के दोनों चरणों का पूजन करै भाद्र में भाद्रपदा नक्षत्र में गुह्य का पूजन करै आश्विन में अश्विनी नक्षत्र में हृदय का पूजन करै और कार्त्तिक मास में कृत्तिका नक्षत्र में अनन्त भगवान् के शिर का पूजन करै इन चार महीनों में घृत प्राशन करै और घृतही ब्राह्मण को देवै प्रथम चार मास में घृत से हवन करै द्वितीय चार मास में धान्य से और तृतीय चार मास में अनन्त भगवान् की प्रीति के लिये दुग्ध से हवन करै इस प्रकार बारह महीनों में तीन पारण कर वर्ष के अन्त में सुवर्ण की अनन्त भगवान् की मूर्त्ति और चांदी के हल मूसल बनावै पीछे मूर्त्ति को ताम्र पीठ पर स्थापन कर दोनों ओर हल मूसल रख पुष्प धूप दीप नैवेद्य आदि से पूजन कर (अनन्ताय नमः । सर्वात्मने नमः । शेषाय नमः । कालाय नमः । वासुदेवाय नमः । सङ्कर्षणाय नमः । सर्वार्थदायिने नमः । श्रीकण्ठनाथाय नमः । इन्दुमुखाय नमः) इन मन्त्रों से शिर पाद जानु कटि पार्श्व उदर भुज कण्ठ और मुख का पूजन करै (हलाय नमः । मुसलाय नमः) इन मन्त्रों से हलमूसलका पूजन करै और नील वस्त्र पुष्प माला आदि से अनन्त भगवान् का पूजन कर बारह घट अन्न और जल युक्त स्थापन करै उनमें बारह महीनों का पूजन करै नक्षत्र व देवता व संवत्सर और सब नक्षत्रोंके राजा चन्द्रमाका विधिपूर्वक पूजन करै फिर पुराणवेत्ता धर्म्मज्ञ शान्त प्रिय दर्शन ब्राह्मण का वस्त्र भूषण आदि से पूजन कर यह सब सामग्री

उसके अर्पण करै और (अनन्तःप्रीयताम्) यह वाक्य कहै पीछे और ब्राह्मणों कोभी भोजन दक्षिणा आदि देकर संतुष्ट करै इस विधि से जो इस अनन्त व्रत को समाप्त करै वह सब अभीष्ट फल पावै हे शीलघने ! जो तू उत्तम पुत्रकी इच्छा रखती है तो विधि पूर्वक श्रद्धासे इस व्रत को कर श्रीकृष्ण भगवान् कहते हैं कि हे महाराज ! इस प्रकार मैत्रेयी से उपदेश पाय शीलघना व्रत करने लगी व्रतके प्रभाव से अनन्त भगवान् संतुष्ट हुये और रानी शीलघना को पुत्र दिया शीलघना के पुत्रका जन्म होतेही आकाश निर्मल होगया सुखदेने हारा पवन चलने लगा देवदुन्दुभि बजने लगे पुष्पवृष्टि भई सारे जगत्में मंगल हुआ गन्धर्व और अप्सरा नाचने गानेलगे सब लोकों का मन धर्म में आसक्त हुआ राजा कृतवीर्य ने अपने पुत्र का नाम अर्जुन रक्खा जो कृतवीर्य का पुत्र होनेसे कार्तवीर्य कहाया कार्तवीर्य ने बड़ा तप करके विष्णु भगवान् के अवतार श्री दत्तात्रेयजी का आराधन किया और ये वरपाये कि हे अर्जुन ! तू चक्रवर्ती हो जो सायंकाल और प्रभात (नमोस्तुकार्त्तवीर्याय) यह वाक्य उच्चारण करैंगे उनको प्रस्थभर तिल दान का पुण्य होगा और जो तुम्हारा स्मरण करते रहैं गे उन पुरुषों का द्रव्य नष्ट नहीं होगा इतना वर भगवान् से पाय राजा कार्तवीर्य धर्म से सप्त द्वीपवती पृथिवी का पालन करने लगा उसने बड़ी २ दक्षिणा वाले यज्ञकिये सब शत्रुओं को जीता इस भांति रानी शीलघनाने अनन्त व्रतके प्रभाव से अति उत्तम पुत्र पाया जो पुरुष अथवा स्त्री इस कार्तवीर्य के जन्म को श्रवण करै वह सात जन्म पर्यंत संतान का दुःख न पावै जो इस अनन्त व्रतको भक्तिसे करै वह उत्तम संतान सौख्य प्राप्त करै ॥

छियानबेका अध्याय ॥

साम्भरायिणी की कथा और मास नक्षत्र व्रत का माहात्म्य ॥

राजा युधिष्ठिर कहते हैं कि हे श्रीकृष्णचन्द्र! ऐश्वर्य आदि के प्राप्त न होनेसे इतना कष्ट नहीं होता जितना प्राप्त होकर नष्ट होजाने से होताहै इसलिये आप ऐसा कोई व्रत कहैं जिसके करने से ऐश्वर्य ध्वंस और इष्ट वियोग न होय यह वचन सुन श्रीकृष्ण भगवान् कहने लगे कि हे महाराज! यह बड़ा भारी दुःख है कि प्राप्त हुये सुखका नाश होजाना इस के लिये यह विधान करना चाहिये कि बारह महीनों के नाम नक्षत्रों में कार्तिकादि मासों में पुष्प धूप दीप आदिसे भगवान् का पूजन करै कार्त्तिकादि चार महीनों में कृसरान्न नैवेद्य लगावै और यही ब्राह्मणोंको भोजन करावै फाल्गुनादि चार महीनों में संयाव नैवेद्य लगावै और आषाढ़ आदि चार मास में पायस नैवेद्य लगावै पंचगव्य प्राशन करै और भक्तिसे नारायण का अर्चन कर (नमोनमस्तेच्युत संक्षयोस्तुपापस्य वृद्धिं समुपैतुपुण्यम् ॥ ऐश्वर्यवित्तादिसदाऽक्षयं मेक्षयन्तमोया तुतवप्रसादात् । यथाच्युतत्वं परतःपरस्मात्सुब्रह्मभूतः पर तः परात्मा। तथा मुरारे कुरु वाञ्छितंमेहरापदंपापहराप्रमेय। अच्युतानन्त गोविन्द प्रसीद यदभीप्सितम् । तदक्षयंसदा देव कुरुष्व पुरुषोत्तम) इन मन्त्रों से प्रार्थना करै पीछे रात्रि के समय भगवान् का नैवेद्य आप भक्षण करै वर्ष पूरा होने पर घृतपूर्ण ताम्र पात्र और दक्षिणा ब्राह्मण को देकर (अच्युतः प्रीयताम्) यह वाक्य कहै इस प्रकार सात वर्ष व्रत कर सुवर्णकी अच्युतमूर्त्ति बनाकर स्थापन करै और उसके आगे भगवान्की परमभक्ता और पतिव्रता साम्भरायिणी

नाम ब्राह्मणी की चांदीकी मूर्त्तिबनाय स्थापन करै पीछे उ-
नका गन्ध पुष्पादि उपचारों से पूजन कर क्षमापन करावै
प्रतिवर्ष जो घृतपात्र न दियाहोय तो उसी समय घृतपूर्ण
सात ताम्रपात्र सुवर्ण सात सवत्सा गौ सात जलपूर्ण घट
छतरी जूता उत्तम शय्या सब सामग्री सहित घर और भूमि
वित्तानुसार ब्राह्मण को देवै और लक्ष्मी सहित विष्णुभग-
वान् का पूजनकर वारंवार प्रणामकर क्षमापन करावै इस
विधि से जो व्रत और भगवान् का पूजनकरै उसके धन ऐ-
श्वर्य्य आदिका क्षय नहीं होता और स्वर्गवास पाताहै इतना
कथनकर श्रीकृष्णभगवान् बोले कि हे महाराज ! स्वर्ग में
बड़ी तपस्विनी सिद्धा और सबके सन्देह हरनेहारी शाम्भ-
रायिणी नामक एक नारी रहती है एक समय इन्द्रने बृहस्पति
से पूछा कि हमारे पहिले जितने इन्द्र होगये हैं उनका क्या
आचरण और चरित था आप वर्णन कीजिये बृहस्पति ने
कहा कि हे देवराज ! सब इन्द्रों का वृत्तान्त तो हम नहीं
जानते केवल एक दो इन्द्रों का समाचार हमको विदित है
तब इन्द्र ने कहा कि हे देवगुरो ! आप के बिना हम यह
वृत्तान्त किससे पूछें बृहस्पति कुछ काल विचारकर कहने
लगे कि हे पुरन्दर ! न तो देवता और न गन्धर्व्व इतने प्राचीन
वृत्तको जानते हैं केवल तपस्विनी और धर्मज्ञा शाम्भरा-
यिणी अति प्राचीन वृत्तान्त जानती हैं उससे आप पूछैं
यह सुन बृहस्पति को सङ्गले इन्द्र शाम्भरायिणी के स्थान
पर गये शाम्भरायिणी ने बड़े सत्कार से उनको बैठाया
और पूजन आदिकर विनय से आगमन का प्रयोजन पूछा
तब बृहस्पति बोले कि हे शाम्भरायिणि ! देवराज को प्रा-

चीन वृत्तान्त सुनने का बड़ा कुतूहल है जो तू व्यतीत इन्द्रों का चरित्र जानती होय तो वर्णनकर यह सुन साम्भरायिणी बोली कि हे देवगुरो ! जितने इन्द्र होचुके हैं सबका वृत्तान्त मैं भलीभांति जानती हूँ बहुत से मनु और सप्तर्षि मैंने देखे हैं मनुओं के पुत्रों को जानती हूँ और सब मन्वन्तरोंका चरित्र मुझे विदित है जो तुम पूछो वही सुनाऊँ यह साम्भरायिणी का वचन सुन इन्द्र और बृहस्पति ने स्वायम्भुव स्वारोचिष उत्तम तामस रैवत चाक्षुषआदि मनु और व्यतीत इन्द्रों का वृत्तान्त उससे पूछा सब वृत्त ठीक २ साम्भरायिणी ने वर्णन किया और एक इन्द्र का समाचार यों कहा कि शंकुकर्ण नाम दैत्य पूर्वकाल में बड़ा प्रतापी हुआ वह सब देवताओं को जीत स्वर्ग में इन्द्र को जीतने आया उस समय शची और इन्द्र एक शय्यापर थे शंकुकर्ण को देखतेही भयसे इन्द्र शय्या के नीचे छिपे और शची बृहस्पति के घर भागगई शंकुकर्ण उस शय्या के ऊपर बैठगया और सब देवता उसके दर्शनके लिये आनेलगे विष्णुभगवान् भी शंकुकर्ण को मिलने आये उनको देख वह शय्यापर से उठा और बड़े स्नेही बन्धुकी भांति विष्णुभगवान् को आलिंगन किया विष्णुभगवान् ने भी उसको आलिंगन कर ऐसा निष्पीड़न किया कि उसके सब अस्थि चूर्ण होगये और घोर शब्द करताहुआ मृत्युवश भया दैत्यको मरजान इन्द्र भी शय्या के नीचे से शिर झुकाये निकले और विष्णुभगवान् की स्तुति करनेलगे हे देवराज ! यह वृत्तान्त मैंने अपने नेत्रों से देखा था तब इन्द्र ने साम्भरायिणी से पूछा कि तू इतने प्राचीन वृत्तान्त क्योंकर जानती है साम्भरायिणी

ने कहा कि स्वर्ग का ऐसा कोई वृत्तान्त नहीं है जो मैं न जानतीहूं तब इन्द्रने इसका कारण पूछा कि ऐसा क्या सत्कर्म तैंने कियाहै जिसके प्रभावसे अक्षय स्वर्ग वास तैंने पाया तब साम्भरायिणी ने कहा कि मैंने प्रतिमास मास नक्षत्रों में सात वर्ष पर्यंत भगवान् का पूजन किया और उपवास किया है यह सब उसी कर्मका फलहै जो पुरुष अक्षय स्वर्गवास इन्द्र पद ऐश्वर्य सन्तति आदि चाहै उसको अवश्य विष्णु भगवान् का आराधन करना चाहिये हे देवेन्द्र! जो तुमने पूछा सो मैंने वर्णन किया अब और जो पूछने की इच्छा होय सो पूछिये धर्म अर्थ काम और मोक्ष ये चारों पदार्थ विष्णु भगवान् के आराधन से प्राप्त होते हैं इतना सुन बृहस्पति और इन्द्र साम्भरायिणी पर बहुत प्रसन्न भये और दोनों भक्ति पूर्वक साम्भरायिणी का बताया व्रत करने लगे श्रीकृष्ण भगवान् कहते हैं कि हे महाराज! जो इस साम्भरायिणी के किये व्रत को सात वर्ष पर्यंत भक्तिसे करैं वे अक्षय स्वर्गवास पाते हैं ॥

सत्तानबेका अध्याय ॥

वैष्णव नक्षत्र पुरुष व्रत का विधान ॥

राजा युधिष्ठिर पूछते हैं कि हे श्रीकृष्णचन्द्र! पुरुष और स्त्रियों को उत्तम रूप किस कर्मके करने से प्राप्त होताहै और उत्तम रूप पाकर भी फिर अंगभंग आदि दोष किस कर्म के करने से होते हैं यह आप वर्णन करैं कई अति रूपवान् स्त्री पुरुष काने अन्धे लँगड़े आदि होजाते हैं उत्तम गति लावण्य और मीठे वचन रूपवान् केही अच्छे लगते हैं कुरूप को केवल विडम्बना है इसलिये उत्तम रूप प्राप्ति का उपाय वर्णन कीजिये यह राजा का वचन सुन श्रीकृष्ण भगवान्

कहने लगे कि हे महाराज ! यही बात अरुन्धती ने वशिष्ठ जीसे पूछीथी तब वशिष्ठजी ने यह कहा कि हे प्रिये ! विष्णु भगवान् का आराधन और पूजन बिन किये क्योंकर उत्तम रूप प्राप्त होसक्ताहै जो पुरुष अथवा स्त्री उत्तम रूप ऐश्वर्य और सन्तान चाहै उसको नक्षत्र पुरुष रूप विष्णु भगवान् का पूजन करना चाहिये अरुन्धती ने नक्षत्र पुरुष का विधान पूछा तब वशिष्ठजी कहने लगे कि हे प्रिये ! चैत्रमास से लेकर भगवान् के पाद आदि अंगों का पूजन करै उपवास रख स्नान कर नक्षत्र पुरुषके अंगों का पूजन इस विधिसे करै कि मूल में पाद रोहिणी में जंघा अश्विनी में जानु दोनों आषाढ़ाओं में ऊरु दोनों फाल्गुनी में गुह्य कृत्तिका में कटि दोनों भाद्र-पदाओं में पार्श्व रेवती में कुक्षि अनुराधा में वक्षस्थल धनि-ष्ठामें पृष्ठ विशाखा में दोनों भुजा हस्त में दोनों हाथ पुनर्वसु में अंगुलि आश्लेषा में नख ज्येष्ठामें ग्रीवा श्रवण में कर्ण पुष्य में मुख स्वाति में नाभि शतभिषामें मुख मघामें नासिका मृगशिरा में नेत्र चित्रा में ललाट और भरणी में शिर और आर्द्रा में केशोंका पूजन करै उपवास के दिन तैलाभ्यङ्ग न करै नक्षत्र नक्षत्रदेवता और चन्द्रमा का भी प्रति नक्षत्रमें पूजन करै और ब्राह्मण भोजन करावै जो अशौच आदि होजाय तो दूसरे नक्षत्र में उपवास कर पूजन करै व्रत समाप्त होनेपर सुवर्ण का नक्षत्र पुरुष बनाय उत्तम शय्यापर स्था-पन करै और ब्राह्मण मिथुनको शय्यापर बैठाय वस्त्र भूषण आदि से उनका पूजन कर सप्त धान्य सवत्सागौ छतरी जूता घृतपात्र और दक्षिणा सहित वह नक्षत्र पुरुष (यथानवि ष्णुभक्तानां वृजिनं जायते क्वचित् ॥ तथासुरूपमारोग्यं सु

खञ्चतदिहास्तुमे १ यथाचलक्ष्म्याशयनं न शून्यंतेजनार्दन॥ शय्याममाप्यशून्यास्तु तथाजन्मनिजन्मनि २) ये मन्त्र पढ़ ब्राह्मण को देवै जो इतना देनेका सामर्थ्य न होय तो घृत पात्र सहित एक गौ ब्राह्मण को देवै इस व्रतके करनेसे सर्वाङ्ग सुन्दररूप मनकी प्रसन्नता आरोग्य उत्तम सन्तान मीठी वाणी और ऐश्वर्य्य सात जन्म तक प्राप्त होते हैं और सब पाप निवृत्त होजाते हैं इतनी कथा कह श्रीकृष्णभगवान् बोले कि हे महाराज! इस प्रकार नक्षत्र पुरुष का विधान वशिष्ठजी ने अरुन्धती को कथन किया वही हमने आप को सुनाया जो इस विधि से नक्षत्ररूप भगवान् का पूजन करते हैं वे अवश्यही उत्तमरूप पाते हैं॥

अट्ठानवेका अध्याय॥

शैव नक्षत्र पुरुष व्रतका विधान और फल॥

राजा युधिष्ठिर पूछते हैं कि हे श्रीकृष्णचन्द्र! यह आपने विष्णु नक्षत्र पुरुष का विधान वर्णन किया अब आप शिव-भक्तों के कल्याण के अर्थ शैव नक्षत्र पुरुष का विधान कहैं यह राजा का वचन सुन श्रीकृष्ण भगवान् कहनेलगे कि हे महाराज! नक्षत्र पुरुष का जिस दिन पूजन करै उस दिन उपवास अथवा नक्तव्रत करना चाहिये फाल्गुन शुक्लपक्ष में हस्त नक्षत्रहोय उस दिन से शैव नक्षत्र व्रतका धारण करै और प्रदोष के समय शिव पूजन करै (शिवाय नमः श-ङ्कराय नमः हराय नमः शम्भवे नमः भीमाय नमः त्रिनेत्राय नमः अनङ्गाङ्गहराय नमः सुरज्येष्ठाय नमः शूलिने नमः पा-र्वतीपतये नमः कपालिने नमः सद्योजाताय नमः वामदेवाय नमः खट्वाङ्गधारिणे नमः रुद्राय नमः खण्डेन्दुधारिणे नमः

पृष्ठकाय नमः कृत्तिवाससे नमः वाचस्पतये नमः भैरवाय नमः स्थाणवे नमः पूष्णोदन्तविनाशिने नमः सर्वदर्शिने नमः त्र्यम्बकाय नमः अन्धकारये नमः सोमधारिणे नमः पाशांकुशपद्मशूलकपालसर्पेन्दुधराय गजासुरान्तकान्धकादिविनाशमूलकाय शिवाय नमः) इन मन्त्रों से हस्त आदि सत्ताईस नक्षत्रों में क्रमसे पाद गुल्फ जानु ऊरु मेढ़ू कटि नाभि दोनों पार्श्व उदर वक्षस्स्थल हृदय दोनों भुजा हाथ नख पृष्ठ कण्ठ जिह्वा दन्त ओष्ठ नासिका नेत्र दोनों कर्ण शिर और सर्वांग का पूजनकर गन्ध पुष्प धूप दीप आदि उपचार निवेदन करै और रात्रिके समय तैल क्षार रहित भोजन करै प्रति नक्षत्र में सेरभर चावल और घृतपात्र ब्राह्मण को देवै दो नक्षत्र एक दिन होजायँ तो दो अङ्गों का एक दिन पूजन करै सूतकादि में पूजन न करै फिर वह नक्षत्र आवै तब उस अङ्गका पूजन करै इस प्रकार व्रतकर अन्त में सुवर्णकी शिव पार्वती की प्रतिमा बनाय उत्तम शय्या पर स्थापन करै पीछे उनका सर्वोपचारों से पूजन कर कपिला गौ छत्र चमर दर्पण जूता वस्त्र भूषण अनुलेपन आदि सहित वह मूर्त्ति ब्राह्मण को देवै और यह मन्त्र पढ़ै (यथा नदेवशयनं तवपर्वतजातया । शून्यंकदाचिद्भवति तथामे सन्तुसिद्धयः । यथानदेवः श्रेयान्वै त्वदन्योविद्यतेकचित् । तथा मामुद्धराशेषदुःखसंसारसागरात्) पीछे प्रदक्षिणा कर विसर्जन करै और शय्या गौ आदि सब सामग्री ब्राह्मण के घर पहुँचा देवै इतना कह श्रीकृष्ण भगवान् बोले कि हे महाराज ! दुरशील दांभिक कुतार्किक निन्दक लोभी आदि को यह व्रत न बताना चाहिये शान्तस्वभाव शिवभक्त इस

व्रत के अधिकारी हैं इस व्रत के करने से महापातक भी निवृत्त होजाते हैं जो स्त्री पतिकी आज्ञापाय इस व्रतको करै उसको कभी इष्टवियोग नहीं होता जो इस व्रतके माहात्म्य को पढ़ै अथवा श्रवण करै उसके पितरों का नरक से उद्धार होजाताहै ॥

निन्नानबेका अध्याय ॥

सम्पूर्ण व्रतका विधान और फल ॥

राजा युधिष्ठिर पूछते हैं कि हे श्रीकृष्णचन्द्र ! जो नक्षत्र पुरुष व्रतको ग्रहण करके फिर न करसकै तो कौन कर्म करने से वह व्रत सम्पूर्ण होय यह आप कथन करैं यह राजा का प्रश्न सुन श्रीकृष्णभगवान् बोले कि हे महाराज ! यह अति रहस्य बात आप ने पूछी है आप के अनुरोध से हम वर्णन करते हैं अनेक प्रकार के उपद्रव मद मोह आदि से जो व्रत भग्न होजायँ उनकी पूर्तिके लिये अवश्य यह सम्पूर्ण व्रत करना चाहिये इस व्रत के करने से खण्डित व्रत पूर्ण फल देनेहारे होजाते हैं जिस देवता का व्रत भग्न होजाय उसकी पत्नीसहित सुवर्ण की अथवा चांदी की मूर्त्ति बनाय उस व्रत के दिन स्थापन कर पञ्चामृत से स्नान करावै पीछे जलपूर्ण कलश के ऊपर विराज कर गन्ध पुष्प अक्षत धूप दीप वस्त्र भूषण बलि आदि से पूजन कर (व्रतहीनस्य दीनस्य प्रायश्चित्तमजानतः । शरणं भव खिन्नस्य कुरु स्वाद्य दयां प्रभो ॥ तपश्छिद्रं व्रतच्छिद्रं यच्छिद्रं पूजने मम । तवप्रसादात्तद्देवसर्वमच्छिद्रमस्तुनः स्वाहा ॥ अमुकदेवतायै नमः पूर्वतोदक्षिणतः पश्चिमत उत्तरतः उपर्यधस्ताद्दिक्पालेभ्यो नमः) इस मन्त्र से अर्घ्य देवै पीछे देवता के पास जानु कटि

शिर वक्षस्थल कुक्षि हृदय पृष्ठ बाहु शिखा और केशोंका पूजनकर (पूजितस्त्वंयथाशक्त्यानमस्तेस्तुसुरोत्तम । ऐहिकामुष्मिकींनाथ कार्यसिद्धिंदिशस्वमे) इस मन्त्र को पढ़ क्षमाप्रनकराय सत्पात्रब्राह्मण को सम्मुख बैठाय उसका पूजन कर (इदंव्रतंमयाखण्डं कृतमासीत्पुराद्विज । भगवंस्त्वत्प्रसादेन सम्पूर्णंतदिहास्तुमे) यह मन्त्र पढ़ सब सामग्री सहित वह प्रतिमा ब्राह्मण को देवै और ब्राह्मण भी ग्रहणकर (वाक्यंपूर्णंमन्तः पूर्णंपूर्णःकार्योव्रतेव्रते । सम्पूर्णस्यप्रसादेन भवपूर्णमनोरथः ॥ ब्राह्मणायत्प्रभाषन्तेह्यनुमोदन्तिदेवताः । सर्वदेवमयोविप्रोनतद्वचनमन्यथा ॥ जलधिःक्षारतांनीतःपावकःसर्वभक्ष्यताम् । सहस्रनेत्रःशक्रोपिकृतोविप्रैर्महात्मभिः ॥ ब्राह्मणानान्तुवचनाद्ब्रह्महत्याप्रणश्यति । अश्वमेधफलंसाग्रं प्राप्यतेनात्र संशयः ॥ व्यासबाल्मीकिगर्ग्गगौतमपराशरधौम्यवशिष्ठाङ्गिरसनारदादिमुनिवचनात्सम्पूर्णं ते व्रतंभवतु) ये मन्त्र पढ़े यजमान भी ब्राह्मण को विसर्जनकर सब सामग्री उसके घर भेजदेवै पीछे पंचयज्ञ कर भोजनआदि करै इस सम्पूर्ण व्रत को जो एक बार भी भक्तिसे करै वह प्रथम कियेहुये खण्डित व्रतका सम्पूर्ण फल पाता है और व्रत खण्डन करने के पाप से छुटताहै इस व्रत का कर्त्ता पुरुष धन रूप आरोग्य कीर्त्ति आदि पाय सौ वर्ष पर्यन्त भूमिपर सुख भोग स्वर्गजाय देवता बनता है वहां देवताओं के साथ बहुतकाल विहार कर अन्तमें मोक्ष को प्राप्त होताहै श्रीकृष्णभगवान् कहते हैं कि हे महाराज! यह व्रत प्रायश्चित्त हमको गोकुल में प्रसन्न हो गर्गजी ने उपदेश कियाथा आप भी इस व्रतको करैं जिससे जन्मान्तरों में भी किये खण्डित व्रत सम्पूर्ण होजायँ ॥

सौवां अध्याय ॥

स्त्रियों को कल्याण देनेहारे कामव्रत का विधान और फल ॥

राजा युधिष्ठिर पूछते हैं कि हे श्रीकृष्णचन्द्र! वर्णाश्रमों के धर्म और आचार तो हमने पुराणों में बहुत बार श्रवण किये अब यह सुनना चाहते हैं कि स्त्रियों का कौन देवता है और किस व्रत उपवास आदि के करने से नारी स्वर्ग को जाती हैं यह आप वर्णन करें यह राजा का वचन सुन श्रीकृष्णभगवान् कहने लगे कि हे महाराज! हमारे सोलह हज़ार रानी हैं वे रूप में और गुणों में सब एकसे एक बढ़कर हैं एकसमय वसन्तऋतु में कि जब सब वन उपवन फूल रहेथे कोकिला कुहू कुहू शब्द करते थे उन सब रानियों ने कामदेव के समान रूपवान् हमारे पुत्र साम्ब को देखा साम्बको देखतेही वे सब कामके वशहो व्याकुल भईं हमने यह चेष्टा उनकी देख शाप दिया कि हमारे स्वर्गगमन के अनन्तर तुमको चोर लूटेंगे यह हमारा वचन सुन वे सब अति दीनता से अश्रुपात करती हुई बोलीं कि हे प्राणनाथ! सब जगत् के स्वामी आप हमारे पति इस दिव्य नगर में रत्नजटित भवनों में निवास देवताओं के सदृश पुत्र इन सबको त्याग चोरों की दासी बन किस विधि हमारा कालक्षेप होगा और क्योंकर हमारा उद्धार होगा यह उनका दीन वचन सुन हमने कहा कि तुम सब अग्नि की पुत्री अप्सरा हो और हमारी पत्नी बनने के लिये तुमने शुक्लपक्ष की द्वादशी का व्रत कर रात्रि आदि का दान किया उससे हमें तुमको पति मिले एक समय तुम सब मानसरोवर में जलक्रीडा कर रही थीं वहां नारदमुनि आये तुमने उनका

आदर सत्कार न किया तब उनने तुमको शाप दिया कि पति से तुम्हारा वियोग होय चोर तुमको हरलेजायँ और वेश्या बनजाओ इस प्रकार तुमको नारदजी का शाप पहिलेही था और वैसाही शाप हमारे मुखसे निकलगया इस लिये तुम अवश्य चोरों की दासी बनोगी परंतु अबभी जो हम कथन करें सो सुनो पूर्वकाल में जब देवासुर संग्राम हुआ उसमें लाखों दैत्य दानव राक्षस आदि मारे गये उन सबकी विधवा नारियों को एकत्र कर देवराज ने आज्ञा दी कि तुम सब वेश्या बनकर राजाओं के मन्दिरों में और देवालयोंमें रहो राजा और बहुश्रुत ब्राह्मण तुम्हारे पति होंगे धन देनेहारे पुरुषकी देवताकी भांति शुश्रूषा करना सुरूप कुरूप का विचार मत करना और निर्द्धन को कभी समीप मत आने देना जो धन विना किसी पुरुषका संग करोगी तो ब्रह्महत्याके तुल्य पातक तुमको होगा बहुत मद्य मत पीना सदा कुटिल बुद्धि होना परन्तु जिसकी दासी बनकर रहो उसके साथ कभी व्यभिचार मत करना दासी होकर जो स्वामी से व्यभिचार करै वह अधोगति को प्राप्त होती है और उत्तम दिनों में उपवास कर देवता और पितरों की प्रीति के लिये गौ भूमि वस्त्र सुवर्ण आदि ब्राह्मणों को देते रहना और भी तुम्हारे उद्धार के लिये हम उपाय कहते हैं जिसदिन आदित्यवार को हस्त पुष्य अथवा पुनर्वसु नक्षत्र होय उस दिन सर्वौषधि जल से स्नान कर कामदेवरूप विष्णुभगवान् का पूजन करै (कामाय नमः मोहकारिणे नमः उत्कण्ठकाय नमः आनन्दाय नमः पुष्पचापाय नमः पुष्पबाणाय नमः अनङ्गाय नमः मकरध्वजाय नमः) इन मन्त्रों से पाद जङ्घा कण्ठ मुख

वामाङ्ग दक्षिणाङ्ग शिर और सर्वाङ्ग का पूजन कर (नमः श्रीपतयेताक्ष्यध्वजांकुशधरायच। गदिनेपीतवस्त्रायशङ्खिनेचक्रिणे नमः ॥ नमोनारायणायेति कामदेवात्मने नमः। नमः शान्त्यै नमः प्रीत्यै नमोरत्यै नमः श्रियै। नमः पुष्ट्यैनमस्तुष्ट्यै नमः सर्वार्थदायच) इन मन्त्रों से गन्धमाल्य पुष्प धूप दीप नैवेद्य आदि करके कामदेव स्वरूप गोविन्द का पूजन करै पीछे वेदवेत्ता और धर्मनिष्ठ ब्राह्मणों को बुलाय उसका पूजन कर सेरभर चावल सहित घृतपात्र उसको देवै और (माधवः प्रीयताम्) यह वाक्य उच्चारण करै पीछे भोजन आदि कर उस ब्राह्मण को कामदेव का रूप मान सब प्रकार उसको सन्तुष्ट करै इस भांति एक वर्ष पर्यन्त आदित्यवार व्रत करके तेरहवें मास में गुड़ पूर्ण कलश ऊपर ताम्रपात्र में सुवर्ण की रतिसहित कामदेव की प्रतिमा स्थापन कर उसका पूजन करै और ब्राह्मण मिथुन बुलाय वस्त्र भूषण आदि से उनका पूजन कर सब उपस्करों करके सहित उत्तम शय्या छत्र जूता दीवट पादुका आसन इक्षु दण्ड सवत्सागौ और दक्षिणा सहित वह मूर्त्ति (यथांतरंनपश्यामिकामकेशवयोस्सदा। तथैवसर्वकामाप्तिरस्तुविष्णोस्सदामम) यह मन्त्र पढ़ ब्राह्मण को देवै ब्राह्मण भी (कोदात्कस्माअदात्) इत्यादि वैदिक मन्त्र पढ़ प्रतिग्रह लेवै पीछे प्रदक्षिणा कर ब्राह्मण को विसर्जन करै और सब सामग्री उसके घर भेजै उस दिन से यह नियम रक्खै कि आदित्यवार को जो ब्राह्मण रतिकी इच्छा से आवै उसका सब प्रकार से सन्तोष करै और एक एक पुराणज्ञ और शान्तचित्त ब्राह्मण का सदा पूजन करै और उसकी आज्ञा से दूसरे का भी करै जो किसी प्रकार का विघ्न होय तो प्रणय से

हीं ब्राह्मण को सन्तुष्ट करै श्रीकृष्ण भगवान् कहते हैं कि इतना कथन कर इन्द्रने कहा कि वेश्यओं के उद्धार के लिये यह व्रत हमने कहा है तुम्हारा उद्धार इस व्रतके करने से होगा हे महाराज! यही व्रत हमने गोपियों को उपदेश किया जो वेश्या भक्तिसे इस व्रत को करै वह कई कल्प विष्णुलोक में निवास करती है॥

एकसौएकका अध्याय॥

वृन्ताक त्याग विधान और फल॥

श्रीकृष्ण भगवान् कहते हैं कि हे महाराज! अब हम वृन्ताक त्याग का विधान कहते हैं एक वर्ष छःमहीने अथवा तीन मास वृन्ताक का त्याग कर पीछे भरणी अथवा मघा उपवास कर स्थंडिल बनाय उसपर अक्षत पुष्पों से (यममावाहयामि धर्मराजमावाहयामि कालमावाहयामि चित्रगुप्तमावाहयामि मृत्युमावाहयामि परमेष्ठिनमावाहयामि) इन मन्त्रों से आवाहन कर गन्ध पुष्प नैवेद्य आदि करके पूजन करै पीछे अग्नि स्थापन कर तिल और घृत करके (यमाय स्वाहा धर्म्मराजायस्वाहा कालायस्वाहा नीलायस्वाहा चित्रगुप्तायस्वाहा वैवस्वतायस्वाहा मृत्यवेस्वाहा परमेष्ठिनेस्वाहा) इन मन्त्रों से आहुति देकर (अग्निर्मूर्द्धा इत्यादि वैदिक मन्त्र करके अष्टोत्तरशत आहुति देवै और भूषण वस्त्र छत्र जूता काला कम्बल काला बैल गौ और दक्षिणा सहित सुवर्ण का वृन्ताक ब्राह्मण को देवै और यथाशक्ति ब्राह्मण भोजन भी करावै इस विधिका करनेहारा पौंडरीक यज्ञका फल पाता है सात जन्मपर्यन्त यमका दर्शन नहीं करता और सात हजार कोटिवर्षपर्यन्त स्वर्ग में सुख भोगता है जो पुरुष एक वर्ष

वृन्ताक त्याग अन्तमें घृत तक्र सहित सुवर्णवृन्ताक ब्राह्मणको देवै वह कभी यमलोक न देखै ॥

एकसौदोका अध्याय ॥

ग्रह नक्षत्र व्रत का फल सहित विधान ॥

श्रीकृष्णभगवान् कहते हैं कि हे महाराज ! अब हम ग्रह नक्षत्र व्रत का विधान कहते हैं जिसके करने से क्रूर ग्रह भी सौम्य होजायँ और लक्ष्मी धृति तुष्टि तथा पुष्टिकी प्राप्ति होती है आदित्यवार को हस्त नक्षत्र होय उस दिन सूर्यभगवान् का पूजनकर नक्त व्रत करै इसी प्रकार सात आदित्यवारों को नक्त व्रत कर अन्तमें सुवर्णकी सूर्यभगवान् की प्रतिमा बनाय ताम्र पात्र में स्थापन कर घृत से स्नान कराय रक्त चन्दन रक्त पुष्प रक्त वस्त्र धूप दीप आदि से पूजन कर मोदक नैवेद्य लगावै और छतरी जूता दो रक्तवस्त्र दक्षिणा सहित यह मूर्त्ति (आदिदेवनमस्तुभ्यं सप्तसप्तेदिवाकर । त्वंरवेतारयस्वास्मानस्मात्संसारसागरात्) यह मन्त्र पढ़ ब्राह्मण को देवै इस व्रत के करने से आरोग्य सम्पत्ति और सन्तान की प्राप्ति होती है चित्रानक्षत्रयुक्त सोमवार से आरम्भकर सात सोमवार को नक्त व्रत करै अन्त में चांदीकी चन्द्रप्रतिमा बनाय चांदी अथवा कांस्य के पात्र में स्थापन कर श्वेत पुष्प श्वेत वस्त्र आदि से पूजनकर दही भात नैवेद्य लगाय छतरी जूता दक्षिणा सहित यह मूर्त्ति ब्राह्मण को दे यथाशक्ति ब्राह्मण भोजन करावै इस व्रतके करने से चन्द्रमा प्रसन्न होताहै और चन्द्रमा प्रसन्न होजाने से सब ग्रह अनुग्रह करते हैं स्वाति नक्षत्र युक्त सोमवारको व्रतका आरम्भ कर सात नक्त व्रत करै अन्त में सुवर्ण की भौम प्रतिमा बनाय ताम्रपात्र में स्थापन कर रक्त

चन्दन रक्त वस्त्र आदि से पूजन कर घृत युक्त कसार नैवेद्य लगाय (जन्मनःप्रभवेऽपित्वं मङ्गलः पृच्छ्यसेबुधैः । अमङ्गल निहत्याशु सर्वदायच्छमङ्गलम्) यह मन्त्र पढ़ ब्राह्मण को देवै इसीप्रकार विशाखा युक्त बुधवार में बुध का पूजन कर (बुधत्वंबुद्धिजननो बोधव्यःसर्वदानृणाम् । तत्त्वावबोधंकुरुमे राजपुत्र नमोनमः) यह मन्त्र पढ़ बुध प्रतिमा ब्राह्मण को देवै अनुराधा युक्त बृहस्पति वार से सात नक्त व्रत कर अन्त में सुवर्ण की बृहस्पति मूर्त्ति बनाय सुवर्ण पात्र में स्थापन कर गन्ध पीत पुष्प पीत वस्त्र यज्ञोपवीत आदि से पूजन कर खण्ड के भक्ष्य नैवेद्य लगाय (धर्मशास्त्रार्थतत्त्वज्ञ ज्ञान विज्ञानपारग । अलब्धबुद्धिगाम्भीर्य देवाचार्य नमोस्तुते) यह मन्त्र पढ़ ब्राह्मण को देवै इसी प्रकार ज्येष्ठा युक्त शुक्र वार को व्रत का आरम्भ करै और सात नक्त व्रत कर अन्त में सुवर्ण की शुक्र प्रतिमा बनाय चांदी अथवा बांस के पात्र में स्थापन कर श्वेत चन्दन श्वेत वस्त्र आदि से पूजन कर घृत पायस का नैवेद्य लगाय (भार्गवोभर्गशुक्रोपि शुक्रक्रमवि शारदः । हत्वाग्रहकृतान्दोषान् सर्वकामप्रदोभव) यह मन्त्र पढ़ ब्राह्मण को देवै मूलायुक्त शनिवार से सात नक्त व्रत सात शनिवारों में कर अन्तमें शनि राहु और केतुका पूजन करै तिल और घृत करके ग्रहों के नाम से होम करै अर्क पलाश खदिर अपामार्ग पिप्पल उदुम्बर शमी दूर्वा और कुशा ये नवग्रहों की क्रम से समिधा हैं इनमें प्रत्येक समिधा करके एक सौ आठ आठ अथवा अट्ठाईस अट्ठाईस आहुति देवै शनैश्चर आदिकी सुवर्ण की प्रतिमा बनाय कस्तूरी नीलवस्त्र आदि से पूजन कर कृसर नैवेद्य लगावै और (शनैश्चरनमस्तेस्तु

नमस्ते राहवे तथा । केतवे च नमस्तुभ्यं सर्वसम्पत्प्रदो भव) यह मन्त्र पढ़ सब सामग्री सहित ब्राह्मण को देवै इस विधान के करने से सब ग्रहों की पीड़ा शान्त होजाती है और क्रूरग्रह भी सौम्य होजाते हैं शनि राहु और केतुकी प्रतिमा को लोहपात्र में स्थापन कर पूजा करै और कृष्णागुरुका धूप देवै जो इस विधान को करै उसके सब उपद्रव शान्त होजाते हैं और जो इस ग्रहकल्पको पढ़ै अथवा श्रद्धा से श्रवण करै उसके ऊपर सब ग्रह अनुग्रह कर धन सन्तान आरोग्य सुख ऐश्वर्य आदि देते हैं ॥

एकसौतीन का अध्याय ॥

पिप्पलादमुनिकी कथा और शनैश्चरव्रतका विधान तथा फल ॥

श्रीकृष्ण भगवान् कहते हैं पूर्वकाल में त्रेतायुगके बीच अनावृष्टि होने से बड़ा दुर्भिक्ष पड़ा उस घोरकाल में कौशिकमुनि अपने स्त्री पुत्रों को साथ ले घर छोड़ दूसरे देश को चले परन्तु रस्ते में सब कुटुम्ब का पोषण न होसका इस लिये निर्दय हो हृदयको कठोर कर एक बालक को मार्ग मेंही छोड़ दिया वह अकेला बालक भूखा प्यासा वन में रोता फिरता था अकस्मात् एक पीपल का वृक्ष उसने देखा और उसके समीप एक बावड़ी भी दृष्टि आई बालक ने पीपल के फल बीन २ खाये और ठंढा जल पिया कुछ स्वस्थ हो वहीं रहने का विचार किया मुनि का बालकही तो था वहांही आश्रम बनाय तप करने लगा नित्य पीपल के फल खाय कालक्षेप करता एक दिन नारदमुनि वहां आ निकले बालक ने उनको प्रणाम किया और आदर से बैठाया नारदजी उसकी अवस्था और विनय देख बहुत प्रसन्न हुये और उसकी क्रि-

नता पर दयालु हो बालक के मौंजीबन्धन आदि सब संस्कार कर पदक्रमः रहस्य सहित वेद उसको पढ़ाय वैष्णव द्वादशाक्षर मन्त्र का उपदेश कर दिया बालक मन्त्र पातेही विष्णु भगवान् का ध्यान और मन्त्र का जप करनेलगा नारदजी भी वहांही रहे थोड़े काल मेंही बालक के तप से संतुष्ट हो गरुड़ पर चढ़ विष्णु भगवान् वहां आये बालक ने उनको नारद के वचन से जाना और भगवान्में दृढ़ भक्ति मांगी भगवान् भी ज्ञान और योग का उपदेश और अपने में दृढ़ भक्ति देकर अन्तर्द्धान भये बालक भी महाज्ञानी होगया एक दिन नारदमुनि से बालक ने पूछा कि महाराज यह किस कर्म का फल है कि मैंने इतना कष्ट उठाया माता पिता का कुछ ठिकानाही नहीं संस्कार भी अनुग्रह कर आपने किये यह नारदजी बालक का वचन सुन बोले कि हे बालक! शनैश्चरने तुमको इतनी पीड़ा दी और सारा देश उसी दुष्ट ग्रह ने पीड़ित किया वह शनैश्चर आकाश में प्रज्वलित देख पड़ता है यह सुनतेही बालक को बड़ा क्रोध हुआ और शनैश्चर को आकाश से अपने तपके प्रभाव करके गिराया शनैश्चर भी एक पर्वत पर पहिले गिरे जिसमें पैर टूट जाने से पंगु होगये नारदजी शनैश्चर को भूमि पर गिरे देख हर्ष से नाचने लगे और सब देवताओं को बुलालाये और शनैश्चर की दुर्गति सबको दिखाई तब ब्रह्माजीने बालक से कहा कि हे बालक! तैंने पीपल के फल खाकर तप किया इस लिये तेरा नाम पिप्पलाद होगया जो पुरुष स्थावरवार अर्थात् शनिवार को इस आश्रम में तेरा पूजन करैंगे अथवा पिप्पलाद इस नाम का स्मरण करैंगे उनको सात जन्म

पर्यन्त शनिपीड़ा न होगी अब तुम निरपराध शनैश्चर को हमारी आज्ञा से पूर्ववत् आकाश में स्थापन करदो हे पुत्र ! ग्रहपीड़ा की निवृत्तिके लिये शान्ति होम बलि नमस्कार आदि करने चाहिये इस भांति ग्रहों का अनादर नहीं करना शनिपीड़ा निवृत्तिके लिये शनिवार को तैलाभ्यङ्ग करै और ब्राह्मण को भी अभ्यङ्ग के लिये तैल देवै शनिकी लोह की प्रतिमा बनाय तैलके पात्रमें रक्खै और एक वर्ष पर्यन्त प्रति शनिवारको पूजन करै अन्त में कृष्ण पुष्प कृष्ण दोवस्त्र कृसर तिल भात आदि करके पूजन कर कृष्णगौ काला कम्बल तिलतैल और दक्षिणा सहित शन्नोदेवी इत्यादि वैदिक मन्त्र पढ़ ब्राह्मणको देवै और ब्राह्मण विना और वर्ण (क्रूरावलोकनवशाद्भुवनं यो नाशयति तुष्टो धनकनकसुखानि ददात्यसौ शनैश्चरः पातु) यह मन्त्रपढ़े यह मन्त्र राजानलको शनैश्चरने स्वप्न में आप उपदेश किया है। पीछे (खण्डनी लाञ्जनप्रख्यं नीलवर्णसमप्रभम् । छायामार्तण्डसंभूतं नमस्यामि शनैश्चरम्) यह मन्त्र पढ़ ब्राह्मणको विसर्जन करै जो मनुष्य प्रति स्थावरवारको एक वर्ष व्रतकरैं और इस विधि से उद्यापन करैंगे उनको कभी शनैश्चर की पीड़ा न होगी इतना कह सब देवताओं को सङ्ग ले ब्रह्माजी अपने धाम को गये और पिप्पलाद मुनिने भी ब्रह्माजीकी आज्ञा मान शनैश्चर को अपने स्थान में पहुँचा दिया इस शनैश्चरोपाख्यान को जो भक्तिसे सुनै उसको शनिपीड़ा न होगी लोह की शनि प्रतिमा गढ़ाय तैलमें पूर्ण लोह कलश पर स्थापन करै दक्षिणा सहित ब्राह्मणको देवै तो कभी शनिपीड़ा न होय ॥

एकसौ चारका अध्याय ॥

संक्रांति व्रत का विधान और फल ॥

श्रीकृष्ण भगवान् कहते हैं कि हे महाराज ! संक्रांति के दिन स्थंडिलके ऊपर पद्म बनाय उस में रक्त चन्दन करवीर पुष्प आदि करके सूर्यनारायण का पूजनकर (नमस्तेविश्वरूपाय विश्वधाम्ने स्वयम्भुवे । नमो नमस्ते वरद ऋक्सामयजुषांपते) इस मन्त्रसे अर्घ्यदेवै और ब्राह्मणको जलकुंभ और घृतपात्र सहित सुवर्ण का कमल देवै और नक्तव्रत करै इस प्रकार एक वर्ष पर्यंत प्रतिमास संक्रांति व्रत और सूर्यनारायण का पूजनकर अग्नि में घृत पायस का हवन कर बारह गौ जो सामर्थ्य न होय तो एक गौ सस्ययुक्त भूमि अथवा सोने चांदी तांबा आटा आदि से बनी भूमि और सुवर्ण की सूर्य प्रतिमा ब्राह्मण को देवै इसमें वित्तशाठ्य न करै जो पुरुष इस प्रकार संक्रांति व्रत करै वह प्रलय पर्यंत स्वर्ग में निवास करता है और जन्मान्तर में चक्रवर्ती राजाहोय पुत्र उत्तम स्त्री आरोग्य और दीर्घायुष पाता है जो इस संक्रांति व्रत विधानको पढ़ै सुनै अथवा औरों को व्रतका उपदेश देवै वह भी स्वर्गवास पाताहै ॥

एकसौ पांचका अध्याय ॥

भद्रा की कथा, भद्राव्रत का विधान और फल ॥

राजा युधिष्ठिर पूछते हैं कि हे श्रीकृष्णचन्द्र ! लोकमें भद्रा और विष्टिनाम से प्रसिद्ध है वह कौन है कैसी है किसकी पुत्री है और उसका पूजन किस विधि से किया जाता है यह आप वर्णन करैं यह राजाका प्रश्न सुन श्रीकृष्ण भगवान् कहने लगे कि हे महाराज ! विष्टि सूर्यनारायण की कन्या है छाया

में उत्पन्न भई है और शनैश्चर की सोदरभगिनी है वह कृ-
ष्णवर्णा ऊर्ध्वकेशी दीर्घदंष्ट्रा और बड़ी भयंकर स्वरूप है
उत्पन्न होतेही भुवन का ग्रास करने दौड़ी यज्ञों में विघ्न और
उत्सवों में उपद्रव करने लगी सब जगत्को उसने त्रास दिया
तब सूर्य्यनारायण ने विचार किया कि इस कन्या का विवाह
करना चाहिये क्योंकि तरुण कन्या को पिताके घरमें रहना
उचित नहीं यह सोच सूर्य्यनारायण ने उसका विवाह ठह-
राया परन्तु उसने क्षणमात्र में वरके प्राण लिये और विवाह
के मण्डप आदि उखाड़ कर फेंकदिये और सारी प्रजाको
पीड़न करने लगी सूर्य्यनारायण विचार करने लगे कि इस
दुष्टा कुरूपा स्वेच्छाविहारिणी अतिक्रूरा कन्या को किसके
साथ विवाहैं इसी अवसर में प्रजाकी अतिपीड़ा देख ब्र-
ह्माजी सूर्य्य भगवान् के पास आये और उनकी कन्याकी सब
दुष्टता कही तब सूर्य्यनारायण बोले कि हे ब्रह्माजी ! आप
जगत् के कर्ता हर्त्ता होकर हमको क्या कहते हो जो उचित स-
मझ पड़े सो कीजिये यह सूर्य्य नारायण का वचन सुन ब्रह्मा
जीने विष्टिको बुलाकर कहा कि हे भद्रे ! बव बालव कौलव
आदि करणों के अन्त में तू निवास कर और जो पुरुष खेती
व्यापार आदि कर्म तेरे बीच करैं उनको तू भक्षण कर तीन
दिन किसी को बाधा न दे चौथे दिनके अर्ध में तेरा योग होगा
उस दिन सुर असुर तेरा पूजन करैंगे और जो तेरे को
न मानें उनका तू कार्य विध्वंस कर इतना विष्टि के प्रति उ-
पदेश कर ब्रह्माजी अपने लोक को गये और विष्टिभी आनं
दितहो देवता दैत्य मनुष्य आदि को त्रास देती हुई विच-
रै [illegible] कि हे महाराज !

इस प्रकार भद्राकी उत्पत्ति भई है यह अतिदुष्टा है इसलि
अवश्य इसका त्याग करना चाहिये विष्टिका स्वरूप य
है कि अतिकृष्णवर्ण लम्बी नासिका बड़ी २ दंष्ट्रा मो
पिण्डली ऊँची जंघा फटे कपोल मलिन वस्त्र पहिने मु
से अग्निज्वाला उगलती हुई लोकों का कार्य नाश करने
लिये त्रिभुवन में विचरती है भद्राके पांच घड़ी मुख में दो घ
कण्ठमें ग्यारह घड़ी हृदयमें चार घड़ी नाभि में पांच घड़ी कटि
और तीन घड़ी पुच्छमें स्थित हैं (मुखमें कार्य नाश कण्ठमें ध
नाश हृदय में प्राणहानि नाभि में कलह कटिमें अर्थभ्रंश औ
पुच्छ में जय होताहै) विष्टिके पुच्छमें जो भले बुरे कार्य क
सब सिद्ध होते हैं (धन्या दधिमुखी भद्रा महामारी खरानना
कालरात्रिर्महारौद्रा विष्टिश्च कुलपुच्छिका । भैरवी च महाक
ली असुराणांक्षयंकरी) ये बारह भद्राके नाम जो पुरुष प्र
भात उठ पढ़े उस को व्याधि का भय नहीं होता सब ग्रह
अनुकूल रहते हैं युद्ध में द्यूत में और राजकुल में जय पाताहै जो
विधिपूर्वक नित्य विष्टिका पूजन करै उसके सब कार्य सिद्ध
होते हैं भद्रा व्रत करने हारे पुरुष को प्रेत पिशाच भूत पूतना
शाकिनी ग्रहआदि पीड़ा नहीं देते इष्टवियोग नहीं होता और
अन्त में वह पुरुष सूर्यलोक को जाता है सूर्य की पुत्री शनिकी
भगिनी अतिक्रूरा विष्टिका जो भक्तिसे उपवास करै उसके
सब मनोरथ सिद्ध होते हैं अब हम भद्राके व्रतका विधान कह
तेहैं रात्रिके समय भद्रा होय तो दो दिन नक्तव्रतकरै एक प्र
हर के अनन्तर तीन प्रहर दिन में भद्रा होय तो उपवास करै
नहीं तो एकभक्त करना चाहिये स्त्री अथवा पुरुष व्रत के
दिन सुगन्ध आमलक लगाय सर्वौषधि जल से स्नान करै

अथवा नदी आदि पर जाय विधि से स्नान करै पीछे देवता पितरों का तर्पण पूजन आदि कर कुशा की भद्रा की मूर्त्ति बनाय गन्ध पुष्प धूप दीप नैवेद्य आदि से पूजन कर भद्रा के नामों से एकसौ आठ आहुति देकर तिल और पायस ब्राह्मण को भोजन कराय आप भी मौन से तिल सहित कृसर भोजन करै और पूजन के अन्त में (छायासूर्यसुते देवि विष्टे इष्टार्थदायिनि । पूजितासि यथाभक्त्या भद्रे भद्रप्रदा भव) यह मन्त्र पढ़े इस विधि से सत्रह भद्रा व्रत कर अन्त में लोह के पीठ पर भद्रा की मूर्त्ति स्थापन कर कृष्णवस्त्र उढ़ाय गन्ध पुष्प आदि से पूजन कर कृसर नैवेद्य लगावै पीछे लोह तैल तिल सवत्सा कृष्णा गौ काला कंबल और दक्षिणा सहित वह मूर्त्ति ब्राह्मण को देवै इसविधि से जो पुरुष भद्राव्रत और उद्यापन करै उसके किसी कार्य में विघ्न नहीं होता ॥

एकसौछठा अध्याय ॥

अगस्त्यमुनि के चरित्रोंका वर्णन, अगस्त्यदानका विधान और फल ॥

श्रीकृष्ण भगवान् कहते हैं कि हे महाराज ! अब हम सब पाप हरनेहारे अगस्त्यव्रत का विधान कहते हैं राजा युधिष्ठिर ने कहा कि प्रथम आप अगस्त्य मुनि के चरित वर्णन कीजिये तब अर्घ्यदान का विधान और उदय का काल कहना तब श्रीकृष्ण भगवान् कहने लगे कि हे महाराज ! मित्र और वरुण दोनों मुनि मन्दरपर्वत के समीप तप करतेथे उनके तप में विघ्न करने के लिये इन्द्र ने उर्वशी नाम अप्सरा को भेजा अप्सरा को देखतेही दोनों मुनियों का वीर्य कुम्भ में गिरा उनसे अगस्त्यमुनि उत्पन्न भये अगस्त्यमुनि का लोपामुद्रा से विवाह भया अगस्त्यजी ने बहुत काल बड़ा उग्र

तप किया उसी समय बड़े दुराचार और ब्राह्मणों के शत्रु इल्वल और वातापि नाम दो दैत्य थे उनका यह काम था कि एक भाई मेष बनता दूसरा भाई उस मेष को मार उसका मांस रींध श्राद्ध के व्याज से ब्राह्मणों को निमन्त्रण दे उनको वह मांस खिला देता और पीछे भाई का नाम लेकर पुकारता वह भी सब के उदर विदारण कर निकल आता इस प्रकार सैकड़ों मुनि उनने मार डाले एक दिन इल्वल ने अगस्त्य मुनि को भी श्राद्ध में निमन्त्रण दिया तब अगस्त्यमुनि ने कहा कि हम अकेलेही श्राद्ध में भोजन करेंगे और सम्पूर्ण मांस हमकोही देना इल्वल ने भी यह बात स्वीकारकरी और सब मांस अगस्त्य के आगे परोस दिया अगस्त्य जब भोजन कर चुके तब इल्वल पुकारा कि अरे भाई क्यों विलम्ब करता है बाहर निकलओ अगस्त्यमुनि ने कहा कि वह तो अब जीर्ण हुआ कहां से निकलेगा यह सुन इल्वल ने अगस्त्यमुनि पर बड़ा क्रोध किया परन्तु अगस्त्यमुनि ने उसको भी अपनी क्रूर दृष्टि से भस्म कर डाला इन दोनों दैत्यों का संहार होतेही बाकी के दैत्य भय से समुद्र में जा घुसे और नित्य रात्रि के समय निकल मुनियों को भक्षण कर जाते यज्ञपात्र फोड़ डालते और फिर समुद्र में प्रविष्ट हो जाते यह दैत्यों का बड़ा उत्पात देख ब्रह्मा विष्णु शिव कुबेर इन्द्र आदि सब देवता सम्मति कर अगस्त्यमुनि के समीप आये और कहा कि हे मुनि! तुम समुद्र को पान करो मुनि ने भी देवताओं की आज्ञा से समुद्रपान किया तब सूखे समुद्र में सब दैत्यों को देवताओं ने मारा इस प्रकार अगस्त्यमुनि ने सब जगत् निष्कंटक कर दिया पीछे गंगा

के प्रवाहसे समुद्र पूर्णभया तब सब देवता और दैत्यों ने मिल कर मन्दराचल को मंथान और वासुकि को रज्जु बनाय समुद्र को मथन किया उसमेंसे प्रथम तो अमृत कौस्तुभ ऐरावत आदि उत्तम उत्तम पदार्थ निकले और पीछे अतिदारुण कालकूट विष प्रकट भया जिस के गन्धसेही देवता और दैत्य मूर्छित होने लगे उसमेंसे कुछ विष शिवजीने भक्षण किया जिससे वे नीलकण्ठ भये तब ब्रह्माजी ने देवताओं से कहा कि अब और किसी की सामर्थ्य नहीं है जो इस बाकीके विषका संहार करै इसलिये तुम सब दक्षिण दिशा में लङ्का के समीप अगस्त्यमुनि रहते हैं उनके शरण में जावो यह ब्रह्माजीकी आज्ञा पाय सब देव दानव अगस्त्य मुनि के समीप गये उनने भी सब को व्याकुल देख आश्वासनकिया और उस विषको अपने तपोबलसे हिमालय में प्रवृष्ट किया वह विष कन्दरूपसे वहां उत्पन्न हुआ और जो कुछ शेषरहा वह धत्तूर करवीर अर्क आदि वृक्षों में बांटदिया उस हिमालयपर्व्वत के विषयुक्त वायु से मनुष्यों को अनेक प्रकार के रोग होते हैं वह विषवायु वृष संक्रान्ति से लेकर सिंहांत तक रहता है पीछे विषका वेग शान्त होजाता है इस प्रकार विषके संकट से अगस्त्यमुनि ने सबको बचाया पूर्व काल में प्रजाकी बहुत वृद्धि भई तब ब्रह्माजी की देह से मृत्यु उत्पन्नहुआ और प्रजाका संहार करनेलगा एक दिन अगस्त्यमुनि के समीप भी आया अगस्त्यमुनि ने अपनी क्रोधकी दृष्टि से उसी क्षण मृत्युको भस्म करदिया तब ब्रह्माजी को दूसरा मृत्यु सिरजना पड़ा श्वेतनाम राजा स्वर्ग से नित्य आकर दण्डकारण्य में अपने पूर्व शरीरका मांस खाता रहा

दिन उसने निर्विण्णहो अगस्त्यमुनि से कहा कि महारा
सब दान मैंने किये परन्तु अन्न और जलका दान कभी
किया इसलिये स्वर्गवास पाकरभी नित्य यह शवमांस मु
खाना पड़ता है अब आप ऐसा अनुग्रह करें कि इस विप
से छूटूँ यह राजाका दीनवचन सुन दयाकर अगस्त्यमु
ने अन्न करके उसका श्राद्धकिया जिससे राजाको स्वर्ग में
नित्य भोजन के लिये उत्तम उत्तम पदार्थ मिलनेलगे
न्ध्यपर्वत ने विचार किया कि सूर्य्यनारायण मेरुपर्वत की
दक्षिणा करते हैं मेरी प्रदक्षिणा नहीं करते इसलिये इन
मार्ग रोकना चाहिये यह मनमें ठान विन्ध्य बढ़नेलगा उ
को नित्य बढ़ते देख देवता बहुत व्याकुल हुये और अगस
मुनिके समीप जाय कहा कि आप विन्ध्याचल को बढ़ने
रोकें नहीं तो यह सूर्य्यभगवान् का मार्ग रोध करैगा
देवताओंका वचन सुन अगस्त्य जी विन्ध्य के पासगये औ
विन्ध्य से कहा कि हम तीर्थयात्राको जाते हैं तुम थोड़ा
नीचे होजावो तो हम तुम्हारे पार चलेजायँ विन्ध्य मु
की आज्ञा से नम्र होगया अगस्त्यमुनि ने पर्वत को लंघ
कर कहा कि जबतक हम तीर्थयात्रा से न लौटैं तबतक ऊँ
मत होना इतना कह अगस्त्यमुनि गये सो अबतक भी नहीं
लौटे और दक्षिणदिशा में आकाश के बीच देदीप्यमान देख
पड़ते हैं एकसमय वसन्त ऋतु में लोपामुद्रा ने अगस्त्य
मुनि से कहा कि आपके साथ विषयों को भोगना चाहती
हूं परन्तु हाथी घोड़े दासी दास उत्तम शय्या वस्त्र भूषण
आदि सब सामग्री सहित एक रत्नजटित प्रासाद होय यह
पत्नीका वचनसुन अगस्त्यमुनिने कुबेर को बुलाकर आज्ञा

दी कुबेर ने भी सब सामग्री सहित महल और रत्नों के भूषण उसी क्षण मुनि को निवेदन किये तब अगस्त्य मुनि ने बहुत काल पर्यन्त लोपामुद्रा के सङ्ग विहार किया इस भांति और भी अनेक चरित अगस्त्य मुनि के हैं अब हम उनके अर्घ्य का विधान कहते हैं कन्या के सूर्य के सात अंश जायँ उस दिन रात्रि के समय शुद्ध तिलों से स्नान कर श्वेत वस्त्र धार माला वस्त्र आदि से भूषित पञ्चरत्न सहित अव्रण कलश स्थापन करै उसके ऊपर अनेक प्रकार के भक्ष्य और सप्तधान्य सहित घृतपात्र स्थापनकर उस में जटाधारे कमण्डलु हाथ में लिये शिष्य और मृगों करके वेष्टित ऐसी अगस्त्यमुनि की सुवर्णकी प्रतिमा बनाय स्थापन करै पीछे श्वेत चन्दन चमेली के पुष्प उत्तम धूप दीप नैवेद्य आदि से उनका पूजनकर अर्घ्य देवै खजूर नालिकेर कूष्मांड फालसा ककोड़े करेले ककड़ी बीजपूर वृन्ताक दाड़िम नारङ्गी कदलीफल कुश काश दूर्वा के अंकुर कमल उत्पल सप्तधान्य वस्त्र अनेक प्रकार के भक्ष्य ये सब पदार्थ बांस के पात्र में धर सुवर्ण चांदी अथवा तांबे का अर्घ्यपात्र मस्तक तक उठाय दक्षिणाभिमुख हो दोनों जानु भूमिपर रख प्रसन्न चित्त हो (काशपुष्पप्रतीकाश अग्निमारुतसम्भव। मित्रावरुणयोःपुत्र कुम्भयोनेनमोऽस्तुते॥ विन्ध्यवृद्धिक्षयकर मेघतोयविषापह। रत्नवल्लभ देवर्षे लङ्कावास नमोऽस्तुते॥ वातापिर्भक्षितो येन समुद्रः शोषितः पुरा। लोपामुद्रापतिःश्रीमान् योऽसौ तस्मै नमो नमः॥ येनोदितेन पापानि प्रलयं यान्ति व्याधयः। तस्मैनमोऽस्त्वगस्त्याय सशिष्याय सपुत्रिणे) ये मन्त्र पढ़ अर्घ्य देवै और ब्राह्मण (अगस्त्यमपि सम्मान्य [illegible] प्रजानपत्यं [illegible]नः । [illegible]

वर्णाद्वहिरुग्रः पुपोष सत्यादेवेष्वाशिषो जगाम) इस वैदिक मन्त्रसे अर्घ्यदेवै इसप्रकार अर्घ्यदेकर (अर्चितस्त्वं यथाशक्त्या मयागस्त्य महामुने । ऐहिकामुष्मिकीं दत्त्वा कार्यसिद्धिं भजस्व मे) इस मन्त्र से अगस्त्यमुनि का विसर्जन करै पीछे सब सामग्रीसहितमूर्त्ति (अगस्त्यो मे मनःस्थश्च अगस्त्योस्मिन् धने स्थितः । अगस्त्यो द्विजरूपेण प्रतिगृह्णातु संस्तुतः) यह मन्त्र पढ़ वेदवेत्ता ब्राह्मणको देवै ब्राह्मण भी प्रतिग्रहलेकर (अगस्त्यःसप्तजन्मानि नाशयित्वातवापदम् । अतुलंविमलं सौख्यं प्रयच्छतु महामुनिः) यह मन्त्र पढ़ै इसप्रकार अर्घ्यदानकर कोई फल धान्य अथवा लवण आदि एकरस वर्ष भरत्यागै इसविधि से ब्राह्मण सातवर्ष अर्घ्य देवै तो चारों वेद और सब शास्त्र का जाननेहारा होय क्षत्रिय सब पृथिवीको जीत राजाहोय वैश्य धन धान्य और बहुत से पशु पावै शूद्र अर्घ्य देवै तो धन सन्मान और आरोग्य का भागी होय स्त्री बहुत से पुत्र सौभाग्य और सम्पत्ति पावै कन्या को उत्तम वर मिलै विधवा को अनन्त पुण्यकी प्राप्ति होय और रोगी अगस्त्यमुनिको अर्घ्यदेकर रोगसे छूटै जिस देश में इस विधान से अर्घ्य दियाजाय वहां कभी दुर्भिक्ष आदि का भय न होय अर्घ्य देनेहारा पुरुष हंस युक्त विमान में बैठ स्वर्ग को जाताहै जो ऐश्वर्य भोग शरीर सौख्य संतान पशु आदि की इच्छा होय तो अवश्यही अगस्त्यमुनिको भक्तिपूर्वक शरद ऋतु में अर्घ्य देवै ॥

एकसौसातवां अध्याय ॥

नवीन चन्द्रको अर्घ्य देने का विधान ॥

श्रीकृष्णचन्द्र कहते हैं कि हे महाराज ! अब हम नवीन

चन्द्रमा को अर्घ्य दान का विधान कहते हैं प्रतिमास की शुक्ल द्वितीया को प्रदोष के समय भूमि पर गोबर का मण्डल बनाय उसमें रोहिणी सहित चन्द्रमा की प्रतिमा स्थापन कर श्वेत चन्दन श्वेत पुष्प अक्षत धूप दीप अनेक प्रकार के नैवेद्य फल दही श्वेत वस्त्र दूर्वांकुर आदि से पूजन कर इन्हीं पदार्थों करके चन्द्रमा को अर्घ्य देवै जो इस विधि से प्रतिमास चन्द्रमा को अर्घ्य देवै वह पुत्र पौत्र धन पशु आरोग्य आदि पाय सौ वर्ष संसार का सुख भोग अन्त में चन्द्रलोक को जाता है वहां प्रलय पर्यन्त दिव्य स्त्रियों के साथ विहार कर मुक्ति पाता है श्रीकृष्णभगवान् कहते हैं कि हे महाराज! आप चन्द्र वंश में उत्पन्न भये हैं इसलिये धर्म ऐश्वर्य आरोग्य और उत्तम भोगों की प्राप्ति के लिये आपको अवश्य नवीन चन्द्र को अर्घ्य देना चाहिये ॥

एकसौआठवां अध्याय ॥

शुक्र और बृहस्पति को अर्घ्यदेने का विधान और फल ॥

श्रीकृष्णभगवान् कहते हैं कि हे महाराज ! प्रति शुक्र का दोष निवृत्त होने के लिये यात्रा के आरम्भ में यात्राकी समाप्ति में और शुक्रोदय के समय शुक्रपूजा अवश्य करनी चाहिये उसका हम विधान कहते हैं सुवर्ण चांदी अथवा कांस्य के पात्र में चांदी की शुक्र की मूर्त्ति स्थापन कर सब उपचारों से उसका पूजन करै पीछे (नमस्ते सर्वलोकेश नमस्ते भृगुनन्दन । कवे सर्वार्थसिद्ध्यर्थं गृहाणार्घ्यं नमोस्तु ते १) इस मन्त्र से अर्घ्य देकर शुक्लवस्त्र मोती सवत्सा गौ और दक्षिणा सहित वह मूर्त्ति ब्राह्मण को देवै पुष्प चटक करका जल गेहूं चने आदि से जबतक शुक्रका पूजन न कर लेवै

तबतक नवान्न भक्षण न करै इस विधि शुक्र का पूजन करने से सब कामना सिद्ध होती हैं इसी विधि से सुवर्ण आदि के पात्र में सुवर्ण की बृहस्पति मूर्त्ति स्थापन कर पीतवस्त्र उढ़ावे और सर्षप पलाश की त्वचा के क्वाथ और पञ्चगव्य के जल से स्नान कर पीत वस्त्र पहिन सब उपचारों से बृहस्पति का पूजन कर घृत का हवन करै और पूर्वोक्त रीति से अर्घ्य देवै पीछे सवत्सा गौ सहित वह प्रतिमा ब्राह्मण को देवै यात्रा के समय बृहस्पति की संक्रांति और उदय के समय इस विधि से पूजन करै तो सब मनोवाञ्छित फल पावै शुक्र और बृहस्पति की प्रीति के लिये उत्तम मोतीही देवै तो भी सब मनोरथ सिद्ध होयँ और वह पुरुष कभी कुरूप न होय जो शुक्र की और गुरुकी इस विधि से पूजा करै उनके घरमें कभी भी शुक्र आदि का दोष नहीं होता॥

एकसौनवका अध्याय॥

पञ्चाशीति व्रतोंका फल सहित विधान॥

श्रीकृष्णभगवान् कहते हैं अब हम अत्यन्त गुप्त पञ्चाशीति व्रत कहते हैं जो भविष्य पद्म मार्कण्डेय और वराहपुराण में कहे हैं अभीष्ट मित्र पुत्र शिष्य और बंधु को धर्म कहना चाहिये इस लिये श्रुति स्मृति और पुराणों से जो हमने धर्म निश्चय किया है वह आप के प्रति कथन करते हैं प्रभात सन्ध्या में स्नान कर अश्वत्थ वृक्ष का पूजन कर ब्राह्मणों को तिल पात्र देवै वह कभी कृत अकृत का शोक नहीं करता यह अत्यन्त गुप्त व्रत सब पापों का हरनेहारा है पर्व दिन में एक कर्ष सुवर्ण ब्राह्मण को देवै यह वाचस्पति व्रत बुद्धि की वृद्धि करता है और बृहस्पति ने कहा है लवण मिर्च जीरा

हींग शुंठी आदि सब मसाले चतुर्थी के दिन एक भक्तकर कुटुम्बी ब्राह्मण को देवै यह शिलाव्रत लक्ष्मीलोक में वास देताहै और मुखकी शुद्धता करताहै नक्तव्रतकर गौ वस्त्र और सुवर्ण का त्रिशूल कुटुम्बी ब्राह्मण को देवे और प्रणामकर (श्री केशवोऽप्रीयेनाम्) यह वाक्य कहै यह महापातक हरनेहारा व्रतहै एकवर्ष पर्यंत एकभक्त व्रतकर अन्त में सुवर्ण के वृष और सब उपस्करों सहित तिल धेनु ब्राह्मण को देवै यह रुद्र व्रत सब प्रकार के शोक हरता है और इसका करनेहारा शिव-लोक को जाताहै सर्वौषधि जलसे स्नानकर पंचमी के दिन सर्वोपस्कर दान करै ऊखल मूशल सूप चलनी स्थाली चूल्हा और जलकुम्भ ये गृह के उपस्कर हैं इनको गृहस्थ ब्राह्मण के घर में स्थापन करै यह गृहव्रत सब सुख देनेहारा है और अत्रिमुनि ने अनसूया को उपदेश कियाहै सुवर्ण का नीलोत्पल शर्करा पात्र सहित श्रद्धा से कुटुम्बी ब्राह्मणको देवै यह लीलाव्रत है इसका करनेहारा विष्णुलोक को जाता है आषाढ़ आदि चार महीने तैलाभ्यंग न करै अन्त में तिल तैल पूर्ण नया घट ब्राह्मण को देवै और घृत पायस ब्राह्मण को भोजन करावै यह लोकप्रीतिकर व्रत है इसको भक्ति से करनेहारा पुरुष विष्णुलोक को जाताहै चैत्रमास में दही दूध घृत और गुड़ खांड़ आदि इक्षुविकार त्यागै अन्त में ब्राह्मण मिथुन का पूजनकर ये सब पदार्थ और दो उत्तम वस्त्र उनको देकर (गौरीमेप्रीयताम्) यह वाक्य कहै यह गौरी व्रत करने से भगवतीलोक की प्राप्ति होती है पौषकृष्ण त्र्योदशी से नक्तव्रत करै एकवर्ष व्रतकर सप्तधान्य और दो वस्त्रों सहित सुवर्ण का अशोकवृक्ष ब्राह्मण को देकर (प्रद्युम्नः

प्रीयत्ताम्) यह वाक्य कहै यह काम व्रत सब शोक का नाश करनेहारा है इसको जो पुरुष भक्ति से करै वह कल्पभर विष्णुलोक में निवास करता है आषाढ़ आदि चारमहीने नख न कटावै और वृन्ताक न खाय अन्त में कार्त्तिक की पूर्णिमा के दिन घृत और शहद के घट सहित सुवर्ण का वृन्ताक ब्राह्मण को देवै यह शिव व्रत है इसका करनेहारा रुद्रलोक को जाता है पांच पूर्णिमाओं को एकभक्त व्रत कर अन्त में चन्दन से पूर्णिमा की मूर्तिलिख सब उपचारों से पूजन करै पीछे दूध दही घृत शहद और श्वेत शर्करा इन पांचों का एक एक घट भरके (मनोरथान्पूरयस्व सम्पूर्णापूर्णिमाह्यसि । पञ्चकुम्भप्रदानेन भूतानांपुष्टिरस्तुमे) यह मन्त्रपढ़ पांच ब्राह्मणों को एक एक कुम्भ देवै यह पञ्च घट व्रत पुष्टि देनेहारा है और इसके करने से सब मनोरथ सिद्ध होते हैं हेमन्त और शिशिरऋतु में पुष्पों का त्याग कर फाल्गुन की पूर्णिमाको सुवर्ण के तीन पुष्प ब्राह्मण को देकर (शिव केशवौप्रीयेताम्) यह वाक्य उच्चारण करै यह सौगन्ध्य व्रत सुगन्धि उत्पन्न करताहै और इस व्रतके करने से उत्तम लोक की प्राप्ति होती है फाल्गुन कृष्ण आदि तृतीयाओं को लवण न खाय इस प्रकार एकवर्ष व्रतकर अन्त में ब्राह्मण मिथुन का पूजन कर सब उपस्करों सहित घर और उत्तम शय्या उनको देवै और (गोविन्दःप्रीयताम्) यह वाक्य कहै इस सौभाग्य व्रत का करनेहारा गौरीलोक को जाता है सन्ध्यासमय एकवर्ष पर्यंत मौन व्रतकरै अन्त में घृत कुम्भ दो वस्त्र और घण्टा ब्राह्मण को देवै यह सारस्वत वृत विद्या और रूप देनेहारा है इस वृतके करने से अक्षयवास सरस्वती

लोक में मिलता है एक वर्ष पंचमी को उपवास कर अन्त में सुवर्ण का कमल और उत्तम गौ ब्राह्मण को देवै यह लक्ष्मीव्रत दुःख शोक का हरनेहारा और कान्ति सौभाग्य का करनेहारा है इसव्रत का करनेहारा जन्म जन्म में लक्ष्मीवान् होता है और अन्त में विष्णुलोक को जाताहै जो स्त्री इस व्रत को करै वह सौभाग्य पावै और सपत्नियों का गर्व हरै गौरी सहित रुद्र लक्ष्मी सहित जनार्दन और राज्ञी सहित सूर्य भगवान् की प्रतिमा विधिपूर्वक स्थापन कर सब उपचारों से पूजन कर वस्त्र घण्टा पात्र और दक्षिणा सहित वे मूर्त्ति ब्राह्मण को देवै यह देवव्रत दिव्य देह देनेहारा है शुद्धचन्दन आदि से शिव लिंग और विष्णु मूर्त्ति को नित्य एक वर्ष प्रलेपन करै अन्त में जल और घृत के कुंभ सहित उत्तम धेनु ब्राह्मण को देवै यह शुक्ल व्रत सब प्रकार के कल्याण देता है इसव्रत को करनेहारा पुरुष दश हजार जन्म तक राजा होकर अन्त में शिवलोक को जाता है अश्वत्थ सूर्यनारायण और गंगा का नित्य पूजन कर एक वर्ष पर्यंत एकभक्त व्रतकरै अन्त में ब्राह्मण मिथुन का पूजनकर तीन गौ और सुवर्ण का वृक्ष ब्राह्मण को देवै यह कीर्त्तिव्रत भूमि और कीर्ति का देनेहारा है जो पुरुष इस व्रत को करै वह दिव्य विमान में बैठ स्वर्ग में जाय अप्सराओं के साथ विहार करता है घृत करके शिव विष्णु ब्रह्मा सूर्य गौरी गणपति को स्नान करावै और सब उपचारों से नित्य इनका वर्षभर पूजन करै और सामवेद का गायन करै अन्त में सुवर्ण कमल सहित उत्तम गौ ब्राह्मण को देवै यह सामव्रत करनेहारा पुरुष शिवलोक में विहार करता है सबों का एकमात्र आनन्द और अन्त में [illegible]

दो वस्त्र और सुवर्णका सिंह ब्राह्मणको देवै जो स्त्री इसवीरव्रत को करै वह अनेक जन्म पर्यंत उत्तम रूप सौभाग्य और सुख पावै और अन्त में शिवलोकमें जाय निवास करै एकवर्ष पर्यंत दुग्धाहार कर पूर्णिमा व्रतकरै और श्राद्धकरै अन्त में श्राद्धकर पांच सवत्सागौ पिशंगवर्ण के वस्त्र और सौ जलकुंभ ब्राह्मणों को देवै जो इस पितृव्रत को करै वह अपने सौ पुरुषों का उद्धारकर विष्णुलोकमें प्राप्त होता है एकवर्ष ताम्बूलका त्यागकर अन्त में तीन ताम्बूल सुवर्णके बनाय उन में चूनेके बदले मोती रख ब्राह्मण को देवै इस पत्र व्रतको जो नारीकरै वह दौर्भाग्य और दुःख का दौर्गंध्य कभी नहीं पाती इसव्रत के करने से मुख में उत्तम सुगन्ध और सौभाग्य प्राप्ति होती है चैत्र आदि चारमहीने ज्येष्ठ आषाढ़ में एकमास अथवा पक्षभर ही जलका अयाचित व्रतकरै अन्त में जलपूर्ण कलश अन्न वस्त्र घृत सप्तधान्य तिलपात्र और सुवर्ण ब्राह्मण को देवै यह वारिव्रत करनेहारा पुरुष कल्प भर ब्रह्मलोक में निवासकर दूसरे कल्प के प्रारंभ में चक्रवर्ती राजा होता है एक वर्ष पंचामृत से शिव और विष्णुको स्नान कराय अन्त में गौ शंख और सुवर्ण ब्राह्मण को देवै इस धृतिव्रत का करनेहारा पुरुष बहुत काल शिवलोक में निवास कर राजा होता है एक महीने अथवा वर्षभर मांस न खाय अन्त में सुवर्ण का हरिण और सवत्सागौ ब्राह्मण को देवै यह अहिंसा व्रत सर्व शान्तिप्रद है इस व्रत को करनेहारा पुरुष अश्वमेधयज्ञ का फल पाता है माघमास में प्रातःकाल स्नान कर अन्त में ब्राह्मण दंपती का वस्त्र भूषण पुष्प माला आदि से पूजन कर उनको उत्तम भोजन करावै इस सूर्य्य व्रत को करनेहारा

पुरुष शरीरारोग्य और सौभाग्य पाताहै और कल्प भर सूर्य्य-
लोक में निवास करताहै आषाढ़ आदि चार महीने प्रातःका-
ल स्नान कर कार्त्तिकी पूर्णिमा को घृतकुम्भ और गौ कुटुम्बी ब्रा-
ह्मण को देकर यथाशक्ति ब्राह्मण भोजन करावै इस वैष्णव
व्रत के करने से सब मनोरथ सिद्ध होते हैं और विष्णुलोककी
प्राप्ति होती है एक अयनसे दूसरे अयन पर्यन्त पुष्प और घृतका
त्याग करै अन्त में पुष्प घृत और धेनु ब्राह्मण को देकर घृत
और पायस ब्राह्मणों को भोजन करावै इस शील व्रत के करने
से शील और आरोग्यकी प्राप्ति होती है और इस व्रतका क-
रनेहारा शिवलोक को जाताहै तैल और मांस का एक वर्ष त्याग
कर अन्त में सुवर्ण के दीपक चक्र त्रिशूल और दो वस्त्र ब्रा-
ह्मणको देवै इस व्रतके करने से तेजकी वृद्धि होती है वस्त्र
भूषण पुष्प कुंकुम कर्पूर अगरु चन्दन ताम्बूल और अनेक
प्रकारके भोजनों करके सात दिन सुवासिनी का पूजन करै
(कुमुदादेवी प्रीयताम्) यह वाक्य कहै इसीप्रकार कमला
माधवी गौरी पार्वती उमा और काली इन एक एक देवी के
नाम से सात सात दिन सुवासिनी पूजन करै प्रत्येक सुवासिनी
को बाली अंगूठी दर्पण उत्तम उत्तम वस्त्र और षट्रस भोजन
दे सन्तुष्ट करै और एक ब्राह्मण का पूजन भी करै यह मनसु-
न्दरक नाम व्रत उत्तम रूप और सौभाग्य देनेहारा है चैत्र
मास में सब सुगन्ध द्रव्य का त्याग करै अन्तमें एक सीपी
भर सुगन्ध द्रव्य शुक्ल दो वस्त्र और यथाशक्ति दक्षिणा ब्रा-
ह्मणों को देवै इस उत्तम व्रतके करने से ब्रह्मलोककी प्राप्ति
होती है वैशाख मास में लवण का त्याग कर अन्त में सुवर्ण
गौ ब्राह्मण को देवै यह कान्तिव्रत कीर्ति और कान्ति देने-

हाराहै इस व्रत का करनेहारा पुरुष बहुत काल विष्णुलोक में निवास कर राजा होताहै तीन पलसे अधिक सुवर्ण का ब्रह्माण्ड बनाय द्रोणभर तिलोंके ऊपर स्थापन कर ब्राह्मण मिथुन का पूजन कर उनको देवै और घृत तिलोंसे हवन कर ब्राह्मण भोजन करावै और (विश्वात्मा प्रीयताम्) यह वाक्य कहै इस ब्रह्म व्रतके करने से निर्वाणपद मिलताहै दुग्धाहार करके व्रत करै और सुवर्ण सहित उभयमुखी धेनु ब्राह्मण को देवै तो परमपदको प्राप्तहो तीन दिन दुग्धाहार रहकर सुवर्ण का कल्पवृक्ष बनाय चावलों के ढेरपर रख उत्तम वस्त्र और पुष्प मालाओं से आच्छादित कर ब्राह्मण को देवै इस कल्प व्रत का करनेहारा कल्प भर स्वर्ग में निवास करता है अयाचित व्रतसे रह कर उत्तम शकटी वस्त्र भूषण ताम्बूल और मोदक पात्र व्यतीपात दोनों ग्रहण अथवा अयन संक्रान्ति के दिन ब्राह्मण को देवै यह व्रत परलोक गमन के खेदको हरनेहारा है वर्ष भर अष्टमी को नक्तव्रत कर अन्त में ब्राह्मण को गौ देवै इस सुगति व्रतको करनेहारा पुरुष स्वर्ग को जाता है हेमन्त और शिशिर ऋतु में इन्धन दान करै और अन्त में ब्राह्मण को घृतधेनु देवै यह वैश्वानर व्रत शरीरारोग्य और कान्ति देनेहाराहै इस व्रत को करनेहारा मुक्ति पाता है एकादशी को नक्तव्रत कर चैत्रमास चित्रा नक्षत्र में सुवर्ण का शंख और चक्र ब्राह्मण को देवै इस विष्णु व्रतको करनेहारा पुरुष विष्णुलोक में निवास कर कल्प के आदि में राजा होता है एक वर्ष दुग्धाहार करै अन्त में एक गौ और एक वृष ब्राह्मण को देवै इस लक्ष्मी व्रतका करनेहारा एक कल्प लक्ष्मी लोकमें निवास करता है एक वर्ष सप्तमी को

नक्तव्रत करै अन्त में दुग्धदेनेहारी गौ ब्राह्मणको देवै इससूर्य्य व्रतके करने से सूर्य्यलोककी प्राप्ति होती है चतुर्थी को एक वर्ष नक्तव्रत कर अन्त में सुवर्ण का हाथी ब्राह्मण को देवै यह वैनायक व्रत करने से सब विघ्न निवृत्त होते हैं चातुर्मास्य में फलोंका त्यागकरै अन्त में वे फल सुवर्ण के बनाय गौ श्वेत वस्त्र और घृतपूर्ण घट सहित ब्राह्मण को देवै यह फल व्रत करने से सन्तान की वृद्धि होती है एक वर्ष पर्यन्त सप्तमी को उपवास कर अन्त में सुवर्ण का कमल और सब उपकरणों सहित पांच गौ दुग्ध देनेवाली पौराणिक ब्राह्मण को देवै इस सौर व्रतके करने से सूर्य्यलोककी प्राप्ति होती है बारह द्वादशी उपवास कर अन्त में वस्त्र सहित जलपूर्ण बारह घट ब्राह्मणों को देवै यह गोविन्द व्रत सब कार्य सिद्ध करनेहारा है कार्त्तिकी पूर्णिमाको वृषका दान कर नक्तव्रत करै यह वृष व्रत करने से गोलोक प्राप्ति होती है कृच्छ्र व्रतके अन्त में गोदान कर यथाशक्ति ब्राह्मण भोजन करावै यह प्राजापत्य व्रत ब्रह्मलोक प्राप्तिकर्त्ता है एक वर्ष चतुर्दशी को नक्तव्रत कर अन्त में वृषभ दान करै इस त्र्यम्बक व्रत करने से शिवलोक प्राप्ति होती है सातरात्रि उपवास कर ब्राह्मण को घृतपूर्ण कुम्भ देवै यह ब्रह्मव्रत ब्रह्मलोक दायक है एकवर्ष मघा में नक्तव्रतकर अन्त में दुग्धदेनेहारी गौ ब्राह्मण को देवै इस व्रत का करनेहारा एक कल्प स्वर्ग में निवास करता है कार्त्तिक शुक्ल चतुर्दशी को उपवास कर रात्रिके समय विलक्षण पंचगव्य पानकरै अर्थात् कपिला गौ का मूत्र कृष्णागौ का गोबर श्वेत गौ का दूध लाल गौ का दही और कर्बुर वर्ण गौ का घृत लेकर वैदिक मन्त्रों से कुशोदक सहित मिलाकर

प्राशन करै दूसरे दिन प्रभात स्नान कर देवता और पितरों का तर्पण आदि कर ब्राह्मण भोजन कराय आपभी मौन से भोजन करै इस ब्रह्मकूर्च व्रतके करने से बाल्य यौवन और वार्द्धक में किये सब प्रकार के पाप क्षय होते हैं एकवर्ष तृतीया को विना अग्नि सिद्ध किया भोजन करै और अन्त में उत्तम गौ ब्राह्मण को देवै इस ऋषिव्रत के करने से शिवलोक में अक्षय वास मिलता है दो पल सुवर्ण का रथ बनाय ब्राह्मण को देवै इस रथ व्रत का करनेहारा कल्पभर स्वर्ग में रहता है इसी प्रकार उपवास कर दो पल सुवर्ण का हस्ती ब्राह्मण को देवै इस करिव्रत के करने से स्वर्ग प्राप्ति होती है एकवर्ष ताम्बूल आदि मुखबास का त्याग कर अन्त में ब्राह्मण को गौ देवै इस मुखबास व्रतके करने से कुबेर लोक की प्राप्ति होती है रात्रिभर जल में निवास कर प्रभातही गोदान करै इस वारुण व्रत का करनेहारा पुरुष वरुण लोक में निवास करता है चन्द्रका अयन व्रत करके अन्त में सुवर्ण का चन्द्र ब्राह्मण को देवै इस चन्द्रव्रत के करने से चन्द्र लोक प्राप्ति होती है ज्येष्ठमास की अष्टमी और चतुर्दशी को पंचाग्नि तपकर सुवर्ण सहित गौ ब्राह्मण को देवै इस रुद्र व्रत के करने से शिवलोक प्राप्ति होती है एक वर्षभर तृतीया को शिवालय में लेपन करै अन्त में गोदान करै इस भवानी व्रत के करने से सब मनोरथ सिद्ध होते हैं माघ मास की सप्तमी को उपवास कर ब्राह्मण को गौ देवै इस तपन व्रत का करनेहारा कल्पभर स्वर्ग में निवास करता है तीन रात्रि उपवास कर फाल्गुन पूर्णिमा को गोदान करै इस धामव्रत के करने से सूर्यलोक प्राप्ति होती है पूर्णिमा को

उपवास कर तीनों कालों में वस्त्र भूषण भोजन आदि करके ब्राह्मण मिथुन का पूजन करै इस इन्दु व्रतके करने से मोक्ष प्राप्ति होती है शुक्ल द्वितीया को लवण पूर्ण कांस्य पात्र वस्त्र और दक्षिणा एक वर्ष पर्यन्त ब्राह्मण को देतारहै अन्तमें गोदान करै इस सोम व्रतका करनेहारा पुरुष कल्प भर शिवलोक में निवास कर अन्त में राजा होताहै वर्ष भर प्रतिपदाको एक भक्तकर अन्त में कपिला गौ ब्राह्मण को देवै इस आग्नेय व्रत के करने से अग्नि लोक प्राप्ति होती है माघ मास में एकादशी चतुर्दशी और अष्टमी को एकभक्त व्रत कर वस्त्र जूता कम्बल चर्म आदि शीत निवारण करनेहारी वस्तु दान करै इस सौख्य व्रतके करने से अश्वमेध यज्ञके फल की प्राप्ति होती है एक वर्ष दशमी को एकभक्त व्रतकर अन्तमें सुवर्ण की स्त्री रूप दश दिशाओं की मूर्त्ति द्रोणभर तिलों के ऊपर स्थापन कर धेनु सहित ब्राह्मण को देवै इस महा पातक हरने हारे दिग्व्रत के करने से ब्रह्माण्डका आधिपत्य मिलता है शुक्ल सप्तमी को सूर्यनारायण का पूजन कर सात धान्य और लवण ब्राह्मण को देवै इस धान्य व्रतके करने से अपना और सात कुलों का उद्धार होताहै एक मास उपवास कर ब्राह्मण को गौ देवै इस विष्णु व्रतके करने से विष्णु लोक प्राप्ति होती है एक पक्ष उपवास कर दो कपिला गौ ब्राह्मण को देवै इस ब्रह्म व्रतका करनेहारा ब्रह्मलोकमें निवास करता है तीन पल से अधिक सुवर्ण का कुल पर्वत और मनुष्यों सहित भूमि बनाकर निर्दोष हेमपर रत्न ब्राह्मण को देवै और उस दिन पयोव्रत रहै इस महाव्रत के करने से शिवलोक प्राप्ति होती है माघ अथवा चैत्रकी शुक्ल तृतीया को सब उ-

पकरणों सहित गुड़धेनु ब्राह्मण को देवै इस महाव्रत के करने हारा अप्सराओं करके सेवित गौरीलोकमें निवास करता है एक वर्ष एकभक्त व्रतकर अन्त में गोदान करै इस रुद्र व्रत के करनेहारा कल्प भर शिवलोकमें निवास कर राजा होता है चैत्र मास में तीनदिन स्नान कर नक्त व्रतकरै अन्तमें दुग्ध देनेहारी पांच गौ दरिद्री और कुटुम्बी ब्राह्मण को देवै इस गतिव्रतके करनेहारा सब रोगों से और जन्म मरणसे छुटजाता है जो पुरुष कन्यादान करै वह अपने इक्कीस कुलों सहित ब्रह्मलोक को जाता है कन्यादान से अधिक कोई दान नहीं है इस दानके करने से अक्षय स्वर्गवास मिलताहै तिलपिष्ट का हाथी बनाय दो रक्त वस्त्र अंकुश चामर कक्ष्या नक्षत्र माला आदि से उसको भूषित कर ताम्रपात्र में स्थापन करै पीछे वस्त्र भूषण आदि से ब्राह्मण मिथुन का पूजन कर कण्ठ प्रमाण जलमें स्थितहो वह हस्ती उनको देवै यह कान्तार तरण व्रत करनेहारा सब प्रकारके सङ्कट और पापों से छुटता है और सद्गति पाताहै है इस में कुछ संदेह नहीं जो पुरुष एक दिन भी भक्तिसे पौरन्दर व्रतकरैं उनको प्रलय पर्यन्त स्वर्ग वास मिलता है पंचमी को पयोव्रत करके सुवर्ण का नाग ब्राह्मण को देवै उसको कभी सर्पभय नहीं होता शुक्ल पक्षकी अष्टमी को उपवास कर दो शुक्ल वस्त्र और घण्टा से भूषित उत्तम वृष ब्राह्मण को देवै इस वृष व्रतका करनेहारा कल्प भर शिवलोक में निवास कर राजा होताहै उत्तरायण के दिन सेर भर घृत से सूर्य्यनारायण को स्नान कराय उत्तम घोड़ी ब्राह्मणको देवै इस राज व्रतका करनेहारा पुरुष सब अभीष्ट फल पाय अन्तमें पुत्र भाई आदि सहित सूर्य्यलोकमें निवास

करता है नवमी को नक्तव्रत कर विन्ध्यवासिनी भगवती का पूजन करै और सुवर्णका हंस ब्राह्मणको देवै इस आग्नेय व्रत के करने से उत्तम वाणी की प्राप्ति होती है और अन्तमें अग्निलोक प्राप्तिभी होती है द्वादशी को उपवास कर तिल फल इक्षु भोजन और दक्षिणा ब्राह्मण को देवै तो विष्णुलोक प्राप्ति होय विष्कुम्भ आदि सत्ताईस योगों में नक्तव्रत करके क्रमसे घृत तैल फल इक्षु यव गेहूँ चणे मटर चावल लवण दही दूध वस्त्र सुवर्ण कम्बल गौ वृष छतुरी जूता कपूर केसरि चन्दन पुष्प लोह ताम्र कांस्य और चांदी ब्राह्मण को देवै इस योग व्रतका करनेहारा सब पापों से छूटता है और उसको कभी इष्टवियोग नहीं होता कार्तिकी पूर्णमासी को सुवर्ण का मेष वस्त्र माला आदिसे भूषित कर ब्राह्मण को देवै मार्गशीर्ष पूर्णिमाको सुवर्ण का वृष दान करै इसी क्रमसे बारह मासों की पूर्णिमाको बारह राशियों का दान करै अन्तमें ब्राह्मणों को भोजन कराय दक्षिणा देवै इस राशि व्रत के करने से सब उपद्रव निवृत्त होते हैं और सोम लोक की प्राप्ति होती है इतना कह श्रीकृष्ण भगवान् बोले कि हे महाराज! ये पचासी व्रत हमने कहे हैं जो इनके विधान को केवल श्रवण अथवा पठन करै वह ब्रह्महत्या गोहत्या पितृहत्या आदि पातक महापातक और उपपातकों से उसी क्षण छूटजाता है और जो भक्तिसे इन व्रतों को करै उसको धन सौख्य सन्तान स्वर्ग आदि कोई भी पदार्थ दुर्लभ नहीं ॥

एकसोदशका अध्याय ॥

[illegible]स्नान का विधान ॥

श्रीकृष्णभगवान् कहते हैं कि हे महाराज ! सत्ययुग मे-

ह्मण त्रेता क्षत्रिय द्वापर वैश्य और कलियुग शूद्र है कलियुग में मनुष्यों को स्नानकर्म में शिथिलता रहती है तो भी माघ स्नान के व्याज से स्नानविधान कहते हैं जिसके हाथ पांव वचन और मन भलीभांति संयुत होयँ और विद्या तप तथा कीर्त्तिकर के युक्त हो उसको सम्पूर्ण तीर्थ फल होताहै श्रद्धा हीन पापी नास्तिक संशयात्मा और हेतुवादी तीर्थ फलके भागी नहीं होते प्रयाग पुष्कर कुरुक्षेत्र आदि तीर्थों में अथवा और चाहे जहां माघस्नान करना चाहिये सूर्योदय के समानही स्नान करने से सब महापातक निवृत्त होते हैं और प्राजापत्य यज्ञ का फल प्राप्त होता है जो ब्राह्मण सदा प्रातःकाल स्नान करता है वह सब पापों से छुट परब्रह्म पाता है उष्णोदक का स्नान वृथा विना वेद जप वृथा श्रोत्रिय विना श्राद्ध वृथा और सायङ्काल के समय भोजन वृथा होता है वायव्य वारुण ब्राह्मय और दिव्य ये चारप्रकार के स्नान होते हैं गौओं के रजसे वायव्य स्नान होता है समुद्रादिक में वारुण स्नान ब्राह्मय स्नान मन्त्रों से और मेघजलसे दिव्य स्नान होता है इन सबमें वारुण स्नान उत्तम है ब्रह्मचारी गृहस्थ वानप्रस्थ भिक्षु बाल तरुण वृद्ध स्त्री नपुंसक माघमें तीर्थ के बीच स्नान कर उत्तम फल पाते हैं ब्राह्मण क्षत्रिय और वैश्य मन्त्रपूर्वक स्नान करें और स्त्री तथा शूद्र मन्त्रहीन स्नान करें माघ महीने में जल यह कहता है कि जो किंचित सूर्य उदय होतेही हममें स्नान करै उसके ब्रह्महत्या सुरापान आदि बड़े बड़े पापभी हम हरैं माघस्नान करनेहारे पुरुष वहां निवास करते हैं जहां सुवर्ण के प्रासाद अप्सराओं के समान नारी और दही दूध की नदी बहती हैं जिनमें पायसका कर्दम

होरहा है तीर्थयात्रा करै तो यतिकी भांति संयम से रहे दुष्टों का संग न करै तो चन्द्र सूर्य्य के तुल्य उत्तम भोग पाता है पौष फाल्गुन के बीच मकर के सूर्य में तीनदिन माघस्नान करै माघके प्रथम दिनही संकल्प पूर्वक स्नानका नियम करै वस्त्र विना ओढ़े स्नान करनेजाय तो पद पद में अश्वमेध का फल पावै तीर्थपर जाय स्नान कर मस्तक में मृत्तिका लगाय सूर्य्य को अर्घ्य दे पितरोंका तर्पणकर जल से बाहर निकल इष्ट देवको प्रणामकर शंख चक्र धारनेहारे पुरुषोत्तम श्री माधवका पूजन करे सामर्थ्य होय तो नित्य हवन एकबार भोजन ब्रह्मचर्य्य और भूमिपर शयन करै और असमर्थ धना-ढ्य जितना होसके उतना करै परन्तु प्रातःस्नान अवश्य करना चाहिये तिलोंका उबटना तिलों से स्नान तिलों से पितृ तर्पण तिलहोम तिलदान और तिलोंका भोजन माघमास में करै तो कभी कष्ट न पावै तीर्थ के ऊपर अग्नि प्रज्वलित करै और स्नान के लिये तेल और आमलक देवै इसप्रकार एकमास स्नान कर अन्त में वस्त्र भूषण भोजन आदि से ब्राह्मण दम्पती का पूजन करै और कम्बल वस्त्र रत्न अनेक प्रकार के अंगरखे रजाई जूता और भी जो शीत हरनेहारी वस्तु हैं यथाशक्ति दानकरै और (माधवःप्रीयताम्) यह वाक्य कहै इसप्रकार माघ स्नानकरनेहारा अगम्यागमन सुवर्णस्तेय आदि गुप्तप्रकट जि-तने पातक कियेहों सबसे छूटजाताहै और पिता पितामह प्रपि-तामह माता मातामह प्रमातामह आदि इक्कीसकुल सहित वि-ष्णुलोक को जाता है जो साधारण रीति से भी गङ्गाजीमें इकसाबरस हुये नदी जल में माघमास में स्नानकरै ऐसी अपने स्थान पुरुषों सहित स्वर्ग को जाते हैं ॥

एकसौग्यारहका अध्याय ॥
नित्य स्नानका विधान और तर्पणकी विधि ॥

श्रीकृष्णभगवान् कहते हैं कि हे महाराज! मनकी प्रसन्नता और देहकी शुद्धि स्नान विना नहीं होसक्ती इस लिये स्नान अवश्य करना चाहिये नदी आदि में अथवा घर में शुद्ध जल के बीच (ॐनमो नारायणाय) इस मूलमन्त्र से जलमें तीर्थकल्पना करै चारहाथ लम्बा चौड़ा तीर्थकल्पना कर हाथ में कुशालेकर (विष्णुपादप्रसूतासि वैष्णवी विष्णुदेवता। पाहिनश्चैनसस्तस्मादाजन्ममरणान्तिकात् ॥ तिस्रःकोट्योर्द्धकोटिश्च तीर्थानांवायुरब्रवीत्। दिविभुव्यन्तरिक्षे च तानितेसन्तिजाह्नवि ॥ नन्दिनीत्येवतेनाम देवेषुनलिनीतिच। क्षमापृथ्वीचविहगा विश्वकाया शिवास्मृता॥ विद्याधरीसुप्रसन्ना तथा लोकप्रसादिनी। हेमाह्वया जाह्नवीच शान्ताशान्तिप्रदायिनी) इनमन्त्रों को सातबार पढ़ गङ्गा का आवाहन करै इस आवाहन से अवश्य गंगाका सान्निध्य होजाता है फिर अञ्जलि में जल लेकर तीन चार पांच अथवा सातबार मस्तकपर डाल (अश्वक्रान्तेरथक्रान्ते विष्णुक्रान्तेवसुन्धरे। मृत्तिकेहरमेपापं यन्मयादुष्कृतंकृतम् ॥ उद्धृतासिवराहेण कृष्णेनशतबाहुना। नमस्तेसर्वलोकानां वसुधारिणिसुव्रते) इन मन्त्रों से मृत्तिका को अभिमन्त्रण कर शरीर में लगाय स्नान करै पीछे आचमन कर शुद्ध वस्त्र पहिन इन मन्त्रों से तर्पण करै (देवायक्षास्तथानागा गन्धर्वाप्सरसांगणाः। क्रूराः सर्पाः सुपर्णाश्च राक्षसाजम्भकाःखगाः ॥ वाय्वाधाराजलाधारास्तथैवाकाशगामिनः। निराश्रयाश्च ये जीवाः पापकर्म्मरताश्च ये ॥ तेषामाप्यायनायैतद्दीयतेसलि

लेमथा) सव्यसे देवताओं का अपसव्यसे मनुष्यों का और कण्ठमें यज्ञोपवीत धार ऋषियों का तर्पण करे (सनकश्च सनन्दश्च तृतीयश्च सनातनः । कपिलश्चासुरश्चैव वोढुः पञ्चशिखस्तथा ॥ सर्वेतेतृप्तिमायान्तु मद्दत्तेनाम्बुनासदा । मरीचिमत्र्यङ्गिरसौ पुलस्त्यंपुलहंक्रतुम् ॥ प्रचेतसंवशिष्ठं चभृगुंनारदमेवच । देवब्रह्मऋषीन्सर्वांतर्पयामितिलोदकैः) इन मन्त्रोंसे तिल जल करके तर्पण कर सव्यजानु भूमिपर रख अपसव्य हो अग्निष्वात्त वर्हिषद् हविष्मान् आज्यप सोमप आदि दिव्य पितृगणका तर्पण कर अपने पितरों का तर्पण करै (येबान्धवाबान्धवावायेऽन्यजन्मनिबान्धवाः । तेतृप्तिमखिलायान्तु मद्दत्तेनाम्बुनासदा) यह मन्त्र पढ़ आचमन कर अपने आगे अष्टदल पद्म लिख अक्षत पुष्प तिल रक्तचन्दन और जल करके (नमस्तेविष्णुरूपायनमोविष्णुसखायवै । सहस्ररश्मयेनित्यं सताश्वायनमोनमः ॥ नमस्तेसर्ववपुषे नमस्तेसर्वशक्तये । जगत्स्वामिन्नमस्तेस्तु दिव्यचन्दनभूषित ॥ पद्मनाभनमस्तेस्तु नमस्तेयजुषांपते) इन मन्त्रों से सूर्य्यनारायण को अर्घ्य देकर तीन प्रदक्षिणा कर ब्राह्मण गौ और सुवर्ण का स्पर्शकर घरमें आय विष्णुभगवान् का पूजन करे इस विधि से नदी तड़ाग आदि में पाप और अलक्ष्मी निवर्त्तक स्नान नित्य करना चाहिये ॥

एकसौबारह का अध्याय ॥

रुद्रस्नान का विधान और फल ॥

राजायुधिष्ठिर कहते हैं कि हे श्रीकृष्णचन्द्र ! सर्व दुष्टोपशम और सब प्रकार की शान्ति करनेहारे रुद्रस्नान का विधान आप वर्णन करें यह राजा का वचन सुन श्रीकृष्ण

भगवान् कहनेलगे कि हे महाराज ! एक समय अगस्त्य मुनिने स्वामिकार्तिकेयसे पूछा कि हे शिवपुत्र ! रुद्र स्नान का क्या विधान है और किसको करना चाहिये यह आप वर्णन करैं तब कार्तिकेय कहनेलगे कि हे अगस्त्यमुनि ! मृतवत्सा बन्ध्या दुर्भगा और कन्या सन्तानही जिस नारीके होयँ उस को यह स्नान अवश्य करना चाहिये अष्टमी चतुर्दशी रविवार भौमवार अथवा और किसी पर्व्व में नदी के तटपर महानदियों के संगम में शिवालय में गोष्ठमें अथवा अपने घरमें स्नान करै अग्निहोत्री सदाचार धर्मज्ञ और रुद्रकर्म में निपुण ब्राह्मणको पहिले निमन्त्रण करै गोबरसे लिपा बन्दनवार आदिसे अलंकृत अति सुन्दर चतुरस्र मण्डप बनाय उसके मध्यमें पंचरंगका कमल लिख कर्णिकाके बीच महादेवजी का स्थापन करै उनके दोनों ओर पार्वती और विनायक और आठों दलों में इन्द्रादि लोकपालों को स्थापन कर गन्ध पुष्प धूप दीप और गुड़ोदन से पूजन कर मण्डप की चारों दिशाओं में भूतबलि देवै अग्निकोण में कुण्ड बनाय लवण सर्षप घृत और मधु से। मानस्तोकेतनये इत्यादि वैदिक मन्त्र करके हवन करावै और एक ब्राह्मण श्वेत वस्त्र श्वेत चन्दन श्वेत पुष्पों की माला कङ्कण कुण्डल अँगूठी आदि से अलंकृत मण्डल के समीप बैठा ग्यारह २ पाठ का एक एक रुद्र पाठ करै इसी भांति दूसरा मण्डल बनाय श्वेत वस्त्र श्वेत पुष्प आदि से अलंकृत उस नारी को मण्डल में बैठाय रुद्रपूजक आचार्य उसको स्नान करावै और अर्क पत्रके दोने में जल लेकर रुद्रैकादशिनी करके उसका अभिषेक कर सातसौचार पत्र अर्क के बहुत सुन्दर और अ-

च्छिद्रलावै और अश्वस्थान गजस्थान वल्मीक संगम ह्रद वेश्यागण राजद्वार और गोष्ठ इन स्थानों की मृत्तिका सर्वौषधि रोचना अनेक नदी और तीर्थों के जल इन सब पदार्थों को एक कलश में डाल उसको स्नान करावै और आठों दिशाओं में अश्वत्थपत्र फल अक्षत सहित जो आठकलश स्थापन कर रक्खे हैं उनसे क्रम करके स्नान करावै इसप्रकार स्थापन कर गौ सुवर्ण वस्त्र आदि सहित सब सामग्री आचार्य्य को देवै और भी ब्राह्मणों को भोजन दक्षिणा वस्त्र आदि देकर क्षमापन करावै इस विधि से जो स्त्री रुद्रस्नान करै वह सौभाग्य सुख और सन्तान पाती है ब्राह्मणों की सम्मति से चाहे जिसकाल में रुद्रस्नान करै उसस्त्री के शरीर के सब दोष निवृत्त होजाते हैं और उसके सन्तान चिरञ्जीव होते हैं॥

एकसौतेरहका अध्याय॥

ग्रहणारिष्टहर स्नानका विधान॥

राजायुधिष्ठिर कहते हैं कि हे श्रीकृष्णचन्द्र! अब हम चन्द्र और सूर्य्य के ग्रहण में स्नान का विधान सुनना चाहते हैं आप वर्णन करैं यह राजा का वचन सुन श्रीकृष्णभगवान् कहने लगे कि हे महाराज! जिस पुरुष की जन्म राशि में ग्रहणहो उसके कल्याण के अर्थ हम स्नान का विधान कहते हैं ग्रहण से प्रथमही ब्राह्मणों का वरणकर स्वस्तिवाचन कराय शुक्ल वस्त्र आदि से गुरुका पूजनकर चार कलश चार समुद्रमान कर स्थापन करै उनमें अश्वस्थान गजस्थान आदि से मृत्तिकालाकर डालै और प्रत्येक कुम्भ में गोरोचन पञ्चगव्य पञ्च रत्न पद्म शङ्ख स्फटिक रक्तचन्दन हाथीदांत केशरि उशीर

गूगल सर्षप और तीर्थजल डाल उनमें इन मन्त्रों से देवताओं का आवाहन करै (सर्वेसमुद्राःसरितस्तीर्थानिजलदास्तथा । आयान्तुयजमानस्य दुरितक्षयकारकाः ॥ योसौवज्रधरोदेव आदित्यानां प्रभुर्मतः । सहस्रनयनश्चेन्द्रो पीडामन्तर्व्यपोहतु ॥ मुखंयःसर्वदेवानां सप्तार्चिरमितद्युतिः । चन्द्रोपरागसम्भूतामग्निःपीडांव्यपोहतु ॥ यःकर्मसाक्षीलोकानांधर्मराजेतिविश्रुतः । यमश्चन्द्रोपरागाच्चपीडामत्रव्यपोहतु ॥ रक्षोगणाधिपःसाक्षात्प्रलयाग्निसमप्रभः । खड्गहस्तोतिभीमश्च रक्षःपीडांव्यपोहतु ॥ नागपाशधरोदेवः सदामकरवाहनः । सजलाधिपतिश्चन्द्र ग्रहपीडांव्यपोहतु ॥ प्राणरूपोहियोलोकान्यातिनित्यंनभोगतिः । वायुश्चन्द्रोपरागोत्थां पीडांसद्योव्यपोहतु ॥ योसौनिधिपतिर्देवः खड्गशूलगदाधरः । चन्द्रोपरागकलुषं धनदोत्रव्यपोहतु ॥ योसौमहेश्वरोदेवः पिनाकीवृषवाहनः । चन्द्रोपरागपापानिसनाशयतुशङ्करः ॥ त्रैलोक्येयानिभूतानिस्थावराणीतराणिच । ब्रह्मार्कविष्णुयुक्तानितानिपापंदहन्तुवै) इन मन्त्रों से कलश में देवावाहनकर इनहीं मन्त्रों से उनको अभिमन्त्रण करै पीछे तीनों वेद के मन्त्र और इनमन्त्रों से यजमानका अभिषेककर ये सब मन्त्र पत्रोंमें लिख यजमान के शिरपर रख स्नान करावै ग्रहण के अनन्तर शुक्ल वस्त्र माला आदि से भूषित हो गोदान करै सब सामग्री आचार्य को देवै और यथाशक्ति ब्राह्मण भोजन कराय वस्त्र दक्षिणा गौ आदि ब्राह्मणों को दे सन्तुष्ट करै इस विधि से जो स्नान करै उसको कभी ग्रहणजनित पीड़ा नहीं होती और परम सिद्धि पाताहै सूर्यग्रहण होय तो मन्त्रों में चन्द्र पदके स्थान में सूर्यपद लगालेवै जो इस विधान को नित्य

श्रवण करै अथवा सुनावै वह सब पापों से छूट इन्द्रलोक में निवास करताहै ॥

एकसौसोलहका अध्याय॥

मरणका विधान ॥

राजायुधिष्ठिर पूछते हैं कि हे श्री कृष्णचन्द्र ! मरण के समय गृहस्थ पुरुष को किस प्रकार से प्राण त्यागने चाहिये यह आप वर्णन करें हम को श्रवण करने का बड़ा कुतूहल है यह राजा का वचन सुन श्री कृष्ण भगवान् कहने लगे कि हे महाराज ! जब पुरुष अपना मृत्यु समीप जानै तो गरुड़ध्वज विष्णु भगवान् का चिंतन करै और शुचि हो स्नान कर सब उपचारों से नारायण का पूजन कर अनेक प्रकार के पुण्य स्तोत्रों से स्तुति कर यथा शक्ति गौ भूमि सुवर्ण वस्त्र घर आदि दान करै और बंधु पुत्र कलत्र क्षेत्र धन धान्य आदि से अपना चित्त निवृत्त करै मित्र शत्रु को समान समझै और सब कर्मों को त्यागकर ये वाक्य कहै (परित्यजाम्यहं भोगांस्त्यजामि निखिलाञ्जनान् । वस्त्रादिकं भवेत्स्नानं पुष्पानुलेपनम् ॥ शुश्रूषणादिकं चैव दानस्नानादिकं तथा । [illegible] नित्यक्रियाश्च या ॥ नैमित्तिकास्तथा [illegible] । [illegible] धर्मार्थ [illegible] । [illegible] ॥ [illegible] ॥ [illegible] । [illegible] ॥ [illegible] । [illegible]

र्वतोमूर्द्धिहृदये वाम्यठ्यां वाचिचक्षुषि। श्रोत्रादिषु च सर्वेषुस मे विष्णुः प्रतिष्ठितः) ये मन्त्रपढ़ सबकात्यागकर दक्षिणाग्र कुशा बिछाय पूर्व अथवा उत्तर ओर शिरकर शयनकर विष्णु भगवान् का चिन्तन करै (विष्णुंकृष्णंहृषीकेशं केशवंमधु सूदनम्। नारायणंनरंसौरिं वासुदेवंजनार्दनम् ॥ वाराहंयज्ञ पुरुषं पुण्डरीकाक्षमच्युतम्। वामनंश्रीधरंकृष्णं सुरेन्द्रमपरा जितम् ॥ पद्मनाभंहरिंश्रीदं दामोदरमधोक्षजम्। सर्वेश्वरेश्व रंशुद्धंप्रभुं वामनमीश्वरम् ॥ चक्रिणं गदिनं शान्तं शङ्खिनंगरु डध्वजम्। किरीटकौस्तुभधरं प्रणमाम्यहमव्ययम् ॥ अह मस्मिञ्जगन्नाथे मयिचास्तु जनार्दनः। अनयोरन्तरंमास्तु अ भिन्नयुक्ताशमीश्व ॥ अयंविष्णुरयं शौरिरयं कृष्णः पुरोमम। नीलोत्पलदलश्यामः पद्मपत्रायतेक्षणः ॥ एषपुण्यतमोवि ष्णुं पश्याम्यहमधोक्षजम्) इनमंत्रों को पढ़ता हुआ श्री विष्णु भगवान् को प्रणाम करै और (ॐ नमो भगवते वासुदेवाय) इस मन्त्र को निरन्तर जपै और प्रसन्न मुख शंख चक्र गदा पद्मधारे केयूर कटक कुण्डल श्रीवत्स पीताम्बर आदि से भूषित नवीन मेघके समान श्यामवर्ण ऐसा रूप विष्णु भगवान् का ध्यावै अथवा जिस रूपपर अपना मन स्थिर होय उसी का ध्यान करै इस प्रकार जो प्राण त्यागकरै वह सब पापों से छुट विष्णु भगवान् में लीन होजाता है इतना सुन राजा युधिष्ठिर बोले कि हे श्री कृष्णचन्द्र! यह विधान जो आपने कहा सो स्वस्थ चित्त रहने से हो सक्ताहै परंतु मरण के समय तरुण और आरोग्य पुरुषों की भी चित्तवृत्ति मोह को प्राप्तहोजाती है वृद्ध और रोगियों की तो कथाही क्याहै अति वृद्ध और रोगग्रस्त क्योंकर कुशा के शयन पर बैठ

ध्यान कर सक्ता है इस लिये और कोई उपाय आप कहें कि जिससे निष्फल मरण न होय यह राजा का वचन सुन श्री कृष्ण भगवान् कहने लगे कि हे महाराज! यही मुख्य उपाय है कि जो और कुछ भी न होसके तो सब ओर से चित्तवृत्ति रोक कर गोविन्द स्मरण करता हुआ प्राण त्यागकरै क्योंकि जिस २ भाव को स्मरण करता हुआ अन्त में शरीर त्यागै उस २ भाव करके भावित उसीको प्राप्त होना है इसलिये सब प्रकार से वासुदेव का चिन्तन करना चाहिये गन्ध उपभोग भोजन वाहन स्त्री गन्ध माल्य मणि वस्त्र भूषण आदि में जो अत्यन्त मोह से इच्छा रहै उसका नाम आर्त्ति ध्यान है दहन हनन ताड़न प्रहार में चित्त जाय दया न उत्पन्न होय और मन तथा इन्द्रिय वश में न रहैं यह रौद्र ध्यान है सूत्रार्थ वेद महाव्रत आदि का पालन इन्द्रियों का उपशम मोक्ष की चिन्ता शम दम और गंगादिकों का स्मरण जिसमें होय उसका नाम धर्म ध्यान है सब इन्द्रिय अपने २ विषयों से निवृत्त होजायँ हृदय में इष्ट अनिष्ट का कुछ चिन्तन न रहै और आत्मा स्थिरहोकर परमेश्वर में निविष्ट होय इसका नाम शुक्लध्यान है आर्त्ति और रौद्र ध्यान से अवनति होती है धर्मध्यान से स्वर्गवास मिलता है और शुक्लध्यान से मोक्ष प्राप्ति होती है इसलिये ऐसाही प्रयत्न करना चाहिये जिससे शुक्ल ध्यान स्थिर होय [illegible] में गोविन्द [illegible] आदि में [illegible] [illegible] [illegible] ॥

एक सौ पन्द्रहका अध्याय ॥

तड़ागादिकी प्रतिष्ठा व बनानेका विधान व फल व समुद्रस्नान की विधि॥

राजा युधिष्ठिर पूछते हैं कि हे श्रीकृष्णचन्द्र! तड़ाग वापी कूप आदि जलाशय का उत्सर्ग किस विधि से और किस समय में किया जाता है यह सब आप वर्णन करें यह राजा का प्रश्न सुन श्रीकृष्ण भगवान् कहने लगे कि हे महाराज! आपने बहुत उत्तम बात पूछी अब हम तड़ागादि का उत्सर्ग विधान कहते हैं प्रथम सुन्दर सोपान अर्थात् पैड़ियों करके युक्त पक्कातलाव बनावै जिसकी पाल दृढ़ हो और चारों ओर वृक्ष लगावै जब वह तड़ाग कार्तिक महीने में जल से पूर्ण होजाय उस समय स्थिर नक्षत्रों में उसका उत्सर्ग करै अश्वत्थ उदुम्बर प्लक्ष और वट के काष्ठ के दण्डों पर दिक्पालों के रंग की पताका लगाय दिशाओं में स्थापन करै मध्य में पंचरंग का बड़ाध्वज स्थापन करै यजमान के चार हाथ अथवा पांच हाथ प्रमाण की वेदी मध्य में यूप करके भूषित बनावै कदम्ब अश्वत्थ पलाश और विकङ्कतवृक्ष के काष्ठ का यूप चारों वर्णों के लिये क्रमसे कहाहै और ब्राह्मणकेलिये वट और बिल्वका क्षत्रियको खदिर का वैश्य को उदुम्बर और शूद्र को महुआ के काष्ठ का यूप भी बनाना योग्यहै और विभीतक उदुम्बर शाक और शाल्मलि वृक्ष का यूप शूद्र बनावै अष्ट दिक्पालों की मूर्त्ति रंग करके लिखै और ब्रह्मा सावित्री विष्णु लक्ष्मी और रुद्र पार्वती की मूर्त्ति भी लिखै पीछे उनका सब उपचारों से पूजन कर चारों दिशाओं में हस्त प्रमाण और तीन मेखला करके युक्त कुण्ड बनावै और उत्तम वस्त्र पहिने सुवर्ण के भूषण और पुष्प माला चन्दन आदि से अलंकृत सोलह अथवा आठ

होता अर्थात् हवन करनेवाले ब्राह्मण कल्पन करै और वेद वेदांग इतिहास पुराण आदि जाननेहारा शान्तचित्त आचार्यहोय ताम्रपात्र मृत्तिकाके पात्र होमके लिये समिधा तिल और भी जो सामग्री अपेक्षितहो सब एकत्र कर ग्रह यज्ञके विधान से वेदी में स्थापन किये देवताओं के नाम से और वारुण मन्त्रों से हवन कर इन्द्रादि लोकपालों को अपनी २ दिशामें बलि देवै मण्डप के द्वारोंमें सुवर्ण और पल्लवों सहित कलश स्थापन करै अश्वत्थपत्रों की वन्दनमाला बांधे सुवर्ण का कूर्म ताम्रका मकर चांदी का मत्स्य रांग का मेडक शीशे का डुण्डुभ हंस आदि श्वेतपक्षी चांदी के और चक्रवाक आदि पीतवर्ण पक्षी सोने के और चांदी की जलौका बनाय सबको ताम्रपात्र में स्थापन करै साम मन्त्र से इन सब की प्रतिष्ठा और पूजा कर वैदिक मन्त्रों से यूपकी प्रतिष्ठा करै कुंकुम चन्दन आदि से यूपको लिप्तकर पुष्प धूप दीप आदि से उसका पूजन करै फिर आचार्य चरुश्रपण कर व्याहृतियों से हवन कर गीत वाद्य आदि से वरुण का आवाहन कर ताम्रपात्र को जलमें लेजाय वरुण को निवेदन कर और भी रत्न और अनेक प्रकार के बीज वरुण के निमित्त जलमें छोड़ै फिर एक गौको प्रदक्षिणा कर यजमान उसकी पूंछ पकड़ अपनी भार्या सहित जलका अवगाहन करै फिर जलमें निकल वह गौ और यथा शक्ति दक्षिणा ब्राह्मण को देवै और कुलाल आदि आदमियों का पूजन कर कर्मकारों का भी सत्कार करै और ([illegible] [illegible] । [illegible] प्रीयन्ताम्) यह मन्त्र पढ़ थोड़ा जल तड़ागमें डाल पीछे हजार से लेकर

एकतक जितनी सामर्थ्य होय उतनी गौ ब्राह्मणों को देवै यह तड़ाग के उत्सर्ग का विधान है अब हम वापी और कूप की प्रतिष्ठा का विधान कहते हैं कुण्ड मण्डप वेदी यूप भूषण वस्त्र आदि सब सामग्री पूर्वोक्तरीति से इसमें भी एकत्र कर वापी के चारों कोणों में तीर्थजल से पूर्ण पुष्प चन्दन श्वेत वस्त्र आदिसे भूषित चार कलश स्थापन करै और पूर्व रीति व्याहृतिहोम और ग्रहहोम कर वरुण और लोकपालों को वलि देकर वरुणसूक्तोंका पाठकरै वेदी के मध्य में पञ्चरङ्ग से कमल लिख उसके मध्य में शिव ब्रह्मा और विष्णुका पूजनकर मत्स्य कच्छप मण्डूक आदि का पूर्वरीतिसे अधिवासन करै (मित्र मित्रोसिभूतानांधनदोधनकारिणाम् । वैद्योव्याध्यभिभूतानां शरण्यः शरणार्थिनाम्) इसमन्त्रसे वरुणका विसर्जनकरै और पूजा के प्रारम्भ में (नमस्तेविश्वगुप्ताय नमोविष्णोअपांपते। सान्निध्यंकुरुदेवेशसमुद्रेयद्वदत्रवै) इस मन्त्र से आवाहन करै ब्राह्मणों को दक्षिणा देवै और एक उत्तम गौ एक ब्राह्मण को देवै इन तड़ाग आदिकी प्रतिष्ठाओं में अनिवारित भोजन देना चाहिये इसमें वित्तशाठ्य न करै तड़ागादिकों का जल उत्सर्ग किये विना अशुचि होता है विना मन्त्र कुशाग्र करके भी समुद्रका स्पर्श न करै। अग्निवाचो इत्यादि वैदिक मन्त्र से पहिले अभिमन्त्रण कर समुद्र में स्नान करै। श्रावण मास में शतभिषा नक्षत्र में फल मूल अक्षत आदि करके समुद्र को अर्घ्य देकर पीछे स्नान करै तो हजार जन्मों में किये पाप क्षणमात्र में नष्टहोजाते हैं विधि पूर्वक कर्म करने से कर्त्ता और कारयिता स्वर्ग को जाते हैं और विधिहीन कर्म से दोनों का नरक में पात होता है तड़ाग आदि बनाकर प्रतिष्ठा न

करै तो उस का बनवाना ही निष्फल है तड़ाग आदि बनाने-हारा रत्न जटित सुवर्ण के विमान में बैठ दिव्य लोक को जाता है इस रीति से उत्सर्ग कर आठ दिन तक बड़ा उत्सव करै कर्मकार स्थपति शिल्पी सूत्रधार आदि भी जलाशय बनाने से स्वर्गको प्राप्त होते हैं जलाशय खोदने के समय जितने जीव मरें वे सब उत्तम गति को प्राप्त होते हैं धेनु के शरीर में जितने रोम होवैं उतने दिव्य वर्ष कूप आदि बनानेवाला स्वर्ग में रहता है और तड़ाग बनानेवाला करोड़ों युग पर्यन्त स्वर्ग सुख भोगता है उस के जो कोई पितर दुर्गति को प्राप्त भये हों वे सब स्वर्ग को जाते हैं पितर नाचते हैं कि हमारे कुल में ऐसा पुत्र उत्पन्न हुआ जिसने जलाशय बनाया छोटासा भी जलाशय बनावै जिस में एक गौकी भी तृषा निवृत्त होय तो अनन्त फल होता है संसार के स्त्री पुत्र धन आदि सब पदार्थ नश्वर हैं तड़ाग वापी देवालय और सघन छाया वाला वृक्ष ये चारों संसार से उद्धार करते हैं इस लिये सर्वस्व करके भी एक जलाशय अवश्य बनाना चाहिये जिस भांति पुत्र के देखने से माता का स्वरूप ज्ञान होता है इसी भांति जलाशय देखने और उसका जल पीने से कर्त्ता का शुभाशुभ ज्ञान होता है इसलिये न्याय से धन उपार्जन कर तड़ाग आदि बनावै जो धन और नारी से व्याकुल पांथ जनों आदि को जलदान करता है उस पुण्यों की वर्षा और ठंढी छाया में विश्राम दे तड़ागादि बनानेहारा अपने कुलों [illegible] का उद्धार करता है [illegible] पुण्य होता है [illegible] जो तड़ाग आदि बनाता है उसी का जन्म सफल है और वही [illegible] है [illegible] तड़ाग

आदि बने रहैं और जब तक तड़ाग आदि बनाने की कीर्त्ति रहै जब तक वह कैलास में सुख भोगता है धन्य हैं वेपुरुष कि जो हंस आदि पक्षी और कमल कुवलय आदि पुष्पों करके मण्डित अपने बनाये तड़ाग में लोकों को जल पीतेदेखते हैं जिसके तलाव में घट अंजलि मुख चंचु आदि करके अनेक जीव जल पीते हैं उसी का जन्म सफल है उत्तम तड़ाग बनाय उस के तट पर देवालय भी बनावै तो उनके पुण्य का कहां तक वर्णन करैं देवालय की ईंट जब तक खण्ड२ न होजायँ तब तक देवालय बनानेवाला स्वर्ग में निवास करता है ऐसे स्थान में कूप बनावै जहां बहुत जीव जल पीवैं और स्वादु जल उस में होय तो बनानेवाले के सात कुलों का उद्धार होजाता है जिस के बनाये कूप का स्वादु जल मनुष्य पीवैं उस ने सब पुण्य किये जो पुरुष तड़ाग बनाय उस के तटपर वृक्षों के बीच उत्तम देवालय बनावै उसकी कीर्त्ति सर्वत्र व्याप्त होती है और बहुत काल दिव्य भोग भोग कर चक्रवर्त्ती राजा होता है जिन के बनाये तलाव वापी कूप धर्मशाला आदि हैं जो अन्नदान करते हैं और जिन के वचन अति मधुर हैं यमराज उन का नाम भी नहीं लेते॥

एकसौसोलहका अध्याय॥

वृक्षलगानेका माहात्म्य और वृक्षोद्यापन का विधान॥

राजा युधिष्ठिर कहते हैं कि हे श्रीकृष्णचन्द्र! आप वृक्ष लगाने का माहात्म्य और वृक्षोद्यापन का विधान वर्णन करैं यह राजा का वचन सुन श्रीकृष्ण भगवान् कहने लगे कि हे महाराज! आप ने बहुत उत्तम बात पूछी पांच वृक्ष लगाये बहुत उत्तम और दश पुत्र भी उत्पन्न किये किसी अर्थ नहीं

धन्य हैं वृक्ष कि जो अपने पुष्प पत्र फल मूल वल्कल काष्ठ और छायाकरके किसी अर्थीको निराश नहीं करते पुत्र तो क्या जाने वर्षभर में एक दिन श्राद्धकरैं अथवा न करैं और वृक्ष नित्यही अपने फल पुष्प आदि करके आरोपण करनेहारे का श्राद्ध करते हैं न वह फल अग्निहोत्र आदि कर्मों से होय और न पुत्र उत्पन्न करने से जो वृक्ष लगाने से होताहै सच्छा-या सपुष्पा और सफला वृक्ष वाटिका कुल स्त्री की भांति अपने भर्त्ता को दोनों लोकों में सुखदेनेहारी होती है अशोक पल्लव हैं कर जिसके तिलकरके भूषित हैं मुख जिसका ऐसी वृ-क्षवाटिका वेश्या की भांति सब के उपभोग के योग्य जो ल-गावै उसको अवश्य उत्तम लोक प्राप्ति होती है वह पुरुष नित्य गायत्री जपका नित्य दान का और नित्य यज्ञ करने का फल पाता है जो वृक्ष लगाता है एक पीपल एक नींब एक वट दश इमली कैथ बिल्व और आमलक ये तीन और पांच आम्र के वृक्ष जो पुरुष लगादेवै वह कभी नरक नहीं देखता धनाढ्यों के घरमें अतिथिका सत्कारहो वा न हो परन्तु वृक्ष तो फल पुष्प आदि करके अवश्यही सबका सत्कार करता है जिसने जलाशय न बनवाया और एकभी वृक्ष न लगाया उसने संसारमें जन्म लेकर क्या किया वृक्षों के तुल्य कोई परोपकारी नहीं है कि आप धूप में खड़े रहकर दूसरे को छाया करते हैं और फल पुष्प आदि से सबकी शुश्रूषा करने में तत्पर रहते हैं पार्वतीजी ने मन्दराचल में अपना पुत्र क-ल्पना कर शोकनाशन अशोक वृक्ष लगाया और जातकर्म आदि सब संस्कार उसके किये अब इस सब पाप हरनेहारी और कीर्तिवर्द्धन वृक्षोद्यापन का विधान कहते हैं कांचनका

कुबड़ा कोटर युक्त कीट जिसमें लगें और स्त्रीलिंग जिसका नाम हो ऐसा वृक्ष न लगावै उत्तम वृक्ष आरोपण कर उसके चारों ओर जल के लिये आलवाल छोड़ पक्का चौतरा बांध उत्तम मुहूर्त में उसका उद्यापन करै पहिले दिन वृक्ष को पताकाओं से अलंकृत कर रक्त वस्त्र उढ़ाय रक्त सूत्र से वेष्टित कर उसका अधिवासन करै चारों दिशाओं में श्वेत वस्त्रों से आच्छादित पंचपल्लव भूषित चन्दन और पुष्पमाला से अलंकृत रत्नयुक्त चार कलश स्थापन करै और भी जो वृक्ष उसके समीप हों सब को रक्तसूत्र से वेष्टित कर पताका से अलंकृत करै और सबके मूल में एक २ कलश स्थापन करै सुवर्ण के पत्र और फल पन्द्रह अथवा दश बनाकर सब बीजों सहित ताम्रपात्र में रक्खै और वाद्य घोष सहित सब दिशाओं में इन्द्रादि लोकपालों को बलि देवै इस प्रकार मन्त्रवेत्ता आचार्य अधिवासन करै दूसरे दिन प्रभातही मेखला सहित कुण्ड बनाय ग्रह यज्ञ विधान से शांति कर्म का आरम्भ करै पहिले सुवर्ण वस्त्र आदि करके चार अथवा आठ ब्राह्मणों का पूजन कर उनसे घृत और तिलों का हवन करावै मातृका स्थापन कर पुष्प और अक्षतों करके उनका पूजन करै पीछे पायस और घृत करके परिप्लुत चरु सिद्धकरके होमकरै और जातकर्म से लेकर गोदान पर्यन्त सब संस्कार वृक्ष के करै पहिले वृक्ष को स्नान कराय जातकर्म अन्नप्राशन कर सुवर्ण सूची से कर्णवेध करै चूड़ाकरण कर मुञ्जकी मेखला और वस्त्र पहिनावै पीछे गोदान संस्कार करै कोई आचार्य कहते हैं कि माधवीलता मालती अथवा सल्लकी के साथ वृक्ष का विवाह भी करना चाहिये इस प्रकार प्रतिष्ठा कर ब्राह्मण

उन वृक्ष को आशीर्वाद देवें और यजमान पुष्पांजलि लेकर (ये शाखिनः शिखरिणां शिरसो विभूषा ये नन्दनादिषु वनेषु कृतप्रतिष्ठाः । ये कामदाः सुरनरोरगकिन्नराणां ते मे नतस्य दुरितार्त्तिहरा भवन्तु ॥ एतैर्द्विजैर्विविधदत्तहुतैर्हुताशः पश्य त्वमात्रवहिमर्दीथितिरम्बरस्थः । त्वं वृक्षपुत्र परिकल्पनया दृतोऽसि कार्यं सदैव भवता मम पुत्र कार्यम्) ये मन्त्र पढ़ पुष्पांजलि दे घृतमें मुख देख वृक्षको पुत्रकी भांति वार २ लालन कर (अङ्गादङ्गात्सम्भवति हृदयादभिजायते । आत्मा वै पुत्र नामासि त्वं जीव शरदां शतम्) यह मन्त्र पढ़ आशीर्वाद देवे ब्राह्मणों को दक्षिणा देवै और आचार्य्य को उत्तम धेनु देकर बड़ा उत्सव करै दीन अनाथों को अनिवारित भोजन देवे औरोंको भी प्रसन्नहो सुरा आसव आदि देवै और दास कर्मकार आदि सब का यथाशक्ति सत्कार करे सायङ्काल के समय अपने भाई बन्धुओं सहित भोजन करे इस विधि से जो वृक्षोंका उत्सव करे वह दोनों लोकों में अभीष्ट फल पाता है पुत्रों के बिना मनुष्यों की शुभगति नहीं होती और कुपुत्र होने में दोनों लोकों का नाश होता है यह विचार उत्तम वृक्ष लगाय शास्त्रकी रीति से उनको पुत्र कल्पना करे ॥

एकसौ[illegible] का अध्याय ॥

देवमन्दिर बनाने का देवप्रतिमा स्थापन का और देवतानिमित्त वस्त्रादि उत्सर्ग करने का फल ॥

श्रीकृष्ण भगवान् कहते हैं कि हे महाराज ! जो पुरुष अति रमणीय देवालय बनावे उसका यह शरीर नष्ट होजाने पर भी कीर्त्तिमय शरीर स्थिर रहता है और [illegible] और पताकाओं सहित [illegible]

अनेक प्रकारके सुख भोग स्वर्ग को जाते हैं जो उत्तम प्रासाद बनाय उनके बीच सुवर्ण चांदी ताम्र पाषाण अथवा लोह की प्रतिमा स्थापन करते हैं वे अनेक राजाओं करके सेवित चक्रवर्ती राजा होते हैं जो मेरु नामक प्रासाद में देवप्रतिमा स्थापन कर पंचामृत से स्नान कराते हैं वे दिव्य कल्प इन्द्र बनके स्वर्ग का राज्यकर चक्रवर्त्ती होते हैं जो उत्तम चन्दन से देवताओं को अनुलेपन करैं वे दिव्य गन्धयुक्त देहधार नन्दनवन में अप्सराओं के साथ विहार करते हैं जो सुगन्ध युक्त कमल उत्पल आदि दिव्य पुष्पों करके देवताओं का अर्चन करते हैं वे विमान में बैठ स्वर्ग को जाते हैं जो दिव्य धूपों से देवताओं को धूपित करैं वे दिव्य देहधार स्वर्ग में जाय देवांगनाओं के साथ विहार करते हैं जो देवता पर वस्त्र चढ़ाते हैं वे दिव्य भूषण वस्त्र और दिव्य मालाओं करके भूषितहो उत्तम सिंहासन पर बैठते हैं और दिव्यांगना उनके ऊपर सुवर्ण दण्ड के चामर धूनन करती हैं देवालय में दीप प्रज्वलित करैं तो दिव्य देहधार दिव्य नारियों करके वेष्टित रत्नजटित सुवर्ण के विमान में दीप्यमान होता है जो देवालय में जागरण कर नृत्य गीत आदि उत्सव करै उसको अप्सरा और गन्धर्व गीत नृत्य से प्रसन्न करते हैं जो पुरुष देवालय में लेपन आदि करैं वे स्वर्ग में जाय रत्नप्रासादों के बीच निवास करते हैं जो पुरुष देवालय में परमभक्ति से घण्टा वितान छत्र चामर आदि चढ़ावै वह उत्तम रत्नों का स्वामी और चक्रवर्ती होता है जो पुरुष स्तुति वचनरूप पुष्पों से देवताओं का अर्चन करैं और प्रणाम करैं वे दोनों लोकों में उत्तम फल पाते हैं॥

एकसौअठारह का अध्याय ॥

देवालय में दीपदान का विधान फल और ललिता नाम एक रानी की कथा ॥

राजा युधिष्ठिर पूछते हैं कि हे श्रीकृष्णचन्द्र ! कौनसे तप से नियम से व्रतसे अथवा दानसे अत्यन्त तेजोयुक्त शरीर इस लोक में होता है यह आप कथन करें यह राजा का वचन सुन श्रीकृष्ण भगवान् कहने लगे कि हे महाराज ! एक समय पिंगल नाम तपस्वी मथुरा में आये उनको हमारी पत्नी जाम्बवती ने यही बात पूछी थी जाम्बवती के प्रति जो उनने कहा वही हम आपको कथन करते हैं संक्रान्ति सूर्य्य चन्द्रग्रहण वैधृति व्यतीपात उत्तरायण दक्षिणायन विषुव एकादशी शुक्ल चतुर्दशी तिथिक्षय सप्तमी अष्टमी आदि पुण्य दिनों में स्नान कर व्रत रख स्त्री अथवा पुरुष अंगण के बीच घृत कुम्भ और वस्त्र सहित प्रज्वलित दीपक भूमिदेवों को देवे इतना सुन राजा युधिष्ठिर ने पूछा कि भूमिदेव ब्राह्मण किसको कहते हैं यह हमारा संशय प्रथम आप निवृत्त करें तब श्रीकृष्ण भगवान् कहने लगे कि हे महाराज ! पूर्व काल में सत्ययुग के बीच त्रिशंकु राजा सदेह स्वर्ग को जाना चाहताथा उसको वशिष्ठजी ने चण्डाल बना दिया त्रिशंकु ने यह सब वृत्तान्त विश्वामित्रजी से कहा विश्वामित्रजी को बड़ा क्रोधहुआ और दूसरी सृष्टि रचने का आरम्भ किया और सब देवताओं सहित दूसरा स्वर्ग त्रिशंकु के लिये बनाने लगे गृञ्जनक नारिकेल और मेढ़ वृन्ताक कोद्रव कचनार आदि पदार्थ बनाये और नये नक्षत्र तथा देवताओं की प्रतिमा बनाई इस समय इन्द्र ने आप प्रार्थना

कर विश्वामित्रजी को सृष्टि निर्माण से रोका वे प्रतिमा जो विश्वामित्रजी ने बनाईथीं उनमें ब्रह्मा विष्णु आदि देवताओं का सान्निध्य भया वही भूमिदेव कहाये और अपने भक्तों को वर देने लगे उनके सम्मुख दीपदान करना चाहिये चार प्रस्थ घृतका प्रज्वलित दीप रक्त वस्त्र सहित (तद्विष्णोः परमं पदम्) इत्यादि मन्त्र से सूर्य्यनारायण को निवेदन करै पीत वस्त्र युक्त विष्णु भगवान् को श्वेत वस्त्र युक्त शिवजी जो कौसम्भ वस्त्र युक्त रवि को लाक्षारस रंजित वस्त्र युक्त दुर्गा को नील वस्त्र युक्त कामदेव को खादिर वर्ण वस्त्र युक्त गणेश को नागों को कृष्ण वस्त्र युक्त दीप निवेदन करै और यह विशेष श्रवण करो कि सूर्य्यको पूर्णवर्त्ति शिवको ईश्वरवर्त्ति विष्णुको भोगवर्त्ति ब्रह्माको पद्मवर्त्ति गौरी को सौभाग्यवर्त्ति काम को अशोक-वर्त्ति दुर्गाको रक्तवर्त्ति और नागोंको नागवर्त्ति युक्त दीपक देवै प्रथम देवताका पूजन कर पीछे बड़े पात्रमें घृत भरकर दीपदान करै इस विधि से जो दीपदान करै वह देदीप्यमान विमान में बैठ स्वर्ग में जाताहै और वहां प्रलय कालपर्य्यन्त निवास करता है जिस प्रकार दीप प्रकाशित रहता है उसी प्रकार दीपदान करनेहारा भी प्रकाशित होताहै और दीपक शिखा की भांति उसकी भी ऊर्ध्वगति होती है घृत से अथवा तैल से दीपदान करै दीप का तैल और किसी काम में न लगावै और दीपका निर्वापण तथा हरण भी न करै दीपतेल से कर्म करनेहारे के नेत्र में फूला पड़ता है दीप बुझा देनेवाला काणा होता है और दीपका हरण करै तो अंधा होय ललिता नाम रानी नित्य दीपदान किया करती उसको सपत्नियों ने पूछा कि हे ललिते! दीपदान का फल तू हमको

भी सुनाव तेरी इतनी भक्ति दीपदान में क्योंकर है तब ललिता कहने लगी कि हे सखियो ! मुझे तुम्हारे साथ मत्सर और ईर्षा नहीं है इस लिये मैं दीपदान का फल तुम को सुनाती हूँ ब्रह्माजी ने मनुष्यों के उद्धार के लिये साक्षात् पार्वतीजी को देविका नदीरूप से भूमि पर उतारा जिस में एक बार भी स्नानकर मनुष्य शिवजी का गण होता है जहां नृसिंहजी ने स्नान किया है उस नृसिंह तीर्थ में स्नान करने से सब पाप निवृत्त हो जाते हैं सौवीरक नाम राजा जिस के मैत्रेय पुरोहित थे उस ने देविका के तट पर विष्णुमन्दिर बनाया और नित्य पुष्प धूप दीप नैवेद्य आदि से वहां पूजन किया करता एक दिन कार्त्तिकी पूर्णिमा को वहां दीपदान किया और बड़ा उत्सव कराया अन्त में सब निद्रावश होगये उस समय वह दीप निर्वाण होने लगा इसी अवसर में एक मूषिका जो उसी मन्दिर में रहती थी दीपका घृत चाटने निकली और दीपक की बत्ती को अगली ओर खेंचा इस से वह दीप चैतन्य हो गया और जलने के भय से घृत भी न खासकी वही मूषिका मर कर विदेह राजा की पुत्री में भई जो इस पर्वनिष्ठ राजा की रानी और तुम्हारी सपत्नी हूं बिना इच्छा भी मैं ने दीपक की बत्ती निकाली उस का यह फल भया जो मनुष्य भक्ति से कार्त्तिकी पूर्णिमा को विष्णुमन्दिर में दीपदान करते हैं उन के फल का तो क्या वर्णन करूं मैं दीपदान का फल भली भांति जानती हूं इसी लिये नित्य देवालय में दीप जलाती हूं यह ललिता का वचन सुन उस की सब सखी भी दीपदान करने लगीं और बहुत काल पर्यन्त सुख भोग सब की सब अपने पति के सहित विष्णुलोक को गईं इस प्रकार और भी जो

पुरुष अथवा स्त्री दीपदान करै वह उत्तम तेज और विष्णु लोक में वास पाता है ॥

एकसौउन्तीस का अध्याय ॥

वृषोत्सर्गका विधान और फल ॥

श्रीकृष्ण भगवान् कहते हैं कि हे महाराज! कार्त्तिकीपूर्णिमा अमावास्या अयन संक्रान्ति चैत्र शुक्ल तृतीया अथवा वैशाख की द्वादशी को चार बछियाओं सहित नील वर्ण के उत्तम वृष को छोड़े तो अनन्त पुण्य होता है इस का विधान गर्गमुनि ने हम को इस प्रकार उपदेश किया है कि पहिले मातृका पूजन कर अभ्युदयकारक मातृश्राद्ध करै फिर रुद्र पूजन कर घृत से हवन करै और जीवद्वत्सा और दूध देनेहारी गौ का एक रंग का सर्वांग सुन्दर तरुण बछड़ा लेकर वाम भाग में त्रिशूल और दक्षिण भाग में चक्र से अंकित कर कुंकुम आदि से अनुलिप्त करै और चार तरुण बछियाओं को भी भूषित कर उनके कान में (पतिर्वोबालिनंपुष्टं सुन्दरंतरुणंशुभम् । ददाति तेन सहिताः क्रीडध्वं हृष्टमानसाः) यह वाक्य कहै फिर उनको वस्त्र उढ़ाय भोजन से सन्तुष्ट कर देवालय में गोष्ठ में अथवा नदी संगम आदि स्थानों में छोड़ै स्वेच्छाचारी गर्जता हुआ बड़े ककुद अर्थात् थुही करके युक्त और अहंकार से पूर्ण ऐसा वृष छोड़ने वाले पुरुष धन्य हैं इस विधि से जो वृषोत्सर्ग करै उस के दश पुरुष पिछले और दश अगले सद्गति को प्राप्त होते हैं वृष जो नदी में उतरै और जो जल उस के शृंग आदि से उड़ै और जिस जल को वह पुच्छ से स्पर्श करै वह सब उसके पितरों को अक्षय तृप्ति देनेहारा होता है शृंगों कर के जो भूमि को खोदता है वह उस

छोड़नेवाले के पितरों की तृप्ति के लिये मधुकुल्या बनती है चार हज़ार हाथ लम्बे चौड़े तड़ाग बनाने से जो पितरों को तृप्ति होती है वही एक वृष छोड़ने से होती है मधु और तिल युक्त पिण्डदान सेभी वह तृप्ति पितरों को नहीं होती जो एक वृषोत्सर्ग करने से होती है बहुत से पुत्र उत्पन्न करने चाहिये जिनमें से एकभी गयाको जाय पिण्डदान करै अथवा पितरों के निमित्त वृष छोड़े जो पुरुष अपने पितरों के उद्धार के लिये वृष छोड़े वह आपभी स्वर्गवास पाता है ॥

एकसोबीसका अध्याय ॥

होलिका की उत्पत्ति और फलसहित विधान ॥

राजा युधिष्ठिर पूछते हैं कि हे श्रीकृष्णचन्द्र ! फाल्गुन पूर्णिमाको ग्राम ग्राम और नगर नगर में क्यों उत्सव होता है बालक क्यों क्रीड़ा करते हैं और घर घर में होली क्यों जलाई जाती है शीतोष्णा और अडाडा उसको क्यों कहते हैं और किस देवताका पूजन उसदिन कियाजाता है यह आप वर्णन करें यह राजाका प्रश्न सुन श्रीकृष्णभगवान् कहनेलगे कि हे महाराज ! सत्ययुग में रघुनाम राजा शूर प्रियवादी सर्वगुण युक्त और बड़ादानी हुआ वह सब पृथिवीकोजीत सब राजाओं को अपने वशमें कर पुत्रों की भांति प्रजाका पालन करता था उसके राज्य में दुर्भिक्ष व्याधि भय अकाल मरण आदि कोई उपद्रव नहीं था और सब प्रजा के लोग धर्म में आसक्त थे एकसमय सब [illegible] राजा के द्वार पर आकर त्राहि त्राहि पुकारनेलगे राजा ने उनके आगमन का कारण पूछा तब उन सबने कहा कि [illegible] बालकों [illegible]

पुरुष अथवा स्त्री दीपदान करै वह उत्तम तेज और विष्णु लोक में वास पाता है॥

एकसौउन्नीस का अध्याय॥

वृषोत्सर्गका विधान और फल॥

श्रीकृष्ण भगवान् कहते हैं कि हे महाराज! कार्त्तिकीपूर्णिमा अमावास्या अयन संक्रान्ति चैत्र शुक्ल तृतीया अथवा वैशाख की द्वादशी को चार बछियाओं सहित नील वर्ण के उत्तम वृष को छोड़ै तो अनन्त पुण्य होता है इस का विधान गर्गमुनि ने हम को इस प्रकार उपदेश किया है कि पहिले मातृका पूजन कर अभ्युदयकारक मातृश्राद्ध करै फिर रुद्र पूजन कर घृत से हवन करै और जीवद्वत्सा और दूध देनेहारी गौ का एक रंग का सर्वांग सुन्दर तरुण बछड़ा लेकर वाम भाग में त्रिशूल और दक्षिण भाग में चक्र से अंकित कर कुंकुम आदि से अनुलिप्त करै और चार तरुण बछियाओं को भी भूषित कर उनके कान में (पतिर्वोबालिनंपुष्टं सुन्दरंतरुणंशुभम् । ददाति तेन सहिताः क्रीडध्वं हृष्टमानसाः) यह वाक्य कहै फिर उनको वस्त्र उढाय भोजन से सन्तुष्ट कर देवालय में गोष्ठ में अथवा नदी संगम आदि स्थानों में छोड़ै स्वेच्छाचारी गर्जता हुआ बड़े ककुद अर्थात् थुही करके युक्त और अहंकार से पूर्ण ऐसा वृष छोड़ने वाले पुरुष धन्य हैं इस विधि से जो वृषोत्सर्ग करै उस के दश पुरुष पिछले और दश अगले सद्गति को प्राप्त होते हैं वृष जो नदी में उतरै और जो जल उस के शृंग आदि से उड़ै और जिस जल को वह पुच्छ से स्पर्श करै वह सब उसके पितरों को अक्षय तृप्ति देनेहारा होता है शृंगों कर के जो भूमि को खोदता है वह उस

छोड़नेवाले के पितरों की तृप्ति के लिये मधुकुल्या बनती है चार हज़ार हाथ लम्बे चौड़े तड़ाग बनाने से जो पितरों को तृप्ति होती है वही एक वृष छोड़ने से होती है मधु और तिल युक्त पिण्डदान सेभी वह तृप्ति पितरों को नहीं होती जो एक वृषोत्सर्ग करने से होती है बहुत से पुत्र उत्पन्न करने चाहिये जिनमें से एकभी गयाको जाय पिण्डदान करै अथवा पितरों के निमित्त वृष छोड़ै जो पुरुष अपने पितरों के उद्धार के लिये वृष छोड़ै वह आपभी स्वर्गवास पाता है ॥

एकसौवीसका अध्याय ॥

होलिका की उत्पत्ति और फलसहित विधान ॥

राजा युधिष्ठिर पूछते हैं कि हे श्रीकृष्णचन्द्र ! फाल्गुन पूर्णिमाको ग्राम ग्राम और नगर नगर में क्यों उत्सव होता है बालक क्यों क्रीड़ा करते हैं और घर घर में होली क्यों जलाई जाती है शीतोष्णा और अडाडा उसको क्यों कहते हैं और किस देवताका पूजन उस दिन कियाजाता है यह आप वर्णन करें यह राजाका प्रश्न सुन श्रीकृष्णभगवान् कहनेलगे कि हे महाराज ! सत्ययुग में रघुनाम राजा शूर प्रियवादी सर्व्वगुण युक्त और बड़ादानी हुआ वह सब पृथिवीकोजीत सब राजाओं को अपने वशमें कर पुत्रों की भांति प्रजाका पालन करता था उसके राज्य में दुर्भिक्ष व्याधि भय अकाल मरण आदि कोई उपद्रव नहीं था और सब प्रजा के लोक धर्म्म में आसक्त थे एकसमय सब पुरके लोक एकत्रहो राजाके द्वार पर आकर त्राहि त्राहि पुकारनेलगे राजा ने उनके त्रासका कारण पूछा तब उन सब ने कहा कि महाराज ढोंढानाम राक्षसी नित्य हमारे बालकों को पीड़ादेती है और औषध मन्त्र तन्त्रआदि उनपर

कुछ भी नहीं चलता यह पौरों का वचन सुन राजा ने अपने पुरोहित श्री वशिष्ठमुनि से पूछा मुनि ने कहा कि हे राजन्! सुमाली नाम दैत्यकी पुत्री यह ढोढाहै इसने बहुतकाल उग्र तप कर शिवजी को प्रसन्न किया शिवजी ने प्रसन्नहो इससे कहा कि वरमांग तब इसने यह वरमांगा कि देवता दैत्य मनुष्य आदि कोई मुझे न मारसकैं और शस्त्र अस्त्रसे वध न होय दिन में रात्रि में शीतकाल उष्णकाल वर्षाकाल में और भीतर बाहर कहीं मुझ को भय न होय शिवजी ने कहा तथास्तु और यह भी कहा कि ऋतुसन्धिके बीच उन्मत्त और बालक तुझे त्रासदेंगे इतना कह शिवजी अन्तर्द्धान भये वही राक्षसी नित्य बालकों को और प्रजा को पीड़ा देती है अडाडा शब्द करके कुटुम्बियों का सिद्ध अन्न ग्रहण करती है इसलिये उसको अडाडा कहते हैं यह तो उस राक्षसी का चरित है अब उसके निवारण का उपाय हम कहते हैं फाल्गुन शुक्ल पूर्णिमा को सब लोक निःशंक हो क्रीड़ा करैं अश्लील भाषण करैं नाचैं हँसैं बालक काष्ठ के खड्ग लेकर योधाओं की भांति हर्ष से युद्ध के लिये उत्सुक हो दौड़ते फिरैं बहुतसा सूखा काष्ठ और उपले इकट्ठे कर उनमें रक्षोघ्न मन्त्रों करके अग्निलगाय उसमें हवन करैं सब लोक किल-किला शब्द करते ताली बजाते उस अग्निकी तीन प्रद-क्षिणा करैं गावैं हँसैं और निःशंक हो जो जिसके मन में आवै सो बोलैं इसप्रकार लोकों के कोलाहल से रक्षोघ्न मन्त्रों करके हवन करने से बालकों के खड्गप्रहार से वह दुष्ट राक्ष-सी क्षय को प्राप्त होगी यह वशिष्ठजी का वचन सुन राजा ने सम्पूर्ण राज्यमें इसी प्रकार बड़ा उत्सव कराया जिससे

वह राक्षसी नाश को प्राप्त भई उसी दिन से यहां ढोंढाका उत्सव लोकमें प्रसिद्ध हुआ सर्व दुष्टपह और सर्व रोगों का शांत करनेहारा होम इस दिन कियाजाता है इस लिये इस को होलिका कहते हैं सब तिथियों का सार परमआनन्द देनेहारी पूर्णिमा तिथि है सारत्वसेही इसका नाम फल्गु है गोबर से लिपे हुये अंगण में इस रात्रि को बालकों की रक्षा करनी चाहिये बहुत से खड्गहस्त बालक अपने घरमें बुलावै वे घरमें रक्षित बालकों को काष्ठके खड्गों से स्पर्श करैं हँसें गावैं पीछे उनको गुड़ और पक्वान्न देकर विसर्जन करै इस रात्रिको बालकों का अवश्य रक्षण करना चाहिये इस विधि के करने से ढोंढाका दोष शांत होता है इतना सुन राजा युधिष्ठिर ने पूछा कि हे श्रीकृष्णचन्द्र! दूसरे दिन चैत्रमास और वसन्तऋतु का प्रारम्भ होता है इस दिन क्या करना चाहिये तब श्रीकृष्णभगवान् कहने लगे कि हे महाराज! होली के दूसरे दिन प्रभात उठ आवश्यक कामकर पितर और देवताओं का तर्पण पूजनकर सर्व दुष्टोपशान्तिके लिये होलिकाकी विभूतिका वन्दन करै और घरके अंगण में गोबर से लीप रंग और अक्षतों करके चौकपूरै उसमें शुक्लवस्त्र से आच्छादित पीठ रखकर पुष्पमाला आदि से भूषित और सुवर्ण सहित कलश स्थापन करै पीछे उस पीठपर चन्दन रक्खै सौभाग्यवती स्त्री उत्तम वस्त्र भूषण पहिन दही दूर्वा अक्षत शिरीष पुष्प आदि से उस चन्दन का पूजन करै फिर आम्र के पुष्प सहित उस चन्दनको प्राशनकरै और कामदेवका पूजन कर सूत मागध बन्दी और ब्राह्मणों का यथाशक्ति सत्कार कर (कामदेवःप्रीयताम्) यह वाक्य कहै और भोजन के

समय प्रथम पहिले दिन का बासी पक्वान्न थोड़ासा खाकर यथेष्ट भोजन करै इस विधि से जो फाल्गुनोत्सव करै उसके सब मनोरथ अनायास से सिद्ध होते हैं आधि व्याधि नाश को प्राप्त होती हैं पुत्र पौत्र धन आदिकी प्राप्ति होती है यह पूर्णिमा सब विघ्न हरनेहारी जयदा पवित्रा और सब तिथियों में उत्तमहै शिशिरऋतुकी समाप्ति और वसन्त के आरम्भहोते ही चैत्रकृष्ण प्रतिपदाको चन्दन सहित आम्रपुष्प को जो प्राशनकरै वह वर्षभर सुखी रहता है॥

एकसौइक्कीसका अध्याय॥

दमनकोत्सव और दोलोत्सव का फल सहित विधान॥

राजा युधिष्ठिर पूछते हैं कि हे श्रीकृष्णचन्द्र! और भी बहुत उत्तम उत्तम पुष्पहैं उनको छोड़कर दमनक का अर्पण देवताओंको किसकारण करते हैं यह आप वर्णन करैं और दोलोत्सव तथा रथयात्रोत्सवका विधान भी कथनकरैं यह राजा का वचन सुन श्रीकृष्ण भगवान् कहनेलगे कि हे महाराज! प्रथम मन्दराचलमें दमनक वृक्ष उत्पन्नहुआ उसका दिव्य गन्ध आघ्राण कर सब देवांगना कामवश होती थीं और उन्मत्तकी भांति हँसती गाती थीं सब मुनि भी उसका गन्ध सूँघ वेदाध्ययन और तप छोड़ कामवश हुये इस प्रकार सब लोक उसके गन्ध से उन्मत्तहुये देख ब्रह्माजी को बड़ा क्रोध हुआ और दमनक को कहनेलगे कि तू बड़ा दुष्टहै तैंने हमारी सब प्रजा आकुल करदी जो एकजीवपर अपकार करै उसको अधम कहते हैं तैंने तो बहुतोंकी हानिकरी है इसलिये आज से लेकर देव पितृकर्म में कोई तुझे ग्रहण न करैगा यह ब्रह्माजी के मुख से शाप सुन दमनक ने कहा कि महाराज

मैंने द्वेष से अथवा क्रोध से किसी का अपकार नहीं किया आपने मुझे ऐसाही सुगन्ध दिया कि जिससे सब आपही उन्मत्त होजाते हैं इसमें मेरा क्या दोष है जिसकी जो प्रकृति हो उसको वह क्योंकर त्याग सकता है परन्तु आपने निरपराध मुझको शापदिया यह दमनक का युक्तियुक्त वचन सुन प्रसन्नहो ब्रह्माजी बोले कि हे दमनक! हमने तुझे शाप दिया परन्तु अब वर भी देते हैं कि वसन्तऋतु में तू सब देवताओं के मस्तक पर चढ़ैगा और जो मनुष्य भक्ति से तुझको देवताओं पर चढ़ावेंगे वे सदा सुखी होंगे और चैत्रमास में सब पाप हरनेहारी दमनक चतुर्दशी प्रसिद्ध होगी इतना कह ब्रह्माजी अन्तर्द्धान भये और दमनक भी अपने गन्ध से त्रिभुवन को वासित करता हुआ ब्रह्माजी से शाप और वरपाय शिवजी के निवासस्थान उसी मन्दराचल में रहा उसी दिनसे लोकमें दमनक पूजा प्रसिद्ध भई श्रीकृष्ण कहते हैं कि हे महाराज! अब हम दोलोत्सव का वर्णन करते हैं एक समय नन्दनवन में दोलोत्सव का प्रारम्भ हुआ वसन्तऋतु में देवांगना और देव मिलकर दोला क्रीड़ा करने लगे कोई देवांगना दोलापर गाती हैं कोई देवता अपनी प्रिया को आलिंगन कर माधवीलता की दोलापर झूलते हैं विद्याधर विहार कररहे हैं गन्धर्व गाते हैं और अप्सरा नाचती हैं नन्दनवनमें यह चमत्कार देख पार्वतीजीने शिवजी से कहा कि हमारे लिये भी एक दोला बनवाइये जिसपर आपके साथ बैठ मैंभी दोलाक्रीड़ा करूँ यह पार्व्वतीजी का वचन सुन शिवजी ने देवताओं को बुला कर दोला बनाने की आज्ञा दी देवताओं ने आज्ञा पातेही दो उत्तम जड़ाऊ सुवर्ण

के स्तम्भ गाड़ उनपर एकपट्टा रख उसमें वासुकिनाग की दोला बनाई उसका फणही बैठने के लिये रत्नजटित पीठ कल्पना किया उस फण के ऊपर अतिमृदु रुई की गद्दी और रेशमी वस्त्र बिछाये दोला की शोभा के लिये मोतियों के गुच्छे और माला चारों ओर लटकाये इस प्रकार अति उत्तम दोला बनाय देवताओं ने शिवजी से प्रार्थना करी कि हे प्रभु! दोला सिद्ध होगई है आप आरूढ़ होयँ यह देवताओं की बिनती सुन प्रसन्न हो पार्वतीजी सहित श्रीमहादेवजी दोलापर चढ़े जया और विजया दोनों दोलाको आंदोलन करनेलगीं उस समय पार्व्वतीजी ने मधुरस्वर से ऐसा गीत गाया कि शिवजी आनन्द में मग्नहोगये गन्धर्व्व गानेलगे अप्सरा नाचने लगीं और चारण अनेक प्रकारके बाजे बजाने में प्रवृत्त भये परन्तु शिवजी के दोला विहार से सब कुल पर्वत कांपउठे समुद्र क्षोभ को प्राप्तभये बड़ा प्रचण्ड पवन चलने लगा और सब लोक त्रस्त होगये इस प्रकार त्रैलोक्य को अति व्याकुल देख इन्द्रआदि सब देवता शिवजी के शरणमें गये और प्रणाम कर प्रार्थना करी कि हे नाथ! अब आप इस दोला लीला को निवृत्त करें सब भुवन क्षोभ को प्राप्त होरहे हैं यह देवताओं की प्रार्थना सुन भक्तवत्सल श्रीमहादेवजी दोला से उतरे और प्रसन्न होकर यह कहा कि आजसे लेकर जो पुरुष इस दोलोत्सव को करेगा वह सब अभीष्ट फल पावैगा श्रीकृष्ण भगवान् कहते हैं कि हे महाराज! दोलोत्सव का विधान हम वर्णन करते हैं प्रथम वसन्त ऋतु में उपवन के बीच पुष्करिणी के तटपर अति उत्तम दोला बनावै उसको छत्र दर्पण पुष्प माला सुवर्णके कलश और

अनेक प्रकार के विचित्र वस्त्रों से अलंकृत करै पीछे अग्निहोत्र और दिक्पाल बलि करके मूलमन्त्र से इष्ट देवता को उस दोला पर चढ़ाय (विश्वतश्चक्षुरुतविश्वतोमुखः) इत्यादि वैदिकमन्त्र पढ़ैं और नृत्य गीत वाद्य स्तुति पाठ और अनेक प्रकार के मङ्गल शब्दों करके बड़ा उत्सवकरै इसी अवसर से कुंकुमके रंगसेभरी क्रीड़ावापी में उत्तम स्त्री अपने पतियोंसहित प्रवेशकर जलक्रीड़ा करैं और परस्पर पिचकारियों से सिंचन करैं जो पुरुष इस विधि से दोलोत्सवकरैं वे पुत्र पौत्र धन आरोग्यआदि पाय सौवर्ष संसार का सुख भोग अन्त में उत्तम गति पाते हैं वसन्तऋतुमें भक्तिपूर्वक जो मनुष्य दोलोत्सव करतेहैं उनका जन्म सफल है वे अपने कई कुलों का उद्धारकर स्वर्ग को जाते हैं॥

एकसौबाईसका अध्याय॥

रथयात्रा का विधान और फल॥

श्रीकृष्ण भगवान् कहते हैं कि हे महाराज! अब हम रथयात्रा का विधान कहते हैं आप प्रीति से श्रवण कीजिये एक समय वसन्तऋतु में भ्रमण करते हुये नारदजी शिवलोक में गये वहां प्रणाम कर शिवजी के समीप बैठे शिवजीनेभी उनको कुशल पूछा और यहभी पूछा कि आप कहां से आये हैं तब नारदजी कहने लगे कि हे देवदेव! अब हम सुख दुःखरूप मर्त्यलोक से आये हैं वहां कामदेव के मित्र वसन्तऋतु ने सब जगत् वश करलिया है मन्द मन्द मलय पवन बहता है और सहकाररूप मत्त हाथी पर कोकिलरूप डिंडिम को स्थापन कर नगर नगर और ग्राम ग्राम में वसन्तऋतु यह घोषणा करता फिरता है कि कौन शिव

है विष्णु कौनहै और जड़ ब्रह्मा को कौन जानताहै इस जगत् का स्वामी एक कामदेव है सब उसके शासन में रहो और लोक भी यह कामशासन सुनकर सब उन्मत्त होरहे हैं सीमाओं में गोप गीत गाते हैं शस्यरक्षिका युवती बेवश हो गान करती हैं कुलटा स्त्री विटों में आसक्त हो ताण्डव करती हैं प्रफुल्लित वनमें पशु पक्षी भी काम के वशहो अपनी अपनी प्रिया को संगले विहार करते हैं सब के चित्त उत्कण्ठित होरहे हैं कोकिल पंचमस्वर बोलते हैं उसको सुन विरही जनों के प्राणही जाते हैं मलयानिल से कम्पित वृक्षों के पत्र मानो हर्ष से नृत्यही कररहे हैं बालक इस सुख के अनभिज्ञ हैं और वृद्धों के इन्द्रिय विकल हैं इसलिये इन दोनों को तो कामकी व्यथा नहीं है और सब जगत् उन्मत्त होरहा है यह विचित्र प्रभाव चैत्र का देख आप को निवेदन करने आये हैं यह नारदजी का वचन सुन वेदमय दिव्य रथके ऊपर चढ़ गन्धर्व अप्सरा मुनिगण और सब देवताओं को संगले शिवजी मर्त्यलोकमें आये और नारदजी ने जैसा कहा था वैसाही देखा कि सब जगत् आनन्द में मग्न है शिवजी वसन्त की शोभा देखतेही थे कि उनके साथ जो देवता आदि थे वेभी उन्मत्त भये कोई उत्कण्ठित हो गानेलगे कोई हर्ष से अनेक प्रकार के वीणा आदि वाद्य बजाने लगे कोई प्रसन्नता से नाचनेही लगे देवता भी अलस दृष्टि हो परस्पर नरमालाप करने लगे इसप्रकार शिवजी ने सब को क्षुब्ध हुये देख विचार किया कि यह तो बड़ा अनर्थ हुआ कि ये सब बेवश होगये इसका शीघ्रही उपाय करना चाहिये जो मनुष्य अनर्थ को उठते देख उसके विघात के लिये यत्न नहीं करते वे अवश्य

आपदा करके पीड़ित होतेहैं अब हम को इन सबकी उन्माद से रक्षा करनी चाहिये और स्वामिभक्त वसन्त ऋतुका भी मान रखना चाहिये यह शोच वसन्त ऋतु को बुलाकर शिवजीने कहा कि हे वसन्त! चैत्रमास में तुम अपना सब प्रभाव प्रकट करो और चैत्रशुक्ल पक्षमें सब जीवोंको और विशेष करके देवताओं को सुख देनेहारेहो और देवताओं को बुलाकर स्वस्थ किया और यह भी कहा कि जो पुरुष वसन्तऋतु में रथयात्रोत्सव करैंगे वे दिव्य देहधार स्वर्ग सुख भोगैंगे इतना कह सब देवताओं को संगले शिवजी अपने लोक को गये और वसन्त ऋतु भी शिवजी की आज्ञानुसार वन में विहार कर अन्तर्द्धान भया उसी दिन से लोक में रथयात्रोत्सवका प्रचार हुआ है इतना सुन राजा युधिष्ठिर ने पूछा कि रथयात्रा किस विधि से करनी चाहिये उस में देवता किस प्रकार चढ़ावै और रथ कैसा बनावै यह आप वर्णन करें तब श्री कृष्ण भगवान् कहने लगे कि हे महाराज! बहुत दृढ़ काष्ठका अथवा बांसका रथ बनाय उत्तम वस्त्र से वेष्टित कर पंचरंगी पताका और पुष्पमाला आदि से भूषित कर छत्र चामर आदि से सजाय उत्तम श्वेत वर्ण दो बैल उस में जोड़ देवालय के अंगण में खड़ाकरै फिर वैश्वदेव ग्रहशान्ति और शान्तिकपौष्टिक आदि कर्मकर मूल मंत्र से और (रथेतिष्ठन्नयतिवाजिनः) इत्यादि वैदिक मन्त्र से देवता को रथ में विराजमान करै उस समय शंख दुंदुभि काहला आदि बाजे बजैं मशाल जलाकर बहुत से मनुष्य रथ के साथ चलैं आगे २ नाच तमाशा होता चलै इस प्रकार स्वस्तिवाचन होने के अनन्तर धीरे२ रथ को नगर में घुमावै रथ के साथ नि-

है विष्णु कौनहै और जड़ ब्रह्मा को कौन जानताहै इस जगत् का स्वामी एक कामदेव है सब उसके शासन में रहो और लोक भी यह कामशासन सुनकर सब उन्मत्त होरहे हैं सीमाओं में गोप गीत गाते हैं शस्यरक्षिका युवती बेवश हो गान करती हैं कुलटा स्त्री विटों में आसक्त हो ताण्डव करती हैं प्रफुल्लित वनमें पशु पक्षी भी काम के वशहो अपनी अपनी प्रिया को संगले विहार करते हैं सब के चित्त उत्कण्ठित होरहे हैं कोकिल पंचमस्वर बोलते हैं उसको सुन विरही जनों के प्राणही जाते हैं मलयानिल से कम्पित वृक्षों के पत्र मानो हर्ष से नृत्यही कररहे हैं बालक इस सुख के अनभिज्ञ हैं और वृद्धों के इन्द्रिय विकल हैं इसलिये इन दोनों को तो कामकी व्यथा नहीं है और सब जगत् उन्मत्त होरहा है यह विचित्र प्रभाव चैत्र का देख आप को निवेदन करने आये हैं यह नारदजी का वचन सुन वेदमय दिव्य रथके ऊपर चढ़ गन्धर्व अप्सरा मुनिगण और सब देवताओं को संगले शिवजी मर्त्यलोकमें आये और नारदजी ने जैसा कहा था वैसाही देखा कि सब जगत् आनन्द में मग्न है शिवजी वसन्त की शोभा देखतेही थे कि उनके साथ जो देवता आदि थे वेभी उन्मत्त भये कोई उत्कण्ठित हो गानेलगे कोई हर्ष से अनेक प्रकार के वीणा आदि वाद्य बजाने लगे कोई प्रसन्नता से नाचनेही लगे देवता भी अलस दृष्टि हो परस्पर नरमालाप करने लगे इसप्रकार शिवजी ने सब को क्षुब्ध हुये देख विचार किया कि यह तो बड़ा अनर्थ हुआ कि ये सब बेवश होगये इसका शीघ्रही उपाय करना चाहिये जो मनुष्य अनर्थ को देख उसके विघात के लिये यत्न नहीं करते वे अवश्य

आपदा करके पीड़ित होतेहैं अब हम को इन सबकी उन्माद से रक्षा करनी चाहिये और स्वामिभक्त वसन्त ऋतुका भी मान रखना चाहिये यह शोच वसन्त ऋतु को बुलाकर शिवजीने कहा कि हे वसन्त! चैत्रमास में तुम अपना सब प्रभाव प्रकट करो और चैत्रशुक्ल पक्षमें सब जीवोंको और विशेष करके देवताओं को सुख देनेहारेहो और देवताओं को बुलाकर स्वस्थ किया और यह भी कहा कि जो पुरुष वसन्तऋतु में रथयात्रोत्सव करेंगे वे दिव्य देहधार स्वर्ग सुख भोगेंगे इतना कह सब देवताओं को संगले शिवजी अपने लोक को गये और वसन्त ऋतु भी शिवजी की आज्ञानुसार वन में विहार कर अन्तर्द्धान भया उसी दिन से लोक में रथयात्रोत्सवका प्रचार हुआ है इतना सुन राजा युधिष्ठिर ने पूछा कि रथयात्रा किस विधि से करनी चाहिये उस में देवता किस प्रकार चढ़ावै और रथ कैसा बनावै यह आप वर्णन करें तब श्री कृष्ण भगवान् कहने लगे कि हे महाराज! बहुत दृढ़ काष्ठका अथवा बांसका रथ बनाय उत्तम वस्त्र से वेष्टित कर पंचरंगी पताका और पुष्पमाला आदि से भूषित कर छत्र चामर आदि से सजाय उत्तम श्वेत वर्ण दो बैल उस में जोड़ देवालय के अंगण में खड़ाकरै फिर वैश्वदेव ग्रहशान्ति और शान्तिकपौष्टिक आदि कर्मकर मूल मंत्र से और (रथेतिष्ठन्नयतिवाजिनः) इत्यादि वैदिक मन्त्र से देवता को रथ में विराजमान करे उस समय शंख दुंदुभि काहला आदि बाजे बजें मशाल जलाकर बहुत से मनुष्य रथ के साथ चलें आगे २ नाच तमाशा होता चले इस प्रकार सुशोभित होने के अनन्तर धीरे२ रथ को नगर में घुमावै रथ के साथ जि-

ऐसे मनुष्य हों और तमाशा देखनेवाले जितने हों सब को पुष्पमाला और ताम्बूल देवै जो मार्ग में रथका धुरी पहिया जुग आदि कोई अंग टूटजाय तो ब्राह्मणों से तिल और घृत का हवन कराय उस अंग को बनवाय आगे रथयात्रा करै नगर के मध्य में रथ को स्थापन कर वहां गीत नृत्य नाटक लीला चक्रलीला आदि अनेक प्रकार के उत्सव करै इस विधि से जो रथयात्रा करै उस के धन सन्तान और पशु वृद्धि को प्राप्त होतेहैं और अन्त में सद्गति पाता है माघ शुक्लपक्ष में रथ सप्तमी होती है उस दिन उपवास कर सूर्य नारायण का पूजन कर सुवर्ण का दिव्य रथ बनाय निवेदन करै वह मनुष्य सौ वर्ष पर्यंत संसार सुख भोग अन्त में सूर्यलोक को जाता है इस भांति नगर के मध्य में उत्सव कर नगरके पूर्व द्वार पर रथ को लेजाय वहां उत्सव करै दूसरे दिन दक्षिण द्वारपर लेजाय रात्रि को जागरण करै और नट आदि के तमाशे करावै तीसरे दिन पश्चिम द्वार पर चौथे दिन उत्तर द्वारपर और पांचवें दिन फिर नगर के मध्य में रथ को स्थापन कर उत्सव और जागरण करता हुआ छठे दिन अपने स्थान पर देवता को स्थापन कर महापूजा करै और बड़ा उत्सव करावै रथयात्रा प्रसंग से सर्व पापहरा रथ सप्तमीका भी हमने वर्णन किया अब और भी विशेष आप श्रवण करैं तृतीया को गौरी का पूजन करै चतुर्थी को गणपति का पंचमी को लक्ष्मी अथवा सरस्वती का षष्ठी को स्कंद का सप्तमी को सूर्य्य का अष्टमी और चतुर्दशी को शिवका नवमी को चण्डिका का दशमी को वेदव्यास आदि शान्तचित्त ऋषियों का एकादशी को विष्णु भगवान् का द्वादशी को इन्द्रका

त्रयोदशी को कामदेव का और पूर्णिमा को सब देवताओं का अर्चन करै इस विधि से दमनकोत्सव आन्दोलनोत्सव और रथ यात्रा अपनी २ तिथि में सब देवताओं की करनी चाहिये इस प्रकार वसन्तऋतु में उत्सव करनेहारा पुरुष बहुत काल स्वर्ग सुख भोग चक्रवर्ती राजा होता है ॥

एकसौतेईसका अध्याय ॥

कामदेव का चरित्र और मदन त्रयोदशी का विधान ॥

श्रीकृष्णभगवान् कहते हैं कि हे महाराज ! एक समय हिमालय पर्वत में श्रीमहादेवजी तप करने लगे और उस समय हिमालय ने अपनी पुत्री श्री पार्वतीजी को उनकी सेवा के लिये नियत किया ब्रह्मादि देवताओं ने विचार किया कि जो शिवजी पार्वती से विवाह करैं और उनसे पुत्र उत्पन्न होय तो हमारा संकट हरै इसलिये ऐसा उपाय करना चाहिये कि पार्वती के ऊपर शिवजी का अनुराग होय यह विचार कर इस कार्य में कामदेव को नियत किया कामदेव भी रति प्रीति उन्माद वारुणी दर्प शृंगार वसन्त आदि अपने परिवार को संगले शिवजी के आश्रम में पहुँचा प्रथम सब आश्रम में वसन्त ऋतु की प्रवृत्ति भई पीछे कामदेव ने प्रवेश किया और उन्मादन नाम बाण धनुष् पर चढ़ाय शिवजी को मारना चाहा इतने में शिवजी ने यह कुटिलता कामदेव की देख क्रोध दृष्टि से उसको देखा देखतेही वह भस्म हुआ और कामदेव की भार्या रति और प्रीति दोनों विलाप करने लगीं तब पार्वतीजी के हृदय में अत्यन्त करुणा उत्पन्न भई और शिवजी से प्रार्थना करी कि महाराज देव निमित्त कामदेव की यह दशा भई अब आप कृपा कर इसको फिर भी जीवदान देवें

तब प्रसन्न हो शिवजी ने कहा कि हे पार्वति ! सब जगत् में इसने उपद्रव कर रक्खा था इस लिये हम ने इस को दग्ध किया अब इसका फिर जीवन क्योंकर हो सक्ता है परन्तु चैत्र शुक्ल त्रयोदशी को प्रतिवर्ष एकबार यह जीवित होगा उस दिन जो इसका पूजन करेंगे वे वर्ष भर सुखी रहेंगे इतना कह शिवजी कैलास को गये यह कामदेव का चरित है अब हम पूजा विधान कहते हैं चैत्रशुक्ल त्रयोदशी को स्नान कर अशोक वृक्ष बनाय उसके नीचे रति प्रीति और वसन्त सहित कामदेव की मूर्त्ति सिंदूर और हलदी से लिखे अथवा सुवर्ण की मूर्त्ति स्थापन करे ऐसी मूर्त्ति बनावै कि अप्सरा जिसकी सेवा में चारों ओर स्थित हैं विद्याधरी हाथ जोड़े संमुख खड़ी हैं गन्धर्व नृत्य कररहे हैं इसप्रकारकी मूर्त्ति बनाय मध्याह्न के समय गन्ध पुष्प धूप दीप अनेक प्रकार के नैवेद्य और ताम्बूल आदि उपचारों करके (नमोवामायकामाय देवदेवाय मूर्त्तये । ब्रह्मविष्णुशिवेन्द्राणां मनःक्षोभकराय वै) इस मन्त्र से पूजन करे इस प्रकार स्त्री कामदेवका पूजन कर वस्त्र माला भूषण आदि से अपने पतिका पूजन करे और उसको साक्षात् कामदेव जाने रात्रि को जागरण कर उत्सव करै सबको गन्ध ताम्बूल पुष्पमाला आदि देवै और शूद्रों को मद्य देकर बड़ा उत्सव करै इस विधि से जो प्रतिवर्षकामोत्सव करै वह सुभिक्ष क्षेम आरोग्य यश लक्ष्मी सुख पाता है और विष्णु ब्रह्मा सूर्य चन्द्रआदि ग्रह कामदेव वसंत और सब ब्रह्मर्षि यक्ष गन्धर्व असुर राक्षस सुपर्ण नाग पर्वत आदि उस पर प्रसन्न हो उसको सुख देते हैं कभी उसको शोक नहीं होता वसन्तऋतु में रति प्रीति वसन्त मलयानिल आदि अपने

परिवार सहित कामदेवका जो नारी भक्तिसे पूजनकरै वह सौभाग्यरूप और सुख पाती है ॥

एकसौचौबीस का अध्याय ॥

भूतमाता के उत्सवका विधान ॥

राजा युधिष्ठिर पूछते हैं कि हे श्रीकृष्णचन्द्र! सब ग्रामों में और नगरों में लोक भूतमाता का उत्सव करते हैं नाचते गाते हैं उन्मत्तकी भांति प्रलाप करते हैं भूमिपर लोटते हैं अंग भंग करते हैं यह उत्सव शास्त्रोक्तहै कि लौकिकही है आप इसहमारे सन्देहको निवृत्तकीजिये यह राजाका प्रश्न सुन श्रीकृष्णभगवान् कहनेलगे कि हे महाराज! एकसमय मन्दराचल में शिवजी पार्वतीकेसंग विहार करतेथे उनको एकान्त में उत्तम शय्यापर क्रीड़ाकरते दिव्यसौवर्ष व्यतीत हुए एक दिन आवश्यकके लिये पार्वतीजी बाहिर निकलीं उसीक्षण कृष्णवर्ण करालमुख पिंगलनेत्रा मुक्तकेशी मुण्ड माला धारे खट्वांग और कपाल हाथों में लिये व्याघ्रचर्म पहिने डमरु बजाती फूत्कार शब्द से आकाश को भरती अतिभयङ्कर एकनारी उनकेमूत्रसे उत्पन्नभई और हजारों उनकी परिचारिकाभी गजचर्म ओढ़े नाचती गाती ताली बजाती हँसती कपाल खट्वांग धारे प्रकटभईं इसी भांति ऐसेही रूपकरके युक्त और सिंह शार्दूल आदि समान जिनके मुख ऐसे हजारों भूतोंकरके सहित अतिभयङ्कर एकपुरुष शिवजी से भी उत्पन्न हुआ और वे दोनोंस्त्री पुरुष प्रसन्नहो इकट्ठे होगये तब प्रसन्न हो शिवजी ने पार्वती जी से कहा कि हे प्रिये! ये दोनों हम से और तुम से उत्पन्न मूर्त्तिमान् मानों बीभत्स रसही होवैं हास्य करनेहारे स्त्री पुरुष दोनों

सदृश हैं इनमें हम को कुछभी अन्तर नहीं देखपड़ता भूत-माता आत्रभांडा और अन्तकसंविधा ये तीन इन के नाम हैं जोपुरुष भक्तिसे इनका पूजन करेंगे वे पशु आरोग्य और सन्तान पावैंगे उनके घरमें भूत पिशाच शाकिनी राक्षस आदि कभी पीड़ा न करेंगे और उनके बालक आरोग्य रहैंगे इतना सुन राजा युधिष्ठिर ने पूछा कि हे श्रीकृष्णचन्द्र! भूतमाताकी पूजा किससमयमें और किस विधानसे करनी चाहिये यह आप वर्णनकरैं तब श्रीकृष्णभगवान् कहनेलगे कि हे महाराज! नामभेद कालभेद और क्रियाभेद से बालकों के हित करनेहारी इस भगवतीका पूजन सर्वत्र होता है ज्येष्ठ प्रतिपदासे लेकर पूर्णिमातक भगवती का पूजनकरै अनेक प्रकार के हास्य और बीभत्स तमाशे भगवती के आगे करावै धन लोभसे विश्वास देकर मार्ग में वेदपाठी ब्राह्मण इसने मारा अब इसको शूलपर चढ़ाते हैं इसने परस्त्री का स्पर्श किया इसलिये इसके हाथ काटेजाते हैं इसने स्वामिद्रोह किया इसलिये यह करोत से चीराजाताहै और रुधिर की धार शरीर से बहती है इस चोर को राजपुरुष बांधे लिये जाते हैं इस श्वेतकेश और श्वेतवस्त्रधारी ब्राह्मण को लड़के छेड़ते हैं और पत्थर मारते हैं यह विधवा स्त्री गर्भ रहने से पेट बड़ा होजाने से घरके बाहर क्यों नहीं निकलती इस कृपणको देखो कि धनहोकर भी अपने कुटुम्ब का भरण पोषण नहीं करता और मरा २ पुकारता है इस वृन्ताक के समान कृष्णवर्ण भीलको देखो कि वृक्ष के कोटरोंमेंसे शुकों के बच्चों को पकड़ २ आगमें भून खण्ड खण्ड कर सहत के साथ खाता है इस स्त्री को देखो कि केश खोले हाथ में छुरी

लिये हुंकार शब्द करती हुई काला कज्जल पहिने सूप बजावती योगिनी की भांति नाचती है इस प्रकार के तमाशे भगवती के आगे नित्य करावै नवमी अथवा एकादशी को दीपक प्रज्वलित कर बड़े उत्सव से भगवती के समीप लेजाय रक्षा वाले पुरुष साथजावैं आगे २ सूप बजातेचलैं यह सर्वार्थ साधक दीपक वीरचर्या में कहा है इस प्रकार पूर्णिमातक प्रदोष के समय दीप निकालै और द्वादशी के दिन भूतमाता का बड़ा उत्सव करै इस प्रकार अनेक प्रकार के हास्यदायक तमाशे और अनेक प्रकार के उत्सवों से भूतमाता का पूजन करैं वे सपरिवार वर्षभर प्रसन्न रहते हैं कोई विघ्न उनके घरमें नहीं होता ॥

एकसौ पचीसका अध्याय ॥

रक्षाबन्धन का विधान ॥

राजा युधिष्ठिर कहते हैं कि हे श्रीकृष्णचन्द्र ! सब पाप और अमङ्गल का नाश करनेहारा रक्षाविधान आप वर्णन करैं जिसके एकबार करने से वर्षभर रक्षारहे और भूत प्रेत पिशाच आदि धर्षण न करें यह राजा का वचन सुन श्रीकृष्ण भगवान् कहने लगे कि हे महाराज ! इसमें हम प्राचीन इतिहास वर्णन करते हैं आप श्रवण करैं पूर्व काल में बारह वर्ष पर्यंत देवता और दैत्यों का युद्धभया उसमें देवता पराजितहुये इन्द्रभी अपनी नगरी अमरावती में प्राण बचाने के लिये आयछिपे दानवराजने तीनलोक वशकरलिये और यह आज्ञा सब देवता और मनुष्योंकोदी कि मेरा यजन करो मेरी स्तुतिकरो मेरा पूजनकरो जो मेरी इस आज्ञा का उल्लंघन करेगा वही वध्यहोगा दैत्यराज की इस आज्ञा से यज्ञ

सदृश हैं इनमें, हम को कुछभी अन्तर नहीं देखपड़ता भू
माता भ्रातृभांडा और अन्तकसंविधा ये तीन इन के न
हैं जोपुरुष भक्तिसे इनका पूजन करैंगे वे पशु आरोग्य अं
सन्तान पावैंगे उनके घरमें भूत पिशाच शाकिनी राक्ष
आदि कभी पीड़ा न करैंगे और उनके बालक आरोग्य र
गे इतना सुन राजा युधिष्ठिर ने पूछा कि हे श्रीकृष्णचन्
भूतमाताकी पूजा किससमयमें और किस विधानसे कर
चाहिये यह आप वर्णनकरैं तब श्रीकृष्णभगवान् कहनेल
कि हे महाराज! नामभेद कालभेद और क्रियाभेद से बाल
के हित करनेहारी इस भगवतीका पूजन सर्वत्र होता है ज्ये
प्रतिपदासे लेकर पूर्णिमातक भगवती का पूजनकरै अने
प्रकार के हास्य और बीभत्स तमाशे भगवती के आगे कर
धन लोभसे विश्वास देकर मार्ग में वेदपाठी ब्राह्मण इस
मारा अब इसको शूलपर चढ़ाते हैं इसने परस्त्री का स्प
किया इसलिये इसके हाथ काटेजाते हैं इसने स्वामिद्रो
किया इसलिये यह करोत से चीराजाताहै और रुधिर
धार शरीर से बहती है इस चोर को राजपुरुष बांधे लि
जाते हैं इस श्वेतकेश और श्वेतवस्त्रधारी ब्राह्मण को लड़क
छेड़ते हैं और पत्थर मारते हैं यह विधवा स्त्री गर्भ रहने से
पेट बड़ा होजाने से घरके बाहर क्यों नहीं निकलती इस
कृपणको देखो कि धनहोकर भी अपने कुटुम्ब का भरण
पोषण नहीं करता और मरा २ पुकारता है इस वृन्ताक के
समान कृष्णवर्ण भीलको देखो कि वृक्ष के कोटरोंमेंसे शुकों
के बच्चों को पकड़ २ आगमें भून खण्ड खण्ड कर सहत के
साथ खाता है इस स्त्री को देखो कि केश खोले हाथ में छुरी

लिये हुंकार शब्द करती हुई काला कम्बल पहिने सूप बजा-वती योगिनी की भांति नाचती है इस प्रकार के तमाशे भग-वती के आगे नित्य करावै नवमी अथवा एकादशी को दीपक प्रज्वलित कर बड़े उत्सव से भगवती के समीप लेजाय रक्षा वाले पुरुष साथजायँ आगे २ सूप बजातेचलैं यह सर्वार्थ साधक दीपक वीरचर्या में कहा है इस प्रकार पूर्णिमातक प्रदोष के समय दीप निकालै और द्वादशी के दिन भूतमाता का बड़ा उत्सव करै इस प्रकार अनेक प्रकार के हास्यदायक तमाशे और अनेक प्रकार के उत्सवों से भूतमाता का पूजन करैं वे सपरिवार वर्षभर प्रसन्न रहते हैं कोई विघ्न उनके घरमें नहीं होता ॥

एकसौ पचीसका अध्याय ॥

रक्षाबन्धन का विधान ॥

राजा युधिष्ठिर कहते हैं कि हे श्रीकृष्णचन्द्र ! सब पाप और अमङ्गल का नाश करनेहारा रक्षाविधान आप वर्णन करैं जिसके एकबार करने से वर्षभर रक्षारहै और भूत प्रेत पिशाच आदि धर्षण न करैं यह राजा का वचन सुन श्री-कृष्ण भगवान् कहने लगे कि हे महाराज ! इसमें हम प्राचीन इतिहास वर्णन करते हैं आप श्रवण करैं पूर्व्व काल में बारह वर्ष पर्यंत देवता और दैत्यों का युद्धभया उसमें देवता परा-जितहुये इन्द्रभी अपनी नगरी अमरावती में प्राण बचाने के लिये आयछिपे दानवराजने तीनलोक वशकरलिये और यह आज्ञा सब देवता और मनुष्योंकोदी कि मेरा यजन करो मेरी स्तुतिकरो मेरा पूजनकरो जो मेरी इस आज्ञा का उल्लं-घनकरैगा वही वध्यहोगा दैत्यराज की इस आज्ञा से यज्ञ

उत्सव देवपूजा आदि निवृत्तहुये स्वाहा स्वधा वषट् इत्यादि शब्दकहीं कानमें न पड़ते थे सबने वेद पढ़ना छोड़दिया सब संसारमें अव्यवस्था होगई इससे इन्द्र और भी निर्बल हुये इन्द्रको हीनवल देख दैत्यों ने अमरावतीमें भी न टिकने दिया तब इन्द्र व्यग्रहो बृहस्पति के समीपगये और उन से यह कहा कि हे देवगुरो! अब हम स्वर्ग में ठहर नहीं सकते इसलिये यही विचार है कि फिर दैत्यों के साथ युद्ध करैं जय पराजय तो ईश्वर के आधीन है परन्तु उत्साह पूर्वक युद्ध करना अपने आधीन है थोड़ी देरभी प्रज्वलित होना अच्छा और बहुत काल तक सिलगते २ धुआं करना कुछ नहीं देवैश्वर्य कर्म के आधीन है और कर्म पौरुष को कहते हैं इसलिये अब हम पौरुष करैं तो अवश्यही कल्याणहोय यह इन्द्र का वचन सुन बृहस्पति बोले कि हे देवराज! यह पौरुष का समय नहीं है देशकाल का विचार किये बिन जो काम किये जाते हैं वे सफल नहीं होते और उनमें एक प्रकार का अनर्थ उत्पन्न होजाता है तब इन्द्र ने फिर कहा कि आप यथार्थ कहते हैं परन्तु जिसकार्य में उत्साह होय वह अवश्यही सिद्धहोता है जो गुण दोष विचार कर कार्य का आरम्भ करते हैं वे अवश्यही मनोवांछित फल पाते हैं इस प्रकार इन्द्र और बृहस्पति का संवाद देख शचीने इन्द्र सेकहा कि आज चतुर्दशी है इसलिये आप युद्धसे निवृत्तरहैं कल मैं आपके रक्षा बांधूँगी जिससे अवश्य आपका जय होगा इन्द्रने भी यह शची का वचन अङ्गीकार किया दूसरे दिन शचीने इन्द्र के हाथ में रक्षापोटली बांधी और बड़ा उत्सव किया ब्राह्मणों से स्वस्तिवाचन कराय ऐरावत हाथीपर चढ़

इन्द्र युद्ध के लिये निकले और दैत्यसेना में जाय अपना नाम सुनाय बाणों से शत्रुओं के शिर काटनेलगे दैत्य भी सन्नद्ध हो युद्ध करनेलगे परन्तु रक्षा के प्रभाव से इन्द्र के आगे न ठहर सके कोई समुद्र में घुसे कोई पाताल को गये कई वहां हीं मारेगये इस प्रकार दानवों को पराजय दे फिर इन्द्र ने राज्य पाया और देवताओं सहित त्रैलोक्य का पालन करने लगा दानवराज भी युद्ध में हार शुक्र के समीप गये और उन से कहा कि हे दैत्य गुरो! बड़े आश्चर्य की बात है कि इन्द्र ने हम को जीतलिया इस से यह जाना कि दैव ही बलवान् है बल पौरुष आदि सब वृथा हैं यह दानवेन्द्र का वाक्य सुन शुक्राचार्य्य ने कहा कि हे दैत्यराज! इस में आप विषाद न करें युद्ध में जय पराजय होते ही रहते हैं अब तुम इन्द्र के साथ सन्धि करलो शची की रक्षा के प्रभाव से इस समय इन्द्र को कोई नहीं जीतसक्ता एक वर्ष व्यतीत करो पीछे सब कल्याण होगा यह शुक्र का वचन सुन शोक त्यागकर सब दानव काल प्रतीक्षा करनेलगे यह हमने पुत्र आरोग्य धन सुख और विजय को देनेहारा रक्षा का प्रभाव संक्षेप से वर्णन किया है इतनी कथा सुन राजा युधिष्ठिर ने पूछा कि हे श्रीकृष्णचन्द्र! किस तिथि को और किस विधि से रक्षाबन्धन करना चाहिये यह आप वर्णन करें आप के मुख से अति विचित्र और बहुत अर्थ करकेयुक्त कथा सुनते २ हमको तृप्ति नहीं होतीहै यह राजा का वचन सुन श्रीकृष्णभगवान् कहने लगे कि हे महाराज! श्रावणी पूर्णिमा को प्रभात उठ शौच दन्तधावन आदि कर श्रुतिस्मृति विधान से स्नान करै देवता और पितरों का तर्पण कर उपाकर्म विधान

से ऋषि तर्पण करै शूद्र होय तो मन्त्र रहित स्नान दान आदि कर्म करै पीछे मध्याह्न के अनन्तर कपास के अथवा अलसी के वस्त्र में अक्षत श्वेत सर्षप और सुवर्ण की रक्षापोटली बनाय अंगण में गोबर का चौका लगाय उस के बीच मण्डल रच मण्डल में पीठ रख पीठ के ऊपर उत्तमपात्र में पोटली स्थापन करै वहां ही मन्त्री पुरोहित आदि सहित राजा बैठे वेश्या नृत्य करैं अनेक प्रकार के बाजे बजैं फिर हवन और शान्ति कर (येनबद्धोबलीराजा दानवेन्द्रोमहाबलः । तेनत्वांप्रतिबध्नामि रक्षेमाचलमाचल) इस मन्त्र से रक्षापोटली को पुरोहित राजा के दक्षिण हाथ में बांधे पीछे राजा वस्त्र भोजन और दक्षिणा से ब्राह्मणों का पूजन करै यह रक्षाबन्धन चारों वर्णों को करना चाहिये इस विधि से जो रक्षाबन्धन करावै वह वर्ष भर सुखी रहता है और पुत्र पौत्र धन आदि सब पदार्थ पाता है ॥

एकसौ छब्बीसका अध्याय ॥

महानवमी का विधान ॥

श्रीकृष्णभगवान् कहते हैं कि हे महाराज ! सब तिथियों में उत्तम महानवमी तिथि है वर्ष भर के सुख के लिये भूत प्रेत पिशाचों की निवृत्ति के अर्थ सब प्रकार के मङ्गल मिलने के लिये और भगवती की प्रसन्नता के हेतु सब मनुष्यों को और विशेष करके राजाओं को महानवमी का उत्सव करना चाहिये इतना सुन राजा युधिष्ठिर ने पूछा कि हे श्रीकृष्णचन्द्र ! यह महानवमी कब से प्रवृत्त भई है यशोदा के गर्भ से भगवती उत्पन्न भई तबसे ही इसकी प्रवृत्ति है कि पहिले सत्ययुग आदि में भी थी और इस तिथि को जो बहुत जीव मारे जाते हैं उन की क्या

गति होती है और मारनेवाला किस गतिको प्राप्तहोता है यह सब आप वर्णन करें यह राजा का वचन सुन श्रीकृष्णभगवान् कहने लगे कि हे महाराज ! वह परम शक्ति सर्वव्यापिनी भावगम्या अनंता और लोकविश्रुता है कला काली सुषुम्णा सर्वमङ्गला माया कात्यायिनी दुर्गा चामुंडा शङ्करप्रिया देवी परमेश्वरी भवानी शिवा इत्यादिनामों से और अनेक रूपों से सर्वत्र पूजन करीजाती है देव दानव राक्षस गंधर्व नाग यक्ष किन्नर नर आदि सब प्रति नवमी को उसका पूजन करते हैं और सृष्टि के आरम्भ से उसका पूजन चला आया है आश्विन के शुक्लपक्ष में अष्टमी को मूल नक्षत्र होय उस दिन नवमी आजाय उसका नाम महानवमी है कन्या के सूर्य में मूल नक्षत्र युक्त शुक्लाष्टमी को नवमी होय वह महानवमी त्रैलोक्य में दुर्लभ है आश्विन शुक्ल की अष्टमी और नवमी को जगन्माता श्रीभगवती का पूजन करने से सब शत्रुओं को जीतता है वह तिथि पुण्या पवित्रा धर्म और सुखको देनेहारी है उस दिन मुण्डमालिनी चामुण्डा का अवश्य पूजन करना चाहिये उस दिन जो महिष मेष आदि जीव बलि दिये जाते हैं वे सब स्वर्ग को जाते हैं और बलिदेनेहारे को पाप नहीं होता जैसी प्रसन्नता महिष मेष आदि की बलिसे विंध्यवासिनी श्रीभगवती की होती है ऐसी पुष्प धूप दीप विलेपन नैवेद्य आदि से नहीं होती भवानी के आंगन में जो महिष आदि मारे जाते हैं वे स्वर्ग में जाय अप्सराओं के प्रिय वीर होते हैं सब कल्प और मन्वंतरों में इस नवमीके दिन सब देवता दैत्य आदि अनेक प्रकार के उपचार और उपहारों करके भगवती का पूजन करते हैं और तीनोंलोकों में अवतरा

ले ले कर मर्यादा का पालन भगवती करती है वही भगवती यशोदा के गर्भ से उत्पन्न हो कंस के मस्तक पर पांव रख आकाश को गई हमने उस भगवती को विंध्याचल में स्थापन कर फिर पूजा का प्रचार किया यह भगवती का उ पहिलेसेही प्रसिद्ध था परन्तु सब जीवों के उपकार के और सब उपद्रव शान्तहोने के लिये हमने अपनी भगि भगवती की महिमा विशेष करके प्रसिद्ध करी विंध्यवासि भगवती के स्थान में नवरात्र तीन रात्र एक रात्र उपवास अथवा नक्तव्रत कर अनेक प्रकार के उपयाचितों से भगवती का आराधन करै ग्राम २ में नगर २ में घर २ में और वन २ में स्नान कर प्रसन्न हो भक्ति पूर्वक ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य शूद्र स्त्री आदि सब भगवती का पूजन करैं और विशेष करके राजाओं को यह उत्सव करना चाहिये अब हम इस का विधान कहते हैं जय की इच्छावाला राजा प्रतिपदा से अष्टमी पर्यंत लोहाभिसार कर्म करै पहिले पूर्वोत्तर प्रागभूमि में नौ अथवा सात हाथ लम्बा चौड़ा पताकाओं से अलंकृत मण्डप बनाय तीन मेखला और अश्वत्थपत्राकार योनि से भूषित अग्निकोण में अतिसुन्दर एक हाथ का कुण्ड बनावै पीछे राज्य के अंग छत्र चामर आदि और सब शस्त्र मण्डप में लाकर अधिवासनकरै शुचि ब्राह्मण स्नान कर शुक्लवस्त्र पहिन सबका पूजन करै पूर्वकाल में बड़ा बलवान् लोह नाम दानव हुआ उसको देवताओं ने मार खंड किया पृथिवी में जितना लोह देख पड़ता है सब उसके अंग से उत्पन्न हुआ है तबसेही यह लोहाभिसार कर्म राजाओं को विजय प्राप्त होने के अर्थ ऋषियों ने प्रवृत्त किया है घृत

संयुक्त पायस का हवन कर हवनशेष हाथी और घोड़ों को खिलाय सब को अलंकृत कर नगरमें घुमावै राजा भी स्नान कर राजचिह्नों का नित्य पूजन करै हाथी घोड़ों के आगे वाद्य बजते चलैं अब हम पुराणोक्त पूजामन्त्र कहते हैं जिन करके पूजन करने से कीर्ति आयु यश और बलकी प्राप्तिहो-तीहै (यथाम्बुदश्छादयति शिवायेमांवसुन्धराम् । तथाच्छादयराजानं विजयारोग्यवृद्धये) छत्रमन्त्रः (शशाङ्ककरसंकाशक्षीरडिण्डीरपाण्डुर । प्रोत्सारयाशु दुरितं चामरामरदुर्लभ) चामरमन्त्रः (असिर्विशसनः खड्ग स्तीक्ष्णधारो दुरासदः । श्रीगर्भोविजयश्चैव धर्मधारस्तथैवच ॥ इत्यष्टौतव नामानिस्वयमुक्तानि वेधसा । नक्षत्रंकृत्तिकान्ते तु गुरुर्देवोमहेश्वरः ॥ हिरण्यञ्चशरीरंते धातादेवोजनार्दनः । पितामहो महादेवस्त्वां पालयतु सर्वदा) खड्गमन्त्रः (शर्मप्रदस्त्वं समरे धर्मकामयशोर्थदः । रथिनामर्थनीयोसि चर्मानघ नमोस्तुते) चर्ममन्त्रः (सर्वायुधमहामात्र सर्वदेवारिसूदन । चापमांसर्वदा रक्ष साकंशायकसत्तमैः) चापमन्त्रः (सर्वायुधानां प्रथमं निर्मितासि पिनाकिना । शूलायुधाद्विनिष्कृष्य कृत्वामुष्टिग्रहंशुभम् ॥ चण्डिकायाः प्रदत्तासि सर्वदुष्टनिबर्हिणि । तयाविस्तारिताचासिदेवानांप्रतिपादिता ॥ सर्वसत्त्वाङ्गभूतासिसर्वासुरनिबर्हिणी । छुरिके रक्ष मां नित्यंशान्ति यच्छ नमोस्तुते) छुरिकामन्त्रः (हुतभुग्वसवोरुद्रा वायुः सोमो महर्षयः । नागकिन्नरगन्धर्वयक्षभूतगणा ग्रहाः ॥ प्रमथास्तु सहादित्यैर्भूतेशो मातृभिः सह । शक्रः सेनापतिः स्कन्दो वरुणश्चाश्रितस्त्वयि ॥ प्रदहन्तु रिपून्सर्वान् राजाविजयमृच्छतु । यानिप्रयुक्तान्यरिभिरायुधानिसमन्ततः ॥ पतन्त

परिशत्रूणां हतानि तव तेजसा । हिरण्यकशिपोर्युद्धेयुद्धेदेवा
सुरेतथा ॥ कालनेमिवधेयुद्धे युद्धेत्रिपुरघातने । शोभितासि
तथैवाद्य शोभयास्मांश्च संस्मर ॥ नीलांश्वेतामिमां दृष्ट्वा
नश्यन्त्वाशु नृपारयः । व्याधिभिर्विविधैर्घोरैः शस्त्रैश्चयुधिनि
र्जिताः ॥ सद्यः स्वस्थाभवन्तिस्म त्वद्वातेनायमार्जिताः । पूत
नारेवतीनाम्नाकालरात्रीति सा स्मृता ॥ दहत्वाशु रिपून्सर्वान्
पताकेत्वंमयार्थिता) पताकामन्त्रः (प्रोत्सारणायदुष्टानांसा
धुसंरक्षणायच । ब्रह्मणानिर्मितश्चासि व्यवहारप्रसिद्धये ॥
यशो देहि सुखंदेहि जयदो भव भूपतेः । ताडयस्व रिपून्सर्वान्
हेमदण्डनमोस्तुते) कनकदण्डमन्त्रः (दुन्दुभेत्वंसपत्नानां
घोरोहृदयकम्पनः । भवभूमिपसैन्यानांतथाविजयवर्द्धनः ॥
यथाजीमूतघोषेण प्रहृष्यन्ति च बर्हिणः । तथास्तु तव शब्देन
हर्षोऽस्माकं मुदावहः ॥ यथा जीमूतशब्देन स्त्रीणां त्रासोभि
जायते । तथैव तवशब्देन त्रस्यन्त्वस्मद्द्विषोरणे) दुन्दुभि
मन्त्रः (विजयोजयदोजेता रिपुहन्ताशुभंकरः । दुःखहाध
र्मदःशान्तः सर्वारिष्टविनाशनः ॥ एतेष्टौसन्निधौयस्मात्तव
सिंहामहाबलाः । तेनसिंहासनेतित्वं वेदैर्मन्त्रैश्चमीयसे ॥ त्व
यिस्थितः शिवः शान्तस्त्वयिशक्रः सुरेश्वरः । त्वयिस्थितोह
रिर्देवस्त्वदर्थं तप्यते तपः ॥ नमस्ते सर्वतोभद्र भद्रदो भव भू
पतेः । त्रैलोक्यजयसर्वस्व सिंहासननमोऽस्तुते) सिंहास-
नमन्त्रः (कुलाभिजनजात्याच लक्षणैर्व्यञ्जनोत्तमैः । भर्त्ता
रमाभिरक्षत्वं शिवंतवभवेदिति ॥ कशाघातमधिष्ठानं क्षम
स्वतुरगोत्तम । गन्धर्वकुलजातस्त्वं माभूयाः कुलदूषकः ॥
ब्राह्मणः सत्यवाक्येन सोमस्यवरुणस्यच । प्रभावाच्चहुताश
स्य वर्द्धस्वत्वंतुरङ्गम ॥ तेजसाचैवसूर्यस्य मुनीनांतपसात

धा। रुद्रस्य ब्रह्मचर्येण पवनस्य बलेनच ॥ स्मरत्वं राजपुत्रं च कौस्तुभं च मणिं स्मर । सुरासुरैर्मथ्यमानक्षीरोदादमृतादिभिः ॥ जातउच्चैःश्रवाः पूर्वं तेन जातोसि तत्स्मर । या गतिर्ब्रह्महागच्छेन्मातृहापितृहातथा ॥ भूमिहान्तृतवादीचक्षत्रियश्च पराङ्मुखः । सूर्याचन्द्रमसौवायुर्यावत्पश्यन्ति दुष्कृतम् ॥ व्रजत्वं तां गतिंक्षिप्रं तच्चपापंभवेत्तव । विकृतिंयदिगच्छेथायुद्धाध्वनि तुरङ्गम । रिपुंविजित्यसमरे सहभर्त्रासुखी भव) अश्वमन्त्रः (शक्रकेतो महावीर्य सुपर्णस्त्वय्युपाश्रितः । पतत्रिराड्वैनतेयोत थानारायणध्वजः ॥ काश्यपेयोरुगश्नाता नागारिर्विष्णुवाहनः । अप्रमेयोदुराधर्षोरणेदेवारिसूदनः ॥ गरुत्मान्मारुतगतिस्त्वयि सन्निहितोयतः । सासिचर्मायुधान्योधान् रक्ष त्वं च रिपून्दह) ध्वजमन्त्रः (कुमुदैरावणो पद्मः पुष्पदन्तोथवामनः । सुप्रतीकोञ्जनो नील एतेष्टौ देवयोनयः ॥ तेषांपुत्राश्चपौत्राश्चवनान्येतेसमाश्रिताः । भद्रोमन्दोमृगश्चैव गजः संकीर्णएवच ॥ वनेवने प्रसूतास्ते स्मरयोनिंमहागज । पान्तुत्वांवसवोरुद्रा आदित्याः समरुद्गणाः । भर्त्तारंरक्षनागेन्द्र समूहः प्रतिपाल्यताम् ॥ अवाप्नुहिजयंयुद्धे गमने स्वस्तितेव्रज । श्रीस्तेसोमाद्बलंविष्णोस्तेजः सूर्याज्जवोनिलात् ॥ स्थैर्यं मेरोर्जयंरुद्राद्यशोदेवात्पुरन्दरात् । युद्धे रक्षन्तु नागाश्चादिशश्चसहदैवतैः ॥ अश्विनौसहगन्धर्वैः पान्तुत्वांसर्वतः सदा) हस्तिमन्त्रः इनमंत्रों से गन्ध पुष्पादि करके सब राजचिह्न और शस्त्रों का पूजन करै अष्टमी के दिन पूर्वाह्न में स्नानकर नियम ग्रहणकरै और सुवर्ण चांदी मृत्तिका पाषाण काष्ठ आदि किसी वस्तु की दुर्गा मूर्त्ति बनाकर उत्तम स्थान के बीच सिंहासन के ऊपर स्थापन करै कुंकुम चन्दन सिन्दूर आदि से उस मूर्त्ति को चर्चित कर कुमुद कमल आ-

दि पुष्प चढ़ाय धूप दीप नैवेद्य मांस सुरा बलि आदि निवेदन करै उस समय सब प्रकार के बाजे बजैं वन्दीजन स्तुति पढ़ैं बहुत से मनुष्य छत्र चामर आदि राजचिह्न लेकर चारों ओर खड़े होयँ दान युक्त राजा पुरोहित सहित (जयन्ती मङ्गलाकाली भद्रकाली कपालिनी । दुर्गाक्षमा शिवाधात्री स्वाहा स्वधा नमोस्तुते ॥ अमृतोद्भवंश्रीवृक्षं महादेवप्रियंसदा । बिल्वपत्रंप्रयच्छामि पवित्रंतेम्बिकेसुदा) इस मन्त्र से बिल्वपत्रयुक्त अर्घ्यदेवै और भगवती को उस दिन द्रोणपुष्प भी चढ़ावै असुरों के साथ युद्ध करने से जो क्षत भगवती के अंग में भये थे वे सब द्रोणपुष्प से अच्छे हुये इसलिये द्रोण पुष्प भगवती को प्रिय है फिर शत्रुओं के वधके लिये खड्ग को प्रणाम कर सुभिक्ष राज्य और अपना विजय मांगै और हृदयमें इसप्रकार भगवती का ध्यान करै बहुत भुजाओं कर के युक्त महिषासुरका वध करनेहारी कुमारी स्वरूप सिंहपर चढ़ी खड्गउठाये घण्टा ध्वनि करती युद्ध के मध्य में विराजमान है पीछे जय २ शब्द कर यह स्तुति पढ़ै (सर्वमङ्गलमाङ्गल्ये शिवे सर्वार्थसाधिके । उमेत्रियम्बके गौरि नारायणिनमोस्तु ते ॥ कुंकुमेनसमालब्धे चन्दनेन विलेपिते । बिल्वपत्रकृतापीडे दुर्गेहं शरणंगतः) इस भांति अष्टमी को सब पूजा आदि कर रात्रि को जागरण करै नट वेश्या आदि का बड़ा उत्सव करावै इस प्रकार रात्रि व्यतीत कर प्रभात होतेही सौ पचास अथवा पच्चीस महिष और मेषकी बलिदेवै और सुरा आसव के कुम्भों से परमेश्वरी का तर्पण करै वह सब कापालिकों को देवै और दासी दास बन्धु और भगवती के भक्तों को सब बांट कर नवमी के अपराह्न समय में रथके बीच भगवती की प्रतिमा

स्थापन कर सारे राज्य में भ्रमण करावे अपनी सेनासहित राजा साथ रहै दीपवृक्ष जलते चलैं नंगे खड्ग और धनुषधारे बड़े बड़े वीरपुरुष रथके ओर पास चलैं शङ्ख पटह आदि बाजे बजैं वेश्या चारणआदि नृत्यकरते चलैं और एकवीर खड्गधारी उपवासकर मांस रक्त जल अन्न गन्ध पुष्प अक्षत आदि स-हित बलिदिशा और विदिशाओं में (बलिंगृह्णन्त्विमंदेवा आदित्यावसवस्तथा । मरुतश्चाश्विनौ रुद्राः सुपर्णाः पन्नगाग्रहाः ॥ असुरायातुधानाश्चपिशाचोरगराक्षसाः । डाकिन्योयक्षवेतालाः योगिन्यः पूतनाः शिवः ॥ जम्भकाः सिद्धगन्धर्वा मालाविद्याधरानगाः । दिक्पालालोकपालाश्चयेचविघ्नविनायकाः ॥ जगतांशान्तिकर्त्तारोब्रह्माद्याश्चमहर्षयः । माविघ्नंमाचमेपापं मासन्तुपरिपन्थिनः ॥ सौम्याभवन्तुतृप्ताश्च भूतप्रेताःसुखावहाः) इस मन्त्रसे देवै इस विधिसे रथमें अथवा पालकी में भगवती की प्रतिमा स्थापन कर सब राज्यमें घुमावै और सब विघ्न निवृत्तिके लिये भूतशांति करै जिस से यात्रा निर्विघ्न होय इस विधि से जो राजा अथवा और पुरुष भगवती की यात्रा करैं वे सब पापों से छुट भगवतीलोकको जाते हैं और कभी उनको शत्रु चौर ग्रह विघ्न आदि का भय नहीं होता भगवती के भक्त सदा आरोग्य सुखी भोगी और निर्भय होते हैं जो यह भगवती के उत्सवका विधान पढ़ै अथवा सुनै उसके भी सब अमंगल निवृत्तहोजाते हैं महिषासुर के मस्तकपर चरणरक्खे सिंहपर चढ़ी नंगी खड्ग हाथमें लिये सब भूषणों से भूषित श्रीदुर्गा का पूजन करनेहारे मनुष्य बड़े बड़े संकटों से भी उत्तीर्ण होजाते हैं ॥

एकसौसत्ताईसका अध्याय ॥

इन्द्रध्वजका विधान ॥

श्रीकृष्ण भगवान् कहतेहैं कि हे महाराज ! पूर्वकालमें देवासुर संग्राम के बीच इन्द्र के विजय के लिये ध्वजयष्टि बनाई और उसको सब देवता सिद्ध विद्याधर नाग आदिकों ने मेरु पर्वतपर स्थापनकर सब उपचारों से उसका पूजन किया अनेक प्रकार के भूषण छत्र घण्टा किंकिणी आदि से उसको अलंकृत किया उसको देखतेही दैत्य अस्तहोगये और देवताओं ने उनको पराजितकर स्वर्ग का राज्यपाया और दैत्य पातालको गये उस दिन से देवता उस इन्द्रध्वजयष्टिका पूजन और उत्सवकरते थे उसी अवसर में राजा उपरिचरवसु स्वर्ग में गया उसको प्रसन्न हो इन्द्र ने वह ध्वज दिया और कहा कि इसका तुम पूजन करो जिस से तुम्हारे राज्य के सब दोष निवृत्त होयँ और भी जो राजा प्रतिवर्ष इसका पूजन करैंगे उनके राज्य में क्षेम और सुभिक्ष रहैगा किसी प्रकारका उपद्रव न होगा यह इन्द्र का वचन सुन इन्द्रध्वज को ले राजा उपरिचरवसु अपने नगर में आया और प्रतिवर्ष इन्द्रध्वज का बड़ा उत्सव करने लगा अब हम इन्द्रध्वज के उत्सव का विधान कहते हैं बीसहाथ लम्बी दृढ़ और उत्तम काष्ठकी यष्टि बनावै और उसको विचित्र वस्त्रों से वेष्टितकर पीठों के ऊपर स्थापन करै पहिला पीठ श्वेतवर्ण कर्णिका युक्त चतुरस्र इन्द्र यम वरुण और कुबेर करके युक्त बनावै दूसरा रक्तचूर्ण करके वृत्तयुक्त षडस्र तीसरा श्वेतवर्ण अष्टास्र चौथा अति अरुण वर्ण वृत्त पांचवां शुक्लवर्ण अष्टकोण छठा कृष्णवर्ण बुद्बुद शोभितवृत्त सातवां शुक्लवर्ण अष्टकोण विद्याधरों करके युक्त

आठवां पीतवर्ण वृत्त वेष्टित चतुरस्र नवां लम्बा रक्तवर्ण और नवग्रहों युक्त दशवां शुक्लवर्ण और गणेश चन्द्रिका ब्रह्मा विष्णु और शिव सहित ग्यारहवां कृष्णवर्ण वृत्त यमराज युक्त बारहवां छत्राकार शुक्लवर्ण तेरहवां पीठ ध्वजा के तुल्य दीर्घ कुशा पुष्प माला घण्टा चामर आदि सहित बनाय उनके ऊपर ध्वजको स्थापन करै पीछे हवन कराय गुड़के अपूप और पायस ब्राह्मणों को भोजन कराय दक्षिणा दे धीरे धीरे उस ध्वजको खड़ाकरै और नौदिन अथवा सात दिन राजा बड़ा उत्सव करावै अनेक प्रकारके नाच तमाशे होयँ मल्लयुद्ध और कुक्कुट मेष आदि जीवोंका युद्धकरावै और वस्त्र भूषण आदि देकर सब का सम्मान करै रात्रि को जागरण करै ध्वजकी भलीभांति रक्षाकरै जो ध्वज पर काक बैठजाय तो दुर्भिक्ष होय उलूक बैठे तो राजा का मरणहोय और ध्वजके ऊपर कपोत बैठे तो दुर्भिक्ष पड़ै इस प्रकार इन्द्रध्वजका बड़ा उत्सव करै जो एकवर्ष करके दूसरे वर्ष न करसकै तो फिर बारहवें वर्षकरै ध्वजके अंग भंग होनेसे बड़ा उपद्रव होता है इसलिये सावधान हो उसकी रक्षाकरै इन्द्रध्वजका उत्थान कर भक्तिसे उसका पूजन करै जो प्रमाद से ध्वज गिरपड़ै अथवा टूटजाय तो सोने अथवा चांदी का ध्वज बनाय उसका उत्थापन और अर्चनकर शान्तिक पौष्टिक आदि कराय वह ध्वज ब्राह्मण को देवै फालसा ककड़ी नालिकेर कैथ बीजपूर नारङ्गी आदि फल और अनेक प्रकारके नैवेद्यों से इन्द्रध्वजका पूजन कर (वज्रहस्तसुराधिप देवराजपुरन्दर । क्षेमार्थंसर्वलोकस्य पूजेयम्प्रतिगृह्यताम्) यह मन्त्र पढ़ै और श्रवणसे भरणीपर्य्यंत पूजन करै।

के समय (सार्द्धसुरासुरगणैः पुरन्दर शतक्रतो। उपहारंगृहीत्वेमं सहेन्द्रध्वजगम्यताम्) इस मन्त्रसे विसर्जन करै इस विधिसे जो राजा इन्द्रध्वजकी यात्रा करै उसके राज्यमें यथेष्ट वृष्टिहोती है मृत्यु और ईतियोंका भयनहीं होता और वह राजा शत्रुओंको जीत चिरकाल राज्यभोग स्वर्गमें जाताहै और उसके देशमें कभी परचक्र भय नहीं होता॥

एकसौअट्ठाईसका अध्याय॥

दीपमाला की कथा और विधान॥

श्रीकृष्णभगवान् कहते हैं कि हे महाराज! पूर्वकाल में विष्णु भगवान् ने वामनरूपधार बलिको छला और इन्द्रको राज्य दिलाय बलि को पाताल में स्थापन किया और एक दिन उसके राज्यका नियतकिया कार्त्तिक की अमावास्या को दैत्य यथेष्ट चेष्टाकरते हैं और महीतल में उनका राज्य होता है राजायुधिष्ठिर पूछते हैं कि हे श्रीकृष्णचन्द्र! कौमुदी तिथि का विधान विशेष करके आप वर्णन करैं कि उस दिन दान क्यों देते हैं किस देवता का पूजन करते हैं और क्या क्रीड़ा करते हैं यह राजा का प्रश्न सुन श्रीकृष्णभगवान् कहने लगे कि हे महाराज! कार्त्तिक कृष्णचतुर्दशी को प्रभात के समय नरक का भय निवृत्त होने के लिये अवश्यही स्नान करना चाहिये अपामार्ग के पत्र शिर के ऊपर भ्रामणकर धर्मराज के नामों से तर्पणकरै यम धर्मराज मृत्यु और अन्तकका तर्पण कर देवताओं का पूजन कर नरक को दीप देवै और प्रदोष के समय शिव विष्णु ब्रह्मा आदि के मन्दिरों में कोष्ठागार चैत्य सभा नदी तट तड़ाग उद्यान वापी रथ्या बगीचे हस्तिशाला अश्वशाला आदि स्थानों में

और चामुण्डा बुद्ध भैरवआदि देवताओं के आलयों में दीपक प्रज्वलित करै अमावास्या के दिन प्रभात समय स्नान कर देवता और पितरों का पूजन तर्पण आदिकर पार्वण श्राद्ध करै और दही दुग्ध घृत और अनेक प्रकार के पक्वान्न ब्राह्मणों को भोजन कराय दक्षिणा देवै पीछे मध्याह्न के अनन्तर राजा अपने नगर में यह घोषणा करादेवै कि आज लोक में बलिका राज्य है सब यथेष्ट चेष्टाकरो नगरके लोक कलीं से अपने घरोंको शुभ्रकर वृक्ष पुष्प और वन्दनमाला आदिसे और नानाप्रकारके खिलौनों से भूषित करैं नगरके सब नर नारी उत्तम उत्तम वस्त्र भूषण पहिने कुंकुमका लेपन करैं ताम्बूल चर्वणकरैं [illegible] ड़ा और पान करैं परस्पर प्रेमसे तालीदेकर हँसैं नृत्य गीतआदि बड़ा उत्सव होय प्रदोषके समय बड़ी दीपमाला प्रज्वलितकरैं अनेक प्रकारके दीपवृक्ष खड़ेकिये जावें उस समय योजना नाम राक्षसी लोकमें विचरती है उसका भय निवृत्त होने के लिये नीराजन करैं इसप्रकार अति शोभित नगर की शोभा देखने के लिये आधीरात्रि के समय अपने मित्र और मन्त्री आदि सहित राजा निकलै और नगर की और बाज़ार की शोभा देखता देखता धीरे धीरे पैरोंसेही फिरै सारेनगर की रमणीयता देख और अपने ऊपर बलिराजा को सन्तुष्ट हुये मान अपने महलमें आवै उसी समय सब स्त्री अपने अपने घरसे मरु डिंडिम आदि बाजे बजाकर प्रसन्नहो अलक्ष्मी को निकालैं सारीरात्रि लोक उत्सवमें जगतेरहैं वेश्या आदि मार्गोंमें घूमैं ब्राह्मण आशीर्वाद देवैं और बड़ाभारी उत्सव नगर भर में सम्पूर्ण रात्रि रहै प्रभात होतेही वस्त्र भूषण आदिसे ब्राह्मणों को सन्तुष्ट कर औरोंको भोजन पान आदि

दिलाय मीठे वचनों से पण्डितों का सत्कार कर सामन्त आदिकों को ताम्बूल सिपाहियों को कण्ठभूषण और कङ्क और अपने समीपवर्ती सेवकों को अपने नामांकित भूष देकर सन्तुष्ट करै और मंचके ऊपर बैठ महिष वृष हाथी म... आदिका युद्ध और नट नर्त्तक चारण आदि के तमाशे राजा देखै गौ महिषी आदि को भूषित करै मध्याह्न के अनन्तर नगरसे पूर्व्वदिशा में ऊँचे स्तम्भ अथवा वृक्षोंपर कुश और काश की बनी मार्ग्गपाली बांधै फिर हवन कराय अपने प्रजाके हजार दोहजार मनुष्यों को भोजन करावै उससम राजाका नीराजन करै पीछे गौ वृष हाथी घोड़े राजा राज-पुत्र ब्राह्मण शूद्र आदि सब उस मार्गपाली का उल्लंघन करै इस मार्गपाली को बँधवानेवाला अपने दोनों कुलों का उद्धार करता है और इसको लंघन करनेवाले वर्षभर सुखी रहते हैं फिर भूमिपर पंचरंग से मण्डल लिख उसके बीच प्रसन्न मुख द्विभुज किरीट कुण्डल धारे कूष्माण्ड बाण जम्भ मुर आदि दैत्यों करके वेष्टित और अपनी रानी विन्ध्यावली सहित राजा बलिकी मूर्त्ति स्थापन कर उसका पूजन करै प-हिले अर्घ्य देकर कमल कुमुद गन्ध धूप अक्षत गुड़के अपूप मद्य मांस लेह्य दीप बलि आदिसे पूजन कर (ब-लिराज नमस्तुभ्यं विरोचनसुत प्रभो। भविष्येन्द्रसुराराते पूजेयम्प्रतिगृह्यताम्) यह मन्त्र पढ़ै इस प्रकार पूजन कर रात्रि को जागरण और नट नर्त्तक आदि का तमाशा क-रावै और भी नगरके लोग अपने अपने घर शय्यामें श्वेतत-ण्डुलों करके बलिका स्थापन कर फल पुष्प आदिसे पूजन करैं इस दिन बलिराजा के निमित्त जो कुछ दान देवै वह

अक्षयहोताहै और विष्णुभगवान्‌की प्रीति होतीहै यह तिथि विष्णुभगवान् ने प्रसन्नहो बलि को दी है उसी दिन से यह कौमुदीका उत्सव प्रवृत्त हुआहै यह तिथि सब उपद्रव विघ्न शोक आदि हरनेहारी है और धन पुष्टि सुख आदि देती है कुनाम भूमिका है और मुद हर्षको कहते हैं भूमिपर सबको हर्ष देनेसे इसका नाम कौमुदी हुआ जो राजा वर्ष भर में एकदिन बलिराजा का उत्सव करै उसके राज्य में रोग शत्रु मारी और दुर्भिक्ष का भय नहीं होता सुभिक्ष क्षेम आरोग्य और सम्पत्तिकी वृद्धि होती है इस कौमुदी तिथिको जो जिस भाव में रहै वह वर्ष उसको उसी भावमें बीतताहै रोवै तो रोदन करतारहै भोगसे भोग हर्षसे हर्ष स्वस्थता से स्वस्थता और इस दिन दीन रहनेसे वर्षभर दीनता रहती है इसलिये इस तिथिको हृष्ट और तुष्ट रहना चाहिये यह तिथि वैष्णवी है और दानवी भी है दीपमाला के दिन जो पुरुष भक्ति से राजा बलिका पूजन करैं उनको वह वर्ष आनन्द से व्यतीत होता है और सब मनोरथ उनके सिद्ध होते हैं॥

एकसौउनतीसका अध्याय॥

ग्रहयज्ञ, अयुतहोम और लक्ष होम का विधान॥

राजा युधिष्ठिर कहते हैं हे श्रीकृष्णचन्द्र! आप सर्वज्ञ हैं इसलिये सर्वकार्य सिद्ध होनेके अर्थ शान्तिक और पौष्टिक विधान कहें यह राजा का वचन सुन श्रीकृष्ण भगवान् कहनेलगे कि हे महाराज! धन आयुष् पुष्टि और शान्ति की इच्छा होय तो ग्रहयज्ञ करना चाहिये अब हम सब पुराणोंका सार ग्रहशान्ति का विधान संक्षेप से कहते हैं उत्तम दिन में ब्राह्मणों से स्वस्तिवाचन आदि कराय ग्रह और ग्रहों

के अधिदेवताओं को स्थापन कर होम का आरम्भ करै ग्रह यज्ञमें तीन प्रकार का होम होता है अयुत होम लक्ष होम और सब कामना सिद्धकरनेहारा कोटि होम। अब हम अयुतहोम युक्त नवग्रह यज्ञ का विधान कहते हैं। प्रथम ईशान कोण में उत्तम वेदी बनाय उसमें बत्तीस देवताओं का स्थापन करै सूर्य्य, चन्द्र, मंगल, बुध, गुरु, शुक्र, शनि, राहु और केतु ये नवग्रह हैं मध्यमें सूर्य्य दक्षिण में भौम उत्तर में गुरु ईशान में बुध पूर्व में शुक्र आग्नेय में सोम पश्चिम में शनि नैर्ऋत्य में राहु और वायव्यकोण में केतुका शुक्ल तंडुलोंकरके स्थापन करे शिव पार्वती स्कन्द हरि ब्रह्मा इन्द्र यम काल ये ग्रहों के अधिदेवता हैं शहद घृत दही अथवा पायस करके अष्टोत्तर-शत अथवा अट्ठाईस अट्ठाईस आहुति प्रत्येक देवता के नाम से देवै एक एक प्रादेश लम्बी सीधी और अव्रणसमिधा सब कर्म्मों में उत्तम होती हैं अपने अपने मन्त्र से समिधा होम करै आकृष्णेन० इमंदेवा० अग्निर्मूर्द्धा० उद्बुध्यस्व० बृहस्पते० अन्नात्० शन्नोदेवी० कयानः० केतुंकृण्वन्न० इत्यादि नवग्रहों के मन्त्र हैं प्रजापति सर्प ब्रह्मा विनायक वायु आकाश सावित्री लक्ष्मी उमा ये ग्रहों के प्रत्यधि देवता हैं इन सब का और अश्विनीकुमारों का आवाहन कर पूजनकरै सूर्य्य भौमका रक्तवर्ण सोम शुक्रका श्वेत बुध गुरु का पिङ्गल शनि राहुका कृष्ण और केतुका धूम्रवर्ण ध्यान करै इसी रङ्ग के वस्त्र और पुष्प ग्रहों को अर्पण करै गन्ध बलि और गुग्गुल का धूप सबको निवेदन करै गुड़ोदन घृत पायस संयाव घृत क्षीर दहीभात घृतोदन कृसर मांस और चित्रोदन क्रम करके सब ग्रहों को नैवेद्य लगावै ईशान

कोण में दही अक्षत पञ्च पल्लव पञ्चरत्न और दो वस्त्रों करके भूषित अव्रण कुम्भ स्थापन कर उस में गंगा आदि नदी समुद्र और सरोवरों युक्त वरुण का आवाहन करै गज अश्व रथ बल्मीक संगम ह्रद गोकुल इन स्थानों की मृत्तिका सर्वौषधि और भी सब सामग्री वहां स्थापन करै (सर्वे समुद्राः सरितः सरःप्रस्रवणानि च। आयान्तु यजमानस्य दुरितक्षयकारकाः) इस मन्त्र से कलश में आवाहन करै इसप्रकार आवाहन कर घृत यव तिल और धानों करके हवन का आरम्भ करै अर्क पलाश खदिर अपामार्ग पिप्पल उदुम्बर शमी दूर्वा और कुश ये ग्रहों की समिधा हैं इन से ग्रह ग्रहदेवता और ग्रहों के प्रत्यधि देवताओंके मंत्रोंकरके हवन करै हवनके अन्तमें अनेक प्रकारके वाद्योंके शब्द और मंगल गीतों सहित नये कुम्भों करके यजमान को स्नान करावै और (स्कन्दो गणेशो गिरिजा रमा वाणी शची तथा । सुरास्त्वामभिषिञ्चन्तु ब्रह्मविष्णुमहेश्वराः ॥ वासुदेवो जगन्नाथस्तथा सङ्कर्षणो विभुः । प्रद्युम्नश्चानिरुद्धश्च भवन्तु विजयाय ते ॥ आखण्डलोऽग्निर्भगवान्यमो वै निर्ऋतिस्तथा पुण्यजनेश्वरः । वरुणः पवनश्चैव धनदश्च तथा शिवः ॥ देवदानवगन्धर्वा यक्षराक्षसपन्नगाः । ऋषयो मनवो देवाः सिद्धा विद्याधरास्तथा ॥ देवपत्न्यो ध्रुवो नागा दैत्याश्चाप्सरसाङ्गणाः । अस्त्राणि सर्वशस्त्राणि राजानो वाहनानि च ॥ अष्टधायानि रत्नानि कालश्च ऋतवस्तथा । सरितः सागराः शैलास्तीर्थानि जलदानदाः ॥ एतेत्वामभिषिञ्चन्तु सर्वकामार्थसिद्धये) इन मन्त्रों से स्नान कर शुक्ल वस्त्र गन्ध मालाआदि से अलंकृत हो पत्नीसहित आसन पर बैठ ग्रहोंका पूजनकर कपिलागौ शंख अरुण वृष सुवर्ण

पीत वस्त्र श्वेत अश्व कृष्णा गो लोह और अज ये नवग्रहों को दक्षिणा चढ़ावै और क्रम से ये मन्त्र पढ़ै (कपिले सर्वदेवानां पूजनीयासिरोहिणि। तीर्थदेवमयी यस्मादतः शान्ति म्प्रयच्छ मे॥ शङ्खत्वंनिजशब्देन दैत्यविद्रावणस्सदा। विष्णोः प्रियोसि त्वमतः सदाशान्तिम्प्रयच्छ मे॥ धर्मस्त्वंवृषरूपेण जगदानन्दकारकः। अष्टमूर्त्तेरधिष्ठानमतः शान्तिम्प्रयच्छ मे॥ हिरण्यगर्भस्त्वमसि तथाबीजं विभावसोः। अनन्तपुण्यफलदमतः शान्तिम्प्रयच्छ मे॥ पीतवस्त्रयुगं यस्माद्वासुदेवस्य वल्लभम्। प्रसादात्तस्य विष्णोस्तदतः शान्तिम्प्रयच्छतु॥ कपिलासोमयुक्तस्त्वं यस्मादमृतसम्भवः। चन्द्रार्कवाहनो नित्यमतः शान्ति प्रयच्छ मे॥ यस्मात्त्वंपृथिवीरूपा धेनोर्वैकृष्णसञ्ज्ञिता। सर्वपापहरा नित्यमतः शान्तिम्प्रयच्छमे॥ यस्मादायसकर्माणि तवायत्तानिसर्वदा। लाङ्गलाद्यायुधादीनि तस्माच्छान्तिम्प्रयच्छ मे॥ यस्मात्त्वं छागःज्ञानामङ्गत्वेन व्यवस्थितः। योनिर्विभावसोर्नित्यमतः शान्तिम्प्रयच्छमे) ये मन्त्र पढ़ै पीछे हाथ जोड़कर (गवामङ्गेषु तिष्ठन्ति भुवनानि चतुर्दश। यस्मात्तस्माच्छिवं मे स्यादिह लोके परत्रच॥ यथानशून्यंशयनंकेशवस्याशिवस्यच। शय्यममाप्यशून्यास्तु तथाजन्मनिजन्मनि॥ यथारत्नेषुसर्वेषुसर्वेदेवाव्यवस्थिताः॥ तथाशान्तिम्प्रयच्छन्तु रत्नदानेनमेसुराः। यथाभूमिप्रदानस्य कलांनार्हन्तिषोडशीम्॥ दानान्यन्यानिमेशान्तिन्तथा भूमिः प्रयच्छतु) ये मन्त्र पढ़ गन्ध पुष्पमाला धूप दीप नैवेद्य वस्त्र सुवर्ण रत्न आदि करके भक्तिपूर्वक ग्रहों का पूजन करै इस में कभी वित्तशाठ्य न करै अब हम नवग्रहों के ध्यान कहते हैं (पद्मासनः पद्मकरः पद्मगर्भसम

द्युतिः । सप्ताश्वरथयुक्तश्च द्विभुजःस्यात् सदारविः ॥ श्वेतः श्वेताम्बरधरः श्वेताश्वः श्वेतभूषणः । गदापाणिर्द्विबाहुश्च वरदः स्यात्सदा शशी ॥ रक्तमाल्याम्बरधरो रक्तःशक्तिगदाधरः । चतुर्भुजोमेषगमो वरदःस्याद्धरासुतः ॥ पीतमाल्याम्बरधरः कर्णिकारसमद्युतिः । खड्गचर्मगदापाणिःसिंहस्थोवरदोबुधः ॥ पीताम्बरः पीतवपुः कुञ्जरस्थश्चतुर्भुजः । कमण्डलुधरो दण्डी वरदः स्यात्सदागुरुः ॥ श्वेताम्बरः श्वेतवपुस्तुरगस्थश्चतुर्भुजः । अक्षस्रक्कुण्डिकाधारी वरदःस्यात्सदाभृगुः ॥ इन्द्रनील द्युतिःशूली वरदो गृध्रवाहनः । बाणबाणासनधरो ध्यातव्योर्कसुतःसदा ॥ सदाशार्दूलवदनः खड्गीशूलीवरप्रदः । नीलसिंहासनस्थश्चराहुर्ध्येयः सदाबुधैः ॥ धूम्रादिवाहनाःसर्वे गदिनो विकृताननाः । गृध्रासनगता नित्यं केतवः स्युर्वरप्रदाः) यह ग्रहों का स्वरूप है इसके अनुसार ध्यानकरै और ऐसीही मूर्त्ति बना कर उनका पूजन करै हवनके लिये कुण्ड उत्तम लक्षणों करके युक्त और यथार्थ बनानाचाहिये मानहीन कुंड अनर्थ करनेहारा होता है अयुत होम से दशगुण आहुति और दक्षिणा लक्ष होम में होती है तीन मेखला और योनि करके भूषित चतुरस्र कुण्ड लक्ष होम के लिये ईशानकोण में बनावै और देवता स्थापन के लिये तीन वप्रों करके वेष्टित स्थंडिल बनावै उसके ऊपर तण्डुलों करके पूर्वोक्त रीति से आदित्याभिमुख सब देवता स्थापन करै कुम्भ स्थापन और हवन पूर्ववत् करै अग्नि में वसुधारा का पातनकरै और आग्नेय वैष्णव रौद्र महावैश्वानर आदि सूक्तसाम और ज्येष्ठसामका पाठ करावै यजमान को स्नान पूर्ववत् करावै वेही मन्त्र पढ़ै यजमान भी काम क्रोध त्याग शान्त चित्त हो ऋत्विजों को दक्षिणा देवै

पीत वस्त्र श्वेत अश्व कृष्णा गौ लोह और अज ये नवग्रहों को दक्षिणा चढ़ावै और क्रम से ये मन्त्र पढ़ै (कपिले सर्वदेवानां पूजनीयासिरोहिणि। तीर्थदेवमयी यस्मादतः शान्तिम्प्रयच्छ मे॥ शङ्खत्वंनिजशब्देन दैत्यविद्रावणस्सदा। विष्णोः प्रियोसि त्वमतः सदाशान्तिम्प्रयच्छ मे॥ धर्मस्त्वंवृषरूपेण जगदानन्दकारकः। अष्टमूर्त्तेरधिष्ठानमतः शान्तिम्प्रयच्छ मे॥ हिरण्यगर्भस्त्वमसि तथाबीजं विभावसोः। अनन्तपुण्यफलदमतः शान्तिम्प्रयच्छ मे॥ पीतवस्त्रयुगं यस्माद्वासुदेवस्य वल्लभम्। प्रसादात्तस्य विष्णोस्तदतः शान्तिम्प्रयच्छतु॥ कपिलासोमयुक्तस्त्वं यस्मादमृतसम्भवः। चन्द्रार्कवाहनो नित्यमतः शान्ति प्रयच्छ मे॥ यस्मात्वंपृथिवीरूपा धेनोर्वैकृष्णसञ्ज्ञिता। सर्वपापहरा नित्यमतः शान्तिम्प्रयच्छमे॥ यस्मादायसकर्माणि तवायत्तानिसर्वदा। लाङ्गलान्यायुधादीनि तस्माच्छान्तिम्प्रयच्छ मे॥ यस्मात्वं छागयज्ञानामङ्गत्वेन व्यवस्थितः। योनिर्विभावसोर्नित्यमतः शान्तिम्प्रयच्छमे) ये मन्त्र पढ़ै पीछे हाथ जोड़कर (गवामङ्गेषु तिष्ठन्ति भुवनानि चतुर्दश। यस्मात्तस्माच्छिवं मे स्यादिह लोके परत्रच॥ यथाऽशून्यंशयनंकेशवस्याशिवस्यच। शय्याममाप्यशून्यास्तु तथाजन्मनिजन्मनि॥ यथारत्नेषुसर्वेषु सर्वेदेवाव्यवस्थिताः॥ तथाशान्तिम्प्रयच्छन्तु रत्नदानेनमेसुराः। यथाभूमिप्रदानस्य कलांनार्हन्तिषोडशीम्॥ दानान्यन्यानिमेशान्तिन्तथा भूमिः प्रयच्छतु) ये मन्त्र पढ़ गन्ध पुष्पमाला धूप दीप नैवेद्य वस्त्र सुवर्ण रत्न आदि करके भक्तिपूर्वक ग्रहों का पूजन करै इस में कभी वित्तशाठ्य न करै अब हम नवग्रहों के ध्यान कहते हैं (पद्मासनः पद्मकरः पद्मगर्भसम

द्युतिः । सप्ताश्वरथयुक्तश्च द्विभुजःस्यात् सदारविः ॥ श्वेतः श्वेताम्बरधरः श्वेताश्वः श्वेतभूषणः । गदापाणिर्द्विबाहुश्च वरदः स्यात्सदा शशी ॥ रक्तमाल्याम्बरधरो रक्तःशक्तिगदाधरः । चतुर्भुजोमेषगमो वरदःस्याद्धरासुतः ॥ पीतमाल्याम्बरधरः कर्णिकारसमद्युतिः । खड्गचर्मगदापाणिःसिंहस्थोवरदोबुधः ॥ पीताम्बरः पीतवपुः कुञ्जरस्थश्चतुर्भुजः । कमण्डलुधरो दण्डी वरदः स्यात्सदागुरुः ॥ श्वेताम्बरः श्वेतवपुस्तुरगस्थश्चतुर्भुजः । अक्षसूक्कुण्डिकाधारी वरदःस्यात्सदाभृगुः ॥ इन्द्रनील द्युतिःशूली वरदो गृध्रवाहनः । बाणबाणासनधरो ध्यातव्योर्कसुतःसदा ॥ सदाशार्दूलवदनः खड्गीशूलीवरप्रदः । नीलसिंहासनस्थश्चराहुर्ध्येयः सदाबुधैः ॥ धूम्रादिवाहनाःसर्वे गदिनो विकृताननाः । गृध्रासनगता नित्यं केतवः स्युर्वरप्रदाः) यह ग्रहों का स्वरूप है इसके अनुसार ध्यानकरै और ऐसीही मूर्त्ति बना कर उनका पूजन करै हवनके लिये कुण्ड उत्तम लक्षणों करके युक्त और यथार्थ बनाना चाहिये मानहीन कुंड अनर्थ करनेहारा होता है अयुत होम से दशगुण आहुति और दक्षिणा लक्ष होम में होती है तीन मेखला और योनि करके भूषित चतुरस्र कुण्ड लक्ष होम के लिये ईशानकोण में बनावै और देवता स्थापन के लिये तीन वप्रों करके वेष्टित स्थंडिल बनावै उसके ऊपर तण्डुलों करके पूर्वोक्त रीति से आदित्याभिमुख सब देवता स्थापन करै कुम्भ स्थापन और हवन पूर्ववत् करै अग्नि में वसुधारा का पातनकरै और अग्नेय वैष्णव रौद्र महावैश्वानर आदि सूक्तसाम और ज्येष्ठसामका पाठ करावै यजमान को स्नान पूर्ववत् करावै वेही मन्त्र पढ़ैं यजमान भी काम क्रोध त्याग शान्त चित्त हो ऋत्विजों को दक्षिणा देवै

नवग्रह यज्ञ के अयुत होम करने के लिये वेदवेत्ता चार ब्रा
ह्मणों का अथवा दो का वरण करै लक्ष होम में दश अथव
आठ ऋत्विक् हवन करने के लिये नियत करने चाहिये अ
युत होम से लक्ष होम में दक्षिणा आदि सब दशगुण होन
चाहिये सब ऋत्विजों को भूषण शय्या वस्त्र कटक कुण्ड
आदि वित्तानुसार देवे वित्तशाठ्य न करे जो समर्थ होक
न देवै उसका कुल क्षय होता है अन्नदान भी यथाशक्ति क
अन्नहीन यज्ञ दुर्भिक्ष करने हारा होता है अल्पधन मनुष
कभी लक्ष होम न करै क्योंकि धन के संकोच से विपरी
फल होता है एकही ब्राह्मण का भली भांति पूजन कर अ
युत होम करावै अथवा दो चार ब्राह्मणों का वरण करै ज
घर में धन होय तो लक्ष होम करै लक्ष होम करनेहारे पुरु
के सब मनोरथ सिद्ध होते हैं और आठसौ कल्पपर्यन्त दे
ताओं करके पूजित वह पुरुष शिवलोक में निवास करता
जिस कार्य के उद्देश से लक्ष होम करै वही कार्य सिद्ध होता
पुत्रार्थी पुत्र धनार्थी धन भार्यार्थी उत्तम भार्या और राज्या
र्थी पुरुष लक्ष होम करने से राज्य पाता है और जो निष्का
होकर लक्ष हवन करै तो मुक्ति पावै जो राजा विधि पूर्व
ब्राह्मणों से नवग्रह शांति करावै वह ऐश्वर्य्य सन्तान और वि
जय पाता है और उसके राज्य में दुर्भिक्ष मारी परचक्र आदि
कोई उपद्रव नहीं होते॥

एकसौतीसका अध्याय॥

कोटि होम का विधान॥

श्रीकृष्ण भगवान् कहते हैं कि हे महाराज! पूर्वकाल मे
प्रतिष्ठान नगर के बीच बड़ा प्रतापी शस्त्रास्त्र में निपुण ब्रह्मण्

पितृभक्त देव ब्राह्मण पूजक राजा संवरण नाम हुआ एक समय ब्रह्माजीके पुत्र सनकऋषि राजा संवरण के पास आये राजाने उनको आसन पर बैठाय प्रणाम किया और पाद्य अर्घ्यआदि देकर सब राज्य और आत्मा उनके आगे निवेदन किया मुनिने भी राजा का सत्कार अंगीकार किया पीछे अनेकप्रकार के प्राचीन राजाओं के चरित और इतिहास पुराण आदि की मनोहर कथा कहते सुनते रहे इसी अवसर में जगत् के और अपने हितके लिये बड़े विनय से राजा संवरण ने सनकऋषि से प्रार्थना करी कि हे देवर्षे! भूकम्प पांशुवृष्टि ग्रहयुद्ध अनावृष्टि राज्योपद्रव आदि उत्पातों की शान्ति के लिये कोई उपाय धन आरोग्य और स्वर्ग देनेहारा आप वर्णन करें । यह राजा की प्रार्थना सुन सनक मुनि बोले कि हे राजन्! सब कार्य सिद्ध करनेहारा और शान्तिप्रद कोटिहोम का विधान हम वर्णन करते हैं जिसके करतेही ब्रह्महत्यादि पातक निवृत्त होते हैं सब उत्पात शान्त होजातेहैं और बड़ा सुख उत्पन्न होता है प्रथम उत्तम मुहूर्त्त देख देवालय में नदी के तटपर अथवा वनमें कोटि होम करावै पहिले वेदवेत्ता ब्राह्मणका वरणकर गन्ध पुष्प माला वस्त्र भूषण आदि से उसका पूजन कर (त्वंनोमतिः पिता माता त्वं गतिस्त्वं परायणम् । त्वत्प्रसादेन विप्रर्षे सर्वमेस्यान्मनोगतम् ॥ आपद्विमोक्षायचमे कुरुयज्ञमनुत्तमम् । कोटिहोमाख्यमतुलं शान्त्यर्थंसर्वकामिकम्) यह मन्त्रपढ़ प्रार्थना करै आचार्यभी शुक्लवस्त्रआदि से शोभित हो उत्तम ब्राह्मणोंसहित पुण्याहवाचनकर समभूमि में मण्डप बनावै सौ हाथ विस्तार का मण्डप उत्तम पचास हाथ का मध्यम

और पचीसहाथका लम्बा चौड़ा निकृष्ट होता है शक्ति और समयके अनुसार मण्डप बनाय उसके मध्य में चार हाथ लम्बा और चारहाथही चौड़ा तीन मेखलाओंकरकेयुक्त और द्वादशाङ्गुल विस्तृत योनि करके भूषित चतुरस्र कुण्ड बनावै कुण्डके पूर्वभाग में चारहाथ लम्बी चौड़ी और एक हाथ ऊँची वेदी बनावै वही सब देवता स्थापन करने का स्थान है मण्डपकी चारों दिशाओं में भूमि को लेपन कर उसमें पंचपल्लवों करके शोभित जलपूर्ण चारकलश स्थापनकरै मंडपके ऊपर वितान और सबदिशाओं में तोरण स्थापनकरै इसभांति सब संभार एकत्रकर पुण्याहवाचन और जयशब्द पूर्वक उत्तमदिन से पुरोहित होमका आरम्भ करै पूर्व में ब्रह्मा मध्यमें विष्णु पश्चिममें रुद्र उत्तरमें वसु ईशानमें ग्रह अग्निकोण में मरुत् और बाकी दिशाओं में लोकपालों का स्थापन कर गन्ध पुष्प धूप दीप नैवेद्यादि से वैदिक और पौराणिकमन्त्रों से उनका अलग २ पूजन कर (आदित्यावसवो रुद्रा मरुतो लोकपास्तथा । ब्रह्मा जनार्दनश्चैव शूलपाणि र्भगाक्षिहा ॥ सत्रे सन्निहिताः सर्वे भवन्तुमखभागिनः । पूजां गृह्णन्तु सर्वत्र मयाभक्त्योपपादिताम् ॥ कुर्वन्तुचशुभंसर्वे यज्ञ कर्तुःसमाहिताः) इन मंत्रोंसे प्रार्थनाकरै पीछे वेदपाठीब्राह्मणोंसहित कुण्डका संस्कारकर उसमें अग्नि प्रज्वलितकर घृतार्चिष् उस अग्नि का नामरक्खै विद्यावृद्ध वयोवृद्ध गृहस्थ जितेन्द्रिय स्वकर्मनिष्ठ शुद्ध और ज्ञानशील सौ ब्राह्मणों को हवनके लिये नियुक्तकरै अथवा जितने ब्राह्मण उत्तम मिलैं उनकाही वरणकरै अग्नि को पंचमुख ध्यानकरै जिस में चार मुख तो सात सात जिह्वाओं करके युक्त और पांचवां सर्व

कामदमुख एकजिह्वा युक्त ध्यावै प्रज्वलित अग्नि में हवन करै धूमायमान अग्नि में वृथा होम न करै ऋग्वेदी ब्राह्मण पूर्वाभिमुख यजुर्वेदी उत्तराभिमुख सामवेदी पश्चिमाभिमुख और अथर्वणवेदी ब्राह्मण दक्षिणाभिमुख बैठ कर हवन करै प्रथम ब्रह्मा का स्थापन कर इस कर्म का आरम्भ करै प्रणवादि स्वाहान्त व्याहृतियों से यह होम करना चाहिये घृत कृष्ण तिल और थोड़े से यव मिला कर होम करै पलाशकी समिधाओं से कोटि होम करै और हजार आहुति पूरी होने पर पूर्णाहुति देता जाय इस विधिसे कोटि हवन करै परन्तु सब ब्राह्मण और यजमान काम क्रोध आदि दोषों से बचैं इतना सुन राजा संवरण ने कहा कि महाराज यह कोटि होम बहुत काल में होता है इतने दिन संयम से रहना अति कठिन है इस लिये कोई संक्षेप उपाय कोटि होम का कथन करैं जिस से थोड़े से समय में निर्विघ्न यह यज्ञ हो जाय यह राजा का वचन सुन सनक मुनि कहने लगे कि हे राजन्! कोटि होम चार प्रकार का है शतानन दशानन द्विमुख और चौथा एक मुख समयानुसार इन चारों में से जौन सा बन पड़े वही करना उत्तम सौ कुण्ड बना कर एक २ कुण्ड पर दश २ ब्राह्मणों को हवन के लिये नियत करै एक कुण्ड में अग्नि का संस्कार कर उसी अग्नि को सब कुण्डों में प्रज्वलित करै इस विधि करने से वह एक ही कोटि होम होता है यह शतमुख होम कार्य गौरव से और समय के संकोच से कहा है यह थोड़े दिनों में हो जाता है जो अधिक अवसर होय तो दश कुण्ड बना कर प्रत्येक कुण्ड पर बीस २ ब्राह्मण हवन के लिये नियुक्त करै यह दश मुख हवन है जो महीने दो महीने का अवसर होय तो दो

कुण्ड बना कर पचास २ ब्राह्मण एक २ कुण्ड पर हवन के लिये नियुक्त करै यह द्विमुख होम है और जो काल का संकोच न होय तो एक कुण्ड में अग्नि स्थापन कर उत्तम कुलोत्पन्न सदाचार और वेदवेत्ता ब्राह्मणों से हवन करावै इस में ब्राह्मणों की संख्या का नियम नहीं है और काल का भी नियम नहीं यह एक मुख होम स्वस्थ यज्ञ कहाता है परन्तु यह बहु काल साध्य है और बीच में अनेक प्रकार के विघ्न होते हैं धन और शरीर की स्थिरता का कुछ भरोसा नहीं इसलिये संक्षेप से ही यह यज्ञ करना चाहिये इस विधि यज्ञ समाप्त कर बड़ा उत्सव करावै सब ऋत्विजों को कटक कुण्डल वस्त्र दक्षिणा देवै सौ गौ सौ घोड़े और हज़ार मोहर ब्राह्मणों को देवै हाथी और घोड़ों का पूजन करै दीन अन्ध कृपण आदि को भोजन देकै अन्त में अवभृथ स्नान करै और लक्ष होमोक्त मंत्रों से ब्राह्मण यजमान का अभिषेक करैं इस विधि से जो राजा कोटि होम करै वह आरोग्य पुत्र राज्य वृद्धि और ऐश्वर्य पाता है कभी उस को ग्रहपीड़ा नहीं होती उस के राज्य में अनावृष्टि उत्पात मारी दुर्भिक्ष आदि कभी नहीं होते सब उपसर्ग पाप और ग्रहपीड़ा का शमन करनेहारा यह हवन है इस को करनेहारे स्वर्ग को जाते हैं॥

एकसौइकतीसका अध्याय॥

महाशान्तिका विधान॥

श्रीकृष्ण भगवान् कहते हैं कि हे महाराज! राजाओं के हित के लिये सब उपद्रव शान्त करनेहारा महादेवजी का कहा महाशान्ति विधान हम वर्णन करते हैं राज्याभिषेक के समय में राजा के यात्राकाल में दुःस्वप्न में दुर्निमित्त में ग्रह

पीड़ा से उल्कापात निर्घात भूकम्प केतु का उदय छत्र ध्वज आदि का अपने स्थान से गिरना अथवा टूटना घरमें काक कपोत उलूक आदि का प्रवेश होना ग्रहयुद्ध जन्म राशि से अनिष्ट स्थान में ग्रहोंकी स्थिति सूर्य्यमण्डल में तामस कील-कों का देख पड़ना वस्त्र शस्त्र मणि शय्या आदि में अग्नि का देख पड़ना अश्वनरी आदि का गर्भ धारणा इत्यादि अनेक प्रकार की उत्पातों के शान्ति के लिये महाशान्ति करनी चा-हिये उत्तम कुलमें उत्पन्न शुचि शीलवान् चार वेद तीन वेद दो वेद अथवा एक अथर्वण वेद जाननेहारे कृच्छ्र पाराक चान्द्रायण आदि व्रतों में तत्पर पांच ब्राह्मण इस शान्ति के लिये वरण करै दश हाथ अथवा बारह हाथ लम्बा चौड़ा मण्डप बनाय उसके मध्य में चार हाथ की वेदी बनावै अग्नि-कोण में तीन मेखला और योनि करके भूषित एक हस्त प्र-माण कुण्ड बनावै मण्डप को गोवर से लीप तोरण और वन्दन माला से अलंकृत करै फिर आचार्य्य स्नान कर शुद्ध वस्त्र माला चन्दन आदि से अलंकृत हो पांच कलश वेदी के ऊपर स्थापन करै मध्य का कलश अष्टदल कमल बनाय उसके ऊपर स्थापन करै सब कलशों को पञ्चपल्लव और वस्त्र आदि से भूषित करै ब्रह्मकूर्च के विधान से पञ्चगव्य सर्वौषधि गोरोचन चन्दन पञ्चरत्न श्वेत सर्षप शमी दूर्वा कुश धान जौ अपामार्ग्ग वट उदुम्बर प्लक्ष अश्वत्थ कपित्थ प्रियंगु और आम्र के पत्र हाथी के दांत से उखाड़ी मृत्तिका तीर्थजल ये सब वस्तु कुम्भों में डालै वाचमिति आसिञ्चेति नदेवा इति ईशावास्येति इत्यादि चार वैदिक मन्त्रों से आग्नेयादि कोणों में स्थित चारों कुम्भों को अभिमन्त्रण करै और मध्य के

कुम्भ को भवोद्भवादि मन्त्र से मन्त्रित कर गन्ध पुष्प अक्षत
वस्त्र घृतपक्क नैवेद्य दीपक और नालिकेर आदि फलों कर
प्रत्येक कुम्भ का पूजन कर स्वस्तिवाचन कराय अग्नि
कार्य का आरम्भ करै अग्निद्भुतं इत्यादि मन्त्र करके अग्निव
स्थापन करै हिरण्यगर्भः इत्यादि मन्त्रसे ब्रह्मासनका नियोज
करै कपोतसुगणीतेन इस मन्त्र से ब्रह्मा का स्थापन करै
पीछे आज्य संस्कार कर और भी हवन सामग्री एकत्र क
पुरुषसूक्तकरके पायस सिद्धकर भूमिपर स्थापन करै अठ
रह समिधा शमी की और सातसमिधा पलाश की स्थापन क
घृत के दो भागकर पूर्व्वक्रम से जातवेद से इत्यादि मन्त्रक
के सात आहुति देकर उसी मन्त्र से स्थालीपाक की सा
आहुति देवै दीर्घसूक्तकरके चार आहुति यमाय स्वाहा इ
मन्त्रकरके सात आहुति इदंविष्णुः इत्यादि मन्त्र से सा
आहुति नक्षत्रेभ्यः स्वाहा इस मन्त्र से सत्ताईस आहुति दे
कर स्विष्टकृत होमकरके घृत द्भुत समिधाओं से ग्रह हो
कर प्रायश्चित्त के लिये आहुति देवै इसप्रकार हवन क
काश्मरी वृक्ष के काष्ठका पीठ बनवाय उसपर यजमान क
बैठाय पांचो कलशों के जलसे वेदोक्त और पुराणोक्त मन्त्र
करके सब अरिष्ट निवृत्त होने के लिये ब्राह्मण अभिषेक करै
पीछे पुण्याहवाचन कर शान्तिकर्म्म समाप्त करैं भूमि सुवर्ण
वस्त्र शय्या आसन दक्षिणा आदि देकर ब्राह्मणों को स
न्तुष्ट करै दीन अनाथों को निरन्तर भोजन देवै इस विधि से
शान्ति करने करके दीर्घ आयुष और शत्रुओं से जय प्राप्त
होता है दुर्घट कार्यभी सिद्ध होजाते हैं कुल की वृद्धि होती है
जिस भांति कवच पहिन लेने से देह में शस्त्र प्रहार नहीं ल

गता इसी भांति इस महाशान्ति के करने से दैवीउपद्रव पीड़ा नहीं देसकते अहिंसक जितेन्द्रिय धर्म्म से धन उपार्जन करनेहारा और दया दाक्षिण्य आदि गुणों करके जो पुरुष युक्तहोय उसपर सब ग्रह अनुग्रह करते हैं इस शान्ति के करने से पाप का क्षय धर्मकी वृद्धि मनोरथों की सिद्धि उत्पातों की शान्ति और उत्तम लोककी प्राप्ति होती है॥

एकसौबत्तीसका अध्याय॥

दानकी प्रशंसा गोदान का विधान और फल॥

राजा युधिष्ठिर कहते हैं कि हे श्रीकृष्णचन्द्र! अब हम दान का माहात्म्य सुनना चाहते हैं आपके मुखसे पुण्यका विषय व्रतों का विस्तार और संसार की असारता दिखानेहारा ज्ञान श्रवण किया अब आप यह वर्णन करैं कि क्या दान किस समय में किसको देना चाहिये हमारे विचार में भूमिदान से अधिक कोई दान नहीं है कि जिसको चोर आदि नहीं हर सक्के यह राजा का वचन सुन श्रीकृष्ण भगवान् कहने लगे कि हे महाराज! ब्राह्मण को दिया धन विना व्याज बढ़ताहै और विना भूमि में गाड़ी निधि है बड़ा पुष्ट बलवान् और चिरस्थायी शरीर पाकर क्या फल है जो किसी के ऊपर उपकार न बनपड़ा उपकारहीन जीवनही व्यर्थ है ग्रास से आधा अथवा उससे भी आधा अर्थीपुरुषों को क्यों नहीं देते इच्छानुसार धन कब किसी को मिलता है दान नहीं दियाजाता परन्तु धन को चोर लेजाय तो रोते फिरते हैं धर्म अर्थ और काम से रहित जिन के दिन व्यतीत होते हैं वे पुरुष लुहार की खाल की भांति श्वास लेतेहुये भी मरेही पड़े हैं जिनने दान न दिया हवन न किया तीर्थ

में प्राण न त्यागे सुवर्ण वस्त्र अन्न जल आदि से ब्राह्मणों का सत्कार नहीं किया वे पुरुष जन्म जन्म में नङ्गे भूखे रोगी और कपाल हाथ में लिये माँगते फिरते हैं अनेक कष्टों से अर्जित और प्राणों से भी प्यारे धनको दान देना यही धन की सद्गति है और सब धन के लिये विपत्ति हैं उपभोग से और दान से कभी सम्पत्ति का क्षय नहीं होता केवल पूर्व पुण्य के क्षीण होने से सम्पत्ति क्षय को प्राप्त होती है मरने के अनन्तर धन पर अपना स्वत्व नहीं रहता इस लिये अपनेही हाथसे पात्र में धन का विनियोग करै जन्मरूप वृक्ष के यही फल हैं कि दान देना तप करना और परमेश्वर में भक्ति रखना इतना सुन राजा युधिष्ठिर ने कहा कि हे श्रीकृष्णचन्द्र! विष्णु भगवान् की प्रसन्नता के लिये जो दान जिस विधान से ब्राह्मणों को देनेचाहियें और जिन के देने से दोनों लोक में उत्तम सिद्धि प्राप्त होय उनका आप वर्णन करैं यह राजा का वचन सुन श्रीकृष्ण भगवान् कहने लगे कि हे महाराज! व्यास बाल्मीकि और मनुके कहे दान हम आपके प्रति कथन करते हैं गौ भूमि और सरस्वती ये तीन दान सब दानों में उत्कृष्ट और मुख्य हैं ये सात कुलका उद्धार करते हैं इनमें प्रथम हम गोदान का विधान कहते हैं राजा युधिष्ठिर ने कहा कि प्रथम आप गौ के लक्षण और दान लेनेहारे ब्राह्मण के लक्षण कथन करैं पीछे विधान कहैं तब श्रीकृष्ण भगवान् कहने लगे कि हे महाराज! तरुणीरूपयुक्त सुशीला सवत्सा दूध देनेहारी और न्याय से अर्जित उत्तम गौ श्रोत्रिय अर्थात् वेदवेत्ता ब्राह्मणको देनीचाहिये वृद्धा रोगिणी वन्ध्या हीनाङ्गी मृतप्रजा दुःशीला और दुग्ध रहित गौ का

कभी दान न करै कुटुम्बी वेदवेत्ता दरिद्री आहिताग्नि और अतिथियों के सत्कार में प्रवृत्त ब्राह्मण को उत्तम गुणों करके युक्त गौ देवै अकुलीन मूर्ख लोभी पिशुन और हव्यकव्य से हीन ब्राह्मण को कभी गौ न देवै पुण्यदिन में स्नान कर पितरों का तर्पण कर शिव और विष्णु का घृत और दुग्धसे अभिषेक करै पीछे सुवर्णशृङ्गी रौप्यखुरी कांस्य के दोहनपात्र में सहित गौ का पुष्पादिकों से पूजन कर दक्षिणासहित ब्राह्मण को देवै और (गावो ममाग्रतःसन्तु गावोमे सन्तु पृष्ठतः। गावो मे हृदयेसन्तु गवां मध्ये वसाम्यहम्) यह मन्त्र पढ़ै और गौकी प्रदक्षिणा करै ब्राह्मण जब गौको लेकर चलै उसके पीछे आठ कदम जाय इस विधिसे जो ब्राह्मणको गौ देवै वह सब अभीष्ट फल पाय स्वर्ग को जाता है सात जन्मोंमें किये पाप तत्क्षण नष्ट होजाते हैं पद पद में अश्वमेधका और गोशत का फल पाता है यह दक्षके प्रति विष्णुभगवान् ने कहा है गोदान करनेहारा चौदह इन्द्र व्यतीत होयँ तब तक स्वर्ग में रहता है सब पातक निवृत्त करनेहारा गोदान से अधिक कोई प्रायश्चित्त नहीं चारों वर्ण इस दान के करने से उत्तम लोकों को प्राप्त होते हैं शास्त्रवेत्ता ऋषि यह कहते हैं कि गोदानसे बढ़कर कोई दान नहीं है इसलिये स्वर्ग की कामनावाले पुरुषों को अवश्यही ब्राह्मण को गौ देनी चाहिये॥

एकसौतेंतीसका अध्याय॥

तिलधेनु का विधान और फल॥

श्रीकृष्णभगवान् कहते हैं कि हे महाराज! अब हम वराह नारायणका कहा तिलधेनु दान का विधान कहते हैं जिस दानके करनेसे ब्रह्महा गोघ्न पितृहा गुरुदारगामी विष देने-

हारा अग्नि लगानेवाला और भी बड़े बड़े पातकों करके युक्त पुरुष सब पापों से छुट स्वर्ग को जाता है भूमिको गोबर से लीप वस्त्र और अजिन बिछाय उसके ऊपर श्वेत और कृष्ण तिल स्थापन करै एकद्रोण तिलका वत्स और चारद्रोण तिलों की गौ कल्पना करै सुवर्ण के शृंग चांदी के खुर शर्करा की जिह्वा गुड़का मुख गन्ध द्रव्य के प्राण इक्षु के पाद ताम्रका पृष्ठ माला का पुच्छ नवनीतके स्तन और रेशमके रोम उस धेनुके कल्पना कर उत्तम वस्त्रसे आच्छादन कर फल दक्षिणा मोती और वस्त्रसहित वह धेनु पर्वदिन में ब्राह्मणको देवै और उसके साथ कांस्य का दोहनपात्र देवै और (या लक्ष्मीः सर्व भूतानां या च देहे व्यवस्थिता । धेनुरूपेण सा देवी मम पापं व्य पोहतु) यह मन्त्र पढ़ प्रणाम और प्रदक्षिणाकर विसर्जनकरै इस विधिसे जो तिलधेनु का दानकरै वह सब पापों से छुट ब्रह्म लोकको जाता है जो पुरुष दानका अनुमोदन करै प्रसन्नचित्त हो प्रशंसा करैं और विधिपूर्वक किये इस दान को जो ब्राह्मण ग्रहण करैं वे सब ब्रह्मलोक को जाते हैं प्रशान्त सुशील वेद-व्रत में निष्ठ ब्राह्मण को तिलधेनु देनेहारा पुरुष कृत अकृत का शोक नहीं करता तिलधेनु दान करनेहारा पुरुष तीन दिन अथवा एक दिन तिलही भोजन करै दान करके विशुद्ध पाप उस पुरुष को तिल भक्षण चान्द्रायण व्रत के तुल्य है बाल्य यौवन वार्द्धक में मन वचन कर्म से जो पाप किये होयँ अभक्ष्य भक्षण अगम्यागमन अपेयपान आदि जो पातक महापातक और उपपातक कियेहोयँ वे सब तिलधेनु दान से नाशको प्राप्त होते हैं यमलोक के मार्ग में महाघोर वैतरणी नदी है जिसके बालू में पापी दग्ध होते हैं लोहमुख काक

और बड़े भयङ्कर श्वान जहां पापियोंका मांस नोच नोच खाते हैं जहां असिपत्रवन और लोहका कण्टक युक्त शाल्मलि वन है इन सबको उल्लंघनकर सुवर्ण के विमान में बैठाहुआ तिल धेनु देनेहारा पुरुष उत्तम लोकको जाता है गुणहीन धनाढ्य कुण्डगोल और लोभी ब्राह्मण को कभी तिलधेनु न देवै एक गौ एक ब्राह्मण को देनीचाहिये नैमिषारण्य में कथा प्रसंग के बीच यह विधान मुनियों ने कहा और हम को नारदमुनि ने उपदेश किया वही हमने आपको श्रवण कराया यह पवित्र पुण्य मांगल्य और कीर्तिवर्द्धन विधान श्राद्धकाल में ब्राह्मणों को श्रवण कराने से अनन्त पुण्य होता है गौ घर शय्या और स्त्री इनको दानकर बहुत ब्राह्मणों को न देवै इनका विभाग होनेसे दाता अधोगति को प्राप्त होता है और विक्रय होने से सात कुल दुर्गतिको प्राप्तहोते हैं इसलिये एकवस्तु एक ब्राह्मण कोही देनीचाहिये इस दान के प्रभाव से उत्तम विमान में बैठ साक्षात् विष्णुभगवान् के समीप पहुँचता है माघ अथवा कार्त्तिक की पौर्णमासी अमावास्या चन्द्रसूर्यग्रहण अयन संक्रांति विषुव षडशीतिमुख संक्रांति वैशाख अथवा मार्गशीर्ष की पूर्णिमा व्यतीपात और गजच्छाया योग में तिलधेनु का दानकरै धेनु के शरीर में जितने रोम होते हैं उतने हजार वर्ष दान करनेहारा स्वर्ग में निवास करता है दान को जो ग्रहण करै दानकरने को भक्तिसे देखैं और दानका अनुमोदन करैं वेभी स्वर्ग को जाते हैं॥

एकसौचौंतीसका अध्याय॥

जलधेनुकाविधान फल और मुद्गलमुनिकी कथा॥

श्रीकृष्णभगवान् कहते हैं कि हे महाराज! अब हम जल

धेनुदान का विधान कहते हैं जिस दान के करने से देवदेव विष्णु भगवान् प्रसन्न होते हैं उत्तम जल से पूर्ण कलश स्थापन कर रत्न धान्य दूर्वा पंच पल्लव कूट मांसी मुरा नेत्रबाला खस और आमलक उस कुम्भ में डाल श्वेत दोवस्त्र यज्ञोपवीत और पुष्प माला से उसको अलंकृत करै उस के पास दोहनपात्र स्थापन कर सब उपचारों से विष्णुभगवान् का पूजन कर दक्षिणासहित वह कुम्भ ब्राह्मणको देवै पहिले (विष्णोर्वक्षसि या लक्ष्मीः स्वाहा या च विभावसोः। सोमश क्रार्कशक्तिर्या धेनुरूपेणसास्तु मे) इस मन्त्र से कुम्भ को अभिमन्त्रण करै और दान करके (शेषपर्य्यङ्कशयने श्रीमाञ्छार्ङ्गविभूषितः। जलशायी जगद्योनिः प्रीयतां मम केशवः) यह मन्त्र पढ़ै दान करके उस दिन उपवास रक्खै इस विधि से जलधेनु दान करनेहारा पुरुष दिव्य और मानुष सब प्रकारके सुख भोगता है इस दान से शरीरारोग्य और सब मनोरथोंकी सिद्धि प्राप्त होती है इस में हम मुद्गल ऋषिका वृत्तान्त वर्णन करते हैं एक समय मुद्गल ऋषि यमलोक में गये वहां देखा पापीजीव अनेक प्रकार के कुम्भीपाकआदि दारुणनरकों में पड़े चिल्लाते हैं और यमके भयङ्कर दूत उनको अनेक प्रकार के त्रासदेरहे हैं किसीको तेलके कड़ाहमें पकाते हैं किसी के शरीर में घावकर उन में क्षार डालते हैं किसीको विष्ठा के कुण्ड में डुबोते हैं उन नरकके जीवों को मुद्गल के दर्शनसे कुछ आह्लाद हुआ और यत्किञ्चित् सुखी भये इस भांति नरक के जीवोंको सुखी देख मुनि ने धर्म्मराजसे इसका कारण पूछा तब धर्मराज कहनेलगे कि हे मुनि ! तुम्हारे दर्शनसे इतना आह्लाद इनको हुआ है तुमने तीनजन्म पहिले जलधेनु दान कियाथा

उस दान के प्रभाव से तुम्हारा दर्शन सबको आह्लाद देता है जलधेनु दान करनेहारा पुरुष इक्कीस जन्मतक आह्लाद युक्त रहता है इससे अधिक आह्लाददायक कोई कर्म नहीं है जलधेनु दान करनेहारे पुरुष को हजारों जन्मतक दाहज्वर आर्त्ति श्रम आदि नहीं होते हे मुद्गल! अब आप हमारा किया अर्घ्य पाद्यआदि सत्कार ग्रहण कर अपने धाम को जावैं कृष्ण के भक्तों का हम भी सत्कार करते हैं जो कृष्णका पूजन करैं कृष्णप्रीत्यर्थ व्रतकरैं नित्य कृष्णका ध्यान करैं दान देकर (अच्युतःप्रीयताम्) यह वाक्य कहैं चलते फिरते कृष्ण का स्मरण करैं सदा कृष्ण अच्युत अनन्त वासुदेव इत्यादि नामों का उच्चारण करते रहैं वे हमारे लोकमें नहीं आते वह कृष्ण जगत्का प्रभु है और हम सब उसके आज्ञाकारी हैं लोकोंका संयमन हम करते हैं और हमारा संयमन करनेहारा कृष्ण है यमराज का यह वचन सुन अग्नि शस्त्र आदि करके पीड़ित सब नरक के जीव इस विधि पुकारनेलगे कि (नमःकृष्णाय हरये विष्णवे जिष्णवे नमः। देवाय हृषीकेशाय जगद्धात्रेऽच्युतात्मने ॥ नमःपङ्कजनेत्राय नृसिंहाय निनादिने । शार्ङ्गिणे शितखड्गाय शङ्खचक्रगदाभृते ॥ नमो वामनरूपाय दैत्यलोकवधाय च । वराहरूपाय तथा नमो यज्ञाङ्गधारिणे ॥ व्याप्ताशेषदिगन्ताय शान्ताय परमात्मने । वासुदेव नमस्तुभ्यं नमः केशिनिषूदन ॥ केशवाय नमो नित्यं नमस्तेस्तु महीधर) इस प्रकार विष्णुभगवान् का स्मरण करतेही नरक का अग्नि शीतल होगया शस्त्र कुण्ठित भये कण्टकयुक्त शाल्मलि वृक्ष टूटगया क्षारनदी सूखगई लोहमुख पक्षी गिरपड़े अन्धकार निवृत्त होगया ऐसा प्रचण्ड पवन

ग्ता कि असिपत्र वन जड़ से उखड़ गया यमदूत मूर्च्छित होकर भूमिपर गिरे पूय और रुधिरकी नदियों में उत्तम जल बहनेलगा सुगन्ध और शीतल मन्द मन्द पवन चलनेलगा और सब नरक के जीव दुःख से मुक्त उत्तम वस्त्र भूषण माला लेपनआदि से भूषित तेज करके जाज्वल्यमान और (नमो नमोस्तु कृष्णाय गोविन्दायाव्ययात्मने। वासुदेवाय देवाय विष्णवे प्रभविष्णवे) यह वारंवार उच्चारण करते देख पड़े यमराज ने पाद्य अर्घ्यआदि से सबका पूजन किया और एकाग्रचित्त हो हाथजोड़ यह स्तुति करनेलगे (विष्णोर्देवाधिदेवस्य जगद्धातुःप्रजापतेः। प्रमाणं ये च कुर्वन्ति तेषामपि नमो नमः॥ तस्य यज्ञवराहस्य विष्णोरमिततेजसः। प्रमाणं ये च कुर्वन्ति तेषामपि नमोनमः॥ अच्युतस्याप्रमेयस्य मायाग्राम नरूपिणः। प्रमाणं ये च कुर्वन्ति तेषामपि नमोनमः) यमराज इस प्रकार स्तुति करतेही थे कि उनके देखते देखतेही सब नरक के जीव दिव्य विमानों में बैठ स्वर्ग को गये मुद्गल भी यह सब चरित्र देख अपने स्थान में आये और विष्णुभगवान् का प्रभाव और उनके नामों का माहात्म्य वारंवार स्मरण कर अपने जीव को इस विधि समझानेलगे कि हे जीव! विष्णुभगवान् की माया बड़ी दुस्तर और गह्वर है जिस करके मोहित हुआ तू परमेश्वरको नहीं पहिंचानता हे जीव! तू कीट जूका मत्कुण वृक्ष लता पक्षी पशु मनुष्यआदि अनेक योनियों में भटकता फिरता है और मुक्तिके लिये यत्न नहीं करता बड़ा आश्चर्य है कि माया करके मोहित मनुष्य अपना हित नहीं पहिंचानते विष्णुमाया यद्यपि दुस्तर है तौभी विष्णु भक्त उसको सुख से छेदन करसके हैं धर्म के अविरोधे

से विषयों को भोगता हुआ पुरुष भी विष्णुभगवान् में दृढ़ भक्ति रक्खै तो उसकी माया का पार पाता है जो मनुष्य जन्म पाय भगवान् का आराधन नहीं करते उनका जन्मही वृथा है थोड़े परिश्रम सेही जो दोनों लोकों में कल्याण देनेहारा है ऐसे विष्णु भगवान् का आराधन कौन पुरुष न करै वे वर्ष मास दिन विषयान्ध पुरुषों के व्यर्थ हैं जिनमें भगवान् का आराधन नहीं किया जो भगवान् धन वस्त्र भूषण आदि कुछ नहीं चाहता केवल हृदय की भक्तिही चाहता है हे जीव ! उस से तू दूर दूर क्यों फिरता है हजारों जन्मों के अनन्तर इस कर्मभूमि में मनुष्य जन्म पाकर जो पुरुष विष्णु भगवान् का आराधन और जलधेनु दान नहीं करते उनका जन्म भ्रष्ट है और वेही मायाकरके वञ्चित होते हैं हम ऊपरको भुजा उठाय पुकारते हैं कि हे मनुष्यो ! दोनों लोकों में कल्याण प्राप्ति के लिये विष्णु भगवान् का आराधन और जलधेनु का दान करो नरक की यातना अति दुःसह है और मैंने अपने नेत्रों से देखी है उनसे बचने के लिये विष्णु भगवान् को भजो सैकड़ों यज्ञ और क्लेशदायक अनेक व्रत करने से कुछ प्रयोजन नहीं यमराज का भय निवृत्त करने के लिये एक जलधेनु का दानही बहुत है ॥

एकसौपैंतीसका अध्याय ॥

घृतधेनु का विधान और फल ॥

श्रीकृष्ण भगवान् कहते हैं कि हे महाराज ! अब हम घृतधेनु का विधान वर्णन करते हैं आप प्रीति से श्रवण करें गौ के घृत से पूर्ण एक कुम्भ स्थापन कर गन्ध माला आदि से उसको अलंकृत कर श्वेत वस्त्र से आच्छादन करै और इक्षु

के पाद चांदी के खुर सुवर्ण के नेत्र अगुरु काष्ठ के शृङ्ग सप्त धान्य के पार्श्व सिह्लक और कपूर के प्राण फलों के स्तन सब रसों की जिह्वा गुड़ और क्षीर का मुख क्षौम सूत्र का पुच्छ श्वेत सर्षप के रोम और ताम्र का पृष्ठ घृतधेनु का बनावै और इसीप्रकार वत्स बनाकर (आज्यंतेजःसमुद्दिष्टमाज्यंपापहरंपरम्। आज्यं सुराणामाहारः सर्वमाज्येप्रतिष्ठितम् ॥ त्वंवैघृतमया देवी कल्पितासि मया किल। सर्वपापप्रणोदाय सुखाय भव भाविनि) इस मन्त्र से उसका पूजन कर दक्षिणा सहित घृत धेनु ब्राह्मण को देवै और (दक्षिणासहिता धेनुः कल्पिताज्य मयी शुभा। एनां ममोपकाराय गृहाणत्वं द्विजोत्तम) यह मन्त्र पढ़ै उस दिन घृत काही आहार करै इसी विधान से नवनीत धेनु काभी दान करै घृतधेनु दान करनेहारा पुरुष उस लोक में निवास करता है जहां घृत क्षीर की नदी बहती हैं और पायस का जिनमें कर्दम है और उस पुरुषकी सात पीढ़ी उसी लोक में निवास करती हैं जो निष्काम होकर घृतधेनु दान करै तो निष्कल्मष पद को प्राप्त होता है घृत अग्नि है घृत सोम है और सर्व देवमय घृत है इसलिये घृत के दान से सब देवता प्रसन्न होते हैं मायारूप जिसमें जलहै पुत्र कलत्रआदि जिसके तरङ्गहैं लोभ जिसमें बड़ाभारी नक्र है ऐसे संसारसागर का पार घृतधेनु दानसे प्राप्त होता है॥

एकसौछत्तीसका अध्याय॥

लवणधेनु का विधान और फल॥

राजा युधिष्ठिर कहते हैं कि हे श्रीकृष्णचन्द्र! अब आप ऐसा दान वर्णन करैं जिसके करने से सब दानों का फल प्राप्त होय सब पाप निवृत्त होयँ और सब मनोरथ सिद्ध

होयँ यह राजा का वचन सुन श्रीकृष्णभगवान् कहने लगे कि हे महाराज! सब द्रव्यों में लवण उत्तम है जिसके दान करने से ब्रह्महा गोघ्न पितृहा गुरुतल्पग विश्वासघाती क्रूरात्मा और भी सब प्रकार के पाप करनेहारा पुरुष निष्पाप होजाता है और धन धान्य पशु दीर्घायुष् और संतान पाकर बहुत दिन संसार सुख भोग शिवलोक को जाता है अब हम लवणधेनु का विधान कहते हैं गोबरसे भूमि को लेपन कर उसके ऊपर मेषका चर्म और वस्त्र बिछाय उसके ऊपर एक आढक अर्थात् चार सेर लवण रक्खे उसी को धेनु कल्पना करै सुवर्ण के शृङ्ग चांदी के खुर इक्षुके पाद फलों के स्तन सब रसों की जिह्वा गन्ध के घ्राण शुक्ति के कर्ण चन्दन काष्ठ के शृङ्ग और मोतियों के नेत्र कल्पना कर उस के कपाल में सक्तु पिण्ड मुख में यव दोनों पार्श्वोंमें तिल और गेहूं इस भांति सप्तधान्य उसके अंगों में स्थापन कर ग्रीवा में कम्बल पृष्ठमें ताम्र अपानमें गुड़का पिण्ड पुच्छ में कम्बल दुग्धके स्थान में द्राक्षा योनि में मधु और सब अंगों में फलों का निवेश करै ये सब वस्तु लवण के चतुर्थांश के समान रक्खै इस विधि धेनु बनाय वस्त्र भूषण आदि से उसका पूजन कर दक्षिणासहित सुशील ब्राह्मण को देवै और (लवणे वै रसाः सर्वे लवणे सर्वदेवताः। सर्वदेवमये देवि लवणाख्ये नमोस्तुते) यह मन्त्र पढ़ै पीछे उसकी प्रदक्षिणा कर विसर्जन करै लवणधेनु की प्रदक्षिणा करने से सब पृथिवी की परिक्रमा का फल होता है और सबयज्ञ तथा दानकरनेका पुण्यभी प्राप्त होताहै इस विधि से जो पुरुष लवणधेनु दान करै वह सौभाग्य आरोग्य सबसम्पत्ति और प्रलयपर्यन्त स्वर्गमें वास पाताहै॥

एकसौसैंतीसका अध्याय ॥

सुवर्णधेनु दानका विधान और फल ॥

श्रीकृष्ण भगवान् कहते हैं कि हे महाराज! अब हम सुवर्ण धेनु दानका विधान कहते हैं पचास पल पचीस पल अथवा जितना सामर्थ्य हो उतना सुवर्ण लेकर अतिसुन्दर रत्नों से जड़ी धेनु बनावै पीछे से ऊँची बड़ी कुक्षि और मोटे स्तनों करके युक्त कपिला धेनु बनाय हीरेके दांत वैडूर्य्य का गल कम्बल तांबड़ेके शृंग मोतीके नेत्र और मूँगेकी जिह्वा उसकी बनावै कृष्णाजिन के ऊपर प्रस्थ भर गुड़ रख कर उसके ऊपर धेनुको स्थापन करै और अनेक प्रकारके फल आठकुम्भ अठारह प्रकारके धान्य छतुरी जूता आसन भोजन ताम्रका दोहनपात्र दीपक लवण शर्करा आदि सब पदार्थ उसके पास स्थापन कर गुड़धेनु के विधान से उसका पूजन कर (त्वंसर्वदेवगणमन्दिरभूषणासि विश्वेश्वरत्रिपथगोदधिपञ्चजा नाम्। श्रद्धाम्बुतीक्ष्णशकलीकृतपातकौघैः प्राप्नोति निर्वृति मतीवपरांनमामि ॥ लोकेयथेप्सितफलार्थविधायिनीं त्वामासाद्य कोहिभवभाग्भवतीह मर्त्यः। संसारदुःखशमनाय विमुक्तिहेतो स्त्वांकामधेनुमितिवेदविदोवदन्ति) यह मन्त्र पढ़ सब उपस्कर और दक्षिणा सहित वह धेनु ब्राह्मण को देवै पीछे प्रदक्षिणा और प्रणाम कर क्षमापन करावै दानकाल में जो देवता और तीर्थधेनु के अंग में निवास करते हैं उनको सुनो नेत्रों में चन्द्र सूर्य्य जिह्वा में सरस्वती दन्तों में मरुत् कर्णों में अश्विनीकुमार शृंगों में रुद्र और ब्रह्मा ककुद्में गन्धर्व और अप्सरा कुक्षिमें चारों समुद्र योनिमें गङ्गा रोमकूपों में ऋषि अपान में पृथिवी आन्त्रों में नदी अस्थियों में पर्वत

पादों में धर्मादिक हुङ्कार में चारोंवेद कंठमें रुद्र पृष्ठवंश में मेरु और सब शरीर में विष्णुभगवान् स्थित हैं इस भांति सुवर्ण धेनु सर्व्वदेवमयी है इसलिये अवश्य यह दान करना चाहिये जिसने यह दान किया उसने सब दान किये कर्म्मभूमि में यह दान होना बहुत दुर्लभ है इस दानका करनेहारा पुरुष अथवा स्त्री दिव्य विमान में बैठ गन्धर्व्व और अप्सराओं करके सेवित स्वर्ग को जाता है वहां सौ कोटि वर्ष से भी अधिक काल सुख भोगकर मनुष्यलोक में जन्मले आधिव्याधिरहित रूपवान् और ऐश्वर्य्यवान् होता है और सब मनोरथ उसके अनायास से सिद्ध होते हैं और अन्त में फिर शिवलोक को जाता है ॥

एकसौअड़तीसका अध्याय ॥

रत्नधेनुके दानका विधान और फल ॥

श्रीकृष्ण भगवान् कहते हैं कि हे महाराज ! अब हम अतिदुर्लभ रत्नधेनु के दान का विधान कहते हैं जिस के करने से गोलोक की प्राप्ति होती है पर्व्वदिनों में गोबर से भूमिपर लेपनकर कृष्णाजिन बिछाय उसके ऊपर एक द्रोण अर्थात् सोलह सेर लवण रख लवण के ऊपर रत्नधेनु स्थापन करै इकासी पद्मरागमुख में इकासी पुखराज नासिका में मुक्तावली पुच्छ में सौ गारुत्मत रत्न अपान में स्फटिक दांतों में और भी सबरत्न अङ्गोंमें स्थापनकर सुवर्ण के खुर शर्करा की जिह्वा गुड़ का गोबर घृत का गोमूत्र और दही दूध प्रत्यक्षही रखकर चामर उसके पुच्छ में लगाय ताम्र का दोहनपात्र उस के समीप स्थापन करै इसके चतुर्थांश तुल्य वत्स बनावै अनेक प्रकार के फल और भोजन उसके समीपरख गुड़धेनु विधान से

उसका पूजनकर (त्वंसर्वदेवगणश्रासमितिष्ठुत्रन्तिरुद्रेन्द्रचन्द्र
मखासनवासुदेवाः । तस्मात्समस्तभुवनत्रयहेतुयुक्ता मांपाहि
विभवसागरपीड्यमानम्) यह मन्त्र पढ़ ब्राह्मण को वह धेनु
देवै पीछे दक्षिणा दे प्रदक्षिणाकर क्षमापन करावै इस विधि
जो पुरुष रत्नधेनु दान करै वह सौकरोड़ कल्पपर्यन्त शिवलोक
में सुख भोग अन्त में सर्व्व काम समृद्ध और शत्रुओं को क्षय
करनेहारा राजा होताहै ॥

एकसौउनतालीसका अध्याय ॥

उभयमुखी धेनुके दानका विधान और फल ॥

राजा युधिष्ठिर पूछते हैं कि हे श्रीकृष्णचन्द्र! उभयमुखी अर्थात् प्रसवहोतीहुई गौ किस विधि से दान करैं और उसके दान से क्या फल होताहै यह आप वर्णन करैं यह राजाका वचन सुन श्रीकृष्णभगवान् कहनेलगे कि हे महाराज! उभयमुखी धेनु बड़े पुण्यवान् मनुष्यों को प्राप्त होसक्ती है जब तक बछड़े के पैर भीतरही होयँ केवल शिरही बाहर निकला हो तबतक वह धेनु साक्षात् सप्तद्वीपवती पृथिवी है उभयमुखी धेनु के दान फलका एक मुख से वर्णन नहीं करसक्ते बहुत यज्ञ और दान करने से क्या प्रयोजन है केवल उभयमुखी दानसेही अनन्त पुण्य प्राप्त होता है गौ और वत्स के शरीर में जितने रोम होयँ उतने हजार दिव्यवर्ष स्वर्ग में निवास करताहै उसके पितर नरक से निकल विमान में बैठ उस लोक को जाते हैं जहां के वृक्ष कल्पवृक्षहैं और पायस कर्दमयुक्त घृत क्षीर की नदी बहती हैं जो सुवर्ण सहित उभयमुखी दान करै वह गोलोक में निवास कर ब्रह्मलोक को जाता है दुर्बला और दक्षिणा रहित धेनु दान न करै क्योंकि यह काम्य विधि

है स्त्री भी इस दानको कर चन्द्रके समान मुख तप्तसुवर्ण के समान वर्ण कमलसे नेत्र और बड़ा सौभाग्य पाती है ॥

एकसौचालीसका अध्याय ॥

वृषभदान का विधान और फल ॥

राजा युधिष्ठिर कहते हैं कि हे श्रीकृष्णचन्द्र ! आपका वचनरूप अमृत पान करते २ मुझे तृप्ति नहीं होती और श्रवण करने का बड़ा कुतूहल है इसलिये और भी दान माहात्म्य आप वर्णन करैं यह राजा का वचन सुन श्रीकृष्णभगवान् कहनेलगे कि हे महाराज ! सबदानों में उत्तम और पावन वृषभदान का विधान हम वर्णन करते हैं दश धेनुदान से भी एक वृषके दान करने से अधिक फल प्राप्त होता है हृष्ट पुष्ट युवा सुशील रूपवान् और धुरंधर एकही वृषभके दान करने से सब कुलका उद्धार होजाता है पर्व दिन में वृषभको भूषितकर उसके पुच्छ में चांदी लगाय दक्षिणासहित ब्राह्मण को देवै और (धर्मो वृषभरूपेण जगदानन्दकारकः । अष्टमूर्तेरधिष्ठानमतः पाहि सनातन) यह मन्त्रपढ़ प्रणामकर उसका विसर्जन करै इसविधि वृषभदान करनेसे सातजन्म तक किये सबप्रकार के पाप उसी क्षण नष्ट होजाते हैं अन्त में वह पुरुष दिव्यवृषभ युक्त देदीप्यमान विमान में बैठ गोलोक में जाता है वृषभ के शरीर में जितने रोम होवैं उतने हजारवर्ष वहां सुखभोग उत्तम ब्राह्मण के घर में जन्म लेता है और यज्ञ करनेहारा तथा बड़ातेजस्वी होता है शान्त जितेन्द्रिय वेदवेत्ता अहिंसक और प्रतिग्रहसे डरनेवाले ब्राह्मण मनुष्यों का उद्धार करने को समर्थ होते हैं दृढ़ पुष्ट बलवान् भारउठाने में समर्थ और सबगुणोंकरके भूषित उत्तम वृषभ

जो पुरुष दान करते हैं वे दश धेनुदान के फलसे भी अधिक उत्तम फल पाते हैं॥

एकसौइकतालीसका अध्याय॥

महिषीदानका विधान और फल॥

श्रीकृष्ण भगवान् कहते हैं कि हे महाराज! पुण्य पवित्र आयुष् और सुखदेनेहारा महिषीदान माहात्म्य हम कहते हैं ग्रहण अयन संक्रान्ति शुक्लचतुर्दशी आदि पर्वदिनों में अथवा जब होसके तबहीं संसाररोग निवृत्ति के लिये महिषीदान करै बहुत दूधदेनेहारी तरुण पुष्ट सुशील महिषी उत्तम ब्राह्मण को देवै वेद रहित और दाम्भिक को दान न देना चाहिये दान के समय यह पौराणिक मन्त्रपढ़ै (इन्द्रादिलोकपालानां या राजमहिषी शुभा॥ महिषीदानमाहात्म्यं सास्तु मे सर्वकामदा॥ धर्मराजस्य साहाय्ये यस्य पुत्रः प्रतिष्ठितः। महिषासुरस्य जननी या सास्तुवरदासम) यहमन्त्रपढ़ प्रदक्षिणा कर पृष्ठभाग से महिषी का दान करै वस्त्र भूषण और दक्षिणासहित महिषी ब्राह्मण को देकर क्षमापन करावै इस विधिसे जोपुरुष महिषीदान करै वह इसलोक में और परलोक में मनोवाञ्छित फल पाता है और राजाबनता है जो नारी महिषी दान करै वह राजमहिषी अर्थात् राजा की पट्टरानी होतीहै ब्राह्मण इस दान को करै तो यज्ञकरनेहारा होय क्षत्रिय विजयपावै वैश्य धनधान्यकरके युक्त होय शूद्र इस दान के करने से सब प्रकारकी सम्पत्ति पाता है इसलिये अपने और अपने कुटुम्ब के कल्याण के अर्थ धनवान् पुरुष को अवश्यही महिषी दान करना चाहिये दश धेनुदान के समान महिषीदान का फल होताहै यह नारदमुनि कहते हैं और बीस

धेनुदान के समान वेदव्यासजी बताते हैं मगर काकुत्स्थ धुन्धुमार गाधि आदि बड़े बड़े राजाओं ने यह दान किया है महिषीदान माहात्म्य को जो पुरुष सदा श्रवण करै वह सब पापों से छुट शिवलोक को जाता है नवीन मेघके समान नील वर्ण पुष्ट मनोहर और दुग्ध का मानों समुद्र ऐसी महिषी सुवर्ण और तिलोंसहित ब्राह्मणको देने से दोनों लोक जीतताहै॥

एकसौबयालीसका अध्याय॥

मेषीदानका विधान और फल॥

श्रीकृष्ण भगवान् कहते हैं कि हे महाराज! अब हम और भी उत्तम दान कहते हैं जिसके करने से सबपाप निवृत्तहोयँ सौ मोहर की मेषी अर्थात् भेड़ बनावै उस को उत्तम भूषण रेशमी वस्त्र चन्दन पुष्प माला आदि से अलंकृत करै अथवा प्रत्यक्ष मेषी कोही भूषित कर सबधातु सबरस सप्तधान्य फल पुष्प आदि सब सामग्री उसके समीप रक्खै वित्तशाठ्य न करै ग्रहण विषुव अयनआदि पर्वकालों में दुःस्वप्न होने पर ग्रहपीड़ा में अथवा जब श्रद्धा उत्पन्न होय तबहीं यह दान करै प्रथम तिल और घृत से हवन कर वस्त्र भूषण आदि से ब्राह्मणका पूजन करै पीछे तिलके कुम्भ पर उस को स्थापन कर उस के सम्मुख लवण रख विधिपूर्वक उस का पूजन कर (रोमत्वङ्मांसमेदाद्यैः सर्व्वोपकरणैस्तथा । जगतो हितयुक्ताऽसि सततं पार्थिवोत्थिता ॥ वाङ्मनःकायजनितं यत्किञ्चिन्ममदुष्कृतम् । तत्सर्वं विलयं यातु तव दानोपसेवनात्) यह मन्त्र पढ़ कुटुम्बी ब्राह्मण को देवै पीछे उस ब्राह्मण के साथ सम्भाषण न करै और उसका मुख भी न देखै प्रतिग्रह करके वह ब्राह्मण पातकी होजाता है पूर्वकाल

में यह दान पार्व्वतीजी ने किया जिस के प्रभाव से शिवजी पति मिले इन्द्राणी ने सुवर्ण के रोमों करके युक्त सौ मेष दान करने से सब देवताओं का राजा इन्द्र पति पाया नल को गया राज्य मिला इसी दान के करने से रुक्मिणी को हम पति प्राप्तभये अपुत्र को पुत्र और निर्द्धन को धन इस दान के प्रभाव से मिलता है जो इस दानविधान को सुनै वह भी अहोरात्रकृत पापसे छुटजाता है॥

एकसौतेंतालीसका अध्याय॥

भूमिदानका विधान और फल॥

श्रीकृष्णभगवान् कहते हैं कि हे महाराज! अब हम सब पाप हरनेहारे भूमिदान का विधान कहते हैं जो पुरुष अग्निहोत्री दरिद्र कुटुम्बी वैदिक ब्राह्मण को दक्षिणासहित भूमि देवै वह बहुत काल सब ऐश्वर्य का भोगकर अन्त में दिव्य विमान में बैठ विष्णुलोक को जाता है और वहां प्रलयपर्य्यन्त दिव्यांगनाओं के साथ विहार करता है धन धान्य सुवर्ण रत्न भूषण आदि सब दानकाफल भूमि देनेहारा पाताहै समुद्र नदी पर्वत सम विषम स्थल सब गन्ध और रस क्षीर युक्त ओषधी पुष्प फल कमल उत्पल आदि के समूह सब उसने दिये जिसने भूमिदान किया भूमिदान करने से जो पुण्य होता है वह दक्षिणायुक्त अग्निष्टोम आदि यज्ञ करने से भी नहीं प्राप्त होता है वेदवेत्ता ब्राह्मण को भूमि देकर फिर न हरै तो जब तक लोक हैं तबतक स्वर्ग में निवास करता है और प्रलय पर्य्यन्त उसके पितर सन्तुष्ट रहते हैं वृत्ति के निमित्त जो पाप पुरुष से बन पड़ते हैं गोचर्ममात्र भूमि देने से वे सब पाप निवृत्त होजाते हैं हजार मोहर देने से जो फल होता है उत-

नाही गोचर्म प्रमाण भूमिदान से भी होता है एक हज़ार कपिला गौदान करने के समान पुण्य गोचर्ममात्र भूमि देने से होता है मध्यम अर्थात् न बहुत लम्बे और न ठिंगने पुरुष के व्याम अर्थात् सीधी फैलाई दोनों भुजाओं के समान एक दण्ड होता है तीस दण्ड का गोचर्म और चार गोचर्म के तुल्य एक निवर्त्तन होता है सगर आदि अनेक राजाओं ने इस भूमिका उपभोग किया है परन्तु अपने २ आधिपत्य में जिस २ ने भूमिदान किया सब को फल हुआ यमदूत मृत्यु-दण्ड असिपत्रवन वरुण के घोर पाश रौरव आदि अनेक नरक और उनकी दारुण यातना कोई भी भूमिदान करने वाले के समीप नहीं आतीं चित्रगुप्त मृत्युकाल यम आदि सब उसका पूजन करते हैं षट्कर्म करनेहारा वेदवेत्ता आ-हिताग्नि दरिद्र सदाचार और अतिथि सत्कार में तत्पर ब्राह्मण को भूमि देनी चाहिये जिस भांति गौ अपने वत्स का पालन करती है इसी विधि भूमिदान करनेहारे का भूमि भी पालन करती है जिस भांति जल के सेचन से बीज अंकुरित होजाते हैं इसी प्रकार भूमि के देने से सब मनोरथ अंकुरित हो सुफल होते हैं जिस भांति सूर्य्य सब अन्धकार को हरता है इसी भांति भूमिदान सब पाप हरनेहारा है औरकी दान करी भूमि को जो हरै उसको वारुणपाशों से बांध यमदूत रुधिर और राद के कुण्ड में डालते हैं अपनी दी अथवा और की दी भूमि जो पुरुष हरै वह प्रलयपर्यन्त नरकाग्नि में जलता है भूमिहरी जाने से ब्राह्मण के जो अश्रुबिन्दु गिरते हैं वे हरनेहारे पुरुष की तीन पीढ़ी को नरक में पहुँचाते हैं ब्राह्मण को भूमि देकर फिर हरै उसको उलटा लटकाय कुम्भी-

पाकनामनरक में पकाते हैं दिव्य हजारवर्षके अनन्तर कुम्भीपाक से निकल भूमि पर जन्म लेता है और सात जन्मपर्यन्त अनेक क्लेश भोगता है आप भूमिदान करने से दूसरे की दी भूमि को न हरने में अधिक पुण्य है ब्राह्मण का धन हरनेहारे पुरुष निर्जल अरण्य में सूखे वृक्ष के कोटर के बीच कृष्णसर्प बनते हैं जो प्रसन्न चित्त होकर ब्राह्मण को भूमि देवै उसके सब मनोरथ सिद्ध होते हैं भूमिदान से अधिक कोई पुण्य नहीं और भूमिहरण से बढ़कर कोई पातक नहीं भूमिदान करनेहारे पुरुष प्रलयपर्यन्त स्वर्गसुख भोगते हैं॥

एकसौचवालीस का अध्याय॥

सुवर्णभूमिदान का विधान और फल॥

राजा युधिष्ठिर कहते हैं कि हे श्रीकृष्णचन्द्र! भूमिदान क्षत्रिय कर सकते हैं औरों से न तो भूमिदान होसके न दी भूमिका पालन होय इसलिये सब के कल्याण के अर्थ ऐसा दान आप कहैं जिसके करने से भूमिदान के समान फल होय यह राजा का वचन सुन श्रीकृष्णभगवान् कहने लगे कि हे महाराज! जो प्रत्यक्ष भूमि न देसकै तो सुवर्ण की भूमि बनाय ब्राह्मण को देवै तौभी वही फल होता है अब हम इस दान का विधान कहते हैं ग्रहण संक्रान्ति युगादि तिथि व्यतिपात आदि पुण्य समयों में पापक्षय के और यश प्राप्तिके अर्थ यह दान करै सौ पल से और पांच पलतक सामर्थ्यानुसार सुवर्ण की भूमि बनावै जम्बूद्वीप आदि द्वीप मेरु आदि पर्वत नदी अनेक प्रकार की खेती और रत्नादिकों से उसको अलंकृत कर दश अथवा बारह हाथ लम्बा चौड़ा मण्डप बनाय उसमें चार हाथ की वेदी बनावै ईशान कोण में देवता

स्थापन करै और अग्निकोण में कुण्ड बनाके पताका आदि से मण्डप को शोभित कर लोकपाल और ग्रहों का सब उपचारों से पूजन करै पीछे ब्राह्मणों से हवन करावै ब्राह्मण भी वस्त्र भूषण चन्दन आदि से अलंकृत प्रसन्न चित्त हो हवन करैं शंख तूर्यआदि अनेक प्रकार के बाजे बजैं वेदी के ऊपर अष्टादश धान्य लवण आदि सब रस आठ पूर्ण कलश रेशमी वितान अनेक प्रकार के फल नाना भांति के वस्त्र चन्दन के टुकड़े और भी सब सामग्री को स्थापन कर सबका अधिवासन करै फिर होम के अन्त में यजमान श्वेतवस्त्र माला आदि से अलंकृत हो सुवर्ण की बनाई भूमि की प्रदक्षिणा कर पुष्पांजलि लेकर (नमस्ते सर्वदेवानां त्वमेव रचना यतः । धात्री च सर्व्वभूतानामतः पाहि वसुन्धरे ॥ वसु धारयसे यस्मात्सर्व्व सौख्यप्रदायकम् । वसुन्धरा ततो जाता तस्मात्पाहि भयादलम् ॥ चतुर्मुखोपि नो गच्छेद्यस्मादन्तन्तवाचले । अनन्तायै नमस्तस्मात् पाहि संसारकर्दमात् ॥ त्वमेव लक्ष्मीर्गोविन्दे शिवे गौरीतिसंस्थिता । गायत्री ब्रह्मणः पार्श्वे ज्योत्स्ना चन्द्रे रवौ प्रभा ॥ बुद्धिर्बृहस्पतौ ख्याता मेधा मुनिषु संस्थिता । विश्वं प्राप्य स्थिता यस्मात्ततो विश्वम्भरा मता ॥ धृतिः क्षितिः क्षमा क्षोणी पृथिवी वसुधा मही । एताभिर्मूर्त्तिभिः पाहि देविसंसारसागरात्) ये मन्त्र पढ़ पृथ्वी पर पुष्पांजलि चढ़ावै पीछे उसको दान कर ब्राह्मण को देवै और अपने धन का अर्द्ध अथवा चतुर्थांश गुरु के अर्पण करै इस विधि से जो पुरुष पर्व दिन में सुवर्णभूमि का दान करै वह अति प्रकाशमान विमान में बैठ विष्णुलोक को जाता है वहां तीन कल्पपर्यन्त उत्तम भोग भोग कर भूमि पर जन्म लेकर सात जन्मपर्यन्त विजयी

धर्म्मनिष्ठ शतकोटि धनका स्वामी चक्रवर्त्ती राजा होता है॥

एकसौपैंतालीस का अध्याय॥

हलपंक्ति दान का विधान और फल॥

श्रीकृष्णभगवान् कहते हैं कि हे महाराज! अब हम सर्व्व पाप हरनेहारा और सर्व्व सौख्यप्रदायक ऐसा दान कहते हैं जिस एक दान के करनेसेही सब दानों का फल प्राप्तहोय चार बैलों करके युक्त एक हल होता है ऐसे दश हल होने से एक पंक्ति होती है प्रथम उत्तम दृढ़ काष्ठ के दशहल बनवाय सुवर्ण के पट्ट और रत्नों से भूषित कर तरुण सुन्दर बली अव्यंग ऊँचे वस्त्र भूषण आदि से अलंकृत उत्तम वृष उन हलोंमें जोतै और उत्तम खेती करके युक्त बड़ा ग्राम छोटा ग्राम अथवा सौ निवर्त्तन परिमित भूमिदान के लिये नियत करै जो इतना सामर्थ्य न होय तो पचास निवर्त्तनही देवै पीछे वेदवेत्ता सदाचार सम्पूर्णाङ्ग अलंकृत सपत्नीक दश ब्राह्मणों को निमन्त्रण देवै दश हाथ का मण्डप बनाय उस में अतिसुन्दर हस्तप्रमाण कुण्ड बनावै उसमें वे सब ब्राह्मण पलाश की समिधा घृत कृष्णतिल और पायस करके व्याहृतियों से पर्जन्यसूक्त से और रुद्रमंत्रों से हवन करैं फिर पर्वकाल में यजमान स्नानकर शुक्लवस्त्र आदि से अलंकृत हो सप्तधान्य के ऊपर हल पंक्ति को स्थापन कर उसमें वृषभ जोड़ै उस समय अनेक प्रकारके बाजे बजैं और वेदध्वनि होय और यजमान पुष्पांजलि ग्रहण कर ये मन्त्र पढ़ै (यस्माद्देवगणाः सर्वे हले तिष्ठन्ति सर्व्वदा। वृषस्कन्धे सुनिहितास्तस्माद्भक्तिःशिवेस्तु मे॥ यस्माच्च भूमिदानस्य कलां नार्हन्ति षोडशीम्। दानान्यन्यान्यतो भक्तिर्ममैवास्तु सदा दृढा) फिर

ब्राह्मण उन हलों को धीरे २ चलावे और यजमान रत्नों सहित सब बीज सुवर्ण और चांदी ब्राह्मणों के हाथ से निर्वपन करावे अर्थात् बुवावे पीछे भूमि और वे सब हल उन ब्राह्मणों को अर्पण करै इस प्रकार जो पुरुष हलपंक्ति का दान करै वह अपने इक्कीस कुलों सहित स्वर्ग को जाता है सात जन्म पर्यंत उस पुरुष को दारिद्र्य दौर्भाग्य और व्याधि नहीं होती है और सेना का अधिपति बनता है जो भक्ति से इस दान को देखै वह भी जन्म भर किये पापों से छुटता है यह दान दिलीप ययाति शिबि भरत आदि सब राजाओं ने किया है इसी के प्रभाव से वे आज तक स्वर्ग सुख भोगते हैं इस लिये भक्ति-पूर्वक सब स्त्री पुरुषों को यह दान करना चाहिये जो हल-पंक्ति का दान करने का सामर्थ्य न होय तो पांच चार अथवा एक ही हलदान करै हल से जितने रेणु उठैं और वृषभों के शरीर में जितने रोम होवँ उतने हजार वर्ष शिवलोक में नि-वास कर अन्त में वह पुरुष राजा होता है॥

एकसौछियालीसका अध्याय॥

राजाबभ्रुवाहनकीकथा और अपाकदानका विधान॥

राजायुधिष्ठिर कहते हैं कि हे श्रीकृष्णचन्द्र! आप ऐसा कोई दान कहैं जिस के करने से मनुष्य बहुपुत्र बहुधन और बहुभाग्य होजाय यह राजा का वचन सुन श्रीकृष्ण भगवान् कहने लगे कि हे महाराज! इस में एक इतिहास हम कहते हैं आप प्रीति से श्रवण कीजिये पूर्व काल में इसी भरत वंश के बीच बभ्रुवाहन नाम एक राजा हुआ वह बड़ा प्रतापी आ-रोग्य बली और शत्रुओं को जीतनेहारा था परन्तु न तो उस के कोई ऐसा मंत्री था जो राज्य भार उठा सकै न पुत्र न मित्र

और न कोई सुख देनेहारा बन्धु था इस कारण वह राजा सदा व्यग्र रहता एक दिन महायोगी पिप्पलाद मुनि वहां आये राजा की रानी शुभावती ने पाद्यार्घ्य आदि से उन का पूजन किया और आसन पर बैठाय प्रार्थना करी कि महाराज यह निष्कंटक राज्य पाया परन्तु मन्त्री मित्र पुत्र आदि हम को क्यों नहीं प्राप्त होते इस का आप कारण कथन करें यह रानी का वचन सुन पिप्पलाद मुनि कहनेलगे कि हे रानी! यह कर्मभूमि है इस में जितना कर्म करो उतना ही फल प्राप्त होता है जो पदार्थ पूर्व जन्म में मनुष्य ने संपादन नहीं किया होय वह पदार्थ शत्रु मित्र बांधव राजा आदि कोई भी नहीं दे सकते पूर्व जन्म में तुम ने राज्य का अर्जन किया सो पाया विना संपादन किये पुत्र मित्र आदि अब कहां से मिल जायँ यह मुनि का वचन सुन रानी शुभावती ने कहा कि महाराज पीछे की बात गई सो गई अब भी कोई व्रत दान उपवास मन्त्र अथवा सिद्ध योग आप ऐसा बतावें जिस से हम बहुत पुत्र बहुत भृत्य मित्र और धन पावें यह रानी का वचन सुन पिप्पलाद मुनि ने उन को अपाकदान का विधान उपदेश किया जिस के करने से राजा बभ्रुवाहन ने बहुत पुत्र भृत्य मन्त्री और मित्र पाये इतना कह श्रीकृष्ण भगवान् बोले कि हे महाराज ! सर्वकामप्रद उस दान का विधान हम आप के प्रति कथन करते हैं अच्छे मुहूर्त में अगुरु चन्दन धूप पुष्प वस्त्र भूषण नैवेद्य आदि से शुक्र का पूजन करै और (त्वंमेभाण्डानि चित्राणि गुरूणि च लघूनि च । माणिक्यादीनि शुभ्राणि हारांश्च सुमनोहरान् ॥ संपादय महाभाग विश्वकर्मा त्वमेव हि । भार्गव त्वं प्रसन्नेन मनसा पाहि मां सदा) यह मन्त्र पढ़ै फिर

अपाक अर्थात् विना अग्नि सिद्ध किये पदार्थों सहित एक हज़ार भाण्ड अर्थात् पात्र वहां स्थापन करै सायङ्काल के समय हवन कर रात्रिको जागरण और गीत वाद्य आदि का उत्सव करै प्रभात होतेही यजमान स्नान कर श्वेत वस्त्र पहिने उन भाण्डों के ऊपर यथाशक्ति सोने चांदी ताम्र अथवा लोह के सोलह भाण्ड स्थापनकर सब को रक्तवस्त्र से ढक पुष्प मालाओं से उन का अर्चन करै ब्राह्मणों से स्वस्तिवाचन आदि करवाय शुक्र का पूजन करै सौभाग्यवती नारियों का पूजन कर भाण्डों की प्रदक्षिणा करै और (भाण्ड रूपाणि यान्यत्र कल्पितानि मया किल। भूत्वा सत्पात्ररूपाणि उपतिष्ठन्तु तानि मे) यह मन्त्र पढ़ उन सब भाण्डों को बांटदेवै अथवा लुटादेवै जिस की इच्छा होय सो आपही लेलेवे इस विधि से जो पुरुष अथवा स्त्री यह दान करै उस के ऊपर तीन जन्म तक विश्वकर्मा सन्तुष्ट रहते हैं और पुत्र मित्र भृत्य घर आदि सब पदार्थ मिलते हैं जो स्त्री इस दान को भक्ति से करै वह सौभाग्य पति के साथ अवियोग पुत्र पौत्र आदि सब पदार्थ पाती है और अन्त में अपने पति सहित स्वर्ग को जाती है॥

एकसौ सैंतालीस का अध्याय॥

गृहदान का विधान और फल॥

राजा युधिष्ठिर कहते हैं कि हे श्रीकृष्णचन्द्र! आप सब शास्त्र का तत्त्व जानते हैं इस लिये गृहदान का माहात्म्य वर्णनकरैं तब श्रीकृष्ण भगवान् कहने लगे कि हे महाराज! गृहस्थ धर्म से अधिक कोई धर्म नहीं असत्य से अधिक पाप नहीं ब्राह्मण से बढ़कर कोई पूज्य नहीं और गृहदान से उत्त

कोई दान नहीं धन धान्य पुत्र स्त्री हाथी घोड़े गौ भृत्य आदि से परिपूर्ण घर स्वर्ग से भी अधिक सुख देनेहारा है जिस भांति सब जीव माता के आश्रय से जीते हैं इसी विधि सब आश्रय गृहस्थ के आश्रय से जीते हैं अपने घर में रात्रि के समय पैर पसारकर सुखपूर्वक सोने में जो आनन्द है वह स्वर्ग में भी नहीं जो पुरुष शैव वैष्णव योगी दीन अनाथ अभ्यागत आदि के लिये धर्मशाला बनाते हैं उन को सब व्रत और दानों का फल प्राप्त होता है पक्की ईंटोंका बहुतदृढ़ ऊँचा शुभ्रवर्णजाली झरोखे स्तम्भ कपाट अर्गल आदि युक्त जलाशय और पुष्पवाटिका से भूषित उत्तम आंगन करके शोभित बहुत रमणीय घर बनाय लोहे सोने चांदी पीतल ताम्र काष्ठ मृत्तिका आदि के सब उपस्कर वस्त्र चर्म वल्कल तृण पाषाण अजिन सातों धातुओं के पात्र रत्न भूषण गौ भैंस घोड़े वृषभ सब धान्य घृत तैल गुड़ तिल चावल धान्य इक्षु मूंग गोधूम सर्षप मटर अरहर चने मसूर कँगुनी उड़द लवण खजूर द्राक्षा जीरा धनियां चूल्हा चक्की चलनी छाज ऊखल मूसल हांड़ी मथानी मार्जनी जलकुम्भ इत्यादि सब छोटे बड़े गृहस्थ के उपकरण उस घर में स्थापन करै फिर अच्छे मुहूर्त्त में कुलशीलयुक्त और वेदशास्त्र जाननेहारे सपत्नीक ब्राह्मणों को बुलाय वस्त्र भूषण आदि से उन का पूजन कर शान्तिकर्म में उन को नियुक्त करै घर के आंगन में मेखला सहित कुण्ड बनाय ब्राह्मण उस में हवन करैं और रक्षोघ्न सूक्त पढ़ैं पीछे वास्तुपूजाकर दिशाओं में भूतबलि देवै इस विधि शान्ति कर्मकर वह गृह उन ब्राह्मणों को देवै जो शक्ति होय तो एक २ गृह एक २ ब्राह्मण को देवै अथवा एक गृहही सर्वोपस्कर

सहित एक सत्पात्र ब्राह्मण के अर्पण करै शीत वायु और धूपकी हरनेहारी तृणकी कुटीभी ब्राह्मण को देवै तो स्वर्ग को जाता है फिर उत्तम घर देने का तौ पुण्य कहांतक कहैं गौ भूमि सुवर्ण आदि के दान और अनेक प्रकार के यम नियम गृहदानकी षोड़शीकला की भी तुल्यता नहीं कर सक्के सब सामग्री सहित बहुतदृढ़ और सुन्दर गृह उत्तम ब्राह्मण को जो पुरुष देवै वह उत्तम विमान में बैठ शिवलोक को जाताहै और वहां बहुत काल दिव्य अप्सराओं के साथ विहार करता है ॥

एकसौ अड़तालीसका अध्याय ॥

अन्नदानका माहात्म्य राजाश्वेतकी कथा और एकवैश्यकी कथा ॥

श्रीकृष्णभगवान् कहते हैं कि हे महाराज! पूर्वकाल में मुनियों ने जो अन्नदान माहात्म्य कहा है वह हम कहते हैं आप एकाग्रचित्त हो श्रवण करैं हे महाराज ! अन्न दीजिये अन्न दीजिये अन्न दीजिये जिससे सद्यः सब को सन्तोष होताहै और दानों से क्या प्रयोजन है वन के बीच रामचन्द्र जीने निर्वेद से यह कहा कि हे लक्ष्मण! सम्पूर्ण पृथिवी अन्न से पूर्णहै परन्तु हमको अन्न नहीं प्राप्त होता इससे यही जानते हैं कि हमने अन्नदान नहीं किया जो कर्मबीज मनुष्य बोते हैं उसीका फल खाते हैं हमने ब्राह्मणों के मुख में अन्न का हवन नहीं किया विनादिया कोई पदार्थ नहीं मिलता यह लोकप्रवाद सत्य है सत्य से परे पुण्य नहीं बुद्धि से अधिक लाभ नहीं सन्तोष से परे सुख नहीं और अन्नदान से बढ़कर कोई दान नहीं स्नान अनुलेपन भूषण वस्त्र आदि चाहे जितने पदार्थ मिलैं परन्तु अन्नविना सुख और सन्तोष

नहीं होता अर्थात् भूखेको ये कोई पदार्थ अच्छे नहीं लगते पूर्वकाल में श्वेतनामक चक्रवर्त्ती राजा हुआ है जिसने बहुत यज्ञकिये अनेक संग्रामों में जयपाया दान दिये धर्म से राज्य किया वह राजा अनेक उत्तम भोग बहुत काल भोगकर राज्य को त्याग वानप्रस्थ हुआ और बहुत काल तप करके अन्त में दिव्य विमानपर बैठ स्वर्ग को गया वहां विद्याधर किन्नर आदि उसके साथ विहार करते अप्सरा उसकी सेवा में रहतीं गन्धर्व उसको गीत सुनाकर रिझाते इन्द्र भी उसका बहुत सत्कार करते और सदा दिव्य वस्त्र भूषण माला आदि पहिनने को मिलते परन्तु भोजन के समय विमान पर बैठ भूलोक में आता और वहां अपने पूर्व शरीर का मांस नित्य खाता और वह शरीर नित्य भक्षण करने पर भी न घटता इससे अत्यन्त व्याकुल हो राजा ने एक दिन ब्रह्मा जीसे प्रार्थनाकरी कि महाराज स्वर्ग में मेरा निवास सब देवता मेरा सत्कारकरैं और सब उपभोग मेरे लिये उपस्थित रहते हैं परन्तु यह पापिनी क्षुधा मुझे निरन्तर सताती है और अपने पूर्वशरीर का मांसखाते मुझे अत्यन्तघृणा होती है मैंने ऐसा कौन पाप किया कि जिस से उत्तम भोजन नहीं मिलता अब आप कृपाकर ऐसा उपाय बतावैं जिससे यह कष्ट निवृत्तहोय यह राजा का वचन सुन ब्रह्माजी कहनेलगे कि हे राजन्! तुमने सब दान किये परन्तु ब्राह्मणों को उत्तम २ भोजनों से सन्तुष्ट नहीं किया उसीका फल अब भोगतेहो अन्न के विना दूसरा कोई संजीवन औषध नहीं है इससे इसीको अमृत जानना चाहिये इसलिये अब तुम भूमिपर जाय वेदशास्त्र जाननेहारे तपोनिष्ठ और जितेन्द्रिय ब्राह्मण को भोजन कराओ

तो तुम्हारा यह क्लेश निवृत्त हो यह ब्रह्माजीका वचनसुन राजा श्वेत भूमिपर आया और वहां परम भक्ति से अगस्त्य मुनिको भोजन कराय अपने कण्ठ से दिव्य मोतियों की एकावली उतार उनको दक्षिणा दी अगस्त्यजी को भोजन कराते ही राजा सन्तुष्ट होगया और सब देवता वहां आय बड़े आदरसे राजा को विमान में बैठाय स्वर्ग को लेगये रामचन्द्र जी ने जब रावणको मारदिया तब वह एकावली अगस्त्यजी ने रामचंद्र जी को दी यह अन्नदान का माहात्म्य है हमारा वचन सत्य मानो कि अन्नसे बढ़कर कोई उत्तम पदार्थ नहीं अन्न जीवों का प्राण है अन्नही तेज बल और सुख है इस कारण अन्न देनेहारा प्राणदायक होताहै भूखे मनुष्य दूसरे जिस के घर आशा करके आवैं और तृप्त होकर वहां से जायँ वह पुरुष धन्य है जो भूखे को अन्न न देसके उस का गृहस्थाडम्बर वृथा है अन्नके विना कोई जी नहीं सक्ता जैसा अन्न खाकर पुरुष मैथुन में प्रवृत्त होय वैसेही पुत्र उत्पन्न होते हैं मनुष्यों का दुष्कृत अन्न में रहता है इस लिये जो जिसका अन्न खाय वह उसका दुष्कृत भक्षण करता है चन्द्रमा जब वनस्पतियों में प्राप्त होता है उस दिन जो परान्न भोजन करै उसका एक महीने का किया पुण्य अन्नदाताको प्राप्त होजाता है इस लिये उस दिन परान्न भोजन न करै जिस अन्नके देने का इतना फल है फिर क्यों न अन्नदान करैं ब्राह्मण को भिक्षाहंतकार अथवा तृप्तिपूर्वक भोजन दिये विना जो पुरुष भोजन करते हैं वे केवल किल्बिषही भक्षण करते हैं जिसने दश हजार अथवा हजारही ब्राह्मणों को भोजन कराया उसने ब्रह्मलोक को जाने के लिये मानो कमरबांधी पूर्वकालमें काशी

के बीच प्राणिजीवी वैश्यों में देव ब्राह्मण पूजक धनेश्वर नाम एक वैश्यथा उसके घर में सर्पिणी एक अण्डा छोड़गई वैश्य ने उस अण्डे को देखा और दया से उसका रक्षण किया कुछ दिनके अनन्तर अण्डे को फोड़कर कृष्ण सर्पका बच्चा निकला वैश्यभी उस को नित्य दूध पिलाने लगा वह सर्प कभी वैश्य के अंग को चाटता कभी पैरोंमें लोटता और सारे घरमें फिरता वैश्य उसकी भली भांति रक्षा करता कुछ कालमें वह बड़ा भयंकर सर्प होगया एक दिन वैश्य गंगास्नान को गया था और उसका पुत्र दुकान पर सौदा बेचता था उससमय वह सर्प चंचलता से वणिक्पुत्रके पैरोंके बीच से निकला इससे उसको त्रास हुआ और सर्पको उसने तर्जन किया तर्जन करते ही उछलकर सर्प वैश्यपुत्रके मस्तक पर जा बैठा और क्रोध कर बोला कि रे मूर्ख! तेरे पिता के मैं शरण में हूँ उसी ने मेरा पालन पोषण किया इस लिये मैं तेरा भी भलाही चहता था परन्तु तैंने मुझे विना अपराध ताड़न किया इस लिये अब तुझे जीता न छोडूँगा यह सर्प का वचन सुनतेही उस के घर में रोना पीटना मच गया इतने में अच्युत अनन्त गोविन्दआदि नाम उच्चारण करता धनेश्वर भी स्नान करके घर आया और पुत्रको देखा सर्पने कहा कि हे धनेश्वर! तेरे पुत्रने निरपराध मुझ को ताड़न किया इस लिये तेरे सम्मुख ही मैं इसके प्राण हरता हूँ जिससे फिर कोई पुरुष ऐसा काम न करै यह सुन धनेश्वर बोला कि हे सर्प! जो उपकार भक्ति स्नेह आदि सब को भूलकर उत्पथ में चले उस को कौन रोकसक्ता है परन्तु क्षणमात्र तू इस बालक को दंश मत कर जब तक यह अपना और्ध्वदैहिक अपने हाथ करलेवै सर्प ने यह बात स्वीकार

करली वैश्यने भी वेदवेत्ता और जितेन्द्रिय एक हजार ब्राह्मणों को घृत पायस भोजन कराया और सबको दक्षिणादी ब्राह्मणों ने प्रसन्नहो (हे वैश्यपुत्र ! तू चिरंजीव हो तेरे सब शत्रु नष्टहोयँ और सब मनोरथ सिद्ध होयँ) ये वाक्य कहकर अक्षत और पुष्प वैश्यपुत्र के मस्तकपर डाले अक्षत गिरतेही ब्राह्मणों के वाग्वज्र से ताड़ित पर्व्वत की भांति वह सर्प्पगिरा और मरगया सर्प्प को मरे देख धनेश्वर को बड़ा पश्चात्ताप हुआ और शोचने लगा कि यह सर्प्प मैंने पुत्र की भांति पाला और बहुत इसका लालन किया अब यह मेरेही दोषसे मृत्युवश हुआ यह बड़ाही अनुचित कर्म बनपड़ा उपकार करनेहारे में जो साधुता करै उसकी साधुता प्रशंसा योग्य नहीं होती अपकारियों में जो साधुत्व रक्खे उसकी साधुता सराहिये इस भांति अनेक प्रकारके पश्चात्ताप वैश्यने किया और दुःख के मारे नतो भोजनकिया और न रात्रि को सोया प्रभातहोतेही गङ्गा में स्नानकर देवता पितरों का पूजन तर्पण आदिकर घर आय एक हजार सदाचार ब्राह्मणोंको अनेक प्रकारके उत्तम उत्तम भोजनोंसे सन्तुष्टकिया और दक्षिणा दी ब्राह्मणों ने प्रसन्नहोकर कहा कि हे धनेश्वर ! हम बहुत सन्तुष्ट हुये तूभी वरमांग तब वैश्य ने यही वरमांगा कि महाराज यह सर्प जीउठै यही वर चाहताहूँ यह वैश्य का वचन सुन ब्राह्मणोंने अभिमन्त्रित जलसे उस सर्पको प्रोक्षण किया प्रोक्षण करतेही पर्वत की भांति वह सर्प उठा और दोनों जीभ लपलपाने लगा उसको देख धनेश्वर बड़ा प्रसन्न हुआ और सब नगर के लोग धनेश्वर की प्रशंसा करनेलगे यह सहस्र ब्राह्मण भोजन का संक्षेप से माहात्म्य वर्णन

कियाहै जो पुरुष ब्राह्मणों को और अभ्यागतों को अन्नदेते हैं वे बहुतादिन संसारसुख भोगकर विष्णुलोक को जाते हैं॥

एकसौउनचासका अध्याय॥

स्थालीदानका विधान और फल॥

राजा युधिष्ठिर कहते हैं कि हे श्रीकृष्णचन्द्र! आप के मुख से अन्नदान माहात्म्य सुन एकबात हमारे भी स्मरण आई वह अपने नेत्रों से देखी आपको सुनाते हैं जब द्यूत के छलसे दुर्योधन कर्ण शकुनि आदि ने हमारा राज्य और धन हरलिया और हम वल्कल पहिन वनको गये उस समय सब नगर के लोग और सदाचार ब्राह्मण स्नेह से हमारे साथ चले उनको देख हमको बड़ा निर्वेद हुआ और यह शोचा कि जो पुरुष ब्राह्मण मित्र भृत्य आदिका पोषण करै उसका जीवन सफल है अपना पेट तो सबही भरते हैं अभ्यागत सुहृद्वर्ग और कुटुम्ब को छोड़ जो अपनाही पेटभरै वह पापी जीताही मराहै यह मनमें शोच उन ब्राह्मणों से हमने कहा कि आप सब त्रिकालज्ञ और ज्ञानविज्ञान के पारगामी मेरे स्नेह से आये हैं अब कुछ अपने भोजन के लिये उपाय करैं जिस से भाई भृत्य बन्धु और आप सहित हमारा बारहवर्ष निर्जन वन में निर्वाह होय यह हमारा वचन सुन मैत्रेयमुनि बोले कि हे महाराज! एक प्राचीन वृत्तान्त हमने दिव्य दृष्टि से देखा है वह हम कहते हैं आप श्रवण करैं पूर्व्वकाल में तपोवन के बीच दुर्भगा और दरिद्रा एक ब्रह्मचारिणी थी वह इस दशा में भी नित्य ब्राह्मणों का पूजन कियाकरती उसका शम दम और श्रद्धा देख एक दिन प्रसन्नहो ब्राह्मणों ने कहा कि हे ब्राह्मणि! हम तुझ से बहुत प्रसन्नहैं वरमांग

तब ब्राह्मणी ने कहा कि महाराज कोई व्रत अथवा दान ऐसा बताइये जिस के करने से पतिकी प्रिया बहुपुत्रा धनाढ्या लोक में प्रशंसा योग्य और त्रिवर्गभागिनी होजाऊँ यह ब्राह्मणी का वचन सुन वशिष्ठजी कहनेलगे कि हे ब्राह्मणि ! सब मनोरथ सिद्ध करनेहारा दान हम तेरे को बताते हैं वह तू कर पचीस पल बारह पल अथवा छः पल ताम्र की एक हांड़ी बनावै जो सामर्थ्य न होय तो मृत्तिका की उत्तम हांड़ी लेकर उस को चावलों से भर चन्दन से चर्चित कर मण्डल के बीच स्थापनकरै उसके समीप सब प्रकारकी तरकारी शाक और घृतका पात्र स्थापन कर पुष्प धूप दीप वस्त्र आदि से उसका पूजनकर (ज्वलज्ज्वलनपार्श्वस्थतण्डुलैरपिपूरिते । त्वया विना न संसिद्धिर्भूतानां सिद्धिकामिनाम् ॥ अतस्त्वांप्रणमेनित्यं सत्यंकुरुवचोमम । अक्षयान्नप्रदानित्यंतथाभववरप्रदा) यह मन्त्रपढ़ वह हण्डिका आचार्य्य के अर्पण करै यह दान रविवार संक्रांति चतुर्दशी अष्टमी एकादशी अथवा तृतीया को करै यह वशिष्ठजी का उपदेश मान वह ब्राह्मणी नित्य ब्राह्मणों को स्थाली देनेलगी उस पुण्य के प्रभाव से जन्मान्तर में वह तुम्हारी भार्या द्रौपदी भई इतनाकह मैत्रेयमुनि ने कहा कि हे महाराज ! अब जो द्रौपदी अपनी स्थाली से अन्न देवै तो सम्पूर्ण जगत् को तृप्त करसकती है यह मैत्रेयका वचन सुन हमने भी वैसाही किया और सब ब्राह्मणों को नित्य भोजन करानेलगे इतना कह राजायुधिष्ठिर बोले कि हे श्रीकृष्णचन्द्र ! अन्नदान के प्रसंग से यह स्थाली दान विधान हमने कहा सो आप क्षमा करना जो पुरुष सुन्दर ताम्रकी स्थाली बनाय तण्डुलों से पूर्णकर पर्व्व दिनों

में इस विधान से ब्राह्मणकोदेवै उन के घर में सुहृद् सम्बन्धी बान्धव मित्र भृत्य और अतिथि नित्य भोजन करें तो भी भोजनका संकोच नहीं होता ॥

एकसौपचासका अध्याय ॥

दासीदानका विधान और फल ॥

श्रीकृष्णभगवान् कहते हैं कि हे महाराज ! अब हम भक्ति से और स्नेह से आपको दासीदान का विधान कहते हैं जो आजतक किसी ने न कहा होगा चारों आश्रमों में गृहस्थाश्रम सब से उत्तम है गृहस्थ में गृह और गृह में उत्तम स्त्री सार हैं जिस में पूर्णचन्द्रमुखी और पीनोन्नतस्तनी नारी होयँ उसीको घर कहना चाहिये जिस घर में स्त्रियों का आदर होय वहां सब देवता निवास करते हैं और जहां इनका अनादरहोय वे गृह नाश को प्राप्तहोते हैं अनादर करी हुई नारी जिन घरों को शापदेती है वे घर मानों कृत्या करके हत होजायँ शीघ्रही पराभवको प्राप्तहोते हैं अमृत के मानों कुण्ड सुखकी मानों राशि रतिके मानों निधान ऐसी नारी किसने रची हैं श्यामा मन्थरगामिनी घनपीन पयोधरा ऐसी नारी और महिषी घर घर में नहीं होती हैं अर्थात् कोई पुण्यवान्ही पाता है जिस घर में सुवर्ण दासी बालक और दही दूधआदि न होयँ वह घर साक्षात् नरकही जानो अधिपति विना ग्राम दासी विना घर और घृत विना भोजन ये तीनों वृथा हैं रूपलावण्ययुक्त दासी जिस घरमें होयँ वहां साक्षात् कमलहस्ता लक्ष्मी निवास करती हैं जिस घर में शौच आचारहोय व्यवहार शुद्धहोय और दासी दासोंका भली भांति पोषणहोय वहां लक्ष्मी का निवास होता है बहुत लोकों करके

आकुल ग्राम दासी दासों करके आकुल घर और धर्म करके आकुल बुद्धि उत्तम होती है जिस घर में भार्या गृहस्थ व्यवहार में चतुर होय दासी अपने २ काम में तत्पर होयँ और सेवक सदा उद्यमी होयँ वहां त्रिवर्ग अर्थात् धर्म, अर्थ और काम का निवास होता है वेद में लिखा है कि जो २ पदार्थ अपने को प्रिय होयँ सो सब ब्राह्मणों को देने चाहिये यह बात मन में विचार ब्राह्मण को उत्तम दासी देनी चाहिये स्थिर नक्षत्र में और सौम्यग्रहान्वित लग्न में वस्त्र भूषण आदि से यथाशक्ति दासी को अलंकृत कर (इयंदासीमयातुभ्यं भगवन्प्रतिपादिता । सर्वकर्मसु योज्येयं यथेष्टं भद्रमस्तु मे) यह मन्त्र पढ़ ब्राह्मण को देवै पीछे सुवर्ण वस्त्र सुगन्ध द्रव्य आदि ब्राह्मण को देकर क्षमापन करावै इसी विधि से देवालयमें भी दासी अर्पण करै इसप्रकार जो पुरुष दासीदान करै वह विद्याधरों करके सेवित अप्सरा लोक में निवास करताहै ॥

एकसौ इक्यावनका अध्याय ॥

प्रपादान और जलदान का विधान और फल ॥

राजा युधिष्ठिर कहते हैं कि हे श्रीकृष्णचन्द्र ! अब आप प्रपा अर्थात् जलशाला का विधान कहैं किस काल में और किस विधि से जलशालादान होता है और उसके दानसे क्या फल है यह सब आप वर्णन करैं यह राजा का वचन सुन श्रीकृष्णभगवान् कहनेलगे कि हे महाराज ! चैत्र महीने के आरम्भ में उत्तम मुहूर्त्त देख नगरके मध्य में रस्ते के किनारे देवालय में चैत्य वृक्षके नीचे अथवा निर्जल वन में सुन्दर मंडप घनी और ठण्ढी छाया युक्त बनावै उसके बीच ठण्ढे जलसे पूर्ण गीले वस्त्रसे वेष्टित बड़े २ मटके और शीतल जल जिन

में रहै ऐसी सुराही रक्खै और सुशील कुटुम्बी ब्राह्मण को उसमें नियुक्त करै जो निरन्तर सबको जल पिलाया करै उस ब्राह्मण के निर्वाह योग्य जीविका कल्पना करदेवै इसप्रकार उत्तम मुहूर्त्त में प्रपा बनवाय यथाशक्ति ब्राह्मण भोजन कराय (प्रपेयं सर्वसामान्या भूतेभ्यः प्रतिपादिता। अस्याः प्रदाना त्पितरस्तृप्यन्तु च पितामहाः) यह मन्त्र पढ़ प्रपा का दान करे उस दिन से लेकर चार अथवा तीन मास तक निरन्तर जल पिलावै और यथाशक्ति अन्नभी देवै सुगन्ध शीतल सु-स्वादु और उत्तम पात्र में स्थित जल सबको पिलावै और यथा शक्ति नित्यही ब्राह्मण भोजन करावै इस विधि से जो पुरुष ग्रीष्म ऋतु में जलदान करै वह सौ कपिला गोदान का फल पाता है और अन्त में दिव्यकुम्भाकार विमान पर बैठ स्वर्गमें जाय तीसकल्प पर्यंतसुख भोगताहै और यक्ष गन्धर्वआदि उस का सेवन करते हैं फिर भूमिपर जन्मले चतुर्वेदवेत्ता ब्राह्मण होता है और उत्तम कर्मकर मुक्ति पाता है प्रपादानकी सामर्थ्य न होय तो ठण्ढे जलसे पूर्ण घट जिसका मुख वस्त्र से ढकाहो नित्य ब्राह्मण के घर देवै और प्रति मास उसका उद्यापन करै अनेक प्रकारके पक्वान्न और वस्त्र दक्षिणादि से शिव अथवा विष्णु का उद्देश कर ब्राह्मण का पूजन करै और (एष धर्मघटो दत्तो ब्रह्मविष्णुशिवात्मकः। अस्य प्रदानात्सकला मम स न्तु मनोरथाः) यह मन्त्र पढ़ ब्राह्मण को जल पूर्ण घट अर्पण करै इस विधान से जो धर्मघटदान करै वह प्रपादान के फल को प्राप्त होता है जो धर्मघटभी न देसकै नित्य अश्वत्थ का सेवन करै नमस्कार और प्रदक्षिणा कर (अनेनाश्वत्थसेवने न मे जनार्दनः प्रीयताम्) यह वाक्य उच्चारण करै अश्वत्थ

वृक्षके नीचे जो सत्कर्म करै वह अनन्त फलदायक होता है और अश्वत्थ सेवन से सब पाप नाशको प्राप्तहोते हैं स्वादु और शीतल जलकी प्रपा जो पुरुष ऐसे स्थान में लगावै जहां बहुत मनुष्य जलपीवें वह इस मृत्युलोक में धन्य है ॥

एकसौ बावन का अध्याय ॥

शीतकाल में अङ्गीठीदानका विधान और फल ॥

राजा युधिष्ठिर पूछते हैं कि हे श्रीकृष्णचन्द्र ! शीतकाल में दयालु पुरुष अग्निष्ठिका अर्थात् अङ्गीठीका दान किस विधिसे करते हैं यह आप वर्णन करें यह राजाका वचन सुन श्रीकृष्ण भगवान् कहने लगे कि हे महाराज ! सबजीवों के सुखदेनेहारे अग्निष्ठिका दान का विधान हम कहते हैं आप प्रीतिसे श्रवण कीजिये मार्गशीर्ष के आरम्भ में उत्तम मुहूर्त्त देख देवालय मठ घर अथवा बड़ेचौक में प्रभात और सायङ्काल बहुतसा सूखाकाष्ठ एकत्रकर अग्नि प्रज्वलित करै इसी विधि से शीतकाल भर दोनोंवक्त अग्नि जलावै और सब दीन अनाथ वस्त्रहीन वहां सेंकें जो उनमें कोई भूखा होय उसको भोजन देवै किसीको निषेध न करै इस विधिसे जो पुरुष अग्निदान करै वह दिव्य विमान में बैठ ब्रह्मलोक को जाता है वहां साठ हजारवर्ष सुख भोगकर भूमिपर जन्म लेता है और चतुर्वेदवेत्ता यज्ञ करनेहारा आरोग्य धनवान् और तेजस्वी ब्राह्मण होताहै जो पुरुष चैत्य देवालय सभा घर आदि में हेमन्त और शिशिर ऋतु के बीच जीवों के सुखदेनेहारी अङ्गीठी दोनों काल देते हैं वे सब सुख भोग कर स्वर्गको जाते हैं ॥

एकसौ तिरपन का अध्याय॥

पुस्तक दान और विद्यादानका विधान और फल॥

राजायुधिष्ठिर कहते हैं कि हे श्रीकृष्णचन्द्र! अनेक प्रकार के गोदान और भूमिदान के विधान माहात्म्य सहित आपके मुखसे श्रवणकिये अब हम विद्यादान का माहात्म्य श्रवण किया चाहते हैं आप कथन करैं यह राजाका वचन सुन श्री कृष्ण भगवान् कहनेलगे कि हे महाराज! जिस प्रकार विद्या दान करना चाहिये और दानसे जो फल होता है वह हम वर्णन करते हैं शुभ मुहूर्त्त में स्वस्तिकादि भूषित चतुरस्र मण्डल बनाय उसके मध्य में पुस्तक को स्थापन कर गन्ध पुष्प आदि से उसका पूजन करै पीछे लेखक का पूजन कर सुवर्णकी क़लम और चांदीकी दवात उसको देवै वह सुशील और अप्रमादी लेखक पुस्तक लिखने का आरम्भ करै मात्रा अनुस्वार संयुक्त पदच्छेद सहित लिखै और एकाग्र चित्त होकर समवर्त्तुल न बहुत मोटे न अतिसूक्ष्म जिनके शिर समान होयँ ऐसे अक्षर लिखे इस विधि शैव अथवा वैष्णव शास्त्र लिखवाय अन्त में वस्त्र भूषण आदि से लेखक का पूजन करै फिर उस पुस्तक को दो वस्त्रोंसे वेष्टन कर दक्षिणा सहित व्युत्पन्न प्रियंवद और उत्तम वाचक ब्राह्मण को देवै अथवा सर्व सामान्य देवालय आदि में उस पुस्तक को रक्खै और जिसकी इच्छाहोय सो बांचै इस विधिसे जो पुरुष पुस्तक दान करै वह तीर्थयात्रा करने और यज्ञकरने से भी कोटिगुण अधिक फल पाता है हजार कपिला गौ का विधिपूर्व्वक दान करनेसे जो फल होताहै वह एक पुस्तक के देनेसे प्राप्तहोता है पुराण रामायण और महाभारत देनेसे जो फल प्राप्त होता है

उसका कौन वर्णन करसक्ता है प्रभात उठ जो पुरुष शिष्यों को वेदशास्त्र नृत्य गीत वेदाङ्ग आदि पढ़ावै वह धन्य है जो उपाध्याय को वृत्ति देकर विद्यार्थियों को पढ़ावै उसने कौन दान न किया विद्यार्थियों को भोजन वस्त्र भिक्षा पुस्तक आदि के देने से मनुष्यों के सब मनोरथ सिद्ध होते हैं विद्या देनेहारा विवेक दीर्घजीवित धर्म अर्थ काम और सम्पत्ति सब कुछ देता है शास्त्र शस्त्र विद्या कला आदि जो पुरुष सीखना चाहै उनका यथाशक्ति सहाय करना और उनके ऊपर सदा उपकार करनेकी इच्छा रखनी हजार वाजपेय यज्ञ विधिपूर्वक करने से जो फल प्राप्त होता है वही विद्यादान सेभी होता है शिव अथवा सूर्य्य के भवन में जो पुरुष नित्य पुस्तक बँचवावै वह गौ भूमि सुवर्ण और वस्त्रके दान का नित्य फल पाता है विद्याहीन पुरुष धर्म्म अधर्म नहीं जानसक्ता इसलिये सदा विद्यादानमें तत्पर रहना चाहिये तीनलोक चारवर्ण चारआश्रम और ब्रह्मादिक देवता सब विद्यादान में प्रतिष्ठित हैं विद्या दान करनेहारा पुरुष एककल्प विष्णुलोकमें निवास कर भूलोक में जन्मलेकर दाता भोगी रूप सौभाग्य युक्त दीर्घायु नीरोग पुत्र पौत्र युक्त और धर्मात्मा राजा होता है और सौवर्ष राज्य करता है विद्यादान से अधिक कोई दान जगत् में नहीं विद्या दान करनेहारा पुरुष गौ भूमि सुवर्ण हाथी घोड़े रथआदि सब दानों का फल पाता है ॥

एकसौचौवनका अध्याय ॥

तुलादानका विधान और फल ॥

श्रीकृष्ण भगवान् कहते हैं कि हे महाराज ! पूर्वकाल में प्रियव्रत नाम राजा बड़ा प्रतापी और धर्म्मात्मा हुआ जो

तीस हजार वर्ष राज्य कर सातों द्वीप अपने सात पुत्रों को दे विषयों से चित्तको खैंच तप करने के लिये वन में गमन किया राजाको तपोवन में प्राप्त हुये सुन बड़े २ महात्मा और तपस्वी मुनि राजाको मिलने आये राजा ने भी विधिपूर्वक पाद्यार्घ्य आचमन आदि से पूजन कर मधुर वचनों से कुशल प्रश्न पूछ उन सबको आसन पर बैठाया इसी अवसर में ब्रह्माजी के पुत्र बड़े तेजस्वी मानो दूसरे सूर्य पुलस्त्य मुनि वहां आये उनको देख राजा सहित सब मुनि उठे और बड़े सत्कार से उनको बैठाया पाद्यादिकों से उनका पूजन किया पीछे अनेक प्रकार की कथा कहने लगे उस समय मुनियों ने पूछा कि हे पुलस्त्यमुनि ! किस दान व्रत नियम आदि से पुरुष और स्त्रियों को सद्गति प्राप्त होती है यह आप वर्णन करें आप के मधुर वचन श्रवण करने की हमको और इस राजा प्रियव्रत को बड़ी अभिलाषा है यह मुनियों का वचन सुन पुलस्त्य मुनि कहनेलगे कि हे मुनीश्वरो ! अति रहस्य सब दानों में उत्तम और सब पाप हरनेहारा दान हम कहते हैं जिसके करने से ब्रह्महा गोघ्न पितृघ्न गुरुदारगामी झूठासाक्षी आदि अनेक पापी मनुष्य सब पापों से छूट दिव्य देहधारी होते हैं ब्रह्मलोक की इच्छा होय तो कृच्छ्रचान्द्रायण आदि व्रत करें परन्तु ये काय क्लेश ब्राह्मण भिक्षु और विधवा नारियों के लिये कहे हैं राजा और धनवान् गृहस्थ इस कृच्छ्रसाध्य धर्म को नहीं सम्पादन कर सकते हैं मनुष्यों के बहिश्चर प्राण धन हैं इसलिये धनाढ्य पुरुषों को धन करके धर्म्म का अर्जन करना चाहिये सब द्रव्यों में श्रेष्ठ और देवताओं में मुख्य अग्नि का सन्तान सुवर्ण है सुवर्ण दान से सब पाप

दुरहोते हैं और दिव्यदेह प्राप्ति होती है इतनाकह पुलस्त्य मुनिने ऋषियों के और राजा के प्रति तुलादान का विधान कहा श्रीकृष्णभगवान् कहते हैं कि हे महाराज ! वही विधान ऋषीश्वरों ने हमको कहा और हम आपको श्रवण कराते हैं आप सावधान होकर सुनैं व्यतीपात अयन विषुव ग्रहण ग्रहपीड़ा दुःस्वप्न दर्शन कार्त्तिकी अथवा माघी पूर्णिमा इत्यादि पर्व्व दिनों में अथवा जब धन होय उसी समय यह दान करना चाहिये धर्म्म के समय तो यही विचारै कि मृत्यु ने हमारे केश पकड़ रक्खे हैं जो कुछ करलेवैं वही हमारा है जब श्रद्धाहोय उसी समय दान आदि करने चाहिये श्रद्धा से ही फल होताहै अपने घरके अथवा देवालय के अङ्गन में सोलह हाथ लम्बा चौड़ा और पताका तोरण आदि से अलंकृत मण्डप बनाय उसके मध्य में सात हाथ लम्बी चौड़ी और एकहाथ ऊँची चतुरस्रवेदी बनाय वेदी के मध्य में विधि पूर्वक तुलाको स्थापन करै दोहाथ भूमि में गाड़ै और चार हाथ स्तम्भ ऊपर रक्खै चन्दन खदिर बिल्व शाक इंगुदी तिन्दुक देवदारु और श्रीपर्ण इनआठ वृक्षोंमें से किसी के काष्ठ का स्तम्भ बनावै अथवा और किसी दृढ़ काष्ठवाले याज्ञिक वृक्षका स्तम्भ रचै उनके ऊपर उसी काष्ठ का चार हाथ लम्बा तिर्यक् काष्ठ रक्खै उसमें छियानवे अंगुल लम्बे लोहपाश लगावै और मध्य में तुला पुरुष बनाय रत्न वस्त्र चन्दन आदि से तुलाको भूषितकर स्तम्भों को भी पुष्पमाला और वस्त्रोंकरके अलंकृत करै तीन तीन मेखला और योनिकरके युक्त हस्त प्रमाण चार कुण्ड बनावै ईशान कोण में हस्त प्रमाण वेदी बनाय उसके ऊपर ग्रह और दिक्पालों का पूजन

करै और गन्ध पुष्प अक्षत फल वस्त्र आदि करके शिवजी का पूजन करै क्षीर वृक्ष के तोरण बनावै मण्डप के चारों द्वारों में पुष्पमाला रत्न पल्लव आदि से शोभित कुम्भ सप्तधान्य के ऊपर स्थापन करै ऋग्वेद आदि जाननेहारे ब्राह्मणों को क्रम से पूर्वादि दिशाओं के कुण्डपर हवन के लिये नियुक्त करै कई ऋषीश्वरों का मतहै कि सोलह ऋत्विक् हवन के लिये नियुक्त करने चाहिये प्रत्येक ऋत्विक् को दो दो ताम्र-पात्र और एक एक आसनदेवै तिल घृत समिधा विष्टर पुष्प कुश स्रुक् स्रुव आदि सब हवनकी सामग्री एकत्र करै लोक-पालों के रङ्ग की पताका दिशाओं में लगावै और बीच में पंचरङ्ग का महाध्वज खड़ा करै इसप्रकार सब सामग्री स-म्पादनकर ब्राह्मण वर्द्धकी अर्थात् बढ़ई और कारीगर का वस्त्र भूषण आदि से सत्कार करै पीछे पूर्वदिन में यजमान स्नान कर शुक्ल वस्त्र पहिन दिक्पालों को बलिदेवै उस समय अ-नेक प्रकार के शङ्ख तूर्य आदि बाजे बजैं और वेदध्वनि होय अब हम बलि मन्त्र कहते हैं (एह्येहिसर्वामरसिद्धसाध्यै रभिष्टुतो वज्रधरामरेश । गन्धर्वयक्षाप्सरसाङ्गणेन रक्षाध्व रंनोभगवन्नमस्ते) ॐमिन्द्राय नमः (एह्येहिसर्वामरहव्य वाह मुनिप्रवीरैरभितोभियुक्त । तेजोवतांलोकगणेनसार्द्धं म माध्वरंरक्षकतेनमस्ते) ॐअग्नये नमः (एह्येहिवैवस्वत धर्मराज सर्वामरैरर्चितदिव्यमूर्ते । शुभाशुभानां च कृताम धीश शिवाय नः पाहि मखंनमस्ते) ॐयमाय नमः (एह्येहि रक्षोगणनायकत्वं विशालवेतालपिशाचसङ्घैः । ममाध्वरं पाहिपिशाचनाथ लोकेश्वरस्त्वं भगवन्नमस्ते) ॐनिर्ऋ तये नमः (एह्येहियादोगणवारिधीनां गणेनपर्जन्यसहाप्स

रोभिः । विद्याधरेन्द्रामरगीयमान पाहित्वमस्मान्भगवन्नमस्ते) ॐ वरुणाय नमः (एह्येहिवायोममरक्षणाय मृगाधिरूढः सहसिद्धसङ्घैः । प्राणाधिपः कृष्णगतेः सहायो गृहाणपूजांभगवन्नमस्ते) ॐ वायवे नमः (एह्येहियक्षाधिपराजराज सुयक्षरक्षोगणपूज्यमान । धनादिनाथोनरवाहनस्त्वं गृहाणपूजांभगवन्नमस्ते) ॐ कुबेराय नमः (एह्येहिगङ्गाधर भूतनाथसुरासुरैःपूजितपादपद्म ॥ देवेशदक्षाध्वरनाशकारिन् रक्षाध्वरंनो भगवन्नमस्ते) ॐमीशानाय नमः (एह्येहिपातालधराहिनाथ नागाङ्गनाकिन्नरगीयमान । रक्षोनरेन्द्रामरलोकनाथ नागेशरक्षाध्वरमस्मदीयम्) ॐमनन्ताय नमः (एह्येहिविश्वाधिपतेमुनीन्द्र लोकेनसार्द्धं पितृदेवताभिः । विभोभवत्वंसततंशिवायपितामहं त्वां सततं नतोऽस्मि) ॐ ब्रह्मणे नमः (त्रैलोक्येयानिभूतानिस्थावराणिचराणिच । ब्रह्मविष्णुशिवैःसार्द्धं रक्षां कुर्वन्तु तानिमे । देवदानवगन्धर्वा यक्षराक्षसपन्नगाः । ऋषयो मुनयोगावो देवमातरएवच । सर्वेममाध्वरेरक्षांप्रकुर्वन्तुमुदान्विताः) इन मन्त्रों से सब देवताओंका और दिक्पालों का पूजन कर बलि देवै कटक कुंडल कण्ठभूषण अंगुलीयक और अनेक प्रकारके विचित्र वस्त्र ब्राह्मणों को देवै और ब्राह्मणोंसे द्विगुण वस्त्र भूषण आदि करके गुरुका पूजन करै फिर ब्राह्मण आघार और आज्य भागकरके प्रणवादि स्वाहान्त नाम मन्त्रों से हवन करैं यहां जो देवता स्थापन किये होयँ उनके नाम से और ग्रह लोकपाल वनस्पति ब्रह्मा विष्णु शिव आदि के नाम से होमकरैं होम के अन्त में अनेक प्रकारके मङ्गल शब्द होयँ और शुक्ल वस्त्र पहिन तुलाकी तीन प्रदक्षिणाकर यजमान पुष्पांजलि

लेकर (नमस्ते सर्वदेवानां शक्तिस्त्वं शक्तिमास्थिता । साक्षी भूताजगद्धात्री निर्मिता विश्वयोनिना । एकतः सर्वसत्यानि तथान्ततशतानिच । धर्माधर्मकृतां मध्ये स्थापितासि जग द्धिते । त्वं तुले सर्वभूतानांप्रमाणमिहकीर्तिता । मांतोलय न्तीसंसाराद्रुद्धरस्वनमोस्तुते । योसौ तत्त्वाधिपोदेवः पुरुषः पञ्चविंशकः । सएषोधिष्ठितोदेवस्त्वयितस्मान्नमो नमः । न मोनमस्तेगोविन्द तुलापुरुषसंज्ञक । त्वंहरेतारयस्वास्मान स्मात्संसारकर्दमात्) ये मन्त्रपढ़ पुष्पांजलिदेवै पीछे पुण्य कालके बीच परमात्माको प्रणाम कर भूषण वस्त्र आदि से अलंकृतहो खड्ग कवच ढाल आदि धारणकर तुला के ऊ- पर चढ़ै और दूसरे ओर अन्न दधि सुवर्ण आदि चढ़ावै इतना तुला द्रव्य चढ़ावै कि वह पलड़ा भूमिपर टिकजाय क्षणमात्र बैठ (नमस्तेसर्वभूतानां साक्षिभूतेसनातनि । पितामहेनदेवित्वं निर्मितापरमेष्ठिना । त्वयाधृतंजगत्सर्वंसह स्थावरजङ्गमम् । सर्वभूतात्मभूतस्थे नमस्तेविश्वधारिणि) ये मन्त्र पढ़ै पीछे तुला से उतर आधा तुलाद्रव्य गुरु को और चतुर्थांश ऋत्विजों को देकर शेष चतुर्थांश दीन अनाथ और ब्राह्मणोंको बांटदेवै तुलाद्रव्य को बहुत काल घर में न रक्खै घर में रखने से शोक भय और व्याधि होती हैं इसी विधान से चांदी और कर्पूरकी भी तुला करते हैं सौभाग्यकी इच्छावाली स्त्री केसर लवण और गुड़की तुला करती हैं इस विधि से अन्न आदि करके जो स्त्री पुरुष तुला दान करैं वे उत्तम अप्सराओं करके युक्त गन्धर्वनगर के समान अनेक पुष्प फलयुक्त वृक्षों से भूषित शय्या आसन पताका घण्टा आदि से अलंकृत सब ऋतुओं में सुखदेनेहारे जिस में मोति-

योंकी झालर लटकती हैं ऐसे मनोहर विमान में बैठ सूर्य्य लोक को जातेहैं वहां एक कल्प सुख भोगकर विष्णु लोक विश्वेदेवों के लोक इन्द्रलोक धर्मराज लोक वरुणलोक कुबेर लोक आदि में करोड़ों कल्प निवास कर मनुष्यलोक में जन्म ले बड़ा धर्मात्मा दानी और शत्रुओं का क्षय करनेहारा राजा होता है जो इस दान माहात्म्य को भक्तिसे श्रवण करै वहभी त्रिविध पाप से छूटता है ब्रह्मा विष्णु और शिव से उत्तम कोई पूजनीय देवता नहीं अश्वमेध के समान यज्ञ नहीं गङ्गा सम तीर्थ नहीं और तुलापुरुष के तुल्य दान नहींहै॥

एकसौ पचपनका अध्याय॥

हिरण्यगर्भ दानका विधान और फल॥

राजा युधिष्ठिर कहते हैं कि हे श्रीकृष्णचन्द्र! कोई और भी ऐसा दान अथवा व्रत कहैं जिसके करने से आयुष् यश और ऐश्वर्य की वृद्धिहोय यह राजाका वचन सुन श्रीकृष्ण भगवान् कहने लगे कि हे महाराज! लोकों के हित के लिये हम वह उपाय कहते हैं कि जिसके करने से हमारे समान मनुष्य होजायँ व्रत उपवास तीर्थ यात्रा महादान यज्ञ वेदाध्ययन आदिसे विष्णुलोक प्राप्त होता है जो देवताओं को भी दुर्लभ है जो पुरुष गो ब्राह्मण के निमित्त प्राण त्यागे प्रयाग में अनशन व्रतकरै अथवा शिवाराधन करै वह ब्रह्म लोक को जाता है यह सनातनीश्रुति है अब हम आपके स्नेहसे हिरण्यगर्भ नामक दानका विधान कहते हैं जिसके करनेसे इनकर्मों के समान फल प्राप्तहोय अग्निका सन्तान सुवर्ण है सब धातुओंमें श्रेष्ठ और पवित्र है उसीका पर्याय नाम हिरण्यहै जो पुरुष भक्तिसे ब्राह्मणको सुवर्ण देवै वह

हमारे तुल्य होताहै अयन विषुव ग्रहण व्यतीपात कार्तिकी पूर्णिमा जन्म नक्षत्र ग्रहपीड़ा दुःस्वप्न दर्शन आदि कालों में प्रयाग पुष्कर नैमिष अर्बुदाचल गंगा यमुना गंगासागर संगम और भी पुण्य नदियों के तटपर यह दान देना चाहिये अथवा घर देवालय बाग तड़ाग आदि पवित्र स्थलमें यह दान करै प्रथम भूमिशोधन कर बारह हाथ लम्बा चौड़ा मण्डप बनावै उसको स्तम्भ पताका आदिसे अलंकृत कर मध्यमें पांचहाथकी वेदी बनाय मध्यमें हिरण्यगर्भ रचै अब हम उसका विधान कहते हैं ब्राह्मणों से स्वस्तिवाचन कराय वस्त्र भूषण आदिसे शिल्पी अर्थात् कारीगर का पूजन कर कर्मका आरम्भ करै उत्तम सुवर्ण से हिरण्यगर्भ बनावै चौंसठ अंगुल उसका दैर्घ्य कहा है मूलमें उसका विस्तार त्रिभाग हीन करना चाहिये मध्यमें वर्तुलकर्णिका दशपत्र और ग्रंथिवर्जित नाल बनाय नीचे ताम्रका पीठ रचै उसके समीप सुवर्ण का कमण्डलु छत्र जड़ाऊ पादुकादि सब उपकरण स्थापन करै फिर वेदघोष करतेहुये ब्राह्मण उसको मण्डपमें लाकर वेदीमें एकद्रोण तिलोंके ऊपर स्थापन करैं पीछे सबको कुंकुमसे लिप्तकर रेशमी वस्त्रोंसे ढक पुष्प मालाओंसे अलंकृत कर धूप दीप आदिसे पूजन कर (भूलोकप्रमुखालोकास्तवगर्भे व्यवस्थिताः। ब्रह्मादयस्तथादेवा नमस्ते भुवनोद्भव॥ नमस्तेभुवनाधार नमोवैभुवनेश्वर। नमोहिरण्यगर्भाय गर्भेयस्यपितामहः) यह मन्त्र पढ़ पूजन कर एक रात्रि उसका अधिवासन करै वेदी के चारों ओर चतुरस्र चारकुण्ड बनावै जिनमें चारवेद जाननेहारे सुशील ब्राह्मण क्रमसे मौनपूर्वक हवन करैं ब्रह्मस्थान

में भी उतनेही ब्राह्मण नियुक्त करै वेभी उत्तम भूषण और नये वस्त्र पहिने होयँ गन्ध धूप आदि सहित दो २ ताम्र पात्र सब को देवै वेदी के ईशान कोण में ग्रहवेदी बनाय उस के ऊपर ग्रह दिक्पाल और ब्रह्मा विष्णु महेश्वर की सुवर्ण की मूर्त्ति स्थापन कर गन्ध पुष्प वस्त्र आदि से उन का पूजन कर पताका तोरण आदि से मण्डप को अलंकृत करै और द्वारों में रत्नयुक्त दो २ कलश स्थापन करै तुलादानोक्त रीति से दिक्पालबलि देवै पलाश की समिधा हवन के लिये उत्तम होती हैं तिल गौ के घृत और समिधाओं करके व्याहृतियों से और नाम मंत्रों से दशहजार अथवा पांच हजार आहुतिदेवै फिर पर्व के समय यजमान स्नानकर श्वेत वस्त्र पहिन हिरण्यगर्भ का पूजन करै और (नमोहिरण्यगर्भाय विश्वगर्भाय वै नमः। चराचरस्यजगतो गृहभूताय वै नमः॥ मात्राहंजनितःपूर्वेण मर्त्यधर्मासुरोत्तमः। तद्गर्भसम्भवाद्दिव्यो देवदेव्योभवाम्यहम्) यह मन्त्र पढ़ भक्ति से उस की प्रदक्षिणा करै वामहस्त में सुवर्ण का धर्मराज और दाहिने में सूर्य लेकर दोनों जानुओं के बीच शिर करके हिरण्यगर्भ को उठावै पीछे ब्राह्मण गर्भाधान पुंसवन सीमन्तोन्नयन और जातकर्म संस्कार हिरण्यगर्भ का करैं इतना काल यजमान किसी का मुख न देखै फिर उठ प्रदक्षिणा कर वेदघोष पूर्वक हिरण्यगर्भको स्नानकरावैं सुवर्ण चांदी ताम्र अथवा मृत्तिका के आठ कलश दही अक्षत पुष्प पल्लव आदि से भूषित लेकर (देवस्यत्वा) इत्यादि मन्त्र से आठ ब्राह्मण उसका अभिषेक करैं और (अद्यजातस्यतेङ्गानि अभिषिञ्चामहेवयम्। दिव्येनाङ्गेनचायुष्मन् चिरञ्जीवीभवेततः) यह मन्त्र पढ़ें

फिर यजमान संकल्प पूर्वक वह हिरण्यगर्भ ब्राह्मणों को देवै यज्ञ के सब उपकरण गुरु के अर्पण करै पादुका छत्र जूता वस्त्र आसन भोजन आदि सब समासद ब्राह्मणों को देवै दीन अन्ध कृपण आदि को अनिवारित भोजन देवै इस विधि से जो यह दान करै वह अपने कुल का उद्धार करता है और आप भी स्वर्ग को जाता है भक्ति से इस दानका करने हारा पुरुष पांच योजन लंबे चौड़े वापी कूप तड़ाग बाग सरोवर प्रासाद आदि से शोभित सैकड़ों उत्तम नारियों करके सेवित वेणु वीणा मृदंग आदि के मनोहर शब्दों से पूरित मणिमय भूमिका और जड़ाऊ वेदियों करके अलंकृत हजार स्तम्भ और विचित्र पताकाओं करके भूषित सूर्य के समान प्रकाशवान् विश्वकर्मा के बनाये विमान में विराजमान हो विद्याधरों करके सेवित स्वर्ग को जाता है वहां सौ मन्वन्तर पर्यंत इन्द्र के समान सुख भोगकर भूलोक में जन्म ले पराक्रमी धार्मिक सत्यवादी ब्रह्मण्य गुरुभक्त और शत्रुओं को जीतनेहारा दश जन्म तक सम्पूर्ण जम्बूद्वीप का राजा होता है जो पुरुष इस विधान को श्रवण करै वह सौ वर्ष से भी अधिक स्वर्ग सुख भोगता है इस विधि हिरण्यगर्भ बनाय सब संस्कार कर उस के बीच से निकल ब्राह्मण को भक्ति पूर्वक देवै तो मार्कंडेय की भांति दिव्य देह धार स्वर्ग में निवास करता है॥

एकसौछप्पनका अध्याय॥

ब्रह्मांडदानका विधान और फल॥

श्रीकृष्ण भगवान् कहते हैं कि हे महाराज! अब हम अगस्त्यजी का कहा ब्रह्मांडदान कहते हैं जिस दान के

करने से तीनप्रकार के पाप निवृत्त होते हैं और धन यश आयुष् मंगल और सद्गतिकी प्राप्ति होती है आप प्रीतिपूर्वक श्रवण कीजिये एक वितस्ति से सौ अंगुल पर्यन्त लम्बा चौड़ा यथाशक्ति सुवर्ण का ब्रह्मांड बनावै उसमें देवता असुर मनुष्य गन्धर्व नाग राक्षस नदी समुद्र पर्वत सरोवर विमान आदि बनावै और बीच में मेरुपर्वत जिस के तीनों शिखरोंपर ब्रह्मा विष्णु और शिवकी पुरीरचै आठों दिग्गज बनावै और चौदह भुवन कल्पना करै दो कलशों करके युक्त और सम्पुटाकार ब्रह्मांड बीसपल सुवर्ण से अधिक सुवर्ण करके बनवावै फिर अयन विषुव ग्रहण आदि कालों में पुष्प मंडपिका बनाय उसमें द्रोणभर तिल के ऊपर ब्रह्मांड को स्थापनकरै और केसर चन्दन से चर्चितकर दो वस्त्रों से ढक गन्ध धूप आदि से उसका पूजन करै उसके चारों ओर पूर्ण कलश स्थापनकरै अठारह प्रकार के धान्य एक २ द्रोण वहां रक्खै खड़ाऊं जूता छतरी पात्र दर्पण भोजन आदि सब सामग्री भी उसके समीप स्थापनकरै इसविधि घरमें अथवा मण्डपमें ब्रह्मांड स्थापनकर हस्त प्रमाण चतुरस्त्रकुंड बनावै उसमें चारों वेद जाननेहारे चार ब्राह्मण वस्त्र भूषण आदि से अलंकृतहोकर हवनकरैं और उपाध्याय तथा राजा का पुरोहित भी हवनकरैं ग्रहयज्ञ विधान से हवनकरैं विष्णु शिव ब्रह्मा आदि देवताओं के नाम मन्त्रों से तिलों की आहुति देकर दशहजार आहुति व्याहृतियों करके देवैं और ब्राह्मण रुद्र पाठभी करैं फिर यजमान स्नानकर श्वेत वस्त्र पहिन सब उपचारों से ब्रह्मांड का पूजन कर पुष्पांजलि ले (नमोजगत्प्रतिष्ठाय विश्वधाम्नेनमोस्तुते । वाङ्मनोतीतरूपाय ब्रह्माण्ड

शुभकृद्भव ॥ ब्रह्माण्डोदरवर्त्तीनि यानिभूतानिकानिचित् । तानिसर्वाणिमेतुष्टिं प्रयच्छन्त्वतुलांसदा ॥ ब्रह्मा विष्णुश्च रुद्रश्च लोकपालास्तथाग्रहाः । नक्षत्राणितथानागा ऋषयोमरुतस्तथा ॥ सर्वेभवन्तुसुप्रीताः सप्तजन्मान्तराणिमे) ये मन्त्र पढ़ पुष्पांजलि देवे और दक्षिणा सहित वह ब्रह्मांड ब्राह्मण के अर्पणकरै ॥

सत्ययुग के बीच बड़ा ऐश्वर्य्यवान् और दशहजार हाथियोंका बल धारण करनेहारा सुद्युम्न नाम राजा हुआ वह तीसहजार वर्ष निष्कण्टक राज्य कर विरक्त हो वन में गया वहां बहुत काल उग्रतप कर अन्त समय दिव्य विमान पर आरूढ़ हो इन्द्रादि लोकों को उल्लंघन करताहुआ ब्रह्मलोक में प्राप्त हुआ ब्रह्माजीने भी राजा का बड़ा सत्कार किया और आसन पर बैठाया राजा भी सुख पूर्वक वहां निवास करने लगा एक दिन राजा ने ब्रह्माजी से पूछा कि महाराज मैंने कौन ऐसा शुभकर्म किया कि जो आप के समीप निवास पाया यह आप कृपाकर मुझे बतावैं तब ब्रह्माजी कहने लगे कि हे राजन् ! तुमने सुवर्ण का ब्रह्मांड दान कर ब्राह्मण को दिया उस दान के प्रभाव से तुम हमारे लोक में प्राप्तभये ब्रह्माण्ड दान विना और किसीप्रकार से हमारा लोक नहीं प्राप्त होता अब तुम कल्पान्त में हमारे साथ मुक्ति को प्राप्त होगे धन यश आयुष् और सर्वप्रकार के सुख देनेहारा ब्रह्मांड दान जिसने किया उसने सब दान किये ॥

एकसौसत्तावन का अध्याय ॥

भुवनप्रतिष्ठा का विधान और फल ॥

राजा युधिष्ठिर कहतेहैं कि हे श्रीकृष्णचन्द्र ! अब आप

भुवनप्रतिष्ठा का विधान कहैं यह राजा का वचन सुन श्री-
कृष्ण भगवान् कहने लगे कि हे महाराज! लोकों के उपकार
के लिये आपने बहुत उत्तम बात पूछी अब हम परम रहस्य
भुवन प्रतिष्ठा का विधान संक्षेप से कहते हैं भुवनप्रतिष्ठा
करने से देव असुर नाग गन्धर्व यक्ष राक्षस प्रेत पिशाच
भूत आदि सबकी प्रतिष्ठा होजाती है पहिले उत्तम मुहूर्त्त देख
सात हाथ लम्बा चौड़ा दृढ़ स्वच्छ श्वेत वर्ण पट बनवाय
उस में चित्रकार से सब भुवन लिखवावै तरुण आरोग्य
रूपवान् और चतुर चित्रकार को बुलाय वस्त्र भूषण लेपन
पुष्प आदि से उसका पूजन कर चित्रकर्म में नियुक्त करै उस
समय सब ब्राह्मण और आचार्य का भी वस्त्र भूषण आदि
से अर्चन करै ब्राह्मण वेदध्वनि और पुण्याहवाचन करैं और
शंख भेरी आदि के अनेक मंगल शब्द होयँ इस विधि से
आरम्भ कर पुराणोक्त विधि से सब भुवन लिखवावै मध्य में
जम्बूद्वीप उसके मध्य में मेरु पर्वत जिसके तीनों शिखरों पर
ब्रह्मा विष्णु शिवकी पुरी और दिशाओं में अष्ट दिक्पालपुरी
लिखवावै सात द्वीपों करके युक्त पृथवी सात कुलाचल
सात समुद्र नदी नद सरोवर सप्त पाताल भूर्भुव आदि सात
लोक ब्रह्मादि देवताओंके लोक ध्रुव मार्ग ग्रह और तारागणों
करके वेष्टित सूर्य देव दानव गन्धर्व यक्ष राक्षस नाग ऋषि
मुनि गौ वेदमाता गरुड़ आदि पक्षी और ऐरावत आदि
आठ दिग्गज उस में लिखै और उस को जल तेज वायु आ-
काश अहंकार महत्तत्त्व अव्यक्त मन तमोगुण रजोगुण
सत्त्वगुण करके उत्तरोत्तर वेष्टित कल्पना कर सब को पुरुष
कर के भीतर बाहर आच्छन्न मानैं इस भांति चित्रपट बन-

वावै फिर अति मनोहर मण्डप बनाय उस के मध्य में उसको स्थापन करै और चतुरस्र हस्त प्रमाण चारकुंड बनवाय उनमें दो २ ब्राह्मणों को हवनके लिये नियुक्त करै ब्राह्मण भी वस्त्र भूषण आदि से अलंकृत हो चित्रपटस्थ देवताओं के नाम मन्त्रों से हवन करैं यजमान भी स्नान कर श्वेत वस्त्र पहिन आचार्य सहित गन्ध पुष्पादि कर के पटका पूजन कर (ब्रह्माण्डोदरवर्त्तीनि भुवनानि चतुर्दश। तानिसन्निहितान्यत्र पूजितानि भवन्तु मे ॥ ब्रह्माविष्णुस्तथारुद्रोह्यादित्यावसवस्तथा। पूजितासुप्रतिष्ठाश्च भवन्तुसततंमम) ये मन्त्र पढ़ै और प्रदक्षिणा कर अनेक प्रकार के भक्ष्य भोज्य नैवेद्य लगाय रात्रि को जागरण करै अनेक प्रकार के बाजे बजैं वेद ध्वनि होय गीत नृत्य आदि कर के बड़ा उत्सव करावै प्रभात होतेही स्नान कर वस्त्र भूषण पहिन पूर्वोक्त रीति से चित्रपट का पूजनकर सौ गौ ऋत्विजों को देवै फिर सुन्दर दृढ़ रथ लाकर पताका ध्वज आदि से उस को अलंकृत कर दो हाथी उस में जोतै हाथी न होयँ तो घोड़े ही रथ में लगावै उस पर चित्रपट को रख हजार मोहर ब्राह्मणों को बांट देवालय के बीच चित्रपट को पहुंचावै वहां उस को स्थापन कर महापूजा करै और बड़ा उत्सव करै उत्तमछत्र घंटा ध्वज चामर आदि उपकरण चढ़ावै गुरु और ब्राह्मणों को यथाशक्ति दक्षिणा देवै दीन अंध कृपण आदि को अनिवारित भोजन दिलावै और अपने मित्र स्वजन बन्धु आदि को भी भोजन करावै इस विधान से जो पुरुष अथवा स्त्री सार्वलौकिकी प्रतिष्ठा करै उस ने सचराचर त्रैलोक्य स्थापन किया और अपने कुलका उद्धार भी किया जबतक वह चित्रपट वहां स्थापित रहै तब तक उसकी अ-

क्षय कीर्त्ति त्रैलोक्य में फैलती है और जितने दिन लोक में कीर्त्ति रहे उतने हजार वर्ष भुवनप्रतिष्ठा करनेहारा स्वर्ग में निवास करता है गन्धर्व और अप्सरा उसकी सेवा में रहते हैं बहुत काल स्वर्ग सुख भोग पुण्य क्षय होने पर भूमि पर जन्म ले धर्मात्मा दीर्घायु ऐश्वर्यवान् प्रतापी और पुत्र पौत्र आदि करके युक्त दश जन्म पर्यन्त राजा होता है पूर्व काल में बड़ा प्रतापी रघु नाम चक्रवर्ती राजा हुआ है जिस ने सब भूमि को जीता और दैत्यों को मार स्वर्ग में इन्द्र का राज्य जमाया एक दिन वह राजा अपनी सभा में बैठा था उसी अवसर में ब्रह्मा जी के पुत्र पुलस्त्यमुनि वेद वेदांग के पारगामी अपने शिष्यों सहित वहां आये राजा ने उन को बड़ी भक्ति से पाद्य अर्घ्य मधुपर्क आदि से पूजन कर आसन पर बैठाया और बड़े विनय से यह पूछा कि महाराज इतना ऐश्वर्य ऐसा अव्याहत तेज बल पुष्टि धन धान्य पुत्र पौत्र आदि सब पदार्थ मैंने किस दान तप अथवा नियम के प्रभाव से पाये यह आप कृपाकर वर्णन करें आप त्रिकालज्ञ हैं यह राजा का वचन सुन पुलस्त्यमुनि कहने लगे कि हे राजन्! सात जन्म पहिले बड़े धनाढ्य पुत्र भृत्य आदि सहित सत्यवादी और धर्मात्मा वैश्य तुम थे तुम ने पुराण श्रवण किया और अनेक दान दिये और भुवनप्रतिष्ठा करी उसी के प्रभाव से तुम सात जन्म से राजा होते आते हो और आगे भी सात जन्म राजा होगे और अन्त में मुक्ति पावोगे जो तुम ने पूछा वह सब हम ने कहा जो पुरुष अथवा स्त्री भुवनप्रतिष्ठा करैं वे कृतकृत्य होते हैं इतना कह पुलस्त्यमुनि अपने धाम को गये हे महाराज! धर्म की वृद्धि अभीष्ट की सिद्धि और पाप क

त्तय इस भुवनप्रतिष्ठा से होता है ऐसा कोई कार्य नहीं जो इस भुवनप्रतिष्ठा के करने से सिद्ध न होय इस लिये यह अवश्य करनी चाहिये ॥

एकसौ अट्ठावनका अध्याय ॥

नक्षत्रदानका फलसहित विधान ॥

राजा युधिष्ठिर कहते हैं कि हे श्रीकृष्णचन्द्र! और तो सब दानों का विधान आप के मुख से श्रवण किया अब आप नक्षत्रों का दान कल्प वर्णन कीजिये यह राजा का वचन सुन श्रीकृष्ण भगवान् कहने लगे कि हे महाराज! एक समय देवर्षि नारद द्वारका में आये थे उन को हमारी माता देवकी ने यही बात पूछी उस समय नारद जी ने जो नक्षत्रदान कहा वह हम वर्णन करते हैं कृत्तिका नक्षत्र में घृत पायस करके साधु ब्राह्मणों को संतुष्ट करै तो उत्तम लोक पावै रोहिणी नक्षत्र में घृत दुग्ध और रत्न अनृण होने के लिये ब्राह्मण को देवै मृगशिरानक्षत्र में सवत्सा दूध देनेहारी गौ ब्राह्मण को देवै तो विमान में बैठ स्वर्ग को जाय आर्द्रा नक्षत्र में तिलों सहित कृसर देने से मनुष्य सब प्रकार के संकटों से छुटता है पुनर्वसु नक्षत्र में घृतपक्क अपूप ब्राह्मण को देवै तो उत्तम कुल में जन्म पाकर यश लक्ष्मी और रूप पावै पुष्यनक्षत्र में सुवर्ण देवै तो कृतकृत्य होकर दिव्य लोक में चन्द्रमा की भांति विराजमान होय आश्लेषानक्षत्र में ब्राह्मणों को चांदी देवै तो निर्भय और शास्त्रवेत्ता होय मघानक्षत्र में तिलपूर्ण शराव अर्थात् सकोरे देवै तो पशुवान् और पुत्रवान् होय पूर्वाफाल्गुनी में खण्ड का पात्र ब्राह्मण को देवै तो पुण्य लोकों में जाय निवास करै उत्तराफाल्गुनी में सुवर्ण का कमल देवै तो सब बाधाओं

से छुट सूर्यलोकको जाता है हस्तनक्षत्र में सुवर्णका हाथी बनाय ब्राह्मणको देवै तो दिव्य हस्तीपर आरूढ़हो इन्द्रलोक को जाय चित्रा नक्षत्र में उत्तम वृषभ और अनेकप्रकार के सुगन्धद्रव्य देवै तो अप्सराओं के साथ नन्दन वनमें विहार करै स्वाती में जो पदार्थ अपने को अतिप्रिय होयँ उनका दान करै तो बहुत यश और अन्त में सद्गति पावै विशाखा में उत्तम वृषों करके युक्त और धान्य वस्त्र सहित शकट दान करै तो सूर्य्यभगवान् सन्तुष्ट होते हैं और दान करनेहारा पुरुष सब पापों से छुट उत्तमगति पाता है अनुराधा नक्षत्र में कम्बल और वस्त्र ब्राह्मणों को देवै तो दिव्य सौवर्ष से भी अधिक स्वर्ग में देवताओं के समीप निवास करता है ज्येष्ठा नक्षत्र में फल और शाक ब्राह्मण को देवै तो अभीष्ट गति पावै मूल नक्षत्र में ब्राह्मणोंको फल मूलआदि देवै तो अपने पितरों को प्रसन्न करै और उत्तम गति पावै पूर्वाषाढ़ा में दधि-पात्र कुलीन और वेदवेत्ता ब्राह्मणको देवै तो पुत्र पौत्र पशु धन और ऐश्वर्य्य पावै उत्तराषाढ़ा में घृत शहद और फाणित अर्थात् बताशे ब्राह्मणों को देवै तो सब काम पावै अभिजित् में घृत मधु सहित दुग्धदेवै तो स्वर्ग में निवास करै श्रवण नक्षत्र में पुस्तक दान करै तो विमान में बैठ अपनी इच्छा से सब लोकों में विचरै धनिष्ठा नक्षत्र में गोयुग देवै तो अनेक जन्मोंतक सुखीहोय शतभिषा में अगुरु और चन्दन देवै तो अप्सराओं के लोकमें जाय पूर्वाभाद्रपदा में राजमाष देवै तो सब प्रकार के भक्ष्यभोज्य पावै और जन्मान्तर में सुखी होय उत्तराभाद्रपदा में वस्त्र सहित जल पात्र ब्राह्मणको देवै तो पितरों को सन्तुष्ट करै और सद्गति पावै कांस्य दोहन युक्त

धेनु रेवती नक्षत्र में ब्राह्मण को देवै तो उसके सब मनोरथ सिद्धहोयँ और जन्मान्तर में सद्गति पावै अश्विनी नक्षत्र में उत्तम अश्वोंकरके युक्तरथ ब्राह्मण को देवै तो हाथी घोड़े रथ आदि पावै और तेजस्वी होय भरणी नक्षत्र में ब्राह्मण को तिलधेनु देवै तो उत्तम गौ यश और सद्गति पावै इतना कह श्रीकृष्णभगवान् ने कहा कि हे महाराज! यह नारदजी का कहा नक्षत्रकल्प आपको कथन किया इसके करने से सब पाप और उपद्रव निवृत्त होते हैं दान में वारका और कालका कुछ नियम नहीं श्रद्धाही मुख्य है सब वेदों को देख यह दान विधान ब्रह्माजी के पुत्र नारद ने कहा है जो इसदान को देवै वह सब दानोंका फल पाताहै ॥

एकसौ उनसठिका अध्याय ॥

तिथिदानका फल सहित विधान ॥

श्रीकृष्णचन्द्र कहते हैं कि हे महाराज! सब पाप और विघ्न हरनेहारे तिथिदानका विधान हम कहते हैं जिसदान के करने से मानस वाचिक और कायिक पाप उसीक्षण कट जाते हैं श्रावण कार्त्तिक वैशाख अथवा फाल्गुन के शुक्ल पक्ष के आरम्भ से यह दान देना चाहिये वित्त श्रद्धा सहाय और सत्पात्रकी प्राप्ति जब होय वही उत्तम दानकाल है तीर्थ देवालय गोष्ठ अथवा घरमें ही श्रद्धा पूर्वक दान देवै तो अनन्त फल पावै प्रतिपदा के दिन ब्राह्मण और ब्रह्मा का पूजनकर सुवर्णका अष्टदल कमल बनवाय सुगन्ध घृत से पूर्ण ताम्रपात्रपर उसको रख पुष्प धूपआदि से उसका पूजन कर ब्राह्मणको देवै तो अभीष्ट लक्ष्मीपावै और निष्कामहो यह दानकरै तो मुक्तिभागी होय द्वितीयाके दिन सुवर्ण की

अग्नि की प्रतिमा बनाय गुड़ घृत से पूरित ताम्रपात्र में रक्खे और उस पात्र को जलपूर्ण कलश के ऊपर स्थापन करै फिर व्याहृतियों से अष्टोत्तरशत आहुति घृत और तिलों करके दे पूर्णाहुति देवै और वस्त्र माला अनेक प्रकार के भक्ष्य भोज्यों करके उस मूर्त्ति का पूजन कर ब्राह्मण को देवै और (वह्निर्मेप्रीयताम्) यह वाक्य उच्चारण करै तो जन्म भर किये पापों से छुट वह्निलोक में निवास करै यह नारद मुनि ने कहा है तृतीया के दिन सुवर्ण की गोधा बनाय ताम्र पात्र में रख लवण के ऊपर स्थापन करै और दो रक्त वस्त्रों से उसको आच्छादन कर जीरा कुटकी के टुकड़े और गुड़ उसके पास रख गन्ध पुष्प धूप दीप नैवेद्यआदि से उसका पूजनकर ब्राह्मण को देवै तो इतना फल होता है कि जिसका वर्णन नहीं करसकते सुवर्ण के जहां प्रासाद हैं पायस के कर्दमयुक्त जहां नदी हैं और गन्धर्व अप्सरा जहां बसते हैं उनलोकों में वह पुरुष बहुतकाल सुख भोगकर मर्त्यलोकमें जन्म ले सुरूप सुभग दाता भोगी धनाढ्य और पुत्र पौत्रयुक्त होता है और स्त्री भी इस दानको करै तो ये सब फलपावै चतुर्थी के दिन सुवर्णका हस्ती बनाय कुशा सहित द्रोणभर तिलों के ऊपर स्थापन कर वस्त्र पुष्प नैवेद्य आदि से उसका पूजनकर ब्राह्मण को देवै और (गणेशःप्रीयताम्) यह वाक्य कहै जो पुरुष यह दान करै उसके किसी कार्य्य में विघ्न नहीं होता और सात जन्मतक मत्त हस्तियोंका स्वामी होता है और गजेन्द्रपर चढ़ सबलोक को जीतता है पंचमी के दिन एक कर्षभर सुवर्ण का नाग बनाय घृत दुग्ध पूर्णपात्र में उसको स्थापनकर विधिपूर्वक पूजन करै और ब्राह्मणको देकर प्रणामकर क्षमा

करावै यह दान नागों के उपद्रवको दूर करता है और दोनों लोकों में सुख देता है और सर्पके काटने से जो पुरुष मृतहुआ होय उसके उद्धार के लिये शिवजीने यह प्रायश्चित्त कहा है षष्ठी के दिन मयूरपर चढ़े शक्ति हस्त सुवर्णमाला पहिने ऐसी कार्त्तिकेयकी सुवर्णकी प्रतिमा बनाय द्रोणभर चावलों के ऊपर स्थापनकर सब उपचारों से उसका पूजनकर कुटुम्बी ब्राह्मणको देवै इस दानका करनेहारा पुरुष बहुत ऐश्वर्य्य पाय अन्त में स्वर्गको जाता है और शूद्र इस दानको करै तो जन्मान्तर में ब्राह्मण होय सप्तमी को सुवर्णकी सूर्यप्रतिमा बनाय सब उपचारों से उसका पूजनकर दक्षिणा सहित ब्राह्मण को देवै तो गन्धर्व सन्तुष्ट होते हैं और वह पुरुष सूर्यलोक में निवास करता है अष्टमी के दिन धुरन्धर वृषको दो श्वेत वस्त्र उढ़ाय उसके गलमें घण्टा बांध पूजनकर ब्राह्मण को देवै और (वृषध्वजः प्रीयताम्) यह वाक्य उच्चारण करै और प्रदक्षिणाकर द्वारतक उसके साथ जाय इस दान के करनेहारे को शिवलोक प्राप्ति होती है वृष के स्कन्ध में चौदह भुवन निवास करते हैं इसलिये वृषदान करने से चौदह भुवन दान करनेका फल प्राप्त होता है नवमी के दिन सुवर्ण का सिंह बनाय नीलवस्त्र से आच्छादितकर दुष्ट दैत्यनिबर्हणी भगवतीका स्मरणकर मोती के आठ पानों सहित उत्तम ब्राह्मणको देवै तो सब उत्तम फल पावै और वनदुर्ग कान्तार आदि में चोर व्याल आदि हिंसक जीवोंका कभी उसको भय नहीं होता और अन्त समय सुरासुरों करके पूज्यमान देवीलोकको जाता है वहां बहुतकाल सुख भोगकर पुण्य क्षीण होने से मर्त्यलोक में जन्मले धर्मात्मा राजा होता

है दशमी के दिन शालि के दश पिंडबनाय उनका पूजनकर लवण गुड़ जीरा निष्पाव तिल चावल उड़द दूध दही और घृत सहित जो पुरुष ब्राह्मण को देवै उसके सब मनोरथ सिद्ध होते हैं और बहुत काल स्वर्ग सुख भोग उत्तम कुल में जन्म पाताहै एकादशी के दिन सुवर्ण की विश्वेदेव प्रतिमा बनाय ताम्रपात्र में रख घृत पूर्ण कलश के ऊपर स्थापनकर सब उपचारों से उसका पूजन करै पीछे पौराणिक ब्राह्मण को देवै तो विष्णुलोक पावै द्वादशी के दिन गौ वृष महिषी अश्व सुवर्ण सप्तधान्य गुड़ पुष्प फल रस घृत और अनेक प्रकार के रस ये बारह पदार्थ यथाशक्ति एकत्रकर सब को वस्त्र से आच्छादितकर उनका पूजन करै पीछे सत्पात्र ब्राह्मणों को देवै वह पुरुष बहुत कीर्ति और ऐश्वर्य पाय अंत में विष्णुलोक को जाताहै वहां बहुत काल निवासकर पुण्य क्षय होने से भूमिपर जन्मले यज्ञ करनेहारा दानी और प्रतापी राजा होताहै और सौ वर्ष जीता है त्रयोदशी के दिन सत्पात्र ब्राह्मण को स्नान कराय उत्तम वस्त्र पहिनाय गन्ध पुष्प आदि से अलंकृतकर उत्तम भोजन करावै और दक्षिणा देकर प्रेतनाथ रौद्र वैवस्वत महिषवाहन यम आदि धर्मराज के नाम उच्चारणकर प्रणाम पूर्वक उसको विसर्जन करै इस विधि से जो पुरुष यमराज का अर्चन करै वह सब रोगों से छुटताहै और यममार्ग में कष्ट नहीं पाता और पितृलोक में बहुत काल निवासकर मर्त्यलोक में जन्मले सुखी और पुत्रवान् होताहै चतुर्दशी के दिन उत्तम कुम्भ सुवर्ण वस्त्र और घंटा आदि से भूषित रूप कुटुम्बी ब्राह्मण को देवै तो शिवलोक को जाय वहां बहुत काल सुख भोग तीनसौ जन्म तक

आरोग्य धन और उत्तम कुल में जन्म पाताहै पूर्णमासी के दिन चांदीकी चन्द्रप्रतिमा बनाय गन्ध पुष्प नैवेद्य आदि से उसका पूजनकर वस्त्र भूषण सहित ब्राह्मण को देवै और (क्षीरोदार्णवसम्भूत गगनांगणदीपक। उमापतिशिरोरत्नशिवनेत्र नमोनमः) यह मन्त्रपढ़ै पीछे विधिपूर्वक वृषोत्सर्ग करै इस दानका करनेहारा प्रलय पर्यन्त अप्सराओं के साथ विहार करताहै और चन्द्रमा के समान कान्तिमान् होता है जो पुरुष इस क्रम से प्रतिपदा आदि तिथियों में दान करै वह ब्रह्मलोक विष्णुलोक आदि में बहुत काल विहार कर अन्त में शिवजी के साथ एकताको प्राप्त होताहै॥

एकसौसाठका अध्याय॥

वराहदानका विधान और फल॥

श्रीकृष्णभगवान् कहते हैं कि हे महाराज! अब हम सब पाप हरनेहारे पवित्र और सब दानों में उत्तम वराहदान का विधान कहते हैं जो वराहभगवान् ने भूमि के प्रति कहा है संक्रान्ति ग्रहण द्वादशी यज्ञोत्सव विवाह दुःस्वप्न दर्शन आदि कालों में अथवा जब श्रद्धाहोय तबहीं यह दान करै कुरुक्षेत्र आदि तीर्थ गङ्गा आदि नदी गोष्ठ देवालय अथवा अपने घरके अङ्गन में यह दान विधिपूर्वक कुटुम्बी ब्राह्मण को देवै परन्तु वह ब्राह्मण वेद वेदाङ्ग जाननेहारा सुशील और सम्पूर्णाङ्ग होना चाहिये ये देशकाल और पात्र हमने कहे अब दानविधान कहते हैं ईशान कोण में गोबर से लेपनकर उसपर कुशा बिछाय उसके ऊपर चार द्रोण तिलों करके वराह की मूर्त्ति कल्पना करै जो चार द्रोण का सामर्थ्य न होय तो एक द्रोण अथवा आढ़क अर्थात् चारसेर तिलोंकीही

बनावै सुवर्णका उसका मुख चांदीकी दंष्ट्रा बनाय पद्मराग मणिसे भूषित करै सुवर्णकी वनमाला शंख और चक्र उसके पास स्थापन करै सुवर्णकी भूमिबनाय सब धान्य वस्त्र भूषण आदि से शोभितकर उसकी दंष्ट्रा के ऊपर स्थापन करै चांदी के खुर और कुशाके रोम बनाय वराहभगवान् को वस्त्रों से आच्छादितकरै फिर नवग्रह यज्ञ और तिलों से होम करके (वराहाशेषदुःखानि सर्वपापफलानिच। त्वंमर्दयमहादंष्ट्र भास्वत्कनककुण्डल ॥ शंखचक्रासिहस्ताय हिरण्यकान्तिकायच। दंष्ट्रोद्धृतक्षितिभृते त्रयीमूर्त्तेनमोनमः) ये मन्त्र पढ़ विधिपूर्वक पूजनकर प्रदक्षिणा और नमस्कार करै पीछे वस्त्र भूषण और दक्षिणा सहित ब्राह्मणको देवै इसका दान चरण में करै इस विधि से आचार्य को यह दानदे कुछ दूरतक पहुँचाने के लिये अनुगमन करै और क्षमापनकरावै इस दान के करने से जो पुण्य प्राप्तहोता है उसका वर्णन कौन करसक्ता है सब यज्ञ और सब दान करने से जो फल प्राप्तहोताहै वह इस एक दान सेही मिलता है वराह भगवान् ने जिस प्रकार भूमिका उद्धार किया उसीभांति यह दान करनेहारा पुरुष अपने कुलका उद्धार करता है और विष्णुलोक को जाता है ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य शूद्र स्त्री शैव वैष्णव योगी आदि सब को यह दान करना चाहिये वेदवेत्ता ब्राह्मणको जो पुरुष तिलोंका वराह बनाय सुवर्ण वस्त्र सहित देवै वह अपने पूर्वपुरुषों का उद्धारकर मित्र कलत्रसहित स्वर्गको जाताहै ॥

एकसौ इकसठका अध्याय ॥

धान्याचलके दानका विधान और फल ॥

राजायुधिष्ठिर कहते हैं कि हे श्रीकृष्णचन्द्र ! आपके मुख

से हम और भी दानोंका माहात्म्य श्रवण किया चाहते हैं आप कथन करें जिनके करने से अक्षय पदकी प्राप्तिहोय यह राजाका वचनसुन श्रीकृष्णभगवान् कहनेलगे कि हे महाराज! जो दानमाहात्म्य रुद्र ने नारद को और मत्स्यरूप भगवान् ने मनुको कथन किया है वह दशप्रकारका पर्वतदान हम आपको श्रवणकराते हैं जिसके करने से सब मनोरथ सिद्धहोते हैं और उत्तम लोककी प्राप्ति होती है धान्याचल लवणाचल गुड़ाचल सुवर्णाचल तिलपर्वत कर्पास पर्वत घृतपर्वत रत्नपर्वत रजतपर्वत और शर्कराचल ये दशप्रकार के पर्वत दान हैं अब इनका क्रम पूर्वक हम विधान कहते हैं अयन विषुव व्यतीपात अवम् दिन शुक्ल तृतीया ग्रहण अमावास्या विवाहोत्सव यज्ञद्वादशी पूर्णिमा और भी पुण्य दिनों में ये दान विधि पूर्वक करने चाहिये तीर्थदेवालय गोष्ठ नदी संगम आदि स्थानों में उत्तराभिमुख अथवा पूर्वाभिमुख चतुरस्र मण्डपबनाय गोबर से लेपनकर कुशाबिछाय उस के ऊपर धान्यपर्वत बनावै हजार द्रोण धान्यका उत्तम पांचसौ द्रोणका मध्यम और तीनसौ द्रोण धान्यका निकृष्ट पर्वत होता है इस प्रकार पर्वतबनाय सुवर्ण के तीनवृक्ष उस पर लगावै पूर्वमें मोतीहीरे दक्षिण में गोमेद पुखराज पश्चिम में पन्ना नीलम और पर्वत के उत्तरमें वैदूर्य और पद्मरागरक्खै चन्दन के टुकड़े और मूंगे उस में स्थापनकर शुक्तिकीशिला कल्पनाकरै ब्रह्मा विष्णु शिव और सूर्यकी सुवर्णकी मूर्त्ति उस के ऊपर स्थापन करै सुवर्ण रजत आदि धातु उस में रक्खै घृत के झरने और वस्त्रों के मेघ कल्पना करै पूर्वादि दिशाओं में क्रम से श्वेत कृष्ण कर्बुर और रक्तवस्त्र रक्खै

चांदी के इन्द्र आदि अष्टदिक्पाल स्थापन करै अनेक प्रकार के फल पुष्प पर्वत में रख पंचरंग का वितान उस के ऊपर लगावै और उस को पुष्पमालाओं से भूषितकरै इस प्रकार धान्य का मेरुपर्वत बनाय पूर्वदिशा में अनेक फल सुवर्ण के कदम्ब वृक्ष और अनेक वस्त्रादिकों से भूषित सर्वान्न का मन्दराचल स्थापन करै दक्षिण में चांदी का अथवा गोधूम का गन्धमादन पर्वत बनाय सुवर्ण का जम्बूवृक्ष चांदी वस्त्र आदि से उस को अलंकृत करै पश्चिम में तिलों का विपुलाचल स्थापन करै और उस को सुवर्ण के अश्वत्थवृक्ष सुवर्ण के हार वस्त्र आदि से भूषित करै उत्तर में उड़दों का सुपार्श्व पर्वत स्थापन कर सुवर्ण के वटवृक्ष सुवर्ण की धेनु सुवर्ण रत्न वस्त्र सब रस फल पुष्प आदि से उस को अलंकृत करै इस प्रकार सब पर्वत बनाय पूर्वादि दिशाओं में हस्त प्रमाण चतुरस्र कुण्ड बनावै उनमें चार वेदवेत्ता ब्राह्मण तिल घृत समिधा और कुशाओं से होमकरें पीछे यजमान स्नान आदि कर उन पर्वतों का पूजन करै और हाथ जोड़ (त्वं सर्वदेवगणधामविधिं विरुद्धमस्मद्गृहेष्वमरपर्वत नाशयाशु । क्षेमं विधत्स्व कुरु शान्तिमनुत्तमां मे सम्पूजितः परमभक्तिमता मया हि ॥ त्वमेव भगवानीशो ब्रह्मा विष्णुर्दिवाकरः । मूर्तामूर्तं परं बीजमतः पाहि सनातन ॥ यस्मात्वं लोकपालानां विश्वमूर्त्तिश्च मण्डनम् । केशवार्कवसूनां च तस्माच्छान्तिं प्रयच्छ मे ॥ यस्मादशून्यममरैर्नारीभिश्च शिरस्तव । तस्मान्मामुद्धराशेषदुःखसंसारसागरात ॥ यस्माच्चैव रथेन त्वं भद्राश्वर्षवपिण च । शोभसे मन्दराक्षिप्रमतस्तुष्टिकरोभव ॥ यस्माच्चूडामणिर्जम्बूद्वीपे त्वं गन्धमादन । गन्धर्वसरशोभावानतः कीर्तिर्दृ-

से हम और भी श्राख्यं केतुमान्मौलौवैभ्राजेनवनेनच । हिरण्य
आप कथन को तस्मात्तुष्टिं विधत्स्व मे ॥ उत्तरैः कुरुभिर्यस्मा
———नेनच । सुपार्श्व राजसे नित्यमतः श्रीरक्षयास्तुमे)
त्र पढ़ उन सब को अभिमन्त्रण करै दूसरे दिन स्नान
यका मुख्य पर्वत गुरु के अर्पण करै और वे चारों दि-
के पर्वत उन चारों ब्राह्मणों को देवै फिर चौबीस दश
ति छः पांच अथवा एकही कपिला गौ दुग्ध देनेहारी
गुरु को देवै यही विधान सब पर्वतों के दान का है ग्रह लोक-
पाल पर्वत और ब्रह्मादि देवताओं के नाम मंत्रों से हवन करै
उस दिन उपवास अथवा नक्तव्रत करै और (अन्नं ब्रह्म यतः
प्रोक्तमन्ने प्राणाः प्रतिष्ठिताः । अन्नाद्भवन्तिभूतानि जगदन्ने
न वर्त्तते ॥ अन्नमेवयतोलक्ष्मीरन्नमेव जनार्द्दनः । धान्यपर्व
तरूपेण पाहि तस्मान्नगोत्तम) ये मन्त्रपढ़े इस विधान से
जो पुरुष धान्याचल दानकरै वह सौ मन्वन्तरपर्यन्त स्वर्ग
में निवास करता है और गन्धर्व अप्सरा आदि उस की सेवा
में रहते हैं और पुण्य क्षय होने पर राजा होता है जो पुरुष
सुवर्ण वृक्षों करके शोभित और चार विष्कम्भ पर्वतों सहित
धान्याचल भक्तिसे ब्राह्मण को देते हैं वे ब्रह्मलोकको जाते हैं ॥

एकसौबासठ का अध्याय ॥

लवणाचल के दान का विधान और फल ॥

श्रीकृष्णचन्द्र कहते हैं कि हे महाराज ! अब हम लवणाचल दान विधान कहते हैं जिस के करने से मनुष्य को शिवलोक प्राप्त होता है सोलह द्रोण लवण का उत्तम आठ द्रोण का मध्यम और चार द्रोण लवण का लवणाचल अधम होता है इन में यथाशक्ति लवणाचल बनाय उस के चतुर्थांश के

तुल्य चार विष्कम्भ पर्व्वत बनावै ब्रह्मादि देवता वृक्ष स-रोवर लोकपाल धेनु आदि सब पूर्व रीति से बनाय विधि पूर्व्वक उसका पूजन कर (सौभाग्यरससम्पूर्णः सम्भूतो लवणो रसः । दानात्मकत्वेन नमः पाहि पापाशगोत्तम ॥ यस्मादन्न रसाः सर्वे नोत्कृष्टा लवणं विना । प्रियं च शिवयोर्नित्यं तस्मा च्छान्तिप्रदो भव ॥ विष्णुदेहसमुद्भूतो यस्मादारोग्यवर्द्धनः । तस्मात्पर्वतरूपेण पाहि संसारसागरात्) ये मन्त्र पढ़ ब्राह्मण को देवै इस विधि से जो पुरुष लवणाचल का दान करै वह एक कल्प उमालोक में निवास कर पुण्यक्षय होने से धर्मात्मा और पुत्र पौत्रयुक्त राजा होता है और सौ वर्ष आयुष भोगता है जो भक्ति से लवणाचल दान करैं वे विमान पर बैठ स्वर्ग को जायँ और वहां गन्धर्व्व अप्सराओं करके सेवित बहुत काल सुख भोग करैं ॥

एकसौतिरसठका अध्याय ॥

गुड़पर्वत के दानका विधान और फल ॥

श्रीकृष्णचन्द्र कहते हैं कि हे महाराज ! अब हम गुड़ पर्वत के दानका विधान कहते हैं जिसके करने से स्वर्ग प्राप्ति होती है दशभार गुड़का उत्तम पांच भारका मध्यम और तीन भार गुड़का निकृष्ट होता है इस में धान्याचल के विधान से विष्कम्भ पर्वत वृक्ष देवता लोकपाल आदि बनावै और उसी विधि से होम पूजन आदि कर (यथा देवेषु विश्वात्मा प्रवरो यं जनार्द्दनः । सामवेदस्तु वेदानां महादेवस्तु योगिनाम् ॥ प्र णवः सर्वमन्त्राणां नारीणां पार्वती यथा । तथा रसानां प्रवरः स दैवेक्षुरसो मतः ॥ मम तस्मात्परां लक्ष्मीं प्रयच्छ गुडपर्वत । सुरासुराणां सर्वेषां नागयक्षर्षिरक्षिणाम् ॥ [illegible]

वत्यास्तस्मान्मां पाहि सर्वदा) ये मन्त्र पढ़ ब्राह्मणको देवै इस विधि से जो पुरुष गुड़पर्वत दान करै वह गन्धर्वों करके पूजित गौरीलोक को प्राप्त होता है और सौ कल्पपर्यन्त वहां सुख भोगकर दीर्घायुष् बड़ा प्रतापी और चक्रवर्त्ती राजा होता है पूर्व्वकाल में मरुत्त राजाकी सुलभा नाम बड़ी पतिव्रता और सुशीला रानी थी राजा मरुत्त का भी उसमें बहुत अनुराग था एक समय वहां दुर्वासा मुनि आये उनका राजा और रानी ने बड़ा सत्कार किया और पाद्य अर्घ्य दे आसन पर बैठाय बड़े विनय से रानी ने पूछा कि महाराज किस पुण्य के प्रभाव से मेरे पतिका मुझ में इतना अनुराग है और सब सपत्नी भी मेरा हित चाहती हैं आप कृपाकर कथन कीजिये यह रानी का वचन सुन दुर्वासा मुनि कहने लगे कि हे सुलभे ! हम तेरे पूर्व्वजन्म का वृत्तान्त कहते हैं साव धान होकर श्रवण कर पूर्व्व जन्म में गिरिव्रज पुरके बीच रहने वाले वैश्यकी तू भार्या थी सदा पतिकी सेवा में तत्पर रहती एक समय तैंने ब्राह्मणों के मुख से दान माहात्म्य श्रवण किया उसमें विशेष करके गुड़पर्वत दान का माहात्म्य सुना और विधि पूर्व्वक गुड़ाचलका दान किया उस दान के प्रभाव से रूप सौभाग्य और आरोग्य पाया चार जन्म रानी होते व्यतीत होचुके और अभी सात जन्मपर्य्यन्त आगे भी राजमहिषी होगी और उत्तम सन्तान पावैगी इतना कथन कर दुर्वासा मुनि अपने धाम को गये और रानी ने भी दान के प्रभाव से मनोवाञ्छित फल पाये यह दान नारियों के लिये विशेष करके फलदायक है जो स्त्री अथवा पुरुष इस दान को विधान से करैं उनपर गौरी भगवती प्रसन्न होती हैं॥

एकसौचौंसठका अध्याय॥

सुवर्णपर्वतके दान का विधान और फल॥

श्रीकृष्णचन्द्र कहते हैं कि हे महाराज! अब ह
र्वत के दान का विधान कहते हैं जिस के करने से
प्राप्ति होती है हजार पल सुवर्ण का पर्वत उत्तम पांचसौ का मध्यम और अढ़ाईसौ का निकृष्ट होता है परन्तु सामर्थ्य के अनुसार एक पल सुवर्ण पर्यंत भी होसक्ता है इस का सब विधान धान्य पर्वत की भांति है पर्वत का पूजनादि कर (नमस्ते ब्रह्म वीजाय ब्रह्मगर्भाय वै नमः। यस्मादनन्तफलदस्तस्मात्पाहिशि लोच्चय॥ यस्मादग्नेरपत्यंत्वं यस्मात्पुत्वं जगत्पतेः। हेमपर्वतरूपेणतस्मात्पाहि नगोत्तम) यह मन्त्र पढ़ै इस विधि से जो पुरुष सुवर्ण पर्वत दान करै वह स्वर्ग को जाता है वहां दिव्य सौ वर्ष निवास कर परम गति को प्राप्त होताहै सुवर्णाचल से बढ़कर कोई दान नहीं है मणि के शृङ्गों से भूषित और अष्ट-लोकपालों सहित सुवर्णाचल का जो पुरुष भक्तिपूर्वक दान करै वह एक कल्प पर्य्यन्त अग्निलोक में निवास करता है॥

एकसौ पैंसठ का अध्याय॥

तिलपर्वतके दानका विधान और फल और तिलोंकी उत्पत्ति सहित प्रशंसा॥

श्रीकृष्ण भगवान् कहते हैं कि हे महाराज! अब हम तिलपर्वत दान का विधान कहते हैं जिस के करनेहारा पुरुष विष्णु लोक को जाता है सब पदार्थों में तिल पवित्र हैं और विष्णुभगवान् के देह से उत्पन्न हुये हैं इसलिये उत्तमगिने जाते हैं पूर्वकाल में मधु कैटभ नाम दो दैत्य भये मधुके साथ एकहजार वर्ष भगवान् ने युद्ध किया तब परिश्रम होने से

र्वैत्यास्तस्मान्मां शरीर से प्रस्वेद भूमिपर गिरा उससे तिल और विधि से जो पुरुये और वह दैत्य भी भगवान् ने मारा जिस के जित गौरीलोक भूमि छुत होगई इसी से मेदिनी कहाई उस दैत्य सुख भोगकसे देवता बहुत प्रसन्नभये और विष्णुभगवान् की स्तुति करनेलगे कि हे भगवन्! यह जगत् आपनेही उत्पन्न किया और आपही इसका पालन करते हैं ये तिल आप के अंग से उत्पन्न हुये हैं ये सदा हव्य कव्य का पालन करैं और देव पितृ कर्म में मनुष्य इन को लगावैं और जहां तिल प्रयुक्त किये जायँ वहां दैत्य पिशाच आदि कोई विघ्न न करैं यह देवताओं का वचन सुन विष्णु भगवान् ने कहा कि ये तिल तीनों लोकों की रक्षा के लिये होंगे जो पुरुष स्नान कर के श्रद्धायुक्त शुक्ल पक्ष में देवताओं को और कृष्णपक्ष में पितरों को तिलोदक देवेंगे अथवा सात आठ तिलों सहित जलांजलि देवेंगे उनके देवता और पितर सन्तुष्ट होंगे श्वान काक पतित आदि के संग से जो पाप हुआ होय वह तिलतर्पण मात्र से निवृत्त होजाता है ऐसे उत्तम तिलों करके पर्वत बनाय ब्राह्मण को देना चाहिये दशद्रोण तिलों का उत्तम पांच का मध्यम और तीनद्रोण तिलों का निकृष्ट होता है तिल पर्वत का भी पूजन आदि पूर्वरीति से करके (यस्माद्वै मधुना युद्धे विष्णोः स्वेदसमुद्भवाः। तिलाः कुशाश्च माषाश्च तस्माच्छन्नोभवतिवह ॥ हव्ये कव्ये च यस्माच्च तिलैरेवाभिमन्त्रणम्। तस्मादुद्धर शैलेन्द्र तिलाचल नमोस्तुते) यह मन्त्र पढ़ इस विधि से जो पुरुष तिलपर्वत का दान करै वह दीर्घ आयुष भोग कर देवता और पितरों करके पूज्यमान स्वर्ग को जाता है और पुण्यक्षय होनेपर मृत्युलोक में जन्मले धार्मिक

राजा होता है नारी इस दान को करै तो रू
और पुत्र पौत्र पाती है निर्धन पुरुष भी इस वि
करने से कपिला दान के तुल्य फल पाता है तिल
कोई दान नहीं है जिन तिलों से देवता और पित
हैं उन के पर्वत के दान का पुण्य तो कौन वर्णन करसके॥

एकसौछियासठ का अध्याय॥

कर्पासाचल दानका विधान और फल॥

श्रीकृष्णभगवान् कहते हैं कि हे महाराज! अब हम कर्पास पर्वत के दानका विधान कहते हैं जो सब देवताओं को प्रिय है और सब दानों में उत्तम है बीसभार कर्पास का उत्तम दश का मध्यम और पांचभार कर्पास का पर्वत अधम होता है पूर्व रीति से कर्पासाचल बनाकर धान्यपर्वत की रीति से जागरण और अधिवासन करै फिर दूसरे दिन पूजन आदि कर सत्पात्र ब्राह्मण को देवै कर्पासाचल दान जो पुरुष श्रद्धासे विधिपूर्वक करै वह एक कल्प रुद्रलोक में निवास कर भूमिपर जन्म ले राजा होय रूप धन विद्या लक्ष्मी और पराक्रम पावै इसी प्रकार पांच जन्म पर्य्यन्त राजा होय नारी इस दान को करै तो रूप सौभाग्य सन्तान और धन पावै॥

एकसौ सरसठका अध्याय॥

घृताचल दानका विधान और फल॥

श्रीकृष्ण भगवान् कहते हैं कि हे महाराज! अब हम सर्व पाप हरनेहारे घृताचल का विधान कहते हैं पचास घृतकुंभ का उत्तम पचीस का मध्यम और इस से भी अर्द्ध निकृष्ट होता है इस प्रकार घृतपर्वत बनाय चार भार घृतके विष्कम्भ पर्वत बनावै उनके ऊपर चावलों से पूर्ण कलश रक्खै इनु

वेत्यास्तस्मान्मां ...क प्रकार के फल उन के समीप स्थापनकरै विधि से जो पुरु... से वेष्टितकर धान्यपर्वत के विधान से अ-जित गौरीलोक...म देवार्चन आदि करै दूसरे दिन पूजन आदि सुख भोगक... संयोगाद्घृतमुत्पन्नं यस्मादमृततेजसोः । तस्माद्घृतोर्चिर्विश्वात्मा प्रीयतां मम शङ्करः ॥ यस्मात्तेजोमयं ब्रह्म घृते चैव व्यवस्थितम् । घृतपर्वतरूपेण तस्मान्नः पाहि शङ्कर) ये मन्त्रपढ़ मुख्य पर्वत गुरु को निवेदनकरै और विष्कम्भ पर्वत ऋत्विजों को देवै इस विधि से जो पुरुष घृताचल दान करै वह चाहै महापातक करनेहारा भी होय परन्तु सब पातकों से छुट शिवलोक को जाता है हंस सारस आदि पक्षियों करके शोभित किंकिणी मालाओं करके भूषित दिव्यविमान में बैठ अप्सरा गन्धर्व सिद्ध विद्याधर आदि करके सेवित प्रलय पर्यन्त पितरों के साथ विहार करता है ॥

एकसौ अरसठका अध्याय ॥

रत्नाचल दानका विधान और फल ॥

श्रीकृष्ण भगवान् कहते हैं कि अब हम रत्नाचल दानका विधान व माहात्म्य कहते हैं जिस दान के करने से सप्तर्षि लोककी प्राप्ति होती है हजार मोती का पर्वत उत्तम पांच सौ का मध्यम और तीन सौ का निकृष्ट होता है मोतियों का पर्वत बनाय उस के चतुर्थांश के समान विष्कम्भ पर्वत ब-नावै इन्द्र नील और गोमेदका पूर्व्व में पुखराज और पन्ने का दक्षिण में पद्मराग और सुवर्णका पश्चिममें और विद्रुम सहित वैदूर्य्य का पर्वत उत्तर में बनावै सुवर्णके वृक्ष और देवता स्था-पन करै आवाहन पूजन आदि सब विधान धान्यपर्वत की रीति से कर (यथादेवगणास्सर्वेसर्वरत्नेष्ववस्थिताः ॥ पञ्चरत्न

मयो नित्यमतः पाहि महाचल ॥ यस्मा६८
जनार्दनः । सरलाचलदानेन प्रीतोभवतु मे सद
मुख्य पर्वत गुरुको और विष्कम्भ पर्वत ऋत्वि
इस विधानसे जो पुरुष रत्नाचल दान करै वह विष्णु
जाय वहां दिव्य सौवर्षपर्य्यन्त सुख भोगकर मर्त्यलोकमें
ले रूप आरोग्य बल आदि करके युक्त चक्रवर्ती राजा होय इ
दानके करनेसे अनेक जन्मों में किये हुये ब्रह्महत्या आदि पा
निवृत्त होजाते हैं ॥

एकसौउनहत्तरका अध्याय ॥

रजताचलदानका विधान और फल एक राजाकी कथा ॥

श्रीकृष्ण भगवान् कहते हैं कि अब हम रजताचल दा
का विधान कहते हैं जिसके करनेसे मनुष्य सोमलोक क
जाता है हजार पल चांदीका उत्तम पांचसौ पलका मध्यम
और अढ़ाईसौ पल चांदीका निकृष्ट होता है सामर्थ्यके अनु
सार बीसपलतक भी रजताचल बनाकर दान करै इसके च
तुर्थांशके तुल्य विष्कम्भ पर्वत बनावै उनके ऊपर चांदी के
लोकपाल और ब्रह्मा, विष्णु, शिव बनाकर स्थापन करै सुवर्ण
का पर्वत और वृक्ष आदि बनावै पूर्ववत् होम जागरण पूज-
नादि कर (पितृणांवल्लभंयस्माद्धर्म्मोदानकरस्यच । तस्माद्रज
त मांपाहिघोरात्संसारसागरात्) यह मन्त्र पढ़ मध्य पर्वत
गुरुको और चारोंके पर्वत ऋत्विजोंको देवै इस विधिसे जो
रौप्याचल का दान करै वह दशहजार गोदान का फल पाता है
पूर्वकाल में एक बड़ा प्रतापी सूर्य्यवंश में सोमप्रभ राजा हुआ
जिसकी सोमवती नाम अतिरूपवती और पतिव्रता रानी थी
जो दशहजार नारियों में मुख्य और राजा की अतिप्रिया थी

र्वत्यास्तस्मान्मां श्रीरुवाच अपने पुरोहित श्रीवशिष्ठमुनिसे राजा विधि से जो पुछे पूछा कि हे भगवन्! किस पुण्यसे उत्तम तेज जित गौरीलोकोंमें मैंने पाया यह आप कृपाकर कथन कीजिये यह सुख भोगके प्रश्न सुन वशिष्ठजी कहनेलगे कि हे राजन्! पूर्व- तीर्थोंमें परम शिवभक्ता लीलावती नाम एक वेश्या थी उसने तेतुर्दशी के दिन सुवर्ण वृक्षों सहित लवणाचल दानकर अपने गुरुको दिया वहां एक शौण्डनाम सुनार था उसने सुवर्ण के वृक्ष और देवता श्रद्धा से बहुत सुन्दर बनाये और धर्म का काम समझ भृति अर्थात् गढ़ाई भी नहींली वृक्ष आदि ऐसे उजलाये कि अति मनोहर होगये और सुवर्ण- कार की स्त्री ने भी उन वृक्ष और मूर्त्तियों को प्रीति से स्वच्छ किया और दोनों स्त्री पुरुषों ने दान के काम में भली भांति शुश्रूषाकरी लीलावती वेश्या ने दानकर अपने गुरुको दिया कुछकाल के अनन्तर वेश्या मृत्युवश भई और सब पापों से छुट शिवलोक को गई सुवर्णकार जिसने दरिद्री होकर भी गढ़ाई न ली वह सप्तद्वीपके स्वामी चक्रवर्त्ती तुम भये और के उजलाने से अति रूपवती तुम्हारी रानी बनी दरिद्र हो कर भी सुवर्णकार और उसकी भार्य्या ने लवणाचल का सब काम भृतिके विना श्रद्धासे किया उसके प्रभाव से यह उत्तम फल पाया हे राजन्! अब तुम श्रद्धा से धान्याचल आदि दश पर्व्वतों का दान कीजिये यह वशिष्ठजी का वचन सुन राजा ने धान्याचल आदि सब पर्व्वतों का दान किया और बहुतकाल राज्यभोग अन्त में देवताओं करके सेवित शिव- लोक को गया जो निर्द्धन पुरुष इस मेरुदानको श्रद्धासे देखै

इसके विधान को प्रीति से श्रवणकरै अथवा किसी को बुद्धि देवै वह भी स्वर्ग को जाता है आदि दानों के विधान को श्रवण करनेहाराही ।५ बैठ स्वर्ग को जाताहै फिर श्रद्धा से दान करनेका तो तक वर्णन करैं ॥

एकसौसत्तरका अध्याय ॥

सदाचारनिरूपण ॥

राजा युधिष्ठिर कहते हैं कि हे श्रीकृष्णचन्द्र ! आप के मुखसे प्रतिपदा आदि तिथियों के व्रत रहस्य मन्त्र सहित व्रतोद्यापन नवग्रह यज्ञ विधान हवन विधान देवताओं के अनेक उत्सव अनेक प्रकार के दान धर्म्म तड़ाग वृक्ष आदि का उत्सर्ग इत्यादि हमने और इन महर्षियों ने श्रवण किये परन्तु हमारा मन मोहकोही प्राप्त हुआ आपने अनेक देवता और भांति भांति के व्रत कहे तिथि क्रमसे पूजा मन्त्र उपवास आदि का वर्णन किया ध्यानयोग में निष्ठ मुनीश्वर एक परमात्मा कोही सर्व्वव्यापी और सब का प्रभु कहते हैं यह सब आपने वर्णन किया परन्तु वर्णआश्रमों के धर्म्म और सदाचार का आपने कथन न किया इसलिये अब आप वर्णाश्रम धर्म वर्णन कीजिये ये सब मुनीश्वर भी आपके वचन श्रवण करने को उत्सुक होरहे हैं यह राजा का वचन सुन श्रीकृष्णभगवान् कहने लगे कि हे महाराज ! व्रत और दानों का लेशमात्र हमने वर्णन कियाहै सम्पूर्ण तो कौन वर्णन कर सकताहै अब हम वर्णाश्रम धर्म कथन करते हैं संसारके सब जीव दुःखों से छूट कल्याण के भागी होवैं सब आरोग्य रहैं कोई दुःखभागी न होय हमने व्रतों में अनेक देवताओं का

वेत्यास्तस्मान्मां (?) परन्तु वास्तव में कुछ भेद नहीं जो ब्रह्मा विधि से जो पुरुष विष्णु सो शिव जो शिव सो सूर्य्य जो सूर्य्य जित गौरीलोक अग्नि सो कार्त्तिकेय जो कार्त्तिकेय सो गणसुख भोगकर कुछ भेद नहीं है इसी प्रकार गौरी लक्ष्मी सावित्री तो कि शक्तियों में भी भेदका लेश नहीं चाहे जिस देवी देवता के उद्देश से व्रत करे परन्तु भेद बुद्धि न रक्खै क्योंकि सब जगत् शिव शक्तिमय है जगत् अनेक प्रकार का भासता है परन्तु परमार्थवेत्ता इस भेद को नहीं मानते किसी देवता का आश्रय लेकर नियम व्रत आदि करै केवल त्रयीधर्म का आचरण करना चाहिये यही इस में मुख्य कारणहै परन्तु जितने हमने व्रतदान आदि कहे वे सब आचारयुक्त पुरुष के सफल होते हैं आचारहीन पुरुष को वेद पवित्र नहीं करते चाहे छहों अङ्गों सहित पढ़े होयँ जिस भांति पंख जमने पर पक्षियों के बच्चे घोंसले को छोड़कर उड़जाते हैं इसी भांति आचारहीन पुरुष को वेद भी मृत्यु के समय त्याग देते हैं बुरे पात्र में जल अथवा श्वान के चर्म में दुग्ध रहने से जिस भांति अपवित्र होजाताहै इसी प्रकार आचारहीन में स्थित शास्त्र भी व्यर्थ है वृत्त अर्थात् आचरण का यत्नसे रक्षणकरै वित्त अर्थात् धन तो कभी आता है और कभी जाता है वित्तहीन जीता और वृत्तहीन नहीं जीसकता आचारही धर्म और कुल का मूलहै आचार से हीन पुरुष धर्म और कुल से भी हीन होजाताहै दुष्ट पुरुषों के कुलसे भी क्या उपयोगहै क्या सुगन्ध युक्त उत्तम पुष्पों में कृमि नहीं उत्पन्न होते हैं हीन कुल में भी उत्पन्न पुरुष जो शौच आचार सहित होय तो सैकड़ों कुलीनों से वह एक उत्तम है कुलको कुल नहीं कहते आचार

को कुल कहते हैं आचारहीन पुरुष न
परलोक में सुख पाता है इतना सुन राजा
कि हे श्रीकृष्णचन्द्र ! अब हम सदाचार
हैं कि सर्व धर्ममय सदाचार किसको कहते हैं
वचनसुन श्रीकृष्णभगवान् कहनेलगे कि हे महारा
चारही प्रथम धर्म है और जिन में आचार होय वे
कहाते हैं सत्पुरुषों का जो आचरण उसीका नाम सदाच
है जो पुरुष अपना हित चाहै उसको अवश्यही आचार
निष्ठ होना चाहिये पुरुष में पाप आदि जितने लक्षण हैं वे
सब आचार से निवृत्त होजाते हैं धर्मनिष्ठ परनिन्दा से रहित
सत्कर्म में प्रवृत्त और शौचआचार में परायण पुरुष सब का
प्रिय होता है नास्तिक क्रियाहीन अधर्मी गुरु की आज्ञा
लंघन करनेहारे और आचारभ्रष्ट पुरुष अल्पायुष् होजाते
हैं सब लक्षणों से हीन भी पुरुष श्रद्धावान् असूया रहित
और सदाचारयुक्त होय तो अपने सब मनोरथ पाता है ब्राह्म-
मुहूर्त्त में उठ धर्म और अर्थ का चिन्तन करै और आचमन
स्नान आदि कर प्रातःसन्ध्या करै इसीभांति मौन से सायं
सन्ध्यावन्दनभी करै सूर्यको उदय और अस्तहोते न देखै
तो दीर्घआयुष् पाता है जो ब्राह्मण दोनों कालका सन्ध्या-
वन्दन नहीं करते उन को राजा शूद्र कर्मों में नियुक्तकरै दिन
में उत्तराभिमुख और रात्रि के समय दक्षिणाभिमुख होकर
मूत्रपुरीषका त्यागकरै जो ऐसास्थान न होय तो यथेच्छत्यागे
भूमिको तृणों से आच्छादितकर अपने शिरको वस्त्र से ढक
पुरीषोत्सर्ग करै ग्राम आवसथ तीर्थ क्षेत्र गोष्ठ आदि में
शौच न करै जल के भीतर से आवसथ में सनक के मिल में

वेत्यास्तस्मान्मां परि.... कर शौच न करै और शौचशेष मृत्तिका विधि से जो पुरुष देवार्चन आदि क्रिया और भोजन सदा आ- जित गौरीलोक.. फेनरहित गन्धवर्ण शब्दसे रहित पवित्रजल सुख भोगक..मुख अथवा उत्तराभिमुख होकर आचमन करै लोकि..ष धन उपार्जन करने के लिये सदा यत्न करै और ..ते अर्थात् धर्म अर्थ और काम इनका भी सदा साधन ..ता रहै इनके साधन से गृहस्थी को दोनोंलोक में सिद्धि ..ती है जितना धन प्राप्त होय उसका चतुर्थांश परलोक के नैमित्तलगावै चतुर्थांश संचय करै और आधे द्रव्य से नित्य नैमित्तिक सहित अपना निर्वाह करै इसप्रकार चलने से धर्मादिक सिद्ध होते हैं केशप्रसाधन दन्तधावन देवदर्शन और पूजन आदि काम मध्याह्न के पूर्व करने चाहिये अग्नि का सेवन दूरसे करै मूत्रपुरीषका त्याग घरसे दूर जाकर करै लोष्ट अर्थात् ढेला मर्दन करनेहारा तृणच्छेदन करनेहारा दांत से नख काटनेहारा सदा उच्छिष्ट रहनेहारा और संकर करनेहारा पुरुष बहुत आयुष् नहीं भोगता नंगी परस्त्री को न देखै अपनी विष्ठा न देखै रजस्वला स्त्री के साथ सम्भा- षण न करै और उसका दर्शन और स्पर्श भी न करै जल के बीच मूत्र विष्ठाका त्याग और मैथुन न करै मूत्र विष्ठा केश भस्म तुष अंगार अस्थि धूलि आदि के ऊपर न बैठै जो वृद्धहोयँ उन को अभिवादन करै आसनपर बैठावै हाथजोड़ उन के सम्मुखरहै और जब वे उठकर जायँ तब कुछ दूरतक उन के पीछे चलै फूटे पात्र में भोजन न करै और कांस्यके फूटे पात्र को विशेष करके त्यागै केशखोलकर भोजन न करै नग्न होकर स्नान न करै नग्न और उच्छिष्ट होकर शयन न करै

उच्छिष्ट हाथ से शिरको स्पर्श न करै क्य
आश्रय हैं शिर में प्रहार न करै परन्तु शि
और पुत्रको शिर में भी ताड़न करै दोनों हाथ।
खुजावै विना कारण निरन्तर शिरस्नान न ...
विना रात्रिको स्नान न करै भोजन के अनन्तर स्नान
और गहरे जलाशय में भी न नहावै शिरस्नान करके
अंग में तैलका स्पर्श न करै तिलपिष्ट न खाय तो अ
का क्षय नहीं होता है गुरुका दुष्कृत न कहै धर्मका से करै
साधन करै परनिन्दा न करै और दूसरा मनुष्य परनिन्दा क
रताहोय तो न सुनै सदा नये और सुन्दर वस्त्रपहिने उत्तम
ओषधीधारै केशोंको निर्मल और चिकने रक्खै सुगन्धद्रव्य
धारै और उत्तम वेष रक्खै श्वेतपुष्प धारण करै यत्किञ्चित्
भी पराई वस्तु न हरै और कभी अप्रिय वचन न बोलै प्रिय
वचन भी असत्य होय तो न बोलै असत्य से सदा बचता
रहै दूसरे के छिद्र ढूंढ़ना और वैर करना कभी भला न स-
मझै विद्वेषी पतित उन्मत्त बड़ा वैरी संकर व्यभिचारिणी
कुलटापति क्षुद्र मत्त हठी क्रोधी आदि के साथ मैत्री न करै
एकाकी मार्ग में न चलै जलाशय में अवगाहन न करै प्र-
दीप्त घरमें प्रवेश न करै पर्वत के शिखरपर न चढ़ै दांत न
पीसै नासिकाको न खोदै विना मुखढके उबासी न लेवै ऊंचे
स्वर से न हँसै शब्दसहित पवन न त्यागै रात्रि के समय
चतुष्पथ श्मशान उपवन में और वृक्षकी छाया में न जाय
दुष्टका संग न करै ग्रीष्म और वर्षामें छतरी धारण करै रात्रि
के समय और वनमें दण्डधारण करै जूतापहिने विना न फिरै
केश अस्थि कांटे भस्म तुष वाले और स्नान के जलसे भीगी

वेत्यास्तस्मान्मां [illegible] से त्यागे ब्राह्मण गौ राजा विद्वान् विधि से जो पुरुष अन्ध वधिर मत्त उन्मत्त और भार करके जित गौरीलोक को रस्ता देनाचाहिये अर्थात् ये आगे से सुख भोगकर [illegible] छोड़देवै जूता वस्त्र और पुष्पमाला दूसरे के लोंचि धारण न करै परस्त्री संग से सदा बचै इससे अधिक तेजका क्षय करनेहारा कोई कर्म नहीं है यत्न से स्त्री की [illegible] करै ईर्षा न करै ईर्षा करने से आयुष् घटता है मूर्ख उ[illegible]त्त व्यसनी कुरूप मायावी हीनांग अधिकांग विद्याहीन आदि पुरुषों को कभी दान न देवे परन्तु अन्न और जल इनको भी देना चाहिये अर्द्धरात्रि के समय भोजन न करै खड़ाहोकर न पढ़ै बहुत हास्य न करै पैर से आसन को खैंचकर न बैठै ब्राह्मण क्षत्रिय और सर्प इनसे वैर न करै ये तीनों तुल्य हैं विना बदलालिये नहीं रहते प्रभात सायंकाल और मध्याह्न में गमन न करै अपरिचित मनुष्यों के साथ यात्रा न करै और परिचित मनुष्यों में भी सब के आगे न चले अरुंतुद अर्थात् किसी के मर्मको स्पर्श करनेहारा न होय क्रूरवचन न बोलै निकृष्ट पुरुष से वेद ग्रहण न करै जिस वाणी से दूसरे को उद्वेग होय उसको न बोलै वह वाणी अलक्ष्मीका रूप है और नरक देनेहारी है वचनरूप बाण मुखसे निकलते हैं जिन करके ताड़ित पुरुष दिन रात शोचता है वे दुर्वचन बाण दूसरे के मर्मों में लगते हैं इसलिये पण्डित पुरुष वे दुर्वचन बाण औरों में न छोड़ैं शस्त्रका घाव भरजाता है परन्तु दुष्ट और वीभत्स वचनोंका घाव नहीं भरता नास्तिकत्व वेदनिन्दा द्वेष स्तम्भ अभिमान क्रूरता और वेदों का कुत्सन इनका सदा त्यागकरै ब्राह्मणकी निन्दा न करै नक्षत्र

न दिखावै पक्षके आदिकी तिथि न क
घटता छींकलेकर निष्ठीवन करके उवासा
आचमन करै जिस देशमें शत्रुओं के जीत
त्मा राजाहोय उस देश में निवास करना चा
राजाहोय वहां बसने से सुख नहीं होता जहां के
आदि से रहित न्याय में तत्पर और परस्पर मिलकर र
होयँ वहां बसने से सुख होताहै जिस देशके कृषीबल
किसान अति भोगी होयँ जहां पूर्व वैर होय निरन्तर मनु
उत्सवों में व्यग्ररहैं और जिगीषुराजा होय वहां निवास न करै
जिस देश में ऋणदेनेहारा वैद्य श्रोत्रिय अर्थात् वेदवेत्ता ब्रा-
ह्मण और सजला नदी न होय उस देशमें निवास न करै मलिन
दर्पण में मुख न देखै और रात्रिके समयमें भी दर्पण नदेखै इससे
आयुष् घटताहै सुनारके घरमें कभी भोजन न करै न सुनार का
विश्वासकरै न सुनारके घरमें निवासकरै और न सुनारको अ-
पने घरमें रहनेदेवै फूटापात्र टूटीखाट कुक्कुट और श्वान इनको
घरमें न रक्खै और कांटों के वृक्षभी घरमें न लगावै ये सब अप्र-
शस्तहैं फूटापात्र घरमें होनेसे नित्य कलह होताहै टूटीखाट
रहने से वाहनोंका क्षय कुक्कुट और श्वानके रहने से उस घरमें
पितर भोजन नहीं करते और कण्टकी वृक्षों के नीचे पिशाच
रहते हैं विना स्नानकिये भोजन करनेहारा मल भोजन करता
है पंचयज्ञ किये विना पूय और रुधिर के समान भोजन है
और असंस्कृत अन्न मूत्रके तुल्यहै और सुवासिनी गर्भिणी
वृद्ध बालक रोगी आदि को प्रथम भोजन कराय पीछे गृहस्थ
भोजन करै देखते हुये मनुष्यों को विना दिये जो भोजन करै
वह केवल पाप भोजन करताहै पहिले वैश्वदेवकर आ-